THE LATE
SHETH DEVCHAND LALBHAI JAVERI.

BORN 1853 A. D. SURAT

DIED 13TH JANUARY 1906 A. D., BOMBAY



श्रेष्ठी देवचन्द लालभाई जहवेरी.

जन्म १९०९ वैक्रमाब्दे
कार्तिकशुक्लैकादश्यां (देवदीपावलीदिने)
सूर्यपुरे.

निर्वाणम् १९६२ वैक्रमाब्दे
पौषकृष्णतृतीयायाम् (मकरसंक्रान्तिदिने)
मोहमयीनगर्याम्

इदं पुस्तकं सूर्यपुरे श्रेष्ठि-देवचन्दलालभाई जै.
अवैतनिककार्यवाहक-मोतीचंद मगनभाई चोकसी नेन सं
गोपीपुरा, मुद्रणमन्दिरे वालुभाई-हीरालाल लालनद्वारा मु

Printed By -
Balubhai Hiralal Lalan at the 'Saraswati Mudranalaya

Published By Sheth -Devchand Lalbhai Jai
Fund, At Sheth Devchand Lalbhai Jain Boa
Shri Ratansagarji Jain Boarding Balekhan C
Surat. By the Hon· Managing Trustee, Mot
Choksi

Sheth Devchand Lalbhai Pustakoddhar Fund Series No 101

Shree Alpaparichit Saidhantik Shabda - Kosh

FIRST PART

[A To AOU]

—: Author :—

Agmoddharak Acharya Shree Anandsagarsurishwarji

: Editor —

Agmoddharak Shree Anandsagarsurishwarji 's Sishyo

Muni Kanchanvijay and Muni Kshemankarsagar

Collected:-

SHREE GUNSAGARJI

SHREE ANANDSAGARSURISHWARJI'S ANTEWASI

- Publisher :

Motichand Maganbhai Choksi

Managing Trustee For :-

Sheth DEVCHAND LALBHAI JAIN PUSTAKODDHAR FUND

SURAT

First Edition
Copies 500

Price (Rs. [illegible]0-0)

Vikram Samvat 2010.
Christation Era 1954.



The Board of Trustees:



संस्थानुं ट्रस्टी मंडळ :—

अल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोषः

प्रथमो विभागः





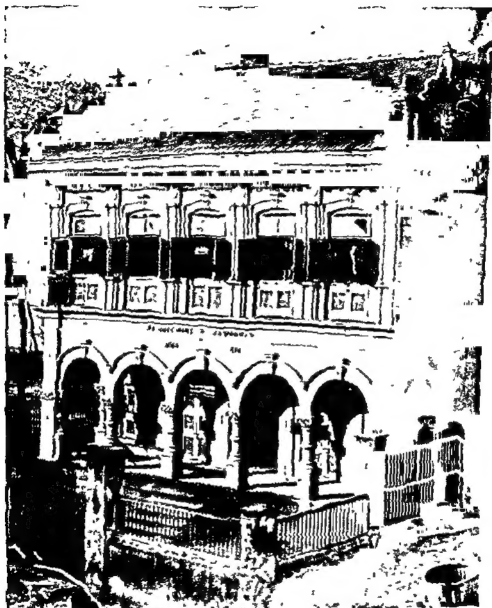
प्रकाशक —
शेठ देवचन्द लालभाई जैनपुस्तकोद्धार
फण्डस्य

मुद्रापक
कोठारी [illegible] भाई [illegible]

सङ्कलयिता
आगमोद्धारक आचार्य
श्रीआनन्दसागरसूरीश्वरजी

चित्र परिचय —
हिन्दुस्तानना नकशामां आवेल तीर्थो
(१) श्री सिद्धाचलजी
(२) श्री तारंगाजीनुं जिनालय
(३) श्री [illegible]

शेठ-देवचंद-लालभाई-जैनविद्यार्थी भुवन



जेमां
शेठ देवचंद लालभाई जैन पुस्तकोध्धार फंड तरफथी
पुस्तकालय अने
प्रसिद्ध थतां पुस्तकोनो संग्रह अने वेचाण थाय छे.

●

गोपीपुरा. वडेचानो चकलो. सुरत.

प्रकाशकीय

卐

आ अवसर्पिणी कालना दुःषम आरामां चरमशासनपति श्रमण भगवान महावीर स्वामीना शासनमां शासनना पुण्य प्रताप ते ते समये आचार्य भगवंतोअे आगम वगेरे साहित्यनो उद्धार, पुनरुद्धार करीने आ कलिकालमां धीमर्मा सदीमां ज जिनमत गाज्युं छे ते आपणुं अहोभाग्य छे तेथी तेवा साहित्यने प्रकाशन करवा माटे अमारी आ संस्था सं १९६४मां प पू आगमोद्धारक गुरुदेवश्रीना उपदेशथी स्थपाई हती आ संस्था मारफत अमे आज सुधी १०० ग्रन्थो प्रकाशित करी चूक्या छीअे अने अमे १०१मा ग्रन्थाङ्क तरीके श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोषना भागे आ ग्रन्थने सहर्ष प्रगट करीअे छीअे

तारक आगमोद्धारक गुरुदेवश्रीअे आ कलिकालना विषम वातावरणमां आगमोनो बोध दुर्बोध न थई जाय ते हेतुअे आगमोदयसमितिनी स्थापना करावी अने आगमवाचना आपवी कर्युं तेथी ते समितिअे आगमो छपाववानुं कार्य शरू कर्युं तेमज आ संस्थाअे पण अनुयोगद्वार वगेरे आगमो छपाव्या ते वखते अने पछीथी आगमोद्धारक गुरुदेवश्रीअे आगमोना जुदा जुदा विषयो तारवता आगमकोषनो पण अेक विषय तारव्यो हतो अने कोष छपाववो हतो आ विचारणा लगभग आजथी पचीस वर्ष पहेला थई हती प पू गुरुदेवश्रीना सदुपदेशथी नीचेना सद्गृहस्थो तरफथी नीचेनी रकमो अमारी संस्थाने मळी हती ते आ प्रमाणे

१ अमदावादनिवासी शा डाह्याभाई पीताम्बरदास रू १००१

२ सुरतनिवासी झवेरी भाग्यचंद सुरचंद रू १००१

३ सुरतनिवासी झवेरी साकळचंद सुरचंद रू १०१

आचार्य देवनो विहार माळवा, बंगाळ तरफ थयो तेथी ते कार्य घणी मुदत सुधी पडी रह्यु हतु त (छपाववानुं कार्य) अमे आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीनी संमतिथी शरू कर्यु आ नीणय सं २००४मां थयो

आथी प पू गुरुदेवश्रीनी आज्ञा अनुसार पू मुनिमहाराज श्रीगुणसागरजी पासेथी श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोषनुं प्रेस मेटर अमे मेळव्युं ते श्रीमहावीरमुद्रणालय, सुरतमां छपाववा माटे आप्युं अने तेनुं संपादन करवा माटे मुनिमहाराज श्रीचन्द्रविजयजी तथा श्रीक्षेमंकरसागरजीने विनंति करी तेओश्रीअे आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीना अनन्य पट्टधर, विद्याभ्यासरसिक श्रुतस्थविर आचार्य महाराज श्रीमाणिक्यसागरसूरीश्वरजी महाराजनो संयोग मल्यो त्यां सुधि प्रूफ वगेरे पूर्वक अने ते पछीथी स्वतन्त्रपणे (बे मुनिवरोअे) आ संपादन कार्य कर्युं तेथी अमो आ अद्वितीय आगमतत्त्वदर्शिताना, आगमतत्त्व पारदृश्वा, आगमज्योतिर्धर शासनसंरक्षणबद्धकक्ष तत्त्वशिरोमणि आगमाम्बुधिनिकष शिलानाग्रन्थोत्कीर्णागमसंस्थापक गम्भीरानेकग्रन्थप्रणेता अन्यसमये पयोनिधि अखंडआगमतत्त्वाधारी ध्यानस्थस्वर्गत

आगमोद्धारक आचार्यवर्य श्रीआनन्दसागरसूरीश्वरजी[1] महाराजे 'संकलित' करेलो श्री-अल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोपनो 'संपूर्ण स्वर' सुधीनो पहेलो भाग सहर्ष प्रकाशित करीए छीए.

आ संस्थाना प्रथम पुस्तकना संपादक[2] तरीके पण आचार्यदेव श्रीआणंदसागरसूरिश्वरजी म हता अने बीजा सैंकडानी शरुआतना प्रथम पुस्तक तरीके पण तेओश्रीनो संकलीत अमूल्य कोप प्रसिद्ध करीए छीए.

कोपनी विशिष्टता अंगे संपादकिय निवेदनमां घणु कह्यु छे, छतां अमारी संस्थाए आना प्रकाशनमां वधारे रस लीधो तेनु मुख्य कारण ए छे, के आज सुधी छपायेला प्राकृतकोपोमां अभिधानराजेन्द्रकोप, पाइयसद्दमहण्णवो आदि केटलाक कोपो छे पण तेमां न्यूनाधिकरुपे विचार करतां उपयोगितामां बाध आवे छे—जेमके अभिधान राजेन्द्र कोष प्रमाणमां एटलो बधो मोटो छे के तेमांथी कोइ शब्द शोधवा माटे वधारे परिश्रम पडे अने छपाईमां के सम्पादनमां त्रुटी रहेवाने लीधे सूत्रो अने ते ते प्रकरणो घणा परिश्रम पछी पण जडतां नथी पाईयसद्दमहण्णवोमां जैनसैद्धान्तिक शब्दो उपर वधारे भार मूक्यो होय तेम जणातुं नथी. पण प्रस्तुत ग्रन्थमां कोई पण जैन के जेनेतर विद्वान् प्रचलित जन पारिभाषिक शब्दोनो यथार्थ परिचय टूंकमां अने सहेलाइथी प्राप्त करी शके एवी तक छे, तथा मुनिराजो पण ग्रन्थ सम्पादनना कार्योमां सहायता लइ शके तेम पण छे.

अमे इच्छीए छीए के आना प्रकाशनने विद्वज्जनो योग्य आदर करशे ज.

आ कोपने अंगे सज्ञाओनी समजणो तथा ते ते ग्रन्थोनां पानांओनी सूची पण संपादक पू. महाराजोए आपी छे. ते अंगे 'संपादकीय' वांचवा वांचक वर्गने अमारी विनंति छे

आ ग्रन्थना सकलनाकार प पू. आगमोद्धारक गुरुदेवश्रीनुं स्तोत्र सुमनोहर गूथी ग्रंथने अलंकृत करनार सदा ज्ञानोद्यमीव्याकरण-साहित्य-न्यायविसारद × × × × नो उपकार मानीए छीए

अमारा प्रकाशन कार्यमां जे जे महाशयोए अमने मदद करी छे ते ते महाशयोना अमे ऋणी छीए.

वि. सं. २०१०
आशो सुद १५ विजयादशमि
ता ७-२-१९५४

लि० भवदीय
मोतीचंद मगनभाई चोकसी
विगेरे ट्रस्टीओ

---

१ तेओश्रीनो सुरत उपर तो अनहद उपकार छे. तेओश्रीने संवत १९७४ना वैशाख सुद १० ना सुरतमां ज 'आचार्य' पदवी अपाइ हती. श्रीजैनानंदपुस्तकालय, श्रीवर्धमानजैनताम्रपत्रागममंदिर वगेरे सुरतमां ज छे. अने स. २००६ ना वैशाख वद ५ मे 'स्वर्गवास' पण सुरतमां ज थयो छे. तेओश्रीनो अग्निसंस्कार पण सुरत शहेरनी मध्यवर्ती गोपीपुरामां आगममंदिरना सामे जूनीअदालतथी ओळखाती जमीनमां थयो हतो. वळी तेज जग्या उपर गुरुदेवश्रीना स्मरण तरीके सपूर्ण इतिहासने जणावनारु 'श्रीआगमोद्धारकगुरुमंदिर' बंधाववामां आव्यु छे.

२. तेओश्रीनु मुख्य कार्यक्षेत्र सुरत ज रह्यु हतु. तेनी प्रतिकृतीरूपे अनेक ज्ञान शिक्षानी संस्थाओ स्थपाइ हति.

(१) शेठ देवचंद लालभाई जैन पुस्तकोद्धार फंड.

(२) शेठ नगीनभाई मञ्छुभाई जैन साहित्योद्धार फंड.

(३) श्रीरत्नसागरजीजैनबोर्डिंगस्कुल (विद्याशाळा) कायमि फंड

(४) श्रीजैन तत्त्वबोध बोध पाठशाळा वगेरे अनेक संस्थाओ तेओना उपदेशनु ज परिणाम छे.

संपादकीय वक्तव्य

卐

"ॐ णमो चउवीसाए तित्थयराणं उसभाईमहावीर पज्जवसाणाणं। णमो गोयमाईमहामुणीणं। इक्कारस अंगाइं बारसुवंगा पइन्नगा दस य। छेया छ चऊ मूला, नंदी अणुओगा णमंसामि[1] ॥१॥"

साहित्यमां ऊंडा ऊतरेला रसिकोने विविध विषयोना बोधनी आवश्यकता रहे छे. जे विषयनो बोध जे मनुष्यने होवो जोइअे ते बोध सिवायनो मनुष्य ते विषयने ग्रहण करवा जाय तो अज्ञानी वांदरानी जेम "मने पकडयो मने पकडयो" जेवी अेनी दशा थाय तेथी ते विषयना बोध माटे ते विषयना शब्दना ज्ञाननी, अर्थना ज्ञाननी अने तेना भावार्थना ज्ञाननी, अर्थात् ते पदार्थना शब्दार्थ, भावार्थ अने अैदंपर्यनी जरूर छे जो ते समज्या सिवाय प्रवृत्ति कराय तो भोजन करवा बेठेलो 'सैंधव' मंगावे अने 'घोडो' लावे तेना जेवु थाय

शब्दना बोधने करनारूं जे साहित्य होय तेने 'शब्दकोष' आदि शब्दथी संबोधी शकाय. पवा 'शब्दकोषो'नी उत्पत्ति कां तो आगमोमां आवेला पर्यायो रूपे आवी होय कां तो निघण्टु जेवा 'शब्दकोषो' रूपे होय, अथवा बीजा घणाअे 'शब्दकोषो' रूपे होय. आथी दरेक भाषाकार अनेक शब्दकोषो' योजाया छे अने योजाय छे.

जैन दर्शन माटे तो ते शब्दोना अर्थ टीकाकारोअे प्रकरणना आधारे जे रीते मंजुर कर्या छे ते रीते ज लेवा योग्य छे शब्दो-यौगिक, रूढ अने मिश्र पम साहित्यकारोअे मान्या छे, ते यथार्थ छे. आथी जैन दर्शनमां ऊंडा ऊतरवावाळाने पण ते बोधनी जरूर तो छे ज, तेथी तेवा प्रकारना 'शब्दकोष'नी जरूरियात मानवी'ज पडे. आ उद्देश लक्ष्यमां लइशुं तो जैन दर्शनमां आवता शब्दोना अर्थवाला अनेक कोषो होवा छतां पण आ नवा कोष माटे स्थान छे ज.

संकलनाकार—ग्रन्थकार स्वतंत्र लेखिनीथी जे ग्रन्थ करे तेमनी ज कृति कहेवाय छे परंतु बीजा ग्रन्थोमाथी अेकत्रित करेलु होय तो आ बधुं बीजा ज ग्रन्थोमांनु छे, पम जणाववा माटे पोते संकलना करी छे पम जणावे छे तेथी महत्त्वपूर्ण अनेक जैन ग्रन्थोना संपादक अने संशोधक, तेमज संस्कृत, प्राकृत अने गुजरातीमां विविध विषयोनी कृतिओ रचनारा,[2] आगमोद्धारक[3] आचार्य श्रीआनन्दसागरसूरीश्वरजी महाराजे सैद्धान्तिक शब्दोनी आ कोषमां संकलना करी छे, आथी आ ग्रन्थना 'संकलनाकार' प. ता आगमोद्धारकगुरुदेवश्री छे

---

(१) मंगळाचरण तरीके आपेलु समग्र जथमांथी छेल्ला अेक शब्दने छोडीने 'शिलोत्कीर्ण आगमो'नी पीठिकामांनु छ जुओ—आगमरत्नमंजूषा शिला न १,१.

(२) जुओ अमारी संपादन करेली पुस्तिका—(१) प्रशमरति अने सबंधकारिका, परि ३ थी ८ 'आगमोद्धारकनी साहित्यसेवा', (२) उपदेशरत्नाकर (भावार्थ) पृ १९-२७ 'आगमोद्धारकनी साहित्यसेवा', (३) आचारांगसूत्र पृ २५२-२१६ 'आगमोद्धारकनी साहित्यसेवा', (४) आनंदसुधासिन्धु भा. २ परि ४ 'आगमोद्धारकना व्याख्यानोनी मूर्नो तथा 'आगमोद्धारककृत चैत्यवंदनादि', (५) आराधनामार्ग भा. १ पृ २२-२३ 'आगमोद्धारककृत चैत्यवंदनादि.

(३) आ संबधमां जुओ—"आगमोद्धारकबिरुद" अे नामना प्रा. हीरालाल र कापडियानो लघु लेख अे लेख गुरुना 'प्रभाकररत्नना ता १४-०-५०ना अंकमां छपायो छे

आगमोनुं मुद्रण-वाचना—आ कलिकालमां विक्रमनी वीसमी सदीमां एवो पण एक समय आवशे के ज्यां शास्त्रीय बोध ओछो थवा लाग्यो अने हस्तलिखित प्रतो वांचवानी तेमज वांचवा माटे प्रतो मेळववानी पण मुश्केलीओ ऊभी थई. आथी जो लखाण छापेलुं मळी जाय अने तेनो जो बोध अपाय तो ते हितावह निवडे. आ हेतुथी आगमो[४] छपाववा अने तेनी वाचनाओ आपवी एम प. पू. आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीनी प्रेरणाथी नक्की थयुं. अने संपादननुं कार्य अने वाचनानुं कार्य आगमज्योतिर्धर, अप्रमादी आगमोद्धारकश्रीने ज करवानुं थयुं. आथी जेम जेम आगमो छपाता तेम तेम पाटण[५] आदि स्थळोए 'वाचनाओ' अपाई अने तेनो सेंकडो साधुसाध्वीओए लाभ लीधो.

आगमो रूपी सागर अने तेमां आवता विषयो पण ए सागरना उपसागरो जेवा छे. परन्तु ते अखात रूपे छूटा छूटा पडया होय तो उपसागर रूपे देखाय, तेथी ते बधा प्रवाहो एकत्र करी जुदा जुदा उपसागरो बनाववा. आ मुद्दाए जेम आगमो छपाता गया तेम तेम वर्तमान श्रुतना ज्ञाता आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीए आगमोमां जुदा जुदा विषयोने जणावनारा त्रेपन (५३) अंको पाड्या अने 'शब्दकोष' माटेना शब्दो अंगे पण 'फूल'नुं एक निशान कर्युं. ए निशानो एवां हतां के—अंकोमां बधा शब्दथी क्यां सुधीनो भाग लेवानो छे ते जणाववा माटे आदिमां अने अंतमां निशाननी साथे अंक मूकवामां आवतो हतो. ज्यारे आ कोषना शब्दोने अंगे फूलनुं निशान मूकवामां आवतुं हतुं तेमां पण खूबी करवामां आवती हती के—जो शब्द एक अक्षरनो होय तो एकनी नीचे, बेनो होय तो बेनी वच्चे, यावत् जेटला अक्षरनो होय तेना मध्य बिन्दुए निशान मूकवामां आवतुं हतुं आवी रीते शब्दोनी संकलना थई आ बधा विषयो अने शब्दो लहिया द्वारा उताराईने एकत्रित करावाता हता.

नाम—आ कोषनुं नाम 'श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोष' राखवामां आव्युं छे कारण ए छे के—आ कोषमां आगमोमां वपरायेला तमाम शब्दो नथी, परंतु जे शब्दनो परिचय अल्प

४ आगमो छापवा माटे भोयणीतीर्थमां सं. १९७१ना महा सुद १० ने सोमवार २५-१-१९१५ना दिवसे श्रीआगमोदयसमितिनी स्थापना थई आना अंगेनुं आगमोद्धारककृत 'आगमसमितिस्थापनास्तव' अमारा संपादित आचारांगसूत्र (भाग १) (व्या. म.) मां छपायुं छे

५ नं.	स्थळ	वि. सं.	वाचना आपेल ग्रन्थोनां नाम
१	पाटण	१९७१	श्रीदशवैकालिक, श्रीसूत्रकृतांगसूत्र, १।। पर्युषणाकल्प।
२	कपडवंज	१९७२	श्रीललितविस्तरा, श्रीयोगदृष्टिसमुच्चय, श्रीअनुयोगद्वारसूत्र १/२, श्रीआवश्यकसूत्र १/४, श्रीउत्तराध्ययनसूत्र १/३।
३	अमदावाद	१९७३	श्रीविशेषावश्यकसूत्र ८/४, श्रीस्थानांगसूत्र १/२।
४	सूरत	१९७४	श्रीविशेषावश्यकसूत्र १/२, श्रीस्थानांगसूत्र १/२, श्रीऔपपातिकसूत्र श्रीउत्तराध्ययनसूत्र १/३, श्रीआचारांगसूत्र १/२।
५	सूरत	१९७५	श्रीआवश्यकसूत्र १/४, आचारांगसूत्र १/२, श्रीअनुयोगद्वारसूत्र १/२, श्रीनन्दीसूत्र।
६	पालीताणा	१९७६	श्रीओघनिर्युक्ति, श्रीपिंडनिर्युक्ति, श्रीभगवतीसूत्र ८/४१ श्रीप्रज्ञापनासूत्र ३३/३६।
७	रतलाम (माळवा)	१९७७	श्रीभगवतीसूत्र ३३/४१, श्रीप्रज्ञापनासूत्र ३/३६, श्रीसमवायांगसूत्र

छे, तेवा आगमगत-सैद्धान्तिक शब्दोनो आमां संग्रह करवामां आवेलो छे. आ 'श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोष' माटे हवे पछी 'अ सै श' एवी संज्ञानो उपयोग करशुं

शब्द अने तेना अर्थो—अ. सै. श. मां जे शब्दो आप्या छे ते शब्दो घणे भागे तो जेवा छे तेवा ज राखवामां आव्या छे. अर्थात् अकार अने थोडा आकार सिवायना बाकी घणा शब्दो जे मूलना छे ते अर्धमागधीमां छे अने टीकाकारोए टीकामां आपेला जे शब्दो जे भाषामां छे ते ज भाषामां मोटे भागे कायम राख्या छे एटले के अकार अने थोडा आकारमां आवेला संस्कृत शब्दो अर्धमागधीमां पण आप्या छे

शब्दोना बहुश्रुत टीकाकारोए भिन्न भिन्न टीकाओमां भिन्न भिन्न अर्थो कर्या छे, तेओ भिन्न भिन्न स्थलोमांथी ते ते अर्थो लईने ते ते टीकाकारोना अर्थोने कायम राख्या छे. आ कारणथी आ अ. सै. श. मां छेदना घणा ज शब्दो लेवामां आव्या छे तेमज बृहत्कल्प जेवा ग्रंथोमां आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीना हाथना उतारेला शब्दो छे तेमां टीकाकारोना आधारे अर्थोनुं टुंकावणुं पण छे

---

१ तारवेला ५२ अंकना नामो— (आगला पानानी फुटनोट)

१ विषयानुक्रम *	१४ देशविचार	२७ समाचरणा	४० वैद्यम्
२ अधिकारानुक्रम	१५ अवतरण	२८ पाठान्तराणि	४१ नय
३ विशेषोपयोगिना विषयो	१६ व्याख्या	२९ प्रस्तावना	४२ ज्ञानानि
४ विशिष्ट	१७ साक्षिभूतग्रन्था	३० सूत्रादिकारादिक्रम	४३ विधि
५ साक्षिपाठनामसहितादिक्रम	१८ उपादान प्रतिभिन्न	३१ इदम्समाधानानि	४४ भेद प्रभेदा
६ गाथा	१९ आचार्यनामानि	३२ कालिकाय	४५ कथानुक्रम
७ लक्षणसूत्राणाधिकार	२० प्रतिमनामानि	३३ सुभाषितानि	४६ अनुमानानि
८ निक्षेपनामानि	२१ प्रश्नोना समाधानानि	३४ विशेषनो संग्रह	४७ गद्यम्
९ इतिहास	२२ सूक्तावलि	३५ वास्तुवृत्ति	४८ प्रकरणपुस्तकनामानि
१० भूगोल	२३ राजकीयविभाग	३६ समानशब्दानां पर्याय	४९ निगदा
११ उपनिषद्	२४ प्रमाणम्	३७ गाथा वृत्तान्तम	५० परम्परा
१२ प्रचलितनामानि	२५ प्राकृतिकसंग्रह	३८ दृष्टान्त	५१ स्वरनिर्देश
१३ व्याकरणविचार	२६ व्याख्यानान्तराणि	३९ सम्प्रदाय	५२ सामुद्रिकम्

५२ निशीथपदकारानुक्रम निशीथभाष्यगाथादिनि क

* नन्दी आदि २७ना विषयानुक्रम अने सूत्रादि अकारादि क्रम छाप्यां छे, तेमां नीचे प्रमाणना क्रम सूचीने आप्या छे—

१ नन्दी, २ अनुयोगद्वार, ३ आवश्यक, ४ ओघनिर्युक्ति, ५ दशवैकालिक, ६ पिंडनिर्युक्ति, ७ उत्तराध्ययन, ८ आचारांग, ९ सूत्रकृतांग, १० स्थानांग, ११ समवायांग, १२ भगवती, १३ ज्ञाताधर्मकथा, १४ उपासक, १५ अन्तकृद्दशा, १६ अनुत्तरोपपातिकदशा, १७ विपाकश्रुत, १८ प्रश्नव्याकरण, १९ औपपातिक, २० राजप्रश्नीय, २१ जीवाजीवाभिगम, २२ प्रज्ञापना, २३–२४ सूर्यचन्द्रप्रज्ञप्ति, २५ जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति, २६ निरयावलिका अने २७ प्रकीर्णकदशक।

(५३ नंबरमां नं. २२, ३०, ३३ अने ५० आगमसूत्रोना नामे छाप्या छे)

આ અ. સૈ. શ. માં ભિન્ન ભિન્ન શબ્દો વ્યાકરણના પ્રયોગો રૂપે, કોઈ તેમાં નામો રૂપે, કોઈ ઇતિહાસ તરીકે, કોઈ ભૂગોળ તરીકે તથા કોઈ પર્યાયો તરીકે પણ આવ્યા છે.

કાચો ખરડો—શરૂઆતમાં લહિયો એકેક આગમ લઈને કાપલીમાં તે શબ્દને ઉતારતો અને ટીકાકારનો બતાવેલ અર્થ લક્ષ્યમાં આવે તો તે અર્થ લખતો. આવી રીતે ઉતારેલી છૂટી કાપલીઓને પ. પૂ. આગમોદ્ધારકગુરુદેવશ્રીના વિનયગુણસંપન્ન, તીક્ષ્ણબુદ્ધિ, સ્વર્ગસ્થ મુનિરાજ શ્રીમહેન્દ્રસાગરજીએ અકારાદિ ક્રમમાં ગોઠવી કાગળમાં સળંગ ચોટાડીને તૈયાર કરી તે ઉપરથી એ લખાણ લહિયા આદિ દ્વારા લખાવીને તેમજ તેઓશ્રીએ (શ્રીમહેન્દ્રસાગરજીએ) પોતે પણ લખીને કાચો ખરડો તૈયાર કર્યો.

પ્રકાશનની તૈયારી—આ અ. સૈ. શ. ને છપાવવાની પ. તા. આગમોદ્ધારકગુરુદેવશ્રીની ઘણી ઇચ્છા હતી. તેથી લગભગ ત્રણ દશકા ઉપર સદ્ગૃહસ્થો પાસેથી અ. સૈ. શ. ના પ્રકાશનને અંગે રૂપિયા શેઠ દેવચન્દ્ર લાલભાઈ પુસ્તકોદ્ધારફંડને અપાવ્યા હતા. તે પછી વિ. સં. ૨૦૦૪ માં તે સંસ્થાએ આ અ. સૈ. શ. છપાવવા માટે ઠરાવ કર્યો. આથી મુદ્રણાલયપુસ્તિકા કરવાનું કાર્ય પૂ. સ્વ. મુનિશ્રી મહેન્દ્રસાગરજીના શિષ્ય મુનિશ્રીસૌભાગ્યસાગરજીને (તેઓશ્રીના લઘુબન્ધુને) સોંપાયું. તેથી તેઓ દરેક આગમના તે તે પત્રમાં તે તે શબ્દો મેળવતા અને તેના અર્થોને પણ મેળવતા. તેમજ જ્યાં ટીકાકારના શબ્દો લેવાના હતા ત્યાં પ. તા. આગમોદ્ધારકગુરુદેવશ્રી પાસેથી તેના મૂળ શબ્દો બનાવી લેતા અને જે શબ્દોના અર્થ ટીકાકારે ન આપ્યા હોય તેના અર્થો પણ પૂછી લેતા. આવી રીતે તેમણે લગભગ ચાર ફાર્મ સુધીનું મેટર તૈયાર કર્યું.

ઉપર જણાવેલી સંસ્થા (દે + લા)ના ટ્રસ્ટીઓએ પ. તા. આગમોદ્ધારકગુરુદેવશ્રીની જીવન પર્યંત સેવા કરનાર મુનિરાજ શ્રીગુણસાગરજી મહારાજ પાસેથી આ કોપીનું લખાણ મેળવ્યું અને છપાવવા માટે પ્રબંધ કર્યો તેમજ અમને સંપાદન માટે વિજ્ઞપ્તિ કરી. તેથી અમે આ સંપાદનનું કાર્ય શરૂ કર્યું. સાથોસાથ મેટર પણ તૈયાર કરવા માંડ્યું.

સંપાદન પદ્ધતિ—દરેકે દરેક શબ્દ તે તે આગમની સાથે મેળવવો અને તેમાં જણાવેલ અર્થ મેળવી લેવો. તે રીતે કાર્ય કરતાં કેટલાક આગમોના અંગે શબ્દોના પ્રશ્નો ઊભા થયા. તેમાં શ્રીવ્યવહારસૂત્રના ત્રીજા ઉદ્દેશાના શબ્દો હતા પણ તે સિવાયના બાકીના ઉદ્દેશાના શબ્દો ન હતા. તેથી પ. તા. આગમોદ્ધારકગુરુદેવશ્રીએ વ્યવહારની આખી પ્રતમાં નિશાનો કરી આપ્યાં આથી તેની કાપલીઓ ઉતારી તેના શબ્દોનો ઉમેરો કર્યો આગળ જતાં બીજા પણ આગમોના શબ્દો નથી એમ દેખાયું, તેની તપાસ કરતાં-નંદી, અંતગડ, અણુત્તરોવવાઇય, ઉપાસકદસા, રાયપસેણીય, અને નિરયાવલિના શબ્દો ન હતા. તેથી તેના શબ્દો પણ ઉતાર્યા. અને તે શબ્દો ધીરે ધીરે મેળવવામાં આવ્યા. આગળ ચાલતાં નાયાધમ્મકહાના શબ્દો બિલકુલ નથી એમ માલમ પડ્યું. નાયાધમ્મકહાની પ્રત તો પ. તા. આગમોદ્ધારકગુરુદેવશ્રીની નિશાનવાળી પ્રાપ્ત ન થઈ, તેમજ જે સમયે શબ્દો નથી તેવી શંકા થઈ તે સમયે તો અમારું પુણ્ય પણ ન હતું કે પૂ. ગુરુદેવશ્રી 'વિદ્યમાન' હોય. આથી અમે અમારી મંદમતિ અનુસારે આ આગમની સટીક પ્રતમાં નિશાનો કર્યાં, શબ્દો તારવ્યા અને તે તારવેલા શબ્દોને કોશમાં સ્થાન આપ્યું

આ અ. સૈ. શ. માં અગ્યાર અંગ, બાર ઉપાંગ, ત્રણ૭ (બૃહત્કલ્પ, વ્યવહાર અને નિશીથ) છેદસૂત્ર, ચાર મૂળ, ઓઘનિર્યુક્તિ, વિશેષાવશ્યક, નંદી, અનુયોગદ્વાર, અને દશવૈકાલિકચૂર્ણિના શબ્દોનો સંગ્રહ

૭. વિસ્તારથી ચૂર્ણિ વગેરે જેના પર નથી તેવા જીતકલ્પ, પંચકલ્પ, દશાશ્રુતસ્કંધ, અને મહાનિશીથના શબ્દો લીધા નથી

करवामां आवेल छे. तेमज दशाश्रुतस्कन्ध, दशप्रकीर्णक, पउमचरिय, उपदेशमाला, अने तत्त्वार्थ-सूत्रना केटलाक शब्दो पण लेवामां आवेल छे.

संज्ञा पत्रक—अ. रा. श. मां जे शब्दोनो संग्रह करवामां आव्यो छे अने तेमां आगमो-शास्त्रो वगेरेनी जे संज्ञाओ आपवामां आवेली छे, ते संज्ञाओना स्पष्टीकरण माटे तेमज लीधेली प्रत-टीका वगेरे शेनी छे ते जणाववा अने तेना संपादक तथा प्रकाशक जणाववा एक संज्ञापत्रक नामथी प्रकरण राख्युं छे. तेमज बीजी बीजी प्रतोनी साथे पण शब्दो मेळववानुं शक्य बने ते उद्देशथी *पत्राङ्कसूचा नामथी एक प्रकरण आप्युं छे.*

वर्णक्रम—अ. रा. श. मां अनुस्वारने पहेलुं स्थान आपवामां आव्युं छे. कारण के शरूआतमां प. ता. आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीए आ रीते शरू करवानुं जणाव्युं हतुं. आथी ए पद्धति कायम राखी छे. पण आनो हेतु हमे जाणी शक्या नथी, तेथी अत्रे हेतु आप्यो नथी.

विद्वज्जनो प्रत्ये—सुज्ञ विद्वज्जनो! अमो गूर्जर भाषाना संपादनना कार्यमां अनुभव मेळवतां संपादनमां आगळ वध्या छीए. ते रीते संस्कृत अने प्राकृतना संपादनमां प्रवेश करता थया पछी समयमां प. ता. गुरुदेवश्रीनी सेवाना प्रतापे अमने 'अ. रा. श.' संपादन कर्युं. आथी अमे ते कार्यमां रस लीधो ने संपादन कार्य शरु कर्युं. आथी पंडितोनी अपेक्षाए के विद्वानोनी अपेक्षाए अमारा आ संपादनना अंगे जे सूचनाओ करवी उचित छे ते अमे विद्वज्जनोनी समक्ष रजू करीए छीए.—

१ मूळ शब्दो विभक्तिवाळा तेम विभक्ति वगरना एम बन्ने प्रकारना छे. तेथी ते जे लिंगनो जे शब्द होय ते शब्द तेवी तेवी विभक्तिथी ते ते लिंगमां समजी लेवो. जेमके-अंकुर (पृ. १, २), अंकुसयं (पृ. १, २) इत्यादि (कोईक शब्दकोशमां विभक्ति सहित शब्दो नथी तेवु पण प्राये अमारा जाणवामां छे

२. जो के शब्दो बधा एक जातना विभक्ति विगर अगर एक विभक्तिथी भेगा लेवा जोईए, परंतु आमां भिन्न भिन्न लेवाया छे. जेमके-अंकावइ (पृ. १, २), अंकावइओ (पृ. १, १) इत्यादि.

३. वैकल्पिक शब्दोना विकल्पने साचववा माटे अर्थात् तेवा प्रयोगोने साचवी राखवा माटे आमां भिन्न लेवाया छे जेमके-अंकवडेंसए (पृ. १, १), अंकावडिंसए (पृ १, १) इत्यादि.

४. टीकाकार महाराजे जे शब्दोना प्रयोगो टीकामां कर्या छे ने ते शब्दो मूळमां नथी तेवा शब्दोनुं प्राकृत जे कौंसमां अपाय छे ते प पू. आगमोद्धारक गुरुदेवश्रीने पूछीने मुनिश्रीसौभाग्यसागरजीए आपेलुं छे. वळी तेवा शब्दो कोई वखत शरुआतमां अपाया छे. अने कोइ वखत संस्कृत-शब्दनी पछी पण अपाया छे. तेनी बन्ने बाजुए बनतांसुधी कौंस आप्यो छे. जेमके (अंकोल्ल)नर्तकः (पृ. १, १), अंगारः (इंगाल), (पृ. २ २) इत्यादि.

५. शरूआतमां तो शब्दोना अर्थो अने शब्दोना संग्रहनी शैलि नियमित रही नथी, पण जेम जेम अनुभव थतो गयो अने तेना अभ्यासमां वधारो थतो गयो तेम तेम पद्धतिमां सुधारो थतो गयो छे. छतां एटलुं कहेवानी जरूर छे के पहेला भाग करतां बीजा भागमां पद्धति इत्यादिनो सुधारो मळेला अनुभव प्रमाणे करी शकीशुं एवी आशा छे.

६. (१) अध्ययन, (२) विशेषनाम, (३) वनस्पतिना नामना अंगे तेनी साथे अर्थना रूपमां संस्कृतमां अपायुं छे जेमके (१) अंडे-विपाकश्रुताध्ययुत० (पृ. २, २), (२) अंगारवई-अंगारवती सवेगोदाहरणे० (पृ २, २), (३) अंकोल्ल वृक्षविशेषः (पृ २, १) इत्यादि.

७ टीकाकारोए शब्दोना जे जगो पर अर्थ नथी कर्या तेवा शब्दो पण अत्रे अर्थ वगर अपाया छे. जेमके ओली (पृ. २२५, २), उवट्टगा (पृ. २०७, २) इत्यादि. वळी आ शब्दोना अर्थो जो कदाच मेळवी शकीशुं तो परिशिष्टमां आपवा विचार छे.

८. देशी शब्दोना अंगे 'देशीय' अगर 'देशी' एवुं कौंसमां लखायुं छे. अर्थात् टीकाकारे आपेलुं कायम राख्युं छे. जेमके-उत्तइज (देशी०)-गर्व्वे (पृ. १८७, १).

९. चूर्णिकार महाराज चूर्णिनी अंदर प्राकृत अने संस्कृत एम बन्ने भाषाना प्रयोगो करे छे, तेथी चूर्णिना शब्दोना अर्थोमां प्राकृतना अने संस्कृतना बन्नेना प्रयोगो छे. परंतु बहुधा तो प्राकृत ज होय छे.

१०. आ 'अ. सै. श. मां एवा पण शब्दो छे के जे अभिधानराजेन्द्र के पाइयसद्दमहण्णवोमां न होय.

अ. सै. श. नुं संपादन कार्य शरू थतां सुरतमां हता त्यां सुधी एक बखतनुं प्रुफ जोई आपवा प. ता. आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीना एकेक पट्टधर, श्रुतवारिधि, शास्त्रतत्त्वदर्शी, गच्छनायक, आचार्यश्रीमाणिक्यसागरसूरीश्वरजी महाराजे कृपा करी हती.

ए रीते संपादननुं कार्य चालतुं हतुं, तेमां प्रथम भागनुं पंदर आनी काम थई गया पछी सुरतथी दक्षिण तरफ विहार थवाना कारणे अने प्रेस आदिना प्रतिकूल संयोगोमां अमारी अनिच्छाए पण नहि जेवा कार्यमां वर्षोनां वर्षो वीती गया बाद आजे आ श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिक-शब्दकोषनो 'प्रथम भाग' विद्वानोना करकमळमां उपस्थित करी शक्या छीए.

आ प्रथम भागमां 'संपूर्ण स्वरो' आपवामां आवेला छे स्वरोमां तेमज बीजा रही गयेला 'शब्दो' तथा देशीनाममालाना शब्दो श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोष पूर्ण थतां 'परिशिष्ट' तरीके आपवा विचार छे.

प. पू. आगमवाचनादाता, देवसूरतपागच्छसामाचारीसंरक्षणकटिबद्ध, अनेक ग्रन्थोना प्रणेता, वादीमानमर्दक. चरमशासनपति महावीर परमात्माना शासनमां आगममंदिरोना संस्थापक, जैनआनन्दपुस्तकालयादि संस्थाना संस्थापक, शैलानानरेशप्रतिबोधक, युगप्रधानसदृश, वर्तमान श्रुतना ज्ञाता, स्वआराधनार्थे आराधनामार्गे करनारा, मौनपणे रही अर्धपद्मासने स्वर्गे संचरनार, प. पू. आगमोद्धारक *आचार्यवर्यश्रीआनन्दसागरसूरीश्वरजी महाराजनी पुनित सेवाना प्रतापे जे कंई बोध-शक्ति मेळवेल छे, ते आधारे अमे अमारी बुद्धि केळवीने काळजीपूर्वक आ श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोषनुं संपादन कर्युं छे

मुनिराज श्रीअभयसागरजी महाराजे संजोग मळतां आमां मार्ग बताव्यो छे. तेओश्रीने तेमज प्रो. हिरालाल र. कापडीयाने पण हमे अमे भूलता नथी.

आमां जे अशुध्धिओ जणायी छे तेनुं शुद्धिकरण पण आप्युं छे, छतां विद्वज्जनो प्रति अमारी प्रार्थना छे के क्षति देखाय तो जणाववा उदारता दाखवे.

वीरसं. २४८०, वि. सं. २०१०
ज्येष्ठ पुर्णिमा
हींगनघाट
(मध्यप्रदेश)

आगमोद्धारकउपसंपदाप्राप्त शिष्याणु
कंचनविजय
तथा
आगमोद्धारक शिष्यलव
क्षेमंकरसागर

---

* जेमना स्मरणार्थे सुरतमां 'आगमोद्धारक गुरुमंदिर' शरुहती गयु छे

संज्ञापत्रकम्।

क्रमाङ्क	संज्ञा	सूत्रनाम	सम्पादकः	प्रकाशकः
१	अनु.	मलधारगच्छीयश्रीहेमचन्द्राचार्यविरचितवृत्तियुतं श्रीअनुयोगद्वारसूत्रम्।	आगमोद्धारकः	दे.[1] ला. जै.
२	अनुत्त.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीअनुत्तरोपपातिकदशाङ्गम्।	,,	आ.[2] स.
३	अन्त.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीअन्तकृद्दशाङ्गम्।	,,	आ. स.
४	आउ.	श्रीआतुरप्रत्याख्यानप्रकीर्णकम् (गाथा)।	,,	आ. स.
५	आचा.	निर्युक्तिकलितशीलाङ्काचार्यविहितवृत्तियुतं श्रीआचाराङ्गसूत्रम्।	,,	आ. स.
६	आव.	निर्युक्तियुतभाष्यकलितश्रीभवविरहहरिभद्रसूरिविहितवृत्तियुतं श्रीआवश्यकसूत्रम्।	,,	आ. स.
७	उत्त.	निर्युक्तियुतानि श्वादिवेतालश्रीशान्तिसूरिसूत्रितवृत्तियुतानि श्रीउत्तराध्ययनानि।	,,	दे. ला. जै.
८	उप मा गा.	श्रीधर्मदासगणिदृब्धा श्रीउपदेशमाला (गाथा)।	,,	
९	उपा.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीउपासकदशाङ्गम्।	,,	आ. स.
१०	ओघ.	भाष्ययुता श्रीद्रोणाचार्यसूत्रितवृत्तिविभूषिता श्रीओघनिर्युक्तिः	,,	आ. स.
११	औप	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीऔपपातिकोपाङ्गम्।	,,	आ. स.
१२	ग	श्रीगच्छाचारप्रकीर्णकम् (गाथा)।	,,	आ. स.
१३	गणि	श्रीगणिविद्याप्रकीर्णकम् (गाथा)।	,,	आ. स
१४	चउ.	श्रीचतुःशरणप्रकीर्णकम् (गाथा)।	,,	आ. स.
१५	जं. प्र.	उपाध्यायश्रीशान्तिचन्द्रविहितवृत्तियुतं श्रीजम्बूद्वीपप्रज्ञप्त्युपाङ्गम्।	,,	दे. ला. जै.
१६	जीवा	श्रीमलयगिर्याचार्यसूत्रितविवरणयुतं श्रीजीवाजीवाभिगमोपाङ्गम्।	,,	दे. ला. जै.
१७	ज्ञाता.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीज्ञाताधर्मकथाङ्गम्।	,,	आ. स.
१८	ठाणा.	श्रीचान्द्रकुलीनाभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीस्थानाङ्गसूत्रम्।	,,	आ. स.
१९	तं.	श्रीतन्दुलवैचारिकप्रकीर्णकम् (गाथा)।	,,	आ. स.

१ दे. ला. जै.=श्रेष्ठिदेवचन्द्रलालभाईजैनपुस्तकोद्धारफंड।

२ आ. स.=श्रीआगमोदयसमिति।

२०	तत्त्वा.	भाष्योपेतं श्रीतत्त्वार्थसूत्रम् (अध्यायः, सूत्रम्)।	आगमोद्धारकः	ऋ.[३] के.
२१	दश.	निर्युक्तिभाष्योपेतं श्रीमद्विरहहरिभद्रसूरिविरचित-विवरणयुतं श्रीदशवैकालिकसूत्रम्।	,,	दे. ल. जै.
२२	दशचू.	श्रीदशवैकालिकचूर्णिः	हस्तपोथी	जै.[४] पु. नं. १६७३
२३	दशाश्रु.	श्रीदशाश्रुतस्कन्धः	,,	
२४	देव.	श्रीदेवेन्द्रस्तवप्रकीर्णकम्।	आगमोद्धारकः	आ. स.
२५	नंदी.	श्रीमलयगिर्याचार्यविहितवृत्तियुतं श्रीनन्दीसूत्रम्।	,,	आ. स.
२६	निरय.	श्रीचन्द्रसूरिविरचितवृत्तियुतं श्रीनिरयावलिकापंचकम्।	श्रीदानविजयगणी	वीर.[५]
२७	नि. चू. प्र.	[७] भाष्यचूर्ण्युपेतस्य श्रीनिशीथसूत्रस्य प्रथमो विभागः	हस्तपोथी	जै पु. नं ४८३
२८	नि. चू. द्वि.	,, ,, द्वितीयो ,,	,,	जै. पु नं ४८४
२९	नि. चू. तृ.	,, ,, तृतीयो ,,	,,	जै पु. नं.४८५
३०	पउ.	श्रीविमलाचार्यविरचितं 'पउमचरियं' (उद्धासः)	प्रो.हर्मन जेकोबी	[६]जै. ध.
३१	पिंड } पिण्ड }	भा०श्रीमलयगिर्याचार्यविहितवृत्तियुता पिण्डनिर्युक्तिः	आगमोद्धारकः	दे. ला. जै.
३२	प्रज्ञा.	श्रीमलयगिरिसूरिविहितविवरणयुतं श्रीप्रज्ञापनोपाङ्गम्।	,,	आ. स.
३३	प्रश्न.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीप्रश्नव्याकरणाङ्गम्।	,,	आ. स.
३४	बृ. प्र.	निर्युक्तिभाष्यटीकोपेतस्य श्रीबृहत्कल्पसूत्रस्य प्रथमो विभागः	हस्तपोथी	जै. पु. नं ३०३
३५	बृ. द्वि.	,, ,, द्वितीयो ,,	,,	जै पु नं, ३०४
३६	बृ. तृ.	,, ,, तृतीयो ,,	,,	जै. पु नं. ३०५
३७	भक्त.	श्रीभक्तपरिज्ञाप्रकीर्णकम् (गाथा)।	आगमोद्धारकः	आ. स.
३८	भग.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीभगवतीसूत्रम् (श्रीव्याख्याप्रज्ञप्तिः)।	,,	आ. स.
३९	मर. } मरण. }	श्रीमरणसमाधिप्रकीर्णकम् (गाथा)।	,,	आ. स.
४०	महा. } महाप्र }	श्रीमहाप्रत्याख्यानप्रकीर्णकम् (गाथा)।	,,	आ. स.

३ ऋ. के.=श्रीऋषभदेवजीकेशरीमलजी, रतलाम

४ जै. पु. नं=श्रीजैनआनंदपुस्तकालय, सुरत, हस्तपोथी नंबर

५ वीर.=श्रीवीरसमाज, अमदावाद.

७ सूत्र, निर्युक्ति अने भाष्यगाथानां मात्र प्रतीक छे.

६ जै. ध.=श्रीजैनधर्मप्रसारक सभा, भावनगर.

४१	राज.	श्रीमलयगिर्याचार्यसूत्रितविवरणयुतं श्रीराजप्रश्नीयोपाङ्गम्	आगमोद्धारकः	आ. स.
४२	विपा.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीविपाकश्रुताङ्गम्।	,,	आ. स.
४३	विशे.	मलधारिश्रीहेमचन्द्रसूरिविरचितवृहद्वृत्तियुतं श्रीविशेषावश्यकभाष्यम्।	पं हरगोवनदासः	[1]य जं.
४४	व्य. प्र.	*निर्युक्तिभाष्यटीकोपेतस्य श्रीव्यवहारसूत्रस्य प्रथमो विभागः	हस्तपोथी	जै. पु. नं. ४८७
४५	व्य. द्वि.	,, ,, ,, द्वितीयो ,,	,,	जै. पु. नं. २६६
४६	सं.	श्रीसंस्तारकप्रकीर्णकम् (गाथा)।	आगमोद्धारकः	आ. स.
४७	सम.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरि सूत्रितविवरणयुतं श्रीसमवायाङ्गम्।	,,	आ. स
४८	सूत्र.	निर्युक्तिभाष्यशीलाङ्काचार्यविरचितविवरण यु श्रीसूत्रकृताङ्गम्।	,,	आ. स.
४९	सूर्य	श्रीमलयगिरिसूरिविहितविवरणयुतं श्रीसूर्यप्रज्ञप्त्युपाङ्गम्।	,,	आ. स.

१ य. जै.=श्रीयशोविजयजीजैनग्रन्थमाला.

* सूत्रादिनां मात्र प्रतिक ज छे.

पत्राङ्क सूची

अनुत्तरोपपातिकदशाङ्गम्

वर्गा	आपत्र
१-३	८

श्रीप्रश्नव्याकरणाङ्गम्

अध्ययनानि	आपत्र
१	२५
२	४१
३	६४
४	९०
५	९८
६	११२
[illegible]	१२१
८	१२९
९	१४१
१०	१६१

श्रीविपाकश्रुताङ्गम्

प्रथम श्रुतस्कंध	
१	३३त, ४४
२-१०	८८
द्वितीय श्रुतस्कंध	
१-१०	९६

श्रीऔपपातिकसूत्रम्

आविषय	आपत्र
राजधान्यादि	२४
साधुगुणा	४८
पर्षन्निर्गम	७७
सिद्धवर्णन	११९

श्रीराजप्रश्नीयं

आविषय	आपत्र
सूर्याभ	१७
यानविमानादि	४४
मुगाकारदृष्टान्त	५९
स्नानपूजादि	११३
मोक्षगमन	१४०

श्रीजीवाजीवाभिगमं

प्रतिपत्तय	आपत्र
१	५१
२	८८
३	४०७
४	४०९
५	४२६
६	४२८
७	४३१
८	४३२
९	४६७

श्रीप्रज्ञापनोपाङ्गम्

पदानि	आपत्र
१	७०
२	११२
३	१६७
४	१७८
५	२०२
६	२१८
७	२२०
८	२२३
९	२२७
१०	२४५
११	२६८
१२	२८३
१३	२८८
१४	२९२
१५	३१६
१६	३२९
१७	३७३
१८	३९४
१९	३९५
२०	४०७
२१	४३४
२२	४५२
२३	४९१
२४	४९३
२५	४९४
२६	४९६
२७	४९७
२८	५२४
२९	५२७
३०	५३१
३१	५३४
३२	५३५
३३	५४२
३४	५५०
३५	६०८
३६	६११

श्रीसूर्यप्रज्ञप्ति

प्राभृतानि	आपत्र
१	५४
२	६२
३	६६
४	७९
५	७८
६	८२
७	८३
८	९१
९	९९
१०	१९६
११	२०१
१२	२३३
१३	२४३
१४	२४४
१५	२५५
१६	२५६
१७	२५७
१८	२६७
१९	२८४
२०	२९७

श्रीजम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति

वक्षस्कारा	आपत्र
१	८८
२	१७८
३	३८०
४	३८२
५	४२४
६	४३२
[illegible]	५४६

श्रीनिरयावलिका

वर्गा	आपत्र
१	१८
२	२०
३	३६
४	३८
५	४२



श्रीनिशीथसूत्रम्					श्रीबृहत्कल्पसूत्रम्				श्रीव्यवहारसूत्रम्				
हस्तपोथी			लीथोप्रिन्ट		हस्तपोथी				हस्तपोथी			मुद्रितः	
भागः	उद्देशकः	आपत्रं	भागः	आपत्रं	भागः	उद्देशकः	आपत्रं	आगाथा	भागः	उद्देशकः	आपत्रं	उद्देशकः	आपत्रं
१	१	१२९	१	२०२	१	१	७७	५००	१	१	१७४	१	१-६१
	२	१८२	२	३०८			१६६	१०००			०		१-९९
	३	१९४		३३४			२३५	१५००			०		१-३७०
	४	२२२		३०४			३१७	२१३०		२	२१९	२	१-८७
	५	२४७		४४५	२		१११	३०००		३	३५८	३	१-७३
	६	२५३	३	४६३			१५५	३२९२	२	४	११०	४	१-१०४
	७	२५७		४७८		२	२०३	४६४		५	१३५	५	१-३९
	८	२७०		५०५		३	२९३	७२८		६	१९९	६	१-७१
	९	२७७		५३३	३		६४	११९२		७	२८३	७	१-९५
	१०	३६१		६६५		४	१६८	८०५		८	३३६	८	१-६०
२	११	५८	४	७७३		५	२१२	३७५		९	३५५	९	१-२३
	१२	८२		८३२		६	२६७	४३०		१०	४५८	१०	१-११४
	१३	१०३		८७५			—: मुद्रितः :—						
	१४	१२३		९१६									
	१५	२७३	५	१००८	१	१	२५४	८०५					
३	१६	५६		११४१	२		६१०	२१२४					
	१७	६२		११६०	३		९९१	३२८९					
	१८	६५	६	११६७	४	२	१०२२	३६७२					
	१९	८८		१२१२		३	१३०६	४८७६					
	२०	१७२		१३३८	५	४	१५०२	५६८१					
				+२		५	१५९९	६०५९					
				+३५	६	६	१७१२	६४५०					

श्रीआवश्यकसूत्रम्

आदिविषय	आदर्श
पीठिका	५०
प्रथमवर्गिका	१३६
द्वितीयवर्गिका	१८८
गणधरवाद	२०६
निह्नववाद	३३०
नमस्कारनिर्युक्ति	४७२
१ सामायिकनिर्युक्ति	४९२
२ अध्ययनम्	५१०
३ ,,	५५०
४ ,,	७६३
५ ,,	८०१
६ ,,	८६६

श्रीदशवैकालिकम्

टीका मुद्रित अध्ययनानि	आदर्श	चूर्णि हस्तलिखित आदर्श	मुद्रित आदर्श
१	८१	३२	५०
२	९९	४१	४२
३	११९	५२	११२
४	१६०	७२	१०८
५	१९०	८९	२०६
६	२०६	१०१	२३४
७	२२३	११५	२५०
८	२३८	१२८	२९४
९	२५८	१४३	३२०
१०	२६८	१५२	३४८
चू १	२७७	१६०	३६६
चू २	२८६	१६६	३८०

श्रीउत्तराध्ययनानि

अध्ययनानि	आदर्श	अध्ययनानि	आदर्श
१	१२	१९	४६०
२	१४०	२०	४६१
३	१८४	२१	४८७
४	२२८	२२	४९६
५	२४४	२३	५१२
६	२६७	२४	५१०
७	२८०	२५	५३१
८	२९७	२६	५४७
९	३१०	२७	५५३
१०	३४१	२८	५६४
११	३५३	२९	५९७
१२	३७३	३०	६०४
१३	३९२	३१	६१८
१४	४११	३२	६३०
१५	४१९	३३	६४८
१६	४३०	३४	६६२
१७	४३६	३५	६६८
१८	४४४	३६	७१४

श्रीविशेषावश्यकम्

पृष्ठे आदिविषय	आदर्श
आभिनिबोधिकज्ञान	२४४
केवलज्ञान	३४४
उत्पादादित्रयव्याख्या	६६२
गणधरवाद	८३६
निह्नववाद	१०४४
नमस्कार	११६०
सिद्धनमस्कार	१२२७
प्रशस्ति	१३६०

श्रीओघनिर्युक्तिः

आदिविषय	आदर्श
प्रतिलेखनादि	१२७
पिण्डद्वारम्	२०७
पिण्डविशुद्धिद्वारम्	२३७

श्रीपिण्डनिर्युक्तिः

आदिविषय	आदर्श
पिण्डनिक्षेपम्	२८
उद्गमादिदोषाः	११९
उत्पादनादोषाः	१६६
ग्रासैषणा	१७८

श्रीनंदीसूत्रम्

आदिविषय	आदर्श
पर्षद्	६४
अवधिज्ञानम्	४८
मनःपर्यवज्ञानम्	१२१
केवलज्ञानम्	१२०
मतिज्ञानम्	१८४
श्रुतज्ञानम्	२६२

श्रीअनुयोगद्वाराणि

आदिविषय	आदर्श
आवश्यकानुयोगः-	
निक्षेपाः	६३
आनुपूर्वी	१०४
दशनामादिद्वार	१७०
प्रमाणादिद्वार	२४१
निक्षेपादिद्वार	२५३
अनुगमादिद्वार	२६२
नयादिद्वार	२७३

शुद्धिपत्रकम्

पृष्ठ	विभाग	पंक्ति	अशुद्धम्	शुद्धम्
५	१	९	विपतृ०	विषयतृ०
५	१	३४	दशायय०	दशाश्रय०
७	१	७	अन्त०	आन्त०
१५	२	३५	शब्दो-प०	शब्दोप०
१८	१	३		
१८	१	१८	०स	०तुण
२०	२	७	०नक्षत्र०	०नक्षत्रगान०
२१	१	१६	०प्टग्रदिष्ट्यु०	०प्युग्रदिष्ट०
२१	१	३३	०सा	०सा वा
२४	१	९	क्षिप्यते	क्षिप्यन्त
२५	२	१७	०त्	०द् अजीवयाद्विकी
२७	१	९	आनरम्	अनो –रागद्वेषक स्ववर्णितस्य सामा यिकवत कम मानो वा आर्जव मरर इयथ तस्य स्था नानि–भेदा आन यस्थानानि
२६	२	२५	प्राशा	प्रशा
२९	१	१७	मर०	मूर०
४१	१	१९	अनिश्चय	अनि ध्यवसाय
४३	२	५	०नॆ०	०नु०
५३	१	३३	०माशो	०माही
५६	१–	३०,१	आयुर गम्यत इति	आयत-गम्यत इति आय
५८	१	६	आग०	आग्रा०
६१	१	१९	ग्राो	ग्रा रे
६०	१	३०	आ मि	आ र
६४	[illegible]	५	०धाम	० म्
६५	[illegible]	३	०नि-नि०	०निनि
७२	१	७	०र्दिश	०र्दिश
७८	१	[illegible]	०माधे	०माध प्रत्याहार इत्थ
८७	२	२६	द्राप	द्राप
८९	१	१	अं्रा०	आग० प्रक्षानांत्मा बराणा वा आत्मन परस्य बोधकाराय हिमाऽस्यदण्ड ,
९६	१	२८	०द्विगार०	०द्विगा०
११५	१	७	आचाय	आचार्य
११९	२	२	०युष्मया०	०युष्मा०
१२१	२	११	समा०	सम०
१२८	१	१२	निगुरुया०	सूत्रव्याख्यान नियु क्तया० इति – श्रद्धानम्
१३६	१	२६	०हैत्व	०हेतु
१३९	१	२	०इति	०इति आदान
१३९	१	९	०नति	०नति आदान
१४०	१	२१	०देवाना०	०दाना०
१५२	९	८	०मशा	०शा
१६३	१	१	०तीथ०	०तीर्थ०
१७१	२	२४	उद्ध०	उदक०
१७२	२	७	उदि०	उर्दि०
१८९	१	१५	पनाका	पनक
२०४	२	३२	०शास्त्र	०श्र०
२०९	१	२६	०णिनग०	०णिनी०
२११	१	२५	नास्वा०	नारवा०
[illegible]	१	[illegible]	आग्रह	ओम्र
[illegible]	१	११	०ययमि	०रयमि
[illegible]	२	१५	[illegible]	मायु०
[illegible]	१	३३	आशशा०	आरता०
[illegible]	२	२८	०मता	०मता
[illegible]	२	१०	अमर्दिया	अमरता
[illegible]	[illegible]	२७	[illegible]	[illegible]

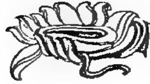


चित्रहारबन्ध :

[छन्द – शार्दूलविक्रीडित]

शश्वच्छान्तिप्रधान महामतिमत कल्याङ्कुरान कर्मठान,
भव्यापत्तिभरापहान जलजनजन्तुभ्य आनन्ददान ।
दान्तान नौमिवशा विभावितविधान व्याख्यानमन्यामनान्,
प्रांडान् सत्यमग्रान सदा ननिधिया ऽऽनन्दाभिमर्शाभरान् ॥ १७८ ॥

समर्पण



आगमोद्धार आचार्य

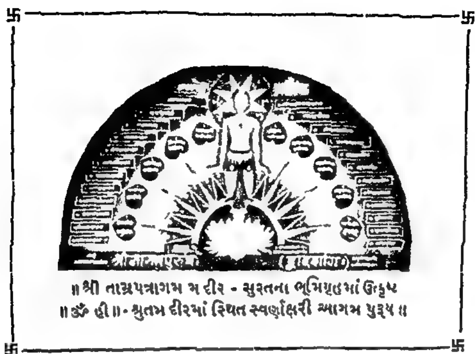
श्री आनन्दसागरसूरीश्वरजी महाराजना

चरणकमलमा समर्पण



जेओए अमारा
शहेर सूर्यपुर अने संस्थाना
सर्वोदय माटे अहोनीश अमोघउपदेशोद्वारा
कृपा वरसावी उत्कर्ष सधाव्यो छे. अमारी संस्थाना
बीजा सैंकडानु प्रथम पुष्प प्रतिक पण तेओने ज
समर्पण करवामां अमो अमारी कर्तव्यता
अनुभवीशुं. आ ग्रन्थ तेओश्रीना आगमोद्धारना
दोहन रूपे जीवनकार्य
गणाशे

— प्रकाशको



॥શ્રી તામ્રપત્રાગમ મ દીર - સુરતના ભૂમિગૃહમાં ઉત્કૃષ્ટ
॥ૐ હ્રીં॥- શ્રુતમ દીરમાં સ્થિત સ્વર્ણાક્ષરી આગમ પુરૂષ ॥

मङ्गलाकार



आगमोद्धारक श्री आनन्दसागरसूरीश्वरजी

॥ गीतार्थसूरये नमः ॥

卐 श्रीआगमोद्धारक-स्तवः 卐

[अनुष्टुप्छन्दः]

श्रीमत्पार्श्वं १ सदापार्श्वं, नत्वा ध्यात्वा च सद्गुरून् ।
प्रकुर्वे भक्तिप्रह्वोऽहमागमोद्धारकस्तवम् ॥ १ ॥

[उपजातिछन्दः]

सद्भिः प्रशस्येन सुधर्मभाजा, जैनागमज्योतिसमर्थनं सत् ।
शर्मं २ सदाराद्धश्रुतेन येन, जीयात्स 'आनन्दसूरीश्वरेन्दु' ॥ २ ॥

[वसन्ततिलकाछन्दः]

शैलाणराजमनसि श्रुतधर्मतुष्ट्या,
३ हिंसानिषेधविधिना कृतधर्मपुष्टिम् ।
गीतार्थहेमनिकषं श्रुतसारमुष्टि-
'मानन्दसागरगुरुं' नुत मुक्तपुष्टिम् ॥ ३ ॥

[मन्दाक्रान्ताछन्दः]

स्वस्तिद्वाराद्विबुधमहिताध्यात्मतत्त्वात्मकूपे,
६ धर्मार्थश्रीन्द्रियसुखभरे 'भारते' भारतेऽस्मिन् ।
७ जैनेन्द्राज्ञाऽप्रहतविधया राजमानो वदान्यः,
श्रीश्रीप्राज्य प्रथितमहिमा 'गुर्जरत्रा'ख्यदेशः ॥ ४ ॥

तस्याषाऽचेऽघरितधनदश्रेष्ठिधर्मिष्ठकीर्णे,
ग्रामाभासे सुगुणबहुले मण्डले खेटकाख्ये ।
८ धर्मज्ञप्तौ सुधिशशमतेर्लब्धतत्त्वप्रतिष्ठं,
सर्वोत्कृष्टं 'कपडवणजं' राजते पूर्णरिष्ठम् ॥ ५ ॥

यत्रोत्तुङ्गं नवजिनगृहं 'पार्श्वनाथादि'मुख्यं,
यत्रास्तव्याः बहुभवभयाः दीक्षिताः नैकभव्याः
पट्टावल्या ९ 'अभयमुनिप'-स्वर्गभूमिः मुनीना,
'वाणिज्या'ख्यं 'कपड'सहितं तन्नु वर्ण्यत केन ? ॥ ६ ॥

---

१ मध्यमपदलोपिसमासोऽत्रज्ञेयः । २ सत्=सम्यक् आराद्ध श्रुतं येनेति विग्रहः । ३ अस्मादिष्टहार्थपरकोऽयं शब्दः । ४ सारसंचयार्थकोऽयं शब्दः । ५ कोषवाची शब्दोऽयम् । ६ धर्मार्थ श्री. इन्द्रियाणि सुखभरश्च यस्य (देशस्य) इति विग्रहोऽत्र बोध्यः । ७ जैने द्राज्ञाया अप्रहतत्वप्रकारेणेत्यर्थः । ८ धर्मबोधे । ९ नवाङ्गीवृत्तिकारश्रीअभयदेवसूरीश्वरस्येत्यर्थः ।

तस्योत्तंसे कलिमलहरे वर्य'दालालपाटे,'
'मीठाभ्रातु' भवभयमथोपाश्रयस्योपकण्ठम् ।
ख्यातं रम्यं जनिततिहरं 'वासुपूज्य'स्य चैत्यं,
तत्सान्निध्ये विहितकुशल 'भाइचन्द्रो'ह्यवात्सीत् ॥ ७ ॥

तस्यासीद्वै सुकृतरुचिरा सुश्र'मञ्छा'ख्यपत्नी,
शीलोदात्ता सुगुणसदना धर्मतत्त्वे प्रवीणा ।
धर्माबाधं समनुभवतो १ पुण्यसारं तयोर्वै,
'ताराचन्द्रा'नुज'मगनलाला'ख्यपुत्रो बभूव ॥ ८ ॥

२ य पूर्वाराधितसुचरणज्ञानवैराग्यसारात्,
३ सारूप्याप्तेर्वर'धनगिरेः' कालवैषम्यवारी ।
शास्त्राभ्यासाद् तनुभवरतिस्साधुभावस्पृहाल्लु-
'धर्मस्यामे'र्जनक इव यो जातरागाल्लभार ॥ ९ ॥

यद्वद् भोगान् किल'धनगिरि'र्मन्यमानो ६ विधातान्,
७ याग्दानार्थं सुबहु यतत शुद्धबुद्धिः समायत् ।
दीक्षां लास्ये सपदि सुतरां कार्यमालोच्य कार्य-
मेतच्छ्रुत्वा चकितमनसः श्रेष्ठिनो मौनमापुः ॥ १० ॥

तद्वद्गाढं शमितमनसा 'मगनलाले'न कन्या-
८ दानात्स्थेप्रभवनलया श्रेष्ठिनोऽकारि मोघा ।
किन्त्वभ्यादेर्९स्समधिकमुदः मानसं तोषयन् यं,
श्रीवार्यंस्नातिग'नि'यमुना'ख्यां १० कर्णेहत्य कन्याम् ॥ ११ ॥

मोदाढैते जगति सुतरामुन्मनीभूय सम्यक्,
स्मारीयां कृतिकुशलतां स्वस्य विभ्राज्य मर्यां१ ।
कालव्छिन्नाधिगतिमुदित संविज्ञानोऽमदीय..
मार्गी दीक्षां सुमुनिसविधे भावशुद्धिप्रकर्षात् ॥ १२ ॥

किन्त्वज्ञानाहितमतिभराः 'मग्नलाल'स्य स्वीयाः,
दीक्षाच्यावां प्रचुरविधयाऽकार्षु[1]रूर्जस्विचेष्टाम् ।
झञ्झावातैरचलमतिमं नैकविघ्नैश्च मत्वा,
राजद्वारेऽ[2]सदभियुजनात् कार्यसिद्धिं प्रचक्रुः ॥ १३ ॥

एवं दैवाद् विषमभयके चारके [3] यद्वद्रूपात्,
भोगान् भव्यान् प्रबलविधिना भुञ्जमानादकामम् ।
लेभे पत्युः सुभग'यमुना'देस्तथा पुत्ररत्नं,
शुक्तिर्मुक्तां लभति हि यथा स्वातिजाद् वारिवर्षात् ॥ १४ ॥

१ ३ ९ १
ऊर्वीग्निग्रहशशधराब्दे सदाषाढमासे,
[4] दर्शाख्याह्ने [5] विदिनमहसः धुर्यस्वप्नात्सुतस्य ।
[6] सच्चन्द्रार्कज्ञभृगुसहिते कर्कलग्ने सुराये,
जातास्वाधु मुदितपितरो 'हेमचन्द्रे'ति सञ्ज्ञाम् ॥ १५ ॥

यो च बाल्ये धृतिमतियुत [7] मार्गदीपस्य भक्ते
नाभिव्येजे पुलिससविधे छद्मतां सत्यनिष्ठ ।
धर्माभ्यासं व्यवहृतिफलं द्राग् समभ्यस्य चित्रं,
वाचां पत्युः सुमतिलघुता स्वीयबुद्ध्या हि व्येजे ॥ १६ ॥

जैनाचारे स्वपितुरनिशं प्रेरणाल्लब्धनिष्ठ–
स्तत्त्वज्ञानाद् विमलमनसा भोगवैगुण्यमानी ।
आत्मोन्नत्यै प्रगुणमतिकः मोहभूपं जिगीषु
स्सच्चारित्रग्रहणपरतां व्येज उद्वाहकाले ॥ १७ ॥

---

१ व्यवहारे ह्येतत्पदभावाय 'धमाल–तोफान'शब्देन व्यज्यते । २ लग्नविधान–(कायदो)स्यासदालम्बनेनासदारोपहेतुकाधिकरण(दावो–केस)प्रयोगेनेत्यर्थः । ३ बद्धसदृशादिति भावः । ४ अमावास्यायामित्यर्थः । ५ शुभस्वप्नादिति भावः । ७ 'म्युनिसिपल् लिटीगान्स' इत्यांग्लभाषोऽयं शब्दः ।

६ पूज्यवर्याणां जन्मकुण्डलीयम् ।

आगमोद्धारकाणां जन्मकुण्डली

५
च
शु ४ बु
सू
३
६
के
२
७ गु.
१
८ मं
१० श
१२ रा
९
११

किन्तु प्रेम्णा परवशधियां १ बन्धूनां विघ्नरूपा
२ सन्निर्बन्धाच्चरणमलनाच्छन्दतस्स्निग्धमातुः ।
मन्वानो वै परिणयविधिं ३ चारकापत्तिरूपां,
'माणेका'ख्यां कुलजसुकनीं ४ पर्यणैषीद्विचेताः ॥ १८ ॥

मोहान्ध्याढ्ये जगति विषमं ५ ग्रस्तरूपोऽपि तु स्वा-
न्युत्तापाद्यैः ६ प्रकृतिमसहन् 'हेमचन्द्र'शुद्धः ।
ज्येष्ठभ्रातुः सुमुनिभयनाच्चेरणाद् भूरि ७ वप्तुः,
छित्त्वा मोहं समयमियतः प्राव्रज'द्धेमचन्द्रः' ॥ १९ ॥

८ किन्त्वन्मुह्यत्स्वजनजनितस्तीयकैर्ध्यान्ध्यवृत्ते-
न्यायागारे १० परिणयविधेः ९ भजतो ११ दायितं वै ।
न्यायाध्यक्षं चकितमममं धैर्यसारैस्सदुक्तैः,
१२ कृत्याऽप्यासाद् द्विगुणचरणात्कर्मणा व्यायितोऽसौ ॥ २० ॥

१३ तन्वाद्यर्हद्विमकृतिग्रहनात्कर्मणोऽपूर्वशक्ते-
र्मोहाक्रान्तोऽपि १४जनकसुचोद्यात् स्त्रियो भूषणार्थम् ।
१५आहम्मद्ये पुरि शुभविधैर्जग्मुषो जम्बुदासान्,
दीक्षोत्कोऽगाज्जनकमहयो 'निम्बपुर्यां' 'सुराष्ट्रे' ॥ २१ ॥

'सद्देशाख्यी'न् कुमततिमिरोज्जासकान दिव्यधाम्न',
निम्नायेनिथुतिनिधिविधौ माघशुक्लेपुपक्षे ।
प्रव्रज्या'नन्दयुतजलधि'हेमचन्द्रो' बभूव,
तुष्टो यस्मा निजसुतहितश्रेष्ठीनिम्नमेधात्॥ २२ ॥

१ [illegible] । २ [illegible] । ३ [illegible] । ४ [illegible] । ५ [illegible] । ६ [illegible] । ७ [illegible] । ८ [illegible] । ९ [illegible] 'पाषित' इति [illegible] । १० [illegible] (बापदा) [illegible] । ११ [illegible] 'वरियाद करी' इति [illegible] । १२ [illegible] (हेमचन्द्रो हि [illegible]) [illegible] इति । १३ ([illegible]) [illegible] ([illegible]) [illegible] ([illegible]) [illegible] । १४ [illegible] । १५ [illegible] इत्यर्थः ।

वर्षान्ते 'चाणस्म'जनतां बोधयित्वार्यतत्त्व,
'छाणीग्रामे'[१]ऽवसदपिमितं वृष्टिकालं सुधीरः।
मूर्तिन्हा[२]वाज्जिनमतरिपून् ढुण्ढकान् जोषमाऽऽस्य,
'कल्लोलाख्ये'पुरि विहरता येन दीप्तं सुचारु ॥ २९ ॥

शास्त्रैःशास्त्र्याचकितसुबुध'स्तम्भने' यो ह्यकार्षी-
च्चातुर्मासं वसुमित[३]मथो कृष्टधर्मप्रचारः।
प्रश्नोत्कराञ्जिनमतहितात् पार्श्वचन्द्रान्यतीर्थ्यान्,
कृत्वा वादे प्रतिहतधियो भासिता जैनदृष्टिः ॥ ३० ॥

वर्षान्ते षड्रि[४]युतभविकं सङ्घमादाय भव्यं,
यात्रां कृत्वा विमलगिरिसत्तीर्थराजस्य सम्यक्।
भव्योद्बोधं सुविधिविचरन् वर्यसाणं'पुर्यां',
चातुर्मासं नवममवसच्छास्त्रतत्त्वप्रकाशी ॥ ३१ ॥

चातुर्मासत्रय'महमदावाद'माश्रित्य लब्धा,
शाब्दे[५] न्याये रुचिरपटुता येन विद्वत्सुमान्या।
कृत्वा रम्यां सुविधि तमसां[६] नोदिकां तीर्थयात्रां,
दुष्कालार्त्तो सहकृ[७]तिनिधिं कारिता 'पत्तने'[८] ये ॥ ३२ ॥

[८ ५ ९ १] नागाश्वाङ्केन्दुमितशरदो माधराकाह्निरम्ये,
प्रायच्छ[९]द्धर्मजजरणछोडाय दीक्षां सुशिक्षाम्।
आद्यं शिष्यं 'विजयसहितं सागरा'न्तं विधाय,
[२ ५ ९ १] वर्षे ग्रहेषुनिधिकुभवा 'भावपुर्यां'[१०]मवात्सीत् ॥ ३३ ॥

---

१ नवमम्। २ मूर्तिपूजाद्वारेण। ३ अष्टमम्। ४ एष हि शब्दः भाषाया 'छरीपालतो सघ' इत्युच्यते। ५ व्याकरणे इत्यर्थः। ६ पाठनाश्रित्यर्थः। ७ 'सहायकारी फंड' इति भावः। ८ गूर्जरदेशीयाणहिलपुराख्य पत्तने इति भावः। ९ (वैशाखशुक्ल) पञ्चम्यामिति [illegible] भव्यादेः। १० भावनगरे इत्यर्थः।

शास्त्रोपज्ञं हितमुपदिशन् भूरिभव्यप्रबोधं,
वर्षाकालं[1] मनुमितमथो 'राजपुर्या'[2]मुवास।
तत्रा श्री'नेमिमुनिपति'नोद्वह्य सिद्धान्तयोगान्,
'पन्न्यासाख्यं' पदमलभत ज्येष्ठशुक्ले दशम्याम् ॥ ३४ ॥

वर्षां नीत्वा 'कपडवणजे' धर्मकृत्यैस्सुरम्यै-
र्यात'स्सौराष्ट्र'मथ विचरन् देशनादानदक्षः।
कृत्वैतस्तारणवरगिरे[3]स्स्पर्शनां धर्मवाचा,
प्रीतैः[4] 'पेथापुर'परिषदो योजकैस्सत्कृतोऽभूत् ॥ ३५ ॥

मज्जद्भव्यान् भवजलनिधौ रक्षिता जैनवाग्भि-
र्वर्षं[5] नीत्वाऽऽगमविधियुते 'भावराजाख्यपुर्यां'[6]।
'सूर्यंद्रङ्गे' विविधसुमहैस्सत्कृतस्सूरतीयै-
श्चातुर्मासीं 'सुरतनगरे' यापयामास रम्याम् ॥ ३६ ॥

चैत्यान् सर्वान् सविधि 'सुरते' श्राद्धसङ्घेन नत्वा,
गत्वा 'मुम्बापुरि' भविजनैः प्रार्थितो 'लालबागे'।
गौराङ्गाणां 'समितशिखरे' हर्म्यसन्निर्मिमीषां,
धैर्यात् सत्ताभियमगणयन् ध्वस्तवान् यः क्षणेन ॥ ३७ ॥

'हेम्ला. भ्रातु'र्निधिमपि वरं स्थापयित्वोपदेशा-
दारेभे सद्विषयबहुलग्रन्थरत्नप्रकाशम्।
मङ्क्षु नीत्वा[7]ऽभयविधुमुखं 'चान्तरीक्षाख्यतीर्थं,'
यात्रां[8] चक्रे स्वरिरिगिरेः श्राद्धवर्यैस्समेतः ॥ ३८ ॥

धाष्ट्यं नग्नै[9]स्सुबहु विहितं तत्र पूजाप्रसङ्गे,
मिथ्याभ्याख्यानमपि च ततो न्यायगेहे प्रयुक्तम्।
जित्वाऽऽकार्षु झगिति गुरवस्सत्यतत्त्वप्रयोगा-
दाङ्ग्लन्यायाधिपतिहृदये जैनधर्मप्रकाशम् ॥ ३९ ॥

---

१ चतुर्दशमित्यर्थः। २ राजनगरे-अहमदावादपुरे। ३ तारङ्गातीर्थस्येत्यर्थः। ४ पेथापुरीयप्रान्तिकपरिषदि गुरुवरस्य ज्ञानमल्लत्वेतत्सूचकोऽयंपादः। ५ चातुर्मासद्वयमित्यर्थः। ६ भावनगरे-राजनगरे। ७ अभयचन्द्रसूरिणस्सङ्घपतिपदेन नियोजितमित्यर्थः। ८ 'छरी पालतो संघ' इतिभावः। ९ दिगम्बरैरित्यर्थः।

बाणर्त्वङ्केन्दु[५ ६ ९ १]मितसमसि[१] प्रावृषं 'येवलायां,'
स्थित्वोद्वाह्य प्रथममुपधानव्रतं श्रावकाणाम् ।
'सूर्यद्रङ्गे' जलदसमयौ यापितौ धर्मकृत्यै-
र्दीक्षित्वैतर्हितनगणपं[२] 'माणिकं' चान्यभव्यान् ॥ ४० ॥

धर्मकान्तिच्छलमुपदधन् लालनाख्यो हि विघ्न-
मन्य'स्सिद्धाचल'भुवि तदाऽपूजयत्स्वं शिवाङ्गैः[३] ।
पाखण्डं तत् भृशमपगतं कर्तुकामैर्गणीन्द्रै-
र्मन्त्रश्रीः कान्तिविजय[४]गुरुैस्सहवाहः कृतस्स. ॥ ४१ ॥

स्थित्वा[५] वर्षे[६] विषयजिनमौ 'स्तम्भतीर्थे' च'छाण्यां,'
ज्येष्ठभ्रात्रे 'विजयमणये' चर्यपन्न्यासभूपाम् ।
दृष्ट्वा तीर्थानि सविधि नमन् 'पत्तनं चाणहिल्लं.'
भव्यश्रोतॄन् जिनमतसुधां पाययन्नाप रम्यम् ॥ ४२ ॥

तत्रायाप्य श्रुत[७]वरमुदाप्यायिनीं भव्यवर्या,
सङ्घस्थित्यां[८] तपसि[९] धवले[१०] दिक्तिथौ मल्लितीर्थे[११] ।
अज्ञानान्धं[१२]तमसमथनायागमोद्धारकश्री-
श्रीऽथां संस्थाप्य समितिमथो हर्षयामास भव्यान् ॥ ४३ ॥

प्राक्प्रत्नं य'स्स्वगुरु'जयवीरा'भिधैरागमाना-
मुद्धारार्थं चरमसमये' पालितुं तद् यथेष्टम् ।
यत्नायासेन च गणिवरस्साधुसङ्घोपकृत्यै,
प्रारेभे मुद्रणमथ महत् स्वाश्रयेणागमानाम् ॥ ४४ ॥

---

१ वर्षे । २ वर्तमानकालीनगच्छाधिपतिमिति भाव. । ३ शिवनीदेवसीप्रभृतिभि । ४ प्रवर्तककान्तिविजयमहाराजमुख्यै सूरिभिरित्यप्याहार्यम् । ५ चातुर्मासद्वयम् । ६ त्रयोविंशति–चतुर्विंशतितमजिनयोः । ७ श्रुतज्ञानस्य वरमुद्–हर्षम्प्याप्यायिनी–पोषिका । ८ चतुर्विधसङ्घस्योपस्थितिसूचकमिदं पदम् । ९ वैशाखमासे । १० दशम्याम् । ११ भोयणीतीर्थे । १२ आगमोदयमितिसूचकोऽयं शब्द ।

वर्षायां 'पाटण'मुपगतैर्वाचनाऽथा ह्यकारि,
निर्ग्रन्थानां वरमतिमतामागमाभ्यासवृद्ध्यै ।
तस्यां श्री'सूयगडदशवैकालषट्त्रिंशिकादी'न,
व्याख्यायाऽयुः 'कपडवणजे' वाचनायै गणीशाः ॥ ४५ ॥

तत्र व्याख्याय पट्टु 'ललितावश्यकादी'न[1] सुयत्नं
जग्मुर्वर्षार्थं 'महमदपुर्यां'[2] स्वधर्माभिवृद्ध्यै ।
तत्र'स्थानाङ्ग'[3]मथ सविशेषाकरं वाचयित्वा,
वर्षामस्थात् 'सुरतनगरे' भासयन् जैनधर्मम् ॥ ४६ ॥

तत्राकार्षु[4]र्युगशरमिते वाचने 'चानुयोग[5]-
श्रीनन्द्याचारसुत्रमहदावश्यकाद्या'गमानाम् ।
एवंकारात्[6] सुयतिसमजे कालदोषात्प्रहीणं,
सच्छास्त्राणां विततपठनं संततं वृद्धिमाप ॥ ४७ ॥

'आनन्दाब्धेः' प्रवरगणिनस्तत्यनिष्ठागरिष्ठौ,
भक्त्युत्साहौ श्रुतजिनमतस्फीतिकार्येषु दृष्ट्वा ।
(४)(७)(९)(१)
वर्षेऽब्ध्यृषिग्रहतनुमते राधशुक्ले[7] दशम्या-
माप यत्वं 'कमलविजया'स्सूरयः 'सूरते'ऽदुः ॥ ४८ ॥

स्वर्णे माणिक्यमिव खचितं योग्यसाम्यं च सूरे-
र्वीक्ष्य प्रीतस्सुमहमकरोत्'सूर्यपुर्यां'स्सुसङ्घः ।
न्यायागारे[8]ललनविषयानिष्टवादं विजित्य,
धर्मभ्राजी मुनिपतिरथो 'मोहमय्यां' समेतः ॥ ४९ ॥

---

१ ललितविस्तरा–आवश्यकसूत्र १/६–अनुयोगद्वारसूत्र–योगदृष्टिसमुच्चय–उत्तराध्ययनसूत्र १/३ मन्यानित्यर्थः । २ अमदावादनगरे । ३ विशेषावश्यकभाष्य ६ सहितमित्यर्थः । ४ चतुर्थो–पञ्चमो चेति भावः । ५ ललितविस्तरा–योगदृष्टि० अनुयोग० २/१–आवश्यक० १/४–उत्तराध्ययन० १/३–विशेषावश्यक० ६/४–स्थानांग० १/६–सूत्राणामित्यर्थः । ६ साधुसङ्घे इति भावः । ७ वैशाखशुक्ले । ८ लालन–शिवजीप्रकरणे न्यायागारेऽपि विजित्येत्यर्थः ।

(२८)　　१

लब्धख्यातिः प्रावृषि वृषमहिम्नोऽङ्को नैककार्यै-
　　र्दुर्भिक्षार्त्तीयनिधिकरणेऽप्रेरयद् दानशौण्डान्।
'कीकाभ्रातु'र्भवनमुपितस्सूरिराड् 'भायखल्ले,'
　　स्वागःक्षान्त्यै विहितविनयः प्रार्थितो लालनेन ॥ ५० ॥

(५) (७) (९) (१)

चातुर्मासे शरमुनिनवेन्दौ श्रुतप्रोक्तरीत्या,

२

　　देवस्वोत्सर्पणविवदने वादमल्लान् विजेतुः।
सूरेस्सङ्घार्पितनिखिलसद्ग्रन्थरत्नानि सङ्घो

३

　　'जैनानन्दश्रुतवरगृहे'ऽस्थापय'त्सूरतीयः' ॥ ५१ ॥

'सिद्धाद्रेर्जीवणनवलचन्द्रौ'हि यत्प्रेरणातो,
　　यात्रासङ्घं विविधसुमहैः पादचारं निनाय।
कृत्वा यात्रां सह सुभविकैस्सूरिवर्यश्चकार,

४

　　'पालीताणे' गुहमुखमितां वाचनां साधुसङ्घे ॥ ५२ ॥

'पिण्ड-प्रज्ञापन-भगवतीनोघनिर्युक्तिका'श्च,
　　व्याख्यायो ह्य शुभमुपधानव्रतं भाविकानाम्।
विज्ञप्ति'मालववसिमतां' मानयित्वा च सूरि-

५

　　र्द्दिशष्यै साकं किल 'रतिललामाख्यपुर्यां' समेत ॥ ५३ ॥

धर्मोन्नत्या 'ऽऽगमसहितां केशरीमल्लनाम्नीं,

६

　　संस्थां' तत्राखिलजिनमतोद्भासिकां स्थापयित्वा।

७

'व्याख्याप्रज्ञप्तिसमवयसूत्रादिप्रज्ञापना'नां,

८

　　चक्रे व्याख्यां कुलगिरिमितां वाचनां कर्तुकामः ॥ ५४ ॥

'शैलाणाख्यं' पुरमथ यतीन्द्रो हि सङ्घाग्रहेण,
　　चातुर्मासार्थमुपगमितो धर्ममुद्धान् प्रबोद्धुम्।
मत्वा धन्यं नृपतिरपि गुर्च्छाद्भवाचो निशम्या-
　　मार्युद्घोषं दयितहृदयस्स्वीयराज्ये चकार ॥ ५५ ॥

---

१ धर्मप्रभावनाया इत्यर्थः। २ उत्सर्पण(बोली)स्याशास्त्रीयताया देवद्रव्यस्य च चर्चासूचकमेतत्पदम्। ३ श्रीजैनानन्द-पुस्तकालये इत्यर्थः। ४ पञ्चोमित्यर्थः। ५ रतलामनगरे इत्यर्थः। ६ मिश्रशब्दो हि विप्रापर्यायोऽतोऽत्र निर्विघ्नतया जिनमतस्योद्भासकारिणीमित्यर्थो ज्ञेयः। ७ छन्दोभङ्गभिया विहितः श्रीसमवायाङ्गसूत्रार्थे एतादृशपदप्रयोगः मर्षणीयः धीधनैः विद्वद्भिः। ८ सप्तमीम्।

पूर्णे 'शैलाणनृपविषये' ह्यष्टमीरुद्रदर्शा-[1]
ऽऽख्याताह:पर्युषणदिवसे मारीचारं न्यषेधीन् ।
प्राच्यं वृत्तं ह्यकबरविबोधु: स्मृतिं 'हीरसूरे'-
रानीयायाद्विविधनिगमान पावयन् 'रत्नपुर्याम्[2] ॥ ५६ ॥

प्रेमप्रप्त्या श्रुतवरतपस्सम्यगुद्याह्य चान्यैः-
पुण्यैः कृत्यैर्जलदसमये भ्राजयित्वा सुधर्मम् ।
'माण्डूतीर्थे'[3]प्रचलितविधौ बाधकं 'धारभूपं,'[4]
हस्तक्षेपोज्झि[5]रसविधयेऽबोधयत्तत्र गत्वा ॥ ५७ ॥

'माण्डू-भोपावर'लसितसच्चैत्ययोस्स्वोपदेशा-
ज्जीर्णोद्धारं प्रवरभविकैः कारयित्वा यतीन्द्रः ।
बोधं 'पञ्चेडपुरपतये' 'सेमलीठक्कुराय,'
प्रादात्ताभ्यां निजभुवि ततो मारयो[6] वारिता वै ॥ ५८ ॥

वर्षाकाले जिनमतविभां वर्द्धयन् 'रत्नपुर्यां,'
शास्त्रैर्वादे यतिप[7]विजयं त्रिस्तुतीयं व्यजैषीत् ।
सङ्घस्याभ्यर्थनमथनिशम्योपधानं सुवाह्य,
'सम्मेताद्रिंव्रजितुमभियङ्क्' प्रतस्थे मुनीन्द्रः ॥ ५९ ॥

मध्ये मार्गं निजप्रतिभया धर्मभासं वितन्वन्,
लोकं नानाविधमुपदिशान् 'कालिकाता'मयासीत् ।
(४) (३)
चातुर्मासे युगगुणमिते तत्र चैत्यादिधर्म्य-
स्थानस्थित्यै बहुतरनिधिः कारितो देशनातः ॥ ६० ॥

---

१ अष्टम्यामेकादश्याममावास्याया पर्युषणासु चेत्यर्थः । २ रतलामनगरे । ३ माण्डवगढार्थपरकमिदं पदम् । ४ धारसंस्थानाधीशमिति भावः । ५ उत्कर्षेण निरसनार्थमित्यर्थः । ६ हिंसाः । ७ श्रीयतीन्द्रविजयाह्वमितिभावः ।

(०) (२)

तीर्थेशानां खयमलमितानां सुनिर्वाणभूमे-
'स्सम्मेताद्रे': प्रथितयशसः पुण्ययात्रामकार्षीत्।
राज्ञो 'दुद्धेडियविजअसिंह'स्य भक्त्या विहृत्य,
वर्षाहेतोस्सुमुनिपनयोऽजीमगञ्जे' न्यवात्सुः ॥ ६१ ॥

यात्रूलोकं विषयजसुखास्वादलीनं वियोध्य,
संवेगापूरितसुवचनैर्धर्ममार्गे न्ययुङ्क्त।
दीक्षाब्रह्मव्रतविधियुतानुत्सवान् कारयित्वा,
पावं पावं विविधनिगमान् 'सादडी'ग्राममापु. ॥ ६२ ॥

पावं पावं जिनमतसुधर्मिभव्यलोकं यतीन्द्रः,
प्राग्वाटानां मरुजसहजं वैमनस्यं विरत्नम्।
कृत्वा दूरे श्रुततपविधिं सोत्सवं कारयित्वा,
बोद्धु धर्म शिथिलकृतिकान् 'मेदपाटं' विजह्रे ॥ ६३ ॥

१ (७) (३)
नीत्वा वर्षा'मुदयनगरे' सम्मितां चातुर्स्थै-
र्जग्मुस्सङ्घेन सह गुरयः 'केशरीया'ख्यतीर्थम्।
तत्रौद्दण्ड्यं क्षपणककृतं स्वीयबुद्ध्या व्यपास्या-
ध्यारोप्योच्चैस्सितपटयशोऽवर्धयन सद्ध्वजं ये ॥ ६४ ॥

नानाटीयैः प्रतिहतमथो धर्मतेजो विवर्ध्य,'
न्याणगारेऽधिगतविजया आययुर्गूर्जरत्रान्'।
चातुर्मासं सुमुनिसहिता ह्यम्मदावादपुर्यां,'
तस्थुर्भव्यान् विविधममलं जैनतत्त्वं दिशन्तः ॥ ६५ ॥

'भाकुभ्रातु'र्विनतिवशगा 'आश्विनी सेठचन्नी-
मोर्ली' दिव्यां नवपदमहो योधिकां कारयन्त।
३
संस्थां संस्थाप्य च नवपदाराधिकां स्वोपदेशा-
४
द्यंगूमेन्मोमायटिचिनयतंश्चास्युरास्तिश्यतत्त्वम ॥ ६६ ॥

---

१ उदयपुरे। २ दिगम्बरविहितम्। ३ श्रीनवपदआराधकसमाजस्थापनाया. सूचक ऽयं पादः। ४ विद्याशाला(डोसीवाडानी पळ) मध्ये आस्तिक-नास्तिक चर्चा स्फोटस्तत्र'गद्ध्याख्यानदातां सूचकोऽयं पादः।

तद्व्याख्यानात् क्षुभितमनि[1]कान् शिक्षितान् शास्त्रपाठे

स्वस्तोऽप्यार्यं[2] धनजिनगणौचित्यनत्रं विरोध्य ।

याता 'श्रीदेशविरतिसमाज' ततस्स्थापयित्वा,

'श्रीमोहमय्या'मतिशुभमतै[3]राद्यतन्मेलनाय ॥ ६७ ॥

वर्षाराम(१) निधि(३)गुणमितं यावितु[4] 'जामपुर्यां'

यान्तो मार्गऽहमदनगरे' 'तीर्थसिद्धाचलस्य' ।

रक्षाहेतोस्सपदि निधये प्रेरयित्वा सुभव्यान्,

रक्षाधिक्यं द्रविणचयतः कारयामासुरार्याः ॥ ६८ ॥

स्थाने स्थाने जिनमतमहः वर्द्धयन्तो गणीन्द्रा-

स्तिस्थन्ता वर्षा 'नवलनगर' चातुर्मासिस्थानीये ।

सत्रञ्चामाम्लगृहमथ चास्थापयन् छात्रगेह[8]

शान्ता पूज्ये धृतिमतियलात् भारतीक्षाविरुद्धा ॥ ६९ ॥

पश्चादेना स्सुरतनगरे जैनमाहित्यवृद्धि[10]

मन्त्रोक्षार्थं धनिक'नगिन मगुपुत्र'व्यबोधत्[11] ।

'मुर्शीदाबादगविजयसिंह'स्समेतोऽत्र सूरे-

र्भक्त्यन्तीश्वरणपङ्कजौ मानतो दर्शनाय ॥ ७० ॥

आसीच्छ्री'देशविरतिसमाजस्य'[12] पर्षत्सुरम्या,

दत्ता तस्यां भविकहितदा देशना सारगर्भा ।

[13] रत्नाम्भोधे 'पठनसदनस्थायि कोश विनद्धं,

दृष्ट्वा 'तत्त्वप्रसारणकरी बोधमालाख्यमस्या ॥ ७१ ॥

---

१ क्रुद्धशिक्षाप्रभावितान् नवयुवकानित्यर्थ । २ धनस्य व्यय दान वा जनान्तरे चाइमित्यर्थ, गर्द्धि दृशिन् मनय मत प्रव नज्नी औचित्यादसमर्थकत्व भीतावत्तोऽपि द्वादशशुल—क्लि मादीनां हिताहितत्वम समा सूचक पदमस्ति । ३ श्राद्धविरतिसमाजस्य प्रथमाधिवेशनायेत्यर्थ । ४ जामनगरे । ५ पञ्चाशल्लक्ष रूप्यकाणां वार्षिक दत्वा तीर्थरक्षार्थमिति निश्चय रक्षणोपाय आनन्दजीकल्याणजीपेढीप्रवृत्तिरेतच्छ्लोक प्रदर्शितास्ति । ६ जामनगरस्थित्य । ७ सत्र=भोजनशाला, आचाम्लगृह=आयंबिलशाला । ८ वर्द्धित इत्यादिविशिष्टमिति भाव । ९ निरुक्ताम्यर्थ तनत द्रष्टा इत्यर्थ । १० जैनसाहित्योद्धारकफण्डमर्थ । ११ नगीनभाइ मगुभाइ श्रेष्ठिनमित्यर्थ । १२ अधिवेशनमित्यर्थ । १३ श्री रत्नाकरजैनशास्त्रसंग्रहाधिस्थितमिति भाव ।

प्रव्राज्यानेकभविकजनान् पावयन्त स्सुराष्ट्रान्',

प्रावृट्कालं शुभकृतिभरैस्स्तम्भतीर्थे' व्यतीयुः।

संस्था प्याहम्मदपुर'मितास्तत्रसंस्थाय वर्षा,

श्रुत्वोधच्छन् 'वटपुरनृपाज्ञां[१] सुदीक्षाविरुद्धाम् ॥ ७२ ॥

सूरेश्शास्त्राभ्यसनमुदिता जङ्गमज्ञानशाले-

स्त्येवं चाशंसदतिविदुषो जार्मनी क्राउझाख्या'।

(२) (४) [२]
नेत्राम्भोधिप्रमितजलमुक्काललाभस्पृहावन्-

मुम्बापुर्यां गतभविजनप्रार्थनातो विजहे ॥ ७३ ॥

शास्त्रव्याख्याप्रथितयशसो 'लालबागे' हि सूरे

र्दीक्षापुष्टि प्रवचनविधेः क्षुब्धयूनां प्रचारैः।

व्यामूढाया ऋजुजनततेर्मोहहत्यै समित्या[३],

पत्रं संस्थाप्रथनजनितं चालितं 'सिद्धचक्रम्' ॥ ७४ ॥

'माणेकाम्भोनिधि'सदुपदेशात्प्रकृतोपधाने,

मालारोपोत्सवमुपगता 'घट्टकाहे पुरे'[४] थे।

ठशाख्यानैरस्थैस्समयसहितैस्संयमायोग्यसूचि-[५]

नाट्यं रुद्ध्वा युवजनमतं भासितं शीसनं हि ॥ ७५ ॥

पश्चाद्याता'स्सुरतनगरं' शिष्यवृन्दैस्समेता-

स्संवत्सर्यास्तिथिगतविसंवादमुन्मुध शास्त्रैः।

भाव्युत्सूत्राध्वगविषमता याऽसता व्यञ्जिता सा,

किश्वोऽद्यापि प्रकटविदिता वर्त्तते पर्वतिथ्याः? ॥ ७६ ॥

---

१ वडोदराराज्यदीक्षाप्रतिबन्धककायदार्थपरकमेतत्पदम्। २ चातुर्मासवाची अयं शब्दः। ३ श्रीसिद्धचक्रसाहित्यप्रचारकसमितेः स्थापनं सिद्धचक्राख्यपाक्षिकप्रारंभवेत्यर्थः। ४ घाटकोपरे इत्यर्थः। ५ दीक्षाया अयोग्यताप्रदर्शकं युवकसंघप्रेरितं नाटकमित्यर्थः।

नानाप्रश्नोत्थितमतिगतभ्रान्तिशान्त्यै सुपर्षत्[1],
सद्भायासात् सितपटमतालम्बिनां सद्यतीनाम् ।
० (९)(९)(१)
'आकाशाङ्काङ्कशशिसहिते वत्सरे राजपुर्यां[2],
जाता यस्यां यतिपतिवरास्सम्यगामन्त्रिता ये ॥ ७७ ॥

शङ्कापङ्कं भविकमनसो क्षालितुं दत्तचित्ताः,
गत्वा तत्र स्वकमतिभराच्छास्त्रपाठैश्च सर्वान्' ।
सन्तोष्यैता भविकविनयाग्रोरुदैस्साकमेया-
सेक्तुं सांसारिकजनगणं सूरयो 'मेहसाणाम्' ॥ ७८ ॥

मध्ये[3] वर्षं सुबहु विहित[4]श्शासनोत्साधिकार्यै-
स्वान्तःक्षेत्रे[5] सुभविकनृणां धर्मपीयूषसेकः ।
यूरोपीयः श्रुतिपटपुटं'ब्रोउन' सूरिशंसां,
पीत्वाऽमेतो ह्यमृतवचनैर्धीतवद्इक' शशंस ॥ ७९ ॥

काले काले पुनरपि पुनः सूरयः पालितेभ्य,
शिक्षा-दीक्षा-वितरणमपि प्रायशो योग्यमेव ।
तस्मात् पादार्पणकरुणया पावयन्त्वेष[6]मोऽस्मा-
नेवंसङ्घादरभरभृतः संययुः' पालिताणाम् ॥ ८० ॥

चातुर्मासे गतवति यथा भ्राजते शारदी श्रीः,
पद्मव्याजैस्सरसि सरसा सन्ततं तद्वदेव ।
सज्ज्ञानश्रीरपि गुरुवराणां च सन्तन्यमाना,
नानारूपैर्नवनवमहैर्धर्मकृत्यैश्च रेजे ॥ ८१ ॥

---

१ संमेलनमित्यर्थः । २ राजनगरे—अहमदावादे । ३ चातुर्मासमध्ये इत्यर्थः । ४ शासनप्रभावककार्यैरिति भावः । ५ अन्तःकरणरूपक्षेत्रे इति भावः । ६ आता नहि ।

'श्रीमाणिक्य'[1] 'कुमुदविजय'श्चेत्युपाध्यायवर्यौ,
पन्न्यासौ द्वौ बहुगुणयुतौ 'भक्ति'ते-'पद्मा'भिधौ च।
अत्युत्साहैस्सह शुभकृपासिन्धुवद्भ्यो भवद्भ्यो
लब्ध्वाऽऽचार्याह्वयमुपदवीं धर्मभ्राजो विरेजुः ॥ ८२ ॥

'आनन्दस्याम्बुनिधि'रिति यद् वर्तते नाम सत्यं,
प्रत्यक्षन्तत् भुवि विदधती किं न जैनी प्रजाऽभूत्।
तस्मात् सूरीन् झगिति 'नगरे जामपूर्वे'[2]ऽपि सङ्घः,
प्रार्थं प्रार्थं कथमपि चतुर्मासवासाय निन्ये ॥ ८३ ॥

अत्र कैश्चित् श्रुतकथितसिद्धान्तवाचा विरुद्धं,
प्रोक्तं वृद्धिक्षयविषयकं पर्वतिथ्याः मतं यत्।
उग्रं तत्खण्डनमथ कृतं शास्त्रदृष्ट्यापि लोके
बोधिं धाऽरं नवमतवतो लज्जितास्यान् प्रचक्रुः ॥ ८४ ॥

तत्रैवात्र जलदसमये स्थापितो 'देवबाग-
लक्ष्म्या'नाम्नाऽऽश्रमवर उपादिश्य लोकं सुखेन।
पश्चाद् भक्तो 'नगरधनपः पोपटाह्व'स्सुभक्त्या,
सौराष्ट्रीयाखिलजिनपसत्तीर्थसंस्पर्शनाय ॥ ८५ ॥

सङ्घं नीत्वाचरणचलनं षड्रिसम्पालनोत्कं,
सानन्दो[3]ऽगात्, सकलमपि तद्वर्णनं चाग्रीत्या।
'तीर्थाः सौराष्ट्रविषयभवा सङ्घयात्रा च'[4] नाम्ना-
ख्याते ग्रन्थे लसति तदिदाऽऽयोज्नुमार्गेतयन्ध्रून् ॥ ८६ ॥
(मन्दाक्रान्ता)

---

१ श्रीमाणिक्यसागरोपाध्याय श्रीकुमुदविजयोपाध्याय-श्रीभक्तिविजयपंन्यास-श्रीपद्मविजयपंन्यासेभ्य आचार्यपदप्रदानं [illegible] पुरुषम्। २ जामनगर। ३ आनन्दसागरसूरीश्वरः [illegible]। ४ 'सौराष्ट्रना तीर्थो अने संघयात्रा' [illegible]।

(८) (४)
एवं यत्सन्धिमितमथ ये वृष्टिवासं जनानां,
पुण्याढ्यानामतिविनयतः'सिद्धक्षेत्रे हि कृत्वा ।
१
'स्तातारम्भं चरमजिनपस्याह्वया ह्यागमानां,
रक्षागेहस्य च' शुभविवेके कारयामासुरत्र ॥ ८७ ॥

२
अन्यत्तत्र श्रमणनिकरग्रन्थसंग्राहि सद्मं,
संस्थाप्यारं शुभ'महमदावादपुर्यां' यतीन्द्राः ।
३
भक्त'श्रीमोहन' इति महच्छ्रेष्ठिना सद्व्रतानां,
रम्ये ह्युद्यापनविधिमलेऽभ्यर्थ्यमानाः प्रजग्मुः ॥ ८८ ॥

सिद्धं शास्त्रैरुपकृतिकरं लक्षशो रूप्यरैस्तं,
सम्पाद्योद्यापनविधिमलं 'झाम्पडापोल' मध्ये ।
(५)(५) १)(१) ४
तत्रावात्सु शरनवनवैकाङ्किते्ऽब्देऽब्दकाले,
५
चार्व्यां वीथ्यां सुगुरुचरणा 'नागजिद् भूधराणाम्' ॥ ८९ ॥

६ ७
पश्चादेता क्षरणसमयं यापयित्वाऽऽगमाना-
मागारस्य प्रचलितविधिं वीक्षितुं 'पालीताणाम्' ।
साङ्गोपाङ्गं त्रुटिविरहितं सत्यमारब्धकृत्य,
त्यक्त्वा सर्वस्वमपि सततं साधयन्त्येव सन्तः ॥ ९० ॥

कृत्वा लोकोत्तरसुचरितं ये तरन्तीह लोकं,
धन्यास्ते वै सफलजनना भूभरा सन्ति चान्ये ।
सत्यामेतां भणितीमथ ते कर्तुकामा यतीन्द्रा-
८
स्तत्रातिष्ठन् घरसलिलदाऽऽसेककालत्रयीं ते ॥ ९१ ॥

१ श्रीवर्धमानजैनागममन्दिरस्य स्तातमुहूर्त्तमिति भावः । २ श्रमणसंघपुस्तकाल्याख्यज्ञानालयस्थापनामित्यर्थः । ३ श्रेष्ठिवर्य-श्रीमोहनलाल छोटालाल इति भावः । ४ वृष्टिकाले । ५ पोलवाची अत्र शब्दो ज्ञेयः । ६ चातुर्मासमिति भावः । ७ शिलोत्कीर्णागममन्दिरस्येत्यर्थः । ८ चातुर्मासत्रयमित्यर्थः ।

दीर्घायासैर्गणधरवरप्रोक्तजैनागमानां,

पाठं शुद्धं दृषदुदरगं शिल्पविद्याप्रवीणैः ।

कारं कारं किमु न कलितं सूरिभिः कर्म चित्रं,

यस्माज्जातो ह्यपलनिकरोऽप्यागमज्ञ (भ्राट्) परे के? ॥ ९२ ॥

रम्योपाध्यायकपदमदुः 'श्रीक्षमासागरेभ्यः,

श्रीमच्चन्द्रेभ्य उचितपदं चारु पन्न्यासकाह्वम् ।

वर्षे चाग्रे[1] गणधरगृहं सिद्धचक्राह्वपूर्वं,'

संस्थाप्यैव[2] जिनमतविभाभासकं सत्समाजम् ॥ ९३ ॥

(१)(९)(९) १)
अङ्काङ्काङ्काब्जमितशरदि ह्यागमानां गृहस्य,

सत्त्वं पूर्त्तावभिनवप्रतिष्ठाविधिं माघमासे ।

पञ्चम्यामञ्जनशुभशलाकोत्सवेनापि सत्रा,

सन्मूर्त्तीनां श्रुतविधियुतं कारयामासुरत्र ॥ ९४ ॥

सम्पाद्यैवं 'कपडवणजश्रेष्ठिचीमनलाल-

डाह्याभाईत्यभिधपरमश्रावकप्रार्थनातः ।

निश्रायां सूरिवरसुगुरोश्चाप संयोजितायाः

एताश्चैत्र्या नवपदसमाराधनायाः सुसिद्ध्यै' ॥ ९५ ॥

चातुर्मासं भविकहितकृच्चापि तत्रैव कृत्वा,

श्रीसङ्घस्यानुनयसहितप्रार्थनान्मोहमय्याः' ।

धर्मोद्धारं विहृतिममलं कुर्वतां भक्तवृन्द-

स्थाने स्थाने मुदितमनसा स्वागतं सुष्ठु चक्रे ॥ ९६ ॥

---

१ श्रीसिद्धचक्रगणधरमन्दिरमित्यर्थः । २ श्रीजिनधर्मप्रभावक[illegible] परमगुरुः ।

शामं शामं चिरसमयजां सद्दिदृक्षा पिपासां,
व्याख्यानैः स्वैरपि च जनता अभ्यषिञ्चन् प्रकामम् ।
सम्प्राप्ता 'श्रीसुरतनगरं' यत्र चाभूतपूर्वं,
भव्यं भव्यैः कृतमतितमां स्वागतं भासमानम् ॥ ९७ ॥

अर्धक्रोशादपि[1] चलसमारोह आसीद् दवीयान्,
यस्मिन् केतुप्रवर[2]लसितप्राग्रहस्ताश्च केचित् ।
सुश्रेष्ठा[3]स्संचरगुणमिताः (५७) बेण्डवाद्यीयसङ्घाः (!)
वादं वादं शुभततघनानद्धवाद्यान् विरेजुः ॥ ९८ ॥

लक्षाधिक्या नगरजनता राजमार्गेऽभिसूरिं,
शीर्षाण्युच्चैर्गुणरतिभरान्नम्रयन्ती बभूव ।
मार्गे मार्गे वसन-कुसुम-स्वर्ण रूप्यादिपात्रैः,
श्चालं द्वाराण्यति विरचितान्यार्थ सद्भक्तिभावैः ॥ ९९ ॥

गिन्नीमुक्ताप्रभृतिसमुदयैश्च रत्नैर्गहूंली,
वद्धचजातस्तुचिगुणलसद् रागदाद्गाद् यतीशे ।
स्वर्णैः रौप्यैर्वरसुम[4]भरैस्सत्यमुक्ता[5]सुलाजैः
प्रोद्यद्वर्द्धं विविधसुमहैस्सत्कृते'स्सूरतीये' ॥ १०० ॥

साम्बेलानांभयशरमितानां (७) (५) मुद्रापादिदीप्ति,
स्सूरेर्नानासुगुणमहिमाख्यायकास्साधुवादाः[6] ।
रीत्या चैव प्रचुरनिरावर्णितुश्चाप्यश्वया,
ग्रन्थाऽज्ञेया प्रविरानकथा 'सागरस्वागता'-स्यात् ॥ १०१ ॥

चश्लारीयाकुलजसुजनैः क्षत्रियैः भीलपैर्वं[7],
एकाह्नि विंशतिमियसहस्राधिकं रार्ज्ययित्वा ।
सूरे पादार्पणमुदितया कारयित्वा सुभक्त्या,
पायं पायं जिनमतसुधां सूरिवस्त्राज्जहर्षुः ॥ १०२ ॥

---

१ स्वागतयात्रा (सामैयु) २ झडा-निशानधारिण । ३ उत्तमाः । ४ श्रेष्ठकुसुमसमूहैः । ५ सत्यमुक्ताफलानां वर्धापनैरितिभावः ।
६ व्यवहारे हि एतच्छब्दार्थे "साइन बॉर्डो" इतिपदेन कथ्यते । ७ अन्यालयरतिरिति ।

सत्रा सङ्घेन च विधियुता [1]चैत्ययात्रा सुरम्या-
　ऽकार्षास्ते यद् समविवरणं मुद्रितं [2]पुस्तके वै।
सोत्साहं विंशतिमणमितान् मोदकान् संवितीर्य,
　धन्या जाता 'सुरत'-जनता देशनादर्शनाभ्याम् ॥ १०३ ॥

चातुर्मासं तदनु विहितं '[3]मोहमय्या' प्रशस्तं,
　यस्मिन् धर्मोन्नतिततिकृती[4] कारयित्वा सुबह्व्यः।
भूयोऽप्येतास्सुरतनगरं श्रावकाभ्यर्थनात
　स्तत्राभूवन् स्थिरचरमाः वृष्टिवासाश्च पञ्च ॥ १०४ ॥

२ ० ० ३
द्वया-काशाभ्रद्विमितशरदो [5]माधवे मासि शुक्ले,
　षेकादश्यां शुभशनिदिने [6]श्रावकेभ्यः सुशस्ता।
संस्थाऽस्थापि प्रयतमनसा ताम्रपत्रागमानां,
　भव्यादर्शस्थितिकरमहन्मन्दिरस्थापनाय ॥ १०५ ॥

[7] वर्षे [8] चाभ्रेऽहमदवरपू श्रेष्ठिनो [9] माकुनाम्न
　हस्ताभ्यामागमवरगृहस्यादिमं शातकर्म।
सत्कार्योर तदनु च शिलारोपण [10] वाडीलाले-
　त्याख्यश्रेष्ठिप्रवरकरत कारित मोदपूर्वम् ॥ १०६ ॥

२ ० ० २
वर्षे रुद्रा क्ष ख ख-मिथुने ह्याश्विने शुक्लपक्षे,
　आशातिथ्या[11] सुजिनप्रतिमा पालिताणात इद्धा।
[12] सद्विंशत्युत्तरशतमिता आगमागारहेतो-
　रानाय्याकारि च सुविधिना तत्र भव्यप्रवेश ॥ १०७ ॥

४ ० ० २
'[13]तुर्योदर्द-द्वयभ्र नयन-मिते ह्यायने माघशुक्ले,
　शुक्रे श्रेष्ठे क्षणतिथियुते सन्मुहूर्ते समासाद्य।
सन्मूर्तीनामपरिगणितोत्साहयुक्तैर्जनौघै
　रम्ये तस्मिन् श्रुतवरगृहे कारिता सुप्रतिष्ठा ॥ १०८ ॥

---

१ चैत्यपरिपाटीत्यर्थः । २ 'सूर्यपुरनु स्वागत' इत्यादि इति शेषः । ३ मुम्बईनगरे । ४ धर्मस्योन्नतिविस्तार कारिकार्याणीत्यर्थः । ५ वैशाखे इत्यर्थः । ६ श्रावकद्वारेत्यर्थः । ७ २००३ वर्षे इत्यर्थः । ८ अमदावादनगराधिप इत्यर्थः । ९ मांकुभाईत्यभिधया प्रसिद्धस्य माणेकलाल-मनसुखलालाख्यश्रेष्ठिन इत्यर्थः । १० सुर्यपुरीयख्यातव्यापारि धीवाडीलाल चन्द्रभुजाख्यश्रेष्ठिवरेत इत्यर्थः । ११ दशमीदिने । १२ १२० सङ्ख्याका । १३ शणशब्दस्य । काव्याचित्यमत्र ज्ञेयं, कालस्य च भूतवर्तमानभाविभ्येण त्रैविध्यस्य विदितत्वात् तृतीयायामित्यर्थो बोध्यः ।

संवत्सर्यास्तिथिवरसमाराधनायाः प्रसङ्गे-
ऽस्मिन्नेवाब्दे समुदितविसंवादनिर्यासकार्ये।
नैकैर्यैर्यैः प्रचलितविधेर्यं श्रुतप्रोक्ततां यैः
संसाध्यान्यानपि जिनपथः पोषणोत्कान् प्रचक्रुः॥ १०९ ॥

काले गच्छत्यविरतमितो ह्यग्रिमे पौषमासे,
कृष्णे पक्षे [1]शरतिथिगतेऽचिन्तितो वायुरोगः।
वृद्धिं यातो बहुतरचिकित्साविधिज्ञैः सुयत्नात्,
सञ्ज्ञाः जातास्समुपचरिताः किन्तु शान्तो न जातः॥ ११० ॥

सैवाऽपूर्वा स्थितिरथ तदाऽऽसीन्नचाल्यस्यशान्ति-
श्चेतोऽप्राक्षीज्जिनपतिपदेऽभूदपूर्वोऽनुरागः।
स्थित्यां तस्यामपि नवनवश्लोकनिर्माणकार्यं,
ज्ञानध्यानादिकमपि मनाङ् नावरुद्धं कदाचित्॥ १११ ॥

६ ० ० २ २
षड्-खा-काश द्वि-मितपरवाणौ पुनर्वायुवेगो
वारंवारं प्रबलरभसा पीडयामास देहम्।
मध्ये यस्य स्थितिपरवशाच्छ्रीनमस्कारमन्त्र-
स्याप्यातोऽभूदहह! सततं श्रावणस्य प्रसङ्गः॥ ११२ ॥

आदेः स्वभ्यस्तमथ च तथा देहास्थत्यादि सम्यग्
दार्ढ्यं येनेतरजनगणासह्यरोगेऽपि शान्त्या।
ये स्तम्भाद्याश्रयविरहिताश्चारु पद्मासनेन,
स्वेष्टस्मृत्यामथ निजमनो योजयामासुरारात्॥ ११३ ॥

दृष्ट्वाऽऽश्चर्यं भृशमुपगता डॉक्टरा अप्यवोचन्,
धन्या एते यदिह विषमस्थेऽपि रोगे सुशान्ताः।
अन्यः कश्चिद् यदि गदहतोऽस्यां स्थितौ स्यात्तदा तु,
स्वान्तर्भीतिः खलु सहसान्यां दशामेव यायात्॥ ११४ ॥

---

१ पञ्चमीतिथौ। २ अयशब्दः संवत्सरपर्याय इति हैमलिंगानुशासने।

एवं रुग्णां स्थितिमथ निजां वीक्ष्य विज्ञाय चास्या-
ऽनित्यत्वं वै सपदि वपुषो माधवे[1] शुक्लषष्ठ्याम्।
सर्वानाहूय च निजशरीरं ततो व्युत्सृजन्तो-
ऽस्मार्षुर्भक्त्या जिनपतिवरान् ह्यर्धपद्मासनस्था ॥ ११५ ॥

एकादश्यां निशि कविदिनेऽप्येकवारं त्वतीव-
वेगाद्दाक्रान्तिरभवदहा ! येन सर्वेऽप्यचेष्टा ।
सन्त्यक्ताशाः जिनवरवचः श्रावयामासुराशु,
सत्पुण्यानामतियलतया[2] किन्त्वितं दुर्दिनं तत् ॥ ११६ ॥

[3]वैशाखस्यासितदलगते पञ्चमेऽह्न्यस्तकाले,
सूर्यस्याभूत् त्रिदशनिलये श्रीगुरूणां प्रयाणम् ।
हन्ताकस्माद् सुरतजनताऽचिन्त्यदम्भोलिपाताद्,
भीता व्यग्रा प्रकृतिविधुरा कृत्यशून्या बभूव ॥ ११७ ॥

सद्व्योम्नोच्चैस्तरशिखरिता चारु दोला ह्यकारि,
प्रासादस्यानुकरणकरी सत्कलाभिश्च युक्ता।
[4]विद्युत्पत्रैरधिगतसमाचारवन्तश्च भक्ता
ग्रामाद्ग्रामादरमुपगता[5] अन्त्ययात्रार्थमाशु ॥ ११८ ॥

दोलोत्थानाय च कृतसहस्रादिमुद्रापणा वै,
भक्ताः स्वीयं मनुजजननं सार्थकीचक्रुरेव।
अन्ये प्रादुर्द्रविणनिचयं वह्निसंस्कारकार्ये,
भक्त्या यात्रा निखिलनगरे भ्रामिता भक्तिभावै ॥ ११९ ॥

पश्चाद्गोपीपुरपरिसरे स्वागमौकः[6]समीप,
संस्थित्यां चापरिमितजनानां गुरूणां सुभव्यम्।
नानाकाष्ठैर्मलयगिरिजैर्दाहसंस्कारकृत्यं,
नाभूत् पूर्वं न च परमितो भावि तादृग् बभूव ॥ १२० ॥

---

१ वैशाख मासे। २ किंतु इत = गतम् इति पदच्छेदोऽत्र बोध्य। ३ गूर्जरदेशीयपद्धत्येद ज्ञेय, पूर्णिमा-तमाम (शास्त्रीय) पद्धत्या तु ज्येष्ठस्येति बोध्यम्। ४ तार-टेलिग्रामाभ्याधुनिकसीघ्रसंदेशावहपत्रैरित्यर्थ। ५ अरम=शीघ्रम्। ६ सुरतागममन्दिरस्य।

शिष्याः पादोत्तरशतमिताः [१२५] अष्टत्रिंशत् [३८] सुसंस्थाः,
ज्ञानागारा मुनिमितमताः [१२] सन्ति यत्कीर्त्तिदीपाः।
यैश्चाकारि श्रुतहितकरीर्वाचनाः सप्त [७] यासु,
ग्रन्थाः [१] लक्षद्व्यधिकगणितश्लोकमात्रा ह्यवाचि ॥ १२१ ॥

[२] सप्तत्रिंशत्सुरपनयनाङ्काधिकाना नवीन–
श्लोकानां ते भुवि रचयितारः कथं स्युर्न नम्याः ।
ऊनाशीत्युत्तरगतशत [१७९] ग्रन्थसम्पादकास्ते,
धन्याः पञ्चाशद [५०] धिकशुभग्रन्थसङ्ग्राहकाश्च ॥ १२२ ॥

व्याख्यानानामपि कतिपये ग्रन्थवर्याः प्रसिद्धाः,
येषां सन्ति प्रथितविभवा भूमिका [३] प्राथमिक्यः।
द्व्यूनाशीति [७८] प्रमितरुचिरग्रन्थरत्नेषु येषां,
मार्गं लोकान् जनिहितकरं बोधयन्त्यो लसन्ति ॥ १२३ ॥

आदित्याङ्का [१२] सुनतमुपधानव्रताः कारिता ये,
शोधं शोधं सकलसुजिनोक्तागमानां सुपाठान्।
सल्लोकानामुपकृतिहितं मङ्क्षु मुद्रापयित्वा,
नैकान् योग्यानभ्यसकृतिनोऽधीतयेऽमूमुचँश्च ॥ १२४ ॥

एवं नानाव्रतजपतपोध्यानदीक्षाप्रतिष्ठा-
यात्रास्नात्रादिकबहुविधोद्यापनैश्चोपधानैः।
भव्यान् जीवान् जिनपगदिते रम्यमार्गे नियुज्य,
त्यक्त्वा देहं सुरपतिगृहं संययुः सूरिवर्याः ॥ १२५ ॥

---

१. २२३३४२ श्लोकप्रमाणग्रन्था वाचनासु वाचिताः । २ सप्तत्रिंशत्सहस्रमितानामित्यर्थः । ३ प्रस्तावना इत्यर्थः ।

येषां कीर्तिं विमलविमलामस्मताम्रागमाना-
आगारस्था दिशि दिशि दिशन्त्य पताका नितान्तम्
यावच्चन्द्रारुणकिरणवन्तौ[1] दिवि द्योतमानौ,
गायं गायं तदवधि मुदा रञ्जयिष्यन्ति लोकम् ॥ १२६ ॥

॥ अन्त्यमंगलम् ॥

(शिखरिणी)

कृतं त्रैलोकानामुपकृतिहितं वाचनिक्रिया,
श्रुतानामभ्यासस्त्रुटिविरहितः सम्प्रचलितः।
सुपूज्यांस्तान् 'श्रीसागर'इति शुभाख्याप्रथितकान्,
नमामः सूरीन्द्रान् श्रुतधरसमुद्धारनिरतान् ॥ १२७ ॥

चित्र-हार-बन्ध *

(शार्दूलविक्रीडितम्)

शश्वच्छान्तिमयान् महामतिमतः कल्यङ्कारान्[2] कर्मठान्[3],
भव्यापत्तिभरापहान् जलजवज्जन्तुभ्य आनन्ददान्।
दान्तान् नौमितमा विभाजितविधीन् व्याख्यानसंस्थासनान्[4]
प्रौढान् सत्यसरान् सदा नतधियाऽऽनन्दाब्धिसूरीश्वरान् ॥ १२८ ॥

(स्रग्धराछन्द)

धन्या मान्या वदान्या गुणिगणगणनास्वग्रगण्या महान्तो,
विद्वद्गोष्ठीगरिष्ठा जिनपतिचरणेन्दीवरेन्दिन्दिराश्च[5]।
वादीन्द्रा देशकेन्द्रा अविकलनिगमज्ञाततत्त्वा[6] महिष्ठा[7],
'आचार्यानन्दवर्या' प्रथितगुणगणा 'सागरान्ता' जयन्ति ॥ १२९ ॥

॥ आगमपर्यालोचनप्राण आगमोपजीवी च श्रमण
श्रामण्यसारमाप्नोति लभते च निर्वृतिम् ॥

॥ जीयासुरागमोद्धारकाः सद्गुरवः ।

---

१ यावच्चन्द्रार्कमित्यर्थ । २ कल्यशब्दो हि कल्याणापरपर्यायभद्रवाचकस्तत भद्रङ्करानित्यर्थोऽत्र ज्ञेय । ३ क्रियाकुशलान् । ४ व्याख्यानस्थप्रतिष्ठानित्यर्थ । ५ तीर्थङ्करचरणकमलभ्रमरा इत्यर्थ । ६ शास्त्रापरपर्यायोऽयम् । ७ पूज्या ।
* अयं हि श्लोक आधुनिकभूषणपरिभाषया नेकलेसेत्याख्य स्वर्णमयरत्नहारकेण सयोजितोऽस्ति-ऽत्र प्रतिकृतिरप्यस्मिन्नेव ग्रंथे मुद्रिताऽस्त्यन्यत्र ।

॥ ॐ अर्हम् ॥

णमोऽत्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स ।

शेठ देवचन्द्रलालभाइ-जैन-पुस्तकोद्धार-ग्रन्थाङ्के-१०१

आगमोद्धारक-आचार्यश्रीआनन्दसागरसूरिसङ्कलितः-

अल्पपरिचितसैद्धांतिकशब्दकोषः

अकारः

अक-लाञ्छनम् । जीवा० पृष्ठ २७० । अङ्क, उत्सङ्ग । ओघ० १४२ । रत्नविशेष । ज० प्र० २३ ।

अकफरेल्लुगं-शाकविशेष । आचा० ३४८ ।

अकण-अङ्कने, तप्ताय शलाकादिना चिह्नकरणम् । प्रश्न० ५२ । लाञ्छनम् श्वशृगालचरणादिभिः । आव० ५८८ ।

अकधाती-अङ्कधात्री, धात्रीदोषे । नि० चू० द्वि० ९३आ ।

(अकपतिता)-दासी । उत्त० २६२ ।

अकमुहसंठिया-अङ्कमुखसंस्थिता, पद्मासनोपविष्टोत्सङ्गमुख वत् अर्धवलयाकार । सूर्य० ७१ ।

अकलिवी-लिपिविशेष । प्रज्ञा० ५६ ।

अकवडेंसए-ईशानकल्पपूर्वदिगावतंसक । भग० २०३ ।

अकविधा-(अङ्कविद्या) गणितम् । जै० प्र० ११६ ।

अकहरो-अङ्कधर चन्द्रमा । जीवा० २७० ।

अकावई-अङ्कावती, वक्षस्कारपर्वत । ज० प्र० ३५७ ।

अकावई-अङ्कावती रम्यविजये राजधानी नाम । जं० प्र० ३५२ । शीतोदादक्षिणकूले वक्षस्कार । ठाणा० ८० । दक्षिणवर्ती वक्षस्कार । ठाणा० ३२६ ।

अकावईओ-महाविदेहे विजयराजधानी । ठाणा० ८० ।

अंकावडिंसए-अङ्कावतंसकं, ईशानस्य पूर्वस्यामवतंसक । जीवा० ३९१ ।

अंकितो-अङ्कित, चिह्नित । आव० ८२२ ।

(अकिल्ल)-नगर । औप० ३ ।

(अकुडिओ)-अङ्कुटिक, नागदन्तक । ज० प्र० ५० । जीवा० २०५ ।

अकुर-अङ्कुर, प्रवाल । जै० प्र० ३०१ ।

अंकुर-अङ्कुर, शाल्यादिबीजसूचि । भग० ३०६ । जं० प्र० १६८ ।

अकुल्ल-अङ्कोठ । वृक्षविशेष । प्रज्ञा० ३१ ।

अकुसं-महाशुक्रे विमानविशेष । सम० ३२ । अङ्कुशं, येन रजोहरणमङ्कुशवत्करद्वयेन गृहीत्वा वन्दते तत् । कृतिकर्मणि पञ्चदोष । आव० ५४३ ।

अंकुस-अङ्कुश सृणि । प्रश्न० २३ ।

अकुसपलंब-महाशुक्रे विमानविशेष । सम० ३२ ।

अकुसय-अङ्कुशकम्, तरुपल्लवग्रहणार्थमङ्कुशाकृति । भग० ११२ ।

अंकुसये-अङ्कुशका, देवार्चनार्थवृक्षपल्लवाकर्षणार्थम् । औप० ९५ ।

अंकुसो-अङ्कुश । अङ्कुशाकारो मुक्तादामावलम्बनाश्रयभूत । जीवा० २१० ।

अंके-अङ्ककाण्ड खरकाण्डे चतुर्दश काण्डम् । जीवा० ८९ । अङ्क, । प्रज्ञा० २७ । उत्सङ्गे । ज० प्र० ३८ । मणिभेद उत्त० ६८९ । श्वेतरत्नविशेष । प्रज्ञा० २६१ । रत्नविशेष । जीवा० २३ ।

अंकेल्लण-अङ्केल्लण, तर्जनकविशेष । ज० प्र० २३५ ।

अंको-अङ्क, पृथिवीभेद । आचा० ५९ । रत्नविशेष । भग० ४७९ । एकोरमैथुनं । नि० चू० प्र० २५५आ । हृदिगम्य, हासनाविशेष । प्रश्न० ३५ । रत्नविशेष । जीवा० १८०, १९१ । पद्मासनोपविष्टस्योत्सङ्गरूप आसनबन्ध । सूर्य० ७१ । ज० प्र० ३५४ ।

अंकोल-गुच्छविशेष । प्रज्ञा० ३२ ।

अंकोल्ल-वृक्षविशेषः । भग० ८०३ ।
अंकोल्लाणं-गुल्मविशेषः । भग० ८०३ ।
अंगं-अङ्गम्, अङ्गविषयम् । आव० ६६० । कारणमवयवः । ठाणा० ३ । कारणम् । प्रश्न० १०३ । शरीरावयवप्रमाण-स्पन्दितादिविकारफलोद्भावकं शास्त्रम् । सम० ४९ । समग्रं वपुः । जीवा० २७० । कारणम् । जं० प्र० ९९ । अज्यते व्यक्तीक्रियतेऽस्मिन्नित्यङ्गम् । आचा० ५ । भेदः कार्यं वा । दश० ९० । शिरःप्रभृति । दश० २३७ । अंगं-अक्षिबाहुस्फुरणादिकम् । सूत्र० ३१८ । शिरःस्फुरणादि । ठाणा० ४२७ ।
अंग-अङ्गानि । शिक्षादीनि षडङ्गानि । भग० ११४ ।
अंगओ-अङ्गकः, भद्रप्रकृतिः । आव० ७०४ ।
अंगचूलिया-अङ्गचूलिका, अंगानामुपासकदशाप्रभृतीनां पंचानां चूलिका-निरयावलिका । व्य० द्वि० ४५४आ ।
अंगणं-मंडपथाणं । नि० चू० प्र० १९२अ । अजिरम् । प्रश्न० १३८ । अङ्गन-पर्यस्थंडिलभूमिस्थानम् । ओघ० २०० ।
अंगणेत्रिका-हस्तमालक आभरणविशेषः । औप० ५५ ।
अंगदं-बाहुशीर्षाभरणविशेषः । जीवा० १६२ । केयूरम् । जं० प्र० १०६ ।
अंगदे-केयूरे । ठाणा० ४२१ । अङ्गनिका । उत्त० ७८ ।
अंगनाम-शिरउरःपृष्ठबाहूदरपादनामानि । तत्त्वा० ८ ।
अंगपडिहारिणि-अन्तःपुरप्रतिहारिणी । आव० ७०० ।
अंगपविट्ठ-गणधरकृतं मातृकापदत्रयप्रभवं वा ध्रुवश्रुतं वा । ठाणा० ४९ । अङ्गप्रविष्टम् । ठाणा० २०० ।
अंगप्रविष्टं-गणधरदब्धमाचारादि । तत्त्वा० १-२४ ।
अंगबाहिरे-अङ्गबाह्यम्, स्थविरकृतं मातृकापदत्रयव्यतिरिक्त-व्याकरणनिबद्धमध्रुवश्रुतं वा उत्तराध्ययनादि । ठाणा० ५१ ।
अंगमंगं-अङ्गमङ्गम्, गात्रम् । औप० ११ ।
अंगमंगो-अङ्गमङ्गम्, अङ्गप्रत्यङ्गम् । जीवा० २७७ ।
अंगमंदिरंमि-चंपाचैत्याभिधानम् । भग० ६७५ ।
अंगमद्दियाओ-अंगसत्पमर्दनकारिकाः । भग० ५४८ ।
अंगयं-अङ्गदं, बाह्वाभरणविशेषः । जीवा० २५३ । प्रश्न० ७१ । बाहुशीर्षाभरणविशेषरूपम् । प्रज्ञा० ८८ ।
अंगय-अङ्गके, मुर्द्धादौ । जं० प्र० १८५ । अङ्गदम्, बाह्वा-भरणविशेषः । भग० १३२ ।
अंगरिसी-अङ्गर्षिः, आर्जवोदाहरणे भद्रक कौशिकार्यज्ये-ष्ठशिष्यः । आव० ७०४ । येनोपशमे सत्यथार्त सामायिकम् । आव० ३४७ ।
अंगलोअं-अङ्गलोकं, म्लेच्छजातीयजनाश्रयस्थानम् । जं० प्र० २२० ।
अंगवंसो-अङ्गवंशः, अङ्गराजसन्तानस्य सम्बन्धिनः सप्त-सप्ततिराजानः प्रव्रजिताः । सम० ८५ ।
अंगवियारं-अङ्गविकारः, शिरःस्फुरणादितच्छुभाशुभसूचकं शास्त्रमपि । उ० ४१७ ।
अंगविज्जं-अङ्गविद्याम्, शिरःप्रभृत्यंगस्फुरणतः शुभाशुभ-सूचिकां विद्याम् । उत्त० ३९९ ।
अंगविज्जा-अङ्गविद्या, अङ्गं-पाद- विद्या-प्रासादपातनात्मिका (सत्कारपुरस्कारपरिषहे दृष्टांतपदम्) । उत्त० १२५ ।
अंगहारिका-नृत्यकलाद्वितीयभेदः । सम० ८४ ।
अंगा-अगा., जनपदविशेषः । प्रज्ञा० ५५ ।
अंगाइं-अगानि, शिरःप्रभृतीनि । प्रज्ञा० ४६९ । एकादशांगानि प्रज्ञा० ५६ । अवयवाः । ठाणा० १५० । शिरःप्रभृतीनि, । उत्त० ४२८ ।
अंगाणं-देशविशेषः । भग० ६८० ।
अंगादाणं-मेढ्रम् । नि० चू० प्र० ११६अ ।
अंगादानं-मेहनम् । नि० चू० द्वि० ३०आ ।
अंगारः-(इंगाल), विगतज्वालोऽग्निः । भग० ११९ । विगतधूमज्वालो दह्यमानेन्धनात्मकः । उत्त० ६९४ । कृष्णवर्णवस्तु । आचा० २९ ।
अंगारओ-अगारकः, महाग्रहः । जीवा० ३३६, ३३७ ।
अंगारकारिका-(इंगालकारिया), अग्निशकटिका । भग० ६९७ ।
अंगारदोषः-(इंगालदोस), आहाररागादगाढर्पाग्नुज्ञानस्य चारित्रांगारत्वापादनात् । आचा० २५१ ।
अंगारमर्दकः-(अगारमद्द) द्रव्यप्रव्रजितः । दश० ११५ । उत्त० ५६६ । विशे० १०६४ ।
अंगारय-अगारकः, मंगलः । औप० ५२ ।
अंगारवई-अंगारवती, सवेगोदाहरणे शिशुमारपुरपति-धुन्धुमारदुहिता श्राविका । आव० ७०९ ।
अंगारवई प०-अंगारवती प्र० । आव० ६७ ।
अंगारशकटिका-(इंगालकारिया) । आचा० ३०९ ।
अंगारा-(इंगाल), लघुतराग्निकणाः । ठाणा० ४२० ।

अंगारियं-अगारकित, नियर्णीभूतम् । आचा० ३४६ ।
अंगिरसा-गौतमगोत्रोत्तरभेद. । ठाणा० ३९० ।
अंगुटुं-अगुष्ठम् । आव० ८४५ ।
अंगुट्ठपसिणा-विद्याविशेष । नि० चू० प्र० १७७अ ।
अंगुट्ठि-स्नानम् । नि० चू० प्र० १९१आ ।
अंगुट्ठी-अगुष्ठी, शिरोऽवगुण्ठनम् । आव० ९५ ।
अंगुलपुहुत्तिया-अगुलपृथक्त्वम् । जीवा० ३९ ।
अंगुलभायो-अगुलभाव, शुभाशुभपदार्थ । विशे० ८७६ ।
अंगुलि-अगुलि, करशाखा । आचा० ३८ ।
अंगुलिको-चर्ममयोपकरणम् । नि० चू० प्र० १३७अ । नखभंगादिरक्षार्थं । नि० चू० द्वि० १८अ । अगुलिकोश, शृङ्गमयो दारुमयो वंशमयो वा येनाङ्गुलिसलग्नेन तन्त्री आहन्यते स । जीवा० १९५ । अगुलिकोशक, शृङ्गदारु-दन्तादिमय. । जं० प्र० ४० ।
अंगुलिज्जं-अगुलीयकम्, अगुल्याभरणविशेष । औप० ५५ ।
अंगुलिज्जग-अगुलीयकम्, मुद्रिका । जं० प्र० १०६ ।
अंगुलिज्जयं-अगुलीयकम् । आव० १७० ।
अंगुलिधणुहओ-अंगुलधनु । आव० ४८४ ।
अंगुलिभमुहा-कायोत्सर्गदोष । आव० ७९८ ।
अंगुलिसरथय-शस्त्रकोशविशेष । नि० चू० द्वि० १८अ ।
अंगुलीयगं-अगुलीयक, भूषणविधिविशेष । जीवा० २६९ ।
अंगुले-प्रमाणभेद । भग० २७५ । अंगुष्ठ-प्रश्नभेद । ठाणा० ३०१ । अगुष्ठप्रश्न, शुभाशुभसूचक प्रश्न । उत्त० ४४६ ।
अंगोवंगाइं-अगोपांगानि । प्रज्ञा० ४६९ ।
अगोहलिं-अगरक्षणम्, देहस्नानम् । आव० ४१७ । व्य० द्वि० ४०५अ ।
अंचइ-अञ्चति, उत्पाटयति । जं० प्र० ४२१ । जीवा० ९५५ ।
अंचिअं-अचित, नृत्यविशेष । जं० प्र० ४१२ ।
अंचिअंचियं-उत्पतनिपतं यत्कर्तुं करोति । ठाणा० ५२२ ।
अंचिओ-अचित, व्याप्त । आव० १६७ । अचितनामा पञ्चविंशतितमो नाट्यविधि । जीवा० २४७ ।
अंचितरिभितं-अचितरिभितनामा सप्तविंशतितमो नाट्यविधि । जीवा० २४७ ।
अंचितांचि-समागम । भग० ६८३ ।
अञ्चिते-मङ्कृत्वं । भग० ६८३ ।
अञ्छियं-दुर्भिक्ष । नि० चू० प्र० १४८आ । दारुमयी । नि० चू० प्र० १८३आ । नाट्यभेद । नि० चू० तृ० १अ । अचितं, नाट्यम् । जं० प्र० ४१७ । आव० ३९९ ।
अंचेइ-आकुञ्चयति । औप० २५ ।
अंछंति-आकर्षन्ति । विशे० ३८३ । आव० ४८ ।
अंछणं-पादप्रसारणं । नि० चू० प्र० १९१आ । अगुल्या लिप्तस्य रंगितस्य । ओघ० १४४ । आकर्षणं-समारणम् । ओघ० १४४ ।
अंछमाणाणं-आकर्षताम् । आव० ४८ ।
अंछवियंछियं-आकर्षविकर्षम् । आव० ८३१ ।
अंछिऊण-आकृष्य । आव० ४२७ ।
अंछित्ता-अपहृियता माया । व्य० द्वि० ८४आ ।
अंछिय-आकृष्यते, प्रसार्यते । बृ० प्र० ८१अ ।
अंछियनयना-आकृष्यन्ते । प्रश्न० २१ । (जिब्भिन्दियं-छिय) आच्छितम्-आकृष्टम् (आकृष्टजिह्वेन्द्रिया) । प्रश्न० ६० ।
अंछिया-आकृष्य । आव० २२७ ।
अंजणं-आणतकल्पे विमानविशेष । सम० ३५ । सौवीरा-ञ्जनादि । बृ० द्वि० ९३अ । सौवीरस्य रसंजनं वा । नि० चू० प्र० २१८आ । अञ्जनम्, सौवीरादि । आव० ५३० ।
अंजण-अञ्जन, तत्राय शलाकया नेत्रयो क्षणम् वा देहस्य क्षारतैलादिना । सम० १२६ । अञ्जनं, सौवीराञ्जनादि । प्रज्ञा० २७ । सौवीराञ्जनम् । जं० प्र० ६० । अञ्जना, अञ्जनरत्नमयत्वात् । जं० प्र० १६३ ।
अंजणई-वल्लीविशेष । प्रज्ञा० ३२ ।
अंजणाए-अञ्जनक, वनस्पतिविशेष । औप० १० ।
अंजणकेसिया-अञ्जनकेशिका, वनस्पतिविशेष । जं० प्र० ३३ ।
अंजणकेसियाकुसुम-अञ्जनकेशिकाकुसुमम्, वनस्पतिविशेषपुष्पम् । प्रज्ञा० ३६१ ।
अंजणग-अञ्जनक, पर्वतविशेष । आव० ८२७ ।
अंजणगपव्वय-अञ्जनपर्वत । आव० ३८९ । सम० ९० ।
अंजणगा-अञ्जनका, नन्दीश्वरचक्रवालमध्यवर्तिन पर्वता । प्रज्ञा० ९६ । ठाणा० ४८० ।
अंजणगिरि-अञ्जनगिरि । जं० प्र० १९६ ।
अंजणपव्वय-अञ्जनपर्वत, नन्दीश्वरद्वीपे पर्वतविशेष । जीवा० ३५८ ।

अंजणपुलए-अञ्जनपुलककाण्डम्, एकादशं, अञ्जनपुलाकानां विशिष्टो भूभागः । जीवा० ८९ ।
अंजणप्पभा-अञ्जनप्रभा, पुष्करिणीनाम । जं० प्र० ३६० ।
अंजणमओ-अञ्जनमयः, अञ्जनरत्नात्मकः । जीवा० ३५८ ।
अंजणसमुग्गयं-अंजनसमुद्गकम् । जीवा० २३४ ।
(अंजणसिद्ध)-अंजनसिद्धः । दश० १२८ ।
अंजणा-पर्वतविशेषः । ठाणा० ८० । अंजना, पुष्करिणीनाम । जं० प्र० ३३५ । जं० प्र० ३६० ।
अंजणागिरि-अंजनागिरिः, दिग्हस्तिकूटनाम । जं० प्र० ३६० ।
अंजणि-अंजनिका, कज्जलाधारभूता नलिका । सूत्र० ११७ ।
अंजणे-प्रभंजनेन्द्रलोकपालः । ठाणा० १९८ । सीतादक्षिणवर्ती तृतीयवक्षस्कारः । ठाणा० ३२६ । अंजनः, वैलम्बाभिधानवायुकुमारराजस्य लोकपालः, वरुणस्य पुत्रस्थानीयो देवः । भग० ३९८ । राहुप्रलापीमते कृष्णपुद्गलविशेषाः । सूर्य० २८७ । अंजनकाण्डं दशमं, अञ्जनानां विशिष्टो भूभागः । जीवा० ८९ । कर्मग्रीवमालिन्ये हेतुत्वात् । जं० प्र० १४८ । अञ्जनो वक्षस्कारः । जं० प्र० ३५२ । सौवीराञ्जनं रत्नविशेषो वा । प्रज्ञा० ३६१ । रत्नाञ्जनादि । दश० १७० ।
अंजणेइ-अञ्जनं, सौवीराञ्जनं रत्नविशेषो वा । जं० प्र० ३३ । अञ्जनं, कृष्णरत्नविशेषः । ठाणा० २३२ । अञ्जनं सौवीराञ्जनादि । जीवा० २३ । कज्जलम् । उत्त० ६५२ । समीरकम् उत्त० ६८९ । रजोभेदः । आचा० ३४२ ।
अंजणगपव्वय-अंजनकपर्वतः । सम० ९० ।
अंजलिं-अञ्जलिः, हस्तन्यासविशेषः । सूर्य० ६ । भग० १४ । अंजलिं, मुकुलितकमलाकारकरद्वयरूपम् । जं० प्र० १८७ ।
अंजली-अञ्जलिः, हत्थुस्सेहो । द० चू० १२९ । नि० चू० प्र० ७अ । अञ्जलिः, द्वयोर्हस्तयोरन्योऽन्यान्तरितांगुलिकयोः सम्पुटरूपतया यदेकत्रमीलनं सा । जीवा० २४३ । संयुतहस्तमुद्राविशेषः । जं० प्र० १७ । प्रणतिद्वयम् । नि० चू० द्वि० १२०आ ।
अंजु-ऋजुः, ऋजोः-संयमस्यानुष्ठानात् । आचा० ३०३ । मायाप्रपञ्चरहितत्वादवक्रः । सूत्र० १७७ ।
अंजुया-शान्तिजिनप्रवर्तिनीनाम । सम० १५२ । अंजुका, शक्रदेवेन्द्रस्याग्रमहिषी । जीवा० ३६५ ।
अंजुल-वनस्पतिविशेषः । भग० ८०२ ।
अंजू-प्रगुणोऽव्यभिचारी । सूत्र० ५१ । अंजू, व्यक्तम्, प्रगुणेन न्यायेन स्वरसप्रवृत्त्या वा । सूत्र० २९६ । अंजुः, व्यक्तः, निर्दोषत्वात्प्रकटः, (ऋजुर्वा) वक्रैकान्तपरित्यागादकुटिलः । सूत्र० ३९३ । अंजुः, सार्थवाहसुता । विपा० ३५ । अञ्जुः, धनदेवसार्थवाहसुता । विपा० ८८ । शक्रस्याग्रमहिषीनाम । जं० प्र० १५९ । भग० ५०५ ।
अंजूय-शक्राग्रमहिषीराजधानी । ठाणा० २३१ ।
अंड-अण्डम्, काष्ठनिर्मितो जीवविशेषः । आचा० ५५ ।
अंडए-अण्डजः, हंसादिः ममायमित्युल्लेखेन वा प्रतिबन्धः, अण्डजं-पट्टसूत्रजम् । ठाणा० ४६५ । हंसादि. मयूराण्डकादिः वा अण्डजः, पक्षी कोशिकारकीटाण्डकप्रभवं वस्त्रं वा । औप० ३६ ।
अंडओ-अण्डकः, जन्तुयोनिविशेषः । प्रश्न० ३३ ।
अंडग-अण्डकम्, आहारः । भग० २९२ । मुखं । व्य० द्वि० ३३३आ । अण्डजाः, अण्डाज्जाताः । ठाणा० ११४ ।
अंडय-अण्डजः, हंसादिः । भग० ३०३ । अण्डजाः, पक्षिगृहकोकिलादयः । दश० १४१ ।
अंडसुहुम-अण्डसूक्ष्मम्, मक्षिकाकीटिकागृहकोलिकाब्राह्मणीकृकलासाद्यण्डम् । दश० २३० । अण्डसूक्ष्मम्, मक्षिकाकीटिकागृहकोकिलाब्राह्मणीकृकलास्याद्यण्डकमिति । ठाणा० ४३० ।
अंडु-अण्डु, अन्दुकं काष्ठमयं लोहमयं वा हस्तयोः पादयोर्वा । औप० ८७ ।
अंडे-विपाकश्रुताद्यश्रुतस्कंधतृतीयाध्ययनम् । ठाणा० ५०७ । ज्ञातायां तृतीयाध्ययनम् । आव० ६५३ । सम० ३६ । अण्डम्, षष्ठांगे तृतीयं ज्ञातम् । उत्त० ६१४ ।
अन्तःकरणम्-मनः । आव० ५८५ ।
अन्तःशल्यः-(अंतोसल्ल), अन्तः-मध्ये मनसीत्यर्थः, शल्यमिव शल्यमपराधपदं यस्य सो अन्तःशल्यो-लज्जाभिमानादिभिरनालोचितातिचारः । सम० ३४ ।
अंत-अन्तः शब्दो मध्यवचनः । विशे० १५७ । परिजीर्णम्, । बृ० द्वि० १७५आ । वस्त्रस्य दशान्तम् । बृ० द्वि० २२५अ । अन्त्यम्, अन्ते भवम्, जघन्यधान्यम् । औप० ४० । अन्त्रम्-पुरीतत् । प्रश्न० ८ । पुन्नापादिकम् । बृ० प्र० २२०आ ।
(अंतचरे)-आन्तम्-अन्ते भवं-आन्तम्-भुक्तावशेषं वल्लादि (तच्चरति) । ठाणा० २९८ ।

अन्तयो–अचलयो। भग० ४७७। भूमाग। भग० १२२। अवरालम्। पज्ञा० ३६७। भूमिभाग। भग० ३२३। ठाणा० ११९। समीपम्। जं० प्र० ४५५। वाञ्चणरादि। प्रश्न० १०६। समीप०। ठाणा० ११७। अधिकरणप्रधान-मध्ययम्। उत्त० २६१। (अंनन्तरे)–आन्तम्, अन्ते भवं आन्तम्, भुक्तावशेषवल्लादि (तथरति)। ठाणा० २९८।

अतंतं–पर्युषिते वल्लचणकादि। ओघ० १८८।

अत–अन्त, निश्चय। भग० २९०। परिच्छेद। ठाणा० १७४।

अतओ–अन्तक, विपतृष्णाया पर्यन्तवर्ती। सूत्र० २५९। अन्तकम्, पर्यन्तम्। उत्त० ६२८।

अतकडे–अन्तकृत्। भग० १११। अन्तो भवस्य कृतो येन स अन्तकृत। ठाणा० ३६।

अतकम्मं–अन्तकर्म, अभ्यलयोर्वा न लक्षणम्। औप० ५५। अन्तकर्माणि, अभ्यलयोर्वा न लक्षणानि। जं० प्र० २७५। अन्तकर्म, अम्यलयोर्वा न लक्षणम्। जीवा० २५२।

अतकम्मा–अन्तकर्मा, प्रान्त। औप० ११।

अंतकरे–अन्तकर, भवच्छेदकर। भग० २१९।

अंतकरो–अन्तकर, प्रशस्तभावकरविशेष, कर्मणः समारम्भ वा अंतकर। आव० ४९९।

अंतकिरिआ–अन्तक्रिया, निर्वाणलक्षणा। आव० १३५।

अंतकिरिय–अन्त्य(न्त)क्रिया, अन्त्या च सा पर्यन्तवर्तिनी क्रिया चान्त्यक्रिया। अन्त्यस्य वा कर्मान्तस्य क्रिया अन्तक्रिया। कृत्स्नकर्मक्षयलक्षणां मोक्षप्राप्तिम्। भग० ४९।

अंतकिरिया–अन्तक्रिया, अन्त–कर्मणामवसानं तस्य क्रिया–करणम्, कर्मान्तकरण मोक्ष इति। प्रज्ञा० ३९६। निर्वाणम्। भग० ९१। प्रज्ञापनाया विंशतितमं पदम्। प्रज्ञा० ६। मोक्ष। समo ११८। भवस्यान्तकरणम्। ठाणा० १८०।

अंतगुलाणि–अन्तगुलानि–वरगन्धिकादीनाम्। ठाणा० ४२०।

अंतक्खरिया–लिपिविशेष। प्रज्ञा० ५६।

अंतगडदसा–अन्तकृद्दशा, अन्तो–भवान्त कृतो विहितो यैस्तेऽन्तकृता, तद्वक्तव्यताप्रतिबद्धा दशा–दशाध्ययनरूपा ग्रन्थपद्धतय इति। अन्त० १।

अंतगडो–अन्तकृत्, ज्ञानावरणीयादिकर्मान्तकृत। भग० १६३। तैनैव भवेनेति। आव० ११७। अन्तकृता–तीर्थकरादय। समo १२१।

अंतगतायधि–(अंतगतावही)–आत्मान्तगत, शरीरान्तगत, अवधिविशेषाऽन्तगत (पुरःपृष्ठपार्श्व)। प्रज्ञा० ५३०।

अंतगो–अन्तक, विनाशकारी, आत्मनि वा गच्छतीति, आन्तर आत्मगो वा। सूत्र० १७८। अन्तग, अन्तं गच्छतीति, दुरुल्लंघ्य। सूत्र० १७८।

अंतचारी–अन्तचारी, पार्श्वचारीति। ठाणा० ३४२।

अंतद्दीणं–सर्वैर्हि अभिनवशाल अमज्ञमगामी भौमा। दश० चू० १६३।

अंतद्दीपकम्–प्राधुर्यमपि गमनाय। निशी० ३३०।

अंतद्धाणं–अन्तर। नि० चू० प्र० ७६ अ।

अंतद्धाणपिंडो–अप्पाणं अंतरहिते करेत्ता जो पिंडं गेण्हति सो अन्तद्धाणपिंडो भण्णति। नि० चू० द्वि० १०२ अ।

अंतरं–उववासो। नि० चू० प्र० १७४ आ। अन्तरं प्राप्ति। विशे० १४७। मज्ज्ञं। नि० चू० प्र० १४० अ। मनुष्यम्। उत्त० ७८०। उत्तरम्। आव० ४४२। विशेष। उत्त० २१७। अवसर। आचा० १०७। अवकाश। प्रज्ञा० ६९। मध्य। जीवा० ४६। शैलान्तरम्–कन्दरान्तरम्, वनान्तरम् वा आधयस्य। प्रज्ञा० ६९। अन्तरालम्। आव० ३३। विशेषा रूपनिर्माणादिभि। ठाणा० २०३। पूर्वस्यागारवस्यादानकाले–प्रतिमाविशेष। नि० चू० द्वि० १६३ आ। पार्श्वस्थम्। जं० प्र० ३८७। व्यवधानम्। जीवा० १२३। अन्तरायम्। ओघ० १७६। उपवास। आव० २०३। राजगमनस्यान्तरम्। विपा० ५३। अवसर। विपा० ७३। अपान्तरालम्। सूत्र० ४९। अवसर। प्रश्न० ४३। ग्रामादीनामर्थाय। प्रश्न० ५२। पृष्ठोदरयोरन्तरालं पार्श्वं इति। जीवा० २०३। विचाल। व्य० प्र० १२८ आ।

अंतरञ्जिया–अन्तरञ्जिका, नगरी यत्र त्रैराशिकतन्निरुपणा, बलश्रीराजधानी। उत्त० १६८। पुरी यत्र त्रैराशिकनिह्नवस्य रोहिगुप्तस्य। आव० ३१८। नगरी। विशे० ९८१।

अंतरंत–अतरतो नाम असहा मुधा। व्य० द्वि० १० आ।

अंनरंतगो–गिलाणो। नि० चू० प्र० १९८ अ।

अंतर-वस्त्रैषणाभेदः। आचा० २७७। अन्तरशब्दो मध्यवाची। प्रज्ञा० ५०। अन्तरे, पृष्ठोदरयोरन्तराले, पार्श्वे। जं० प्र० ११७। अंतराणि-पार्श्वदेशः। प्रश्न० ८३।

अंतरकंदे-अन्तरकन्दः। जलजवनस्पतिविशेषकन्दः। प्रज्ञा० ३७।

अंतरकरणं-औपशमिककालः। प्रज्ञा० ३८७।

अंतरगए-अन्तरगतः, सस्पर्द्धी। सूर्य० ७९।

अंतरगामम्मि-अपान्तराल एव यो ग्रामस्तस्मिन्। ओघ० ७७।

अंतरगिरिपरिरओ-अन्तर्गिरिपरिरयः, गिरेरन्तः परिक्षेपः। जीवा० ३४३।

अंतरजातम्-भाषभाषाजातः तृतीयो भेदः। अन्तरे भाषाद्रव्यमिश्रणे। आचा० ३८५।

अंतरतेणो-गामदेसंतरेसु हरंतो। नि० चू० द्वि० ३८ आ।

अंतरदीव-अन्तरद्वीपः। भग० ४२५।

अंतरदीवगा-अन्तरद्वीपगा, अन्तरे लवणसमुद्रस्य मध्ये द्वीपा अन्तरद्वीपाः, तद्गता अन्तरद्वीपगाः। प्रज्ञा० ५०।

अंतरदीवगो-अन्तरद्वीपः, लवणसमुद्रमध्ये अन्तरेऽन्तरे द्वीपः। जीवा० १४४।

अंतरदीविगा-आन्तरद्वीपजाः। ठाणा ११५।

अंतरद्धा-अन्तर्द्धानम्, प्रेशः। आव० ८२७।

अंतरद्धाए-अन्तरकालेऽर्धसंलिखिते देहे। आचा० २९१।

अन्तरद्वीपजाः-अन्तरम्, इह समुद्रमध्यं तस्मिन् द्वीपास्तेषु। उत्त० ७००। अन्तरद्वीपजाः, सम० १३५। अन्तरद्वीपाः, अन्तरम्। इह समुद्रमध्य तस्मिन् द्वीपाः। उत्त० ७००।

अंतरपल्ली-अन्तरपल्लिकाख्यमग्रामयोरन्तरालम्। बृ० प्र० ३०५।

अंतरपल्ली-बहि संनिवेसः। नि० चू० प्र० ३३६अ। मूलग्रामादर्धतृतीयगव्यूतान्तर्गतो ग्रामः। बृ० तृ० १२१ आ। तस्माद्ग्रामात्परतो योऽन्य आसन्नग्रामः। ओघ० १०४।

अंतरभासिल्ल-अन्तरभाषिल्, अन्तरभाषावान्, गुरुवचनापान्तराल एव स्वाभिमतभाषकः। उत्त० ५५२।

अंतरभासा-अन्तरभाषा, आचार्यस्य भाषमाणस्यान्तौ यद्भाषते सा। आव० ७१२।

अंतरवीहिअं-अन्तरवीथी, अवान्तरमार्गः। जं० प्र० १८८।

अंतरा-अगृहीतवीप्सा। जीव० १५५।

अंतराइयदोसो-अन्तरायिकदोषः, अन्तर्भवो दोषः। आव० ८३८।

अंतराए-अन्तरायः, शक्त्यभावः। सूत्र० १८४। अन्तरायिकः (मध्यमव)। आचा० ३४०।

अंतराणि-उत्कर्षापकर्षादिमकर्मविशेषरूपाणि निवासभूतानि वा गिरिकन्दरविवरादीनि। उत्त० ७०१।

अंतरापहे-अन्तरापन्थाः, अन्तरालमार्गः। भग० ११६।

अंतरायं-अन्तरायः, असज्झायाध्यायादिभिः। आव० ५८०।

अंतरालं-अन्तरालं, अन्तरम्। उत्त० ३८१। आव० ३३।

अंतरावणं-अन्तरापणं। उत्त० २२१। आपणान्तरम्। उत्त० २०९। राजमार्गमध्यभागवर्तिहट्टम्। विपा० ५८।

अंतरावासं-वृष्टेरवसरः, वर्षाकालश्च। भग० ६६।

अंतरिए-लघ्वन्तररूपाः। जं० प्र० ४९।

अंतरिओ-अन्तरितः,। आव० ४२९।

अंतरिका-अन्तरस्य-विच्छेदस्य करणमन्तरिका। जं० प्र० १५०।

अंतरिक्खं-अन्तरिक्षं, आकाशप्रभवग्रहयुद्धभेदादिभावफलनिवेदकशास्त्रम्। सम० ४९।

अंतरिक्खो-मेहो। दश० चू० ११४।

अंतरिच्छा-अन्तरेच्छा, अन्तरा-मध्ये इच्छा-अभिमतवस्त्वभिलाषः। उत्त० ४७४।

अंतरिज्जं-अतरिज्ज णाम पाउरणं अथवा जं सिज्जाए हेट्ठ कुल्लापातं। नि० चू० द्वि० १६३ आ।

अंतरिया-अन्तरिका। सूर्य० १४१। लघ्वन्तररूपा। जीवा० २०४। विच्छेदकरणम्। भग० २३०।

अंतरीयं-परिधानं। बृ० प्र० ९८ अ।

अंतरुच्छुअं-इक्षुपर्वमध्यम्। आचा० ३५४।

अन्तरे-पथि। ओघ० ६६। मध्ये परस्परविभाग.। ठाणा० २३७। अन्तरे, अन्तराले। उत्त० ३८१। अन्तरे, अवसर.। भग० ३८१

अंतरो-अन्तरः, अवसरः। आव० ४२३।

अंतरोद्गाणं-अन्तरोद्गानाम्, जलान्तर्वर्तिसन्निवेशविशेषाणाम्। जं० प्र० २७७।

अंतर्मुहूर्त्तम्–मुहूर्तस्यान्तरं, मुहूर्तमपि न्यूनम्। उत्त० ६९७। भिन्नमुहूर्त्तम्। जीवा० १३०।

अंतर्हित–(अंतद्धिओ) अदृश्य। ठाणा० ५१३।

अंतलिक्खं–अन्तरिक्ष, ग्रहभेदादिविषयम्। आव० ६६०।

अंतलिक्ख–अन्तरिक्षम्, नभ। सूत्र० २२३। अमोघादिकम्। सूत्र० ३१८।

अंतलिक्खं–अन्तरिक्षम्–गंधर्वनगरादि। ठाणा० ४२७।

अंतपाले–अन्तपाल, अन्ते–स्वदादेरयदेशसम्बन्धिनं पालयति–रक्षयति उपद्रवादिभ्य इति। जं० प्र० २०३।

अंतसो–अन्तश, निरवशेषत। सूत्र० १७१।

अंता:–अवयवा। उत्त० ४५९। उत्त० ५८५।

अता–अते ठिता, ण अता अणता। नि० चू० प्र० २५५ आ।

अंताक्खरिका–(अतक्खरिया) क्रीडाविशेष। उत्त० ४७।

अंतिए–अन्तिके, समीपे। भग० ९०। उत्त० २७७।

अंतिमधनं–अंतिमे–अस्थाने परिमाणं। व्य० प्र० ७६।

अंतिमराइयंसि–रात्रेरवसाने। ठाणा० ५०२। भग० ७११।

अंतिमसरीर–अन्तिमशरीरम्, चरमशरीरम्। भग० २११।

अंतियं–समीपम्। भग० ६५९। अत्यन्तमरणं, मरणस्य तृतीयो भेद। उत्त० २३०। आन्तिकं, सामीप्यम्। आव० २६७।

अंतिय–अन्तिकम्, आसन्नम्। भग० २१७। अत्यन्तमरणम्। उत्त० २३०।

अंतिया–आन्तिकी समीपाभ्युपगता। उपा० १५।

अंते–अन्त, पर्यन्त, अतिदूर वा। सूत्र० २०४। अन्ते, अग्रे। उत्त० ६०१। परिसमाप्ति। बृ० द्वि० १९९ आ।

अंतेउरे–(आत पुरिसे), आतुरस्य नाम गृहीत्वा आत्मनोऽय प्रमार्जयति–आतुरश्च प्रगुणो जायते। व्य० द्वि० १३३ आ।

अंतेण–मागण। नि० चू० प्र० ६ आ।

अंतेणं–आन्तेण। ठाणा० ५०२।

अंतेवासि–भर्तृज्ञुवा। नि० चू० प्र० २५० अ।

अंतेवासी–शिष्य। जं० प्र० १५। भग० ११।

अंतेहि–अरमतया सर्वधाम्यान्तवर्तिभिर्वञ्चणकादिभि। भग० ४८४। रागद्वेषौ। आचा० १५८। आचा० १६६।

अंतो–अन्तो, विभाग। भग० ३९३। विभाग। ठाणा० ३८०। अन्त, परिच्छेद। प्रज्ञा० ५३२। मार्ग। आव० ४०२। अन्त निवेशनस्य। आव० ७४५। अन्तो, रोग, मध्य, विनाश। विशे० १३०७। अन्त, मध्यभागे। जीवा० २०१। मार्ग। आव० ६८६। विभाग। जं० प्र० ४५९। भिन्नम्। आव० ५८४। मार्ग। आव० ४८५। आव० १८९। मध्ये। प्रज्ञा० ४७। इन्द्रियाननुकूल आश्रय। प्रश्न० ११८। मध्यकरणम्। आव० ७८३। चतुर्दशभेदान्तरमध्य। उत्त० २६१।

अंतोजलगयपज्जय–जलान्तर्गतपर्यन्त। उत्त० २६४।

अंतोधूमं–अभ्यन्तरधूमम्। आव० ६६२।

अंतोनायं–अन्तोनाद, हृदये मदु समारतन्। आव० ६६१।

अंतोनियंसणी–निर्ग्रन्थ्युपकरणविशेष। औप० २०९।

अंतोमुहुत्त–अन्तर्मुहूर्त्तम्, भिन्नमुहूर्त्तम्। भग० २९। उत्त० ६९७।

अंतोयणीते–आहरणतद्दोषविशेष। ठाणा० २५१।

अंतोवाहिणी–अन्तर्वाहिनी नदी। जं० प्र० ३५७। ठाणा ८०।

अंतोवेइया–प्रतिलेखनादोष। नि० चू० प्र० १८२ अ।

अंतोसंबुक्कावट्टा–गोयरपिंडेसणाए कमेण ति, तस्य गोचरातिरे अभिग्गहविसेसतो आणियव्वा। नि० चू० तृ० १२ अ।

अंतोसल्ल–अन्त शल्यमरणम्। मरणस्य षष्ठो भेद। उत्त० २३०।

अंतोसल्लमरणे–अन्त शल्यमरणम्, अन्त शल्यस्य द्रव्यतोऽनुद्धृततोमरादे, भावत सातिचारस्य यन्मरणं तत्। भग० १२०। सम० ३३।

अंतोहिंतो–मध्यादेर्मध्याद्बहिर्नयन्त। ठाणा० ३५३।

अंत्य:–आनुपूर्व्यान्त्यपकत्वत। सूत्र० १०। विशेषम्। ठाणा० ३९१।

अंदुकम्–हस्तिबन्धनविशेष। उत्त० ४११।

अंदेरे–गुच्छाविशेष। प्रज्ञा० ३२।

अंदोलगा–पश्यन्दोलकाश्च तत्र यत्रागत्य मनुष्या आत्मानमन्दोलयन्ति। ज० प्र० ४४।

अंदोलगो–आन्दोलक यत्रागत्य मनुष्या आत्मानमन्दोलयति। जीवा० २००।

अंध–अन्ध, अज्ञान। भग० ३१२।

अंधकण्टकीयम्–अतर्कितसम्भवो न्यायविशेष। आचा० १८।

अंधकारे-अन्धकारम्, तमोरूपम्। भग० २७०।
अंधकारेति-तमस्कायनाम। ठाणा० २१७।
अंधगवण्हिणो-अंह्रिपा-वृक्षास्तेषां वह्नयस्तदाश्रयत्वेनेत्यं-ह्रिपवह्नयो बादरतेजस्कायिकाः। भग० ७४६।
अंधगवण्ही-अन्धकवृष्णिः, द्वारवत्यां राजा यादवविशेषः। अन्त० २। दश० ९७।
अंधतमसं-अन्धतमसम्। आव० ३६६।
अंधपुरं-नगरविशेषः। बृ० तृ० १०८ आ०। नि० चू० द्वि० ४२आ।
अंधप्रदीप्तपलायनम्-(अंधपलित्तपलाणं)। दश० १५८।
अंधमूढि-अविमर्शकारिता। आचा० ६१।
अंधयं-अन्धकम्, नयनयोरादित एवानिष्पत्तेः, कुत्सितान्नम्। विपा० ३६।
अंधलीभूय-अन्धीभूतः। आव० ६८८।
अंधिय-चतुरिन्द्रियविशेषः। प्रज्ञा० ४२।
अंधिया-चतुरिन्द्रियजीवभेदः। उत्त० ६९६। चतुरिन्द्रिय-जन्तुविशेषः। जीवा० ३२।
अंधिल्लगो-अन्धिल्लकः, जात्यन्धः। प्रश्न० १६२।
अंधीयताम्-अन्धीभवतु। दशं० १०६।
अंधो-अन्धः, चिलातदेशनिवासी म्लेच्छविशेषः। प्रश्न० १४।
अंधोपलः-(अंधोवल), अन्धपाषाणः। दश० ४०।
अंधोपलादिः-छायारहितपाषाणः। विशे० ९१८।
अंध्र-(अंध), अंध्रादिदेशोद्भवा म्लेच्छजाता, आर्यभाषामजा-नाना। व्य० द्वि० २८अ।
अंध्री-(अंधी), अन्ध्रदेशीया स्त्री, उत्कटरूपा। आव० ५८१।
अंब-अम्लवचनयोगाद् परुषवचनव्यवहारः। व्य० प्र. २५६।
अंब-आम्र। प्रज्ञा० ३११।
अंब-आम्रम्। प्रज्ञा० ३२८। फलविशेषः। प्रज्ञा० ३६४। पीतिग ऊर्ध्व अंब भण्णति। नि० चू० द्वि० १२४आ।
अंबए-आम्रमल्लवविशेषः। बृ० प्र० १४३आ।
अंबकंजिय-पुर्नधिकाम्लम्। ओघ १६०।
अंबकुज्जे-पादतलमध्यम्। बृ० द्वि० २२३ आ।
अंबकूणप-आम्रारिथकम्। भग० ६८१।
अंबकूणगहत्थगए-आम्रास्थिहस्तगतः। भग० ६८४।
अंबखल्लगं-आम्रफलम्। आव० ३५३।

अंबखुज्ज-आम्रकुब्जः, आम्रफलवत् कुब्जो वक्रः। भग० ६०। पादतलमध्यम्। बृ० द्वि० २२३ अ। तं०
अंबगपाणगं-पानकविशेषः। आचा० ३४७।
अंबगपिंडी-आम्रपिण्डी। आव० ६९७।
अंबचोयए-आम्रत्वक्। भग० ६८१।
अंबचोयगं- ,, आम्रछल्ली। आचा० ४०५।
अंबजुज्झं-पादतलमध्यम्। नि० चू० प्र० १३७ अ।
अंबट्ठ-अम्बष्ठः, ब्राह्मणपुरुषेण वैश्यस्त्रियां जातो वर्णः। आचा० ८।
अंबट्ठो-अम्बष्ठः, ब्राह्मणेन वैश्यायां जातः। उत्त० १८२।
अंबडे-अम्बडः, माहणपरिव्राजकभेदः। औप० ९१। (अंमडः) परिव्राजकविद्याधरश्रमणोपासकः। ठाणा० ४५७। अम्बडः। सम० १५४।
अंबडो-अम्बडः, अमूढदृष्टिरुदाहरणे लौकिकऋषिः। दश० १०२। सुलसाश्राविकापरीक्षकपरिव्राजकः। व्य० प्र० १८ आ। म्लेच्छविशेषः। प्रज्ञा० ५५। अम्बडपरि-व्राजकः। प्रज्ञा० ६१।
अंबपलंबं-फलविशेषः। आचा० ३४८।
अंबपेसी-आम्रफाली। आचा० ४०५।
अंबप्पहारो-प्रहारार्त्तः। उत्त० १९३।
अंबभित्तयं-आम्रार्द्धम्। आचा० ४०५।
अंबय-आम्रः। आव० ४१७।
अंबयरुक्खे-अष्टादशजिनचैत्यवृक्षः। सम० १५२।
अम्बरतलम्-(गगनतले)। सूर्य० २६४।
अंबरवत्थं-अम्बरवस्त्रं, स्वच्छतयाऽऽकाशकल्पम्। जं० प्र० ४०६। स्वच्छतयाऽऽकाशवन्स्वच्छलम्। भग० १७४।
अंबरसे-अम्बा-पूर्वोक्तयुक्त्या जलं तद्रूपो रसो यस्मात् सलि-लमिलोऽम्बरसम्। भग० ७७६।
अंबरिस-अम्बरीषः, द्वितीयः परमाधार्मिकः। भग० १९८।
अंबरिसी-नारकान् कल्पनिकाभिः गलहस्तः कल्पयित्वा भ्राष्ट्रपाकयोग्यान् करोति। सम० २८। अम्बर्षिः, द्वितीयः परमाधार्मिकः। प्रश्न० १२८। पञ्चदशसु परमाधार्मिकेषु द्वितीयः। उत्त० ६१४। नारके द्वितीयः परमाधार्मिकः। आव० ६५०। भिन्नशरीरं उर्ध्वदिग्धो भ्राष्ट्रे पाचयः। अनु० ७०८।

अंबरिसे-अम्बरीष, कोष्ठक । जीवा० १२८ । अम्बरीषम्-भ्राष्ट्रम् । प्रश्न०, १७। अम्बरीषा-भ्राष्ट्रा आकरस्थानि । ठाणा० ४१९ ।

अंबले-अम्लायते । सू० द्वि० २८३ अ।

अंबसालवणं-आम्रशालवनं, आमलकल्पानगर्यां वनविशेष । उत्त० १०९ । चैत्यविशेष । आव० ५०७ । आम्रशालवनम् । आव० ३३४ ।

अंबा-विद्याविशेष । आव० ४११ । अम्बा । भग० ७७६ ।

अंबाडगं-अम्बाडकम्, फलविशेष । अनुत्त० ६ । अंबाडई-फलविशेष, अर्धागनिभा । प्रज्ञा० ३२८ ।

अंबाडग-बहुबीजको वृक्ष । भग० ८०३ । अंबाडक-बहुबीजविशेष । प्रज्ञा० ३० । आम्रातक-वाणोनवृक्षवारी । प्रज्ञा० ३६४ ।

अंबाडगपलंबं-फलविशेष । आचा० ३४८ ।

अंबाडगपाणगं-पानकविशेष । आचा० ३४७ ।

अंबाडिओ-तिरस्कृत । बृ० प्र० ३०आ । तिरस्कृत । आव० ६१ । तर्जित । आव० १८७ । उपालब्ध । आव० ३९८ ।

अंबाडिय-निर्भर्त्सित । आव० ३०६ ।

अंबाडिया-तिरस्कृता । आव० २२७ ।

अंबाडेइ-तिरस्कुरुते । उत्त० १४७ । उपालभते । आव० २२३ । नि० चू० प्र० ७११ आ ।

अंबाण-गंधापे, भाषा । बृ० प्र० १४३आ ।

अंबारेवई-अम्बारेवती, व्यन्तरीविशेष । आव० ६९१ ।

अंबावल्ली-वल्लीविशेष । प्रज्ञा० ३२ ।

अंबियपहारे-प्रहारार्त । आव० ६६६ ।

अंबिया-आम्रा कनेगितलक्षणा वा । बृ० द्वि० ८२अ ।

अंबिलं-अम्लम् । आव० २००। अम्लम्, तक्रारनालादि । दश० १८० । आचाम्लम्-अवश्यानम् । आचा० ३४६ ।

अंबिल-परिणमनशील । भग० ८०२ । अम्लोऽम्लिका याधित । चं० प्र० १७४ । हरितविशेष । प्रज्ञा० ३३ । रथ्या । बृ० प्र० २९अ ।

अंबिलजवागू-अम्लयवागू । आव० ९१ ।

अंबिला-आम्लिका । ओघ० २१५ ।

अंबिलि-आम्लभाजनम्, तिन्तिडीकादि । आव० ६२४ । रथ्या । बृ० प्र० २८आ ।

अंबिलिबीयं-अम्लिकाबीजम्, तिन्तिडीकाबीजम् । आव० ६२४ ।

अंबिलोदय-आम्लोदकम्, अतिरसमात्र वृक्षस्तर्तिगंभम् । जीवा० २५ । आम्लोदकम्, स्वभावत एवाम्लरसं । कांजिकवत् । प्रज्ञा० २८ ।

अंबुगुस्सो-आम्रगुच्छ । आव० ६४८ ।

अंबे-आम्ल । नि० चू० प्र० ३०६ आ । प्रथमपरमाधार्मिक । सम० २८ । अम्ब, नरके प्रथम परमाधार्मिक । आव० ६५० । पञ्चदशसु परमाधार्मिकेषु प्रथम । उत्त० ६१४ । अम्ब, प्रथम परमाधार्मिक । सूय० १२४ ।

अंबेल्ली- (रथ्या) । आव० ९३ ।

अंबो-आम्रादि, भाजने स्थान । ओघ० ११३ ।

अंमिया-आमा । नि० चू० द्वि० १० आ ।

अंमेउं-आप्तुम् । नि० चू० प्र० २०२ अ ।

अंयाडेति-तर्जयति । नि० चू० प्र० ११९ आ ।

अंस-अंश, पर्यङ्कासनोपविष्टस्य जानुनोरन्तरं, आसनस्य ललाटोपरिभागस्य चान्तरं, दक्षिणस्कन्धस्य वामजानुनश्चान्तरं, वामस्कन्धस्य दक्षिणजानुनश्चान्तरम् । चतुर्दिग्विभागोपलक्षित शरीरावयवो वा । भग० ११ । अंगुकोणषु । जं० प्र० ११५ । अंश, गणनीयोंऽत्ये शब्द । ठाण० ५८६ ।

अंसलग-अंशगत । त० ।

अंसहरा-अंशधरा, अंशो-विभागस्तस्य धारा ये... यन्ति-मृत्युना नीयमाने रक्षन्ति । उत्त० ३८८ । अंश-दुःखभागमंशं हरन्ति अपनयन्ति ये ते । उत्त० ३८९ ।

अंसागो-एकस्मात् । ठाणा० २३६ ।

अंसिया-अध्यवसायंश । बृ० द्वि० १९९ अ । ग्रामभिन्नविभागादि । नि० चू० द्वि० ७०आ । अंशिका-यत्र ग्रामस्यार्द्धं, आदिशब्दात् त्रिभागो वा चतुर्भागो वा परावर्तित सा ग्रामस्यांश यत्र अंशिका । बृ प्र० १८१ आ ।

अंसियालय-अंश्यालये । दश० ३७ ।

अंसी-अंशि, चतुर्दिग्विभागोपलक्षित शरीरावयव । जीवा० ४३ । प्रज्ञा० ४१२ । (अर्शांसि) रोगविशेष । नि० चू० प्र० १८९ अ ।

अंसुप–श्लक्ष्णपट्टः। बृ० द्वि० २०१ आ।
अंसुयं–वस्त्रम्। नि० चू० प्र० २५४ आ। दुकूलविशेषरूपम्। जीवा० २६९।
अंसुय–श्लक्ष्णपट्टः। ठाणा० ३३८।
अंसुयाणि–अंशुकानि, वस्त्राणि। आचा० ३९३।
अंसो–अंशः, भेदः। विशे० २५१। अस्रिः, चतुर्दिग्विभागोपलक्षितः। सूर्य० ४। अस्रिः, पर्यङ्कासनोपविष्टस्य जानुनोरन्तरं १, आसनस्य ललाटोपरिभागस्य चान्तरम् २, दक्षिणस्कन्धस्य वामजानुनश्चान्तरम् ३, वामस्कन्धस्य दक्षिणजानुनश्चान्तरं ४। सूर्य० ४। अंश.–भेदः। प्रश्न० ६०१। अंशः–भागः। उत्त० १८८। भागः। आचा० १७७।
अइ–अमुना। बृ० द्वि० २१३ अ।
अइंताणं–अतियतां–आगच्छतां। व्य० द्वि० ३६६ आ।
अइंति–प्रविशन्ति। ओघ० ६७। आगच्छन्ति। प्रश्न० १२०।
अइंतु–प्रविशन्तु। ओघ० ७९।
अइंते–प्रविशति। बृ० द्वि० ६०अ।
अइंतो–आगच्छन्। आव० २६५।
अइ–अयि, आमन्त्रणे। उत्त० ३५४।
अइअच्च–अतिगत्य, अत्येत्यातिक्रम्य। आचा० २४१। अतिगम्य। आचा० ३०१।
अइआरो–अतिचारः, पापम्। आव० ७७८। अतिक्रमः। आव० ५७५। स्खलना। ओघ० ३८।
अइकाए–अतिकायः, दक्षिणनिकाये सप्तमो व्यन्तरेन्द्रः। भग० १५८।
अइकाय–अतिकायः, महोरगेन्द्रः। जीवा० १७४।
अइकुंडियं–अतिबाधितम्। आव० ५७४।
अइकोहग्गहग्घत्थं–अतिक्रोधमहग्रस्तम्, अतीवोत्कटरोषमहाभिभूतम्। आव० ५८८।
अइकंतं–अतिक्रान्तम्, अतिक्रान्तकरणात्। आव० ८४०।
अइक्कंतं–अतिक्रान्तम्, अतिक्रान्तकरणादतिक्रान्तम्। भग० २९९।
अइक्कंता–अतिक्रान्ता, जाता। उत्त० ३१५। अतीताः। आचा० १३८।
अइक्कंतो–अतिक्रान्तः, पर्यन्तवर्ती। प्रश्न० ९१।
अइक्कमओ–अतिक्रमः, अनानुपूर्वी भवनम्। विशे० १०४।
अइक्कमे–अतिक्रमेत्, प्रविशेत्। उत्त० ६०।
अइक्कमो–अतिक्रमः, आधाकर्मनिमन्त्रणे प्रतिशृण्वति साधुक्रियोल्लङ्घनरूपः दोषविशेषः, यावदुपयोगकरणम्। आव० ५७६। अतिलङ्घनम्। आव० ८२३। पीडात्मको महाव्रतातिक्रमो वा मनोऽवष्टब्धतया परतिरस्कारं वा। सूत्र० १७३।
अइगच्छिहिति–अतिगमिष्यति। आव० ३६६।
अइगतो–प्रविष्टो। नि० चू० तृ० ९३ आ। अतिगतः। आव० ३४९।
अइगमणं–अतिगमनम्, अतिगमनकथा, राज्ञ आगमनसम्बन्धी विचारः, राजकथाया द्वितीयभेदः। आव० ५८१। उत्तरायणम्। भग० १४७।
अइगया–अतिगता। ओघ० १५८।
अइगुविलगच्छरा–अतिगुपिलगहरा। आव० ३८४।
अइचारो–अतिचारः, स्खलना। ओघ० ३८। मिथ्यात्वमोहनीयकर्मोदयादात्मनोऽशुभः परिणामविशेषः। आव० ८१३। अतिचरणानि–चारित्रविराधनाविशेषाः। विशे० ५५०।
अइचिरायिओ–अतिचिरायितः। आव० ५१३।
अइच्छ–अतीच्छा, अदाने सत्यतिगच्छेति वचनम्। आव० ४७८।
अइच्छओ–अतिक्रामन्, भिन्दानः। बृ० प्र० १७ आ।
अइण्णं–आकीर्णम्, मच्चलोगो आयरइ। नि० चू० प्र० २७४ अ।
अइणा–गोरमियारिओ। नि० चू० प्र० २५५ अ।
अइनिद्धं–अतिस्निग्धम्, हविः प्रचुरम्। आव० ५६८।
अइपंडुकंबलसिला–अतिपाण्डुकम्बलशिला। आव० १२४।
अइपडागा–अतिपताका, एकां पताकामतिक्रम्य या पताका सा। औप० ५। पताकोपरिवर्तिनी। भग० ४७६।
अइ(णु)परियट्टित्ता–अति(नु)परिवर्त्य, सामस्त्येन परिभ्राम्य। प्रश्न० ६००।
अइपहाए–अतिप्रभाते। आव० ६४१।
अइप्पगे–अतिप्रभाते। ओघ० ९८।
अइबले–आगामिन्यां पञ्चमो हरि.। सम० १५४। अतिबल–भरतक्षेत्रे मूर्धायः। ठाणा० ४३०।

अइभद्दा-अतिभद्रा, प्रभासमाता । आव० २५५ ।

अइभारे-अतिभार, प्रभूतपूगफलादेः स्कन्धपृष्ठादिष्वा-रोपणम् । आव० ८१८ ।

अइभूमि-अतिभूमि, गृहस्थैरननुज्ञाता यत्रान्ये भिक्षाचरा न यान्ति । दश० १६८ ।

अइमत्तं-अतिमात्र, अतिरिक्तम्, अतिक्रान्तमर्यादम् । उत्त० ४२९ ।

अइमत्ते-अतिमात्रे, बृहत्प्रमाणे । ओघ० १७० ।

अइमुत्तग-पुष्पविशेष । नि० चू० प्र० ११८ आ ।

अइमुत्तगचंदसंठाणसंठिते-अतिमुक्तकचन्द्रसंस्थान संस्थितम्, प्राणेन्द्रियसंस्थानम् । प्रज्ञा० २९३ ।

अइमुत्तगणा-वल्लीविशेष । प्रज्ञा० ३२ ।

अइमुत्तय-लताविशेष । प्रज्ञा० ३८२ ।

अइमुत्ते-अतिमुक्त, महावीरस्वामिनः कुमारश्रमण शिष्य । भग० २१९ । अन्तकृद्दशानां षष्ठवर्गस्य पञ्चदशाध्ययनम् । अन्त० १८ ।

अइयंचिय-अतिमन्थ । ठाणा० ३०० ।

अइयारो-अतिचार, गृहीते आधाकर्मणि दोषविशेष, याव-द्गर्ति गत्वेर्यापथप्रतिक्रमणाद्युत्तरकालं लम्बनोत्क्षेप । आव० ५७६ । अतिचरण-चारित्रस्खलनाविशेष । आव० ५८ । अपराधम् । उत्त० २३३ ।

अइर-अचिरा, शान्तिमाता । आव० १६१ ।

अइरत्त-अतिरात्र, अधिकदिनं, दिनवृद्धि । ठाणा० ३५० ।

अइरत्तकंबलसिलाओ-मेरुरक्तकशिला । ठाणा० ८० ।

अइरा-अचिरा, शान्तिजिनमाता । आव० १६० । सम० १५२ । सम० १५१ ।

अइरित्तसिज्जासणिए-अतिरिक्तशय्यासनिक, चतुर्थम समाधिस्थानम् । आव० ६५३ ।

अइरेगो-अतिरेक, अतिशायिता । जीवा० २०४ । अति-शय । जीवा० २६७ ।

अइवत्तियं-पातकादतिपातितं, निर्दोषम् । आचा० ३०५ ।

अइवाइज्ज-अतिपातयेत्, व्यपेत । आचा० १२८ ।

अइवायंमि-अतिपाते । ठाणा० ३२९ ।

अइवाय-द्वादशशतके प्राणातिपातादिविषय पञ्चमोद्देशक । भग० ५५२ । अतिपात, हिंसाविशेष । ओघ० ३६ । वध । भग० ७८९ ।

अइवालग-अतिपालक, वानरविशेष । बृ० तृ० २०अ ।

अइवेलं-अतिवेलं, स्वाध्यायादिवेलातिक्रमेण । उत्त० ११० । अतिवेला अन्यसमयाविशायिनी मर्यादा समाचारा । उत्त० ११० ।

अइसंधणपरो-अतिसन्धानपर, परवञ्चनाप्रवृत्त । आव० ५८९ ।

अइसंपओगो-अतिसम्प्रयोग, गाढ्यम् । सूत्र० ३१९ ।

अइसय-अतिशय, आमर्षौषध्यादि । सम० १३४ । अर्थ विशेष । बृ० प्र० १९३ आ ।

अइसुहुमं-अतिसूक्ष्मम् । आव० ५३६ ।

अइसेस-अतिशय, अतिशयनं, अवध्यादिज्ञानं श्रमणे ज्ञानं । ओघ० १४ । अतिशयी-अवध्यादिज्ञानयुक्त । दश० १०३ । सूत्रार्थगामाचारीविधायोगसंप्रातिशय । बृ० प्र० २०३ आ ।

अइसेसी-अतिशायिनी, स्निग्धमधुरद्रव्यादि । बृ० प्र० २४६ आ ।

अइसेसो-अतिशेष, अतिशायी । जीवा० ३०७ । शेषाणि-मध्यादिचतुर्दशनार्यानि अतिक्रान्त-गर्भविशेषादिगुणसंपन्नादि-दशमनिशयवक्तेत्यम् । ठाणा० २१३ ।

अईइ-अतीति, आगच्छति, प्रविशति । आव० ७३२ ।

अईतेआ-अतितेजा-चतुर्दशरात्रिनाम । जं० प्र० ४९१ ।

अईया-अतीता, अतिक्रान्ता । आचा० १३८ ।

अईह-अतियाती । आव० १७३ ।

अउअंगाति-अयुतांगानि, संख्याविशेष । ठाणा० ८६ । सूर्य० ९१ । भग० ८८८ ।

अउआति-अयुतानि संख्याविशेष । ठाणा० ८६ । सूर्य० ९१ । भग० ८८८ । भग० ३९० । भग० २७५ ।

अउज्झ-अयोध्यम्, अनभिभवनीयम् । जं० प्र० २१२ ।

अउज्झा-अयोध्यानि, परैर्योद्धुमशक्यानि । प्रज्ञा० ८६ ।

अउज्झाओ-नगरविशेष । ठाणा० ८० ।

अए-अज, बर्कर । प्रश्न० ७५२ । उत्त० २७७ ।

अओज्झा-अयोध्या, राजधानी । जं० प्र० ३०७ । अजि-तस्य प्रथमपारणकस्थानम्, आव० १४६ ।

अओमुहदीवे-अतरद्वीपविशेष । ठाणा० २२६ ।
अओमुहो-अयोमुख, अन्तरद्वीपविशेष । जीवा० १४४ ।
अकंटए-अकण्टक, कण्टकरहित । जीवा० १८८ ।
अकंठगमणाई-अकण्ठगमनादि, कण्ठेन अचक्वलो नोप क्रामति । ओघ० ८० ।
अकडूयते-अकण्डूयक, न कण्डूयत इति । ठाणा० २९९ ।
अकंतं-सरोषभणितम् । नि० चू० प्र० २७८ अ ।
अकंतत्ता-अकान्तता, अकमनीयता । भग० २३ । असुन्दरता । भग० २५३ । अकान्तता । प्रज्ञा० ५०४ ।
अकंतदुक्खी-अनभिप्रेतासातावेदनीया । आचा० ४३० ।
अकंता-अकान्ता, अकमनीया । भग० ७२ ।
अकंपिय-अकम्पित, अष्टमगणधर । आव० २४० ।
अकक्कसं-अकर्कशम्, सुखम् । भग० १०५ ।
अकज्जं-अकार्यम्-मैथुनासेवालक्षणम् । व्य० प्र० २०५ आ ।
अकडजोगी-यतनया योगमकृतवान् । व्य० प्र० २५१ ।
अकडसामायारी-सामायारिं जो न करेति सो अकड सामायारी । नि० चू० तृ० ८१अ ।
अकण्णा-अकर्णनामा अन्तरद्वीपा । प्रज्ञा० ५० ।
अकण्णो-अकर्ण, अन्तरद्वीपविशेष । जीवा० १४४ ।
अकति-असङ्ख्याता अनन्ता वा । ठाणा० १०५ ।
अकतिसञ्चिता-असङ्ख्याता, एकैकसमये उत्पन्ना सन्त स्तथैव समिताश्ते । ठाणा० १०५ ।
अकतिसंचया-[illegible] न वे । भग० ७९९ ।
अकण्णदीवे-अकर्णद्वीप, अन्तरद्वीपविशेष । ठाणा० २२६ ।
अकप्प-अकल्प, [illegible] । दश० १९६ ।
अकप्पए-अकल्पिके [illegible] । व्य० द्वि० १३ अ ।
अकप्पट्ठवणा [illegible] । नि० चू० प्र० २४२ अ ।
अकप्पणारमणा-[illegible] । [illegible] ।
अकप्प-[illegible], [illegible] वा । चू० तृ० १२५ अ ।
अकप्पो-अकल्प, आव० ७१८ । [illegible] । आव० ५६१ ।
अकप्प[illegible]-[illegible] । [illegible] ८८ ।
अकम्मंसे-अकर्मांश । [illegible] ६१५ ।

अकम्मंसो-अकर्मांश, अंशा-कर्मणोऽवयवास्तेऽपगता यस्य स । उत्त० २५७ ।
अकम्म-आक्रम्य, बलात्कारेण । आव० ६६२ ।
अकम्मग-अकर्मकं, अविद्यमानदुःखस्थितं । सम० ५२ ।
अकम्मभूमगा-अकर्मभूमका, अकर्मा-यथोक्तकर्मविकला भूमिर्येषां ते अकर्मभूमा, ते एव अकर्मभूमका । प्रज्ञा० ५० । सम० १२५ ।
अकम्मभूमी-अकर्मभूमि, हैमवतादिकभोगभूमि । प्रज्ञा० ९६ । ठाणा० ११५ ।
अकम्मयं-अकर्मकं, अप्रमादम् । सूत्र० १६९ । उत्त० ७०० ।
अकम्मयारो-अकर्मकारी, स्वभूमिकानुचितकर्मकारी । प्रज्ञा० ३६ ।
अकम्मा-अकर्मा, न विद्यते कर्मास्येति, वीर्यान्तराय क्षयजनितं जीवस्य सहजं वीर्यम् । सूत्र० १६८ ।
अकम्हा-अकस्मात्, बाह्यनिमित्तानपेक्षम् । आव० ६४९ । अकस्मात् क्रिया, अकस्मात्करणम्, क्रियायाश्चतुर्थो भेद । आव० ६४८ ।
अकम्हादंडे-अकस्माद्दण्ड । सम० २५ ।
अकम्हाभयं-अकस्माद्भयम्, बाह्यनिमित्तानपेक्ष गृहादिष्वेव अवस्थितस्य रात्र्यादौ यद्भयम् । आव० ६४६ । सम० १३ । ठाणा० ३८९ ।
अकयकरणो-अकृतकरण, अनभ्यस्तादिष । आव० ७०३ । अकृतकरण । आव० ३४४ ।
अकयकिरिए-अकृतयोगोद्वहन । नि० चू० प्र० ३०३ अ ।
अकयपरलोयसंबलो-अकृतपरलोकशम्बल । आव० १६५ ।
अकयन्नुया-अकृतज्ञता । आउ० ।
अकयपुण्णे-अकृतपुण्य । उत्त० ३१० ।
अकयपुण्णो-अकृतपुण्य [illegible] । प्रज्ञा० ९८ ।
अकयमुहो-[illegible] । बृ० तृ० १५ अ ।
अकयकप्पो-[illegible] । नि० चू० द्वि० ८० अ ।
अकयागम-[illegible] । आव० ३४८ ।
अकरंडुअं अकरण्डुकम्, [illegible] । ओघ० १० ।

अकरंडुयं–अविद्यमानपृष्ठिपार्श्वास्थिकम् । प्रश्न० ८१ ।
अकरंडुय–अकरण्डुक, अनुपलक्ष्यपृष्ठास्थिक । प्रश्न०८४ ।
अकरणं–मैथुनम् । व्य० प्र० २५१ अ ।
अकरण–अलेश्यस्य केवलिन कृत्स्नयोर्ज्ञानदर्शनयोर्यो केवले ज्ञाने दर्शने चोपयुञ्जानस्य योऽसावपरिस्पन्दोऽप्रतिघो वीर्यविशेष । ठाणा० १०६ । भग० ५७ ।
अकरणतयेव–अक्रिययैव मयमानुष्ठानमन्तरेण । आचा० १४९ ।
अकरणयाए–अकरणेन, अपूर्वानुपार्जनेन । उत्त० ५८७ ।
अकरणयाए–अदयागारतया । आचा० ३०५ ।
अकरणिज्जं–अकृत्यम्, अर्सयमं मन्दधर्माण । आव० ५३६ ।
अकरणिज्जो–अकरणीय । आव० ७७८ ।
अकरिंतो–अकुर्वन् । आव० ५०९ ।
अकलिज्जंता–अज्ञायमाना । ओघ० १६० ।
अकलुसे–अकलुष, द्वेषवर्जिते । अन्त० २२ ।
अकलेवरसेणि–अकडेवरश्रेणि, कलेवरं–शरीरं अविद्यमानं कडवरमेषामकडेवरा सिद्धास्तेषां श्रेणिरिव श्रेणि क्षपकश्रेणिरिति । उत्त० ३४१ ।
अकल्पम् (अकप्पं)–असमर्थ । आचा० १०६ ।
अकविल–अकपिला, श्यामा । जं० प्र० ११५ ।
अकसिणपवत्तगो–अकृत्स्नप्रवर्तक । आव० ४९३ ।
अकसिणा–आचारप्रकल्पस्य अष्टाविंशतितमो भेद । सम० ४७ । अकृत्स्ना–यत्र किंचित् क्षोभ्यते । व्य० प्र० १२४ आ ।
अकसिणो–अकृत्स्न । विशे० ४२४ ।
अकस्मात्–(आकस्मिक) निर्युक्ति । आचा० २६६ ।
अकस्मात्–कस्मादिति हेतुर्न कस्माद् अकस्मात् । आचा० २६७ ।
अकस्माद्दण्ड–अनभिसन्धिना दण्ड । प्रश्न० १४३ ।
अकस्माद्भयम्–बाह्यनिमित्तानपेक्षम् । प्रश्न० १४३ । बाह्यनिमित्तमन्तरेणाहेतुकं भयम् । आव० ४७२ ।
अकहा–अकथा मिथ्यात्वमोहनीयं कर्म वेदयन् विपाकेन यां काञ्चिदज्ञानी कथां कथयति सा । दश० ११५ ।
अकांडे–अकाले । बृ० प्र० १५५ अ ।
अकाऊण–अकृत्वा, अभणित्वा । ओघ० १५५ ।
अकाम–अकाम, मोक्ष । उत्त० ४१४ । अकाम०, उपरोधशीलता । दश० १०७ । निरभिप्राय । भग० ३१ । निर्जरायनभिलाषी । भग० ३६ ।
अकामकामे–अकामकाम, कामान्–इच्छाकाममदनकामभेदान् कामयते–प्रार्थयते य स कामकामो न तथा अकामकाम, अकामो–मोक्षस्तत्र सकलाभिलाषनिवृत्तेस्तं कामयते य स तथा । उत्त० ४१४ ।
अकामणिज्जराए–अकामनिर्जरया । आव० ६७ ।
अकामतण्हा–अकामतृष्णा । औप० ८६ ।
अकामनिकरणं–अकामनिकरणम्, अकामो वेदनानुभावेऽनिच्छाऽमनस्कत्वात् स एव निकरणं–कारणं यत्र तदकामनिकरणं–अज्ञानप्रत्ययं, अनिच्छाप्रत्ययम् । भग० ३१२ ।
अकामनिर्जरा – पराधीनतयाऽनुरोधाच्चाकुशलनिवृत्तिराहारादिनिरोधश्च । तत्वा० ६–२० ।
अकाममरणम्–बालमरणापरपर्यायम् । उत्त० २४१ । अकाममरणं–उत्तराध्ययनेषु पञ्चममध्ययनम् । उत्त० ९ ।
अकाममरणिज्जं–उत्तराध्ययनेषु पञ्चमाध्ययनम् । सम० ६४ ।
अकारए–अकारक, अरोचक । विपा० ४० ।
अकारकम्–अपथ्यम् । ओघ० १२९ । ओघ० १८३ । शीतलम् । ओघ० १७६ ।
अकारिजणो–अकारिजन । आव० १७६ ।
अकारिणो–अकारिण आमोषाद्यविधायिन । उत्त० ३१३ ।
अकाल–अवर्षा । ठाणा० ३९९ ।
अकालपडियोधी–रात्रौ चैव पडिवुज्झति । नि० चू० तृ० ४३ अ । एवं न कश्चिदुपधिप्रेक्षणकाल । आचा० ३७७ ।
अकालपरिभोगी–रात्रौ सत्वादरेण भुजति । नि० चू० तृ० ४३ अ । एवं न कश्चिद्भोजनकाल । आचा० ३७७ ।
अकालपरिहीण–अविलम्बेन । भग० ७३८ । निर्विलम्बम् । जं० प्र० ३९७ ।
अकालसज्झायकारए–अकालस्वाध्यायकारकं । सम० ३७ ।
अकालसज्झायकारी–अकालस्वाध्यायकारी, य कालिकश्रुतमुद्घाटपौरुष्यां पठति, चतुर्दशमसमाधिस्थानम् । आव० ६५४ । अकालस्वाध्यायकरणम्, पञ्चदशमसमाधिस्थानम् । प्रश्न० १४४ ।
अकालिचरिया–अकालचर्या, रात्रौ पथि गमनम् । व्य० प्र० १९ आ ।

अकालियं-आकालिकं, यथास्थितायुरुपरमादर्वागेव । उत्त० ६३० ।

अकाले-अकाल, मध्याह्नादि । विपा० ६१ ।

अकाहल-अमन्मनाक्षरम् । प्रश्न० १२० ।

अकिंचणे-अकिञ्चन, न विद्यते किमप्यस्येत्यकिञ्चन, निष्परिग्रह । आचा० ४०३ । अकिंचनं-निष्परिग्रहत्वम् । उत्त० ५९० ।

अकिच्चं-अकृत्यम्, अकरणीयम्, प्राणवधस्य पञ्चम पर्याय । प्रश्न० ५ । मैथुन । नि० चू० प्र० ७९ आ । अनिवर्तनीयम् । भग० १०४ ।

अकिट्ठे-अकृष्ट, अक्लिष्टो वा, अविलिखित, अबाधितो निर्वर्तनमिति वा । भग० १८० ।

अकित्तिम-अकृत्रिम, क्रमादागतखानिसम्भूताद्युप्तसम्भूती, स्वशोभित । भ० प्र० ७० ।

अकित्ती-अवर्णवादभाषणम् । बृ० तृ० ९९ आ ।

अकिरियं-अक्रिया, नास्तिवाद । आव० ७६२ ।

अकिरियावादी-अक्रियावादी, क्रिया-जीवादिपदार्थो नास्ती त्यादिका वदितुं शील यस्य स । सूत्र० २०८ ।

अकिरिया-अक्रिया । आव० ३६८ । योगनिरोध । भग० १४१ । अक्रिया । आव० ४१२ । अवर्ण । आव० ४२९ । आव० ४१२ ।

अकिरिया-दुष्टक्रिया मिथ्यात्वाद्युपहतस्यामोक्षसाधकमनुष्ठानम् । ठाणा० ३५३ । योगनिरोध । ठाणा० १५७ । योगनिरोधलक्षणा नास्तिकत्वं वा । सम० ५ । अविद्यमानक्रियं, व्युपरतक्रियाख्य शुक्लध्यानचतुर्थभेद । उत्त० ५८६ ।

अकिरियाओ-अकप्पपडिसेवण । नि० चू० तृ० २०अ ।

अकिरियावाइ-क्रियाभाववादिन, आत्माभाववादिन, चित्तशुद्धिवादिन । भग० ९४४ ।

अकिरियावाती-एकात्मकवाद्यादयोऽष्टौ । ठाणा० ४२५ । नास्तिका । ठाणा० २६८ ।

अकीयकड-अक्रीतकृत, न क्रीयते-न मूल्येन साम्प्रतं कृत । प्रश्न० १०८ ।

अकित्ती-अकीर्ति, एकदिग्गामि यशप्रसिद्धि । ठाणा० ४१८ । भग० ४९० ।

अकुऊहले-अकुतूहल, कुहकादिष्वकौतुकवान् । उत्त० ६५१ ।

अकुओभय-अकुतोभय, संयम, अप्कायजीवो वा । आचा० ४४ ।

अकुक्कुय-अकुक्कुच, अशिष्टचेष्टारहित । उत्त० १०९ । अकुत्कुच, कुन्थ्वादिविराधनाभयात्कर्मबन्धहेतुत्वेन कुत्सित हस्तपादादिभिरस्पन्दमान । उत्त० १०९ । अकौत्कुच-मुखविकारादिरहित । आचा० ३१५ ।

अकुक्कुय-अकुक्कुचं, अस्पन्दमानम् । उत्त० ५८ ।

अकुक्कुय-कुत्सितं कूजति-पीडित सन्नाक्रन्दति कुकूजो न तथेत्यकुकूज । उत्त० ४८६ ।

अकुच्चो-निश्चल । नि० चू० प्र० १६७ अ ।

अकुट्ठिले-अं हे । दश० चू० १५१ ।

अकुट्ठो (अकुष्ट) । जात्जातोतिवयणेण । नि० । चू० प्र० २९६ अ ।

अकुसल-अकुशल, अनिपुण स्थूलमतिश्चरकादि । दश० ६४ ।

अकुसलो-अप्रधान बन्धाय संसाराय । नि० चू० प्र० २५ आ ।

अकुहए-कुहग-इन्द्रजालादी त न करेइत्ति वाइगादि वा । दश० चू० १४० ।

अकेल्ला-रासस्तोत्रपाठका । नि० चू० प्र० २७७ अ ।

अकोवणिज्जो-अकप्पो अकुसणिज्जोत्ति वुत्त भवति । नि० चू० द्वि० १३९ अ ।

अकोसायत-विकासिभवत् । औप० २० ।

अकोहणे-अक्रोधन अपराधिन्यनपराधिनि वा न कथंचित् कुप्यति । उत्त० ३४१ ।

अकोहे-अक्रोध, स्वल्पक्रोधेन । जं० प्र० १४८ ।

अक्कडे-अकाले (आउ०)

अक्कंता-आक्रान्ता । आव० ५०४ । अवष्टब्धा । आचा० २५७ ।

अक्खतितो-अडाडाए बला हरंतो । नि० चू० द्वि० ३८ आ ।

अक्खतिया-न कुतोऽपि बिभ्यति ये स्तेना । बृ० द्वि० ११८ अ ।

अक्कंते–अचित्तस्य प्रथमो भेदः। ओघ० १३३। आक्रान्ते–पादादिना भूतलादौ यो भवति सः। ठाणा० ३३६।

अक्कंतो–आक्रान्तः। आव० २२७।

अक्कंदणं–आक्रन्दनम्, महता शब्देन विरसणम्। आव० ५८७।

अक्क–(अर्कतूलम्)। नि० चू० द्वि० ६१ अ।

अक्कबोंदी–वल्लीविशेषः। प्रज्ञा० ३३।

अक्कबोंदीणं–वल्लीविशेषः। भग० ८०३।

अक्कम–आक्रमः, तदुच्छेद इतियावत्। आव० ६०।

अक्कमणं–आक्रमणम्। विशे० ४८६। आक्रमणं–पादेन पीडनं। आव० ५७३।

अक्कमइ–आक्रामति, अवष्टभ्नाति। उत्त० १३४।

अक्कमित्ता–हत्वा। भग० ६३७। आक्रम्य–मिश्रीकृत्य। ओघ० १९५।

अक्किट्ठा–अक्लिष्टा, स्वशरीरोत्थक्लेशवर्जिता। जं० प्र० १२६।

अक्किट्ठो–अक्लिष्टः, स्वशरीरोत्थक्लेशरहितः। जीवा० २८४।

अक्कोडियाओ–प्रवेशिताः। सू० प्र० ३० आ।

अक्कोस–आक्रोशः, अनिष्टवचनम्, द्वादशः परीषहः। आव० ६५६। यकारादिभिः। दश० २६७। दुर्वचनपरीषहः। सम० ४१।

अक्कोसेज्ज–आक्रोशेत्, तिरस्कुर्यात्। उत्त० १११।

अक्कोसो–आक्रोशः, असभ्यभाषणम्। उत्त० ६२। आक्रोशनं, असभ्यभाषात्मक.। उत्त० ८३। म्रियस्वेत्यादि वचनम्। प्रश्न० १६०।

अक्खं–अक्षम्, चन्दनकम्। आव० ७६७। अक्षाटकम्। आव० ३४४। वराटकाः। आव० ८८। आत्मा। ठाणा० ४९। इन्द्रियम्। प्रज्ञा० ८८। अश्नीते नवनीतादिकमित्यक्षो–धूः। उत्त० २४७।

अक्ख–अक्ष., अक्षोपाङ्गदानवचेति साधोरुपमानम्। दश० १८। जीवः इन्द्रियं वा। भग० २२२। संखाणियप्पदोसो अण्णतरं इंदियजायं वा। नि० चू० प्र० २५५-अ। अक्ष–चक्रनाभिक्षेप्यकाष्ठम्। जं० प्र० १७१।

अक्खए–अक्षयम्, अविनाशी। भग० ११९। सदाभावेन, अवयविद्रव्यापेक्षया अक्षतो वा परिपूर्णत्वात्। ठाणा० ३३३।

अक्खओदए–अक्षयोदकः, अक्षयसम्यग्ज्ञानोदकः। अक्षतोदयः, अक्षत उदयः प्रादुर्भावो वा। उत्त० ३५३।

अक्षणिक–(अक्खणिए), व्यग्रः। ओघ० १७५।

अक्खणिओ–अक्षणिकः, निर्व्यागारः। दश० चू० ५८।

अक्खति–आख्याति (गणि०)।

अक्खपडिय–अक्षपतितः, अक्षपातनिका। आव० ४५३।

अक्खपाडओ–अक्षपाटकः। जीवा० २५७। चतुरस्राकारः पाटकः। जीवा० २२८।

अक्खपाद–हेतुसत्थं। नि० चू० तृ० १० आ।

अक्खमाते–अक्षमाय–अयुक्तत्वाय। ठाणा० १४९। अनुचितत्वाय असमर्थत्वाय वा। ठाणा० २९२। असङ्गतत्वाय अक्षान्त्यै वा। ठाणा० ३५८।

अक्खयं–अक्षयम्, साद्यपर्यवसितस्थितिकत्वात् ततो नाशरहितः, महावीरः। भग० ७। विनाशकारणाभावात्। जीवा० २५६। अक्षयाः, अवयविद्रव्यस्यापरिहाणेः। जं० प्र० २५७। अपुनरावृत्तिकं। सम० १२०।

अनार्थ–साद्यपर्यवसितस्थितिकत्वात्, अक्षतं वा परिपूर्णत्वात्। सम० ५।

अक्खयणिहि–अक्षयनिधिः, देवभाण्डागारम्। विपा० ७७।

अक्खयणिही–अक्षयनिधिः। आव० १६०।

अक्खया–अक्षया, अक्षयत्वात्। जीवा० ९९। न विद्यते क्षयो यथोक्तस्वरूपाकारपरिभ्रंशो यस्याः सा। जं० प्र० २७।

अक्खयायारचरित्तो–अक्षताचारचारित्री, अक्षताचार एव चारित्रं तद्वान्। आव० ७६३।

अक्खरं–अक्षरम्, निरुक्तिविधिनार्थकारलोपादक्षरम्, अथवा क्षीयत इति क्षरं न क्षरमक्षरम्, अन्यान्यवर्णसंयोगेऽनन्तानर्थान् प्रतिपादयति, न च स्वयं क्षीयते येन तेनाक्षरमिति भावः। विशे० २५५। अविशुद्धनयाभिप्रायेण सर्वमपि ज्ञानमक्षरम्, तथा सर्वेऽपि भावा अक्षरास्तथापि रूढिवशाद्वर्ण एवेहाक्षरं भण्यते। विशे० २५४। 'अक्खरं सो य चेयणाभावो' अक्षरं, क्षर–सञ्चलने, न क्षरति न चलति–अनुपयोगेऽपि न प्रच्यवत इत्यक्षरम्। विशे० २५३। अक्षरम्। आव० ७९३।

अक्खर–अक्षरम्, न क्षरति न विनश्यति। विशे० ११९६। अक्षराणां 'स्र' शब्दो–पतापयोः अक्षराणां व्यञ्जनानां स्वरणेन सशब्दनेन स्वरा अकारादयः प्रोच्यन्ते,

अथवा अक्षरस्य चैतन्यस्य स्वरणात् संशब्दनात्स्वराः । विशे० २५५ । न क्षरतीत्यक्षरं, तच्च ज्ञानं चेतनेत्यर्थः । आव० २४ ।

अक्खरडियत्ति-अखंडितम् । ठाणा० ३८६ ।

अक्खरपुट्ठिया-लिपिविशेषः । प्रज्ञा० ५६ ।

अक्खरसंनिवाति-अक्षरसंनिपातः, अकारादिसंयोगाः । ठाणा० १७९ ।

अक्खरसमं-तत्र दीर्घे अक्षरे दीर्घः स्वरः क्रियते, ह्रस्वे ह्रस्वः, प्लुते प्लुतः, सानुनासिके सानुनासिकः तदक्षरसमम् । ठाणा० ३९६ ।

अक्खराणि-लिपिज्ञानम् । बृ० द्वि० १६३ अ ।

अक्खपाउ-अक्षपादः । विशे० ६४९ । विशे० ६४८ ।

अक्खसोय-अक्षश्रोतः, चक्रधुरः प्रवेशरन्ध्रम् । भग० ३०९ ।

अक्खा-अक्षाः, चंदनकाः । नि० चू० प्र० १०६ अ । अनुयोगे भङ्गचारणोपकरणम् । बृ० द्वि० २५३ आ । आख्या, शब्दप्रथा । प्रज्ञा० ६०० ।

अक्खाइं-अक्षाणि, इन्द्रियाणि । प्रज्ञा० ६०० ।

अक्खाइ-आख्याति प्रथमतो वाच्यमात्रकथनेन । जं० प्र० ५४० ।

अक्खाइउवक्खाइया-आख्यायिकोपाख्यायिका । सम० ११९ ।

अक्खाइयं-आख्यातिकम्, नामिकादिपंचसु पदेषु चतुर्थं । आव० ३७९ ।

अक्खाइयाणिस्सिया-आख्यायिकानिःसृता, यत्कथास-संभाव्याभिधानम् । प्रज्ञा० २५६ ।

अक्खाइया-आख्यायिका । सम० ११९ ।

अक्खाओ-आख्यायिका, कथानका । सम० ११९ ।

अक्खाग-म्लेच्छविशेषः । प्रज्ञा० ५५ ।

अक्खाडग-अक्षाटकः, मल्लयुद्धस्थानम् । पिंड० १२९ ।

अक्खाडगा-आखाटकाः, प्रेक्षाकारिजनासनभूताः । ठाणा० २३० ।

अक्खाडगे-आखाटकः, प्रेक्षास्थाने आसनविशेषलक्षणः । भग० २५१ ।

अक्खाडगो-चतुरस्रः । ठाणा० १४५ ।

अक्खाणं-आख्यानं, स्वाभिमुख्येन वाऽऽदरेण वा । विशे० ११९८ । समवसरणस्य । आव० २६८ ।

अक्खाणगं-आख्यानकम् । नि० चू० द्वि० ७१ अ ।

अक्खाणयं-आख्यानकं । नि० चू० प्र० ३४६ आ ।

अक्खातित-आख्यायिकानिश्रितं तत्प्रतिबद्धोऽसत्प्रलापः । ठाणा० ४८९ ।

अक्खायं-आख्यातं, सकलजन्तुभाषाभिव्याप्तया कथितम् । उत्त० ८० ।

अक्खाय-आख्यातम्, केवलज्ञानेनोपलभ्यावेदितम् । दश० १३६ ।

अक्खायगो-आख्यायकः, यः शुभाशुभमाख्याति सः । जीवा० २८१ ।

अक्खायपयं-आख्यातपदम्, साध्यक्रियापदम् । प्रश्न० ११७ ।

अक्खायसुयं-आख्यायश्रुतम्, आख्यानकप्रतिबद्धश्रुतम् । प्रश्न० १०८ ।

अक्खिसंति-आख्यास्यन्ति । नि० चू० प्र० ३५० आ ।

अक्खित्त-आक्षिप्तम्, आवर्जितम् । दश० ११४ ।

अक्खित्तनियंसणा-आक्षिप्तनिवसना, आकृष्टपरिधानवस्त्रा । प्रश्न० ५६ ।

अक्खित्ते-ठिता । नि० चू० प्र० १८६ अ ।

अक्खित्तो-आक्षिप्तः । आव० १७५ ।

अक्खिवणं-आक्षेपणम्, चित्तव्यग्रतापादनम् । प्रश्न० ४२ ।

अक्खीण-अक्षीण, अक्षीणायुष्कमप्रासुकम् । भग० ३७२ ।

अक्खीणझंझए-अक्षीणझञ्झः, अक्षीणकलहः । आव० ६६१ ।

अक्खीणमहाणसितो-अक्षीणमहानसिकः । उत्त० २३९ ।

अक्खीणमहाणसीयं-अक्षीणमहानसिकम् । आव० २६१ । ठाणा० २३२ ।

अक्खीणमहाणसी-अक्षीणमहानसी, अत्रुटितभिक्षालब्ध-भोजनवान् । औप० २८ ।

अक्खुडिय-अस्फालितः, स्खलितः । आव० ५५५ ।

अक्खुंदइ-चरित्ते मुंचति । नि० चू० द्वि० १२४ अ ।

अक्खुण्णइ-आक्षुण्णति, विध्यति । बृ० द्वि० ६६ अ ।

अक्खुन्ना-अमर्दिताः । बृ० द्वि० ७८ अ ।

अक्खे-अक्षः, शकटावयवविशेषः । भग० २७७ । प्रश्न० ९८ । आख्या-प्ररूपिते । जं० प्र० ६२ ।

अक्खेड—षण्णवतिरङ्गुलानि एवोऽक्ष । जं० प्र० ९४।
अक्खेव—आक्षेप, प्रश्न । भग० ११४। आव० ९७। उत्त० ५२४।
अक्खेवणि—आक्षेपणी, धर्मकथाया प्रथमो भेद, आक्षिप्यन्ते मोहात्तत्त्वं प्रत्यनया भव्यप्राणिन इति। दश० ११०। धर्मकथाभेद । आचा० १४५।
अक्खेवणी—आक्षिप्यते–मोहात् तत्त्वं प्रत्याकृष्यते श्रोताऽनयेत्याक्षेपणी। ठाणा० २१०। आक्षिप्यते–मोहात्तत्त्वं प्रत्याकृष्यते श्रोता यकाभिरिति। औप० ४६।
अक्खेवी—आक्षेपी, आक्षिपति वशीकरणादिना य स ततो मुष्णाति स। प्रश्न० ४६।
अक्खेवो—आक्षेप, आक्षेपणम्, आशङ्का। आव० ३७७। पूर्वपक्ष। वृ० तृ० १२५ अ। परद्रव्यस्य, अधर्मद्वारस्यैकोनविंशतितमं नाम। प्रश्न० ४३।
अक्खो—अक्ष, द्यूतपाशक। आव० ५०२। फलविशेष, अनुत्त० ६।
अक्खोडगा क्रियाविशेष। नि० चू० प्र० १८२ अ।
अक्खोडभंगपरिहरणा—आस्फोटकभङ्गपरिहरणा, आस्फोटकानां यो भङ्गस्तस्य प्रतिलेखनादिविधिविराधनापरिहरणा। आव० ५५१।
अक्खोडयं—अक्षोटकम्, अक्षोटवृक्षफलम्। प्रज्ञा० ३६४।
अक्खोभे—अक्षोभ, अन्तकृद्दशानां प्रथमवर्गस्याष्टमाध्ययनम्। अन्त० १। अन्तकृद्दशानां द्वितीयवर्गस्य प्रथमाध्ययनम्। अन्त० ३।
अक्खोलं—फलविशेष। प्रज्ञा० ३२८।
अक्खोवगं—चक्षोंजनं। गणि०।
अक्खोवंजण—अक्षोपाञ्जनम्, शकटधूर्म्रक्षणम्। भग० २९४।
अक्रियावादिन—क्रिया–अस्तीतिरूपा सकलपदार्थसार्थव्यापिनी सैवायथावस्तुविषयतया कुत्सिता, अक्रिया तथ पुरस्सार्थत्वात्तामक्रियां वदन्तीत्येवंशीला अक्रियावादिन, यथावस्थितं हि वस्त्वनेकान्तात्मकं तन्नास्त्येकान्तात्मकमेव चास्तीति प्रतिपत्तिमन्त इत्यर्थ। ठाणा० ४२५।
(अकिरियावाई)—नियतकृष्णपाक्षिका। दशाश्रु० १६।
अक्ष.—बिभीतक। प्रज्ञा० ३१।
अक्षर—घोलना स्वरविशेष। जीवा० १९५।
अक्षरकुटी—अक्षरच्छेदेन। विशे० ८३०।
अक्षरकोविदपरिषद्—(विद्वत्परिषद्)। आचा० १४६।
अक्षरश्रुतम्—शनं इन्द्रियमनोनिमित्तं श्रुतग्रन्थानुसारि तदावरणक्षयोपशमो वा। आव० २४।
अक्षि—नेत्रम्। आचा० ३७।
अक्षीणमहानसीलब्धि—येनाऽऽनीतं भैक्षं बहुभिरप्यन्यैर्भुक्तं न क्षीयते किन्तु स्वयमेव भुक्तं निष्ठां याति। विशे० ३८५।
अक्षोपाङ्गन्याय—(अक्षउवंजण)—चक्रोक्षणं। दश० १८०।
अखंड—अखण्ड, सम्पूर्णावयव। आव० ३३९। अखण्डम्-अस्फुटितम्। दश० १६५।
अखमे—अक्षमा, परकृतापराधस्यासहनं। भग० ५७२।
अखिलं—इन्द्रकीलादियुतं ग्रामादि। बृ० तृ० ३६ अ।
अखुणणा—असर्दिता। नि० चू० प्र० ११५ अ।
अखेत्तं—अ० छिण्मडंब। नि० चू० प्र० २४१ आ। मत्तिलपृथ्व्यादिमदस्थण्डिलम्। बृ० द्वि० १४० आ।
अगंथिमा—कयलआ मरहट्ठविसये फलाण कयलकपमाणाओ पेण्डीओ एक्कंमि डाले बहुकाओ भवन्ति ताणि फलाणि गंठासकीकयाणि। नि० चू० तृ० ३९ अ।
अगंधण—अगन्धन, मानी सर्प। दश० ३७।
अगंधणा—अगन्धना, सर्पजातिविशेष। उत्त० ४९५।
अगंधि—दुर्गन्धि। बृ० तृ० ९६ अ।
अगइचरमे—अगतिचरम, न गतिचरम। प्रज्ञा० २४५।
अगड—कूप। बृ० प्र० १०९ आ। अवट सत्रा। आव० ६९३। आव० ७०४। कूप। भग० २३८। जं० प्र० १२३।
अगडदत्तो—अगडदत्त, अमोघरथपुत्र। उत्त० २१३। रक्षकविशेष। व्य० द्वि० १७० आ।
अगडमहेसु—कूपमहेषु। आचा० ३२८।
अगडाति—अवट–कूपा। ठाणा० ८६।
अगडेसु—अवटेषु, कूपेषु। प्रज्ञा० ७२।
अगडो—कूप। नि० चू० प्र० ४३ अ। अवट, कूप। प्रज्ञा० २६७।
अगणि—अग्नि, इन्धनस्य प्लोषक्रियाविशिष्टरूपस्तथा विद्युदुल्कारनिघर्षसमुत्थित सूर्यमणिसंसृतादिरूपश्च। आचा० ४९। आव० ६२१। अग्नि पिण्डानुगत। दश० २२८। दश० १५४। अग्निभवान्–प्रदीपनभयात्। ओघ० ११८।

अगणिज्झामिय-अग्निध्यामितम्, वह्निना ध्यामितं, श्यामीकृतम्। भग० २९३।

अगणि-झूसिए-सेवितः, क्षपितः। भग० ६८३।

अगणिज्झूसिय-अग्निना शोषितं, पूर्वस्वभावक्षपणात्, अग्निना सेवितं वा। भग० २९३।

अगणिपरिणामिय-अग्निपरिणामितम्, सञ्जाताग्निपरिणामम्। भग० २९३।

अगणी-अग्निः। ओप० १५६। चतुर्दशशतके पञ्चमोद्देशकः। भग० ६३०।

अगतं-नकुलाजादि। नि० चू० प्र० ७६ अ।

अगतो-अगदः, औषधिः। आव० ८२५।

अगत्थिओ-वृक्षविशेषः। अनुत्त० ५।

अगत्थिगुम्मा-अगस्त्यगुल्माः। जं० प्र० ९८।

अगत्थी-अगस्तिः, ग्रहविशेष.। जं० प्र० ५३५। ठाणा० ७९।

अगदो-अणेगदव्वेहिं। नि० चू० द्वि० १८ आ।

अगमा-वृक्षाः। बृ० द्वि० १८३ आ। नि० चू० प्र० १५२ आ, १८३ अ।

अगमेत्ता-ज्ञात्वा, आज्ञापयेदात्मानमनासेवनयेति। आचा० २१९।

अगम्मगामी-अगम्यगामी, भगिन्याद्यभिगन्ता। प्रश्न० ३६।

अगर-अगुरुः-दारुविशेषः। प्रश्न० १६१।

अगरला-सुविभक्ताक्षरता। औप० ७८।

अगरिहिअं-अगर्हणीयम्, सामायिकनवमपर्यायः। आव० ४७४।

अगलदत्तो-अगडदत्तः,। उत्त० २१५।

अगहणे-अग्रहणं-अकरणं। ओघ० १४९।

अगा-वृक्षाः। नि० चू० तृ० १४० अ।

अगामितं-अगामिकं, अकामिक-अनभिलषणीयं। ठाणा० ३१४।

अगामियं-अगामिकां, अकामिकां वा-अनभिलापविषयभूताम्। भग० ६७२।

अगारं-अगैः कृतं गृहम्। नि० चू० तृ० १४० अ। गेहम्। प्रश्न० ८। गृहम्। आव० ३२९। अगारः, गृहस्थः। आव० ३२९।

अगार-अगारम्, गृहम्। दश० ६२।

अगारट्ठिय-अगारस्थितभाषा-गृहस्थभाषा। व्य० प्र० ५४ आ।

अगारधम्मं-अगारधर्मम्, गृहाचारं गार्हस्थ्यम्। उत्त० ५७८।

अगारबंधणं-गृहपाशं पुत्रकलत्रधनधान्यादिरूपम्। आचा० ४२९।

अगारत्थेभ्यः-(गारत्थेहिं), अनुमतिवर्जसर्वोत्तमदेशविरतिप्राप्तेभ्यः। उत्त० २५०।

अगार-अगाराः, गृहिणः। ठाणा० ५३।

अगाराओ-गृहवासात्। जं० प्र० १४५।

अगारिसामाइयङ्गाई-अगारिणो-गृहिणः सामायिकं-सम्यक्त्वश्रुतदेशविरतिरूपं तस्याङ्गानि-नि शङ्कताकालाध्ययनाणुव्रतादिरूपाणि अगारिसामायिकाङ्गानि। उत्त० २५१।

अगारी-अगारी, क्षत्रियादिक। सूत्र० १४३। गृही, असंयतः। ठाणा० १८१। जं० प्र० १४५।

अगारो-अगारः, गृहस्थस्तस्येदमगारिकं, देशचारित्रसामायिकं देशविरतिसामायिकम्। विशे० १०६३।

अगालिणो-अगारिणः। बृ० द्वि० २८२ अ।

अगाहा-अगाधा, अपरिमितजला। आव० ८१९। प्रायोगम्भीरम्। दश० २२०।

अगिणिहयव्वं-अग्रहीतव्यम्, अनुपादेयं, हेयम्। दश० ८०।

अगिला-अग्लानिः। नि० चू० प्र० १७ आ। अग्लानः-उचितकर्तव्यसहिष्णु.। आचा० २८१।

अगिलाए-अग्लान्या, अखिन्नतया बहुमानेनेत्यर्थः। ठाणा० २९९। विशे० ८७५।

अगिलायउ-अग्लान्येव, शरीरश्रममविचिन्त्यैव। उत्त० ५३६।

अगीयत्थं-अपरीणामग, अतिपरिणामगाय। नि० चू० प्र० ४५ आ।

अगीयत्थत्त-अगीतार्थत्वम्। आव० ५२।

अगीयत्थो-जेण आवस्सगादीयाण अत्थो ण सुतो। नि० चू० तृ० २५ अ।

अगुण-अगुणः, अविद्यमानगुणः। दश० २६३।

अगुणगुणे-वक्ता। आचा० ८६।

अगुणरिणं-अगुणा एव अणंतगुणाणं अणंति वा रिणंति वा एगट्ठा तं च। दश० चू० ८९।

अगुणा–अगुणाः, मिथ्यात्वादयो दोषाः। उत्त० ४३१।

अगुत्ती–अगुप्तिः, इच्छाया अगोपनम्। परिग्रहस्य त्रयोविंशतितमं नाम। प्रश्न० ९२।

अगुरु–अगुरुः, सुगन्धिद्रव्यः। आव० १५१। काष्ठविशेषः। जीवा० १३६।

अगुरुलहु–अगुरुकलघुकम्, अत्यन्तसूक्ष्मं भाषामनःकर्मद्रव्यादि। ठाणा० ४७५।

अगुरुलघु–यदुदयात् प्राणिनां शरीराणि न गुरूणि नापि लघूनि तत्। प्रज्ञा० ४७३। सूक्ष्मपुद्गलद्रव्याणि। जं० प्र० १२०।

अगुरुलहुफासपरिणामे–स्पर्शविशेषः। सम० ४१।

अगेहि–अगृद्धिः–भोजनादिषु परिभोगकाले अनासक्तिः। भग० ९७।

अगो–अगः, विपाककालेऽपि जीवविपाकितया शरीरपुद्गलादिषु बहिःप्रवृत्तिरहितः, अनन्तानुबन्ध्यादिः। उत्त ०१९।

अगाधे–(गाधे), पदप्रचारालङ्घनीये। विशे० ५७६।

अग्गं–अग्रम्, अपरिभुक्तम्। जीवा० २५४। अग्र्यम्, प्रधानम्। प्रश्न० १३६। अन्तः। भग० ३५। मूर्धा। प्रज्ञा० १०८। परिणामः। सूर्य० २८०। आलम्बनम्, आव०। २६५। परिमाणम्। भग० ३५। संयमतपसी मोक्षो वा। आचा० १६०। भवोपग्राहिकर्मचतुष्टयं। आचा० १६०। प्रमाणम्। ठाणा० ४६२। कोटिः। उत्त० २८३। अग्रं, वरं प्रधानं अहवा जं पढमम्। नि० चू० प्र० १४९ अ।

अग्ग–निर्वाणस्थानम्। आव० १४८। द्रव्यावगाहनाद्येषु। आचा० ३१८।

अग्गकूरमंडी–अग्रकूरमण्डी, ओदनस्योपरिभागः। आव० ५७५।

अग्गकोडीणं–अग्रकोटयः, प्रकृष्टा विभागाः। जं० प्र० ९५।

अग्गजायाणि–अग्रजातानि, वनस्पतिविशेषः। आचा० ३४१।

अग्गजिब्भा–अग्रजिह्वा, जिह्वाग्रं। ठाणा० ३६५।

अग्गतावसगोत्ते–अग्रतापसगोत्रम्। सूर्य० १५०।

अग्गपलंबं–आम्रातकफलं। बृ० प्र० १४३ आ। तलादिप्रलंबा। नि० चू० द्वि० १२४ आ।

अग्गपिंडो–जइ दिणे २ दाहिमि, अग्गपिंडो अग्गकूरो। नि० चू० द्वि० ९० आ। अग्रपिण्डम्-निष्पन्नस्य शाल्योदनादेराहारस्य देवतार्थं स्तोकस्तोकोद्धारः। आचा० ३३६। काकपिण्ड्यां। आचा० ३४०। शाल्योदनादेः प्रथममुद्धृत्य भिक्षार्थं व्यवस्थाप्यते। आचा० ३२६। अग्रभूते परिवेषणे आदावेव यो गृह्यते। ठाणा० ५१५।

अग्गबीए–अग्रबीजाः, अग्रे बीजं येषामुत्पद्यते ते तलताली–सहकारादयः शाल्यादयो वा, अग्राण्येवोत्पत्तौ कारणतां प्रतिपद्यन्ते येषां कोरण्टादीनां ते वा। सूत्र० ३५०।

अग्गबीय–अग्रबीजाः, कोरण्टकादयः। दश० १३९। आचा० ५८। व्रीह्यादयः। ठाणा १८६। जपाकुसुमादि। आचा० ३४९।

अग्गभावे–अग्रभावम्, धनिष्ठा गोत्रम्। जं० प्र० ५००।

अग्गमहिसी–अग्रमहिषी, पट्टराज्ञी। जीवा० १६२। ठाणा० ११७।

अग्गरसो–अग्र्यः रसश्च, प्रधानो मधुरादिकश्च, अग्र्यो रसः शृङ्गारादिकः। उत्त० ४०५।

अग्गल–अर्गलम्, गोपुरकपाटादिसम्बन्धि। दश० १८४।

अग्गल–अर्गलः, पडशीतितमग्रहनाम। जं० प्र० ५३५।

अग्गलपासाया–अर्गलाप्रासादाः, यत्रार्गला नियम्यन्ते। जं० प्र० ४८। जीवा० २०४।

अग्गला–गोवाडादीदारेसु भवति। दश० चू० ८५। अर्गला, प्रतीता। जीवा० २०४। जीवा० ३५९। अधिकं। उत्त० ७, ६६०।

अग्गलापासाय–अर्गलाप्रासादः, प्रासादे यत्रार्गला प्रविशति सः। जीवा० ३५९।

अग्गवपूरओ–परिधानविशेषः। बृ० तृ० १०२ अ।

अग्गविडवं–अग्रविटपम्, शाखामध्यभागाग्रं, विस्ताराग्रं वा। प्रश्न० ९२।

अग्रशिरः–(अग्गसिरा), उष्णीषलक्षणम्। जं० प्र० ११३।

अग्गसिंगं–अग्रशृङ्गम्। आव० १७४।

अग्गहणं–अनादरः। ओघ० ९४। बृ० प्र० २४५ अ।

अग्गहत्था–अग्रहस्ता, बाहोरग्रभूताः हस्ताः। अनुत्त० ६। अग्रहस्तौ, भुजौ। प्रज्ञा० ९१।

अग्गहत्थो–अग्रहस्तः,बाह्वग्रभागवर्ती हस्तः। जीवा० २७५।

अग्गाइं–अग्र्याणि, मस्तकानि। जं० प्र० २१८।

अग्गासणे कूरं-अग्रासनम्, प्रतिग्रहं सदक्षिणं भोजनम्। आव० ६७९।

अग्गाहारो-अग्रासनम्। आव० ३००।

अग्गितेण-अग्न्यन्तेन, अग्निमार्गेण। आव० ७१।

अग्गि-तीर्थकरविशेषदीक्षिका। सम० १५१।

अग्गिउत्तं-ऐरवतावसर्पिणीतीर्थकरः। सम० १५३।

अग्गिओ-अग्निकः, उत्सन्नवंशजो दारकः। आव० ३९१।

अग्गिकुमारा-अग्निकुमाराः, सोमस्याज्ञोपपातवचननिर्देशवर्तिनो देवाः। भग० १९५। भवनपतिभेदविशेषः। प्रज्ञा० ६९।

अग्गिकुमारीओ-अग्निकुमार्यः, सोमस्याज्ञोपपातवचननिर्देशवर्तिन्यो देव्यः। भग० १९५।

अग्गिघरं-अग्निगृहम्। आव० २९९।

अग्गिच्चा-कौशिकगोत्रभेदः। ठाणा० ३९०। सुप्रतिष्ठामविमानवासी अष्टमो लोकान्तिकदेवः। भग० २७१। ठाणा० ४३२।

अग्गिच्चाभे-कृष्णराज्यवकाशान्तरे लोकान्तिकविमानम्। ठाणा० ४३२। सम० १४।

अग्गिच्चो-अग्निः, मरुत्। आव० १३५।

अग्गिज्जोओ-अग्निद्योतः, पुष्पमित्रजीवः। आव० १७१।

अग्गितरोगी-अग्निकरोगी। आव० २०४।

अग्गिभीरु-अग्निभीरुः, प्रद्योतस्य रथः, द्वितीयं रत्नम्। आव० ६७३।

अग्गिभूई-अग्निभूतिः, अग्निद्योतजीवः। आव० १७२। द्वितीयगणधरः। आव० २४०। श्रीवीरस्य द्वितीयगणधरः। भग० १५३। सम ८४।

अग्गिमाणव-अग्निमानवः, उत्तरनिकाये पञ्चम इन्द्रः। भग० १५७।

अग्गिमाणवे-अग्निमाणवः, उत्तरदिग्वर्तिनामग्निकुमाराणामधिपतिः। प्रज्ञा० ९४। ठाणा० ८४। जीवा० १७०।

अग्गिमेह-अग्निमेघाः, अग्निवद्दाहकारिजला मेघाः। भग० ३०६।

अग्गिमो-प्रथमः। ओघ० ३३।

अग्गिय-व्याधिविशेषः। नि० चू० द्वि० ६० अ।

अग्गियय-अग्निः, तितिक्षोदाहरणे प्रथमो दासचेटः। आव० ७०२। अग्निकः, भस्मकाभिधानो वायुविकारः। विपा० ४२।

अग्गियओ-अग्निः, दासचेटः। आव० ३४३।

अग्गियतो-अग्निकः, इन्द्रदत्तराजस्य दासचेटः। उत्त० १४८।

अग्गिल्लए-ग्रहविशेषः। ठाणा० ७९।

अग्गिवेससगोत्ते-कृत्तिकानक्षत्रनाम। सूर्य० १५०।

अग्गिवेसाणं-अग्निवेशस्यापत्यं वृद्धं अग्निवेश्यो 'गर्गादिभ्य'-इति यञ् प्रत्ययः तस्याप्यपत्यमाग्निवेश्यायनः। नंदी० ४८।

अग्गिवेसायणे-गोशालनिशाचरः। भग० ६५९।

अग्गिवेसे-अग्निवेश्यः, शास्त्रीयचतुर्दशदिवसनाम। सूर्य० १४७। द्वाविंशतिमुहूर्तनाम। सूर्य० १४६। जं० प्र० ४९१। अग्निवेश्म-शास्त्रीयचतुर्दशदिवसनाम। जं० प्र० ४९०। अग्निवेश्यं-कृत्तिकागोत्रम्। जं० प्र० ५००।

अग्गिसिहा-अग्निशिखम्, वनविशेषः। दश० १०३।

अग्गिसिहे-अग्निसिंहः, दत्तवासुदेवपिता। आव० १६३।

अग्गिसिहो-विष्णुविशेषपिता। सम० १५३।

अग्गिसीहे-अग्निसिंहः, दक्षिणदिग्वर्तिनामग्निकुमाराणामधिपतिः। जीवा० १७०। ठाणा० ८४। प्रज्ञा० ९४। पञ्चमो दक्षिणनिकायेन्द्रः। भग० १५७।

अग्गिसेणं-ऐरवतावसर्पिणीतीर्थकरः। सम० १५३।

अग्गिहोत्त-अग्निहोत्रः, अग्निकारिका। उत्त० ५२५।

अग्गिहोत्तसाला-अग्निहोत्रशाला। आव० २२५।

अग्गी-अग्निः, ग्रहविशेषः। जं० प्र० ५३५। वह्निः। आचा० ३३। आव० ३७३।

अग्गीसेणं-ऐरवतावसर्पिणीतीर्थकरः। सम० १५३।

अग्गुज्जाणं-अग्रोद्यानम्, अग्न्युद्यानम्। आव० १९०।

अग्गो-दसिकापर्यन्ते। ओघ० २१४।

अग्गेई-आग्नेयी, पूर्वदक्षिणमध्यवर्तिदिक्। आव० २१५।

अग्गेज्ज-आग्नेयः, मण्डलकोणः। सूर्य० २२।

अग्गेणियं-द्वितीयपूर्वम्। सम० २६।

अग्गेणीयं-अग्रायणीयम्, द्वितीयपूर्वनाम। ठाणा० १९९।

अग्गेया-वत्सगोत्रान्तर्गतं गोत्रम्। ठाणा० ३९०।

अग्गेयी-अग्निकोणः। भग० ४९३। ठाणा० १३३।

अग्गोवरयंकरेति। नि० चू० द्वि० ३५ अ।

अग्गोदयं-अग्रोदकम्, देशोनयोजनार्धजलादुपरि वर्द्धमान जलम्। जीवा० ३०९। षोडशसहस्रोच्छ्रितायां वेलायां यदुपरि गव्यूतद्वयमाने वृद्धिहानिस्वभावं तदग्रोदकम्। सम० ७५।
अग्घं-अर्घम्। आव० ३००। महार्घ्यम्। आव० ८२७। आव० २५५। अर्घ्यम्-मूल्यम्। आव० ८२६।
अग्घंति-अर्घन्ति, महार्घन्ति। आव० ८२९।
अग्घविए-अर्घितम्, कृतमूल्यम्। दश० ६१।
अग्घाडग-गुच्छाविशेष। प्रज्ञा० ३२।
अग्घाया-आघ्राता, आहूता। विशे० ९६०।
अग्घियं-बहुमोल्ल। नि० चू० प्र० १३९ अ।
अग्घेइ-अर्हति। उत्त० १४२।
अग्घेऊणं-अर्घित्वा। आव० २६१।
अग्घो-अर्घ, मत्स्यकच्छपविशेष। जीवा० १३१।
अग्गिमानव-भवनपतीन्द्रविशेष। ठाणा० २०५।
अग्गिशर्मा-यो मिथ्यादृष्टपदिष्टतपसाऽपि अनन्त काल संसारे पर्यटितः। सूत्र० ५७।
अग्गिशिख-भवनपतीन्द्रविशेष। ठाणा० २०५।
अग्निष्टोम-यागविशेष। दश० २७६।
अग्रश्रुतस्कन्ध.-द्वितीयश्रुतस्कन्ध। आचा० ३१८।
अग्राह्य-अप्रमेय। जीवा० १८७।
अघा गर्ता ह्रदो। बृ० प्र० १०९ आ।
अघोर-मन्त्रविशेष। उत्त० २६७।
अङ्कुसल-अङ्कुशयुक्त। (मर०)
अङ्गमंगो-अंगोपांगानि। (मर०)
अचंड-अचण्ड, सौम्य। उत्त० ४७।
अचंडो-अचण्ड, कारणविकलकोपविकल। प्रश्न० ७४।
अचक्किय-अचकिता, अत्रासिता। उत्त० ३५३।
अचक्खुदंसण अचक्षुर्दर्शनम्, चक्षुर्वर्जशेषेन्द्रियमनोभि दर्शनम्। जीवा० १८।
अचक्खुसे-अचाक्षुषम्, चक्षुरिन्द्रियाग्राह्यम्। दश० २०२।
अचक्खुस्सं-अनिष्टम्। बृ० तृ० ४१ अ।
अचक्षुषा-चक्षुर्वर्जेन्द्रियचतुष्टयेन मनसा। ठाणा० ४४८।
अचरम-अचरम, यस्य चरमो भवो न भविष्यति सो-ऽचरम। भग० २५९।
अचरमसमयनियंठो-अचरमसमयनिर्ग्रन्थ, अचरमा-आदिमध्यास्तेषु यो वर्तमान स। उत्त० २५७।
अचरिमं-अचरमम्। प्रज्ञा० २३४। अप्रान्त्य, मध्यवर्ति। प्रज्ञा० २२८।
अचरिमंतपएस-अचरमान्तप्रदेश। भग० १६६।
अचरिमो-अचरम, अभव्य सिद्धश्च। प्रज्ञा० १४३। जीवा० ४४४।
अचल-(अयल्ले) कलाशिक्षायामुदाहरणगत पुरुष.। दश० १०९।
अचलेन्द्र -मेरु। आव० ४७।
अचले-अचल, अन्तकृद्दशानां द्वितीयवर्गस्य पंचमाध्ययनम्। अन्त० ३।
अचवचवं-चवचवेतिशब्दरहितम्। प्रश्न० ११२। अचव-चवम्। अनुकरणशब्दोऽयम्। भग० २९४। चर्व्यमिव चर्वयन् न चवचवावेइ। ओघ० १८७।
अचवलं-अचपलम्, मानसचापल्यरहितम्। भग० १४०।
अचवलो-अचपल, कायिकादिचापल्यरहित। प्रश्न० ७४। माऽऽरब्धकार्यं प्रत्यस्थिर, अथवा अचपलो-गतिस्थान-भाषाभावभेदत चतुर्धा। उत्त० ३४६।
अचियत्तं-अप्रीतिकरम्। दश० २२१।
अचियत्तकुलं-अप्रीतिकुलम्, यत्र प्रविशद्भि साधुभिरप्रीतिरुत्पद्यते तत्कुलम्। दश० १६६।
अचियत्ति-य साधुभिरागच्छद्भिर्दु तेनास्ते। ओघ० ९३।
अचिचित्तु-आचित्य, आत्मप्रदेशे सहोपचित्य। प्रश्न० ९८।
अचित्तं-आयु क्षयेणाचित्त न परसयतार्थम्। बृ० द्वि० १०६ अ। अचित्तम्, दग्धदेशादि। दश० १७८।
अचित्तद्रव्यपरिधून -(अचित्तद्रव्यपरिजुण्ण), जीर्णवस्त्रादि। आचा० ३५।
अचित्त-अचित्तमहास्कन्ध। आव० ३५।
अचित्तस्कन्ध -द्विप्रदेशिकादिस्कंध। विशे० ४२४।
अचियत्तं-अचियत्त, स्वचेतसि करोति वाचा न किमपि ब्रूते एष देशीभाषया। बृ० प्र० २४६ अ।
अचियत्ते-अदानशील। ओघ० १९६। अप्रतीति। ओघ० १६९। अप्रीतिकम्। आव० १९१। आव० ११८।
अचियत्ता-न रोचते। ओघ० १९४।

अचियत्ते-अचियत्तः, अनभिमतः। सूत्र० ३३७। अप्रीतिकरः। उत्त० ३४६। अप्रीतिकानि-नास्ति प्रीतिः साधुषु गृहमुपगतेषु येषां तानि। बृ० प्र० २३५ अ।

अचियत्तो-साधुन् प्रत्यप्रीतिमान्। प्रश्न० १२४। अप्रतीत्युत्पादकः। प्रश्न० ६४।

अचियत्तोग्गहो-अप्रीतिकावग्रहः। आव० ३०४। आव० १८९।

अचिरं-स्थानम्, स्थण्डिलम्। आचा० २९४।

अचिरकालकयं-अचिरकालकृतम्, द्विमासिके ऋतौ यदग्न्यादिना प्रासुकीकृतम्। ओघ० १२३।

अचिरवत्तवीवाहे-अचिरवृत्तवीवाहः। सूर्य० २९२।

अचुल्ला-चुल्लीए समीवे। नि० चू० प्र० ३२८ आ।

अचेल-अचेल., अल्पचेलो जिनकल्पिको वा। आचा० २४२। अपगतचेलोऽल्पचेलो वा अचलनस्वरूपो वा। आचा० २४५। यः साधुर्नास्य चेलं-वस्त्रमस्तीति अचेलः, अल्पचेल इत्यर्थः। आचा० २४४। नास्य चेलं-वस्त्रमित्यचेलः। आचा० २४४। षष्ठः परीषहः। आव० ६५६।

अचेलकः-अवमानि, असाराणि लघुत्वजीर्णत्वादिना चेलानि-वस्त्राण्यस्येति। उत्त० ३५९। अविद्यमानचेलकः कुत्सितचेलको वा। उत्त० ५००।

अचोक्खं-अचोक्षम्, अपवित्रम्। जीवा० २८१।

अचोक्षाः-पिशाचभेदविशेषः। प्रज्ञा० ७०।

अच्चंतथावरा-अत्यन्तस्थावरा, अनादिवनस्पतिकायादुद्वृत्त्य। आव० ४६५।

अच्चंतिओ-आत्यन्तिकः, सर्वकालभावी। सूत्र० ३९५।

अच्चंतिया-तेन सह तत्रैवाशितुकामा। बृ० तृ० १३२ अ।

अच्चइओ-व्यथितः, पीडितः। दश० ४४।

अच्चणिज्जं-अर्चनीयम्। सूर्य० २९७। चन्दनगन्धादिभिः। औप० ५।

अच्चणिज्जाओ-चन्दनादिना। भग० ५०५।

अच्चणिय-अर्चनिका। आव० ३५०।

अच्चणियवावडा-अर्चनिकाव्यापृता। आव० ८६३।

अच्चंतो-विसुद्धोवि जं पुट्टं ण संभरति संभरतो वा जस्सरथं ण वि कुज्जति सो अच्चंतो। नि० चू० द्वि० ८६ अ। अन्तमतिक्रान्तोऽत्यन्तः। उत्त० ६२१। अनादिः। उत्त० ६२१। अतिक्रान्तपर्यन्तम्। उत्त० ६३९।

अच्चल्लीणो-आसण्णं। नि० चू० प्र० १७५ अ।

अच्चल्लुद्दो-अतीव प्रज्वलिते। नि० चू० प्र० १७५ अ।

अच्चसणे-अत्यशनः, शास्त्रीयद्वादशदिवसनाम। जं० प्र० ४९०।

अच्चा-प्रतिमा। बृ० तृ० २६आ। नि० चू० प्र० ११७ आ। अर्चा, मनुष्यतनुर्भाविनी। औप० ८१। तनुः, शरीरं, पद्मादिका लेश्या वा। सूत्र० २१८। लेश्या चित्तवृत्तिः। सूत्र० २३४।

अच्चासणयाए-अत्यन्तं सततमासनं-उपवेशनं यस्य सोऽत्यासनस्तद्भावस्तत्ता तया। ठाणा० ४४६।

अच्चासणे-अत्यशनः, शास्त्रीयद्वादशदिवसनाम। सूर्य० १४७।

अच्चासाइत्तए-अत्याशातयितुम्, छायया भ्रंशयितुम्। भग० १७५।

अच्चासायणा-अत्याशातना, किमेभिः कलहशालैरिति। आव० ५८०।

अच्चि-ब्रह्मलोककल्पे विमानविशेषः। सम० १४।

अच्चि-अर्चिः, छिन्नज्वालम्। दश० २२८। मूलाग्निविच्छिन्ना ज्वाला। दश० १५४। अनलविच्छिन्ना ज्वाला। जीवा० १०७।

अच्चिकंतं-अर्चि.कान्तम्, विमानविशेषः। जीवा० १३८।

अच्चिकूडं-अर्चि.कूटम्, विमानविशेषः। जीवा० १३८।

अच्चिज्झयं-अर्चिर्ध्वजम्, विमानविशेषः। जीवा० १३८।

अच्चिप्पभं-अर्चिःप्रभम्, विमानविशेष.। जीवा० १३८।

अच्चिमालि-कृष्णराज्यवकाशान्तरे लोकान्तिकविमानः। सम० १४। भग० २७१।

अच्चिमाली-अर्चिर्मालिः, अर्चिषां माला। प्रज्ञा० १०१। अर्चिर्माली, चन्द्रस्य तृतीयाग्रमहिषी। जं० प्र० ५३२। शक्राग्रमहिषीराजधानी। ठाणा० २३१। सूर्यस्य तृतीयाग्रमहिषी। ठाणा० २०४, भग० ५०५। चन्द्रस्याग्रमहिषी। ठाणा० २०४, भग० ५०५। दक्षिणपूर्वरतिकरपर्वतस्यापरस्यां शक्रदेवेन्द्रस्य प्राच्या अग्रमहिष्या राजधानी। जीवा० ३६५। अर्चिषि-किरणास्तेषां माला, साऽस्यास्तीति किरणमालापरिगत इति। जीवा० ३८०। चन्द्रस्य सूर्यस्य च ज्योतिरिन्द्रस्य तृतीयाग्रमहिषी। जीवा० ३८४। कृष्णराज्यवकाशान्तरे लोकान्तिकविमानः। ठाणा० ४३२। द्वितीयं लोकान्तिकविमानम्। भग० २७१।

अच्चिरावत्तं-अर्चिरावर्त्तम्, विमानविशेष । जीवा० १३८ ।

अच्चिरुत्तरावडिंसए-अर्चिरुत्तरावतंसकम्, विमानविशेष । जीवा० १३८ ।

अच्चिलेस्सं-अर्चिर्लेश्यम्, विमानविशेषः । जीवा० १३८ ।

अच्चिवण्णं-अर्चिर्वर्णम्, विमानविशेष । जीवा० १३८ ।

अच्चिसिंगारं-अर्चि:शृङ्गारम्, विमानविशेष । जीवा० १३८ ।

अच्चिसिट्ठं-अर्चि:सृ(शि)ष्टम्, विमानविशेष । जीवा० १३८ ।

अच्ची-अर्चि, अनलाप्रतिबद्धा ज्वाला । प्रज्ञा० २९, जीवा० २९ । प्रथम लोकान्तिकविमानम् । भग० २७१ । कृष्णराज्यवकाशान्तरे लोकान्तिकविमान । ठाणा० ४३२ । अर्चि, शरीरस्थरत्नादितेजोज्वाला । औप० ५०, भग० १२२ । विमानविशेष । जीवा० १३८ । स्वशरीरगतरत्नादितेजोज्वाला । जीवा० १६२ । अर्चि, लेश्या । सूत्र० १९० । दाह्यप्रतिबद्धो ज्वालाविशेषोऽर्चि । आचा० ४९ ।

अच्चीकरणं-गुणवण्णण । नि० चू० प्र० १९५ आ ।

अच्चीसहस्समालिणीयं - चन्द्रप्रभाशिबिकाविशेषणम् । आचा० ४२३ ।

अच्चुओ-अच्युत, देवलोकविशेष । आव० ११७ ।

अच्चुत्तवडिंसगं-अच्युतकल्पगतविमानविशेष । सम० ४१ ।

अच्चुदयं-अत्युदकम्, महान् वर्ष । ओघ० ३१ ।

अच्चुयवडिंसए-अच्युतावतंसक, अच्युतदेवलोकस्य मध्येऽवतंसक । जीवा० ३९३ ।

अच्चुया-अच्युता, कल्पोपपन्नवैमानिकभेदविशेषा । प्रज्ञा० ६९ । अच्युत -आयात । ओघ० ५० ।

अच्चुव्वाया-परिश्रान्ता । बृ० द्वि० २११ आ ।

अच्चेइ-अत्येति, अतिक्रामति । आचा० १४४ ।

अच्छं-ऋक्षम् । आचा० ३३८ । अतिस्वच्छम् । जीवा० १६० । स्फटिकवच्छुद्धम् । जीवा० १२३ । आकाशस्फटिकवदतिस्वच्छम् । प्रज्ञा० ८७ ।

अच्छंद-अच्छन्द, अस्ववश । दश० ९१ ।

अच्छंदो-यथाछन्द, पाषण्डस्थ । आव० १९३ ।

अच्छ-ऋक्ष, प्रसिद्ध । भग० १९०, नि० चू० प्र० १३८ आ । ऋक्ष । भग० ३०१ । ऋक्षा, भल्लूका । जं० प्र० १२४ ।

अच्छउ-तिष्ठतु । दश० ३७ ।

अच्छणं-अवस्थानम् । बृ० प्र० २३६ अ । सन्निधौ आगमनम् । आव० ५२४ ।

अच्छणा-उपविश्यावस्थानम् । बृ० प्र० ११० आ ।

अच्छणए-यत्र स्वाध्यायं कुर्वद्भिरास्यते । औप० ९४ ।

अच्छणघरं-अवस्थानगृहकम्, यत्र यदा तदा वाऽऽगत्य बहव सुखासिकयाऽवतिष्ठन्ते । जीवा० २०० ।

अच्छणघरगा-अवस्थानगृहकाणि । जं० प्र० ४५ ।

अच्छणजोए-अक्षणयोग, अहिंसाव्यापार । दश० २२८ ।

अच्छणिउपूरे-संख्याविशेष । भग० ८८८ ।

अच्छणिउराणि-संख्याविशेष । ठाणा० ८६ ।

अच्छणिउरे-संख्याविशेष । भग० २१० । भग० ७७५ ।

अच्छणिकुरंगाणि-संख्याविशेष । ठाणा० ८६ ।

अच्छणे-आसने, प्रक्रमादाचार्यान्तरादिसन्निधौ अवस्थाने । उत्त० ५३५ ।

अच्छणपरिच्छण्णो-आच्छादितप्रत्याच्छादित । जीवा० १४५ ।

अच्छते-तिष्ठति । आव० ८३० ।

अच्छभल्ल-ऋक्ष । नि० चू० द्वि० ५८ अ । वनजीवा । (मर०)

अच्छभल्लो-ऋक्ष । नि० चू० द्वि० १२९ अ ।

अच्छरं-आस्तरकम्, आच्छादनम् । जीवा० २१० ।

अच्छरसा-अच्छरसा, अतिनिर्मला । जं० प्र० १९२ ।

अच्छरा-अप्सरा, चप्पुटिका । सूत्र० ३२५ । शक्रस्याग्रमहिषीनाम । भग० ५०५ ।

अच्छराणिवातो-अप्सरोनिपात, चप्पुटिका । प्रज्ञा० ६०० ।

अच्छराते-शक्रस्याग्रमहिष्या राजधानीविशेष । ठाणा० २३१ ।

अच्छरानिवाए-अप्सरोनिपात, तिसृश्चप्पुटिका । औप० १०९ । चप्पुटिका । भग० २६९ । जीवा० १०९ ।

अच्छरीयं-आश्चर्यम् । आव० ३९५ ।

अच्छवि-अक्षपि, अशरीर, अव्यथक । भग० ८९२ ।

अच्छवी-अच्छवि, अव्यथक । उत्त० २५७, ठाणा० ३३६ ।

अच्छह–तिष्ठत। ओघ० १५८।
अच्छा–अच्छाः, आकाशस्फटिकवत्। ठाणा० २३२।
अच्छा–अच्छापुरी, वरणजनपदे आर्यक्षेत्रम्। प्रज्ञा० ५५। जनपदविशेषः। प्रज्ञा० ४५। आकाशस्फटिकवदति-स्वच्छा। जं० प्र० २०।
अच्छाडेइ–आच्छादयति। आव० ४३४।
अच्छारियभत्तं–लावकभक्तम्। आव० २०७।
अच्छारिया–लावकम्। आव० २०७। मूल्यप्रदानेन शालि-लवनाय कर्म्मकराः, अस्तारिका–क्षेत्रे क्षिप्यंते ते। व्य० द्वि० १६९ आ।
अच्छाविज्जइ–स्थाप्यते। आव० ६३३।
अच्छाविओ–स्थापितः। आव० ३५२।
अच्छावेइ–स्थापयति। आव० ६३१।
अच्छि–(तोडए), चतुरिन्द्रियजीवभेदः। उत्त० ६९६।
अच्छि–अक्षी। आव० १५२। बीजप्रदेशस्थानानि यस्याः सा निदिता। ओघ० २१८।
अच्छिउं–स्थातुम्। उत्त० १५३।
अच्छिक्को–अस्पृष्टः। व्य० प्र० १८६ आ।
अच्छिचमढणं–चक्षुषोर्मीलनम्। बृ० द्वि० २०७ आ।
अच्छिज्जं–आच्छेद्यम्। आचा० ३२९।
अच्छिढोक्कणियं–अक्षिछादनम्। आव० ५६१।
अच्छिणिउपूरंगे–संख्याविशेषः। भग० ८८८।
अच्छिण्णे–अच्छिन्नः, अव्यवहितः,मान्यैः शब्दान्तरैर्वातादि-कैर्वाऽप्रतिहतशक्तिकः। प्रज्ञा० २९९।
अच्छिद्द–अच्छिद्रम्, अविरलम्, निर्दूषणं वा। भग० १३६।
अच्छिद्दजालो–अच्छिद्रजालः, अङ्गुल्यन्तरालसमुद्ररहितः। जीवा० २७२।
अच्छिद्दे–गोशालकदिशाचरः। भग० ६५९।
अच्छिद्रपाणि–प्रतिमापन्नो जिनकल्पिको वा। आचा० २७७।
अच्छिन्न–अच्छिन्नः, अपृथग्भूतः। ठाणा० ४७२।
अच्छिपत्ताइं–अक्षिपत्राणि, नेत्ररोमाणि। जं० प्र० ८१। जीवा० २३४।
अच्छिफुल्लयं–अक्षिपुष्पिका। नि० चू० प्र० ७ अ।
अच्छियं–वृक्षविशेषफलम्। आचा० ३४९।
अच्छियाइओ–स्थितवान्। आव० ६८३।
अच्छिरे–चतुरिन्द्रियजीवभेदः। उत्त० ६९६।
अच्छिरोडा–चतुरिन्द्रियजन्तुविशेषः। जीवा० ३२। चतुरि-न्द्रियविशेषः। प्रज्ञा० ४२।
अच्छिवेयणा–अक्षिवेदना, नेत्रपीडा। भग० १५७।
अच्छिवेहय–चतुरिन्द्रियजीवभेदः। उत्त० ६९६।
अच्छिवेहा–चतुरिन्द्रियविशेषः। प्रज्ञा० ४२।
अच्छिवेहो–अक्षिवेधः, चतुरिन्द्रियजन्तुविशेषः। जीवा० ३२।
अच्छुत्ता–उद्धृत्य। नि० चू० द्वि० १४ आ।
अच्छुरंति–आस्तृण्वन्ति। ओघ० ८३।
अच्छुरलमे–प्रचुरलाभे। नि० चू० द्वि० १४ आ।
अच्छुढं–अक्षिप्तम्। ओघ० १६५।
अच्छे–अच्छः, सुनिर्मलः, जाम्बूनदरत्नबहुलत्वात् मेरुनाम। जं० प्र० ३७५। ऋक्षः–अच्छभल्लः। प्रश्न० १५३।
अच्छेओ–अच्छेकः, अविकलः। आव० ५२७।
अच्छेज्ज–आसीत। भग० ९०। आच्छेद्य–पष्ठदावलदोषे। प्रश्न० १४४।
अच्छेज्जे–आच्छेद्य–बलाद् भृत्यादिसत्कमाच्छिद्य यत्स्वामी साधवे ददाति। ठाणा० ४६०।
अच्छेज्जेइ–भोजनदोषः। भग० ४६६।
अच्छेण्णं–आच्छेद्यं, यदाच्छिद्य भृत्यादिभ्यः स्वामी ददाति। प्रश्न० १५५।
अच्छेरं–आश्चर्यम्। जीवा० २७७।
अच्छेरगा–आश्चर्याणि, अद्भुतानि। ठाणा० ५२३।
अच्छेरियं–आश्चर्यम्, आश्चर्यवस्तु। दश० ५५।
अच्छो–अच्छः, स्वच्छः। सूर्य० ७८। ऋक्षः। जीवा० ३८। भास्करविशेषः। प्रश्न० ७।
अच्छोड–आच्छोटनम्। ओघ० १३३।
अच्छिन्नछेयनयाइं–अच्छिन्नच्छेदनयिका–सूत्रविशेषः। सम० १२८।
अजगर–अजगरः, शयुपर्यायः, उरःपरिसर्पविशेषः। प्रश्न० ७। सम० १३५।
अजज्जो–अजय्यः, जेतुमशक्यः। उत्त० १६९।
अजताभासयिवज्जी–अयताभाषाविवर्जी, दुष्टवाक्परि-हर्ता। आव० ७७५।

अजयं–अयतम्, अनुपदेशेन। दश० १५६। अणुवएसेण। दश० नू० ७०।
अजय–अयतः, अयतनपरः। ओघ० ३७। तत्तत्पापस्थाने-भ्योऽनुपरतः। उत्त० १५४।
अजरणं–अजीर्णम्। आव० १३१।
अजवणिज्जोदए–अयापनीयोदकाः, अयापनीयं–न यापना-प्रयोजनमुदकं येषां ते। भग० ३०६।
अजसो–छायाघातः। बृ० तृ० ९९ अ।
अजहण्णमणुक्कोसे–अजघन्योत्कृष्टः, अजघन्योत्कृष्टस्थितिः। आव० ३३५।
अजाकृपाणीयम्–अवितर्कितसम्भवो न्यायविशेषः। आचा० १८१।
अजाणंतिया–अजानती पर्यत् जे होइ पगंयमुद्दा। बृ० प्र० ५८ अ।
अजाणू–अज्ञस्य अज्ञानाद् वा व्याहृतिः। ठाणा० १७४।
अजाता–उत्तरगुणैश्चाधाकर्मादिभिरशुद्धा। ओघ० १५३।
अजायकप्पिओ–अजातकल्पिको, अगीतार्थ.। बृ० प्र० ११२ आ।
अजाया–अजाता, याऽतिरिक्तनिरवद्याहारपरित्यागविषया। आव० ६४१।
अजिओ–अजित., परीषहोपसर्गादिभिर्न जितः, द्वितीयजिन', यस्मिन् गर्भे सति माता राज्ञाऽजिताऽत'। आव० ५०२।
अजिणं–अजिनं, चर्म। सूत्र० ३०७, आचा० ७१।
अजिण्णओ–अजीर्णम्। आव० ३५२।
अजिम्हं–अमन्दम्। प्रश्न० ८४।
अजिम्ह–अमन्दे, भद्रभावतया निर्विकारत्वपक्षे। जं० प्र० ११५।
अजियसंतित्थयं–अजितशान्तिस्तव.। आव० ६३८।
अजियसेणं–ऐरवतावसर्पिणीतीर्थङ्कर.। सम० १५३।
अजियसेणे–अजितसेनः, अज्ञातोदाहरणे कौशाम्बीराजा। आव० ६९९। अतीतोत्सर्पिणीकुलकरः। सम० १५०। अलोभोदाहरणे श्रावस्त्यामाचार्यः। आव० ७०१। वसन्तपुरे नृपः खड्गप्रमादिसैनिकशिक्षकः। प्रश्न० ४४१।
अजियं–अपराजिता (आज्ञा)। आव० ५९६।
अजिया–अभिनन्दनजिनप्रवर्तिनीनाम। सम० १५२।
अजिरं–अङ्गणम्। प्रश्न० १३८।

अजीरं–अजरणम्। ओघ० ६३।
अजीरगं–अजीर्णत्वम्। आव० ६५५।
अजीरय–अजीर्णम्। भग० १९७।
अजीर्णम्–रोगविशेषः। जीवा० २८४।
अजीव–अजीवाः, जीवविपरीतस्वरूपाः। प्रज्ञा० ७।
अजीवअपच्चक्खाणकिरिया – यदजीवेषु–मद्यादिष्व-प्रत्याख्यानात् कर्मबन्धनं सा अजीवाप्रत्याख्यानक्रिया। ठाणा० ४१।
अजीवकरणं–अजीवभावकरणं, परप्रयोगमन्तरेणाभ्रादेर्ना-नावर्णान्तरगमनम्। आव० ४६४।
अजीवकिरिया –अजीवक्रिया, अजीवस्य–पुद्गलसमुदायस्य यत्कर्मतया परिणमनं सा अजीवक्रिया। ठाणा० ४०।
अजीवणेसत्थिया–अजीवनैसृष्टिकी, यत्तु काष्टादीनां धनुरा-दिभिः निसर्जनम्। ठाणा० ४३।
अजीवपाउसिया–अजीवप्राद्वेषिकी, अजीवस्योपरि प्रद्वेषाधा क्रिया प्रद्वेषकरणमेव वा। सम० १८२। अजीवे–पाषाणादौ स्खलितस्य प्रद्वेषात्। ठाणा० ४१।
अजीवपाओगिअं–अजीवप्रायोगिकम्, अजीवप्रयोगेन नि-र्वृत्तं, जीवप्रायोगिकद्वितीयभेदः। आव० ४५७।
अजीवपारिग्गहिया–अजीवपारिग्रहिकी, पारिग्रहिकीक्रियाया द्वितीयो भेदः। आव० ६१२।
अजीवमिस्सिया–अजीवमिश्रिता, प्रभूतेषु मृतेषु स्तोकेषु जीवत्सु एकत्र राशीकृतेषु–अहो महानयं मृतो जीवराशिरिति भाषा। प्रज्ञा० २५६।
अजीवमीसए–अजीवानाश्रित्य मिश्रमजीवमिश्रं। ठाणा०। ४९०।
अजीवमीसग–अजीवमिश्रा, सत्यामृषाभाषाभेदः। दश० २०९।
अजीववेयारणिया – पुरुषादिविप्रतारणबुद्ध्यैव याऽजीवं भणत्येतादृशमेतदिति। ठाणा० ४३।
अजीवसामंतोवणिवाइया – अजीवसामन्तोपनिपातिकी, सामन्तोपनिपातिकीक्रियाया द्वितीयो भेदः। आव० ६१३।
अजीवसाहत्थिया–यच्च स्वहस्तगृहीतेनैवाजीवेन–खड्गादिना जीवं मारयति सा अजीवस्वाहस्तिकी। ठाणा० ४२।
अजीवारंभिया – जीवकडेवराणि पिष्टादिमयजीवाकृतींश्च-वस्त्रादीन् वा आरभमाणस्य या अजीवारंभिकी। ठाणा० ४१।

अजुतं-अयुतम्, चतुरशीतिरयुताङ्गशतसहस्राणि। जीवा० ३४५।

अजुतंगं-अयुताङ्गम्, चतुरशीतिरर्थनिकुरशतसहस्राणि। जीवा० ३४५।

अजुत्तं-अयुक्तम्, अनुपपत्तिक्षमम्, सूत्रदोषविशेषः। आव० ३७५।

अजुत्तो-अनुपयुक्तः। सू० सू० ६ आ।

अजुरणया-शरीरापचयकारिशोकानुत्पादनेन। भग० ३०५।

अजो-अजः, छगलको द्विखुरश्चतुष्पदः। जीवा० ३८।

अजोगवं-अयोगवम्, वैश्याशूद्राभ्यां जातो वर्णः। आचा० ८।

अजोगी-अयोगी, निरुद्धयोगः, शैलेश्यां गतो ह्रस्वपञ्चाक्षरोद्गिरणमात्रकालं यावत्, भूतग्रामस्य चतुर्दशं गुणस्थानम्। आव० ६५०।

अयोनिभूतम्-(अजोणि ब्भूए), विध्वस्तयोनि, प्ररोहासमर्थम्। दश० १४०।

अजोसिया-अजुष्टा, असेविता, क्षयं वा अवसायलक्षणमतीता। सूत्र० ५०।

अज्झंहिज्जो-अवद्य'। आव० ७१५।

अज्ज-अद्य, आरब्धः, आर्यः। उत्त० ३६३। आर्यः-आराग्दर्वहेयधर्मेभ्यो यातः-प्राप्तो गुणैरित्यार्यः। प्रज्ञा० ५। भावाराधनयोगादाराद्यातः सर्वहेयधर्मेभ्य इत्यार्यः। दश० २८४। आर्या-प्रशान्तरूपा चण्डिका। भग० १६४। अद्य-साम्प्रतम्। जं० प्र० २४६, आचा० १५८। आर्यः-(गौतमः)। आचा० १५८। पापकर्मबहिर्भूतत्वेनायाय (क्षेत्रादिभेदेन नवधा)। ठाणा० १०८।

अज्जए-हरितविशेषः। प्रज्ञा० ३३।

अज्जकण्हा-आर्यकृष्णाः, आचार्याः। उत्त० १७८।

अज्जकण्हो-आर्यकृष्णः, आचार्य। आव० ३२३।

अज्जकालका-नाम आर्यिका। बृ० प्र० ३९ अ।

अज्जकालगायरिए-चतुर्थीप्रवर्तको युगप्रधानः। नि० चू० प्र० ३३९ आ।

अज्जकालगो-आर्यकालकः। आव० ३६९।

अज्जकालय-प्रशादृष्टान्तः। (मर०)

अज्जखउडो-विद्यासिद्ध आचार्यः। नि० चू० प्र० १-४ अ, नि० चू० प्र० २७६ अ, जि० चू० प्र० १६ अ। आर्यखपुटः, विद्यासिद्ध आचार्यविशेषः। आव० ४११।

अज्जगो-आर्यकः, वनस्पतिविशेषः लोके आजओ। जं० प्र० ४२४। प्रत्येकवनस्पतिविशेषः। नि० चू० द्वि० ६० अ।

अज्जगोविंदो-आर्यगोविन्दः, मिथ्योपस्थितायामुदाहरणम्। आव० ८६१।

अज्जचंदणा-आर्यचन्दना, आर्याविशेषः, यस्याः पार्श्वे मृगावत्याः केवलोत्पत्तिः। आव० ४८५, नि० चू० तृ० १३४ आ।

अज्जत्ताए-आर्यतया, पापकर्मबहिर्भूतया अद्यतया वा अधुनातनतया वर्तमानकालतया। भग० ६५६।

अज्जपयं-आर्यपदम्, शुद्धधर्मपदम्। दश० २६९।

अज्जप्पभिई-अद्यप्रभृति, सम्यक्त्वप्रतिपत्तिकालादारभ्याद्य यावत्। आव० ८१९।

अज्जभावे-आर्यभावः क्षायिकादिज्ञानादियुक्तः। ठाणा० २०९।

अज्जमंगू-आर्यमङ्गु', ऋद्धिरससातगौरवदृष्टान्ते मथुरायामाचार्यः। आव० ५७९। अवसन्नाचार्य.। नि० चू० प्र० ३५१ अ। आचार्यातिसेवकः दुर्बलाऽऽचार्यः। व्य० द्वि० १७४ आ।

अज्जमणग-आर्यमणकः, आर्यश्चासौ मणकश्चेति विग्रहः, शय्यंभवस्यैकाकिपुत्रस्या·येना। दश० २८४।

अज्जमहागिरि-स्थूलभद्रस्वगणधारकाचार्य। नि० चू० प्र० २४३ अ।

अज्जमहागिरी-आयरिओ। नि० चू० तृ० ४४ आ।

अज्जमूलं-आर्यमूलम्, मातामहपादमूलम्। आव० ६८४।

अज्जय-आर्यक', पिता। उत्त० १८८। आव० ३०५। भग० ४७०। आव० ३५७।

अज्जयमंजरी-आर्यमञ्जरी। आव० १२५।

अज्जरक्खितो-मातृकानुशास्त्रदर्शाचार्यः। नि० चू० द्वि० १०९ अ।

अज्जरक्खिय-गोष्ठामाहिलप्रेषकाचार्य.। नि० चू० प्र० ३३५ आ, १०१ आ। दशपुरेऽभ्युत्थाने दृष्टान्तः। (मर०)। 'आर्यरक्षित'। विशे० १००२। आचार्यविशेष। व्य० द्वि० ३१९ अ।

अज्जव-आर्जवम्, धर्मभिक्षुविषयेऽपि मायापरित्यागः। दश० २६३।

अज्जवइरसामि-आर्यरक्षितविद्यागुरु । नि० चू० प्र० १०१ आ ।

अज्जवइरा-आर्यवैरा। विशे० ९२८। आर्यवज्र, वात्सल्योदाहरणे आर्य । दश० १०३।

अज्जवइरो-आर्यवैर । आव० २८५। आर्यवज्र, युगप्रधान । आव० ३०२। आर्यवैर, चैत्यभक्तिद्वारे आचार्य । आव० ५३६।

अज्जवट्ठाणा-आर्जवम्, संवरभेदा । ठाणा २०२।

अज्जवे-आर्जवम्, ऋजुता योगसंग्रहे दशमो योग । आव० ६६४।

अज्जसमिओ-आर्यसमित, सुनन्दाभ्राता। आव० २८९। आर्यसमित । उत्त० ३३३।

अज्जसमिया-आर्यसमिता, वज्रस्वामिनो मातुला । आव० ४१२।

अज्जसमुद्दा-आचार्यातिशेषानतिमेघि। व्य० द्वि० १४७ अ। नि० चू० प्र० १५१ अ।

(अज्जसा)-अञ्जसा, प्रगुणेन न्यायेन । विशे० ७७९।

अज्जसामस्स-आरात्सर्वहेयधर्मेभ्यो यात-प्राप्तो गुणैरित्यार्य स चासौ श्यामश्च आर्यश्याम, तस्मै । प्रज्ञा० ५।

अज्जसुनन्दा-आर्यसुनन्दा । उत्त० ३२१।

अज्जसुहत्थी-आर्यसुहस्ती, योगसंग्रहेऽनिश्रितोपधानदृष्टान्ते आर्यस्थूलभद्रस्य लघु शिष्य । आव० ६६८। स्थूलभद्रस्तगणधारकाचार्य । नि० चू० प्र० २४३ अ। आयरिओ। नि० चू० तृ० ४४, वृ० द्वि० १५३ आ।

अज्जसुहम्मे-आर्यसुधर्मा, महावीरस्यान्तेवासी स्थविर । प्रश्न० १।

अज्जहिज्जो-अध्यय (थ)। आव० ६९२।

अज्जा-तुलसीसमो वनस्पतिविशेष । भग० ८०३। मुनिसुव्रतजिनप्रवर्तिनीनाम। १५२। आर्या, सप्तवस्तु कलशगादिव्यवस्थानिबद्धा मात्राछन्दोरूपा। जै० प्र० १३८।

अज्जाकल्पं-आर्यानीतम् । (नि०)

अज्जाघरे-आर्यागृहे । ठाणा० ३७२।

अज्जावेयव्वा-आज्ञापयितव्या । आचा० १७८।

अज्जासाढो-आर्याषाढ, स्थिरीकरणोदाहरणे दृष्टभयित्यामार्याषाढ । दश० १०३। वत्सभूम्यामाचार्यविशेष । उत्त० ११३। आचार्य । आव० ३१५।

अज्जिए-आर्जिका, आर्यिका मातु पितुर्वा माता। दश० २१६।

अज्जिया-पितामही मातामही वा। वृ० द्वि० ५८ आ। माउ पिउ वा जा माया मा। दश० चू० १०० ।

अज्जिया-आर्यिका। आव० ७९३।

अज्जियालाभो-आर्यिकालाभ, आर्यिकाभ्यो लाभ, । आव० ५३५।

अज्जुण-अर्जुन, वृक्षविशेष । प्रज्ञा० ३१। अर्जुनाभिधानं यत्पाण्डुरस्वर्णम्। जं० प्र० २४१। बहुबीजविशेष । भग० ८०३। नीरविशेष । व्य० द्वि० १३० आ। तृणविशेष.। प्रज्ञा० ३३।

अज्जुणए-अर्जुनक, राजगृहे मालाकारविशेष । अन्त० १८।

अज्जुणओ-अर्जुनक, राजगृहे मालाकार । उत्त० ११२।

अज्जुणगस्स-अर्जुनक, गोशालशरीरनिर्यानम् । भग० ६७४।

अज्जुणमालार-अर्जुनमालाकार, आक्रोशगाह । (मर०)

अज्जुणसुवण्णं-अर्जुनसुवर्णं, श्वेतकाञ्चनम्। औप० ११५।

अज्जुणस्स-गौतमगोत्रो गोशालगृहीततत्पशरीर । भग० ६७३।

अज्जुण्णो-अर्जुन, सुघोषनगरनृपति । विपा० ९५।

अज्जुन्ने-गोशालकदिशाचर । भग० ६५९।

अज्जे-आर्य । उत्त० २८६। अद्य, आर्य, स्वामिन । भग० १७६।

अज्जो-आर्य, पितामह, तीर्थकराणाम् प्रथम। आव० १६८। आर्य । आव० ७९३। श्रीवर्द्धमानस्वामी। जं० प्र० ५४१।

अज्जोत्ति-आरात्पापकर्मभ्यो याता आर्यास्तदामन्त्रणं हे आर्या। ठाणा० १३५।

अज्जोरुह-हरितविशेष । प्रज्ञा० ३३।

अज्झत्त-अध्यात्मम्, चन । दश० १६।

अज्झत्थं-अध्यात्मम्, सुखदु खादि । आचा० ७६। आत्मविषय । जीवा० २४२। आत्मस्था मिथ्यात्वादय । उत्त० ४०२। अन्त करणम्। आचा० १९०। अध्यात्मम्। आचा० २०८। अध्यात्मक्रिया—यत्केनापि कथमनाप्यपरिभूतस्य दौर्मनस्यकरणम्। ठाणा० ३१६। अध्यात्म—परिणाम.। व्य० प्र० १८१आ। अध्यात्मम्-मन । ठाणा० ५।

अज्झत्थदंडे–अध्यात्मदण्डः, शोकाद्यभिभवः। प्रश्न० १४३।

अज्झत्थनिप्फन्नं–अध्यात्मनिष्पन्नम्, अध्यवसानोद्गतम्। दश० २२६।

अज्झत्थवयणं–अध्यात्मवचनम्, अभिप्रेतमर्थं गोपयितुकामस्य सहसा तस्यैव भणनम्। प्रश्न० ११८। यदन्यच्चेतसि निधाय विप्रतारकबुद्ध्याऽन्यद् विभणिषुरपि सहसा यच्चेतसि तदेव ब्रूते तत्। प्रज्ञा० २६७, आचा० ३८७।

अज्झत्थिए–अध्यात्मिकः, अभ्यर्थितः। विपा० ३८। अध्यात्मिकः–आत्माश्रितः। भग० ४६२। आध्यात्मिक–क्रियास्थानविशेषः। सम० २५।

अज्झत्थिओ–आध्यात्मिकः, आत्मविषयः, सङ्कल्पविशेषः। जीवा० २४२।

अज्झत्थियं–अध्यवसितं, सङ्कल्पम्। आव० ६६९। आध्यात्मिकं–अन्तःकरणोद्भवम्। सूत्र० ३११।

अज्झत्थीओ–अध्यात्मस्थः। आव० ६४९।

अज्झत्थेव–अध्यात्मन्येव, ब्रह्मचर्ये व्यवस्थितः। आचा० २०८।

अज्झत्थो – आध्यात्मिकः, आत्मन्यध्यध्यात्मं – तत्रभवः दण्डविशेषः। सूत्र० ३०६।

अज्झप्पं–अध्यात्मं, सद्भावनारूढं चित्तमेव। प्रश्न० १३४। आध्यात्मिकं, आत्मन्यधीत्यध्यात्मं तत्र भवम्। आन्तरशाक्षिकमिति सात्विकं। सूत्र० १६७। आत्मानमधिकृत्यात्मालम्बनम्। प्रश्न० १२८। मनः। सूत्र० ६५। अधि आत्मनि वर्त्तत इति अध्यात्मं–ध्यानम्। आव० ७७४। स्थितो मनः। उत्त० ७। आत्मनि। उत्त० ६१८। चेतः। आव० ५२५। धर्मध्यानादिकम्। सूत्र० २६९। मनः। आचा० २१९। आत्मनि। उत्त० ४६५। मनः। उत्त० ५११।

अज्झप्पजोगे–अध्यात्मयोगः। (महाप्र०)

अज्झप्पजोगसाहणजुत्ते – अध्यात्मयोगसाधनयुक्त, अध्यात्मं–मनस्तस्य योगा – व्यापारा धर्मध्यानादयस्तेषां साधनानि एकाग्रतादीनि तैर्युक्तः। उत्त० ५११।

अज्झप्पज्झाणं–अध्यात्मध्यानं, अमुकोऽहं अमुककुले अमुगसिस्से अमुगधम्मट्ठाणठिइए न य तब्विराहणेत्यादिरूपम्। प्रश्न० १२८।

अज्झप्परए–अध्यात्मरतः, प्रशस्तध्यानासक्त। दश० २६७।

अज्झप्पसंवुडे–अध्यात्मसंवृतः, क्षीभोगादत्तमनाः सूत्रार्थोपयुक्तनिरुद्धमनोयोगः। आचा० २११।

अज्झप्पे–अध्यात्मनि, आन्तरम्। सूत्र० २३०।

अज्झयणं–अध्ययनम्, विशिष्टार्थध्वनिसन्दर्भरूपम्। जीवा० ४। ठाणा० ६। पाठः। आव० ७३२, विशे० ४५०। सज्झाओ। दश० चू० १२५। स्वस्वभावे आनीयतेऽनेनेति आनयनं प्रस्तावादात्मनः, निरुक्तविधिना। उत्त० ६। निरुक्तविधिनाऽर्थनिर्देशपरत्वाद्वाऽस्य अयतेरेतेर्वाऽधिपूर्वस्य। उत्त० ७। नाम। सूर्य० १, १४६। आव० ७१९। अध्यात्मानयनाच्चेतसो विशुद्धयापादनात्। दश० ११८। अनेन करणभूतेन साधुर्बोधसंयममोक्षान् प्रत्यधिकं गच्छति यस्मादेवं तस्मादध्ययनम्। दश० १६। अध्यात्मानयनं, अधिगम्यन्ते परिच्छिद्यन्ते वा अर्था अनेनेत्यधिगमनमेव प्राकृतशैल्या तथाविधार्थप्रदर्शकत्वाच्चास्य वचसोऽध्ययनमिति, अधिकं नयनमधिकनयनं चाध्ययनम्। दश० १६। अध्यात्मानयनं–अध्ययनश्रुतनाम। दश० १६। शास्त्रम्। दश० २८४।

अज्झयणछक्कं–अध्ययनषट्कं। विशे० ४१५।

अज्झल्ल–म्लेच्छविशेषः। प्रज्ञा० ५५।

अज्झवसाए–अध्यवसायः, सूक्ष्मो मनःपरिणामस्तद्रूपः। आचा० ६८। सूक्ष्म आत्मनः परिणामविशेषः। आचा० ३९।

अज्झवसाणं–अध्यवसानं, अन्तःकरणप्रवृत्तिः। सूत्र० ३४०। मनोविशेषः। औप० ९९। जीवा० १३०। अन्तःकरणसव्यपेक्षम्। आव० १८४। रागस्नेहभयभेदानि अध्यवसानानि। आव० २७२। अध्यवसायाः। प्रज्ञा० ५४३। श्रवणविधिक्रियाप्रयत्नविशेषरूपम्। औप० ६०। मन एकाग्रतालम्बनम्। आव० ५८३। रागस्नेहभयात्मकोऽध्यवसायः। ठाणा० ४००। विशे० ८४२।

अज्झवसाणावरणिज्जाणं–भावचारित्रावरणीयानि। भग० ४३२।

अज्झवसाणेहिं–अध्यवसानैः, मनःपरिणामैः। जै० प्र० २७९।

अज्झवसिए–अध्यवसितम्, परिभोगक्रियासंपादनविषयम्। भग० ८९। अध्यवसानम्, प्रयत्नविशेषः। भग० ८९।

अज्झवसियं–अध्यवसितं, क्रियासंपादनविषयम्। औप० ६०

अज्झयणसंति-अध्ययनम्। दशा० ३५।
अज्झाइत्तं-अधीनम्। आव० ३४०।
अज्झाय-अध्ययनम्। विशे० ५०६। अध्यायः। भग० ४। पशुमीनां मनःपीडानां वा आयः। भग० ४। पाठः। उत्त० ७११। शास्त्रोऽंशविशेषः। आव० ६८। अध्ययनानि। उत्त० ७१२।
अज्झारुहो-अध्यारुहः, वृक्षयोनिकेषु वृक्षेषु कर्मोपादाननिर्व्यापितेषु उपर्युपरि अध्यारोहन्तीति, वृक्षोपरिजातो वृक्षः, गहीश्वशाभिधानः कामवृक्षाभिधानो वा वृक्षः। सूत्र० ३५२।
अज्झायमित्त-अभ्युपैति। ठाणा० २५१।
अज्झियणं-उपधानिलकं। बृ० सू० ७४ आ।
अज्झीणं-अक्षीणम्। विशे० ४५०। अक्षीणपुण्यनाम। दशा० १६। यदीयमाने न क्षीयते क्रमः तद् अक्षीणम्। ठाणा० ६।
अज्झुपपन्नो-अध्यवगमनामवणे वि (आसक्तः)। नि० चू० द्वि० ७१ आ।
अज्झुसिरं-अशुषिरम्-अग्रथिता दर्भिका निरन्तरा च। ओघ० २१४।
अज्झुसिरे-तृणादिभिरव्याप्ते न। ओघ० १२१।
अज्झुसिरो-पलिसीरनिराकलितः प्रतिपिण्डनगहितो वा। बृ० द्वि० २५२ आ।
अज्झोयर-अध्यवपूरकम्, स्वार्थमूलाद्ग्रहणप्रक्षेपरूपम्। दशा० १७४। नि० चू० प्र० १४२ आ।
अज्झोयरए इ-भोजनदोषः। भग० ४६६। स्वार्थमूलाद्ग्रहणे गतत्वर्थे कणप्रक्षेपरूपमध्यवपूरक। ठाणा० ४६०।
अज्झोयरगमियाए-आभ्युपगमिकी, प्रव्रज्याप्रतिपत्तितो ब्रह्मचर्यभूमिशयनकेशलुञ्चनादीनामङ्गीकारेण निर्वृत्ता वेदना। भग० ६५।
अज्झोयवज्जति-अभ्युपपद्यते-तदेकचित्ता भवन्तीति तदर्जनाय धार्मिकत्वेनोपपद्यन्ते उपपन्ना घटमाना। ठाणा० २९२।
अज्झोयवज्जणं-अभ्युपपादनं, कर्मेन्द्रियार्थेऽभ्युपगमिप्रभिवृत्तः। ठाणा० १३४।
अज्झोववज्जिज्ज-अभ्युपपद्येत, अभिष्वङ्गं कुर्यात्। दशा० ४५।
अज्झोववण्णे-अभ्युपपन्नः, [illegible]। आचा० ७८।
अज्झोववण्णो-अभ्युपपन्नः, अ[illegible]। औप० ११८। अभ्युपपन्नः। आव० १५९, ९२।
अज्झोववन्नं-अभ्युपपन्नः, आसक्तः। दशा० ,४५। अन-ल्पाहारनिल्लामार्थिकत्वेनाप्त। भग० ६५०।
अज्झोववन्ने-अभ्युपपन्नः, तदेकाग्रो गत। भग० २९२। मूर्च्छितः। विपा० ३८।
अज्झोववन्नो-अभ्युपपन्नः। भग० १९९।
अज्झोववाय-अभ्युपपातः, प्रबलेच्छाभिलाषा। प्रश्न० १५१।
अज्झोवान-अभ्युपपातः-श्रद्धा। व्य० प्र० २१३ आ।
अज्झंझपत्ते-अजन्मायनः, अकलहकरः अकषायी। सूत्र० २३४। वीतरागः। सूत्र० २३७।
अज्ञातोञ्छवृत्ति-(अज्ञातमार्गेणि), पूर्वे पूर्वे भिक्षाभ्य। उत्त० ४०४।
अज्ञानम्-अनाभोगः, अननुस्मरणं वा। दशा० १०९।
अट्टं-आर्तम्, शरीराद्यपचय। दशा० चू० १४। कलत्र पीडितस्येदं वचनमिति कृत्वा। आर्तमार्त्त्य पीडननाम। प्रश्न० २६। आर्तध्यान-शोकाक्रन्दनादिलक्षणं ध्यानम्। आव० ५८३।
अट्टट्टहासं-अट्टाट्टहास्यम्। आव० १९१।
अट्टट्टहासो-अट्टहासः। आव० ८३०।
अट्टणमाला-व्यायामशाला। भग० ५४२। अट्टनशाला। औप० ६५।
अट्टणे-अट्टनः, कौशम्ब्यामहे आत्मीनमाट्टमल्लो उज्जयिन्या मल्लविशेषः। आव० ६६४।
अट्टणो-अट्टनः, उज्जयिन्यां जितशत्रुराजमल्लः। उत्त० १९२।
अट्टदुहट्टयसट्टे-आर्तदुःखार्तवशार्तः। उत्त० ३२१।
अट्टदुहट्टा-आर्तदुःखपीडिताः, आर्तदुःखार्ताः। आव० ३९५।
अट्टदुहट्टो-आर्तदुःखार्तः। आव० २८८।
अट्टनियट्टियचित्ता-आर्तनिवर्तितचित्ताः, आर्तं निर्वर्तितं चित्तं यैस्ते तथा, आर्ताद्वा निवर्तितं चित्तं यैस्ते। भग० १२१।
अट्टमगा-अभिसारकाः। नि० चू० द्वि० ११ अ।
अट्टमट्टाइ-अर्धविनर्द। उप० गा० ४८६।
अट्टयमट्टा-आर्तवशार्ता। आव० ३८८।

अट्टहासं-अट्टहासम् । आव० ६३४ ।

अट्टा-आर्ताः, दुःखिनः रागद्वेषोदयेन । आचा० १८३ ।

अट्टाल-प्राकारसम्बन्धिन्यट्टालके । आचा० ४११ ।

अट्टालकं-प्राकारकोष्ठकोपरिवर्त्ति आयोधनस्थानम् । उत्त० ३११ ।

अट्टालक-अट्टालकः, प्राकारस्योपरि भृत्याश्रयविशेषः । जीवा० १५९ ।

अट्टालका-प्राकारस्योपर्याश्रयविशेषाः । सम० १३७ ।

अट्टालगं-अट्टालकं । जीवा० १६९ ।

अट्टालग-अट्टालकः, प्राकारोपरिवर्ती आश्रयविशेषः । प्रश्न० ८ । अट्टालकम्, प्राकारोपर्याश्रयविशेषः । भग० २३८ ।

अट्टालगा-पागारस्स अहे अट्टहरयो मग्गो । नि० चू० प्र० २६५ अ ।

अट्टालगो-अट्टालकः, प्राकारस्योपरि भृत्याश्रयविशेषः । जीवा० २५८ ।

अट्टालयं-अट्टालकं । आव० ६७५ ।

अट्टालय-अट्टालकाः, प्राकारस्योपरिवर्त्याश्रयविशेषाः । जं० प्र० ७६, १०६ । औप० ३ । प्राकारस्योपरि भृत्याश्रयविशेषाः । प्रज्ञा० ८६ । प्राकारस्योपर्याश्रयविशेषः । जीवा० २७९ ।

अट्टालयसंठिओ-अट्टालकसंस्थितः । जीवा० २७९ ।

अट्टे झाणे-ध्यानस्य प्रथमो भेदः । भग० ९२३ ।

अट्टो-आर्तः, मनसा । विपा० ८१ ।

अट्ठ-अर्थः । आव० ७९३ ।

अट्ठ-अर्थान्, धर्मादीन् । जं० प्र० ९८ । अर्थाय । उत्त० ३१० ।

अट्ठकरणं - अर्थकरणं, अर्थाभिनिर्वर्तकमधिकरण्यादि येन द्रव्यादि निष्पाद्यते । अर्थार्थं वा करणं, यत्र राजोऽर्थाश्चिन्त्यन्ते । अर्थ एव वा तैस्तैरुपायैः क्रियत इति । उत्त० १९५ ।

अट्ठखंभसतसंनिविट्ठा-अष्टोत्तरस्तम्भशतसन्निविष्टा, सभाविशेषः । आव० ३४२ ।

अट्ठग-अष्टकः । औप० १४४ । अष्टकम्-चतुर्विंशत्यधिकशतमष्टकभागाष्टकप्रमाणम् । सूर्य० ३१८ ।

अट्ठगुणाए-अष्टगुणया । आव० ६३ ।

अट्ठगुणे-अष्टगुणाः । ठाणा० ३९४ ।

अट्ठजायं-अर्थकार्यां अर्थिकार्यां अर्थप्रयोजनां वा । बृ० तृ० २४२ अ ।

अट्ठजुत्तं-अर्थयुक्तं-अर्थते-गम्यत इत्यर्थस्तेन युक्तमन्वितम् । उत्त० ४६ ।

अट्ठट्ठमियं-अष्टाष्टमिका, भिक्षुप्रतिमाविशेषः । अन्त० २९ ।

अट्ठट्ठमिया-अष्टावष्टमानि । सम० ७७ । अष्टावष्टमम् । ठाणा० ४६० ।

अट्ठपयंति-अनुभागसंक्रमस्वरूपनिर्द्धारणम् । ठाणा० २२२ ।

अट्ठपिट्ठपुट्ठा(निट्ठिया)-अष्टवारपिष्टप्रदाननिष्पन्ना । जीवा० २५१ ।

अट्ठपिट्ठणिट्ठिया-अष्टपिष्टनिष्ठिता, अष्टभिः शास्त्रप्रसिद्धैः पिष्टैर्निष्ठिता । प्रज्ञा० २६४ ।

अट्ठफास-अष्टस्पर्शम्, बादरपरिणामम् । भग० ९६ ।

अट्ठभाइया-अष्टमभागमात्रो मानविशेषः । भग० ३१२ ।

अट्ठट्ठमंगलय-अष्टमङ्गलकानि, अष्टेति संख्याशब्दः, अष्टमङ्गलकानीति व्याख्यातः संज्ञाशब्दः । जं० प्र० ११२ ।

अट्ठमभत्तं-अष्टमभक्तम्, त्रिरात्रोपवासः । आव० २२८ । समयपरिभाषयोपवासत्रयं, यत्राऽष्टमभक्तमिति सान्वयं नाम, तद्येवम्-एकैकस्मिन् दिने द्विवारभोजनौचित्येन दिनत्रयस्य षण्णां भक्तानामुत्तरपारणकदिनयोरेकैकस्य भक्तस्य च त्यागेनाष्टमं भक्तं त्याज्यं यत्र । जं० प्र० १९७ । उपवासत्रयस्य संज्ञा । जं० प्र० ११८ ।

अट्ठमभत्तिआ-अष्टमभक्तिका, दिनत्रयमनाहारिणः । जं० प्र० २३९ ।

अट्ठमेणं-अष्टमेन, उपवासत्रयलक्षणेन । जं० प्र० १९१ ।

अट्ठय-तत्रे । आव० १४२ ।

अट्ठरसमंपउत्त-अष्टमो रसः शृङ्गारादिभिः तत्सम्प्रयोगेण युक्तम् । जं० प्र० ३९ ।

अट्ठसहआदि - अर्थसाराणि यानि गणित वा अर्थसारिकाणामिः, अथवा अर्थानां-द्रव्याणां स्थानानि यान्यत्र अर्थसमाख्या स्थार्थसारिकाः । जं० प्र० १४१, भग० ४८७ ।

अट्ठसते-अष्टशते । आव० १४७ ।

अट्ठसयं-अष्टाधिकं शतम् । जं० प्र० ६० ।

अट्ठसयंसिओ-अष्टशताश्रिकः । आव० १४१ ।

अट्ठसहस्सं-अष्टसहस्रम्, अष्टोत्तरं सहस्रम्। जं० प्र० ४१०।

अट्ठसहस्सवरकंचणसलागा-अष्टौ सहस्राणि-अष्टसहस्रमसङ्ख्याकाः वरकाञ्चनशलाका-वरकाञ्चनमय्यः शलाका येषु मानि। जं० प्र० ५९।

अट्ठसिरे-अष्टशिराः, अष्टकोणः। औप० १०।

अट्ठसोवण्णिअं-अष्टसुवर्णा मानमस्येत्यष्टसौवर्णिकं, सुवर्णमानमिदम्-चत्वारि मधुरतृणफलान्येकः श्वेतसर्षपः, षोडश श्वेतसर्षपा एकं धान्यमाषफलं, द्वे धान्यमाषफले एका गुञ्जा, पञ्च गुञ्जा एकः कर्ममाषकः, षोडश कर्ममाषकाः एकः सुवर्णः। जं० प्र० २२६।

अट्ठा-अर्थक्रिया, अर्थाय सत्करणम्, क्रियायाः प्रथमो भेदः। आव० ६४८।

अट्ठाणं-अस्थानम्, अयुक्तं, असाम्प्रतं वा। सूत्र० १६०। शब्दप्रतिषद्धावसतिः। बृ० तृ० १६७ आ।

अट्ठाणठ्ठवणा-अस्थानस्थापना-गुर्वन्तमहादिके अस्थाने प्रत्युपेक्षितोपधेः स्थापनं-निक्षेपः। ठाणा० ३६२।

अट्ठादंडे-अर्थाय-शरीरस्वजनधर्मादिप्रयोजनाय दण्डः-त्रसस्थावरहिंसा। सम० २५।

अट्ठावय-(अष्टापदः) पर्वतविशेषः। आव० ८२३।

अट्ठापदं-अर्थापदम्। आव० ३५२।

अट्ठारसवंको - अष्टादशवक्रः, अष्टादशसरिको हारः। आव० ६८९।

अट्ठारसवंजणाउलं-अष्टादशव्यञ्जनाकुलम्। सूर्य० २९३। ठाणा० ११७।

अट्ठावए-अष्टापदम्, द्युतम्, अर्थपदं वा। दश० ११६।

अट्ठावओ-पर्वतविशेषः। आव० १४८।

अट्ठावयं-अष्टापदम्। जीवा० २७६। अर्थपदम्। आव० ४१२। शारिफलकद्युतं तद्विषयकलाम्। जं० प्र० १३७। द्युतफलकम्। प्रश्न० ८४। पर्वतविशेषः। आव० १५१। द्युतक्रीडाविशेषः। सूत्र० १८१। द्युतफलकं, कैलासः पर्वतविशेषो वा। प्रश्न० ७०। अष्टापदः, पर्वतविशेषः। आव० ८२७। द्युतफलकम्। जं० प्र० ११४।

अट्ठावयसेलसिहरंसि - अष्टापदशैलशिखरे। जं० प्र० १५८।

अट्ठाहिअं-अष्टाह्निकाम्, अष्टानामह्नां-दिवसानां समाहारोऽष्टाहं तदस्ति यस्यां महिमायां सा अष्टाह्निका ताम्। जं० प्र० १६३।

अट्ठाहिया-अष्टाह्निका, महामहिमाविशेषः। जीवा० ३५५। जं० प्र० ४२३।

अट्ठि-अस्थि, कीकशम्। प्रश्न० ८, भग० १३५।

अट्ठिकच्छभा-ये अस्थिबहुलाः कच्छपास्ते अस्थिकच्छपाः। प्रज्ञा० ४४।

अट्ठिकच्छभो-अस्थिकच्छपः, कच्छपविशेषः। जीवा० ३६।

अट्ठिकरकम्-मन्दुलोदकम्। दश० १७७।

अट्ठिखंडं-अस्थिखण्डं। आव० ३६९।

अट्ठिग-अस्थिकम्-बीजम्। भग० ३०८।

अट्ठिचम्मावणद्धे-अस्थिचर्मावनद्धम्, अस्थीनि चर्मावनद्धानि यस्य। भग० १२५।

अट्ठिज्झामे - अस्थिध्यामम्, अस्थि च तद्ध्यामं च-अग्निना श्यामलीकृतं-आपादितपर्यायान्तरम्। भग० २११।

अट्ठियगामं-अस्थिकग्रामम्, पूर्वं वर्धमानकनामकम्। आव० १८९।

अट्ठिभंजणं-अस्थिभञ्जनम्, कीकसामर्दनम्। प्रश्न० ३७।

अट्ठिमिंज-अस्थिमिञ्जः-त्रीन्द्रियजीवविशेषः। उत्त० ६९७।

अट्ठिमिंजा-अस्थिमिञ्जा, अस्थिमध्यम्। सूत्र० ४०८। भग० ५२६।

अट्ठिय-आर्थिकः, अर्थेन द्रव्यार्थः-मोक्षः, स प्रयोजनमस्येति अर्थः स एव प्रयोजनमपोऽस्यास्तीति। उत्त० ६५।

अट्ठियकट्ठुट्ठियं-अस्थिकाष्ठोत्थितम्। उत्त० ३२९।

अट्ठियगामं-अस्थिकग्रामं-श्रीवीरस्य प्रथमचातुर्मास्यग्रामः। भग० ६६१।

अट्ठिलग्गो-मुष्टि कृत्वा। आव० ६९७।

अट्ठिलगो-अस्थि (बीजम्)। नि० चू० प्र० ५६ आ।

अट्ठिसरक्खा-अस्थिसरजस्का-कापालिकाः। व्य० द्वि० २७३ आ।

अट्ठिसेणा-वत्सगोत्रान्तर्गतं गोत्रम्। ठाणा० ३९०।

अट्ठि-अस्थि-मज्जा। अनुत्त० ५। गद्दमज्जा। नि० चू० द्वि० १७२ अ।

अट्ठुप्पत्ती-ववहारो। नि० चू० तृ० १०१ अ।

अट्ठे-अर्थः, साध्य। भग० ३४।

अट्टेति–निवर्तते । नि० चू० द्वि० ६२ आ ।

अट्टो–अर्थित्वं च धर्मः । आव० ३४१ । अर्थः–विज्ञानम् । सूत्र० ३९८ । अर्थेन इत्यर्थो मोक्षः । उत्त० ६५ ।

अट्टियकप्पा–मध्यमजिनानां महाविदेहजिनानां वा साधवः । बृ० तृ० २५४ आ ।

अडंडिमकुदंडिमं–अदण्डिमकुदण्डिमम्, दण्डो निग्रहस्तेन निर्वृत्तं राजदेयतया व्यवस्थापितं दण्डिमं, कुदण्डः–असम्यग्निग्रहस्तेन निर्वृत्तं द्रव्यं कुदण्डिम, ते अविद्यमाने यत्र प्रमोदे सः । विपा० ६३ ।

अडडं–चतुरशीतिरडडाङ्गशतसहस्राणि । जीवा० ३४५ ।

अडडंगं–अडडाङ्ग, चतुरशीतिस्त्रुटितशतसहस्राणि । जीवा० ३४६ । संख्याविशेषः । ठाणा० ८६ । भग० ८८८ ।

अडडाङ्गः, संख्याविशेषः । सूर्य० ९१ ।

अडडाति–संख्याविशेषः । ठाणा० ८६ ।

अडडे–अडडः, संख्याविशेषः । सूर्य० ९१ । भग० २१०, २७५, ८८८ ।

अडयालं–अष्टचत्वारिंशत्, प्रशस्तं वा । जीवा० १६० । अडयालशब्दो देशीवचनत्वात् प्रशंसावाची । प्रज्ञा० ८६ । देशीशब्दः प्रशंसावाची अष्टचत्वारिंशद्भेदभिन्नविचित्रतयाकृता वनमाला येषु तानि । जै० प्र० ७६ ।

अडयालकोट्ठगरइय–अष्टचत्वारिंशद्भेदभिन्नविचित्रच्छन्दगोपुररचितानि । सम० ११८ ।

अडयालकोट्ठरइयं–अष्टचत्वारिंशत्कोष्ठकरचितम्, अष्टचत्वारिंशद्भेदभिन्नविच्छित्तिकलिताः कोष्ठकाः–अपवरका रचिताः–स्वयमेव रचनां प्राप्ता येषु तत । प्रशस्तकोष्ठकरचितं वा । जीवा० १६० ।

अडयालिय (ल)–शब्दः किल प्रशंसावाचकः । सम० ११८ ।

अडयिंगतो–देहं देसेण छिदड । व्य० प्र० १६२ अ ।

अडविणीहुत्तं–अटवीनिःक्रमम्, अरण्याभिमुखम् । उत्त० ३७५ ।

अडविमिगी–अटवीमृगी । आव० ३६२ ।

अडवी–अटवी, अटव्यो–दूरतरजननिवासस्थाना भूमय । जै० प्र० ९९ ।

अडिला–चर्मपक्षिविशेषः । जीवा० ४१ । अडिला, चर्मपक्षिविशेष । प्रज्ञा० ४९ ।

अड्डुयालित्ता–आश्रित्य, बलात्कारं कृत्वा । दश० ३८ ।

अडेइ–चडापयति, लगयति । आव० ६९० ।

अडो–रोमपक्षिविशेषः । जीवा० ४१ ।

अडोलिया–यवोनाम राजा तस्य दुहिता । बृ० प्र० १९१ अ । उंदोइयाए । बृ० प्र० १९१ अ ।

अड्डं–तिर्यग्वलितम् । जीवा० २०७ । तिर्यक् । आव० ३६० ।

अड्डपल्लाणं–लाटविषये प्रसिद्धम्, यदन्यविषये थिल्लीरिति रूढम् । जीवा० २८२ ।

अड्डुया–थंबिका । नि० चू० प्र० १६७ अ । थिल्ली । भग० ३९९ ।

अड्डवियड्डं–अर्द्धवितर्द्धम्–क्रमहीनम् । ओघ० १७७ । विप्रकीर्णम् । नि० चू० तृ० ११ अ ।

अड्डवियड्डा–अक्रमम् । ओघ० १७६ ।

अड्डिया–अड्डिका, द्वात्रिंशद्, लौकिकमप्रकरणम् । आव० ४६५ ।

अड्ढ–आढ्यम्, परिपूर्णम् । औप० १०१ ।

अड्ढ–आढ्य, धनधान्यादिभि. परिपूर्णः । भग० १२४ ।

अड्ढग–आढ्य, सम्पन्नः । आव० २६४ ।

अड्ढरत्त–अर्द्धरात्र, निशीथः । दश० १०४ । आर्धरात्रिक. । व्य० द्वि० २५५ आ ।

अड्ढाइं–धनपन्ति । ठाणा० ४२१ ।

अड्ढाइज्जा–अर्द्धतृतीयानि । आव० ३९ ।

अड्ढायति–आद्रियते । आव० ८४८ ।

अड्ढेऊया–अवष्टभ्य । आव० ६२० ।

अड्ढेज्ज–आढ्यः–धनपतिरयं सुतकारणत्वादमुं अथवा आढ्यं क्रियमाणा इज्या–पूज्या आशंसया । ठाणा० ४८८ ।

अड्ढोअंति–अर्पयन्त्या । नि० चू० प्र० ११० आ ।

अड्ढोअंती–अर्धापयन्ति. । बृ० द्वि० १९ अ ।

अड्ढोरुगो–कटिविभागाच्छादक निर्ग्रन्थ्युपकरणम् । ओघ० २०९ । निर्ग्रन्थ्युपकरणविशेषः । नि० चू० प्र० १७९ आ ।

अणं–कर्म । दश० चू० १४९ । पापम् । विशे० ११०९ ।

अणं–अणति–गच्छति नानु नानु गतौ योनिष्वनेनेति पापम्, सावद्ययोगो वा । आव० ३७३ । कर्म । आचा० १४७ । ऋणम्, कर्म । दश० २६२ ।

अणंगकीडा–अनङ्गक्रीडा, अनङ्ग–कुचकक्षोरूवदनादि, मोहोदयादुत्पन्नतीव्रमैथुनाध्यवसायतया कामो वा, तेन सम्भिन्न

वा क्रीडा कृतकृत्यस्यापि स्वलिङ्गेनाहार्यै- काष्ठफलपुस्तमृत्तिकाचर्मादिघटितप्रजननैर्योषिद्वाच्यप्रदेशासेवनम् । आव० ८२५ । कुचकक्षोरुवदनादिमोहोदयोद्भूतस्तीव्रो मैथुनाध्यवसायाख्यः कामः । आव० ८२५ । मैथुनाद्यावर्यक्रियासम्प्राप्तकामस्य चतुर्दशो भेदः । दश० १९४ ।

अणंगपडिसेवणी-मैथुने प्रधानमङ्गं मेहनं भगश्च तत्प्रतिषेधोऽनङ्गं तेनानङ्गेनाहार्यलिङ्गादिना अनङ्गे वा-मुखादौ प्रतिसेवाऽस्ति यस्याः अनङ्गं वा-काममपरापरपुरुषसंपर्कतोऽतिशयेन प्रतिषेवत इत्येवंशीलाऽनङ्गप्रतिषेविणी । ठाणा० ३११ ।

अणंगसेण-सुवर्णकारो, अनङ्गनिमग्नो ह्यासन् । नि० चू० तृ० ५ अ ।

अणंगसेणा-अनङ्गसेना, गणिकामुख्या । अन्त० ७ ।

अणंगसेणो-चम्पावास्तव्यः स्वर्णकृत्, हासाप्रहासाप्रार्थकः । वृ० द्वि० ४४ अ ।

अणगरति-अनङ्गक्रीडा । वृ० तृ० १०७ आ ।

अणंतं-अनन्तम् । विशे० ३९६ । केवलात्मनाऽनन्तत्वात् । जीवा० २५६ । अनन्त, अनन्तार्थविषयज्ञानस्वरूपत्वादन्तरहितः । भग० ■, सम० ५ । अपरिमाणम् । भग० ६६ । अनन्तकर्मपुद्गलनिर्वृत्तत्वात्तदनन्तमिति अनन्तानां वा भवानां हेतुर्यत्तदनन्तम् । ओघ० १२८ ।

अणंतकायं-मूलकादिकम् । प्रज्ञा० २५९ ।

अणंतकिरिया-अनन्तक्रिया, परम्परामुक्तिफला । उत्त० ५८३ ।

अणंतखुत्तो-अनन्तकृत्वः, अनन्तवारान् । भग० १३० ।

अणंतगं-वस्त्रादियन्त्रम् । ओघ० ३४ ।

अणंतगमजुत्त-अनन्ता-अपर्यवसिता गम्यते वस्तुस्तत्त्व मेभिरिति गमा-वस्तुपरिच्छेदप्रकारा नामादयस्तैर्युक्तानि-अविनाश्यनन्तगमयुक्तानि । उत्त० ३४२ ।

अणंतगुणपरिहाणीए - अनन्तगुणपरिहाणि, अनन्तगुणानां परिहाणिः । ज० प्र० १२९ ।

अणंतगुणविसिट्ठतरा - अनन्तगुणविशिष्टतरा । सूर्य० २९४ ।

अणंतघाई-अनन्तघातिन-अनन्ते ज्ञानदर्शने हन्तु शीलं येषां ते । उत्त० ५८० ।

अणंतजिणेण-रागद्वेषजेता, ज्ञानी निग्रन्थः । आव० ४३० ।

अणंतजीविया-अनंतजीविका-पनकादयः । ठाणा० १५७ ।

अणंतणाणी-अनन्तज्ञानी, केवली । आव० ६६३ ।

अणंतते-अनन्तकम्-एकर्थिकं क्षेत्रम् । ठाणा० १४७ ।

अणंतमिस्सिया - अनन्तमिश्रिता, मूलकादिरनन्तकायं तस्यैव सत्कैः परिपाण्डुपत्रैरन्येन वा केनचित्प्रत्येकवनस्पतिना मिश्रमवलोक्य सर्वोऽप्येषोऽनन्तकायिक इति वदतो भाषा । प्रज्ञा० २५९ । ठाणा० ४९० ।

अणंतमीसग-अनन्तमिश्रा, सत्यामृषाभाषाभेद । दश० २०९ ।

अणंतयं-अनंतकम्-जिनम् । सम० १५३ ।

अणंतरं-अनन्तरम्, बहिर्भूतम् । सूर्य० ३४ । सम० १२८ ।

अणंतरगंठिया-अनन्तरग्रथिता, अनन्तरं व्यवस्थापितैः ग्रन्थिभिः सह ग्रथिता (आलिका) । भग० ७१४ ।

अणंतरपज्जत्ता-अनन्तरपर्याप्तका-प्रथमसमयपर्याप्तकाः । ठाणा० ५१४ ।

अणंतरपुरक्खडे-अनन्तरपुरस्कृतः, अनन्तर-अव्यवधानेन पुरस्कृत-अग्रेकृतो य स । सूर्य० ९० ।

अणंतरबंधे-येषां पुद्गलानां बद्धानां सतामनन्तराः समया वर्तन्ते तेषामनन्तरबन्ध । भग० ७९१ ।

अणंतरहिता-अन्ते ठिता-अन्ता न अन्ता-अनंता सचित्ता । नि० चू० प्र० २५५ आ । नि० चू० द्वि० ८७ आ ।

अणंतरहियाए - अनन्तर्हि(रहि)तया - अव्यवहितया । आचा० ३३७ ।

अणंतरा-अनन्तरो, एष्यानीतौ । आव० ७६९ ।

अणंतरिया-अनन्तरिका, अन्तरस्य विच्छेदस्य करणम् । भग० ७२० ।

अणंतरो-अनन्तर-वर्तमान समय । ठाणा० ५१४ ।

अणंतरोगाढं-अनन्तरावगाढम्, येषु प्रदेशेष्वात्मावगाढस्तेष्वेव यदवगाढं तदनन्तरावगाढं तस्मादनन्तरावगाढम् । भग० ७३ । अव्यवधानेनावगाढम् । जीवा० ३० ।

अणंतरोगाढे-उत्पत्त्यनन्तरसमयावगाढत्वम् । भग० ९३७ ।

अणंतरोववण्णगा-उपप(न्ना)त्तिप्रथमसमयवर्तिन । प्रज्ञा० ३०४ ।

अणंतवत्तियाणुप्पेहा - अनन्तवर्तितानुप्रेक्षा । ठाणा० १८७ । भवसन्तानस्यानन्तवृत्तितानुचिन्तनम् । औप० ४५ ।

अणंतविजए-आगामिन्यां उत्सर्पिण्यां भरते चतुर्विंशे जिननाम। सम० १५४। ऐरवते भविष्यज्जिनः। सम० १५४।
अणंतवीरिय-अनन्तवीर्यः। आव० ३९२।
अणंतसंजयं-एकेन्द्रियादिषु सम्यग् यतः। आचा० ४२९।
अणंतसंसारा-अपर्यवसितसंसारा अभव्याः। उत्त० ७१३।
अणंतसंसारवद्धणा-अनन्तसंसारवर्द्धनः। उत्त० ३३०।
अणंतसेणे-अनन्तसेनः, अन्तकृद्दशानां तृतीयवर्गस्य द्वितीयाध्ययनम्। अन्त० ३। भरतेऽतीतोत्सर्पिणीकुलकरः। सम० १५०। ठाणा० ५१८।
अणंतसो-अनन्तशः, अविच्छेदेन। सूत्र० ३४।
अणंतहियं-अनन्तहितम्-मोक्षः। दश० २५०।
अणंता-तित्थकरा। बृ० प्र० २२४ आ।
अणंताणुबंधी-अनन्तानुबन्धी, अनन्तं संसारमनुबध्नन्तीत्येवंशीलः। प्रज्ञा० ४६८। षोडशकषाये प्रथमो भेदः। सम० ३१, आचा० ९१। अनन्तं भवं अविच्छिन्नं करोति, अनन्तो वाऽनुबन्धो यस्य। ठाणा० १९४।
अणंतियं-अनन्तिकम्, नजोऽल्पार्थत्वान्नात्यन्तमन्तिकम-दूरासन्नमित्यर्थः। भग० २१७। अनाशकम्। भग० २१७।
अणंतेहिं-अनादित्वात् अनन्ताः। भग० ६१०।
अणंतो-अनन्तः अनन्तकर्मांशजयात्, अनन्तानि वा ज्ञानादीन्यस्येति, चतुर्दशो जिनः, रत्नखचितमनन्तं दामस्वप्ने जनन्या दृष्टमतः। आव० ५०४। अपर्यवसितः। उत्त० २१३। अनन्तानामेकैकं शरीरम्। ओघ० ३४।
अणंधो-राजविशेषः। नि० चू० द्वि० ४२ आ।
अणंबिलं-अनाम्लम्-स्वस्वादादचलितम्। आचा० ३४६।
अण-अणाः, अणन्ति-शब्दयन्ति अविकलहेतुत्वेनासातवेदनारकायायुष्कमिति, अनन्तानुबन्धिनः क्रोधादयो वा। आव० ८१। नारकायायुष्कं च शब्दयन्त्याकारयन्तीत्यणाः, अनाः। विशे० ५६१।
अणइक्कमणाए-अनतिक्रमणं, भयमयोगानामनुल्लङ्घनम्। उत्त० ५४३।
अणइक्खा-अनाख्याता। (गणि०)
अणइचत्तियं-अनतिचत्य-यथावस्थितं वस्त्वामामिहितं तथाऽनतिक्रम्य। आचा० २५६।
अणइवरं-अनतिवरं, अविद्यमानद्वामतया प्रधानं न विद्यतेऽतिवरं यस्मात्तत्। औप० ५४।
अणईइपत्तो-अनीतिपत्रः, न विद्यते ईतिः-गड्डरिकादिरूपेति रहितपत्रः। जीवा० १८८।
अणकरो-ऋणकरः, ऋणं-पापं करोतीति, प्राणवधस्य चतुर्विंशतितमः पर्यायः। प्रश्न० ६।
अणक्को-अणकः, चिलातदेशवासी म्लेच्छविशेषः। प्रश्न० १४।
अणक्खित्त-परीक्षितः। नि० चू० द्वि० ८१ आ।
अणगारं-अनगारः, सूत्रकृताङ्गे पञ्चममध्ययनम्। आव० ६५८। साधुः। दश० ६२। सूत्रकृताङ्गस्यैकविंशामध्ययनम्। उत्त० ६१६। चतुर्दशशतके नवमोद्देशकः। भग० ६३०। द्रव्यतो भावतश्चाविद्यमानागारः। दश० १५९। न विद्यतेऽगारं गृहमेषामित्यनगाराः-यतयः। आचा० ३६। तीर्थिकप्रव्रजिताः। आचा० ३०९। अनगारो-यतिः। उत्त० ५७८। साधुः। आव० ३२९।
अणगारमग्गो-उत्तराध्ययने पञ्चत्रिंशत्तमाध्ययनम्। सम० ६४।
अणगारसुयं-सूत्रकृताङ्गे एकविंशतितमाध्ययनम्। सम० ४२।
अणगारस्सभिक्खू-अनगारास्वभिक्षुः, अस्वैव भिक्षुरस्वभिक्षुः-आत्मायत्तजीवनादनात्मीकृतत्वेनानात्मीयानेव गृहिणोऽसादि भिक्षत इतिकृत्वा, ■ च यतिरेव, ततोऽनगारश्चासावस्वभिक्षुश्च। उत्त० १९।
अणगारियं-अनगारिके (अनगारित्वे वा), अनगारेषु-भावभिक्षुषु भवं अनुष्ठानम्। उत्त० ३३९।
अणगारे-अनगारः, न विद्यते अगारं-गृहं यस्यासौ साधुः। जीवा० १८२। भावितात्मा लब्धिसामर्थ्यात्। भग० ५५६। न विद्यते अगारं-गृहं द्रव्यतो भावतश्च यस्यासौ-संयत इति। प्रज्ञा० ३०३। न विद्यते अगारं-गृहं यस्य सः। सूर्य० ४। अगाः-वृक्षास्तैर्निष्पन्नमगारं तत् विद्यते स्वकर्तृ-हपाशः। आचा० ४०३।
अणगारो-ऋणकारः, ऋणमिव कालान्तरक्लेशानुभवहेतुतया ऋणम्-अष्टप्रकारं कर्म तत् करोतीति, तथा तथा गुरुवचनविपरीतप्रवृत्तिभिरुपचिनोतीति। उत्त० ३०।
अणगालो-दुष्कालः। बृ० तृ० २३ अ।
अणघा-निरोगा। नि० चू० प्र० ८० अ।
अणथामिंभं-अनर्थामिनम्। ओघ० १०९।

अणब्बाविंतं-वस्त्रमात्मा वा यत्र न नर्तितः। ठाणा० ३६१। प्रस्फोटनं प्रमार्जनं वा। उत्त० ५४०।

अणच्चासादणाविणए-आशातना तन्निषेधरूपो विनयो-ऽनत्याशातनाविनय.। भग० ९२२।

अणज्जं – अनार्यम. अनार्यवचनत्वात. अधर्मद्वारस्य तृतीयं नाम। प्रश्न० २६।

अणज्जधम्मे-अनार्यधर्म, क्रूरकर्मकारी। सूत्र० ३५८।

अणज्जभावे-अनार्यभाव. क्रोधादिमान्। ठाणा० २०९।

अणज्जे-अन्याय्य., न न्यायोपेतः। प्रश्न० ५।

अणज्जो-अनार्यः, म्लेच्छचेष्टितः। दश० २७५। पापकर्मा। प्रश्न० ४०।

अणज्झाए-अकाले, अस्वाध्यायिके वा। नि० चू० प्र० १० आ।

अणट्टा-अनार्त -आर्तध्यानविकल०। उत्त० ४४८। सकल-दोषविगमतोऽबाधिता। उत्त० ४४९।

अणट्ठा-अनर्थक्रिया, अनर्थाय यत्करणम्, क्रियाया द्वितीयो भेद०। आव० ६४८।

अणट्ठादंडे-अर्थविलक्षणो दण्डः। सम० २५।

अणणुगामी-अननुगामुकः-स्थितप्रदीपवत। आव० ४२।

अणण्णं-अनन्यः-ज्ञानादिक०। आचा० १६३।

अणण्हकर – 'स्नु-प्रस्रवण' इति वचनात आस्नव – आश्रवः कर्मोपादान तत्करणशील आस्नवकरस्तन्निषेधा-दनास्नवकर –प्राणातिपा॰ दाश्रववर्जित इत्यर्थ। ठाणा० ४०९।

अणण्हय-अनाश्रव। आव० २८०।

अणण्हयत्तं-अनंहस्करत्वम्-अविद्यमानकर्मत्वं। उत्त० ५८९।

अणण्हयफले-अनाश्रवफल, संयम। भग० ११८।

अणति-प्रज्ञापयति। उत्त० १२८। शब्दयति। आव० ७८८। आदत्ते-गृह्णाति। नि० चू० द्वि० ९ आ।

अणतिक्कमणिज्ज-अनतिक्रमणीयम्, अचालनीयम्। भग० १३५।

अणत्तट्ठिए-अनात्मार्थिक, नात्मार्थ एव यस्यास्यसौ पर-मार्थकारी। प्रश्न० ११३।

अणत्तट्ठियं-अस्वीकृतम्। आचा० ३२०।

अणत्तपन्ने-अनात्मप्रज्ञ०-नात्मने हिता प्रज्ञा येषां ते। आचा० २३४।

अणत्ते-ऋणपीडितः। ठाणा० १६५।

अणत्थको-अनर्थक:, परमार्थतया निरर्थक., परिग्रह-स्याष्टाविंशतितमं नाम। प्रश्न० ९३।

अणत्थदंडे-अनर्थदण्डः, अप्रयोजनदण्डः। आव० ८३०।

अणत्थमियसंकप्पे – सूर्यानस्तगमयभोजनसंकल्पवान्। बृ० तृ० १७९ अ।

अणत्थो-अनर्थ अपायः। प्रश्न० ९२। अनर्थहेतुत्वात् परिग्रहस्यैकविंशतितमं नाम। प्रश्न० ९३।

अणद्दिट्ठं-अनादिष्टं-अविशेषितम्। बृ० तृ० ६६ अ।

अणन्नदंसी-अनन्यदर्शी-यथावस्थितपदार्थद्रष्टा, भगवदुप-देशादन्यत्र न रमते। आचा० १४५।

अणन्नपरमं-अनन्यपरम -संयमः। आचा० १६६।

अणन्नारामे – अनन्यारामो-मोक्षमार्गादन्यत्र न रमते। आचा० १४५।

अणपज्झो-अजाणमाणो। नि० चू० प्र० ११० अ।

अणपन्निय-अवान्तरव्यन्तरभेदः। जीवा० १०७।

अणप्पगंथो-अनल्पग्रन्थ (अनर्घ्यग्रन्थ) महागम अवि-द्यमानो वाऽऽत्मन सम्बन्धी ग्रन्थो-हिरण्यादिर्यस्य स०। भावधनयुक्त। औप० ३७।

अणप्पज्झ-(देशी) अनात्मवश.। बृ० द्वि० २०९ अ।

अणप्पज्झो-अनात्मवश। बृ० तृ० २५८ अ।

अणप्पियं-अनर्पितविषयविभागम्। बृ० तृ० ११० अ। अविशेषितम्। ठाणा० ४८१।

अणप्फिडंतं-अचलन्। नि० चू० द्वि० ७७ अ।

अणयल्लो-अनवल, बलवानुन्नमणं। प्रश्न० ३०।

अणब्भुवगओ-अनभ्युपगत, श्रुतमन्यदाऽनुपगम्यकोऽनि-वेदितात्मेत्यर्थ। विशे० ६००।

अणभक्खक:-कर्म-देय द्रव्य भक्षति-न ददाति य स। प्रश्न० ४६।

अणभिक्कंत-अनभिक्रान्त, अनतिलङ्घित। आचा० ३९३। नाभिक्रान्ता जीवितादनभिक्रान्ता गच्छतीत्यर्थं। आचा० ३०३।

अणभिगताणं-अगणितानां। बृ० प्र० १३० अ।

अणभिग्गहिओ – अविद्यमानमतीति-आभिमुख्येन गृहीतं ग्रहणं-ज्ञानमस्येत्यनभिगृहीत. – अनभिज्ञ। उत्त० ५६९। अनङ्गीकृता। उत्त० ५६५।

अणभिग्गहिय–न विद्यते आभिमुख्येनोपादेयतया गृहीतं ग्रहणमस्येत्यनभिगृहीत । प्रज्ञा० ६० । अनिश्चितमश्चिभिर्निर्गमभावात् । ठाणा० ३०९ ।

अणभिग्गहियमिच्छादंसणवत्तिया – अनभिगृहीतमिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी, जेहिं न किंचि कुतित्थियमयं पडिवण्णं । आव० ६१२ ।

अणभिग्गहिया–अनभिगृहीता, अनभिग्रहा यत्र न प्रतिनियतार्थावधारण सा भाषा । प्रज्ञा० २५६ । असत्यमृषा भाषाभेद । दश० २१० । अर्थानभिग्रहेण योच्यते । भग० ५०० ।

अणभिओग–अनभियोग', इच्छा । आव० ६६८ ।

अणभिहियं–अनभिहितं, अनुपदिष्ट स्वसिद्धान्ते सूत्रदोषविशेष । आव० ३७९ ।

अणभिज्ञय–अस्थिरे, अभिज्ञे । (मर०)

अणराए–रण्णो कालगते–जिभए वि जाव णे राया ठविजति । नि० चू० तृ० ७१ अ ।

अणरायं–राजयुवराजोभयाभिषेकरहित राज्यम् । बृ० द्वि० ८० अ । मते रायाणे जाव मूलराया युवराया य एते दोवि अणभिसित्ता । नि० चू० द्वि० १० आ ।

अणलगिरि-अनलगिरि । आव० २९९ ।

अणला – अपर्याप्ता, दीक्षापालनेऽसमर्था । बृ० द्वि० २८७ आ ।

अणलो–अनल, असमर्थं । आव० ७९९ । वेयावच्च प्रति गुते अत्थे अभिगमे परिहरणे । नि० चू० द्वि० ४९ आ ।

अणाहिसंता–अनाश्यन्त । ओघ० ९७ ।

अणवः–स्वल्पा । उत्त० ४२० ।

अणवं–ऋणवान् । सूर्य० १४६ । जं० प्र० ४९१ ।

अणवकंखवत्तिया–अनवकाङ्क्षाप्रत्ययिकी, क्रियाक्रिया मध्ये पञ्चदशी । आव० ६१२ । अनवकाङ्क्षा–स्वशरीराद्यनपेक्षत्वं सैव प्रत्ययो यस्या सा । ठाणा० ४३ । इहलोकपरलोकापायानपेक्षस्येति । ठाणा० ३१० ।

अणवगल्ल–अनवकल्प, जरसा अनभिभूत । जम्बू० २७६ । जं० प्र० ९० ।

अणवज्ज – अनवद्यम्, सामायिकस्यनामपर्याय । आव० ४७४ । सामायिकम् । आव० ३६४ । पापानुबन्धरहितम् । दश० ११५ ।

अणवज्जय–अणवज्यता, पापवर्ज्यता । आव० ३७३ ।

अणवज्जुत्तो–तत्पूर्व, अपुत्रभूत. । आव० ७५८ ।

अणवठ्ठप्पा–अनवस्थाप्य –नावस्थाप्यते-नाधिक्रियते । ठाणा० १६४ । कृततपसो व्रतारोपणम् । भग० ९२० ।

अणवट्ठप्पारिहे–कृततपसो व्रतारोपणम् । भग० ९२० ।

अणवट्ठया–अनवस्थाप्यता, हस्तताडादिप्रदानदोषादुद्धतरपरिणामत्वाद् व्रतेषु नावस्थाप्यते इति अनवस्थाप्य , तद्भाव । आव० ७६४ । ठाणा० २०० ।

अणवट्ठिओ–अनवस्थित । बृ० प्र० १२५ अ । –

अणवट्ठियं–अनवस्थित, सन्ततम । जीवा० ३४५ । अनियतप्रमाणम् । सूर्य० ८७ ।

अणवट्ठिया–नावश्यभाविन । ठाणा० ३७४ ।

अणवट्ठिया–अनवस्थिता–येन पुन प्रतिसेवितेनोत्थापनाया अप्ययोग्य सन् कंचित्काल न व्रतेषु स्थाप्यते यावत्तावत् विशिष्टं तपश्चीर्ण भवति पश्चाच्च चीर्णतपास्तद्दोषोपरतो व्रतेषु स्थाप्यते । व्य० प्र० १४ आ ।

अणवत्था – अनवस्था, यथयथेच्छयाचरणा प्रायश्चित न दीयते क्रियते वा सा । ओघ० १७० ।

अणवदग्गं–अनवदग्रम्, अनन्तम् । प्रश्न० ६३ । ठाणा० १२० । औप० ४८ । अपर्यवसानम् । दश० १७९ ।

अणवन्निय – अणपन्निक , व्यन्तरनिकायानामुपरिवर्तिनो व्यन्तरजातिविशेषा । प्रश्न० ६९ । वाणमन्तरविशेष । प्रज्ञा० ९९ ।

अणवयक्खिमाणा–अनपेक्ष्य पश्चाद्भागमनवलोक्य । भग० ३१० ।

अणवयग्गा–अनवनताग्र-अपर्यन्तम् । ठाणा० ४६ । अनन्त अपार, अनवनताग्र–अनवनत–अनामका अग्र–अन्तो यस्य तत् । अनवगताग्र–अनवगत–अपरिच्छिन्न अग्र–परिमाण यस्य तत् । भग० ३० । कालतोऽपरिमाणम् । व्य० प्र० २७५ अ ।

अणवयग्गा–अनवदग्र, अनवग्रच्छा । उत्त० ५८९ ।

अणविक्खया–अनपेक्षा (गणि०)

अणसणं–अनशन, भोजननिरोध । औप० ३७ । बाह्यतपो भेद । उत्त० ६०० ।

अणसण–अनशनम्, आहारत्यागः। दश० २६। भग० ९२१।

अणसणा–अनशनम्, व्रतविशेषः, उपवासः। भग० १२८।

अणसायणा–अनाशातना, अहीलना। दश० २४१। मनोवाक्कायैरप्रतीपप्रवर्तनम्। उत्त० १७।

अणसिओ–अनशितः, न अशितः–भिक्षाप्रदानानभिज्ञेन लोकेनाभ्यर्हितः। आव० १४४।

अणहं–अनघं, अक्षतम्। सूर्य० २९२। अणहशब्दोऽक्षतपर्यायो देश्यस्तेनाणहं–अक्षतं। जं० प्र० २२१।

अणहवीया–अविणट्ठवीया। नि० चू० प्र० ८० अ।

अणहारए–ऋणधारकः। विपा० ७२।

अणहारेणं–स्वदेशजाहाराभावेनेति। ठाणा० ५४।

अणहिअपरमत्था–अनधिगतपरमार्थाः। (गणि०)

अणहिकडा–अनधिकृता–तल्लक्षणायोगतस्तत्रानन्तर्भाविनी। प्रज्ञा० २४८।

अणहियासिया–अनध्यासिनी। आव० ४२८।

अणहियासी–अनधिकासिकाः, सञ्ज्ञावेगोत्पीडितः सन् आयाति सा। ओघ० २००।

अणहे–अनघः, नास्याघमस्तीति, निरवद्यानुष्ठायी। सूत्र० ६९।

अणहो–अनघः, अक्षतशरीरः। प्रश्न० ११५।

अणाइण्णं–पणगपरिहाणीक्रमेण पत्तं। नि० चू० द्वि० १५७ अ।

अणाइण्णा–अणासेविय। नि० चू० द्वि० १४४ आ।

अणाइन्नं–अनाकीर्णं–असंकुलः। उत्त० ४३८।

अणाइयं–अणातीतं, अनादिकं, अज्ञातिकं, ऋणातीतं अणातीतं वा, अविद्यमानादिकं, अविद्यमानस्वजनं, ऋणं वाऽतीतं ऋणजन्यदुःस्थतातिक्रान्तम्, दुःस्थतानिमित्ततयेति ऋणातीतं, अणं वा अणकं–पापमतिशयेनेतं–गतमणातीतम्। भग० ३५। आ–समन्तादतीव इतो–गतोऽनाद्यनन्ते संसारे आतीतः, न आतीत अनातीतः, अनादत्तो वा संसारो येन स तथा, संसारार्णवपारगामी। आचा० २८६।

अणाइत्तो–अनुपयुक्तः। (महाप्र०)

अणाइयंतो–विवादानतिक्रामन्। व्य० प्र० १० अ।

अणाइले–अनाविलः, अदीनस्य चतुर्थं नाम। अन्न० २२। अकलुषः। प्रश्न० १११। अकलुषः, शुद्धस्वभावः। प्रश्न० १३६।

अणाइसेसि–अनतिशयी, अवध्याद्यतिशयरहितः। आव० २४०।

अणाई–अनादिः, नास्यादिरस्तीति संसारः। सूत्र० ३४१।

अणाउट्टी–अनाकुट्टिः। आव० ३७३।

अणाउत्तं–असावधानता। औप० ४२। अनुपयुक्तः। ठाणा० ४३।

अणाउत्तआइयणया–अनायुक्तवस्त्रादिग्रहणता। ठाणा० ४३।

अणाउत्तपमज्जणया–अनायुक्तपात्रादिप्रमार्जनता। ठाणा० ४३।

अणाउत्तो–अनाकुलः–अक्षणिकता। वृ० तृ० ४४ आ।

अणाउल–अनाकुलः, क्रोधादिरहितः। दश० १६६।

अणाउले–अनाकुलः। आचा० ४२४।

अणाउलो–अनाकुलः। आव० ४०४।

अणाए–अनया। आव० ३९९।

अणाएसे–अनादेशः, न आदेशः, सामान्यम्। उत्त० ३३।

अणागई–अनागतिः, सिद्धिः, अशेषकर्मच्युतिरूपा लोकाग्राकाशदेशस्थानरूपा वा। सूत्र० २२३।

अणागतं–अनागतम्, अनागतकरणात्, पर्युषणादावाचार्यादिवैयावृत्त्यकरणान्तरायसद्भावादारत एव तत्तपःकरणम्। आव० ८४०, ठाणा० ४९८।

अणागमणधम्मिणो–अनागमनधर्माणः–यस्मिन् मनुष्यलोके अनागमनं धर्मो येषां ते, न पुनरिहं प्रत्यागमनेप्सवः। आचा० २४३।

अणागमो–अनागमः–अनवसरः। आचा० १२२।

अणागयं–अनागतम्, एष्यत्कालम्। आव० ५०९।

अणागय–अनागताम्–आयत्याम्। आव० ५०९। अनागतं, अनागतकरणादनागतम्। भग० २५६।

अणागलिय–अनिर्गलितः–अनिवारितोऽनाकलितः। भग० ६७३।

अणागारं–अनाकारम्, अविद्यमानाकारम्। आव० ८४०। ठाणा० ४९८। अविद्यमानाकारं–यदिविशिष्टप्रयोजनसम्भवाभावे कान्तारदुर्भिक्षादौ महत्तराद्याकारमनुच्चारयद्भिर्विधीयते तदनाकारम्। भग० २९६।

अणागारपासणया–अनाकारपश्यत्ता-चिन्त्यमानायां प्रकृष्टं परिस्फुटरूपमीक्षणमवसेयम् । प्रज्ञा० ५३० ।

अणागारो–अनाकारः, यथोक्ताकारविकलः । जीवा० १८ । सामान्यग्राही । भग० ७३ ।

अणाजीवी–अनाशंसी । नि० चू० प्र० १८ अ । अनाजीविको–निःस्पृहः । दश० ।१०६ । ।

अणाढिया–अनादृति. । आव० ९५ । अपराधः । वृ० प्र० ३० आ ।

अणाढायमाणे–अनाद्रियमाणः–सखडिमनादरयन् । आचा० ३११ ।

अणाढिमस्स–अनादृतनाम्नः जम्बूद्वीपाधिपतेः ।जं० प्र० ३३४, जीवा० ३०६ ।

अणाढिउ–जम्बूवृक्षस्थो देवः । ठाणा० ६९ ।

अणाढियं – अनादृतम् , अनादरे सम्भ्रमरहितम् , कृतिकर्मणि प्रथमदोषः । आव० ५४३ ।

अणाढिय–अनादृतः, जम्बूद्वीपाधिपतिर्व्यन्तरसुरः । उत्त० ३५२ । अनादृताद्–अनादराद्वा सा अनादृता, शिथिलस्य या सा । ठाणा० ४७४ ।

अणाणत्ता – अनानात्वाः–नानात्ववर्जिता येष्वेवाधारभूताकाशप्रदेशेष्वेके तेष्वेवैतरेऽपि । भग० ९६१ । नानात्ववर्जिताः देशभेदेनालक्षितनानात्वाः । प्रज्ञा० ७४ ।

अणाणाए–अनाज्ञया, स्वैरिण्या बुद्ध्या । आचा० ११३ । स्वमनीषिकाचरितोऽनाचारः । आचा० २२७ ।

अणाणुकित्ती–जो एवं ण कथयति । नि० चू० प्र० ३३३ आ ।

अणाणुगामिते–अवधिज्ञानस्य द्वितीयो भेदः । ठाणा ३७० ।

अणाणुगामियत्ताते–अननुगामिकत्वाय–अशुभानुबन्धाय । ठाणा० १४९, ३५८ ।

अणाणुपुव्वी–अनानुपूर्वी, यत्र पूर्वपश्चाद्विभागो नास्ति । भग० ८० । अत्थग्गहणाईण पदे अप्पत्तो । नि० चू० द्वि० ५३ अ । अनियतक्रमानुपूर्वी । ठाणा० ४ । यथोक्तप्रकारद्वयातिरिक्तस्वरूपा । अनु० ७३ ।

अणाणुबंधि–न विद्यतेऽनुबन्धः–मात्सर्यप्रकर्षोत्कटादीनां यत्र तदननुबन्धि । ठाणा० ३६१ ।

अणादिट्ठी–अनादृष्टिः, अन्तकृद्दशानां तृतीयवर्गस्य त्रयोदशमध्ययनम् । अन्त० ३ ।

अणादीओ–अणादिकः, अणं–पापं कर्म आदिः–कारणं यस्य सः । ऋणातीतः, ऋणं–अधर्मेण न देयं द्रव्यं तदतीतोऽतिदुरन्तत्वेनातिक्रान्तः । प्रश्न० ४ । अनादिकः, प्रवाहापेक्षयाऽऽदिविरहितः । प्रश्न० ४ ।

अणादीयं–नास्त्यादिरस्येत्यनादिकं । ठाणा० ४४ ।

अणादेज्ज–अनादेयम्–यदुदयवशादुपपन्नमपि ब्रुवाणो नोपादेयवचनो भवति, नाप्युपक्रियमाणोऽपि जनस्तस्याभ्युत्थानादि समाचरति । प्रज्ञा० ४७५ ।

अणापुच्छा–अनापृच्छा । आव० १९८ ।

अणाबाहं–अनाबाधकत्वं वेदनाभाववत्वत् । उत्त० ५९० ।

अणाबाहि–अनाबाधः–मोक्षसुखम् । ठाणा० ४८८ ।

अणाभिगता–अगहियसुत्तत्था । नि० चू० तृ० १४३ अ ।

अणाभिडंतो–अस्पृशन् । नि० चू० प्र० १८७ अ ।

अणाभोगं–अनाभोगम् , अतिचारविशेषः । आव० ५६४ । विस्मृतिः । ठाणा० ४८५ ।

अणाभोगनिव्वत्तिए – अनाभोगनिर्वर्तितः, यदा त्वेवमेव तथाविधमुहूर्तवशाद्गुणदोषविचारणाशून्यः परवशीभूय कोपं कुरुते तदा सकोपः । प्रज्ञा० २९१ ।

अणाभोगबकुसो – अनाभोगबकुशः, योऽनाभोगेनाज्ञानात् करोति सः, बकुशस्य द्वितीयो भेदः । उत्त० २५६ । सहसाकारी । ठाणा० ३३७ ।

अणाभोगवत्तिया – अनाभोगप्रत्ययिकी, विंशतिक्रियामध्ये चतुर्दशी । आव० ६१२ । अनाभोगेन पात्राद्यादद्तो निक्षिपतो वा । ठाणा० ३१७ । अनाभोग–अज्ञाने प्रत्ययो–निमित्तं यस्याः सा । ठाणा० ४३ ।

अणाभोगे–अनाभोग–अज्ञानम् । भग० ९१९ । एकान्तविस्मरणम् । व्य० द्वि० ३३२ आ ।

अणाभोगो–अनाभोगः, अत्यन्तविस्मृतिः । आव० ८५० । नि० चू० प्र० २९ आ । अज्ञानं । नि० चू० प्र० १४७ आ । विस्मृतिः । आव० ८४८ ।

अणायगो–अनायकः, अन्यो न विद्यते नायकोऽस्येति अनायकः–स्वयम्प्रमुखश्चक्रवर्त्यादि । सूत्र० ६१ । अविद्यमाननायको राजा । मम० ५३ ।

अणायण–अनायतनम् , विरुद्धस्थानम् । दश० २०६ । अस्थानम् , वेश्यागमनादि । दश० १९९ ।

अणायतणं-अनायतनं, साधूनामनाश्रयः। प्रश्न० १३८। नि० चू० प्र० ११६ अ। स्त्रीपशुपण्डकसंसक्तं स्थानम्। ओघ० १२।

अणाययणं-पशुपक्षिमद्गृहं। बृ० तृ० १९५ आ।

अणाययण – स्त्रीपशुपण्डकसंसक्तगृहवर्जनं। नि० चू० सू० २५ आ।

अणायरिया-अनार्या-अर्द्धपञ्चविंशजनपदबाह्यानि। आचा० ३७७।

अणायवेतियं-छायायाम्। नि० चू० द्वि० ७६ आ।

अणाया-अनात्मा घटादिपदार्थ। सम० ५।

अणायारं-अनाचारः, सावद्ययोगः। दश० २३३।

अणायारो-अनाचारः। आव० ७७८। गिलिते सति आधाकर्मणि दोषविशेषः, ग्रासक्षेपनोरक्षेपोत्तरकालम्। आव० ५७६। व्यभिचारः। आव० ५७८। आचारस्य साध्वाचारस्याभावः परिभोगतो ध्वंसः। व्य० प्र० ९० अ।

अणारद्धं-अनारब्धम्, अनाचीर्णम्। आचा० १४८।

अणारिओ-अनार्य. म्लेच्छादिः। प्रश्न० ५। क्रूरकर्माणि। आचा० १८६।

अणारिय-आचार्य मुक्त्वा। बृ० प्र० २४५ अ। म्लेच्छाः। ठाणा० ३०९।

अणारिया-कामकहा। नि० चू० प्र० २५८ अ। अनार्य – क्षेत्रभाषाकर्मभिर्बहिष्कृतः। सूत्र० ३९३। उत्त० ३५८। अनार्यः-न आर्यः, अज्ञानावृततरवादमदनुयायी। सूत्र० ३३।

अणारोहए-अनारोहक., योधवर्जितः। भग० ३२२।

अणालावे-अनालापः-कुत्सित आलापः। ठाणा० ४०७।

अणालिओ-अचेष्टा। आव० ३७०।

अणावडंतो-अस्पृशन्। नि० चू० प्र० १८७ अ।

अणावसं-अवशम्। (मर०)

अणावाय-अनापात। आचा० ३३५। अनापात-आपातादिरहिता उच्चारभूमी। दश० २३१। उत्त० ५१८। विजनम्। आचा० ३३९। स्त्र्याद्यापातरहितं। उत्त० ६०८।

अणावायमसंलोए-अनापातासंलोकम्। ओघ० १२२।

अणाबाहो-मोक्खो। दश० चू० १३।

अणासगं-परिज्ञा। नि० चू० प्र० ३५२ आ। अनशनं। नि० चू० प्र० २५८ अ।

अणासए-अनश्वः, अश्वरहितः। सम० ३२२।

अणासन्नं-अनासन्नं, यद्द्रव्यासन्नं भावासन्नं वा न भवति। ओघ० १२३।

अणासवो – अनाश्रवः, मध्यस्थो रागद्वेषरहितः। सूत्र० २४४। कर्मबन्धनिरोधोपायत्वात्, अहिंसायाः पञ्चत्रिंशत्तमं नाम। प्रश्न० ९९। अनाश्रवा-व्रतविशेषाः। आचा० १८२।

अणासायणाविणअ – अनाशातनाविनयः, उपचारविनयभेदः। दश० २४९।

अणासेवियं-अनास्वादितम्। आचा० १२५।

अणाहपव्वज्जा-उत्तराध्ययनस्य विंशतितमाध्ययननाम। सम० ६४।

अणाहप्पाओ-अनाथात्मानो। आव० ७१।

अणाहसाला – अनाथशाला – आरोग्यशाला। व्य० द्वि० ५७ आ। नि० चू० द्वि० ३८ आ।

अणाहसालालओ-अनाथशालालयः। आचा० ११०।

अणाहारो-अनिष्टं शोभनमपि न रोचते परि अणाहारो भवति। नि० चू० द्वि० ५१ अ।

अणाहूय – अनाहूतः, अनिलपिण्ड.,. अनभ्याहृतो वा, स्पर्धारहितः। भग० २९३। भग० २९४।

अणिगालं-रागपरिहारेणेत्यर्थ. । प्रश्न० ११२।

अणित-अनिर्गच्छन्। नि० चू० प्र० २५८ आ।

अणिंदियं-अनिन्दितं-शिष्टनिन्द्येन – स्वपरप्रशंसादिहेतुनाऽनुत्पादितम्। उत्त० ६६७।

अणिंदिआ-अनिन्दिता, अष्टमी दिक्कुमारी। ज० प्र० ३८३।

अणिंदिया – अनिन्दिता, अधोलोकवास्तव्या दिक्कुमारी। आव० १२१।

अणिंदिया – अनिन्द्रियाः अपर्याप्ताः, केवलिनः, सिद्धाः उपयोगतः। ठाणा० ३५५, ५१९।

अणिगणा-अनग्ना, अनग्ना नाम द्रुमगणाः। जं० प्र० ९९।

अणिगामसुक्खा-अनिकामसौख्याः-अप्रकृष्टसुखाः। उत्त० ४००।

अणिगिण- अनग्नत्वम्, मयमग्नत्वं तद्धेतुत्वादनग्ना इति। सम० १८।

अणिगूहंतो-अनिगूहन्, प्रकटयन्। आव० ५३४।

अणिगूहियबलविरिए – अनिगूहितबलवीर्यः, न निगूहिते बलवीर्ये येन सः बलं-शारीरं वीर्यं-आन्तरः शक्तिविशेष। आव० २५९।

अणिग्गहो–अनिग्रह, अनिषेधो मनसो विषयेषु प्रवर्त्तमानस्य, अब्रह्मण एकादशं नाम। प्रश्न० ६६। स्वैर। प्रश्न० ३१।

अणिच्चं–अनित्यम्, न नित्यमस्थिरत्वात्। प्रश्न० ९६।

अणिच्चमावासं–अनित्यावास –मनुष्यादिभवस्तच्छरीरम्। आचा० ४२९।

अणिच्चाणुप्पेहा – अनित्यानुप्रेक्षा–जीवितादेरनित्यस्यानुप्रेक्षा। ठाणा० १९०।

अणिचेऊण–अ(न)र्चयित्वा। आव० १४६।

अणिच्छियत्ता–अनीप्सितता, आप्तुमनिष्टता। भग० २३। प्राप्तुमनभिवाञ्छितत्वम्। भग० २५३। प्रज्ञा० ५०४।

अणिच्छियव्वो–अनेष्टव्य, मनागपि मनसाऽपि न प्रार्थनीय। आव० ५७२, ७७८।

अणिज्जिण्णा–अनिर्जीण, सामस्त्येनात्मप्रदेशेभ्योऽपरिशाटित। प्रज्ञा० ६०२।

अणिज्जुहियाअंसी–अनिर्यूढा–कृतविभागापि नान्यत्र नीता शिक्षा। बृ० द्वि० १९९ आ।

अणिज्झायत्ता–अनिदर्पाय, चक्षुरध्यापार्य। भग० ३१३।

अणिट्ठं–अनिष्टम्, सतामनभिलषणीयम्। आव० ५८९।

अणिट्ठत्ता–अनिष्टता, इष्टा–मनसा इच्छामिपयीकृता तद्विपरीता अनिष्टा तस्या भाव। प्रज्ञा० ५०४। अनिष्टता, इच्छया अविषयता। भग० २५३।

अणिण्हवणं–अनपलाप। नि० चू० प्र० ९ अ।

अणितणा–पक्षदाभिन। ठाणा० ५१७।

अणितिथ–अनितिथ –अविद्यमाननियतस्वरूप। भग० ४६९।

अणित्थंत्थं – अनित्थंस्थम्, इतीदप्रकारमापन्नमित्थं, इत्थं तिष्ठतीति इत्थस्थं, न इत्थंस्थ अनित्थंस्थमिति, केनचित्प्रकारेण लौकिकेनाप्यितमिति। आव० ४४५। नेत्थं तिष्ठतीति, अनियताकारम्। जीवा० २५।

अणित्थंथे–अनित्थंस्थं परिमण्डलादिव्यतिरिक्तम्। भग० ८५८, ८५९।

अणिदा–अनिदा–अनिर्द्धारणा। भग० ४८। चित्तविकल सम्यग्विवेकविकला वा। प्रज्ञा० ५५७।

अणिदाणो–अनिदान, देवेन्द्रादैश्वर्याप्रार्थक। प्रश्न० १४७।

अणिद्देसं–अनिर्देश्यं। विशे० १५५।

अणिधत्तियं–(अणिज्जंत) कम्म ण कारविज्जति। नि० चू० द्वि० १०६ अ।

अणिमिसच्छो–अनिमेषाक्ष, निश्चलनयन। आव० ७८४।

अणिमिसनयणे–अनिमिषनयनम्, विकसितं नयनम्। भग० १७१।

अणिमिसा–अनिमेषा। आव० १२४।

अणिमिसे–अनिमिषा, मत्स्या। दश० १०२।

अणियं–अणिकं, अग्रम्–तुण्डम्। प्रश्न० ११५। अनीकं–कटकम्। उत्त० ४२८।

अणियट्ट–अनिवर्त्त, मोक्ष। आचा० ३९२।

अणियट्टिबायरो–अनिवृत्तिबादर, निवृत्तिबादरादूर्ध्वं लोभाणुवेदन यावत् भूतग्रामस्य नवमं गुणस्थानम्। आव० ६५०।

अणिअट्टी–भरते भविष्यज्जिन। सम० १५४।

अणियण–अनग्नकारणत्वादनग्ना–विशिष्टवस्त्रदायिन, संज्ञा शब्दो वाऽयमिति। ठाणा० ३९९।

अणियणो–अनग्न। आव० १११।

अणियतो–अनियत, अनियमवान्, अनवस्थित। प्रश्न० २८।

अणियत्तो–अनित्रत्त। आव० ८२३।

अणियद्दरिसणं हयगजरथपदात्यनीकदर्शनम्। नि० चू० द्वि० ७१ अ।

अणियया–अनियता–अनिर्धारिता। प्रज्ञा० ३३९।

अणियार–अनिदा, अकारणम्। आचा० ३४। मेधाधारणेन्द्रियपाटवदेहायुर्वर्धनकारी। नि० चू० प्र० २५४ अ। अनाभोगत। सम० १४६।

अणियाणे–प्रार्थनारहित। भग० १२३।

अणियाहिवई–अनीकाधिपतय –गजादिसैन्यप्रधाना ऐरावतादय। ठाणा० ११७।

अणिलामयी–वातरोगिणी। बृ० द्वि० २११ अ।

अणिलो–निल्जो जस्स नत्थि। दश० चू० ९८।

अणिवारिए–अनिवारित, निषेधकरहित। विपा० ७१।

अणिविसं–कम्मं ण कारविज्जति। नि० चू० द्वि० १०६ अ।

अणिव्वाणं–अचित्त। नि० चू० प्र० ४३ आ।

अणिसिट्ठं–अनिसृष्टं, बहुसाधारणं सर्व यदेक एव ददाति। प्रश्न० १०९। परिहारित्वम्। नि० चू० प्र० ११ आ। गृद्

कर्तव्यं। ओघ० २१४। ठाणा० ४६०। भग० ४६६। नि० चू० तृ० १६ अ, ४८ आ। तत्स्वामिनाऽननुत्सकलितम्। आचा० ३२५। दोषविशेष। आचा० ३२९। साधारणं बहूनामेकादिना अननुज्ञातं दीयमानम्। ठाणा० ४६७। दोषविशेष। प्रश्न० १४४।

अणिसिद्धो-अनिषिद्ध, अनुपयुक्त। आव० २६७।

अणिस्सि(स्सि)अप्पा-अनिश्रितात्मा, अनिदान। आव० ८४३।

अणिस्सिय-अनिश्रित, द्रव्यभावनिश्रारहित प्रतिबन्धविमुक्त। दशा० २२३।

अणिस्सिओवहाणे-अनिश्रितोपधान, ऐहिकामुष्मिकापेक्षाविकल तप, योगसंग्रहे चतुर्थो योग। आव० ६६४। अनिश्रितं तप। प्रश्न० १४६।

अणिस्सितं-अनिश्रितम्। आव० ३५८। सर्वाशंसारहित। भग० ३८५।

अणिस्सिय-अनिश्रितम्, कीर्त्यादिनिरपेक्षम्। प्रश्न० १२६।

अणिस्सिय - अनिश्रितम्, कुलादिष्वप्रतिबद्धम्। दशा० ७२।

अणिस्सेयस - अनिश्रेयस -अमोक्षाय। ठाणा० १४९। अकल्याणाय, अमोक्षाय। ठाणा० २९२। अकल्याणाय। ठाणा० ३५८।

अणिस्सो-अनिश्र -कस्यचित्संबन्धिनाऽष्टम्भेन रहित। उत्त० ६३३।

अणिहय-अनिहत अन्तकृद्दशानां तृतीयवर्गस्य तृतीयमध्ययनम्। अन्त० ३।

अणिहे-अनिभ, अमाय। दश० २६८। अनिह, परीषहोपसर्गैर्निहन्यत इति निह, न निह अनिह -उपसर्गैरपराजित इति। सूत्र० ६९। अस्निह -अष्टकर्मरहित, अराग -रागद्वेषरहित, भावरिपुभिरनिहत। आचा० १९०। स्निह्यत इति स्निह, न स्निह अस्निह -सर्वत्र ममत्वरहित इति। सूत्र० ६९। अकुट्टिते। दश० चू० १०१।

अणीए-अनीकम्, सैन्यम्। भग० ८९।

अणीयजसे - अनीकयशा, नागस्य गाथापतेः कुमार। अन्त० ४।

अणीयसे - अन्तकृद्दशानां तृतीयवर्गस्य प्रथममध्ययनम्। अन्त० ३।

अणीसट्ठं-हस्तमानावप्रहादनिःसृतम्। बृ० द्वि० २३९ अ।

अणीहारि-अनिर्हारि, तपोभेद। उत्त० ६००।

अणीहारिमे-अनिर्हरणाद् गिरिकन्दरादौ अनशनम्। ठाणा० ९४। जइ बहिं पडिबद्ध। नि० चू० द्वि० ५८ अ।

अणु - अनु-प्रतिदिवसम्। सूर्य० ११६, १३३। थेवे। दश० चू० ८९। स्तोकप्रदेशम्। प्रज्ञा० २६३। पश्चाद्भावे स्तोके च। बृ० प्र० ३३अ,। स्तोकम्। प्रज्ञा ५०२। प्रमाणतो यवादि। दश० १४७। लघु, हीन। सूर्य० २६१। जं० प्र० ५२२।

अणुअतणुअ-अनुकतनुकानां-अतिसूक्ष्माणाम्। जं० प्र० २३७।

अणुओग - अनुयोग, अर्थकथनम् सूत्रादनु-पश्चादर्थस्य योगोऽनुयोग सूत्राध्ययनात्पश्चादर्थकथनम्। अणोर्वा लघीयस सूत्रस्य महताऽर्थेन योगोऽनुयोग। आचा० २। व्याख्यान। ओघ० ७१।

अणुओगत्थो-अनुयोगार्थ, व्याख्यानभूतोऽर्थ। आचा० ७।

अणुओगदार - अनुयोगद्वारम्, सूत्रविशेष। आव० ७४०। अस्वाध्याये परिहर्तव्यसूत्रविशेष। नि० चू० तृ० ७१ आ०।

अणुओगदारे-अनुयोगद्वारम्, अनुयोगद्वारसूत्रम्। भग० ३२१।

अणुओगस्स-अनुयोगस्य। विशे० ५९३।

अणुओगो - अनुयोग, सूत्रस्यार्थेनानुयोजनम्, अभिधेये व्यापार सूत्रस्य योगो वा, अनुकूलोऽनुरूपो वा योग। आव० ८६, ठाणा० ४८१। निजेनाभिधेयेनार्थेनानुयोजनं-सम्बन्धनम्। विशे० ५९३। सूत्रपाठानन्तरमनु-पश्चात्सूत्रस्यार्थेन सह योगो-घटना। जीवा० २। अनुकूल -अविरोधी सूत्रस्यार्थेन सह योगो वा। जीवा० २। सूत्रस्यार्थेन सह सम्बन्धनं, अनुरूपोऽनुकूलो वा योगो व्यापार सूत्रस्यार्थप्रतिपादनरूप। अणो -रूघो पश्चाज्जाततया वाऽनुशब्दवाच्यस्य योऽभिधेयो योगो-व्यापारस्तत्सम्बन्धो वाऽणुयोगो अनुयोगो वा। नं० प्र० ४। दृष्टिवादचतुर्थो भेद। सम० १२८। निशेम। आव० ६६४।' अनुशासनम्, अनुकूलो वा योग। अणु-सूत्रं, महान

अर्थस्ततो महतोऽर्थस्याणुना सूत्रेण योगो वा। ओघ० ४। विचारः। ठाणा० ४८१, ४९५। अनुरूपोऽनुकूलो वा योगः। सम० १३१। अध्ययनार्थः। आव० ५४। सूत्रस्पर्शकनिर्युक्तिः सूत्रानुगमश्च। आव० ८६। परीक्षा। आव० १५५।

अणुकंपं-अनुकम्पां-उपष्टम्भम्। ठाणा० १७०।

अणुकंपओ-अनुकम्पकः-अनुरूपक्रियाप्रवृत्तिः। उत्त० ३५९।

अणुकंपा-अनुकम्पा, अनुग्रहः। दश० ६७। भक्तिः। ओघ० १९६। आव० ३४८। सम्यक्त्वगुणविशेषः। आव० ५६१। अनुक्रोशः। सम० १२७। दीनानाथविषयं दानम्। ठाणा० ४९६।

अणुकंपाए-अनुकम्पया-अनुग्रहेण। व्य० द्वि० १७२ आ।

अणुकंपे-अनुकम्पते, उपकुरुते। उत्त० ४१६।

अणुकड्ढइ-अनुकर्षयति। आव० २१८।

अणुकुपति-प्रच्छादयति, अणुक्षिप्त। नि० चू० प्र०१८० अ।

अणुकुयितं-अरलयम्। बृ० द्वि० २५३ अ।

अणुकूला-संजमविघ्नकरा (राज्यार्पणादिकाः)। नि० चू० प्र० १६४ आ।

अणुक्कंतो-अनुक्रान्तः-अनुचीर्णः। आचा० ३०६।

अणुक्कमं-अनुक्रमः। आव० ३४२। पारम्पर्यम्। उत्त० १४७।

अणुक्कमंतो-अनुक्रम्यमाणः, प्रेर्यमाणः। सूत्र० १३६।

अणुक्कसाई-अनुत्कशायी, अणुकषायी, उत्कण्ठितः- सत्कारादिषु शेत इत्येवं शील उत्कषायी, न तथा। यो न सत्कारादिकमपुर्वते कुप्यति, तत्सम्पत्तौ वा नाहङ्कारवान् भवति स०। उत्त० १२४। अणवः-स्वल्पाः सज्वलननामान इतियावत् कषायाः-क्रोधादयो यस्य। उत्त० ४२०।

अणुगच्छइ-अनुगच्छति, आमभो भवति। जं० प्र० १८७।

अणुगच्छणा-अनुगमनम्, आगच्छतः प्रत्युद्गमनम्। दश० २४१।

अणुगच्छमाणो-अनुगच्छन्-अवगच्छन्-बुद्ध्यमानः सन्। आचा० २२२।

अणुगम-अनुगमः, अनुगमनमनेनास्मादस्मिन्निति वा अर्थकथनम्। आचा० ३। अन्वय.। विशे० ९६४।

अणुगमणं-अनुगमनम्, आगच्छतः प्रत्युद्गमनम्। उत्त० १७।

अणुगमिओ-अनुगमितः, अनुनीतः। आव० ५५।

अणुगमो-अनुगमः, सूत्रार्थयोरनुरूपसंबंधकरणम्। विशे० ४३१। निक्षिप्तसूत्रस्यानुकूलः परिच्छेदोऽर्थकथनम्। जं० प्र० ५।

अणुगयं-अनुगतं, अनवच्छिन्नम्। प्रश्न० ६६। युक्तम्। दश० २०७। अभिप्रायानुवर्तिनमात्मानम्। उत्त० ३२२। युक्तः। उत्त० ६३१।

अणुगामं-अनुग्रामः, ग्राममार्गानुकूल' लघुर्वा ग्रामः, स्थित एकस्माद्वा ग्रामादन्यो ग्रामः। उत्त० ९९।

अणुगामियत्ताए-अनुगामिकता-परम्परया शुभानुबन्धसुखाय भविष्यति। जीवा० २४३।

अणुगीया-अनुगीता तीर्थकरादिभ्यः श्रुत्वा प्रतिपादिता। उत्त० ३८५।

अणुग्गह-अनुग्रहः, अनुग्रहपरिहरणा अक्खोडभंगपरिहरणा, (अक्षभङ्गशुल्कपरिहारः) आव० ५५२। ज्ञानाद्युपकारः। ठाणा० १५५।

अणुग्गहकसिणं-छण्हं मासाणं आरोवियाणं छद्दिवसा गता, ताहे अण्णो छम्मासो आवण्णो, ताहे जं तेण अद्धवूढं तं उज्झोसितं जं पच्छा आवण्णं छम्मासितं तं वहति, एत्थ पंचमासा चउव्वीसं च दिवसा जेण उज्झोसिया। नि० चू० तृ० १३५ अ।

अणुग्गहट्ठं – अनुग्रहार्थं-अनुग्रहः – उपकारोऽभिधीयते, अर्थशब्दः प्रयोजनवचनः। ओघ० ४।

अणुग्गहपरिहारो-अनुग्रहपरिहारः-राजकृतानुग्रहवशेन एकद्वित्र्यादिवर्षमर्यादया यथोक्तरूपे खोटादिभञ्जन एक हे त्रीणि वर्षाणि यावत् वसति, यावन्तं वा कालं राजानुग्रहः कृतस्तावन्तं कालं वसति, न च हिरण्यादि प्रददाति, नापि वेष्टिं करोति, न चापि चारभटादीनां भोजनादि प्रदानं क्रियते, एष खोटादिभंगो। व्य० प्र० ४५ अ। तत्तियं कालं तो दम्मादिणु परिहरिज्जति सावराहसं न दण्डेतेत्यर्थः। नि० चू० तृ० ८९ आ।

अणुग्गहो-अनुग्रहः, उपकारः। ओघ० ४।

अणुग्गामो-अनुग्राम, विवक्षितग्रामानन्तरो ग्रामः। औप० २३।

अणुग्घाई-अनुद्घातिमं-यत्र गुरुमासादि प्रायश्चित्तं वर्ण्यते। प्रश्न० १४५।

अणुग्घाडिया-अनुद्घाटिता, अगुप्ता। दश० ४१।

अणुग्घाता गुरवः। नि० चू० प्र० ८७ अ।
अणुग्घातियं-जं णिरंतरं वहति गुरुं। नि० चू० प्र० ३०५ आ। गुरुतं। नि० चू० प्र० २५७ अ।
अणुग्घायं-आचारप्रकल्पस्य सप्तविंशतितमो भेदः। आव० ६६०।
अणुग्घायकसिणं-जं मासगं जहा मासगुरुगादि अहवा जं णिरंतरं दाणं एम मासलहुगादिपि णिरंतरं दिज्जमाणं अणुग्घातं भवति। नि० चू० तृ० १३५ आ।
अणुग्घायण-अणोद्घातन-अणन्यनेन जन्तुगणस्यानुगतिक्रं सत्वारमित्यर्थ-कर्म्म तस्योत-आपम्येन घातनम्-अपनयनम्। आचा० १४७।
अणुग्घायाणि-गुरुणि प्रायश्चित्तानि। बृ० तृ० ६० अ।
अणुग्घट्टंता-अनुप्यन्तः। ओघ० ७८।
अणुघाइय-अनुद्घाते, न विद्यते उद्घातो-लघुकरणलक्षणो यस्य तपोविशेषस्य तत्, यथाश्रुतदानं, तयेषा प्रतिसेवाविशेषतोऽस्ति ते। ठाणा० ३११।
अणुचरिया-चरिका, नगरप्राकारयोरपान्तराले। बृ० सू० ५३ अ।
अणुचिण्णो-अनुचीर्णम्, आचरितम्। आव० २२७। अनुष्ठित। ओघ० १०३।
अणुचिंतणं-अनुचिन्तनम्, पर्यालोचनम्। आव० ५८९।
अणुचिन्नं-अनुचीर्णम्, सम्यक् तदर्थावगमासंगसंभविभोनिवर्तस्समभावप्रापर्य। धर्ममेघनामकसमाधिरूपेण परिणमितम्। जीवा० ४। अनुचीर्णं-व्यायसमाना सम्यानिमादव। आचा० २१७।
अणुचिय-अनुचित-भावित शैक्षो वा। बृ० द्वि० २१८ अ।
अणुजत्तं-अनुयात्रम्। उत्त० ३०४। अनुयात्रा, राजपाटिका। आव० ७२०।
अणुजत्ता-अनुयात्रा। आव० ३६५।
अणुजाए-अनुजात., सदृशः। सूर्य० २३३।
अणुजाणं-रथयात्रा। बृ० द्वि० १५५ अ। बृ० प्र० २५८ आ। व्य० द्वि० १७ आ।
अणुजाणपेक्खओ-अनुयानप्रेक्षक। आव० ५७७।
अणुजाणे-अनुजानन्। उत्त० ७६३।
अणुजाते-पितृसम.। ठाणा० १८४।
अणुजायं-अनुयाने, सूतम्। जं० प्र० २९१।
अणुजीवंति-अनुजीवन्ति-तदुपार्जितविभूत्युपभोगाः उपजीवन्ति। उत्त० ४४१।
अणुजोगगत-तीर्थंकरादिपूर्वभवादिव्याख्यानपरो ग्रन्थः कानुयोगस्य भरतनरपतिवंशजानां निर्वाणगमनानुत्तरविमानवक्तव्यताव्याख्यानग्रन्थ इति द्विधाऽनुयोगे गतोऽनुयोगगतः। ठाणा० ४९१।
अणुजोगी-अनुयोगी-अनुयोगो-व्याख्यानं प्रवचनं वा। ठाणा० ३७५।
अणुजोगो-अणोः-लघो पश्चाज्जातसया वा अनुशब्दवाच्यस्य सूत्रस्य योऽभिधेये योगो-व्यापारस्तेन सम्बन्धो वा सोऽनुयोगोऽनुयोगो वेति। ठाणा० ३। अनु-पश्चाद्भावभो यथैवं च। बृ० प्र० ३३ अ। विचारः। सम० ५०। सूत्रस्यार्थेन सह सम्बन्धनम्, सूत्रस्यार्थप्रतिपादनरूप.। ठाणा० ३।
अणुज्जंगी-अनवद्याङ्गी, विषादेविविशेषणम्। उत्त० ४९६। श्रीमहावीरस्वामिन: सुता जमालेर्भार्या, प्रियदर्शनाऽपरनाम। उत्त० १०२।
अणुज्झज्झमाणाइं-एकं स्वरूपतोऽन्नानि अपरं च तेषां कचित्कार्येऽशुगयोगान्कैनचिदनुज्झियमाणानि। उत्त० ५४९।
अणुज्झता-अनुभावविरहित.। नि० चू० प्र० १८९ आ।
अणुज्जा-अनवद्याङ्गी, श्रीमहावीरस्वामिनो ज्येष्ठा भगिनी, सुदर्शनाऽपरनाम। उत्त० १०२। महावीरस्वामिनः पुत्रीनाम। आचा० ४२२।
अणुज्झियत्तं-वगाकत्वम्। बृ० तृ० २ आ।
अणुज्जुय-अनृजुक, धर्मिणं प्रतिसम्मतया। उत्त० ६०३।
अणुज्जुकं-अनृजुकम्, वक्रम्, अधर्मद्वारस्य नवमं नाम। प्रश्न० २६।
अणुट्ठाणे-अनुयाने। ठाणा० ३३०।
अणुट्ठिएसु-अनुत्थितेषु-धावरादिषु। आचा० २५६।
अणुट्ठिया-अनुत्थिता, निविष्टा। आव० ७२७।
अणुट्ठिहंतो-अनुत्तिष्ठन्। बृ० तृ० ४ अ।
अणुण्णवण-अनुज्ञापयति। ओघ० १९९।
अणुण्णवणाजयणा-वस्त्रयाचनानुज्ञापनदोषगुण। नि० चू० तृ० १२ आ।
अणुण्णवेंति-अनुज्ञापयन्ति। आव० ११७।
अणुण्णासं-नासिकाविनिर्गतस्वरानुगतम्। जं० प्र० ४०।

अणुण्णेत्ता–अनुनीय–प्राप्य ध्यात्वा । सम० १२३ ।
अणुतडियमेय–अनुतटिकाभेदः, अवटतटभेदवद् यो भेदः । भग० २२४ ।
अणुतडियामेदे–अनुतटिकाभेदः, इक्षुत्वगादिकः । प्रज्ञा० २६७ ।
अणुत्तप्पो–लज्जनीय । नि० चू० प्र० २६६ आ ।
अणुत्तरं–अनुत्तरम् , सम्यक् । दश० १५९ । अनन्यसदृशः । आव० ६० । अनुत्तरं–सर्वसंयमस्थानोपरिवर्तिनं । उत्त० ३९३ । अनुत्तरां–सर्वलोकाकाशोपरिवर्तिनीमतिप्रधानां वा । उत्त० ३९२ ।
अणुत्तर–अनुत्तरम् , ऋद्धिरहितम् । आचा० १४ ।
अणुत्तरणपासो–अनुत्तरणपाशः, आत्मनः पारतन्त्र्यहेतुतया पाशवत्पाशः, अनुत्तरणश्चासौ पाशश्च । उत्त० ४३ । अनुत्तरणपाशः–न विद्यते उत्तरणं–पारगमनमस्मिन् सतीत्यनुत्तरणः, स चासौ पाशश्च–अवस्थानम् । उत्त० ४३ ।
अणुत्तरनाणी–केवलज्ञानवान् । उत्त० २७० ।
अणुत्तरधरे–न विद्यते उत्तरमन्यत्प्रधानमेषामिति । उत्त० ३५७ ।
अणुत्तरधरो–अनुत्तरधरः, न विद्यते उत्तरं–अन्यत्प्रधानमेषामित्यनुत्तराः, ते च प्रक्रमात्प्रकर्षप्राप्ता ज्ञानादय एव गुणास्तान् धारयतीति । अनुत्तरान् गुणान् धारयतीति वा । उत्त० ३५७ ।
अणुत्तरविमाणे–नैषामन्यान्युत्तराणि विमानानि सन्ति इति अनुत्तरविमानानि । अनु० ९१ ।
अणुत्तरे – स्थित्यादिभिः सकलनरकज्येष्ठेऽप्रतिष्ठान इति । उत्त० ३९२ ।
अणुत्तरो–अनुत्तरः–न विद्यन्ते उत्तराः–प्रधानाः स्थितिप्रभावसुखद्युतिलेश्यादिभिरेभ्योऽन्ये देवाः । उत्त० ७०२ ।
अणुत्तरो–अनुत्तरः, कृष्णवासुदेवागमनम् । आव० १६३ । अचल १ विजयभद्र २ बलदेवत्रयागमनम् । आव० १६३ ।
अणुत्तरोववाइय–अनुत्तरोपपातिकम् । भग० २२२ ।
अणुत्तरोववाइया–अनुत्तरोपपातिकाः । प्रज्ञा० ६९ ।
अणुदिन्नं–(अनुदीर्णम्) । भग० ५८ ।
अणुदिसा–अनुदिशः, प्रतिदिशः । दश० २०१ । एकप्रदेशा अनुत्तराः (दिग्रोगाः) । ठाणा० १३३ ।
अणुद्दिट्ठो–अनुद्दिष्टः,यावत्निश्चादिभिर्वर्जितः । प्रश्न० १०८ ।
अणुद्दरी–अनुद्धरी, आत्मदोषोपसंहारविषये द्वारपत्नामहमिप्रथेष्ठिभार्या । आव० ७१४ ।
अणुद्धुअ – अनुद्धूताम् , आनुरूप्येण यथामार्दङ्गिकविधि उद्धृता–वादनार्थमुत्क्षिप्ता । जं० प्र० १५४ ।
अणुधम्मो–अनुधर्मः । सूत्र० १९९ ।
अणुनई–अनुनदि, नदीं नदीं प्रति । आव० ४५३ ।
अणुनवनं–अनुज्ञातम् । ओघ० १६० ।
अणुनाओ–अनुज्ञातः । ओघ० २१५ ।
अणुनासं–सानुनासिकं नासिकाकृतस्वरम् । ठाणा० ३९६ ।
अणुन्नया–अनुन्नया–नोर्ध्वमुखा । व्य० द्वि० २३७ आ ।
अणुन्नवणा–अनुज्ञापना, वन्दनके द्वितीयं स्थानम् । आव० ५४८ ।
अणुन्नविय – अनुज्ञापितः । आचा० ४२६ । अनुज्ञाप्य–याचित्वा । आचा० ३३८ ।
अणुन्नवेमाण – तत्स्वजनादीस्तत्परिष्ठापनायानुज्ञापयन्तः । ठाणा० ३५४ ।
अणुन्ना–अनुज्ञा, अनुमोदनम् । सूत्र० ३२९ । सूत्रार्थयोरन्यप्रदानम् । व्य० प्र० २६ अ । अधिकारदान । ठाणा० ११९ ।
अणुन्नायं–अनुज्ञातम् , ओघतयैव वितीर्णम् । प्रश्न० १०२ ।
अणुपभु – जुवराया, सेणावती । नि० चू० प्र० १७४ आ । सेनाधिपतिः । बृ० प्र० ९०आ ।
अणुपरियन्ति–अनुपरियन्ति, सातत्येन पर्यटन्ति । उत्त० २६६ ।
अणुपरियट्टइ – अनुपरिवर्त्तयते, आत्मनधावयते । सूर्य० १०७ ।
अणुपरियट्टिय – अनुपरिवर्त्य, प्रादक्षिण्येन परिभ्रम्य । जीवा० ३७५, ३९९ ।
अणुपरिहारी–जतो जतो परिहारी गच्छति ततो ततो अणुपिट्ठतो गच्छति । अणु–थोवं पडिलेहणादि साहेज्जं करेतीति । नि० चू० तृ० ९३२ आ ।
अणुपविट्ठे अनुप्रविष्टः–तदुदयवर्ती । ठाणा० २११ ।
अणुपस्समो–अनुपश्यतः–पर्यालोचयतः । उत्त० ३१० ।
अणुपासं–कम्मंण भरतेत्ति ३निति । नि० चू० द्वि० १०६ अ ।
अणुपालइत्ता–अनुपाल्य–सततमासेव्य । उत्त० ५७२ ।

अणुपालणा-अनुपालना, अनु० विशुद्धि, प्रत्याख्यानशुद्धया पञ्चमो भेद । आव० ८४७ ।

अणुपालणासुद्ध-अनुपालनाशुद्धं-कान्तारादिषु न मग्न यत्प्रत्याख्यानम् । ठाणा० ३४९ ।

अणुपालिय-अनुपालिते, पूर्वकालस्पृष्टमपि पालितत्वाद्विच्छिन्नमाधुभिधानु-पश्चात्पालितमिति । प्रश्न० ११३ ।

अणुपालिया-आत्मसंयमानुकूलतया पालिता । ठाणा० ५४० ।

अणुपालेइ-अनुपालयति । भग० १२४ ।

अणुपालेमि अनुपालयामि, पौनःपुन्यकरणेन । आव० ७६१ ।

अणुपिट्ठि-अनुपूर्व्या । सम० ६८ ।

अणुपुव्वसोअनुपूर्वेत, क्रमेण । उत्त० २५२ । आनुपूर्व्या० क्रमेण । उत्त० ५१८ ।

अणुपुव्विए-अनुपूर्वी, मूलादिपरिपाटी । ज० प्र० ३१ । शालीयोपक्रमभेदः । आचा० ३ ।

अणुपुव्विविहारीण – अनुपूर्वविहारिणा-प्रतिपालितदीर्घसंयमानां शास्त्रार्थग्रहणप्रतिपादनोत्तरकालमवसीदत् संयमाध्ययनाध्यापननियाणा शिष्यादिनिष्पादितशिष्याणामुत्सर्गेण द्वादशसंवत्सरमलेखनाक्रमसलिखितदेहाना । आचा० २६० ।

अणुपुव्वेण-आनुपूर्व्या-यथेष्टकालावश्यकक्रियारूपया चतुर्थषष्ठाचाम्लादिकया । आचा० २८४ । अनुक्रमेण-परिपाट्या यौगपद्येन । आचा० २४१ ।

अणुपुव्वो-अनुपूर्व, पूर्वस्या पूर्वस्या अनु । जीवा० २७० ।

अणुपेहा-अनुप्रेक्षा, अनु-पश्चाद्भावे प्रेक्षा पेक्षा, स्मृति, ध्यानाद्भ्रष्टस्य चित्तचेष्टा । आचा० ५८३ ।

अणुपेहे-अनुगुणनं करोति । ओघ० ८४ ।

अणुप्प-अनर्घ्य -अनर्पणीय , अढौकनीय । ठाणा० ४६५ ।

अणुप्पगंथे- अनुरूपतया-औचित्येन विरलेनेत्पुण्योदया दणुरपि वा-सूक्ष्मोऽप्यल्पोऽपि प्रवृत्तो ग्रन्थो-धनादिर्यस्य यस्माद्वा । ठाणा० ४६५ ।

अणुप्पयाउ-अनुप्रदातु-परंपरकेण प्रदातुम् । व्य० प्र० २१७ आ ।

अणुप्पवाय-अनुप्रवाद पूर्वविशेष । उत्त० १६३, विशे० ५६१ ।

अणुप्पवायपुव्वं-अनुप्रवादपूर्वम् । आव० ३१६ ।

अणुप्पविसे-अनुप्रविशेत, मनसि स्थापयेदो भवेत् । उत्त० ९९ ।

अणुप्पसूयाइ-अनुप्रसूता-आश्रिता । आचा० ३४८ ।

अणुप्पियं अनुमतम् । बृ० द्वि० ३ अ ।

अणुप्पेच्छा-अविच्छा । उत्त० मा० १४० ।

अणुप्पेह- धर्म्यध्यानस्य पश्चात्प्रेक्षणानि-पर्यालोचनान्यनुप्रेक्षा । भग० ९२६ ।

अणुप्पेहा-मनसा । बृ० द्वि० ५४ आ । अनुप्रेक्षा, अर्हद्गुणाना मुहुर्मुहु सततमनुचिन्तना । आव० ७८६ । यो मनसा परिवर्तयति, न वाचा । दश० ३२ । ध्यानोपरमकालभाविनी अनित्यत्वाद्यालोचनारूपा । आव० ५९० । सूत्रार्थानुस्मरण ध्यानस्य पश्चात् पर्यालोचनानि, भावना । ठाणा० १९० । सूत्रवदर्थेऽपि सम्भवति विस्मरणमत सोऽपि परिभावनीय इत्यनुप्रेक्षण, चिन्तनिका । ठाणा० ३४९ । प्रयार्थयो चि-तनम् । ओघ० १८९ ।

अणुफासे अनुस्पर्श , अनुभाव । दश० १९८ ।

अणुफासो-अणुभवो । दश० चू० ९६ ।

अणुबंध अनुबन्ध , निरन्तरम् । ओघ० १०८ । सन्तानभावेन प्रवृत्ति । ज० प्र० १२५ ।

अणुबंधो- विवक्षितपर्यायेणाव्यवच्छिन्नेनावस्थानम् । भग० ८०८ । सातत्येन भवन तत्स्मरणानाम् । उत्त० २३९ ।

अणुबद्ध-अनुबद्धम् , सन्ततम् । आव० ३३८ । ठाणा० ४३० ।

अणुबद्धरोसपसरो-अनुबद्ध -सन्तत , कोऽर्थ ? -अव्यवच्छिन्नो रोषस्य-क्रोधस्य प्रसरो-विस्तारोऽस्येति अनुबद्धरोषप्रसर । उत्त० ७११ ।

अणुबद्धा-सन्ततमालिंगिता सम० १२६ ।

अणुबल-अनुबलम् । उत्त० १७८ ।

अणुब्भडो-अनुद्भट , अनुल्बण । जीवा० २७५ । उत्त० ५८७ ।

अणुभवणसण्णा-अनुभवनसंज्ञा , आहाराद्या । आचा० १२ ।

अनुभवो-अनुभव , स्वेन स्वेन रूपेण प्रकृतिना विपाकतो वेदनानुभव । विशे० १००६ ।

अणुभाग – अनुभागः, आयुर्द्रव्याणामेव विपाकः। भग० २८०। अचिन्त्या शक्तिर्वैक्रियकरणादिका। ठाणा० ६९, १४४।

अणुभागकम्मे – अनुभागकर्म-कर्मप्रदेशानां संवेद्यमानता-विषयो रसस्तद्रूपं कर्म। भग० ६५।

अणुभागो–अनुभागः, विशिष्टवैक्रियादिकरणविषयाऽचिन्त्या शक्तिः। जीवा० १०९। सामर्थ्यम्। प्रज्ञा० ८८।

अणुभावकम्मे–यथापद्धरभो वेद्यते तदनुभावतो वेद्यं कर्मानुभावकर्मेति। ठाणा० ६६।

अणुभावनामनिहत्ताउय – अनुभावनामनिधत्तायुः–अनुभावः–प्रकर्षप्राप्तो विपाकः, तत्प्रधानं नाम, यत्रस्मिन् भवे तीव्रविपाकं नामकर्मानुभूयते त(य)था नारकायुषि अशुभवर्णगन्धरसस्पर्शोपघातानादेयदु:स्वरायशःकीर्त्यादिनामानि तदनुभावनाम तेन सह निधत्तमायुरनुभावनामनिधत्तायुः। प्रज्ञा० २१८।

अणुभावे–अनुभावः, विपाको रसविशेषः। भग० ३५। तीव्रतमदुःखादिः। आव० ४९६। अनुभावः। सूर्य० २७९। विपाक उदयो रस इत्यर्थः। ठाणा० ४१४।

अणुभावो–अनुभावः, माहात्म्यम्। सूत्र० १२६। विपाकः। प्रज्ञा० २१८। स्वभावः, स्वरूपम्। जं० प्र० २९९। तीव्रादिभेदो रसः। सम० १०। शापानुग्रहसामर्थ्यम्। उत्त० ३६५। प्रभावः। जं० प्र० २४६। रसः, विपाकः। विशे० ५६५। कारणम्। जीवा० ३२९। विपाकोदयः। जीवा० १३०। सामर्थ्यादिलक्षणः। आव० ५९६। विपाकः। आव० ५९८। रसः। उत्त० २३०।

अणुभासइ–अनुभाषते। आव० ३११।

अणुभासणा–अनुभाषणा, प्रत्याख्यानशुद्धिः। आव० ८४७।

अणुभासमाण–अनुभाषमाण। विशे० १००५।

अणुमए–अनुमतम्, मानितम्। भग० १२२। वार्द्धक्याघातस्य पश्चादपि मतः। भग० ४६८।

अणुमओ–अनुमतः, अभिष्टो मोक्षाङ्गता। आव० ३२६। अभिप्रेता। बृ० प्र० २८९ आ।

अणुमगा–शीघ्रम्। (आउ०)

अणुमतं–अनुमतं, वैगुण्यदर्शनस्यापि पश्चान्मतम्। औप० ९६।

अणुमया–अनुमतिः। बृ० तृ० १२८ अ।

अणुमयं–अनुमतम्, अभिमतम्। औप० ६४। अनुमतः–सम्मतः। जीवा० २०६।

अणुमया–अनुमता, अनुज्ञाता। प्रज्ञा० २५७। निप्रियदर्शनस्य पश्चादपि मता। विपा० ४२।

अणुमहत्तरो – मूलमहत्तरे असण्णिहिते जो पुच्छणिज्जो धुरे ठायति सो। नि० चू० प्र० १५८ आ।

अणुमहयरो–मूलमहत्तराभावे प्रष्टव्यः पुरःस्थानश्च। बृ० द्वि० १९० आ।

अणुमाणं–अनुमानम्, स्वार्थम्। आव० ४२७। दृष्टान्तः। दश० १३०, १९६।

अणुमाणइत्ता–लघुतरापराधनिवेदनेन मृदुदण्डादिप्रदानाचार्यस्याकलय्य यदालोचनम्। भग० ९१९। अनुमानं कृत्वा। ठाणा० ४८४।

अणुमाणे–अनुमानम्, अनु–लिङ्गग्रहणसम्बन्धस्मरणादेः पश्चान्मीयतेऽनेनेत्यनुमानम्। भग० २२२। अन्विति–लिङ्गदर्शनसम्बन्धानुस्मरणयोः पश्चान्मानं – ज्ञानमनुमानम्। ठाणा० २५४।

अणुमाणेउं – अनुमान्य, सम्यक् क्षमयित्वा। व्य० प्र० २५४ आ।

अणुमोदये–माइज्जणामेओ। नि० चू० प्र० १०३ आ।

अणुम्मुयंतो–अनुन्मुञ्चन्, अपरित्यजन्। आव० ४०७।

अणुयत्तंतं–अनुवर्त्तयन्। आव० ३०५।

अणुया–अणुकाः। दश० १९३।

अणुयाणं–रथयात्रा। बृ० तृ० ६१ आ। पडिमातिमहिमा। नि० चू० प्र० २३९ आ।

अणुयोगं–अनुयोगो, व्याख्यानं विधिप्रतिषेधाभ्यामर्थप्ररूपणम्। विशे० २।

अणुरंगा–गड्डीए। नि० चू० प्र० १२४ अ। घंटिका, यानविशेषः। बृ० द्वि० १२५ आ।

अणुरंगिणी–अनुरङ्गिनी, अनुरज्यते–अनुकारं विदधातीत्येवंशीला। जं० प्र० ५१८। सूर्य० ११६।

अणुरत्तो–धणिओ। नि० चू० तृ० १७ आ।

अणुरत्ता–अनुरागः – भावतः प्रतिबन्धः। उत्त० ३९४। अन्तरप्रतिपोगतः परस्परस्नेहवन्तौ। उत्त० ५२३। अनुरक्ताः–सततं प्रतिबद्धा। उत्त० ७०८।

अणुरागो–अनुरागः। आव० ३०४।

अणुरागयं–अन्वागमनम्, अनुपश्चादागमनम्। भग० ११७।

अणुराधा–अनुराधा, नक्षत्रविशेषः। सूर्य० ११०।

अणुराहा-नक्षत्रविशेषः । ठाणा० ७७ ।

अणुलिंपइ-अनुलिम्पति । जीवा० २५४ ।

अणुलिंपणं-अनुलिम्पनं-मङ्कलिप्ताया भूमेः पुनर्लेपनम् । प्रश्न० १२७ ।

अणुलिहंतं - अनुलिखन्, अभिलङ्घयत् । सूर्य० २६४, जीवा० ३७९, जं० प्र० २९७ । अनुलिखत्-अतिलङ्घयत् । प्रज्ञा० ९९ ।

अणुलिहति-अनुलिखति, अभिलङ्घयति । जीवा० २०९ ।

अणुलेवणं - अनुलेपनम्, मङ्कलिप्तस्य पुनः पुनरुपलेपनम् । प्रज्ञा० ८० ।

अणुलोमं-अनुलोमम्, अनुकूलमनुगुणं वा । जीवा० ३ । अनुकूलकरणम्० । ठाणा० ३७६ ।

अणुलोमछाया-अनुलोमच्छाया, सूर्यच्छायाविशेषः । सूर्य० ९५ ।

अणुलोमणा-अनुलोमना-प्रज्ञापना । बृ० मृ० १२३ आ ।

अणुलोमवाउवेगो - अनुलोमवायुवेगः । अनुलोमः-अनुकूलो वायुवेगः, शरीरान्तर्वर्तिवातजवो यस्य सः । वायुगुल्मरहितोदरमध्यप्रदेशः । जीवा० २७७ ।

अणुलोमिअ-अनुलोमम्, मनोहारि । दश० २२३ ।

अणुलोमियं-कठ्ठगाररिमादिदोसवज्जियं जं भासमाणो अभावओ लभइ । दश० चू० ११५ ।

अणुल्लय-द्वीन्द्रियविशेषः । उत्त० ६९५ ।

अणुल्लसिओ-अभिघ्यमानः । आव० ६२१ ।

अणुल्लावे-अनुलाप-पौनःपुन्यभाषणम् । ठाणा० ४०८ ।

अणुवउत्तो - अनुपयुक्तः, भावे अपवदनावधानः । ओघ० २३ ।

अणुवकयं-अनुपकृतम्, परैरवर्तितम् । आव० ५९७ ।

अणुवघाइए - अनुपघातिके-उपघातश्च यत्र न भवति उच्चारादि तस्मिन् । ओघ० १०७ ।

अणुवघाइया - आचारप्रकल्पस्य षड्विंशतितमो भेदः । सम० ४७ ।

अणुवचओ - अनुपचयः, अनुपचीयमानता, अनुपादानमिति । उत्त० ६ ।

अणुवट्टंते - अनुपतिष्ठति, अस्थमाणे अप्पउमंते । ओघ० १४५ ।

अणुवट्टावणीया-अनुवर्तनीया । ओघ० १३४ ।

अणुवट्टेति-करोति । भग० ३१० ।

अणुवत्त-अनुवृत्तः-भूयः भवतो यावद्यं प्राप्तः । व्य० द्वि० ४४१ अ ।

अणुवत्तइ-अनुवर्तते । आव० ५६१ ।

अणुवत्ति-अनुवृत्तिः-सर्वेषु अर्थेषु अप्रतिकूलता । बृ० प्र० ४३ अ ।

अणुवत्तिओ-अनुवर्तितः । आव० १११ । परिगृहीतो महायत्नेन । व्य० द्वि० ४४१ आ ।

अणुवत्तिया-परिवेष्टिता । नि० चू० प्र० १८४ आ ।

अणुवत्ती-अनुवृत्तिः । आव० ५१५ ।

अणुवत्ते-अनुवर्तमानः-साम्प्रतकालभावी । दश० ६१ ।

अणुवदिट्ठं - जं णो आयरियपरंपरागयं मुत्कलव्याकरणवत् । नि० चू० द्वि० २३ आ ।

अणुवदेसा-अनुपदेशः-गुरुणाऽनुक्तः । ओघ० १५१ ।

अणुवभुज्जो - मंगकामवपिहितादिराहारः, गृहिरक्तगवाक्षलाक्षिपथिः । बृ० तृ० ४७ अ ।

अणुवमा-अनुपमा । जीवा० २३८ ।

अणुवयमाणा-अनुवदत-अनु-पश्चाद्वदतः पृष्ठतो वदतोऽन्येन वा मिथ्यादृष्ट्यादिना पृष्टोऽपि इत्येवमुक्तः । आचा० २५१ ।

अणुवयारं-निष्ठुरं । नि० चू० प्र० २७८ अ ।

अणुवरय-अनुपरतम्, अविरतम् । भग० १८१ ।

अणुवरयकाइया - अनुपरतकायिकी-देशतः सर्वतो वा सावद्ययोगाद्विरतः नोपरतोऽनुपरतः तस्य कायिकी । प्रज्ञा० ४३६ ।

अणुवरयकायकिरिया-अनुपरतस्य-अविरतस्य सावद्याम् मिथ्यादृष्टेः सम्यग्दृष्टेर्वा कायक्रिया-उत्क्षेपादिलक्षणा, कर्मबन्धनिबन्धनम् । ठाणा० ४१ ।

अणुवसंते-अनुपशान्तः, उदयावस्थः । प्रज्ञा० २९१ ।

अणुवसंपज्जमाणगती - अनुपसम्पद्यमानगतिः, परस्परमुपष्टम्भरहितानां पथि गमनं, विहायोगतेश्चतुर्थो भेदः । प्रज्ञा० ३२७ ।

अणुवसु-अनुवसु-सरागः श्रावकश्च । आचा० २४७ ।

अणुवाए-अनुपातः, अनुनादः । प्रज्ञा० १४४ । अनुगमनं-अनुरागः उत्त० ६३१ ।

अणुवायगइए-अनुपातगतिः-अनुसारगतिः । सूर्य० १६

अणुवालय-गोशालकश्रावकविशेष । भग० ३७० ।
अणुवासग-अनुपासक मिथ्यादृष्टि । नि० चू० द्वि० २५ अ ।
अणुवासणा-अनुवासना, अपानेन जठरे तैलप्रवेशनम् । निपा० ४१ ।
अणुविचित्तिबुद्धि-अनुचिन्तिबुद्धि-अनुगताकारबुद्धि । विशे० १८९८ ।
अणुविद्ध-अनुविद्ध-मिश्रा व्याप्ता । जं० प्र० १९३ ।
अणुवीइ-अनुवीचि, आनुकूल्यम्, मैथुनाभिलापम् । सूत्र० १११ । अनुचिन्त्य विचार्य सम्यमिथिला । आचा० ३८६ । आलोच्य । दश० २०१ ।
अणुवीइभिक्खुभासि - अनुविचिन्त्य निष्ठाभाषी-विचार्य निश्चितभाषक । आचा० ३६२ ।
अणुवीइभासय-अनुविचिन्त्यभाषक, पर्यालोच्य भाषक, द्वितीयमतस्य द्वितीया भावना । आव० ६५८ ।
अणुवीति-चिंतेऊण । नि० चू० प्र० १०० अ ।
अणुवीयि-पुव्विं बुद्धीए अणुचिंतिय । दश० चू० ११५ ।
अणुवूहेत्ता-अनवहयिता-परेण स्वस्य क्रियमाणस्य तस्या अनुमोदयिता, तद्भावे द्वपकारी । ठाणा० ३८९ ।
अणुवेलंधर लवणसमुद्रशिखारक्षक । सम० ३३ ।
अणुवेलंधरराया-अनुवेलन्धरराजा, भुजगेन्द्र । जीवा० ३१३ ।
अणुवेलंधरनागरायतीण-अनुवेलन्धरनागराज-नागजाति विशेष । ठाणा० २२८ ।
अणुवेहसलागा-शलाकाविशेष । नि० चू० द्वि० १८ अ ।
अणुव्वट्ट-अनुवर्तयन, तत्रस्थ एव । आव० ३३९ ।
अणुव्वणो-अगर्वित । सू० तृ० ४ अ ।
अणुव्वस-अनुव्रतम् । आव० ८३३ ।
अणुव्वत्ता-अनुव्रतानि-अनु-महाव्रतकथनस्य पश्चात्प्रतिपत्तौ यानि व्रतानि कथ्यन्ते तानि, अथवा सर्वविरतापेक्षया अणो लघोर्गुणिनो व्रतानि । ठाणा० १९७ ।
अणुव्वय – अनुवर्तिनी, परिणामविशुद्धिदृष्टान्ते भार्या आव० ४३३ । अनुव्रति-कुलानुरूपं व्रतम्-आरोऽस्या अनुव्रता पतिव्रता इति वयोऽनुरूपा वा । उत्त० ४०६ । अनुव्रतं-स्थूलप्राणातिपातनिवृत्ति दश० १९० ।
अणुव्वाणा-अनाप्या(प्या)नेऽ-दिनस्यम् । आव० १०१ ।
अणुव्विग्गो-अनुद्विग्न-प्रशान्त परीषहादिभ्योऽविभ्यत् । दश० १६३, १०९ ।
अणुसंचरे - अनुसंचरे, अन्विति-लक्षीकृत्य संचरे -स्व सम्यक् संगमाभवति यथा । उत्त० ४४६ ।
अणुससरइ-अनुससरति दिग्विदिशा गमन भावदिगागमनं वा स्मरति वा । आचा० २० ।
अणुसज्जइ-अनुसजति, सन्त नैनानुवर्तते । जीवा० २८४ ।
अणुसज्जणा-अनुवर्तना । आव० १५७ । अव्यवच्छेदं करोति । उत्त० ५८४ । अनुवत्तना । बृ० प्र० २८९ अ ।
अणुसज्जमाणा अनुसजत सन्तानेनानुवर्तमाना । भ० प्र० ३५५ ।
अणुसज्जित्था-अनुसक्तवन्तः पूर्वकालात्कालान्तरमनुवृत्तवन्त । भग० २७८ ।
अणुसज्जित्था - अनुसक्तवन्त कालात्कालान्तरमनुवृत्तवन्त सन्ततिभावेन भवति स्म । भ० प्र० १२८ ।
अणुसट्ठ अनुशिष्टं उत्कलनम् । बृ० प्र० १९९ अ ।
अणुसट्ठि – अनुशासनम्-अनुशासित सद्गुणोत्कीर्तनेनोपबृहणम् । दश० ३६ । धम्मकहा । नि० चू० द्वि० १०० अ ।
अणुसट्ठी उवदेसपदाण, थुतिकरण वा । नि० चू० तृ० १३४ आ । सद्भावपुरस्सर प्रज्ञापना । बृ० द्वि० ८७आ । उवदेसो । नि० चू० प्र० २०७ आ । ५१ अ । इहलोकापायदर्शनम् । बृ० द्वि० १०३ अ । अनुशासनम् । ठाणा० १५५ ।
अणुसम-अनुसमा-अनुरूपा, अविषमा । ठाणा० ४५० ।
अणुसमय-समयमाश्रित्य । उत्त० २३१ । अनुसमय प्रतिक्षणम् । सूर्य० ८० । भग० २० । सततम् । उत्त० ३३९ ।
अणुसया अनुशय -पश्चात्ताप । जं० प्र० १२३ ।
अणुसार-अनुस्वारवदनुस्वारम् । विशे०-२७४ । अनक्षरमपि यदनुसारादक्षुतार्थत हुकारकरणादिवत् तत् । आव० २५ । अलाक्षणिक सुखमुखोच्चारणार्थं । दश० ८६ ।
अणुसासणाणि – अनुशासनानि-दुःस्वस्य सुव्यवस्थाकराणि । सम० ११८ । शिक्षणम् । उत्त० २६७ ।
अणुसासम्मि-अनुशासिते । उत्त० ५५३ ।
अणुसासिज्जंतो अनुशास्यमान , तत्र तत्र चोद्यमान । दश० २५६ ।

अणुसिट्ठी–अनुशासनमनुशास्तिः–सद्गुणोत्कीर्तनेनोपबृंहणं सा विधेयेति यन्नोपदिश्यते सा। ठाणा० २५३। अनुशिष्टिः–उपदेशप्रदानम्। व्य० प्र० ११७ अ। शिक्षाम्। उत्त० ३२३। धर्मकथाम्। ओघ० ७३।

अणुसूयगा–अनुसूचका–नगराभ्यंतरे चारमुपलभन्ते, सर्वमनुसूचकेभ्यः कथयंति। व्य० प्र० १७० आ।

अणुसूयत्तं–अपरशरीराधिततता, परनिश्रा। सूत्र० ३५७। अनुस्यूतत्वं–परनिश्रया कृम्यादित्वम्। सूत्र० ३५७।

अणुसोयचारी–अनुश्रोतश्चारि–प्रतिश्रयादारभ्य भिक्षाचारी। ठाणा० ३४२। नद्यादिप्रवाहगामी। ठाणा० २७२।

अणुस्सासिय–अनुच्छ्वसितम्। दश० १६।

अणुस्सियत्त–अनुत्सिक्तत्वम्–अनुद्धतत्वम्। उत्त० ५६१।

अणुस्सुयं–अनुश्रुतम्–अवधारितम्। उत्त० २४७।

अणुस्सुयत्तं–अनुत्सुकत्वम्–विषयसुखं प्रति निःस्पृहत्वम्। उत्त० ५८६।

अणूया–अनूपः, सजलप्रदेशः। विशे० ७२७।

अणेगचित्ते–अनेकचित्त, अनेकानि चित्तानि कृषिवाणिज्यावलगनादीनि यस्यासौ, लुब्धधारणे, संसारमुत्तारणाणेकचित्त एव भवति। आचा० १६३। अनेकसंख्यानि चञ्चलतया चित्तानि–मनांसि यस्य सा। उत्त० २९७।

अणेगगुणा–अनेकगुणा–अनेकप्रकारा। बृ० प्र० ७५ अ।

अणेगतालाचराणुचरियं–नानाविधप्रेक्षाचारिसेवितम्। भग० ५४४।

अणेगदव्वो–अनेकद्रव्य। विशे० ४२४।

अणेगपत्ती–अनेकपत्नी। आव० ९५।

अणेगरूवधुणा–बहूनि वस्त्राणि एकीकृत्य धुनाति। ओघ० ११०।

अणेगरूवधुणे–अनेकरूपा चासौ मर्यादामतिक्रमणतो युगपदनेकवस्त्रग्रहणतो वा धुनना च प्रकम्पनात्मिका अनेकरूपधुनना। उत्त० ५४२।

अणेगवासानउयं–अनेकवर्षनयुत, अनेकवर्षाणां–असङ्ख्येयवत्सराणां नयुतं–सङ्ख्याविशेषम्। उत्त० २७७।

अणेगवाती–परस्परविलक्षणा एव भावा इति वादिनः। ठाणा० ४२५।

अणेलिसं–अनीदृश–अनन्यसदृशम्। आचा० ४२९।

अणेसणी–जाहे ताणि गुरादीणि ण लब्भंति ताहे तेसिं अभावे परमं दुक्खं समुप्पज्जतित्ति, शोकस्याभावो वा। दश० चू० ८८।

अणेसणा–अनेषणा–भिक्षादोषविशेषः। आव० ५७५।

अणेसणिज्जं–अनेषणीयम्–आधाकर्मादिदोषदुष्टम्। आचा० ३२१।

अणोकंता–अनुपक्रान्ता–अनिराकृता। औप० ३४।

अणोघंसिय–अनिर्माजनम्। व्य० प्र० ५७।

अणोज्जा–अनवद्या, स्वामिदुहिता। आव० ३१२।

अणोतप्पया–अलज्जनीयता। बृ० प्र० ३०९ आ।

अणोदरया–अपारा (सं०)

अणोमदंसी–अवमं–हीनं मिथ्यादर्शनाविरत्यादि तद्विपर्यंरतमनवमं तद्द्रष्टुं शीलमस्येत्यनवमदर्शी, सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रवान्। आचा० १६४।

अणोमाणं–अपमानं अनादरकृतं न भवति। ओघ० १०३।

अणोरपारं–अनर्वाक्पारम्–विस्तीर्णस्वरूपम्। प्रश्न० ६२। अनादपर्यवसितम्। आव० ६०१। अर्वाग्भागपरभागवर्जितमनाद्यनन्तम्। सूत्र० ४०३। अनर्वाक्पारमिव महत्त्वादनर्वाक्पारम्। प्रश्न० ५१। देशीवचनं, प्रचुरार्थे, आराद्भागपरभागरहिते। आव० ३४५। (भग०)

अणोलहविज्जंतो–अविध्यापितः। आव० ३८४।

अणोवणिहिआ–अनौपनिधिकी–वक्ष्यमाणपूर्वानुपूर्व्यादिक्रमेणाविरचनं प्रयोजनं यस्या इति। अनु० ५२।

अणोवमा–अनुपमा। प्रज्ञा० ३६४।

अणोवमाइ–स्वादविशेष। व्य० प्र० ११८।

अणोहट्टं–अनाजिय, वोंटलाति उवकारेण विरहियं। नि० चू० प्र० १८३ अ।

अणोहंतरा–समारतरणासमर्थाः। आचा० १२३।

अणोहट्टिए–अनपघट्टकः, यो बलाद्धस्तादौ गृहीत्वा प्रवर्त्तमानं निवारयति सोऽपघट्टकस्तदभावात्। विपा० ५२।

अणोहिय–अविद्यमानजलौघिकामतिगहनत्वेनाविद्यमानोहा वा। भग० ६५२।

अण्णउत्थिए–अन्ययूथिका अन्ययूथं–विवक्षितसंघादपरं संघस्तदास्ति येषां तेऽन्ययूथिकाः तीर्थान्तरीयाः। भग० ९८। अन्यतीर्थिका। जीवा० १४३।

अण्णउत्थिया – तच्चणियादि समणा खत्तिया गारत्था । नि० चू० द्वि० ।

अण्णओमुहो–अन्यतोमुख । आव० ६४० ।

अण्णओहुत्तं–अन्यतोभूतम् । आव० २०५ ।

अण्णगच्छेल्लय–अन्यगच्छीय. । आव० ३२२ ।

अण्णगिलायं–अन्नग्लान–पर्युषितभक्त यथा भोक्तव्यमित्येवं प्रतिपन्नाभिग्रह । बृ० प्र० ३१२ अ ।

अण्णगिलायए–अन्नग्लायक । औप० ३९ । बृ० प्र० ११२ आ ।

अण्णतित्थियपवत्ताणुजोगे–अन्यतीर्थिकेभ्य–कपिलादिभ्य सकाशात् प्रवृत्त–स्वकीयाचारवस्तुतत्त्वानामनुयोगो–विचार तत्पुरस्करणार्थं शास्त्रसंदर्भ इत्यर्थ सोऽन्यतीर्थिकप्रवृत्तानुयोग । सम० ४९ ।

अण्णतित्थिया – स्वपरगच्छ । नि० चू० प्र० ७६ अ । अन्यतीर्थिका – चरकपरिव्राजकशाक्याजीवकवृद्धश्रावकप्रभृतय । नि० चू० प्र० १४७ आ ।

अण्णत्थ–अन्यत्र, परिवर्जनार्थे । आव० ८५० ।

अण्णत्थे–अन्वर्थे–अनुगत सम्बद्ध परमैश्वर्यादिकोऽर्थो यत्र स । विशे० ७२ ।

अण्णदत्तहरे–अन्यदत्तहर–अन्यैर्यो दत्त–राजादिना वितीर्ण हरति अपान्तराल एवाच्छिनत्ति । उत्त० ३७४ । अन्यादत्तहर–ग्रामनगरादिषु चौर्यकृत । उत्त० ३७४ ।

अण्णमण्णघडत्ता–अन्योऽन्यघटता, अन्योऽन्य पदसमुदायरचना यत्र तदन्योऽन्यघटं तद्भावस्तत्ता आलिका । भग० ३१५ ।

अण्णवं–अर्णव –अर्णो–जल विद्यते यत्रासावर्णव । उत्त० २४१ ।

अण्णसंभोइय–अन्यसाम्भोगिक । आव० ८४७ ।

अण्णहत्थिमणी–परतीर्थिका अगारस्था अविरतिका । बृ० तृ० ४७ आ ।

अण्णाइट्ठसरीरं–अन्याविष्टशरीरम्,व्यन्तराधिष्ठितशरीरम् । आव० ६३३ ।

अण्णाइट्ठो–अन्याविष्ट, परायत्त, यक्षाविष्टो वा । उत्त० ११३ । आविष्ट । अन्त० २० ।

अण्णाइत्तो–अपराद्ध । नि० चू० तृ० १०१ अ ।

अण्णाएसि–अज्ञातैषी, अज्ञातो जातिश्रुतादिभि एषति–उञ्छति पिण्डादीति । उत्त० ११४ ।

अण्णाणं–अज्ञानम्, चतुर्थं कुडङ्ग । आव० ८५६ । एकविंशतितम परीषह, कर्मविपाकजादज्ञानान्नोद्विजेत । आव० ६५७ ।

अण्णाणदोसे–अज्ञानदोष । औप० ४४ ।

अण्णाणिय–अज्ञानिक, कुत्सितं ज्ञानमस्यास्तीति । आव० ८१७ ।

अण्णाणियवाई – सप्तषष्टिभेदा अज्ञानवादिन । सम० ११३ ।

अण्णाणो–अज्ञान, दृष्टिमोहित । आव० ४४६ ।

अण्णातचज्जा–अज्ञातचर्या । आव० ८२७ ।

अण्णातपिंडे–अज्ञातपिण्ड, अन्तप्रान्त, अज्ञातेभ्यो वा–पूर्वापरासंस्तुतेभ्यो वा पिण्डोऽज्ञातोञ्छतया लब्ध । सूत्र० १६४ ।

अण्णायं–अज्ञातोञ्छ । बृ० द्वि० १८६ आ ।

अण्णाय–अज्ञातम्, अनुमानत अज्ञातम् । भग० ११७, १०० ।

अण्णायया–अज्ञानता, तपसोऽप्रकाशनम् । प्रश्न० १४६ । अज्ञातता तपस्यज्ञातता, योगसङ्ग्रहे सप्तमो योग । आव० ६६४ ।

अण्णायदेसो–अदर्शितभावो । नि० चू० प्र० ७२ आ ।

अण्णियपुत्तो–अर्णिकापुत्र । नि० चू० प्र० १६४ आ ।

अण्णिया–अर्णिका, दक्षिणमथुरायां वणिक्पुत्री । आव० ६८८ ।

अण्णियापुत्ते–अर्णिकापुत्र । बृ० तृ० १३० आ ।

अण्णोयत्ता–ईश्वरमता । व्य० द्वि० १२४ आ ।

अण्हयति–क्षरति (रा०)

अण्हय–आस्रव, आ–अभिविधिना स्नौति–स्रवति कर्म यस्मात् स आश्रव प्राणातिपातादि । प्रश्न० ० ।

अण्हयकर–आस्रवकर । औप० ४२ ।

अण्हयकरिं–कर्माश्रवकरीं । आचा० १८८

अण्हयकरे–कर्माश्रवकारी । आचा० ४०५ ।

अण्हाण–अस्नानम् । आव० १४८ ।

अण्हायगो–अस्नायक । आव० ८३१ ।

अतज्जाय–अतज्जातपारिष्ठापनिकी, पारिष्ठापनिक्या द्वितीयो भेदः। आव० ६१९।
अतज्जायं–अतज्जातीयं, भिन्नजातीयम्। आव० ६२३।
अतडं–अतीर्थं, अन्यतीर्थं वा। बृ० द्वि० ३१ अ। अतिर्थं। नि० चू० तृ० १७ अ।
अतति–सततमवगच्छति। ठाणा० १०।
अतन्त्रम्–शास्त्रलक्षणरहितम्। आव० १२०।
अतरं–तरीतुमशक्यं, विषमरणं भवं वा। उत्त० २८२।
अतरंतं–ग्लानम्। बृ० प्र० २२६ आ। अतरन्त–अतिग्लानः। ओघ० १८३।
अतरंत–ग्लाना। ठाणा० ११८।
अतरंते–अतरन्–असहः। व्य० द्वि० ३७ अ।
अतरंतो–अतरन्, अशक्नुवन्। आव० ८४७। अशक्नुवन्–असमर्थः। दश० ८९। अशक्नुवान्। आव० ६३७। ग्लानः। ओघ० ४५। यदाऽऽत्मसम्यक्स्थिताभ्यां पादाभ्यां न शक्नोति स्थातुं तदा। ओघ० ८४। गिलाणो। नि० चू० प्र० ४३ अ, ३० आ, ३६० अ। ग्लानः। बृ० तृ० ५ आ, नि० चू० प्र० ८४ अ।
अतरण–अतरणः, अशक्तः, ग्लानः। ओघ० ६७, बृ० प्र० २३४ आ।
अतरो–ग्लानः। बृ० द्वि० २२४ अ। रत्नाकरः। बृ० प्र० ३७ अ।
अतसी–अयमी, धान्यविशेषः। ठाणा० ४०६। गुच्छविशेषः। प्रज्ञा० ३२। धान्यविशेषः। नि० चू० प्र० १४४ आ।
अतहणाणे–अनथाज्ञानम्। ठाणा० ४८१।
अतारं–अतारम्, तरितुमशक्यम्। सूत्र० ८१।
अतारिमा–दुस्तरा। सूत्र० ८६।
अति–अतिशयवान्। ठाणा० ४७३।
अतिंति–प्रविशन्ति। नि० चू० प्र० २०३ अ।
अतिंतिणः–अतिन्तिणः, अलाभेऽपि नेषदन्किमनभाषी। दश० २३३। अतिन्तिनः, न सकृत्किंचिदुक्तः सासूयया भूयो भूयो वक्ता, प्रतिपूर्णः सूत्रादिना। दश० २५८।
अतिअत्तिय – आतियात्रिकाः, मार्गरक्षकाः। बृ० द्वि० १२५ अ।
अतिउच्चाओ–अतिप्रान्तः, प्राघूर्णकादिः। ओघ० १८६।
अतिउच्चरिए–अभ्युदरितं। ओघ० १३८।
अतिकाए–महोरगेन्द्रः। ठाणा० ८५। अतिकायः–महोरगभेदविशेषः। प्रज्ञा० ७०।
अतिकमा – अतिक्रमः–अतिलङ्घनं, विनाशः। आचा० १३५। प्रतिश्रवणतो मर्यादाया उल्लंघनम्। व्य० प्र० ९० अ।
अतिकीलावासो – अतिक्रीडावासः, सुस्थितलवणाधिपस्य भौमेयविहारविशेषः। जीवा० ३१५।
अतिक्खतुंडो – अतीक्ष्णतुण्डम्–अतीक्ष्णमुखम्। आव० ७६४।
अतिक्कान्ता–अतीता। आचा० १७८।
अतिखद्धं–प्रभूतम्। बृ० द्वि० १८७ अ।
अतिखद्ध – गुरोरालोके भोक्तव्यम्, अतिप्रचुरं भक्षयेन। ओघ० १८३।
अतिगए–अतिगतः। आव० १७३।
अतिगओ–अतिगतः। दश० ४१।
अतिगता–प्रविष्टा। बृ० द्वि० १४४ अ।
अतिगमणं–प्रवेश। बृ० द्वि० १६३ आ। अतिगमनं, प्रवेशनम्। बृ० प्र० २७५ आ।
अतिगुपिल–अतिगूढम्। आव० २९६।
अतिगुलिका–(अइगुलिया)–कुक्कुसा। बृ० तृ० १९५ अ।
अतिघरं–सजतिपडिस्सतो। नि० चू० प्र० २३७ आ।
अतिचारो–व्यतिक्रमः स्खलनपर्यायः। तत्त्वा० ७–१८।
अतिच्छिए–अतिक्रान्तायाम्। ओघ० १५२।
अतिजाति–पविसति। नि० चू० प्र० ३४ आ।
अतिजाते–समृद्धतरः। ठाणा० १८४।
अतिजाणं–अतियानम्। आव० ३६६।
अतिजाहिं–अतियास्यति–प्रवेक्ष्यति। ठाणा० ४६३।
अतिणिओ–आनीतः। आव० २०४।
अतिणीओ–अतिनीतः, प्रापितः। आव० ८०७।
अतिणेउं–प्रवेश्य। बृ० तृ० ७४ आ।
अतिण्णो–ग्लानः। बृ० प्र० २८८ आ।
अतितणित–आयच्छइच्छन्। नि० चू० प्र० १२० आ।
अतिताणकहा–अतियानकथा–नगरादौ प्रवेशकथा। ठाणा० २१०।
अतिताणगिहाणि–अतियानगृहाणि–नगरादिप्रवेशे यानि गृहाणि। ठाणा० ८६।
अतितेया–अतितेजा, रात्रिनामविशेषः। सूर्य० १४७।

अतित्थ.- अतीर्थम्, तीर्थस्याभावोऽतीर्थम्, तीर्थस्याभावश्चानुत्पादोऽपान्तराले व्यवच्छेदो वा। प्रज्ञा० १९।

अतित्थसिद्धा-अतीर्थे-तीर्थान्तरे साधुव्यवच्छेदे जातिस्मरणादिना प्राप्तापवर्गमार्गा मरुदेवीवत् सिद्धा अतीर्थसिद्धाः। ठाणा० ३३।

अतित्थाविते-प्रत्याख्यातः, निषिद्धः। नि० चू० प्र० १८५ अ.।

अतित्थिओ-अस्तमितो। नि० चू० प्र० ३१२ अ। समाप्तेत्यर्थः। नि० चू० तृ० १२६ अ।

अतिथिसंविभाग-न्यायागतानां कल्पनीयानामन्नपानादीनां द्रव्याणां देशकालश्रद्धासत्कारक्रमोपेतं परया आत्मानुग्रहबुद्धया संयतेभ्यो दानम्। तत्त्वा० ७-१६।

अतिदहाति-(अइए) प्रकरोति अतिगच्छति वेति। ठाणा० २९८।

अतिधाडिय-अतिधाडितः-भ्रामितः। प्रश्न० ५३।

अतिपरिणामकं-अपवादैकमतिः। बृ० प्र० १३२ अ।

अतिपरिणामा-अतिपरिणामाः, अतिव्याप्त्याऽपवादद्रष्ट्योऽतिपरिणामाः। विशे० १३१। अतिव्याप्त्या परिणामो प्रत्योत्सवरूपो यस्य सः। व्य० प्र० ७२ अ।

अतिपात-प्राणिनः विध्वंसः। ठाणा० २१०।

अतिपातनम्-प्राणवता सह वियोजनम्। ठाणा० २६।

अतिपासे - अतिपार्श्व-ऐरवतावसर्पिणीतीर्थंकरः। सम० १५३।

अतिपुरुषः-किंपुरुषभेदविशेषः। प्रज्ञा० ७०।

अतिप्पणया - अदुःखनादिकरणकारणलोकानुत्पादनेन। भग० ३०५।

अतिबलरायां-अतिबलराजा। आव० ११६।

अतिमन्द्रः-गम्भीरः। जै० प्र० ५२९।

अतिम(मु)त्तकुमारो-राजर्षिनाम। नि० चू० द्वि० २७अ।

अतिमुक्तकः-पट्वर्षप्रव्रजितः। भग० ५८९। अतिमुक्तकः-मालवद्पुष्पविशेषः। प्रज्ञा० ३७।

अतिमुक्तकचन्द्र-(अइमुत्तचंदग) पुष्पविशेषस्तम्। भग० ११९।

अतिमुत्तग-अतिमुक्तकलता-लताविशेषः। जीवा० १८२।

अतिमुत्ते-अतिमुक्तः, कुमारश्रमणः। अन्त० ६। विजयराजः श्रीदेव्याः सुतः। अन्त० २३।

अतियाण-अतियानं-नगरप्रवेशः। ठाणा० १७३। प्रवेशः। नि० चू० प्र० २७३ अ।

अतियातो-अतियातः, गतः। उत्त० ४८१।

अतियारे-अतिचारः-अतिचरणं प्रकृतो व्रतस्यातिक्रमणम्। व्य० प्र० ९० अ।

अतिराउले-स्वामिकुलम्। प्रश्न० २५३।

अतिरायितं-अताडितम्। औप० ११०

अतिरिच्छच्छिन्नं - अतिरश्चीनच्छिन्नं-तिरश्चीनमपाटितं। आचा० ४०५।

अतिरित्तं - अतिरिक्तम्, कुक्षिपूराहारप्रमाणातिक्रान्तम्। प्रश्न० १५४।

अतिरित्तसज्जासणिए-अतिरिक्ता-अतिप्रमाणा शय्यासनिरासनानि च पीठकादीनि यस्य सन्ति सोऽतिरिक्तशय्यासनिकः। सम० ३७।

अतिरित्ता-यंत्रशाला। नि० चू० प्र० १०६ आ।

अतिरूपः-भूतभेदविशेषः। प्रज्ञा० ७०।

अतिरेगं-अतिरेकः, आधिक्यम्। भग० १८६। अतिरेकम्-अत्यर्थम्। औप० २२५।

अतिलोलुए-अतीव रसलम्पटः। उत्त० ३४५।

अतिवइमाणे - अतिव्रजमानः-मर्यादयात् सर्वाभ्यन्तरं प्रतिगच्छन्। सम० ९७।

अतिवट्टिय-अतिवर्तितः-भ्रामितः। प्रश्न० ५६।

अतिवतित्ताणं - अतिक्रम्य-अतिशयेन गत्वा। प्रज्ञा० ५१०।

अतिवयती-अतिव्रजति, बाहुल्येन गच्छति। जीवा० १३९।

अतिवासा-अतिवर्षा, अतिशयवर्षा वेगवद्वर्षणम्। भग० १९९।

अतिवाहयति-प्रेरयति, विसर्जति च। प्रश्न० ६४।

अतिविज्जे-अतिविद्यः, तत्त्वपरिच्छेत्री विद्या यस्य। आचा० १५९।

अतिविद्वान्-विदितागमसद्भाव. सन्। आचा० १९१।

अतिवेगो-अतिवेग.-अतिकालमार्गप्रवेगः। प्रश्न० ५१।

अतिसुक्को-सुक्कसुक्को। ठाणा० २०४।

अतिसेसे-शेषाण्यतिक्रान्तं सातिशयम्। ठाणा० १८४। अतिशेषा-अतिशयाः। ठाणा० ३१२। अतिसेसे-अतिशये। उत्त० १८०।

अत्तव-आत्मवान्, सचेतन । दश० २३६ ।

अत्तसंपग्गहिय-आत्मसम्प्रगृहीत, आत्मैव सम्यक् प्रक-र्षेण गृहीतो येन। दश० २५६ ।

अत्तसमाहिय-आत्मसमाहित, आत्मना समाहित ज्ञान-दर्शनचारित्रोपयोगेन सदोपयुक्त इत्यर्थ । आत्मा वा समा-हितोऽस्येत्यात्मसमाहित । सदा शुभव्यापारवानित्यर्थ । आचा० १९१ ।

अत्तसरिसो-आत्मसदृश, कुलानुरूप । उत्त० ४० ।

अत्तहिय – आत्महित, मोक्ष । दश० १०० । मोक्खो । दश० चू० ६८ ।

अत्ता-आत्मा । आव० २५८ । मोक्ष, संयमो वा । सूत्र० ९० । आत्ता -गृहीता, स्वीकृता । ठाणा० ६३ । आ-अभिविधिना त्रायन्ते-दुःखात् संरक्षन्ति सुखं चोत्पादयन्तीति आत्रा आप्ता वा-एकान्तहिता. । भग० ६५६ । आर्ता -क्षुत्तृड्भ्या पीडिता, आप्ता – रागद्वेषरहिता, आप्ता – गीतार्था । बृ० द्वि० १४२ अ ।

अत्ताणओ-अत्राण । आव० २११ ।

अत्ताया-यष्टिद्वितीया मान्या, कार्पटिका, संयता वा । बृ० द्वि० ८२ आ ।

अत्ताणो – अत्राण, अनर्थप्रतिघातवर्जित । प्रश्न० १९ । त्राणरहित, अनर्थप्रतिघातकाभावात् । प्रश्न० ११ । गवा-दिहारिणो । नि० चू० द्वि० ११ अ ।

अत्ताहिट्ठिय-आत्माधिष्ठित । ओघ० १५० ।

अत्ति(त्ति)मुत्तय-अतिमुक्तक, पुष्पप्रधानवनस्पतिविशेष । जं० प्र० ४६ ।

अत्तुक्कोसे-आत्मोत्कर्ष । सम० ७१ । आत्मगुणाभिमान । ठाणा० २७१ ।

अत्तेय-आत्रेय ऋषिनाम । आव० ३७२ ।

अत्तो – आप्त, मोक्षमार्ग, प्रक्षीणदोष, सर्वज्ञ । सूत्र० १९५ । रागादिरहित । दश० १२८ ।

अत्तोवणीए – आत्मैवोपनीत – तथा निवेदितो-नियोजितो यस्मिन् । ठाणा० २७५ ।

अत्थं-अस्त्रम्, नाराचादि क्षेप्यायुधम् । प्रश्न० ११६ । अर्थ, विषय, । आव० २८३ । अर्थ -ज्ञेय वात् सर्वमेव वस्तु, अभिधेय । उत्त० ३६८ । अभिधेय, जीवादितत्त्वरूपो वा । उत्त० ३८९ । अर्थ्यते इत्यर्थ -स्वर्गापवर्गादि । उत्त० ४४८ । व्याख्यानं । ठाणा० ५२ । सूत्रस्य व्याख्यानं । ठाणा० १५० । विशे० ५९२ ।

अत्थंगओ-अस्तं पव्वइए गतो, अचक्खुविसयपथे वा गतो । दश० चू० ११३ ।

अत्थंतमयम्मि-अस्तमयति । उत्त० ४३५ ।

अत्थंतरं-अर्थान्तरम्, पृथग्भूतम् । आव० ६०१ ।

अत्थंतरभावे-अर्थान्तरभाव -भेद । आव० ४७६ ।

अत्थ – *अर्थ, शब्दादिविषयभावेन परिणतद्रव्यसमूह* । विशे० १६२ ।

अत्थ-*(अत्यपुरिसे)* अर्थपुरुष, अर्थार्जनपर । आव० ३७७ । अर्थ, निरुपमसुखरूपमोक्ष । दश० १८९ । अर्थनम्, असम्प्राप्तकामभेद, तदभिप्रायमात्रम् । दश० १९४ । अस्त, अस्तपर्वत अदर्शन वा । दश० २३३ । आदेश । बृ० प्र० २७ आ ।

अत्थअवगमो-अर्थावगम, अर्थपरिच्छेद । दश० १३५ ।

अत्थई-गुच्छविशेष । प्रज्ञा० ३२ ।

अत्थकंखिया-प्राप्तेऽप्यर्थेऽविच्छिन्नेच्छा । भग० ६७१ ।

अत्थकरो-अर्थकर विद्यार्थकरणशील, भावकरविशेष । आव० ४९९ ।

अत्थकहा – अर्थकथा, विद्या शिल्पमुपायोऽनिर्वेद सञ्चय दक्षत्व साम दण्डो भेद उपप्रदानम् । दश० १०७ ।

अत्थक्के-अकाण्ड -अनवसर । दश० ९३ ।

अत्थगवेसणया-अर्थगवेषणया, अर्थगवेषणनिमित्तम् । सूर्य० ७९२ ।

अत्थग्घे-अस्ताघ । ओघ० ३० । अस्ताघम् । आव० ४१९ ।

अत्थजुत्ती-अर्थयुक्ति, हेयेतररूपा अर्थयोजना । दश० १६७ ।

अत्थजुत्तो-अर्थयुक्त, अर्थसार, अपुनरुक्तो, महार्थ । जीवा० २५५ ।

अत्थदूसणं-अर्थदूषणव्यसनम् । अर्थोत्पत्तिहेतवो ये सामा दुपायचतुष्टयप्रभृतय प्रकारास्तेषां दूषणम् । व्य० प्र० १५७ अ ।

अत्थधम्मगई-अर्थश्च धर्मश्चार्थधर्मौ यदि वाऽर्थ्यते-हितार्थि भिरभिलष्यते, गति -गत्यर्थानां ज्ञानार्थतया हिताहित लक्षणा स्वरूपपरिच्छित्ति । उत्त० ४७२ ।

अत्थनिउरंगे-संख्याविशेष । सूर्य० ९१ ।

अत्थनिउरे-संख्याविशेष । सूर्य० ९१ ।

अत्थनिकुरं-अर्थनिकुरं, चतुरशीतिरर्थनिकुराङ्गशतसहस्राणि। जीवा० ३४५।

अत्थनिकुरंगं - अर्थनिकुराङ्गम्, चतुरशीतिर्नलिनशतसहस्राणि। जीवा० ३४५।

अत्थपज्जाया-अर्थपर्याया, ये तु तेषामेव वाचकशब्दानामभिधेयार्थस्यात्मभूता भेदाः, यथा कनकस्य कटककेयूरादय, ते सर्वेऽप्यर्थपर्याया भण्यन्ते। विशे० ११८। ये तु तद्देशमभिदधति तेऽर्थस्यैकदेशप्रतिपादका पर्याया अर्थपर्याया उच्यन्ते। विशे० ११७।

अत्थपयं-अर्थपदम्, युक्तिहेतुर्वा। प्रज्ञा० १५३।

अत्थपलिमंथो-अर्थपरिमन्थ। विशे० ६१८।

अत्थपिवासिय - अप्राप्तार्थविषयसञ्जाततृष्णा। भग० ६७१।

अत्थपुहुत्त-अर्थपृथक्त्व-श्रुताभिधेयोऽर्थ तस्मात्सूत्रं पृथक्, अर्थेन वा पृथु अर्थपृथु तद्भाव अर्थपृथुत्व। आव० ६१। अर्थात् पृथक्त्व कथञ्चिद्भेदो यस्य, विस्तीर्णमर्थपृथु। विशे० ४९२।

अत्थमणमुहुत्तं - अस्तमनमुहूर्त्तम्, अस्तोपलक्षितं मुहूर्तम्। जं० प्र० ४०९।

अत्थमंत-अर्थवताम्, प्रयोजनवताम्। भक्षणाद्यर्हाणाम्। जं० प्र० २४३।

अत्थमंतमेत्त - अस्तमयति मित्रे-सूर्ये, सायम्। जं० प्र० २४३।

अत्थरणं-आस्तरणम्, आस्तरण करोति। आव० ४१।

अत्थरय - आच्छादनम्। जं० प्र० ५५। आस्तरकेण, अस्तरजसा वा। भग० ५४२।

अत्थलोला-अर्थे लोला-अर्थलोला-लम्पट-चौरादय। उत्त० ५९०।

अत्थविगप्पणा-अर्थविकल्पना। आव० ४८४।

अत्थविणिच्छय-अर्थविनिश्चय-अपायरक्षक कल्याणावहं वा अर्थाविनिश्चयभावम्। दश० ९२०।

अत्थसंजुत्तं-सद्भावसंयुक्त। दश० चू० ८९।

अत्थसंपयाणं-सांवत्सरिकार्थदानम्। आचा० ४२२।

अत्थसत्थं-अर्थशास्त्रम्। आव० ४२२। अर्थोपायप्रतिपादकं शास्त्रम्। प्रश्न० ९७। नीतिशास्त्रादि। जं० प्र० २१९।

अत्थसिद्धे - अर्थसिद्धः, पाक्षीयदशमदिवसनाम। सूर्य० १४७, जं० प्र० ४९०।

अत्थस्स-अस्तो मेर्वन्तर्धानान्तरितो रविरस्तं गत इति व्यपदिश्यते तस्य पर्वतराजस्य गिरिप्रधानस्य। सम० ६५।

अत्था-अर्था, द्रव्याणि। उत्त० १८४। अर्थ्या, प्रार्थनीया वा। उत्त० १८४। अर्यन्त - गम्यन्त इत्यथा। ओघ० ५। शब्दादय। ठाणा० १५३, आचा० २०१। फलानि, वस्तूनि। ठाणा० ३३। अर्यन्ते-अभिलष्यन्ते क्रियार्थिभिरर्यन्ते वा अधिगम्यन्ते। ठाणा० ३१५। निर्युक्तिभाष्यसंग्रहणिवृत्तिचूर्णिपञ्जिकादिरूपा। सम० १११।

अत्थाणं-देशविशेष। भग० ६८०।

अत्थाणमंडविया-आस्थानमण्डपिका। आव० ८९।

अत्थाणि-आस्थानिका। उत्त० ११५।

अत्थाणिमंडवो-आस्थानमण्डप। नि० चू० प्र० २५८ आ।

अत्थाणियं-आस्थानम्। उत्त० १४१।

अत्थाणियमंडविया - आस्थानमण्डपिका। बृ० प्र० २७ आ।

अत्थाणी-आस्थानी। आव० ६७२। आस्थानिका। आव० १४५, २९८।

अत्थाणीयरगओ-आस्थानविरगत। आव० २१६।

अत्थादाणं-अष्टाङ्गनिमित्तं प्रयोग। बृ० तृ० ८६ अ।

अत्थामा - अस्थामान, सामान्यत शक्तिविकला। जं० प्र० २३९। अस्थामा, सामान्यत शक्तिविकल। भग० ३२३।

अत्थायणयं-आस्थानिका। आव० ३८२।

अत्थायाणं-अर्थादानं-द्रव्योपादानकारणमष्टाङ्गनिमित्तं सद्दत्-प्रयुञ्जान। ठाणा० १६४।

अत्थावत्ती-सामर्थ्यगम्या। बृ० द्वि० १२१ आ।

अत्थावत्तीदोसो-अर्थापत्तिदोष, यत्रार्थादनिष्टापत्ति, सूत्रदोषविशेष। आव० ३७४।

अत्थाहं-अस्ताघम्, अविद्यमानस्ताघम्, अगाधम्। भग० ८२। अस्ताघ -निरस्ताघस्तलम्। भग० ८२। अप्रमाणम्। आव० ३७४।

अत्थि-येन येन यदा यदा प्रयोजनं तत्तदा तदाऽस्ति-भवति जायते इति सुखमानन्दहेतु वा इति। ठाणा० ४८८। अस्ति, विद्यन्ते, सन्तीत्यर्थ, अथवाऽस्ति अय पर्वो यदत।

भग० ३२। प्रदेश.। भग० १४९, जीवा० ६। अस्ति, निपात: सर्वलिङ्गवचन । प्रज्ञा० ५६३। प्रदेश । आव० ६००। त्रिकालवचनो निपात । अभूत्, भवति, भविष्यति च। आव० ७६८। अस्तिद्वारम्, अस्त्यन्यथैतन्नेहप । दश० १२५। स्वामी । विशे० ६७२।

अत्थिकाए–अस्तिकाय प्रदेशराशि । भग० ३२४।

अत्थिकाय–अस्तिकाय., प्रदेशराशि, अस्तीति सन्ति आसन् भविष्यन्ति च ये काया प्रदेशराशयस्ते अस्तिकाया। भग० १४८। प्रदेशसङ्घात । जीवा० ६। धर्मास्तिकायादि । दश० १३४।

अत्थिकायउद्देसए–भगवत्यामितिविशतस्य दशमोद्देशकनाम । भग० ६०८।

अत्थिकायधम्म–अस्तिक यधर्म । दश० २१।

अत्थिकायधम्मे–अस्तय –प्रदेश स्तेषा कायो–राशिरस्तिकाय स एव धर्मो–गतिपर्याये जीवपुद्गलयोर्धारणात्। ठाणा० ५१५।

अत्थिक्क–आस्तिक्यम्–जीवस्यास्तित्वनित्यत्वकर्तृत्वभोक्तृत्वमोक्षतत्साधनश्रद्धानम्। आव० ५९१।

अत्थिनत्थि–अस्तिनास्तिनामपूर्वं । ठाणा० १९९।

अत्थिय–अस्थिक–बहुबीजकवृक्षविशेष । प्रज्ञा० ३२। अस्तिकाय । भग० ८१। अस्थिकम्, अस्थिकप्रभवम्। दश० १७६।

अत्थिया–बहुबीजकवृक्ष । भग० ८०३।

अत्थी–अर्थज्ञाता। बृ० प्र० ११२ अ।

अत्थीनत्थिपवायं–यद्यथा लोके अस्ति नास्ति च यद्यत्र तथोच्यते चतुर्थपूर्वनाम। सम० २६।

अत्थुआ–आस्तृता। आव० १७३।

अत्थुरणं–पाउरणं। नि० चू० द्वि० ६१ अ।

अत्थुव्वाइ–(अत्थुरइ) आस्तीर्यते। ओघ० ८३।

अत्थे–अनेन यन्तरिन मृर्यास्मिन्त इत्यभिधीयते। मेरुनाम। ज० प्र० ३७०।

अत्थेगइया–सन्त्येकके। प्रज्ञा० २८१।

अत्थो–अर्थ, अभिधेय, प्रयोजन वा। प्रश्न० ११०। कारण, तात्पर्य पदार्थो वा। जीवा० १८। अर्थत–गम्यत इति। आव० १०। पञ्चमा, अचक्षुर्विषयपदार्थो वा। दश० चू० १२३। अर्थ–य मृग्यमाणितय। विशे० ५८८। अर्यत इति, विरतं प्रबोधित विकचकल्पम्। आव० ८६। अभिप्रेतपदार्थ । आव० ४१५। द्रव्यम्। आव० ६०७। अर्थ्यंत इति। उत्त० ६८। वित्तादि। दश० ११४।

अत्थोग्गहणं–फलनिश्चयम्। भग० ५४१।

अत्थोग्गहे–अर्थावग्रह, अर्थस्यावग्रहणम्, अनिर्देश्यसामान्यरूपाद्यर्थग्रहणम्। व्यञ्जनावग्रहोत्तरकालमेकसामयिकमनिर्देश्य सामान्यमात्रार्थग्रहणम्। प्रज्ञा० ३११। अर्थस्य–सामान्यनिर्देश्यस्वरूपस्य शब्दादे अवेति–प्रथम व्यञ्जनावग्रहानन्तर ग्रहण–परिच्छेदनमर्थावग्रह । सम० १२। भग० ३४४। व्यञ्जनावग्रहचरमसमयोपात्तशब्दाद्यर्थग्रहणलक्षण। आव० १०। अर्यते–अधिगम्यतेऽर्यते वा अन्विष्यत इत्यर्थ –सामान्यरूपाद्ये प्रथमपरिच्छेदनमर्थावग्रह । ठाणा० ५१।

अत्थोभं–अस्तोभक, वैहिहकारादिपदच्छिद्रपूरणस्तोभकनिपातशून्यम्, सूत्रगुण । आव० ३७६।

अथंडिलं–सचित्तभूमी। नि० चू० प्र० ३८ आ।

अथ–अथशब्द प्रक्रियाप्रश्नानन्तर्यमङ्गलोपन्यासप्रतिवचनसमुच्चये ष्वत्रानन्तर्यार्थे। ठाणा० ८९५। वाक्योपन्यासार्थ परिप्रश्नार्थो वा। भग० १६। प्रक्रियाप्रश्नानन्तर्यमङ्गलोपन्यासप्रतिवचनसमुच्चयेषु। प्रज्ञा० २४७।

अथक्क–अप्रस्ताव । बृ० प्र० ५२ आ।

अथक्कागओ–अकाण्डागत । आव० ८०० ।

अथक्के–अनिश्चन्त । आव० १०९।

अथालंदोग्गहो–यथालन्दिकावग्रह । नि० चू० प्र० २३९ अ

अथाहं–जत्थ पुण वुड्डति नासिया त। नि० चू० द्वि० ७८ आ।

अथिरो–अस्थिर, क्षणावस्थायी। मरण० ६।

अदट्ठे–अदृष्ट, प्रशस्तयोगत्रयमहिमामात्र वा। सम० ५।

अदंसणो–अन्ध । ठाणा० १६९।

अदक्खु–अदृष्ट, अनिपुण । सूत्र० ७८। अदृष्ट, अदर्शन । सूत्र० ७४।

अदक्खुदंसणो–अचक्षुर्दर्शन अचक्षुर्दर्शनमस्यासौ, चैव रदर्शन गर्शन। सूत्र० ७४।

अदक्खेयव्व–प्राप्यम्। ओघ० १६३।

अदट्ठमेव–अदृष्ट्वैव। आचा० ०१३।

अदट्ठो–पिपासि मेलातालण जो दुबल। नि० चू० प्र० १०८ अ।

अद्दणा-विषादीकृता। नि० चू० प्र० २२१ अ।

अदत्तं-अदत्तम्, अदत्तद्रव्यग्रहणम्। प्रश्न० ४। अविनीतम्, अधर्मद्वारस्य तृतीयं नाम। प्रश्न० ४२।

अद्दन्न-आत्मरक्षणपरा। बृ० प्र० १९० आ।

अद्दसा-अदशा-दशिकारहिता क्षौमा। ओघ० २१७।

अद्दसी-अलसी। आव० ८५४।

अदिच्छाविज्जिहिह-अदित्सिष्येथे, निषेत्स्येथे। दश० १०।

अदिट्ठ-अदृष्टम्, प्रत्यक्षापेक्षया अदृष्टम्। भग० १९७, २००।

अदिट्ठलाभिय - अदृष्टलाभिकः, योऽदृष्टपूर्वेण दीयमानं गृह्णाति सः। प्रश्न० १०६।

अदिट्ठहडा-अदृष्टाहृता, अदृष्टोत्क्षेपमानीता, प्राभृतिका। आव० ५७६।

अदिट्ठि-अदृष्टे-तिरोहिते। ओघ० १६७।

अदिण्णे - अदत्तादानक्रिया, अदत्तादानाय यत्करणम्, क्रियायाः सप्तमो भेदः। आव० ६४८।

अदिन्नादाणवत्तिए-अदत्तादानप्रत्ययः। सम० २५।

अदिन्ने-अदत्तादानक्रिया-आत्मार्थमदत्तग्रहणम्। ठाणा० ३१६।

अदिस्समाणे - अदृश्यमानः, अनपदिश्यमानः। आचा० १३१।

अदीणयं-अदीनवन्तम्, अदीनं, दैन्यरहितम्। उत्त० २८२।

अदीणसत्तु-नमिनाथपूर्वभवनाम। सम० १५१।

अदीणसत्तू - अदीनशत्रुः, हस्तिशीर्षनगरनृपतिः। विपा० ८९। ठाणा० ४०१, ४०२।

अदीणो-पसण्णमणो। नि० चू० प्र० १८९ अ। अदीनः, अविक्लवः। उत्त० ११०। अदीनाकारयुक्तः। अनुत्त० ४। शोकाभावः। अन्त० २२।

अदु-अथ, 'अतः' इत्यर्थे। सूत्र० ६१। अथवा। उत्त० २९५।

अदुअक्खरिय-जुगुप्सिता, अद्वयक्षरिका। नि० चू० तृ० १८ अ।

अदुआलिआ-मथिका, मन्थनकारिणी। दश० ६०।

अदुक्खणया-अदुःखनता, दुःखस्य करणं दुःखनं तदविद्यमानं यस्यासावदुःखनः, तद्भावस्तत्ता अदुःखकरणमित्यर्थः। भग० ३०५।

अदुगुंछिअं-अजुगुप्सनीयम्, सामायिकाष्टमपर्यायः। आव० ४७४।

अदुट्ठे-अद्विष्टः अदुष्टो वा दायके आहारे वा। प्रश्न० १०९।

अदुतं-अद्रुतं, अनुत्सुकम्। प्रश्न० ११२।

अदुत्तरं-अथोत्तरम्, अथापरम्। भग० १५५, ३०६। अथान्यत्। जीवा० १६६। अथापरं। औप० ३७।

अदुयं-अशीघ्रम्। भग० २९४।

अ(अं)दुयबंधणं-अन्दुकबन्धनम्। सूत्र० १२८।

अदुवं-अथवा। उत्त० ११०।

अदुव-अथवा। भग० ११३।

अदुवा-अथवा, पक्षान्तरोपन्यासद्वारेणाभ्युपयोपदर्शनार्थः। आचा० ४७।

अदूयालियं-दन्मिश्रितम्। उत्त० १४६।

अदूरं-प्रत्यासन्नम्। आव० २३२।

अदूरसामंते - अदूरसामन्तम्, नातिदूरे नातिनिकटे। सूर्य० ५।

अदेसकालप्पलावी-जहा आयर्ष पडिक्कमियं अट्टकरणेहि कयं होविंतं, इहं ततो पमाणतं भग्गं ताहे सो अदेसकालप्पलावी भए पुव्वं चेव णायं एयं भज्जिहिति। नि० चू० तृ० ८० आ। अदेशकालप्रलापी, अतीते कार्ये यो भणति-यदिदं तत्र देशे काले वाऽकरिष्यत ततः सुन्दरमभविष्यदिति। उत्त० ३४७।

अद्द-आर्द्रम्, सरसम्। प्रज्ञा० ९१। सूत्रकृताङ्गस्य षष्ठमध्ययनम्। उत्त० ६१६। आव० ६५८। ग्रन्थविशेषः। प्रज्ञा० ३२।

अद्दइज्जं-आर्द्रकीयम्, सूत्रकृताङ्गस्य षष्ठमध्ययनम्। सूत्र० ३८५। सूत्रकृताङ्गाध्ययननामविशेषः। सम० ४२।

अद्दग-आर्द्रकम्, अनन्तकायभेदः। भग० ३००।

अद्दकुमारिज्जं-आर्द्रककुमारीयम् (महाध्ययनम्)। ठाणा० ३८७।

अद्दक्खु-अद्राक्षुः, दृष्टवन्तः। भग० २११।

अद्दण्णो-पीडितः। आव० ७००। अधृतिमापन्नः कातरः। आव० ८००। अधृतिमुपगतः। आव० ४१६। अधृतिमापन्नः। दश० ४८। अक्षणिकः। बृ० द्वि० ४६ अ। अधृतिमुपगतः। आव० १९०।

अद्द(ट्ट)न-मल्लविशेषनाम। व्य० द्वि० ३५७ अ।

अद्दया-आकुलीभूताः। बृ० प्र० २९० आ।

अद्दपुरं-आर्द्रपुरं, आर्द्रकराजधानी। सूत्र० ३८५।

अद्दया–आर्द्रका, हरिद्रा। उत्त० २१८।
अद्दवद्दं–आर्द्रवद्रवम्, निगालितम्। आव० ८५४।
अद्दसुतो–आर्द्रसुतः, आर्द्रकराजकुमारः। सूत्र० ३८५।
अद्दहिज्जति–आद्रहति। नि० चू० प्र० ३१७ अ।
अद्दहिया–आद्रहणम्। आव० ८५४।
अद्दा–आर्द्रानामनक्षत्रम्। ठाणा० ७७।
अद्दाए–आदर्शः। नि० चू० प्र० ३४७ अ।
अद्दाओ–आदर्शः। आव० २९८, ४१६।
अद्दागं–आर्द्रकं। ओघ० १७२। दर्पणः। बृ० प्र० ११६ आ। आदर्शः। ठाणा० २४३, सम० १२४। ओघ० १४८।
अद्दागो–आदर्शः। ठाणा० ५१२।
अद्दाणक्खत्ते–आर्द्रानक्षत्रम्। सूर्य० १३०।
अद्दामलगमेत्ते–आर्द्रामलकमात्रं। आव० ८५७।
अद्दायं–आदर्शः। आव० ६५।
अद्दाय–आदर्शः। प्रज्ञा० २९३।
अद्दारिट्ठे–आर्द्रारिष्टः, कोमलकाकः। जं० प्र० ३२।
अद्दिज्जमाणेहिं–आर्द्रैः–पुत्रकलत्राद्यनुपहजनितस्नेहादार्द्री-क्रियमाणैः। आचा० २९२।
अद्दी–अर्दिः, याञ्चा। प्रश्न० ९३।
अद्दीण–अदीनः, अक्षुभितः। प्रश्न० १०९।
अद्दीणमाणसे–अदीनमनसा। आचा० ४२४।
अद्दीणा–अदीनाः, कथं वयममुम् अविस्याम इति वैक्लव्य-रहिताः परीषहोपसर्गादिसम्भवे वा न दैन्यभाजः। उत्त० २८२।
अद्धं–अर्द्धम्। सूत्र० १६।
अद्धंसं–उपरासङ्गः। बृ० तृ० २५४ अ। नि० चू० प्र० १९१ अ।
अद्ध– अद्धाकाल.–चन्द्रसूर्यादिक्रियाविशिष्टोऽर्द्धतृतीयद्वीपसमु-द्रान्तर्वर्ती समयादिलक्षणः। आव० २५७। कालो। नि० चू० प्र० ३३७ अ। अर्द्धम्, भागमात्रा। भग० २०८। तिर्यग्वलितम्। जं० प्र० ५२।
अद्धकविट्ठगसंठाणसंठिते– अर्द्धकपित्थसंस्थानसंस्थितम्, चन्द्रविमानस्वरूपम्। सूर्य० २६२।
अद्धकविट्ठसंठाणसंठियं – अर्द्धकपित्थसंस्थानसंस्थितम्, उत्तानीकृतमर्द्धकपित्थं तस्येव यत्स्थानं तेन संस्थितम्। जीवा० ३७८।
अद्धकायसमाणा–आलोककव्यन्तरादिकायार्धप्रमाणा। जं० प्र० ५७।
अद्धखलुया–पादार्धाच्छादकं चर्म। बृ० द्वि० २२२ आ।
अद्धखल्ला–अद्धं जाव खल्या जीए उवाणहा। नि० चू० प्र० १३६ आ।
अद्धखित्तं – अर्द्धक्षेत्रम्। यदहोरात्रप्रमितस्य क्षेत्रस्यार्द्ध चन्द्रेण सह योगमश्नुते तन्नक्षत्रम्। सूर्य० १७७। जं० प्र० ४७८।
अद्धचंद–अर्द्धचन्द्रः, बाणविशेषः। आव० ६९७।
अद्धचंदा–अर्द्धचन्द्राः, खण्डचन्द्रप्रतिबिम्बानि चित्ररूपाणि। जं० प्र० २०१।
अद्धचंदो – अर्द्धचन्द्रः, सोपानविशेषः। प्रश्न० ८। द्वारा-दिषु रत्नमयशिहविशेषः। प्रज्ञा० ९९, सूर्य० २९४। आव० ४३९, जीवा० १७५।
अद्धचक्कवाला–चक्रवालार्धरूपा। भग० ८६६। अर्धच-क्राकारः। ठाणा० ४०७।
अद्धजंघा–जङ्घार्धपिधायि चर्म। बृ० द्वि० २२२ आ।
अद्धजंघमेत्तो–अद्धजङ्घा। नि० चू० द्वि० ७६ आ।
अद्धद्धामीसग – अद्धद्धमिश्रा, सत्यासृषाभाषाभेदः। दश० २०९।
अद्धद्धामीसए–अद्धद्धामिश्रकं, अद्धा–दिवसो रजनी वा तदेकदेशः प्रहरादिः अद्धद्धा तद्विषयं मिश्रकं–सत्यासत्यं। ठाणा० ४९१। अद्धाद्धा, दिवसस्य रात्रेर्वा एकदेशः। प्रज्ञा० २५९। अद्धद्धा, दिवसरजन्येकदेशः। दश० २०९।
अद्धद्धामिस्सिया–अद्धाद्धामिश्रिता, दिवसस्य रात्रेर्वा एक-देशोऽद्धाद्धा सा मिश्रिता यया सा भाषा। प्रज्ञा० २५६।
अद्धनारायं–अर्द्धनाराचम्, यत्रैकपार्श्वे मर्कटबन्धो द्वितीये च पार्श्वे कीलिका तत्। जीवा० १५, ४२। प्रज्ञा० ४७१।
अद्धपत्थए–मानविशेषः। भग० ३१३।
अद्धपलितंका – अर्द्धपर्यङ्का – ऊरावेकपादनिवेशनलक्षणा। ठाणा० २९९, ३०२।
अद्धपलियंकसंठिते–अर्द्धपल्यङ्कसंस्थितम्। सूर्य० ११०।
अद्धपलंका–एकं जानुमुत्पाट्योपवेशनम्। बृ० तृ० २०० अ।
अद्धपेडा–गोचरचर्याभिग्रहविशेषः। उत्त० ६०५। ठाणा० ३६६।
अद्धपेला–गोचरचर्याभिग्रहविशेषः। नि० चू० तृ० १२ अ।

अद्धमंडल-अर्द्धमण्डलम् । जं० प्र० ४७८ ।

अद्धमंडलसंठिती-अर्द्धमण्डलसंस्थितिः, अर्द्धमण्डलव्यवस्था । सूर्य० १९ ।

अद्धमागहविब्भमं-अर्द्धमागधविभ्रमम्, गृहविशेषः । जीवा० २६९ । जं० प्र० १०७ ।

अद्धमागहा-अर्द्धमागधी, अर्द्धं मागध्या इत्यर्द्धमागधी भाषा । भग० २२१ । मागधभाषालक्षणं किञ्चिदन्यच्च प्राकृतभाषालक्षणं यस्यां सा, अर्द्धं मागध्या इत्यर्द्धमागधी । भग० २२१ । मगधद्धविसयभासानिबद्धं, अट्ठारसदेसीभासानियतं । नि० चू० द्वि० ३६ अ ।

अद्धमासियसु-अर्धमासिका । आचा० ३२७ ।

अद्धरत्तकालसमओ-अर्द्धरात्रकालसमयः । आव० १२१ ।

अद्धसंकासा-अर्द्धसङ्काशा, सर्वकामविरक्ततायां विषये देवसाधुराजस्य सागरचन्द्रस्य पुत्री । आव० ७१४ ।

अद्धसम-अर्द्धसमम्, पद्यविशेषः । दश० ८८ । वृत्ततरसमम् । ठाणा० ३९७ ।

अद्धसेलसुत्थियं-अर्द्धशैलसुस्थितम् । जीवा० २६९ ।

अद्धहारा-अर्धहारा, नवसरिकः । जं० प्र० २४, १०५ ।

अद्धहारभद्दो-अर्धहारभद्रः, अर्द्धहारे द्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः । जीवा० ३६९ ।

अद्धहारमहाभद्दो-अर्द्धहारमहाभद्रः, अर्द्धहारे द्वीपेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः । जीवा० ३६९ ।

अद्धहारमहावरो-अर्द्धहारमहावरः, अर्द्धहारे समुद्रेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः । जीवा० ३६९ ।

अद्धहारवरभद्दो-अर्द्धहारवरभद्रः, अर्द्धहारवरे द्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः । जीवा० ३६९ ।

अद्धहारवरमहाभद्दो-अर्द्धहारवरमहाभद्रः अर्द्धहारवरे द्वीपेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः । जीवा० ३६९ ।

अद्धहारवरमहावरो-अर्द्धहारवरमहावरः, अर्द्धहारवरे समुद्रेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः । जीवा० ३६९ ।

अद्धहारवरावभासभद्दो-अर्द्धहारवरावभासभद्रः, अर्द्धहारावभासे द्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः । जीवा० ३६९ ।

अद्धहारवरावभासमहाभद्दो-अर्द्धहारवरावभासमहाभद्रः, अर्द्धहारावभासे द्वीपेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः । जीवा० ३६९ ।

अद्धहारवरावभासमहावरो-अर्द्धहारवरावभासमहावरः, अर्द्धहारवरावभासे समुद्रेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः । जीवा० ३६९ ।

अद्धहारवरावभासवरो-अर्द्धहारवरावभासवरः, अर्द्धहारवरावभासे समुद्रे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः । जीवा० ३६९ ।

अद्धहारवरावभासो-अर्द्धहारवरावभासः, द्वीपविशेषः समुद्रविशेषश्च । जीवा० ३६९ ।

अद्धहारवरो-अर्द्धहारवरः, अर्द्धहारवरे समुद्रे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः । जीवा० ३६९ । द्वीपविशेषः, समुद्रविशेषश्च । जीवा० ३६८ ।

अद्धहारो-अर्द्धहारः, नवसरिकः । औप० ५५ । जीवा० १८१ । भूषणविधिविशेषः । जीवा० २६८ । द्वीपविशेषः, समुद्रविशेषश्च । जीवा० ३६८ । प्रज्ञा० ३०५ ।

अद्धा-अध्वा, पन्थाः । आव० ६६२ । समयः । विशे० ९६१ । कालः, अर्धतृतीयद्वीपसमुद्रान्तर्वर्ती समयादिलक्षणः । विशे० ८३७ । कालम् । ठाणा० ४४ । कालस्याख्या । प्रज्ञा० ९ । अवधिलब्धिकालः । आव० ४३ । अध्वा-मार्गः । आव० ६१७ । कालः । आव० ८४० । दिवसो रात्रिर्वा । प्रज्ञा० २५९ । अद्धा, पल्योपमादिकालविभागप्रमाणपरिमाणम् । सूर्य० ११ । अद्धाए अर्द्धं जाव योगो । नि० चू० प्र० १३६ आ ।

अद्धाउए-अद्धा-कालः तत्प्रधानमायु-कर्मविशेषोऽद्धायु, भवान्तरेऽपि कालान्तरानुगामी । ठाणा० ६६ ।

अद्धाए-कालस्य पौरुष्यादिकालमानमाश्रित्य इति । ठाणा० ४९८ । काले अपर्याप्तावस्थायाम् । दश० १८०, ।

अद्धाकालः-अद्धेव कालः, कालशब्दो हि वर्णप्रमाणकालादिष्वपि वर्तते, ततोऽद्धाशब्देन विशिष्यत इति । ठाणा० २०१ । चन्द्रसूर्यादिक्रियाविशिष्टोऽर्द्धतृतीयद्वीपसमुद्रान्तर्वर्ती अद्धाकालः । दश० ९ ।

अद्धाकाले-चन्द्रसूर्यादिक्रियाविशिष्टोऽर्द्धतृतीयद्वीपसमुद्रान्तर्वर्ती समयादिः । भग० ५३२ ।

अद्धाडप-अद्धाढकः, मानविशेषः । भग० ३१३ ।

अद्धाणं-पंथो । नि० चू० प्र० ५१ आ । महदरण्यं । वृ० द्वि० १७४ आ । अध्वा-पन्थाः । वृ० द्वि० १२२ अ । महंता अडवी । नि० चू० प्र० ५० आ । छिन्नापातं महदरण्यम् । वृ० द्वि० २१ आ । दुरतिक्रमणम् । दश० २६८ ।

अद्धाण–अध्वनः। आव० ५३५। अध्वा–विप्रकृष्टो मार्गः। बृ० प्र० २३८ आ।

अद्धाणतेणो–पंथे मुसतो। नि० चू० द्वि० ३८ आ।

अद्धाणपडिवन्ने–अध्वप्रतिपन्नः, मार्गप्रतिपन्न। भग० ११६।

अद्धाणपरिस्संतो–अद्धानपरिश्रान्तः। ओघ० १०७।

अद्धाणपवण्णगो–अध्वप्रपन्नकः। आव० ५७८।

अद्धाणसीसए–यतः परं समुदायेन गन्तव्यं सम्यग्मार्गावहनात्। बृ० तृ० ६१ आ।

अद्धाणसुत्ते–अद्धाणविहिजयणाविदंसणसुत्तं। नि० चू० द्वि० १४८ अ।

अद्धामिस्सिया–अद्धामिश्रिता, अद्धा–काल. स चेह प्रस्तावाद्दिवसो, रात्रिर्वा, स मिश्रितो यया सा भाषा। प्रज्ञा० २५६।

अद्धामीसए–कालविषयं सत्यासत्यम्। ठाणा० ४९०।

अद्धामीसग–अद्धामिश्रा, सत्यामृषाभेद.। दश० २०९।

अद्धासमय–कालसमयः, अद्धाया निर्विभागो भागो वा। जीवा० ६।

अद्धिती–अधृति.। आव० ३५३।

अद्धुट्ठाई–अर्द्धचतुर्थानि। आव० ३९।

अद्धुट्ठाण–अर्धुष्ठानाम्, अर्द्धाधिकत्रिणाम्। प्रश्न० ७३।

अद्धोवमिए–अद्धौपमिकम् – यत्कालप्रमाणमनतिशयिना ग्रहीतुं न शक्यते तत्। ठाणा० ९०।

अद्भुतम्–वर्ण्यातिशय। सम० ६३।

अधम्मजुत्ते–येन उक्तेन प्रतिपाद्यस्याधर्म्मबुद्धिरुत्पाद्यते तदधर्म्मयुक्तम्। ठाणा० २५३।

अधम्मपलज्जणो–अधर्मप्ररञ्जनः, अधर्मप्रायेषु कर्मसु प्रकर्षेण रज्यन इति। सूत्र० ३२६।

अधम्मपलोई–अधर्मप्रलोकी, अधर्मानेव–परसम्बन्धिदोषानेव प्रलोकयति–प्रेक्षते इत्येवंशीलः। विपा० ४८।

अधम्मो – अधर्मः, अचारित्रमोहपरवान्। अब्रह्मण. पोडशं नाम। प्रश्न० ६६। अधर्मास्तिकायः स्थित्युपष्टम्भगुणः। ठाणा० ४०। अधर्म्मो–श्रुतलक्षणविहीनतयादनागमे अर्थेऽदेवादौ। ठाणा० ४८७। अधर्मास्तिकाय.। सम० ६। अविद्यमानमर्यादाः–। उत्त० ४३४।

अधरं–भाग्यनिर्वर्त्यं कारणम्। बृ० तृ० १९ अ।

अधरस्साणु–गौणिका। व्य० द्वि० २९९ अ।

अधरिमं –, अविद्यमानधारणीयद्रव्याम् ऋणमुत्कलनात्, भग० ५४४।

अधरो–अधर, अधस्तनौष्ठ.। प्रश्न० १४०। अधीरः। उत्त० १५३।

अधरोट्ठा–अधरोष्ठ, अधस्तनो दन्तच्छदः। जं० प्र० ११२। प्रश्न० ८१।

अधस्तनकाय–पादपाणिशिरोग्रीवमुच्यते। ठाणा० ३५७।

अधस्तारका–पिशाचभेदविशेषः। प्रज्ञा० ७०।

अधारणिज्जं–अधारणीयं, धारयितुमशक्यम्, स्थातुं वाऽशक्यम्। विपा० ६३। अविद्यमानाधमर्णम्। विपा० ६३। अप्रशस्तप्रदेशोज्जनादिकलङ्काङ्कितत्वात्। आचा० ३९६।

अधिकरणं–अधिकं–अतिरिक्तं उत्सूत्रं करणं, अथवा अधमा जघन्या गतिः तामात्मानं प्रापयति। कषायभावः। नि० चू० प्र० २५४ अ। अधोकरणं, अधितिकरणं, अबुद्धिकरणम्। नि० चू० प्र० २११ आ। कलहो। नि० चू० प्र० ३४४ आ, २३९ अ।

अधिकरणनिर्वर्त्तिनी – खड्गादिनिर्वर्त्तिनी, अधिकरणिकीक्रियाया द्वितीयो भेद। आव० ६११।

अधिकरणप्रवर्तिनी–चक्रमह पशुबन्धादिप्रवर्तिनी क्रिया, अधिकरणिकीक्रियाया प्रथमो भेद। आव० ६११।

अधिकरणसाला–अधिकरणशाला, लोहपरिकर्मगृहम्। भग० ६९७।

अधिकरणाणं–अधिकरणानां–कलहानां यन्त्रादीनां वोत्पादयिता। सम० ३७।

अधिकरणिखोडी–अधिकरणिखोडी–यत्र काष्ठेऽधिकरणी निवेश्यते। भग० ६९७।

अधिकरणिसंठिते–अधिकरणीसंस्थितम्। ठाणा० ४३४।

अधिकरणीतो–तुच्छी। नि० चू० द्वि० १०१ अ।

अधिकासिका–या मस्तकवेदनयापीडित मुखेनेव गन्तुं शक्नोति ता। ओघ० १९९।

अधिके–अर्गले। उत्त० ६६०।

अधिगवाउ–अधिकतरं वरग् सो। नि० चू० प्र० १५१ अ।

अधिगमजं–दर्शनभेद। आव० ५२७।

अधिगरणं–अधिकरणं, अधिक्रियते–स्थाप्यते–नरकादिषु आत्माऽनेनेति, अनुष्ठानविशेष.। प्रज्ञा० ४१५।

अधिगरणंसि–विग्रहे। ठाणा० ४४१।

अधिगरणिया-आधिकरणिकी, अधिकरणेन निर्वृत्ता। प्रश्न०

अधिगारो-अधिकारः, नियोगः। प्रश्न० ६६। [४३५।

अधिघटिकया-कपिलदरिद्रदृष्टान्तविशेषः। आचा० १६३।

अधिट्ठणं-संगिसेज्जवेढिए चेव उपवेसणं। नि० चू० प्र० २४६ आ।

अधिट्ठाणं-अधिष्ठानम्। ओघ० १४८।

अधिट्ठिज्जा-अधितिष्ठेत्-योन्याकर्षणेन संगृह्णीयात्। ठाणा० ३१३।

अधिट्ठेति-परिभुञ्जति। नि० चू० प्र० २२५ आ।

अधिमरगा-अहिवत् अनपकृतेऽप्यपकारे मारका। नि० चू० द्वि० ११ अ।

अधियं-अधिकम्, वर्णादिभिरभ्यधिकं, सूत्रदोषविशेषः। आव० ३७४।

अधियासितो-अध्यासितः, अधिवासितः। आव० ३४३।

अधिशय-आश्रयतः। आचा० २५५।

अधिष्ठानम्-गुदास्थानम्। दश० ११८।

अधीकारो-प्रयोजनम्। बृ० द्वि० २२५ अ।

अधीकारवशः-प्रसङ्गः। आचा० २४१।

अधीता-अधीना, श्रुतनिषद्धा सती पठिता। प्रश्न० १०५।

अधीतान्वीक्षिकीकस्य-दुर्गृहीतहेतुदृष्टान्तलेशस्य। आचा० २२३।

अधुवं-अध्रुवं-नावश्यभाविनम्। प्रश्न० ९६। प्रातिहारिकम्। नि० चू० द्वि० ११७ आ।

अधुववग्गणा-अध्रुववर्गणा, इतश्चोर्ध्वमित्थमेकैकोत्तरवृद्धिक्रमेण वर्द्धमाना ध्रुववर्गणाभ्य इतरा अनन्ता भवन्ति। विशे० ३३१।

अधुवे-न ध्रुव, सूर्योदयवत् प्रतिनियतकालेऽवश्यंभावी। भग० ४६९। अध्रुवं-स्वल्पकालानुष्ठायनात्। आचा० ३९६। नित्यो न। उत्त० २८९।

अधो-भूमौ। ओघ० १६२।

अधेणू-सुक्का वञ्झा वा। नि० चू० प्र० ३२७ अ।

अधोघट्टना-अधो भुवं घट्टयति। ओघ० १०९।

अधोणता-गजदंतवत् अवनता। नि० चू० द्वि० ४९ आ।

अधोदृष्टिता-दोषविशेषः। उत्त० ४९०।

अधोभागा-भूमिभागः। जं० प्र० ३२३।

अधोभावो-अधोभावः, तिरस्कारबुद्धिः। आव० ६९९।

अधोविवृतम्-अनाच्छादितममालगृहम्। ठाणा० १५७।

अधोवेदिका-जानुनोरधो हस्तयोर्निवेशः। ठाणा० ३६२।

अध्यसनं-अजीर्णे भोजनम्। ठाणा० ४४७।

अध्यास्यन्ते-गम्यन्ते। प्रश्न० ८०।

अध्याहार-व्याख्यानम्। आचा० ५५।

अध्येषणा-यदृच्छया। सम० ३७।

अध्वर-यज्ञः। उत्त० ५२५।

अनंगप्रविष्टं-गणधरानन्तराद्याचार्यैदृब्धम्। तत्त्वा० १-२०।

अनक्कमिन्नेहिं-अनक्रान्तैः। भग० ३७३।

अनग्गओ-अनग्नकः, द्रुमविशेषः। जीवा० २६९।

अनङ्गसेन-चंपावासिसुवर्णकारः। बृ० तृ० १०८ आ।

अनतिचारम्-छेदोपस्थापनीयभेदविशेषः। ठाणा० ३२३।

अनतिविलम्बितम्-वाण्यतिशयविशेषः। सम० ६३।

अनध्यवसायः-संशयो विपर्ययो वा। आचा० १५०।

अनानुक्रमाद्-पश्चानुपूर्व्या। विशे० २८४।

अनन्तकम्-समयभाषया वस्त्रमिति। ठाणा० ३४६।

अनन्तगुणितम्-अनन्तगुणितं, अनन्तशो गुणितम्। विशे० २६८।

अनन्तरवल्ली-मात्रादयः षट्। बृ० तृ० ४२ आ।

अनन्यत्वद्रव्यशुद्धिः-आदेशतो द्रव्यशुद्धेर्भेदः, यथा शुद्धदन्तः। दश० २११।

अनपनीतम्-वाण्यतिशयविशेषः। सम० ६३।

अनब्भुवगओ-अनभ्युपगतः, श्रुतोपसम्पदानुपसम्पन्नः। आव० १००।

अनभिग्रहिकः-मिथ्यात्वविशेषः। ठाणा० ३७।

अनममाणे-अनममानान्, निर्घृणतया माययानुष्ठायिनः। आचा० २५४।

अनर्गलितकपाटम्-उद्घाटकपाटम्। ओघ० १६६।

अनर्थकम्-अर्थशल्यम्। आव० ५११।

अनलं-अनलम्-अभिष्टकार्यासमर्थं हीनादित्वात्। आचा० ३९६। न अलो अनलः-अपचलः। नि० चू० द्वि० २५ आ।

अनलगिरी-अनलगिरिः, प्रद्योतस्य हस्ती, तृतीयं रत्नम्। आव० ६७३।

अनलसा-उत्साहवन्तः। ओघ० १८०।

अनवत्राप्यता-अविद्यमानमवत्राप्यं-अवत्रपणं लज्जनं यस्य सः, अवत्रापयितुं-लज्जयितुमर्हः, शक्यो वाऽवत्राप्यो लज्जनीयः न तथा तद्भावः। उत्त० ३९।

अनवगतानि-असङ्कल्पितान्यनालोचितानि। विशे० १४५।
अनवयाङ्गी-महावीरभगवद्दुहिता। विशे० ९३५।
अनवयग्ग-अनवदग्रम्, अनन्तम्। भग० २४८।
अनवसर-अनागमः। आचा० १२२।
अनाकारा-सामान्यांशग्रहणशक्तिः। भग० ७३।
अनाघात-(अणघायं), अमारिघोषणा। आचा० २६०।
अनाचारश्रुतम्-सूत्रकृताङ्गस्य पञ्चममध्ययननाम। ठाणा० ३८७।
अनाचीर्णम्-अनारब्धम्। आचा० १४८।
अनायुक्ता-(अणाउत्ता)-लोपकृता। ओघ० १८९।
अनाद्यन्तं-आद्यन्तरहितम्। ठाणा० १२०।
अनानुगामिकः-अनानुगामिकः-शृङ्खलाप्रतिबद्धदीप इव यो गच्छन्तं पुरुषं नानुगच्छति। प्रज्ञा० ५३९।
अनाभवद्व्यवहार-अस्वामित्वव्यवहार। आव० ८३१।
अनाभोगिक-मिथ्यात्वविशेषः। ठाणा० २७।
अनालीढं-(अणालीढं)-अनवबुद्धः। ओघ० २२७।
अनालोचितानि-असङ्कल्पितान्यनवगतानि। विशे० १४५।
अनाहो-अनाथः, नाथरहितः, योगक्षेमकारिनायकाभावात्। प्रश्न० ११। योगक्षेमकारिविरहितः। प्रश्न० १९।
अनिदं-अनित्थम्, सामायिकसप्तमपर्यायः। आव० ४७४।
अनिन्द्रियं-मनः। बृ० प्र० ९आ।
अनिकामं-परिमितम्। बृ० द्वि० ४ अ।
अनिन्दितः-किन्नरभेदविशेषः। प्रज्ञा० ७०।
अनिउणमई-अनिपुणमतिः। आव० ४९२।
अनिग्गहे-अनिग्रहः-न विद्यते इन्द्रियनिग्रह-इन्द्रियनियमात्मकोऽस्येति। उत्त० ३४४।
अनिज्जूहित्ता-अदत्त्वा। भग० ७०९।
अनिट्ठं-अनिष्टम्, इष्यन्ते स्मेतीष्टाः तद्विपरीतादनिष्टाः। भग० ७२।
अनिट्ठता-अनिष्टता, अवाञ्छता। भग० २३।
अनिट्ठुभओ-अनिष्ठीवकः, मुखश्लेष्मणोऽपरिष्ठापकः। प्रश्न० १०७।
अनित्थंत्थं-अनित्थंस्थं, इदंप्रकारमापन्नमित्थं, इत्थं तिष्ठतीति इत्थंस्थं, न इत्थंस्थं अनित्थंस्थं-वदनादिशुषिरप्रतिपूर्णेन पूर्वाकारान्यथाभावतोऽनियताकारमिति। प्रज्ञा० १०९।

अनित्यत्वम्-अतादवस्थ्यम्। उ० प्र० ३६।
अनिद्देस-अनिर्देशदोषः, यत्रोद्दिष्टपदानामेकवाक्यभावो न क्रियते, एतादृशः सूत्रदोषविशेषः। आव० ३७४।
अनिभृता-निष्ठुरवक्रोक्त्यादिरूपा। बृ० प्र० २१३ अ।
अनिद्दोज्जं-अनिर्भयं, अस्वस्थम्। व्य० द्वि० २४३ आ।
अनियट्टि-अनिवृत्ति-शुक्लध्यानचतुर्थभेदरूपम्। उत्त० ५८९। आ सम्यग्दर्शनलाभात् न निवर्तते। विशे० ५३५।
अनियट्टी-ग्रहविशेषः। ठाणा० ७९। जं० प्र० ५३५।
अनियओ-अनियतः, अनियतवृत्तिः। उत्त० २६९।
अनियतवृत्ति-अनियतविहाररूपा। उत्त० ३९। अनियतविहारः। ठाणा० ४२३।
अनियाओ-अनियता। ओघ० ७३।
अनियाणे-अनिदानः, न विद्यते निदानमस्येति निराकाङ्क्षोऽशेषकर्मक्षयार्थी संयमानुष्ठाने प्रवर्तेत। सूत्र० २६४।
अनिरक्खिय-क्षिप्तः। आव० ६८१।
अनिरुद्धे-अनिरुद्धः, अन्तकृद्दशानां चतुर्थवर्गस्याष्टमाध्ययनम्। अन्त० १४।
अनिरुद्धो-अनिरुद्धः, कृष्णवासुदेवापत्यनाम। प्रश्न० ७३।
अनिर्विष्टं-न दत्तफलम्। बृ० प्र० ५० आ।
अनिव्वुइ-अनिर्वृतिः, अस्वास्थ्यनिबन्धना कायादिचेष्टा। आव० ४९९।
अनिल-अनिलनरेन्द्रः यवराजर्षिपिता। बृ० प्र० १९० आ।
अनिलसुओ-अनिलसुतः यवराजा। बृ० प्र० १९१ अ।
अनिर्लाञ्छितैः-अवर्द्धितकैः। भग० ३७२।
अनिवृत्तिकरण-सम्यक्त्वप्राप्तौ करणविशेषः। ठाणा० ३१। अनिवृत्तिकरणं, न निवर्तनशीलम्। आव० ७५।
अनिवृत्तिबादरः-दर्शनसप्तकक्षोभोपशमयोरन्तरम्। आव० ८३१।
अनिव्वाणि-अनिर्वाणि-असुखम्। व्य० प्र० ६२ अ। भेदः (वनि०)
अनिव्वुइकरो-अनिर्वृतिकरः, अस्वास्थ्यनिबन्धनकायादिचेष्टाकरः। आव० ४९९।
अनिव्वुई-अचित्तभोजी त्रिदण्डोद्वृत्तभोजी। दश० चू० ५१।
अनिश्रितवचनता-रागाद्यकलुषितवचनता। उत्त० ३९।
अनिप्पन्नातापना-(अणिप्फण्णआयावणा)-आतापनाभेदः। औप० ४०।

अनिसाइ–अनिशादी। सम० २०।

अनिसीहं–अनिशीथम्, निशीथाद्विपरीतम्। उत्त० २०४। बद्धश्रुतम्। आव० ४६४।

अनिहुआ–त्रिदण्डिनः। बृ० द्वि० २३५ आ। कन्दर्पबहुला मायिनश्च। बृ० तृ० १९५ आ।

अनिहो–अनिहः–अमायः, न निहन्यत इति वा परीषहैरपीडितः, अस्निहः–स्नेहरूपबन्धनरहितः। सूत्र० ४००।

अनीकाधिपतयः–दण्डनायकस्थानीयाः। तत्त्वा० ४–४।

अनीहडं–अनिर्गतम्। आचा० ३२५।

अनीहारिमे–अनिर्हारितम्। अटव्यादिकृतमनशनम्। भग० १२०। गिरिकन्दरादौ अनशनम्। ठाणा० ६४। भग० ६२५।

अनु–पश्चात्। आव० २४२। सातत्यम्। उत्त० ६२७।

अनुकूलं–अनुगुणं, अनुलोमं च। जीवा० ३।

अनुगमः–सूत्रस्य न्यासानुकूलः परिच्छेदः। ठाणा० ४। संहितादिव्याख्यानप्रकाररूपः, उद्देशनिर्देशनिर्गमादिद्वारकलापात्मको वा। सम० ११५। अनुगमनम्, अनुगमः। उत्त० ६३१।

अनुगामि–यन्मोक्षाय अनुगच्छति। व्य० द्वि० १९८ अ।

अनुगामिकता–परम्परया शुभानुबन्धसुखम्। जीवा० २४२।

अनुगुणं–अनुकूलमनुलोमं च। जीवा० ३।

अनुग्गहे–अनुग्रहकृत्स्नं, यत् पण्णां मासानामारोपितं षड् दिवसा गतास्तदनन्तरमन्यत् षण्मासान् आपन्नस्ततो यत् अव्यूढं तत्समस्तं झोषितं पश्चात् यदन्यत् षाण्मासिकमापन्नं तद्वहति। व्य० प्र० ११८ आ।

अनुज्येष्ठ–पश्चाद्‌वृद्धस्य. । विशे० ४४३।

अनुज्ञा–विधिः। आव० ७१३।

अनुज्ञातभक्तादिभोजनम् – अदत्तादानविरमणचतुर्थभावना। प्रश्न० १२८।

अनुज्ञातसंस्तारकग्रहणम् – अदत्तादानविरमणद्वितीयभावना। प्रश्न० १२७।

अनुज्ञापनाय–अनुमतये। आव० ५४२।

अनुतटभेदः–तटभेदः. तद्भेदः। ठाणा० ४७५।

अनुत्संकलितम्–अवितीर्णम्। आचा० ३६।

अनुदिशा–उपाध्यायप्रवर्तिनीलक्षणम्। व्य० द्वि० २०० अ। अनुदिट्। व्य० द्वि० १९६ आ। व्य० द्वि० २०४ आ।

अनुद्घातकृत्स्नं – कालगुरु निरन्तरं वा। व्य० प्र० ११८ आ।

अनुद्धरिः–कुन्थुविशेषः, त्रीन्द्रियजीवभेदः। उत्त० ६९५। चलनेव कुन्थुः विभाव्यते। ठाणा० ४३०।

अनुनादि–वाण्यतिशयविशेषः। सम० ६३।

अनुपथ–मार्गमध्यः। आचा० २६५।

अनुपरतम्–उत्सन्नं, बाहुल्येन। आव० ५९०।

अनुपरिहारकाः–पारिहारकवैयावृत्यकराः। ठाणा० ३२४।

अनुप्रवाचयति–(अनुपयाएइ), अनु–परिपाट्या प्रकर्षेण विविधार्थावगमरूपेण वाचयति। जीवा० २५४।

अनुप्रास–अलङ्कारविशेषः। जं० प्र० १४३।

अनुप्रेक्षा–मनसा ग्रन्थार्थयोरभ्यासः। तत्त्वा० ९–२५।

अनुप्रेक्षितम्–ध्यातम्। ठाणा० १७३।

अनुभवसञ्ज्ञा–स्वकृतासातवेदनीयादिकर्मविपाकोदयसमुत्था। जीवा० १५।

अनुभूयते–लक्ष्यते। विशे० १७६।

अनुमतं–क्षामम्। आव० ५२७।

अनुमानं – साधनधर्ममात्रात् साध्यमाननिर्णयात्मकम्। ठाणा० ४९२।

अनुयोगद्वाराणि–व्याख्याङ्गानि। आचा० ३।

अनुलिखन्–अभिलङ्घयन्। जीवा० १७५।

अनुलेपनेन–सकृल्लिप्तस्य पुनः पुनरुपलेपनेन। सम० ११६।

अनुलोम–उत्सर्गः। ओघ० ६५।

अनुलोमवचनसहितत्वं–प्रतिरूपविनयविशेषः। व्य० प्र० २२ अ।

अनुल्वण–अनुद्भटः। जीवा० २७५।

अनुपातनम्–उच्चारणम्। आव० ८३५।

अनृतम्–असत्यम्। ठाणा० ५००।

अनेकजातिसंश्रयाद्विचित्रम्–वाण्यतिशयविशेषः। सम० ६३।

अनैकान्तिक–हेतुदोषविशेषः। ठाणा० ४९३।

अनुशयः–क्रोधः। उत्त० ३७७।

अनुश्रेणि–ऋजुश्रेणिः। उत्त० ५९७।

अनुष्ठानं–(अणुट्ठाण)–विहितम्। आव० ६१९।

अनुसारगतिः–अनुपातगतिः। सूर्य० १६।

अन्नं-अन्यत्। उत्त० १३७। मण्डकखण्डखाद्यादिसमस्तमपि भोजनम्। उत्त० ३६९।

अन्नंति-अनुयन्ति, आगच्छन्ति। ओघ० १२६।

अन्नंदाई-असूया, अन्यामिदानीं वा। आव० ५०९।

अन्न-अन्यः। भग० ३१७। अन्न-भक्तः। दश० २१६।

अन्नइलाय-अन्नतिलाए, दोषान्नभोजी। प्रश्न० १०९।

अन्नइलायए-अन्नं विना ग्लानो भवति। भग० ७०५।

अन्नइलायचरए-अन्नग्लानको दोषान्नभुगिति, अथवा अन्नं विना ग्लायकः-समुत्पन्नवेदनादिकारण एव, अन्यस्मै वा ग्लायकाय भोजनार्थं चरतीति अन्नग्लानकचरकोऽन्नग्लायकचरकोऽन्यग्लायकचरको वा। ठाणा० २९८।

अन्नउत्थिए - अन्यतीर्थिकः, चरकपरिव्राजकभिक्षुभौतादिकः। आव० ८११।

अन्नउत्थिता-अन्ययूथिकाः-अन्यतीर्थिकाः। ठाणा० १३५।

अन्नउत्थिय-अन्ययूथिकः, अन्यतीर्थिकः, चरकादिकः। जीवा० १४३।

अन्नकाले-अन्नकालः, सूत्रार्थपौरुष्युत्तरकालं भिक्षाकालः। सूत्र० १०१।

अन्नकिच्चकरो-अन्यनृप्तिकरः। आव० ७२०।

अन्नगिलाय-पर्युषितम्। आचा० ३१२।

अन्नत्थ-अन्यत्र, परिवर्जनार्थे। प्रज्ञा० २५३। व्य० प्र० १६४ आ।

अन्नधम्मिय-अन्यधार्मिकः, मिथ्यादृष्टिः। ओघ० २४।

अन्नपरं-अन्यपरं-अन्यदुपरतया परमन्यत्। आचा० ४१५।

अन्नपाणं-अन्नपानम्, ओदनकाञ्जिकादि। उत्त० ३६३।

अन्नभयं-परचक्रभयं। नि० चू० द्वि० २१ अ।

अन्नभावेणं-अन्यभावः-योऽसौ गन्ता सोऽन्यभावः, उक्षिप्तकमितुकामः। ओघ० २२।

अन्नमन्नं-अन्योऽन्यं-परस्परं। ठाणा० १६३।

अन्नमन्नओगाढाइं-एकक्षेत्राश्रितानि। भग० ७५८।

अन्नमन्नघडिया - अन्योऽन्यमघिता, परस्परगुम्फिता। भग० ३१५।

अन्नमन्नगुरुयत्ता - अन्योऽन्यगुरुकता, अन्योऽन्येन ग्रन्थनाद्गुरुकता-विस्तीर्णता। भग० २१५।

अन्नमन्नगुरुयसंभारियत्ता - अन्योऽन्यगुरुकसम्भारिकता, अन्योऽन्येन गुरुकं यत्सम्भारिकं तद्भावस्तत्ता। भग० २१५।

अन्नमन्नघडत्ताए-परस्परसमुदायता। भग० ७५८।

अन्नमन्नपुट्ठाइं-आगाढाश्लिष्टतः। भग० ७५८।

अन्नमन्नबद्धाइं-गाढाश्लिष्टतः। भग० ७५८।

अन्नमन्नभारियत्ता-अन्योऽन्यभारिकता, अन्योऽन्यस्य यो भारः स विद्यते यत्र तदन्योऽन्यभारिकं तद्भावस्तत्ता। भग० २१५।

अन्नयरंसत्थं-अन्यतरत् शस्त्रम्: सर्वशस्त्रम्, एकधारादिशस्त्रस्यव्यवच्छेदेन सर्वतोधारशस्त्रकल्पम्। दश० २०१।

अन्नयर-अन्यतरम्, स्तोकम्। दश० १९८। प्रतिकूलम्। आचा० ३४२।

अन्नयरायमि-अन्यतरस्मिन्। उत्त० ५४३।

अन्न भण-अन्येनाकृष्यमाणः। ओघ० १६५।

अन्नलिंगे-अन्यलिङ्गम्, साधुलिङ्गम्। आव० १३४।

अन्नवत्थुवन्नास-अन्यवस्तूपन्यासः, उपन्यासस्य द्वितीयो भेदः। दश० ५५।

अन्नवालए-अन्यपालः-अन्ययूथिकः। भग० ३२३।

अन्नवेल-तत्रान्यस्यां - भोजनकालापेक्षयाऽऽद्यावसानरूपायां वेलायां-समये चरतीति। ठाणा० २९८।

अन्नहाभावो-अन्यथाभावः। बृ० द्वि० २८९ अ। उभिष्कमणाभिप्रायः। ओघ० ८१।

अन्नाइट्ठे-अन्याविष्टः-अभिव्याप्तः। भग० ६८३।

अन्नाओ-अन्यस्मात्, अन्येन द्वारेण। उत्त० २१९।

अन्नाणं-अज्ञानम्, मिथ्याज्ञानम्। उत्त० १५१। मिथ्यात्वतिमिरोपप्लुतदृष्टेर्वस्तु विपर्ययः। विशे० ८७३। द्रव्यपर्यायविषयबोधाभावः। ठाणा० १५४। लौकिकश्रुतम्। ठाणा० ४५१।

अन्नाणतावादा-अज्ञानमेव श्रेय इत्येवंप्रतिज्ञाः। ठाणा० २६८।

अन्नाणकिरिया - अज्ञानात् या चेष्टा कर्म वा सा। ठाणा० १५३।

अन्नाणदोसे - अज्ञानदोष.-अज्ञानात् - कुशास्त्रसंस्कारात् हिंसादिष्वधर्मस्वरूपेषु नरकादिकारणेषु धर्मबुद्ध्याऽभ्युदयार्थं वा प्रवृत्तिस्तल्लक्षणो दोषः, अज्ञानमेव दोषः। ठाणा० १९०।

अन्नाणियवाइ-कुत्सितं ज्ञानमज्ञानं तदेषामस्ति तेऽज्ञानिकास्ते च ते वादिनश्चेत्यज्ञानिकवादिनः। भग० ९४४।

अन्नाणी-अज्ञानी, मिथ्याज्ञान । जीवा० ४३९। ज्ञाननिह्नववादी। सूत्र० २०८।

अन्नाणमूढा-जो सक्कादिमता अन्नाणा णाणवुद्धीए गेहति, णो जतिण हेउगएहिं दंसिय घडमाणमत्थपि गिह्नति। नि० चू० द्वि० ४३ अ।

अन्नातचरते-अज्ञात -अनुपदर्शितस्वाजन्यर्द्धिमत्प्रव्रजितादिभाव सन् चरति-भिक्षार्थमटतीत्यज्ञातचरक । ठाणा० २९८ ।

अन्नायउंछं - अज्ञातोञ्छम्, विशुद्धोपकरणग्रहणविषयम्। दश० २८० ।

अन्नायएसी - अज्ञातैषी-अज्ञात -तपस्वितादिभिर्गुणैरनवगत एषयते-प्रासादिक गवेषयति। उत्त० ४१४।

अन्निं-अन्यदीयम्। सूत्र० ३०८।

अन्निआपुत्तो-गङ्गाप्राप्तकेवल आचार्य । (म०)

अन्निकापुत्रिक-आचार्यविशेषनाम। व्य० प्र० १५२ आ।

अन्नितो-अन्वित -युक्त । उत्त० ४४८।

अन्नियपुत्ता-अर्णिकापुत्र, वैनयिक्यामाचार्या । आव० ४०९ ।

अन्नियपुत्तो-अन्निकापुत्र, आर्यिकालाभद्वारे आर्यिका ऽऽनीताहारभोक्ता आचार्य । आव० ५३७।

अन्ने - नानादेशापेक्षया गौरववृत्सादिगर्भमामन्त्रण वचम मिदम्। दश० २१६ ।

अन्नेसमाण-अन्वेषमाण, भगवदाज्ञामनुपालयन्। दश० १८७ ।

अन्नेसिं-अन्वेषयेत् गवेषयेत्। आचा० ७७।

अन्नो-अन्यदीयम्। सूत्र० ३०८।

अन्नोन्नं-*अन्यदन्यद्। ओघ० २४२।*

अन्नोन्नकारणं-परस्परवैयावृत्त्यकरणम्। बृ० द्वि० २९२ अ।

अन्नोन्नघडत्ता - अन्योऽन्यघटता, परस्परसम्बद्धता । जीवा० ९३ ।

अन्यत्वम् - अनगारद्रव्यसम्बन्धिनो वै पुद्गलास्तेषा भेद । भग० ७४१।

अन्यत्वद्रव्यशुद्धि-अन्यद्रव्यशु॰, आदेशतो द्रव्यशुद्धे भेद, यथा शुद्धवासा। दश० २११।

अन्यद्रव्यनानाता-परमाणोद्वर्यणुकादिभेदभिन्नता। आव० २८१।

अन्यपुष्टः (अण्णपुट्ठ)-कोकिल । उत्त० ६७३।

अन्योऽन्यक्रियासंसक्त-सप्तमसप्तकम्। ठाणा० ३८७।

अन्योऽन्यप्रगृहीतम्-वाच्यतिशयविशेष । सम० ६३।

अन्योऽन्याविभागसम्बद्ध-क्षीरनीरादिवत्सम्बद्धम्। आव० ३२२।

अन्वीक्षिष्यामि-अन्वेषयिष्यामि। आचा० २८२।

अन्वेषयेत्-प्रार्थयेत्। आचा० २९०।

अन्यतीर्थिक-सरजस्कादय । आचा० ३२४। अन्यानि च तान्यर्हत्प्रणीततीर्थादन्यत्वेन तीर्थानि च-निजनिजाभिप्रायेण भवजलधेस्तरणं प्रति करणतया विकल्पितत्वेनान्य तीर्थानि तेषु भवा, ते च शाक्यसरजस्कादय । सूत्र० २९९।

अपइट्ठाणे-अप्रतिष्ठान ,सप्तम्या नरकावासविशेष । प्रज्ञा० ८३ ।

अपकर्षणं-ह्रास । ठाणा० २२२ ।

अपकसंती-परिहसन्ती क्षीयमाना वा। ठाणा० ३०८।

अपकिट्ठ-अपकृष्टम्। विचित्रलम्। भग० २१२।

अपक्खग्गाही-अपक्षग्राही, न पक्षं शास्त्रबाधितं गृह्णाति इति। ठाणा० ४४१।

अपक्खो-वाल्पपक्खो। नि० चू० द्वि० ३३ आ।

अपचयद्रव्यमन्द - कृशशरीरतया प्रवासे न कर्तुमीष्टे। बृ० प्र० ११३ अ।

अपचयभावमन्द -कुदरभावेन हिताहितप्रवृत्ति-निवृत्ती न कर्तुमीष्ट । बृ० प्र० ११३ अ।

अपच्चक्खाणकसाए-देशविरतिप्रतिबन्धको मोह ।सम० ३१ ।

अपच्चक्खाण किरिआ-सम्यक्त्वाते द्वितीयश्रुतस्कन्धाध्ययनविशेष । सम० ४२ ।

अपच्चक्खाणकिरिया-अप्रत्याख्यानक्रिया, विंशतिक्रिया मध्ये पञ्चमक्रिया। आव० ६१२। अविरतिनिमित्तक कर्मबन्ध । ठाणा० ४१। निवृत्त्यभावेन क्रिया-कर्मबन्धकारणम्, सम्यग्दृष्टेश्चतुर्थी क्रिया। प्रज्ञा० ३२४। प्रत्याख्यानक्रियाया अभाव, अप्रत्याख्यानजन्य कर्मबन्धो वा। सम० १०१।

अपच्चक्खाणा-अप्रत्याख्यान ।प्रज्ञा० ४६८।कषाया ग्व। आव० ७७। देशविरत्यावारक । ठाणा० १९४।

अपच्चलो-अपचलः, असमर्थः । आव० ५३७ । अयोग्यः । नि० चू० द्वि० २५ आ ।

अपच्छिमं-अपश्चिमम्, चरमम् । आव० ५४४ । पश्चात्काल-भाविन्यः । सम० १२० ।

अपच्छिमा-अपश्चिमा । आव० ८३९ । पश्चिमैवामङ्गल-परिहारार्थमपश्चिमा । ठाणा० ५७ ।

अपज्जत्तं-अपर्याप्तम्-अशक्तः । उत्त० ४०८ ।

अपज्जत्ता-अपर्याप्ता, पर्याप्तभाषाविपरीतो भाषाभेदः । दश० २१० ।

अपज्जत्तिया-अपर्याप्तिका, या मिश्रतया उभयप्रतिषेधात्मक-तया वा न प्रतिनियतरूपतयाऽवधारयितुं शक्यते सा, *भाषाया द्वितीयो भेदः । प्रज्ञा० २५५ ।*

अपज्जोसवण-अपत्ते अतीते वा जो पज्जोसवति । नि० चू० प्र० ३३६ अ ।

अपडिकम्म-शरीरप्रतिकर्मवर्जितम् । भग० ६२६ ।

अपडिण्णे-अप्रतिज्ञः, नास्य प्रतिज्ञा विद्यते । आचा० १३२ । अनिदानो, वसुदेववत् संयमानुष्ठानं कुर्वन् निदानं न करोति । आचा० ११३ । यदि वा स्याद्वादप्रधानत्वान्मौनीन्द्रागम-स्यैकपक्षावधारणे प्रतिज्ञा तद् रहितः । आचा० १३३ । अनिदानः । आचा० ३०६ ।

अपडिबद्धया-अप्रतिबद्धता, स्वजनादिषु स्नेहाभाव. । भग० ९७ ।

अपडिभाणी-अप्रतिभाषी । आचा० ३०६ ।

अपडिरूया-अप्रतिरूपा । उत्त० ११३ ।

अपडिलेह-अल्पार्थे नञ्, ततोऽप्रत्युपेक्षित इति अन्योप-करणत्वादप्रत्युपेक्षः । उत्त० ५९० ।

अपडिवाती-अवधिज्ञानभेदः । ठाणा० ३७० ।

अपढमसमयनियंठो-अप्रथमसमयनिर्ग्रन्थः, यः शेषेषु समयेषु वर्त्तमानः सः । उत्त० २५७ ।

अपतिट्ठिए-अप्रतिष्ठितः-आक्रोशादिकारणनिरपेक्ष केवलं क्रोधवेदनीयोदयाद् यो भवति सः । ठाणा० १९३ ।

अपत्तं-अपात्रं-अभाजनम् । नि० चू० तृ० ८० अ ।

अपत्तपडिच्छण-अप्राप्तामपि वेलाम् प्रतिपालयति । ओघ० ४९ ।

अपत्ति-अप्रीति. । आव० २०१ ।

अपत्तियं-अप्रीतिकम् । आव० २७३ । अपात्रिकाम्-अविद्य-मानाधाराम् । भग० ७०५ ।

अपत्तियंते-अप्रत्ययंति । बृ० द्वि० २२८ आ ।

अपत्थं-अपथ्यं-अहितम् । उत्त० २७६ ।

अपत्थिअपत्थिआ-अप्रार्थितप्रार्थकः । आव० १९२ ।

अपत्थियपत्थए-अप्रार्थितं प्रार्थयते यः सः । भग० १७४ ।

अपदंसो-पित्तारअ । नि० चू० प्र० ११७ अ ।

अपदपतितं । जीवा० १९९ ।

अपद्रापयेत्-जीविताद्व्यपरोपयेत् । आचा० ४२८ ।

अपदलम्-अपशदं द्रव्यं (दल) कारणभूतं मृत्तिकादि यस्या-*सावपदलः, अपदलति वा शीर्यत इत्यपदलः आमपक्वतया*ऽसार इत्यर्थः । ठाणा० २७९ ।

अपद्रावयन्ति-प्राणान्मुञ्चन्ति । आचा० ५५ ।

अपद्वारं-कुत्सितद्वारम् । ठाणा० ४०२ ।

अपद्वारिका-(अवदारिआ)-स्थानविशेषः । बृ० द्वि० २७२ आ ।

अपध्यानम्-विस्रोतसिका । आव० ६०२ ।

अपनीत.-विधूत. प्रकम्पितो वा । आव० ५०७ ।

अपनीता-विनाशिता । ओघ० ४६ ।

अपभ्रंशः-तत्तद्देशेषु शुद्धं भाषितम् । उ० प्र० ३५९ ।

अपमज्जियं-अप्रमार्जितम्, द्वितीयासमाधिस्थानम् । आव० ६५३ ।

अपमज्जियचारि-*अप्रमार्जितचारी, असमाधिस्थाने द्वितीयो* भेद । सम० ३७ ।

अपमज्जियदुप्पमज्जियसिज्जासंथारए-अप्रमार्जितदुष्प्र-मार्जितशय्यासंस्तारकः, इत्यादेश्चक्षुषा न प्रत्युपेक्षणं, दृष्या-देरुद्भ्रान्तचेतसा प्रत्युपेक्षणं दुष्प्रत्युपेक्षणं यस्य सः । आव० ८३५ ।

अपमत्ते-अप्रमत्त.-निद्रादिप्रमादरहितः । आचा० ३०० ।

अपमानभीरु-भिक्षां भ्रमन्नपि न यस्य तस्यैव वेश्मनि प्रवेष्टुमिच्छति, यदि वा 'ओमाण' त्ति भवेत, स च स्वपक्ष-परपक्षयोस्तद्गृहे बहिर्गतिवन्धेन मा मां प्रविशन्तमवलोक्यान्ये साधव. गौतमादयो वाऽत्र प्रवेक्ष्यन्तीति । उत्त० ५५२ ।

अपमित्यकः-षष्ठ वापकदोष । प्रश्न० १४४ ।

अपयं-अपदम्, पर्यायो पदे विधानकेऽन्यपदान्तोऽभि-धानम् । सूत्रदोषविशेष । आव० ३७४ । न विद्यते पदम्-अवस्थाविशेषो यस्य स । आचा० २११ ।

अपयाण-अपादानं-मर्यादया दानं (खण्डनं)। आव० २७८।
अपया-लोमसीआदि। नि० चू० प्र० ३ आ।
अपर-सयम। आचा० १६७।
अपरच्छं-अपराक्षम्, अप्रमक्ष, अधर्मद्वारस्य त्रिंशत्तम नाम। प्रश्न० ४३।
अपरद्धो-अपराद्ध, व्याप्त। आव० ७०८।
अपरमं-दुक्खम्। दश० चू० ६२।
अपरमविद्धम्-वाण्यतिशयविशेष। सम० ६३।
अपराइआ-वप्रावतीविजये अपराजिता राजधानी। जं० प्र० ३५७।
अपराइए-प्रतिवासुदेवनाम। सम० १५४।
अपराइय-पद्मबलदेवस्य पूर्वभवनाम। सम० १५३।
अपराजिअ-अपराजित, अरजिनप्रथमभिक्षादाता। आव० १४७।
अपराजिआ-अपराजिता, राजधानीनाम। जं० प्र० ३५२। पौरस्त्यरुचकवास्तव्याऽष्टमी दिक्कुमारी। जं० प्र० ३९१। रात्रिनाम। ज० प्र० ४९१। चन्द्रस्याग्रमहिषीनाम। जं० प्र० ५३२। पद्मबलदेवमाता। आव० १६२।
अपराजिए-ग्रहविशेष। ठाणा० ७९।
अपराजित-जगतीद्वारनामविशेष। सम० ८८।
अपराजिता-अपराजिता, अञ्जनपर्वते पुष्करणीविशेष। ठाणा० २३१। अनुत्तरोपपातिकविमानविशेष। प्रज्ञा० ६९।
अपराजिते-जगतीद्वारनामविशेष। ठाणा० २२५।
अपराजिय-कुन्थुजिनप्रथमभिक्षादाता। सम० १५१।
अपराजिया-अपराजिता-मैद्धान्तिकरात्रिनाम। सूर्य० १४७। अग्रमबलदेवमाता। सम० १५२। अङ्गारकमहाग्रहस्याग्रमहिषी। भग० ५०५ ठाणा० २०४। सुविधिनाथशिष्याग्रिका। सम० १५१। विदेहेषु राजधानीविशेषनाम। ठाणा० ८०। राजधानीविशेष। ठाणा० ८०।
अपराधालोचना-आलोचनाभेद। व्य० प्र० ४८ आ।
अपरिआविआ-अपरितापिता, स्वत परतो वाऽनुपजातकायमन परितापा। जं० प्र० १२६।
अपरिकम्म-अपरिकर्म-व्याघाते गिरिभित्तिपतनाभिघातादिरूपे सलेखनामविधायैव भक्तप्रत्याख्यानादि क्रियते तत्। उत्त० ६०३।
अपरिक्खिउ-अनालोच्य। नि० चू० प्र० ९८ आ।
अपरिखेविद्धं-वाण्यतिशयविशेष। सम० ६३।
अपरिगहियागमणे-अपरिगृहीतागमनम्, वेश्या अन्यसत्कगृहीतभाटी कुलाङ्गना अनाथा वा तस्या गमनं-मैथुनासेवनम्। आव० ८२५।
अपरिग्गहो-अपरिग्रह, धर्मोपकरणवर्जितपरिग्रहवस्तुधर्मोपकरणमूर्च्छावर्जित। प्रश्न० १४२। न विद्यते धर्मोपकरणादृते शरीरोपभोगाय स्वल्पोऽपि परिग्रहो यस्य स। सूत्र० ४५। अगीतार्थ तदाश्रयात्। व्य० प्र० २३३ अ।
अपरिच्चत-असमर्थस्य। आव० ८५१।
अपरिणते-भोक्तपरिणामाभाव। ओघ० १३।
अपरिणय-सेहप्राय। ओघ० ८९। वाऽग्रहणभावोऽपगतोऽपरिणतो वा जाम। ओघ० २०३। अपरिणत-एषणादोषविशेष। आचा० ३४५। अविध्वस्त। आचा० ३४८।
अपरिणामा-अपरिणामा, अपरिणतजिनवचनरहस्या। विशे० ९३१। अपरिणामिए। व्य० प्र० ७२ अ।
अपरितजोगी-अपरितान्तयोगी अविश्रान्तसमाधि। अन्त० १३, अनुत्त० ४। अपरितान्ता-अश्रान्ता योगा-मन प्रभृतय सदनुष्ठानेषु यस्य स। प्रश्न० १०१।
अपरितंतो-वैयावृत्यादौ अनिर्वेदी। वृ० तृ० ९२ आ। अनिर्विण्णो। वृ० प्र० २३१ अ।
अपरितावि-अपरितापित, स्वत परतो वाऽनुपजातकायमन परिताप। जीवा० २८४।
अपरिपुण्णे-अपरिपूर्णम्, सकलविरहादुच्छम्। सूत्र० ३२६।
अपरिभुत्तं-अपरिभुक्तम्। आचा० ३२५।
अपरिभुक्त-अपरिभुक्त अनाक्रान्त। ओघ० ५७।
अपरिमाण-अपरिमाण-अनन्त। आचा० २४१।
अपरिमितम् अमितम्। आव० ७९५।
अपरिमियपरिग्गह-अपरिमितपरिग्रह। आव० ८२५।
अपरिमियमणता-अपरिमितानन्ता-अनन्तानन्ता। प्रश्न० ९२।
अपरियाइत्ता-अपर्यादाय-समन्तादगृहीत्वा। ठाणा० ७०। अपर्यादाय-अगृहीत्वा। भग० ६४३। जीवा० ३७५। ठाणा० ४६।
अपरियाणित्ता-अपरिज्ञाय। ठाणा० ४६।
अपरियावणया-शरीरपरितापानुत्पादनेन। भग० ३०५।
अपरिसाडि-अनवयवोज्झनम्। भग० २९४।

अपरिसाडि-अपरिशाटि, परिशाटिवर्जितम् । प्रश्न० ११२ ।
अपरिसाडी-वसकप्रिमादी । नि०-चू० प्र० १६८ अ ।
अपरिसुद्धं-अपरिशुद्धम्, अशुचियुक्तम् । आव० ५७६ ।
अपरिस्साइ – न परिश्रवति-नालोचकदोषानुपश्रुत्यान्यस्मै प्रतिपादयति य एवशील सोऽपरिश्रावीति । ठाणा० ४२४ ।
अपरिस्सावी-अपरिश्रावी-अबन्धको निरुद्धयोग । भग० ८९२ । अपरक (आउ०)
अपरिहरथो-अदक्ष । आव० ५६७ ।
अपरिहरित्ता – अपरिहृत्य – द्विनैमासैर्व्यवधानमकृत्वा । आचा० ३६६ ।
अपरिहारिया-अपरिहारिका-साधर्मिका । आचा० ३५२ ।
अपरीत्ता-साधारणशरीरा । ठाणा० १३२ ।
अपर्याप्ति-तत्परिणामयोग्यदलिकद्रव्यमात्मना नोपात्त(सत्यपि तत्पुद्गलेषु स परिणामो रच्यते)। तत्वा० ८-१२ ।
अपवरगो-अपवरक । जीवा० २६९ । अपवरकम्, अन्तर्गृहम् । ओघ० १५३ ।
अपवरिका-अपवरकम् । व्य० द्वि० २०७ आ ।
अपवर्त्तनम्-क्रमणा स्थित्यादेरध्यवसायविशेषेण हीनताकरणम् । भग० १५ ।उपनमैराशुल्कस्य शीघ्र पाक । तत्वा० २-५२ ।
अपवर्त्तना-हानिकरणम् । सूर्य० । १३ ।
अपवर्त्तयन्-तिरश्चीन कुर्वन् । आचा० ३१३ ।
अपवाद –करण, विशेषवचन च । ज० प्र० ५४१ । विभाग । नि० चू० तृ० १०५ आ ।
अपवादम् प्रवचनरहस्यम् । बृ० प्र० १३१ अ ।
अपवादापवादरूपम्-शाक्यादीना प्रयाने द्रव्याणो निशापनम् । ठाणा० ३१२ ।
अपव्वावितो-न प्रव्रजित न मुंडितानि कृतानि । व्य० द्वि० २८ आ ।
अपसत्थविहायगति – अप्रशस्तविहायोगति – नामकर्म विशेष । प्रज्ञा० ४७४ ।
अपसिणा-अप्रश्ना -या पुनर्विद्या मन्त्रविधिना जप्यमाना अपृष्ट एव शुभाशुभं कथयन्ति ता । सम० १२४ ।
अपस्-अपगु -द्विपदचतुष्पदादिरहित । आचा० ४०३ ।
अपहार-मत्स्य । ठाणा० ३०९ ।
अपहुप्पते अप्रभवति, अपूर्यमाण । पिण्ड० ८८ ।
अपहृतान्योत्तरम्-वाण्यतिशयविशेष । सम० ६३ ।
अपाईणवाए-अप्राचीनवात य प्रतीच्या दिश समागच्छति वात स । प्रज्ञा० ३० ।
अपाचीनं-अशुभं । आचा० २५० ।
अपान्तरालम्-अबाधा । जीवा० ९४ ।
अपान्तरालसामान्यम्-शुक्लत्वगोत्वनरत्वादिकम् । विशे० ८९५ ।
अपाय-अपादम्, विशिष्टछन्दोरचनायोगात् पादवर्जित गद्यगुण । दश० ८८ ।
अपाय-सम्यगसम्यगिति गुणदोषविचारणाध्यवसायापनोद । तत्वा० १-१५ ।
अपायतो-विश्लेषत । ठाणा० ४२८ ।
अपारगमा-अपारङ्गमा, पार – त परकूल तद्गच्छतीति पारङ्गमा न पारङ्गमा अपारङ्गमा । आचा० १२४ ।
अपावते-अपापक शुभचिन्तारूप । ठाणा० ४०९ ।
अपावभाव-अपापभाव, शुद्धचित्त । दश० २३ ।
अपाश्रय –आधार । विशे० ४१५ ।
अपि. – सम्भावनानिवृत्त्यपेक्षासमुच्चयगर्हाशिष्यामर्षणभूषणप्रश्नेष्विति । ठाणा० ४९५ । बाढम् । जीवा० १९० । विद्यमान । आव० ४५० । च । उत्त० १८२ । इति । ओघ० ३६ । यथा द्रव्यार्थे, समुच्चयार्थेश्च । आचा० ६५ । पुन । आचा० २८१ । बाढार्थे । ज० प्र० ४६ । एवकारार्थे । ओघ० ५८९ । अभ्युपगमवादसमुच्चय । आव० ५३१ । बाढम् । ज० प्र० ४१३ ।
अपिट्टणया-यष्ट्यादिताडनपरिहारेण । भग० ३०५ ।
अपियत्ता-अप्रियता, सर्वेषामेव द्वेष्यतया । भग० २३ ।
अपीओ-अपीत, न पीत । उत्त० ८७ ।
अपुज्जो-अपूज्य, अवन्दनीय । आव० ५१९ ।
अपुट्ठवागरणा-अपृष्टव्याकरणम्, अपृष्ट सति प्रतिपादनम् । भग० ११७ ।
अपुणरावत्तग-अपुनरावर्त्तकम्, कर्मबीजाभावाद्भवावतार-रहितम् । भग० ५ ।
अपुणरावित्ति-अपुनरावर्त्तकम्-अप्रच्यमानपुनर्भवावतारम् । सम० ५ ।
अपुत्तो-अपुत्र, स्वजनपरिरहित, निर्मम इत्यर्थ । आचा० ४०३ ।

अपुप्फिय–अपुष्पितं–तरिकारहितम् । ओघ० १०२ । मन्थम् । बृ० प्र० ६८ अ ।

अपुम–नपुंसकम् । ओघ० ९० ।

अपुरिसंतरकडं – अपुरुषान्तरकृत–तेनैव शय्या कृतम् । आचा० ३२५ ।

अपुरिस–अपुरुष, नपुंसक । ठाणा० ३७२ ।

अपुव्वो–अपूर्व, अननुभूतपूर्वोऽनुभूतपूर्वो वा । अनु० १३७ ।

अपुव्वं–अपूर्वं, अपूर्वकरणम् । आव० ८५२ ।

अपूर्वश्रुतप्रत्याख्यानम्–आतुरप्रत्याख्यानादिकम् । आव० ४७५ । अप्राप्तपूर्वं, स्थितिघात–रसघातादयपूर्वार्थनिर्वर्तकम् । विशे० ५३५ । अप्राप्तपूर्वम् । आव० २३०, बृ० प्र० १९४अ ।

अपुव्वकरण–अपूर्वकरण–असदृशाध्यवसायविशेषम् । भग० ४३६ । अप्राप्तपूर्वम् । आव० ७५ । सम्यक्त्वप्राप्तौ करण-विशेष । ठाणा० ३१ ।

अपुहुत्ते–अपृथक्त्व, अपृथग्भाव, चरणधर्मसंख्यादिव्यानुयोगानां प्रतिसूत्रम् विभागेन वर्तनम् । आव० २८५ । अपृथक्त्वानुयोग –एकस्मिन्नेव सूत्रे सर्व एव चरणादय प्ररूप्यन्ते । दश० ४ ।

अपूरेंतो अपूरयन् अपूर्वन । आव० ७० । अपूर्वन, अनाचरन । आव० ८६३ ।

अपूर्वभक्तिकम्–अपूरयभावकम् । ठाणा० ४०१ ।

अपेक्षाकारणम् – दिग्देशकालाकाशपुरुषचमादि । ठाणा० ४९४ ।

अपेज्जं–अपेयम् । जीवा० १७० । अपेयम्–मद्यादिरम् । व्य० प्र० ८ अ ।

अपोद्धार–साक्षाद्युक्ति । आचा० ४९ । निराम । आव० ३०९ ।

अपोरसीय–अपौरुषेयम्, अपुरुषप्रमाणम् । भग० २९० ।

अपोरसिय–अपौरुषेयम्, पुरुषप्रमाणरहितम् । भग० ८०१ ।

अपोह अपोह, पृथग्भाव । ओघ० १२ । अपोहनं–निश्चय । आव० १८ । विपक्षनिरास । भग० ४३३ । अपोहनमपोहो–निश्चय । विशे० २२६ ।

अपोहए–यदादिष्टं गुरुभिरेव निश्चिनोति । विशे० ३ ३ ।

अपोहते एवमेतत् यदादिष्टमाचार्येणेति पुनस्तमर्थमागृहीत भावयति करोति च सम्यक्तदुक्तमनुष्ठानमिति । आव० २६ ।

अप्पं–अल्पम्, मूल्यत एरण्डकाष्ठादि । दश० १४७ । अभाव, स्तोकं वा । आव० ५८६ ।

अप्पइट्ठाणे–अप्रतिष्ठान । सम० २ । मोक्ष । आचा० २३१ ।

अप्पइट्ठिते – अप्रतिष्ठित –निरालम्बन एव केवलक्रोधवेद-नीयादुपजायते य क्रोध । प्रज्ञा० २९० ।

अप्पईकारं–अप्रतीकारम्, सुतिकर्मादिरहितम् । प्रश्न० २१ ।

अप्पउलिओसहिभक्खणया–अपक्वौषधभक्षणता । आव० ८२८ ।

अप्पए–शरीरे । आव० ५५५ ।

अप्पकम्मपच्चायाते – अल्पकर्मप्रत्यायात –अल्पै –स्तोकै कर्मभि करणभूतै प्रत्यायात –प्रत्यागतो मानुषत्वमिति, अथवा एकत्र जनित्वा ततोऽल्पकर्मा सन् य प्रत्यायात स तथा लघुकर्मतयोत्पन्न । ठाणा० १८० ।

अप्पकिरियतराए –अल्पक्रियतरम्– तथाविधकायिक्यादि-कक्रियाऽपेक्षम् । भग० ७६६ ।

अप्पकुक्कुई – अल्पकौत्कुच, अल्पस्पन्दन, अल्पं-असत् 'कुकुय' कौत्कुच–करचरणभ्रमणादचेष्टास्यासस्येति । दश० ५९ ।

अप्पक्खम–आत्मक्षमा–आत्महिताम् । ओघ० १८९ ।

अप्पक्खर–अल्पाक्षरम्, सूत्रगुण । आव० ३७६ ।

अप्पग्घ–अल्पार्घम्, स्वल्पमूल्यम् । भग० १९९ ।

अप्पच्चओ अप्रत्यय, प्रत्ययाभाव । अधर्मद्वारस्य चतुर्विं-शतितमं नाम । प्रश्न० २६ । अप्रत्ययकारणत्वात् । अधर्म-द्वारस्य सप्तदश नाम । प्रश्न० ४३ ।

अप्पच्चक्खाण–अप्रत्याख्यानम्, सर्वप्रत्याख्यानं देशप्रत्या-ख्यानं च येषां उदये न लभ्यते । विशे० ५४४ ।

अप्पच्चक्खाय अप्रत्याख्याय–अनिराकृत्य । उत्त० ३६६ ।

अप्पच्छन्दमईओ–आत्मच्छन्दमति, आत्मच्छन्दा–स्वामि-प्रायकार्यकारी । आव० १०० ।

अप्पजूहिए–मिडेऽप्योदनादिक । आचा० ३३५ ।

अप्पज्झं–आत्मवश, स्ववशचित्तम् । बृ० द्वि० २१० अ ।

अप्पज्झाणं–आत्मध्यानम्, अमुकोऽहं अमुककुले अमुग-सिस्से अमुगधम्मट्ठाणट्ठिए न य तव्विराहणेत्यादिरूपम् । प्रश्न० १२८ ।

अप्पझंझे–अल्पझञ्झ, अविद्यमानकलहविशेष । औप० ३९ ।

अप्पझंझा – अल्पझंझाः – विगततथाविधविप्रकीर्णवचनाः। ठाणा० ४४२।

अप्पडिकुट्ठाइं–अप्रतिकुष्टे–अनिवारिते। ठाणा० ९३।

अप्पडिबद्धे–अप्रतिबद्ध–मनसि निरभिष्वंगता। उत्त० ५८७।

अप्पडिबुज्झमाणे –अप्रतिबुद्ध्यमानः–शब्दान्तराण्यनवधारयन् अप्रत्युद्यमानो वा – अनपह्रियमाणमानसो। भग० ४८३।

अप्पडिरूवा–अप्रतिरूपा। आव० ६७५।

अप्पडिरूवे–अप्रतिरूपः, अविद्यमानं प्रतिरूपमतिप्रकर्षवत्त्वेनानन्यतुल्यमस्येति। उत्त० १८८।

अप्पडिलेहणा–अप्रत्युपेक्षणा, सूत्रत एव चक्षुषाऽनिरीक्षणा। आव० ५७६।

अप्पडिलेहियदुप्पडिलेहियउच्चारपासवणभूमि– अप्रतिलेखितदुष्प्रतिलेखितोच्चारप्रस्रवणभूमिः–पौषधेऽतिचारः। आव० ८३५।

अप्पडिलेहियदुप्पडिलेहियसिज्जासंथारए – अप्रतिलेखितदुष्प्रतिलेखितशय्यासंस्तारकः–पौषधेऽतिचारः। आव० ८३५।

अप्पडिलेहियदूसे–अप्रतिलेखितदूष्यः। ठाणा० २३४।

अप्पडिलेहियपणयं–अप्रतिलेखितदूष्यपञ्चकम्, दूष्यपञ्चकस्य प्रथमो भेदः, तूलि१उपधानक२गण्डोपधाना३लिङ्गिनी४पोतमयमसूर५भेदभिन्नम्। आव० ६५२।

अप्पडिवाइ–अप्रतिपाति, अनुपरतस्वभावम्। आव० ६०८।

अप्पडिसुणणं–अप्रतिश्रवणम्, अप्रतिश्रोता। आव० ७२६।

अप्पडिसेवी–अप्रतिसेवी–न कुत्सितं कर्म आचरति। ओघ० १६५।

अप्पडिहओ–अप्रतिहतः, सौगन्धिकानगरवर्णिनि.। विपा० ९५।

अप्पडिहट्टु–अनर्पयित्वा। नि० चू० प्र० १६९ अ।

अप्पडिहयं–अप्रतिहतं, अप्रतिस्खलितम्। जीवा० २५६।

अप्पडिहयपच्चक्खायपावकम्मे – अप्रतिहतप्रत्याख्यातपापकर्मा, न प्रतिहतं संवेगविधानेन मरणकालादारादधपि प्रत्याख्यातं च मरणकालेऽप्याश्रवनिरोधेन पापकर्म येन स.। न प्रतिहतं सम्यग्दर्शनप्रतिपत्तितः प्रत्याख्यातं च सर्वविरतिस्वीकरणतः पापकर्म–ज्ञानावरणाद्यशुभं कर्म येन सः। भग० ३६।

अप्पडिहयवरनाणदंसणधरे – अप्रतिहतवरज्ञानदर्शनधरः, योऽप्रतिहते कटकुड्यादिभिरस्खलितेऽविसंवादके वा वरे–प्रधाने ज्ञानदर्शने–विशेषसामान्यबोधात्मके धारयति सः। भग० ७।

अप्पडिहो–अप्रतिघः (भक्त०)

अप्पणं–अर्पणं, प्राधान्येन विवक्षणम्। विशे० १२७७, ७७१।

अप्पणच्चिय–आत्मीयम्, स्वकीयम्। भग० ११२।

अप्पणट्ठा–आत्मार्थम्, आत्मनिमित्तम्। दश० २४९।

अप्पणियं–आत्मीयं। आव० १८९।

अप्पणिया–आत्मीया। आव० २१२।

अप्पतिट्ठाणं–अप्रतिष्ठानम्, नरकविशेषः। आव० ३४८।

अप्पतुमंतुमा – अल्पतुमन्तुमाः – विगतक्रोधकृतमनोविकारविशेषा.। ठाणा. ४४२।

अप्पतुमंतुमे–अल्पम्–अविद्यमानं त्वं त्वमिति स्वल्पापराधिन्यपि त्वमेव पुराऽपि कृतवान् त्वमेवं सदा करोषीत्यादि पुनः पुनः भलपनं यस्य स। उत्त० ५८९।

अप्पतेअ–अल्पतेज.–तेजशून्यः। दश० २७६।

अप्पत्तियं–अप्रीतिकम्। उत्त० ९०। दश० चू० १२५। पचामरिसस्सरणम्। नि० चू० प्र० ३१ अ। मनसः पीडा कुर्यात्। आचा० ४०५। क्रोधः। सूत्र० ३४। अप्रेम। भग० २९२। मनसः दुष्प्रणिधानम्। सूत्र० ३३१।

अप्पपरिकम्मे–तनवं, सन्धाने दशाछेदनं वा। बृ० द्वि० २०२ आ।

अप्पपाणं–अल्पप्राणम्, अल्पा –अविद्यमाना· प्राणा –प्राणिनो यस्मिस्तत्, अवमिनागन्तुकजन्तुविरहितम्। उत्त०६०।

अप्पपुण्णेहिं–अपुण्यैः–अनार्यै· पापाचारैः। आचा० १०३।

अप्पभाए–अप्रभाते। आव० ३०१।

अप्पभक्खी–अल्पलघुभक्षी–अल्पानि–स्तोकानि लघूनि नि· साराणि निष्पावादीनि भक्षयितुं शीलमस्य। उत्त० ४२०।

अप्पभु–अप्रभव.–भृत्यादयः। ओघ० १६३।

अप्पभूतं–अल्पभूतं–अल्पं। ठाणा० २९८।

अप्पमज्जणा–अप्रमार्जना, सूत्रत एव रजोहरणादिनाऽप्रमार्जना। आव० ५७६।

अप्पमज्जियदुप्पमज्जियउच्चारपासवणभूमी – अप्रमार्जितदुष्प्रमार्जितोच्चारप्रश्रवणभूमि – पौषधेऽतिचार। आव० ८३५।

अप्पमत्तो–अप्रमत्त, गुरुपारतन्त्र्यापहारिप्रमादपरिहर्त्ता। उत्त० २२३। अप्रमत्तसंयतग्राम, भूतग्रामस्य सप्तम गुणस्थानम्। आव० ६५०। आत्महितेषु जाग्रन्। आचा० १७२। प्रयत्नवान्। ओघ० २२१।

अप्पमाए–अप्रमाद, योगसङ्ग्रहे षड्विंशतितमो योग। आव० ६६४। अकर्मकम्। सूत्र० १६९।

अप्पमाओ–अप्रमाद, उत्तराध्ययनेषु एकोनत्रिंशत्तममध्ययनम्। उत्त० ९। सम० ६४। उवओगपुव्वकरणमियाल्करणो। नि० चू० प्र० २९ अ।

अप्पमाणभोती – अप्रमाणभोजी, द्वात्रिंशत्कवलाधिकाहारभोक्ता। प्रश्न० १२५।

अप्पमातो–अप्रमाद प्रमादवर्जनम्, अहिंसाया एकोनपञ्चाशत्तम नाम। प्रश्न० ९९।

अप्पयं–आत्मानम्। अल्पमेव वा। उत्त० ९०।

अप्पयाणय–अप्रयाणम्। आव० ३८५।

अप्परए – अल्परत, अल्प–अविद्यमान रतमिति क्रीडित मोहनीयकर्मोदयजनितमस्येति, स्वमल्पमपि, अल्परजा, प्रतनुबध्यमानकर्मा। उत्त० ६७।

अप्परिसाडियं–अपरिसाटिकम्, परिसाटविरहितम्। उत्त० ६१।

अप्परिहारिए– अपरिहारिक पार्श्वस्थावसन्नकुशीलसमक्ष यथाच्छन्दरूप। आचा० ३२४।

अप्पलीयमाणा – अप्रलीयमाना –अनभिपक्ता। आचा० २४१।

अप्पलेवा–अल्पलेपा, निर्लेपा, चतुर्थी पिण्डैषणा। आव० ५७०। अप्पलेवा–जस्स दिज्जमाणस्स णिप्पावचणगादियस्स लेवो ण भवति सा। नि० चू० तृ० १२ अ।

अप्पवणिज्जोदग–अपातव्यजला मेघा। भग० ३०६।

अप्पवुट्ठिकाए– अल्पवृष्टिकाय, अल्प –स्तोकोऽविद्यमानो वा वर्षणं वृष्टि –अध पतनं वृष्टिप्रधान कायो–जीवनिकायो व्योमनि पतदप्काय इत्यर्थ, वर्षणधर्मयुक्त चोदक वृष्टि, तस्या कायो–राशिर्वृष्टिकाय अल्पथासौ वृष्टिकायश्चाल्पवृष्टिकाय। ठाणा० १४१।

अप्पसत्थाओ अप्रशस्ता –आग्नेय्योऽनादेशा। ठाणा० १७५।

अप्पसद्दा – अल्पशब्दा –विगतराटीमहाध्वनय। ठाणा० ४४२।

अप्पससरक्खं–अल्परजस्कम्। आचा० ३३७।

अप्पसागारियं–अल्पसागारिकम्। आव० १५५। अल्पगृहस्थम्। उत्त० ९०। आव० ३५८।

अप्पसावज्जं – अल्पसावद्यम्, अपाप, स्तोकपाप वा। आव० ५८६।

अप्पसाहणो–अल्पसाधन, वस्त्रादिरहित। आव० ७१२।

अप्पहाणो–अप्रधान, लघु। उत्त० १४९।

अप्पहिट्ठे–अप्रहृष्टम्, अहसन्। दश० १६६।

अप्पा–आत्मा, अभिहितरूपस्तदाधाररूपो वा देह। उत्त० ५३। शरीरम्। प्रज्ञा० ३०५। अतति सन्तत गच्छति शुद्धिसङ्क्लेशात्मकपरिणामान्तराणीति। उत्त० ५७। नि० चू० प्र० १५ अ। आत्मा–स्वभाव। ठाणा० ६१।

अप्पाइय–आप्यायित। आव० ७१६।

अप्पाउरण–अप्रावरण, अभिग्रहविशेष। आव० ८५४।

अप्पाणं – आत्मानम्, अतीतसावद्ययोगत्राणिमल्लाध्यम्। अप्राणम्–अतीतसावद्ययोगत्राणविरहितम्। अतनम्–अतीत सावद्ययोग सततभवनप्रवृत्त निवर्तयामि। आव० ४८६।

अप्पाणमेव–आत्मनैव। उत्त० ३१४। आत्मान–अन्तरात्मानम्। आचा० २८३।

अप्पायक–अल्पातङ्क, रोगरहित। आव० ७९३। अरोगी। आचा० ३६३।

अप्पाहंति–सन्दिशन्ति। बृ० तृ० ४४ आ।

अप्पाहट्टु–आहृत्य, व्यवस्थाप्य, अप्पाहृत्य वा। सूत्र० २७४।

अप्पाहणया–सन्देशस्तत्रैव दातव्य। ओघ० १०२।

अप्पाहार–अप्पाधारणा, सामर्थ्यम्, अप्पाहारता जस्य स। नि० चू० तृ० ८२ आ।

अप्पाहार–अल्पाहार, ऊनोदरताया प्रथमो भेद। दश० २७। ठाणा० १४९।

अप्पाहारे–अप्पाधार –तमेव पृष्ट्वा सूत्रार्थवाचना ददाति। बृ० तृ० १३३ आ। अल्पाहार, अष्टकवलाहार। औप० ३८। भग० ९२१। स्तोकाहार, साधु। भग० २९२। स्तोकाशी, षष्ठाष्टमादिसंलेखनाक्रमायात तप कुर्वन् यत्पारयेत्तदाप्य प्रमित्यर्थ। आचा० २९०।

अप्पाहारो-जो आयरिओ सकियसुत्तथो स चेव पुच्छिउ घायणं देति, तारिस ति मोसु ण गतव्व। नि० चू० तृ० ९३ आ।

अप्पाहिंति-सन्दिशन्ति। बृ० द्वि० ११४ आ। सन्दिशत। आव० ३०२।

अप्पाहिकरणे-अल्पाधिकरणं-निष्कलह। ठाणा० ४१६।

अप्पाहितो-सन्दिष्ट। उत्त० २१९।

अप्पाहे-तद्गुरोस्तत्प्रवर्तिन्या वा एव सन्दिशति-यथैतामारमसकाशे कुरुत। ओघ० ४२।

अप्पाहेइ-सन्दिशति। दश० १०३।

अप्पाहेति-सदिसइ। नि० चू० प्र० २११ आ।

अप्पाहेत्ता-सन्दिश्य। उत्त० १०३। आव० ३९०।

अप्पिच्छे-अल्पेच्छ, अल्पा-स्तोका, अन्यथाऽन्यस्याभाववादित्वेनाविद्यमाना वा इच्छा-वाञ्छा वा यस्येति। उत्त० १२४। न्यूनोदरतयाऽऽहारपरित्यागी। दश० २३१।

अप्पिणिच्चिया-आत्मीया। आव० २०२।

अप्पितणप्पिते-अर्पित-विशेषित, अनर्पित-अविशेषितम्। ठाणा० ४८१।

अप्पियं-अर्पितम्, आहितम्। भग० ८९।

अप्पियं-अप्रियम्, अनिष्टम्। भग० ७२। अर्पित, विशेष। विशे० १२४६।

अप्पियणियं-अप्रीतिकम्, कलह। उत्त० ३५५।

अप्पियत्ता-अप्रियता, अप्रेमहेतुता। भग० २५३। प्रज्ञा० ५०४।

अप्पियवहा-अप्रियवधा -अप्रिय-दुःखकारणम् तत् घ्नन्ति। आचा० १२२।

अप्पुण्णकप्पिया-अपूर्णकल्पिका-अन्योन्यस्य सुसट्ठु स्तोपस पद प्रतिपद्यते। व्य० द्वि० ३७८ आ।

अप्पुट्ठायी-अल्पोत्थायी, अल्पमुत्थातु शीलमस्येति। प्रयोजनेऽपि न पुन पुनरुत्थानशील। उत्त० ५८।

अप्पुस्सुए-अल्पौत्सुक्य। भग० १७४। त्वरारहित। भग० १२३। अविमनस्क। आचा० ३७९।

अप्पे-आप्य, अप्प प्रभव इद। भग० १४३।

अप्पो-अल्प, सर्वथाऽविद्यमान-। जीवा० १२१। नास्ति किञ्चिदित्यर्थ। ओघ० १७७। निषद्याद्वयोपेत रजोहरणं मुखवस्त्रिका चोल्पट्टकाग। बृ० प्र० १५० आ।

अप्पोदए-अल्पोदके-भौमान्तरिक्षोदकरहिते। आचा० २८५।

अप्पोलुं-इड्वेष्टनाद् घनवेष्टनात्। ओघ० २१४।

अप्पोवही - अल्पोपधि, अनुल्बणयुक्तस्तोकोपधि। दश० २८०।

अप्पोसे - अल्पावश्याये - अधस्तनोपरितनावश्यायविप्रुड्वर्जिते। आचा० २८५।

अप्फणया - भाण्डोचितहस्तपादादिचेष्टाविशेषता। व्य० प्र० २३६ अ।

अप्फयितो-अद्भुते। नि० चू० प्र० १४७ आ।

अप्फालिया-शिक्षिता -उपालब्धा, उक्ता। आव० ५५७।

अप्फालेइ - आस्फालयति, हस्तेनाऽऽताडयति-उत्तेजयति। औप० ६४।

अप्फिडिऊण-आस्फाल्य। आव० ३४४।

अप्फुण्णा-व्याप्ता। बृ० तृ० ७० आ।

अप्फुण्णे-आपूर्ण -परिपूर्णशरीर। उत्त० ४८३।

अप्फुण्णो-व्याप्त। आव० ३५४।

अप्फेया-वल्लीविशेष। प्रज्ञा० ३२।

अप्फोआ-वनस्पतिविशेष। ज० प्र० ४६।

अप्फोडेइ-आस्फोटयति, करास्फोटं करोति। भग० १७१।

अप्फोया-वनस्पतिविशेष। जीवा० २०१।

अप्फोव-आस्तीर्णे, वृक्षगुच्छगुल्मलतासछन्न। उत्त० ४३८।

अप्रकीर्णप्रसृत-वाग्यतिशयविशेष। सम० ६३।

अप्रतिहत-(अप्पडिहय) -कटकुडयपर्वतादिभिरस्खलिते अविसवादके वा। सम० ४।

अप्रत्याख्यानम्-द्वितियकषायचतुष्कम्। आचा० ९१।

अप्रमार्जितचारित्वम् - द्वितीयमसमाधिस्थानम्। प्रश्न० १४४।

अप्रोषित-सामानिक, सन्निहित। विशे० १०६५।

अप्सरा-दक्षिणपश्चिमरतिकरपर्वतस्य दक्षिणस्यां भूतावतंसिकाराजधान्यधिपत्री, शक्रदेवेन्द्रस्य द्वितीयाग्रमहिषी। जीवा० ३६५। शक्रस्याग्रमहिषी। ज० प्र० १५९।

अफलवतकी-अफलवान्, अप्राप्तिः। प्रश्न० ६४।

अफव्वता-अजम्माना। नि० चू० प्र० १८३ आ।

अफासुअ-अप्रासुकम्, सचित्तमित्यादि। दश० २३१। सचित्तम्। आचा० ३२१।

अफासुप-अप्रासुकम्, न प्रगता असवः-असुमन्तो यस्मात्तदप्रासुकम्-सजीवमित्यर्थः। भग० २२६।

अफुडिय-अस्फुटितः-राजीरहितः। आव० ३३१।

अफुण्णे-आपूर्णम्। प्रज्ञा० ५९२।

अफुसं-अस्पृश्यम्, अबन्धनीयम्। भग० १०४।

अफुसमाणगतिपरिणामे-अस्पृशद्गतिपरिणामः, अस्पृशतो गतिपरिणामः। प्रज्ञा० २८९।

अफुसमाणगती-अस्पृशद्गतिः,यत्परमाण्वादिकमन्येन परमाण्वादिना सह परस्परसम्बन्धमननुभूय गच्छति सा, विहायोगतेर्द्वितीयो भेदः। प्रज्ञा० ३२७।

अबंधव-अबान्धवः, स्वजनरहितः। प्रश्न० ११।

अबंधवो-अबान्धवः, बान्धवरहितः, स्वजनसम्पाद्यकार्याभावात् कर्मनिगडबद्धः। प्रश्न० ११।

अबंधिउं-पात्रकबन्धग्रन्थिमदत्वा। ओघ० १४४।

अबंभं-अब्रह्म, अकुशलं कर्म, मैथुनम्। प्रश्न० ६५। अकुशलानुष्ठानम्, अब्रह्मणः प्रथमं नाम। प्रश्न० ६६। मैथुनम्। आव० ६५३। बस्त्यनियमलक्षणं। आव० ७६१।

अबंभ-अब्रह्मवर्जकः, श्रावकस्य षष्ठी प्रतिमा। आव० ६४६।

अबंभचारिणो-अब्रह्मचारिणः, मैथुनं आसेवितुं शीलं धर्मो वा येषां ते। उत्त० ३५८।

अबद्धिआ-अबद्धिकाः, अबद्धं सत्कर्म कञ्चुकवत्पार्श्वतः स्पृष्टमात्रं जीवं समनुगच्छतीत्येवं वदन्ति। औप० १०६।

अबद्धिगा-अबद्धिकाः, स्पृष्टकर्मविपाकप्ररूपकाः। आव० ३११। अबद्धिकः, बद्धं-जीवप्रदेशैरन्योऽन्याविभागेन सम्पृक्तं बद्ध-अबद्धं, अपरिकर्म, तदभ्युपगमविषयमेषामस्तीति। उत्त० १५२।

अबद्धिता-अबद्धिकाः-स्पृष्टकर्मविपाकप्ररूपकाः। ठाणा० ४१०।

अबला-अबलाः, शारीरशक्तिविकलाः। जं० प्र० २३९।

अबले-अबलः, शारीरशक्तिवर्जितः। भग० ३२३।

अबहुस्सुए-अल्पश्रुताय-अवगाढस्तोकशास्त्राय। सूर्य० २९६।

अबहुस्सुतो-जेण आयारपकप्पो ण ज्झातितो। नि० चू० तृ० २५ अ।

अबहोड-अवखोटकः, बन्धविशेषः। उत्त० ११३।

अबाध-अन्तरालम्। विशे० ३७६।

अबाधाए-अबाधया अपान्तराल। सूर्य० २६२।

अबाल-अष्टाधिकवर्षः। नि० चू० प्र० १०३ आ।

अबाहा-अबाधा, कर्मणो बन्धोदययोरन्तरम्। भग० २५५। अन्तरं, अन्तरालत्वाप्रतिघातरूपा। अव्यवधानेनान्तरम्। जं०प्र० ४३५। दूरवर्तित्वेनानाक्रमणमपान्तरालम्। जं० प्र० ६४। अन्तरं-व्यवधानम्। जं० प्र० ६५। अपान्तरालम्। जीवा० ९४, २०४। अन्तरालत्वाव्याघातरूपा। जीवा० ३०२। अन्तरालम्। ओघ० ९०। आव० ४६। विशे० ३७६। अन्तरं। जं० प्र० ४३५।

अबाहाए-अबाधया, व्यवधानेन कृत्वा। सम० २१। अबाधायां कृत्वा, अपान्तरालेषु मुक्त्वा। जीवा० ३२२।

अबाहिरा-अबाह्यः, न बाह्य इति। आव० ४५।

अबितिज्जओ-अद्वितीयः, सहायो न भवति। प्रश्न० १२१।

अबुद्धा अबुद्धजागरियं-अबुद्धाः-कैवलज्ञानाभावेन यथासंभवं शेषज्ञानसद्भावाच्च बुद्धसदृशास्ते चाबुद्धानां-छद्मस्थज्ञानवतां या जागरिका। भग० ५५४।

अबुहजण-अबुधजनः, अविपश्चिज्जनः-परिजनो यस्य सः, अकल्याणमित्रपरिजनः। दश० ८६।

अबोद्द-अनाक्रमणीय। ओघ० ९२।

अबोहि-अबोधिः, मिथ्यात्वकार्यम्। आव० ७६२। मिथ्यात्वसंहतिः। दश० २४४।

अबोहिअ-अबोधिकम्, मिथ्यात्वफलम्। दश० २०५।

अबोहिकलुसं-अबोधिकलुषं, मिथ्यादृष्टिः। दश० १५८।

अब्बहुलकाण्डम्-रत्नप्रभाया तृतीयकाण्डः। सम० ८८।

अब्बुयं-द्वितीयसप्ताहगर्भावस्था (सं०)

अब्भं-अभ्रम्, सामान्याकारेण प्रतीनम्। जीवा० २८३।

अब्भंगियलुय-स्नेहाभ्यक्तशरीरः। ओघ० ७४।

अब्भंगिओ-अभ्यङ्गितः। आव० ११७।

अब्भंगेति-घेवेण अब्भंगणं। नि० चू० प्र० ११६ आ।

अब्भंगो-चोपेण। नि० चू० प्र० १८८ अ।

अब्भंतरं-लोकेऽन्यैरनुगतम्। दश० चू० १४।

अब्भंतरकरणं-द्वयोः साध्वोः गच्छमेरीभूतयोरभ्यन्तरे कुलादिकार्यनिमित्तं परस्परमुद्गतोरतृतीयस्योपश्रुण्वतोः बहिःकरणं। व्य० प्र० २३८ अ।

अब्भंतरओ-अभ्यन्तरम्-अभ्यन्तः मध्ये सर्वं। ठाणा० ५५।

अब्भंतरे पोग्गले-अवधारणीयेनौदारिकेण वा शरीरेण ये क्षेत्रप्रदेशाः अवगाढास्तेष्वेव ये वर्तन्ते तेऽवसेयाः, विभूषापक्षे निष्ठीवनादयोऽभ्यंतरपुद्गलाः। ठाणा० १०५।

अब्भिंतरसंवुका–सलनाभिलेतोवमाए आगिइए अतो आढ-यति बाहिरओ सथियहइ। उत्त० ६०५।

अब्भिंतरिया–अभ्यन्तरिका, नगरीविशेष । आव० २००।

अब्भिडिऊण–आस्फाल्य । उत्त० १४५।

अब्भुक्खेइ–अभ्युक्षति, अभिमुखं सिञ्चति । जीवा० २५६। अभ्युक्षति, सिंचति, स्नपयति। जं० प्र० १५२।

अब्भुक्खेंति–अभ्युक्षन्ति सिञ्चन्ति। जं० प्र० ७५।

अब्भुग्गए – अभ्युद्गतः, आभिमुख्येन सर्वतो विनिर्गतः। सूर्य० २६३।

अब्भुग्गओ–अभ्युद्गतः, आभिमुख्येन सर्वतो गतः। जीवा० १७५। अभ्रोद्गत–यद्वा आकाशे उद्गता प्रबलतया सर्वतस्तिर्यक् प्रसृता। जं० प्र० २६७।

अब्भुग्गय–अभ्युद्गत', आभिमुख्येन सर्वतो विनिर्गत'। प्रज्ञा० ६६। अभिमुखमुद्गतः, अभिमभागे मनाक् उन्नतः। जीवा० २०५। सजातः। सम० १३६।

अब्भुग्गयमूसिय–अभ्युद्गतोच्छ्रितः, अभ्युद्गतमभ्रोद्गतं वा यथाभवत्येवमुच्छ्रित., अथवा मकारस्यागमिकत्वाद्भ्युद्गतश्चासावुच्छ्रितश्चेत्यभ्युद्गतोच्छ्रितः, अत्यर्थमुच्च इत्यर्थ। भग० १४५।

अब्भुग्गया–अभ्युद्गता, आभिमुख्येन सर्वतो विनिर्गता। जीवा० ३७६। अभिमभावे मनागुन्नता। जं० प्र० ५०। अभ्युद्गता, अतिरमणीयतया द्रष्टृणा प्रत्यभिमुखमुद्–प्राबल्येन स्थिता। जीवा० २२६।

अब्भुग्गयाओ–अभ्युद्गतान्यभ्रोद्गतानि वोच्चानि। भग० ६७२।

अब्भुग्गयुच्छितपभासिय–अभ्युद्गतोत्सृतप्रभासितं, अभ्युद्गता–आभिमुख्येन सर्वतो विनिर्गता उत्सृता–प्रबलतया सर्वासु दिक्षु प्रसृता या प्रभा तया सितम्। जीवा० ३७६।

अब्भुज्जयं–अब्भुज्जतमरणेण अब्भुज्जयविहारेण वा। नि० चू० तृ० ३५ अ।

अब्भुज्जया–अभ्युद्यता, सुविहिता। अनुत्त० ३।

अब्भुज्जियविहारो जिनकल्पादि। नि० चू० प्र० २६३ आ।

अब्भुट्ठाणं – अभ्युत्थानम्, आगच्छति गच्छति च दृष्टे गुरावासनमोचनम्। उत्त० १७। ससम्भ्रममासनमोचनम्। उत्त० १२४। अभीलाभिमुख्येनोत्थानं–उद्गमनम्। उत्त०५३५। विनयार्हस्य दर्शनादेवासनत्यजनं। ठाणा० ४०८। आसनत्याग। सम० ६५। गौरवार्हदर्शने विष्टरत्याग.। भग० ६३७। जओ दीसइ तओ चेव धावइ। दश० ३०। आगतस्याभिमुखमुत्थानम्। दश० २४०।

अब्भुट्ठिज्ज–सिंहासनादभ्युत्तिष्ठेदुरिति। ठाणा० ११७।

अब्भुट्ठिओ–अब्भुट्ठिएत्ति सामाइयकडो पडिवंता मनारोपितः। नि० चू० तृ० ८४ आ।

अब्भुट्ठितो–वैयावृत्यकरणोद्यतः। नि० चू० प्र० ३१४ अ।

अब्भुट्ठित्तए – अभ्युत्थातुम्–अभ्युद्गन्तुम्। ठाणा० ५७।

अब्भुट्ठियं–अभ्युत्थितम्–अभ्युद्यतं। उत्त० ३०७। अभ्युत्थापन–वंदनकप्रतीच्छनकादिकं। व्य० प्र० १५२ आ। अभ्युत्थित–उद्यतः। ओघ० १८०।

अब्भुट्ठेमि–अङ्गीकरोमि। भग० १२१।

अब्भुत्तरोमा–प्रवीसरोमाः। नि० चू० द्वि० ६१ अ।

अब्भुदए–अद्भुतकान्, आश्चर्यकान्। उत्त० ३१७।

अब्भुदओ–उत्सवविशेष'। बृ० द्वि० १६८ अ।

अब्भुन्नय–अभ्युन्नत', अभिमुखमुन्नत.। जीवा० २७५।

अब्भुवगमिया–आभ्युपगमिकी, या स्वयमभ्युपगम्य वेद्यते (वेदना)। भग० ४६७।

अब्भुवगमे–स्वेच्छया अभ्युपगम्य यादृश्या क्रियते। बृ० प्र० ३१ आ।

अब्भुवगमो–अभ्युपगम, स्वयमङ्गीकार। प्रज्ञा० ५५७। भग० ६८३।

अब्भे–आभिन्द्यात्, आच्छिन्द्यात्। आचा० ३८।

अब्भोवगमिया – आभ्युपगमिकी–केशोलुञ्चनातापनादिभिः शरीरपीडा। प्रज्ञा० ५५७। शिरोलोचब्रह्मचर्यादिनामभ्युपगमे भवा (वेदना)। ठाणा० २४७।

अब्रह्म–मैथुनम्। आचा० ३३१।

अभओ–अभय.। आव० ९५। अभयकुमारोऽष्टमकारी। अन्त० ९। व्यक्तिविशेष। आव० ३६८। उदाहरणदोषे अभयकुमार.। दश० ५३। नामविशेष.। बृ० प्र० ४६ आ।

अभओ सव्वस्सवि – अभयं सर्वस्यापि प्राणिगणस्याभयम्। अहिंसाया द्विपञ्चाशत्तम नाम। प्रश्न० ९९।

अभक्खाई–श्रमणः, क्षपण। व्य० प्र० १८१ आ।

अभग्गं–अभग्नम्, अपीडितम्। आव० ७७२।

अभग्गजोगो–अभग्नयोग.। आव० ७९३।

अभग्गसेण-अभग्नसेनः, विजयस्य चौरसेनापतेः स्कन्दश्रीभार्यायाः पुत्रः। विपा० ५७। विजयस्य चौरसेनापतेः पुत्रः। विपा० ६०। अभग्नसेन, विपाकश्रुताध्ययनम्। ठाणा० ५०७।

अभग्गो-अभग्नः, अभग्नसेनः, विजयाभिधचौरसेनापतिपुत्रः, अन्तकृद्दशासु तृतीयाध्ययनम्। विपा० ३५।

अभञ्जियं-अभग्नाम्-अमर्दितामविराधिताम्। आचा० ३२३।

अभडप्पवेसं-अभटप्रवेशम्, कौटुम्बिकगेहेषु राजपुरुषाणामविद्यमानप्रवेशम्। विपा० ६३।

अभत्तच्छंदो-अभक्तच्छन्दः, भक्तारुचिरूपः। उत्त० ७८।

अभत्तट्ठं-अभक्तार्थम्, उपवासः। आव० ८५२।

अभत्तट्ठो-अभक्तार्थ, न भक्तार्थ, उपवासः। आव० ८५३।

अभय-अभयः, श्रेणिकपुत्रनाम। सूत्र० १०३। दानविशेषः। प्रश्न० ११५। अभयः, संयमः। आचा० ६२। कुमारविशेषः। नि० चू० प्र० ७ आ, नि० चू० तृ० ३७ अ। वृक्षाधिष्ठायककर्मंतरदर्शी। व्य० प्र० १७ अ।

अभयकरा-मल्लिजिनदीक्षाशिबिका। सम० १५१।

अभयकरो-अभयकरः। आव० ४५९।

अभयकुमारः-प्रद्योतस्यापकारकः। सूत्र० ३१३। विशेषनाम। विशे० ६१२। औत्पत्तिकीबुद्धेर्दृष्टान्तः। बृ० प्र० १८६ अ। आर्द्रकुमाराय प्रतिमाप्रेषकः। सूत्र० ३८५। प्रद्योतगणिकाभिर्धार्मिकवञ्चनया वञ्चितः। सूत्र० ३२९। कालसौकरिकसुतसुलससखा। सूत्र० १७८। मयरपूर्विवैहिकार्थसिद्धौ दृष्टान्तः। जं० प्र० १९७। रोहिणीयस्य लौकिकसूक्ष्मपरिनिर्वापण। व्य० प्र० २०९ आ।

अभयकुमारो-दृष्टान्तविशेषः। नि० चू० प्र० १९४ अ।

अभयदए-अभयदयः, प्राणापहरणरसिकेऽप्युपसर्गकारिणि प्राणिनि यो न भयं दयते ददाति, अभया सर्वप्राणिभयपरिहारवती वा दया-अनुकम्पा यस्य सः। भग० ७। अभयं-विशिष्टमात्मनः स्वास्थ्यं निःश्रेयसधर्मभूमिकानिबन्धनभूता परमा धृतिरितिभावः तद्भयं ददाति। जीवा० २५५।

अभयदयेणं-अभयदयः, न भयं दयते प्राणापहरणरसिकोपसर्गकारिण्यपि प्राणिनि ददातीत्यभयदयः। सम० ४। अभया वा-सर्वप्राणिभयपरिहारवती दया-घृणा यस्यासावभयदयः। सम० ४।

अभयसेण-अभयसेनः, संवेगोदाहरणे वारत्रकपुरे राजा। आव० ७०९।

अभयसेणो-वारत्तपुरे नगरे, तत्थ अभयसेणो राया। नि० चू० तृ० ५४ आ। वारत्रकपुरराजा। बृ० द्वि० २४९ आ।

अभयसेन-छर्दितदोषदृष्टान्ते राजा। पिंड० १६९।

अभयसेना-वापीनाम। जं० प्र० ३७०।

अभया-हरीतकी। आचा० १३०। नि० चू० द्वि० १४१ आ।

अभये-अभयः, अनुत्तरोपपातिकदशानां प्रथमवर्गस्य दशाध्ययनम्। अनुत्त० १।

अभयसिद्धिय-अभवसिद्धिकः, अभव्यः। जीवा० ४४९। ठाणा० ३०।

अभविय-अभव्यः-अयोग्यः। उत्त० ७१३।

अभाग-अभाग्यः, अशोभनः। आव० ७०८।

अभावं-नत्रः कुत्सायामपि दर्शनादशोभनं भावं-सर्वतो निष्काशनलक्षणं पर्यायम्। उत्त० ४६।

अभाविआ-अगीतार्थाः। बृ० द्वि० १६६ आ।

अभाविओ-अभावितः। आव० १०१। अभावित-अपरिणतजिनवचनस्तस्य निर्लिंगनाभावे मा भूद् विपरिणामः। बृ० प्र० २०२ अ।

अभाविते-असंसर्गप्राप्ते प्राप्तसंसर्गे वा। ठाणा० ४८१।

अभावितो-कृताभ्यास.। नि० चू० तृ० १३१ आ।

अभावुक-नलस्तम्बः। ओघ २२३।

अभावो-असम्भवः। दश० ३९। विनाशः। बृ० द्वि० ७२ आ।

अभासो-स्वदेशभाषाया अज्ञः। बृ० द्वि० १९ आ।

अभि-पृथग्। बृ० द्वि० १९५ अ।

अभिई-अभिजित्, नक्षत्रविशेषः। सूर्य० ११४। ठाणा० ७७।

अभिओग-अभियोगः, आज्ञाप्रदानलक्षणः। दश० २४९। विद्यादिवशीकरणम्? भग० १९१। बलात्कारः। उत्त० ३६५।

अभिओगकया-अभियोगकृता, या वशीकरणचूर्णमन्त्रयोः संयोजिता सा। ओघ० १९३।

अभिओगपावणं-अभियोगप्रापणं, हठाद्व्यापारवर्त्तनम्। प्रश्न० ७२।

अभिओगिओ-आभियोगिकः। आव० १२४।

अभिओगे-अभियोगः, प्रेष्यकर्मणि व्यापार्यमाणत्वम्। जीवा० २४३।

अभिओगो-अभियोगः, पारवश्यम् । विपा० ५४ । गर्वः । आव० ७७२ । वशीकरणचूर्णो मन्त्रश्च । ओघ० १९३ ।

अभिओग्गो-अभियोग्यः, अभिमुखं कर्मसु युज्यते व्यापार्यंत इति वा, तस्य भावः कर्म वा । जीवा० २८० ।

अभिकंख-अभिकाङ्क्ष्य-उद्दिश्य । आचा० २८१ । पर्यालोच्य । आचा० ३८८ ।

अभिकंखमाणो-अभिकाङ्क्षन्, मायारहितः । दश० २५२ ।

अभिकंता - अभिकान्ता-शय्यायास्तृतीयप्रकारः । सू० प्र० ५१ अ ।

अभिकंतं-अभिक्रान्तम्, अभिक्रमणम् । प्रज्ञापकं, प्रत्यभिमुखं क्रमणम् । दश० १४१ ।

अभिक्कमंति-अभिलसंति । दश० चू० ६२ ।

अभिक्कममाणे-अभिकामन्-गच्छन् । आचा० २१७ ।

अभिक्खसेवा-पुणो पुणो गमनं । नि० चू० प्र० ३९ आ ।

अभिक्खं-अभिक्ष्णं-अनवरतं । आव० ११८ ।

अभिक्खणं-अभिक्ष्णं, अनवरतम् । भग० २२, ४१ । आचा० ३६५ । सूत्र० ११५ । उत्त० ३४३, ५१४ । आव० ४०७ । अनुसमयम् । भग० ४३ । पुनः पुनः । उत्त० ३४४, ४२८, ठाणा० ३०१ ।

अभिक्खणं अभिक्खणं ओहारइत्ता - शबलदोष. । सम० ३७ ।

अभिक्खणंऽभिक्खणमोहारी-अभीक्ष्णमभीक्ष्णमवधारकः, योऽभीक्ष्णमवधारिणीं भाषां भाषते, यथा दासस्त्वं चौरो वेति, यद्वा शङ्कितं तन्निःशङ्कितं भणति । एकादशममसमाधिस्थानम् । आव० ६५३, ६५४ ।

अभिगच्छंति-अभिगच्छन्ति, समीपमभिगच्छन्ति । भग० १३७ ।

अभिगता-अभिगताः, अभिगतजीवाजीवाः । आव० ३०४ ।

अभिगम-अभिगमः, ज्ञानम् । उत्त० ५९२ । बोधिलाभः । सम० १२० । मैथुनासेवना, गमनं च । आव० ८२५ । अभिगम्य, विज्ञाय, आसेव्य । दश० २५८ ।

अभिगमकुसले-अभिगमकुशलः, लोकप्राघूर्णकादिप्रतिपत्तिदक्षः । दश० २५५ ।

अभिगमणं - अभिगमनं, सर्वबाह्यान्मण्डलादभ्यन्तरप्रवेशनम् । जीवा० २४५ । सूर्य० २४२ ।

अभिगमरुई - अभिगमरुचिः-यस्य श्रुतज्ञानमर्थतो दृष्टं स भवति । प्रज्ञा० ५६ । अभिगमो-ज्ञानं तत्तो रुचिर्यस्य स, येन दृष्टाचारादिकं श्रुतमर्थतोऽभिगतं भवति सः । ठाणा० ५०४ । अभिगमरुचिः-अभिगमो-ज्ञानं तेन रुचिर्यस्य सः । उत्त० ५६३ ।

अभिगमसड्ढे-अभिगमश्राद्धः-यत्र कारणे श्रावको प्रतिपद्यते । ओघ० १५६ ।

अभिगमसम्महो-सम्मद्दिट्ठी-गिहीताणुव्वओ । नि० चू० प्र० १९९ आ ।

अभिगम - अभिगम., निस्तरबोधः । भग० १०० । प्रतिपत्तिः । भग० १३७ ।

अभिगमो- अधिगम', यथावस्थितपदार्थपरिच्छेदः । आव० ८३८ । साधूनामागमनं वा विणयपडिवत्ती वा । दश० चू० १४१ ।

अभिगया-जीवाजीवादिपदार्थाभिगमोपेता आविर्भूतार्थ. । सू० तृ० १३९ आ ।

अभिगहियट्ठ - अभिगृहीतार्थम्, प्रश्नितार्थस्याभिगमनात् । भग० १३५ ।

अभिगाहइ-सेवते । आचा० ११४ । अभिगाहन्ते-सेवन्ते । आचा० १३३ ।

अभिगिज्झ-अभिगृह्य, आलोच्य । दश० २१६ । अङ्गीकृत्य, तदभिमुखीभूय । ठाणा० ५६ ।

अभिग्गह-अभिग्रहः, गुरुवियोगकरणाभिसन्धिः । दश० २४१ ।

अभिग्गहियमिच्छादंसणवत्तिया - अभिगृहीतमिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी, मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकीक्रियाया द्वितीयोभेदः । आव० ६१२ ।

अभिग्गहिया-अभिगृहीता, प्रतिनियतार्थावधारणम् । प्रज्ञा० २५६ । अभिग्रहिका-वस्त्राणि वा पात्राणि वा पूर्णीयानि अपरेण वा येन प्रयोजनमिति प्रतिपन्नाभिग्रहाः । सू० प्र० ९९ आ ।

अभिग्गहो-अभिग्रहः-प्रत्याख्यानविशेषः । आव० ८५३ । कुमतपरिग्रहः । ठाणा० ४९ । नियमः । भग० ६२ ।

अभिग्रहिकः-मिथ्यात्वविशेषः । ठाणा० २७ ।

अभिघट्टिज्जमाणस्स-अभिघट्यमानस्य-वेगेन गच्छतः । जं० प्र० ३७ । जीवा १९३ ।

अभिघातो-उवलओ वा घत्तिज्जति। नि० चू० प्र० १०५ आ।
अभिचंदे-अस्यामवसर्पिण्यां चतुर्थकुलकरः। सम० १०३, १५७। अभिचन्द्रः, अन्तकृद्दशानां द्वितीयवर्गस्याष्टमाध्ययनम्। अन्त० ३। अभिचन्द्रः-मुहूर्त्तविशेषः। सूर्य० १४६। जं० प्र० ४९१। कुलकरविशेषः। आव० ११२। जं० प्र० १३२। अभिचन्द्रः-अमुष्यामवसर्पिण्यां चतुर्थकुलकरः। ठाणा० ३६८।
अभिचारकमन्त्रविद्यादि - अभिचारकरौषधी तत्प्रमार्थे। ठाणा० १६४।
अभिचारुर्भ-वारकता। नि० चू० प्र० २७४ आ।
अभिचारुकं-वशीकरणं। नि० चू० प्र० १०१ आ।
अभिजाए-अभिजातः, कार्त्तिकद्वादशदिवसनाम। जं० प्र० ४९०। विनीतः। उत्त० १८८। कुलीन.। जं० प्र० १८२।
अभिजाओ-शिष्टः। बृ० द्वि० २५५ आ।
अभिजाणइ-अभिजानाति, विवेचयति। आचा० २०३।
अभिजातं-वाग्यतिशयविशेष.। सम० ६३।
अभिजाति-कुलीनता। उत्त० ३४७।
अभिजातिग - अभिजातिग, अभिजाति-कुलीनता ता गच्छति-उत्क्षिप्तभारनिर्वाहणादिनेति। उत्त० ३४७।
अभिजाते-अभिजातः, कार्त्तिकैकादशदिवसनाम। सूर्य० १४७।
अभिजाय-अभिजातम्-कुलीनम्। भग० ४६९।
अभिजायइ - अभिजायते, उपभोग्यतयाऽऽभिमुख्येनोत्पद्यते। उत्त० १८७।
अभिजित्-नक्षत्रदेवविशेषः। प्रश्न० ९५। उदायनपुत्र। ठाणा० ४३१।
अभिजुंजंति-अभियुञ्जते, योजयन्ति। प्रश्न० २६।
अभिजुंजित्तए - अभियोक्तुम्, विद्यादिसामर्थ्यतस्तदनुप्रवेशेन व्यापारयितुम्। भग० १९१।
अभिजुंजिया-अभियुज्य, व्यापार्य, स्मारयित्वा। सूत्र० ११९। योजयित्वा, अभियोगं ग्राहयित्वा, व्यापारयित्वा। आचा० १२३। आभिमुख्य-वशीकृत्य। ठाणा० १०६। सम्यगभ्युपगत्य, प्रतिपद्य। ठाणा० १७०।
अभिजोइंति - विरूपयंति, निर्भर्त्सयन्ति। बृ० प्र० २८१ अ।
अभिजोयंति-वशीकुर्वन्ति। बृ० द्वि० २५५ अ।
अभिज्जं-अभेद्य। उत्त० २०७।
अभिज्झा - अभिध्यानमभिध्येयस्य। सम० ७१। लोभः, अभिध्यानं वा। प्रश्न० ९७।
अभिज्झा-अभिध्या-अदृढाभिनिवेश, चित्तलक्षणः। भग० ५७३। अभिध्या, अभिध्यानम्, अभिलाषः। प्रज्ञा० ५०४।
अभिज्झिय-अभिध्यातम्, इष्टम्। दश० ३७७।
अभिज्झियत्ता-अभिध्यितता, भिध्या-लोभः सा सञ्जाता यत्र सो भिध्यितो, न भिध्यितोऽभिध्यितस्तद्भावस्तत्ता। भग० २५१। अभिध्यितता, अभिध्यानमभिध्या-अभिलाषः, सा सञ्जाताऽस्मिन्, तस्य भावः। प्रज्ञा० ५०४। अभिध्येयता-अइष्टत्वं, अशुभत्वं। भग० २३।
अभिणए-अभिनयः, चतुर्विधाङ्गिकवाचिकसात्त्विकाहार्यभेदैः समुदितैरसमुदितैर्वाऽभिनेतव्यवस्तुभावप्रकटनम्। जं० प्र० ४१४।
अभिणंदणो - अभिनन्दनः, अभिनन्द्यते देवेन्द्रादिभिरिति, चतुर्थजिनः, गर्भात्प्रभृतिरभीक्ष्णं शक्रोऽभिनन्दितवानिति। आव० ५०२।
अभिणंदिए-अभिनन्दितः-लोकोत्तरप्रथममासनाम। जं० प्र० ४९०।
अभिणंदियाइओ-अभिनन्दितवान्। आव० ५०२।
अभिणंदे-अभिनन्द, लोकोत्तरप्रथममासनाम। सूर्य० १५३।
अभिणिक्खंतो-अभिनिष्क्रान्तः। आव० ११७।
अभिणिबोहे-अभिनिबोध, अर्थाभिमुखो नियतः प्रतिनियतस्वरूपो बोधो-बोधविशेष, अभिमुखोऽस्माद् अभिनि बोधे। तदावरणकर्मक्षयोपशमः। प्रज्ञा० ५२६।
अभिणिवट्टमाणे - अभिनिवर्त्तमान, पृथग्भवन्। सूत्र० ३५४।
अभिणिविट्ठं - अभिनिविष्टं, विशिष्टविशिष्टतराध्यवसायभावतोऽतितीनानुभावजनकतया व्यवस्थितम्। प्रज्ञा० ४०३।
अभिणिवेसे-अभिनिवेश, विपर्ययग्रह। औप० १०६।
अभिणिव्वट्टित्ता-अभिनिर्वर्त्य, समाहृत्य। सूत्र० २७१।
अभिण्णाणं - अभिज्ञानं, चिह्नम्। उत्त० १४९। आव० ३४४।
अभिण्णाय-अभिज्ञातम्, अभिन्नम्। भग० ११७।

अभितावयंति-अभितापयन्ति, अपनयन्ति। सूत्र० ११३।
अभितुर-अभि-आभिमुख्येन त्वरस्व-शीघ्रो भव। उत्त० ३४०।
अभितोसइज्जा-अभितोषयति, येन वा तेन वा यापयति। दश० २५३।
अभिदुग्गा-अभिदुर्गा, आभिमुख्येन दुर्गा-दु खोत्पादिका। सूत्र० १२९।
अभिद्दवं-अभिद्रवन्ति। आचा० ४२९।
अभिद्दुय-अभिद्रुतः, सर्वात्मना व्याप्तः। जीवा० १३०।
अभिधानं-वचनपर्यायः। आव० २६।
अभिधारए-अभिधारयेत्-यायात्। दश० १८६। किमेते उपसर्गा ममाचलितचेतसः कर्तुमलमिति चिन्तयेत्। उत्त० १०९। अभिधारयेत्-अन्तर्भावितेव। उत्त० १०९।
अभिधारणा - धारणा, विचारणा, संकल्पः। व्य० द्वि० ३७३ आ।
अभिधारयामो-गर्हणायुद्धपोद्घट्टयामः। सूत्र० ३६२।
अभिधारेमाणे-अभिसन्धारयत-गच्छतः। आचा० ३२९।
अभिधास्ये-कीर्तयिष्ये। आचा० ४।
अभिनंदिज्जा-अभिनन्देत्, अनुमन्येत। उत्त० १०० ।
अभिनयिका-नृत्यकलाभेदः। सम० ८४।
अभिनव-विशिष्टवर्णादिगुणयोगेन। जीवा० १२१।
अभिनवम्-नवम्। सूर्य० १८।
अभिनिक्खमणं-अभिनिष्क्रमणं-दीक्षा। आचा० ४२२।
अभिनिक्खमति-अभिनिष्क्रामति-धर्माभिमुख्येन गृहस्थ-पर्याय निर्गच्छति। उत्त० ३०६।
अभिनिचरिका-आभिमुख्येन नियता चरिका सूत्रोपदेशेन बहिर्ग्रामादिषु दुर्बलानामाप्यायनिमित्तं पूर्वाह्नकाले समुत्कृष्टं समुदान लब्धु गमनं। व्य० द्वि० ६९ अ।
अभिनिदुवारं-अनेकद्वारम्। बृ० द्वि० ११ आ।
अभिनिबोध-अर्थाभिमुखोऽविपर्ययरूपत्वान्नियतोऽसंशयरूपत्वाद् बोधः-संवेदनम्। ठाणा० ३४७।
अभिनिपयाप-अभिनिप्रजा-अभि-प्रत्येकं नियता-विविक्ता प्रजा पुरी। व्य० द्वि० ३३९ अ।
अभिनिवर्त्तनम्-क्रिया। उत्त० ५८९।
अभिनिविट्टा-अभिनिर्वृत्ता। आव० २२०।
अभिनिविट्ठं-अभिनिविष्टम्। तीव्रानुभावतया निविष्टम्। भग० ९०।
अभिनिविट्ठाई-अभि-अभिविधिना निविष्टानि-सर्वाण्यपि जीवे लग्नानि। भग० ५६९।
अभिनिवुडच्चे-अभिनिर्वृत्तार्चः-शरीरसंतापरहितः। आचा० ३८८।
अभिनिवेशिकः-मिथ्यात्वविशेषः। ठाणा० २७।
अभिनिवेसए-अभिनिवेशयेत्, कुर्यात्। दश० २३२।
अभिनिवेसं-अभिनिवेशः। आव० ३११। आग्रहः। भग० ४८९।
अभिनिव्वट्टित्ता-अभिनिर्वर्त्य, विधाय। भग० ११४।
अभिनिव्विगड-विष्वक् अपवरकः। व्य० द्वि० १९० आ।
अभिनिव्वगडा-अभिनिर्व्याकृत-पृथग्विभिन्नद्वारायां वसतौ। व्य० प्र० ४० आ।
अभिनिव्वगडाए-अभि-प्रत्येकं नियतो वगडः-परिक्षेपो यस्यां सा अभिनिव्वगडा। व्य० द्वि० १८९ अ।
अभिनिसिज्जा-अभिनिषद्या-रात्रिस्वाध्यायभूमिः, अभिनैषेधिकी-सामान्यस्वाध्यायभूमिः। व्य० प्र० १२७ अ।
अभिनिसिट्ठो - अभिनिसृष्ट, अभिमुख - बहिर्भागाभिमुखं निसृष्ट। जीवा० ३६९, २०६।
अभिनिस्सवति-अभिनि·श्रवति, जिघ्रतामभिमुखं निस्सरति। जीवा० १९२।
अभिन्नं-अव्यपगतजीवं। बृ० प्र० ३५ आ।
अभिप्पाय-अभिप्राय-शास्त्रा। आचा० ३०४।
अभिप्पाओ-अभिप्रायः, बुद्धिः। आव० ४१४।
अभिप्पेय-अभिप्रेतः, कामयन्। दश० १९५। अभिप्रेते-अभिरुचिते। उत्त० २५४।
अभिभवे-अभिभवकायोत्सर्ग - उपसर्गाभियोजने द्वितीयः। आव० ७७१। विशे० ६१२।
अभिभूतः-आतुरः। आव० ५८९। प्रारब्धः, अपराद्धो वा। प्रश्न० ६०।
अभिभूय-तिरस्कृत्य। आचा० ३०८। सर्वथा तत्सामर्थ्यमुपहत्य। उत्त० ८१। पराजित्य। सूत्र० १४५। अभिव्याप्य। सूत्र० २८५।
अभिमरए-अभिमरकः। आव० ८१९।
अभिमरा-अभिमरा। उत्त० १६२। आव० ३१६।
अभिमुखं-अभिमुखं। व्य० प्र० ९९ अ।

अभिमुखनामगोत्रः – (अभिमुहनामगोत्तं), नोआगमतो द्रव्यशङ्खस्य तृतीयः प्रकारः । दश० १७ । अभिमुखे-संमुखे जघन्योत्कर्षाभ्यां समयान्तर्मुहूर्तानन्तरभावितया नामगोत्रे इन्द्रसम्बन्धिनी यस्य स तथा । ठाणा० १०३ ।

अभिमुखनामगोत्रा – ये पुनर्यादरापर्याप्ततेज-कायिकायु-र्नामगोत्राणि पूर्वभवमोचनानन्तरं साक्षादुदयन्ते तेऽभि-मुखनामगोत्राः । प्रज्ञा० ७६ ।

अभिमुह-पञ्चजाभिमुहो, संपट्ठितो । नि० चू० प्र० १०४ अ ।

अभिमुहो-अभिमुखः, उद्युक्तः । दश० २४५ । अभि-भग-वन्तं प्रति मुखमस्य । सूर्य० ६ ।

अभियोग-आज्ञा । ठाणा० ५२१ । ' प्रहणप्रवणः, अर्थबला-ऽऽयाततत्त्वेन तदान्तरीयकोद्भवः ।' विशे० ५३ । कार्मणं कुर्यात् । बृ० प्र० ९९ आ ।

अभियोग-आभियोग्यः, अभियोगार्हः आदेशकारी देवः । प्रश्न० १२१ ।

अभियोगो-वशीकरणं । व्य० द्वि० ३१५ आ ।

अभियोजनम् – विद्यामन्त्रादिभिः परेषां वशीकरणादि । प्रज्ञा० ४०६ ।

अभिरई-अभिरतिः, आभिमुख्येन रतिः । आव० ४५१ ।

अभिरामयंति-अभिरमयन्ति, आभिमुख्येन विनयादिषु युङ्क्ते । दश० २५६ ।

अभिरू-मध्यमग्रामस्य सप्तममूर्छनानाम । ठाणा० ३९३ ।

अभिरूढप-स्वादुभावमिवोपगतः । भग० ४३७ ।

अभिरूप-अभिमुखमतीवोत्कृष्टं आकारो यस्य सः । सूर्य० ९ ।

अभिरूवं-अभिरूपं, अभि-सर्वेषां द्रष्टृणां मनःप्रसादानुकूल-तयाऽभिमुखं रूपं यस्य तत्, अत्यन्तकमनीयमिति । जीवा० १६१ । प्रज्ञा० ८७ ।

अभिरूवा-अभिरूपाणि, कमनीयानि । सम० १३८ । अभि-सर्वेषां दृष्टॄणां मनःप्रसादानुकूलतया अभिमुखं रूपं यस्याः सा, अत्यन्तकमनीया । जं० प्र० २१ । अभिरूपाः-कमनीयाः । ठाणा० २२२ ।

अभिलंघमाण-अभिलङ्घयन्, अनुलिखन् । जं० प्र० २९७ ।

अभिलसंति-अभिलषन्ति । औप० २४ ।

अभिलसइ-अभिलषति, अभिलषणं-तल्लालसतया वाञ्छनम् । उत्त० ५८७ ।

अभिलावपुरिसे – अभिलापपुरुषः पुंलिङ्गाभिधानमात्रम् । आव० २७७ । ठाणा० ११३ ।

अभिलाष-तीव्रलोभोदयप्रभव आत्मपरिणामः । आव० ५८० ।

अभिलोयणं-अभिलोकनम्, अभिलोक्यते यत्रस्थैस्तत्, उच्चतरस्थानम् । प्रश्न० १३८ ।

अभिवंदओ-अभिवन्दकः, अभिवन्दयत इति । आव० १६७ ।

अभिवंदिऊण-अभिवन्द्य, अभिमुखं वन्दित्वा-प्रणम्य । प्रज्ञा० ३ ।

अभिवड्ढिए-अभिवर्धितः, तृतीयः पञ्चमश्च युगे संवत्सरौ । सूर्य० १५४ । ठाणा० ३४४ ।

अभिवड्ढिए णं मासे-अभिवर्धितसंवत्सरस्य चतुश्चत्वारिंशद्-होरात्रद्विषष्टिभागाधिकत्र्यशीत्यधिकशतप्रमाणस्य द्वादशो भागः । सम० ५६ । अभिवर्धितमासः, अभिवर्धितो नाम मुख्यतस्त्रयोदशचन्द्रमासप्रमाणसंवत्सरः । बृ० प्र० १८६ आ ।

अभिवड्ढियवरिसं-जत्थ अधिकमासगो पडति वरिसे तं । नि० चू० प्र० ३३९ अ ।

अभिवड्ढियसंवच्छरे-अभिवर्धितसंवत्सरः । सूर्य० १६६, १७१ ।

अभिवयंति-अभिवदन्ति-व्यक्तुर्वन्ति । ठाणा० १७७ ।

अभिवड्ढी-अभिवृद्धिः, उत्तराभाद्रपदाया देवता । जं० प्र० ४९९ ।

अभिवयणा-'अभी'त्यभिमुखानि वचनानि-शब्दा अभि-वचनानि, पर्यायशब्दाः । भग० ७७६ ।

अभिवायणं – अभिवादनम्, शिरोनमनचरणस्पर्शनादि-पूर्वमभिवादये इत्यादि वचनम् । उत्त० ५१४ ।

अभिवायण अभिवादनं-नमोकारादिकरणं । दश० चू० १६३ ।

अभिवाहारो – अभिव्याहारः, आचार्यशिष्ययोर्वचनप्रतिव-चनेऽभिव्याहरणम् । आव० ४७१ ।

अभिविधग्गहणं-पर्यपिचवरिधापिताद्यैर्महणम् । बृ० द्वि० २४ अ ।

अभिवुड्डित्ता-अभिवर्ध्य । सूर्य० १२ ।

अभिवुड्ढेमाणे-अभिवर्धयन् । सूर्य० १२ ।

अभिव्यज्यते-अनन्तपरिणामस्य द्रव्यस्य तत्तत्सहकारिका-रणसन्निधाने तद्रूपम् । ठाणा० ४५० ।

अभिशंसनम् – असदभ्यारोपण, अभ्याख्यानं च । आव० ८२१ ।

अभिसंधारिज्ज – अभिसन्धारयेत, पर्यालोचयेत । आचा० ३२९ ।

अभिसन्धि – आलोचनम् । प्रज्ञा० ५०० ।

अभिसंभूया – अभिसम्भूता, प्रादुर्भूता । आचा० ३७६ ।

अभिसमण्णागय – तद्योगापेक्षया । भग० १७९ । गतेन यता लब्ध । भग० २२८ ।

अभिसमन्नागच्छामि – अभिसमागच्छामि, अभिविधिना साङ्गत्येन चावगच्छामि–मन्ये परिच्छित्तिप्रकारैः परिच्छिनमि । भग० ७२५ ।

अभिसमन्नागय – परिणमयितुमारब्धम् । भग० ७२४ । उदयाभिमुखीभूतम् । भग० ९० । अभिसमन्वागतम्–उदयाभिमुखीभूतम् । प्रज्ञा० ४०३ । विशेषेण परिच्छिन्नम् । भग० ०२३ ।

अभिसमन्नागया – अभिसमन्वागता अभि–आभिमुख्येन सम्यग–इष्टानिष्टावधारणतयाऽन्विति–शब्दादिस्वरूपावगमा त्पश्चादागता ज्ञाता –परिच्छिन्ना यस्य । आचा० १५३ । भोग्यावस्थां गता । ठाणा० २४५ ।

अभिसमन्नागयाइं – अभिविधिना समागतान्यर्थं समन्वागतानि–सम्प्राप्तानि । भग० ०६९ ।

अभिसमागच्छति – अभिसमागच्छति साध्यसिद्धौ व्यापारेण सम्यक् प्राप्नोति । भग० २३९ ।

अभिसमागम – अभिसमागम, वस्तुपरिच्छेद । ठाणा० १७२ ।

अभिसमेच्चा – आभिमुख्येन सम्यग्ज्ञित्वा–ज्ञात्वा । आचा० ४४ ।

अभिसित्त – अभिषिक्त दीक्षासंस्कृत । दश० २४५ ।

अभिसेअ – अभिषेक, ध्रियोऽभिषेक । आव० १७८ ।

अभिसेअसिला अभिषेकशिला, अभिषेकाय–जिनजन्म स्नात्राय शिला । ज० प्र० ३७१ ।

अभिसेआ – प्रवर्तिणी । नि० चू० प्र० १३२ आ ।

अभिसेए – आचार्यपदस्थापनार्ह, सूत्रार्थतदुभयोपेत । बृ० द्वि० २८३ आ ।

अभिसेपण – अभिषेकेण,शुक्रशोणितनिषेकादिक्रमेणेति। आचा० २३९ ।

अभिसेओ – अभिषेक –सूत्रार्थतदुभयोपेत आचार्यपदस्थापनार्ह । व्य० प्र० १४१ आ । जीवा० ७०६ ।

अभिसेक्कभंडे – अभिषेकभाण्डम्, अभिषेकोपस्कर । जीवा० २३६ ।

अभिसेग – अभिषेक, अभिषिक्त । बृ० प्र० १७७ आ ।

अभिसेगपत्ता – अभिषेकप्राप्ता–प्रवर्तिनीपदयोग्या । बृ० द्वि० २२ आ ।

अभिसेगसिलाओ – अभिषेकशिला, तीर्थंकराणामभिषेकार्था शिला । ठाणा० ३२० ।

अभिसेज्ज – अभिशय्या, अभिनिषद्या । व्य० प्र० १२८ अ ।

अभिसेज्जा – अभिशय्या, द्वितीयवसति । विशे० १३०२ ।

अभिसेय – अभिषेक –उपाध्याय । व्य० द्वि० १६५ अ ।

अभिसेयसभा – अभिषेकसभा । जीवा० २३६ ।

अभिसेयसभा – अभिषेकसभा, यस्यां राज्याभिषेकेणाभिषिच्यते । ठाणा० ३५२ । अभिषेकभवननिमानभाविनी सभा । प्रश्न० १२५ ।

अभिहआ – अभिहता, अभिमुखेन हता, चरणेन घट्टिता, उत्क्षिप्य क्षिप्ता वा । आव० ५७३ ।

अभिहड – अभ्याहृतम्, स्वग्रामाद् साधुनिमित्तमभिमुखमानीतम् । दश० ११६ । गृहस्थेनानीतं । आचा० ३२७ । निष्पन्नमेवान्यत समानीतम् । आचा० ३६१ । अभ्याहृत–स्वग्रामादिभ्य आहृत्य यद्ददाति । ठाणा० ४६० । भग० ४६७ ।

अभिहणति – अभिघ्नन्ति, अभिमुखमागच्छन्तो घ्नन्ति । प्रज्ञा० ५९२ ।

अभिहणह – आभिमुख्येन हथ । भग० ३८१ ।

अभिहणिज्ज – अभिहन्यात, पादेन ताडयेत । आव० ४२८ ।

अभीक्ष्णमवधारकत्वम् – अङ्कितस्याप्यभ्यावधारकत्वम् । प्र.ज० १४४ ।

अभीजि – अभिचि, उदायननृपपुत्र । भग० ६१८ ।

अभीयी – अभिजित्, नक्षत्रविशेष । सूर्य० १२९ ।

अभीरू – सत्त्वसम्पन्न । आप० २०२ ।

अभु(म्भु)ज्जियमरणं – परिण्णादि । नि० चू० प्र० २६३ आ ।

अभुत्त – अभुक्त, य कुमार एव प्रव्रजित । ओघ० ९१

अभूतभाव – असनिभाव, असद्भाव । दश० २४३ ।

अभूपणं-अभूतेन, असद्भुतेन। सम० ७२।
अभूतोद्भावनम्-यथा सर्वगत आत्मा। ठाणा० २६।
अभूतिभावो-विनाशभावो। दश० चू० १३१।
अभेज्ज-अभिध्या, रौद्रध्यानम्। प्रश्न० ४२।
अभेज्जलोभो – अभिध्यालोभ, रौद्रध्यानान्विता मूर्च्छा। प्रश्न० ४२।
अभेल्लु-कणिकाकारं पूर्यु। आचा० ३४३।
अभ्यंतरं तप-संवरनिर्जराद्वारा निर्वाणप्रापकं। तत्त्वा० ९-४६।
अभ्यन्तरवाम्बूका – यस्यां क्षेत्रमध्यभागाच्छङ्खवद्वृत्तया परिभ्रमणभङ्गया भिक्षां गृह्णन् क्षेत्रबहिर्भागमागच्छति। बृ० प्र० २५७ अ।
अभ्यन्तरान्-अवगाहक्षेत्रस्थान्। ठाणा० २८४।
अभ्यन्तरानिर्वृति-बाह्यनिर्वृते खड्गधारासमानायाः स्वच्छतरपुद्गलसमूहात्मिका। प्रज्ञा० २९४।
अभ्यस्तः-जित उचितो वा। आव० ५५४।
अभ्यस्तम्-शनै, निर्वर्तितम्। आव० ५९३।
अभ्यागत-अतिथि। उत्त० १८१।
अभ्यासगुणे-(अभ्यासगुणे), भोजनादिविषय। आचा० ८६।
अभ्यासराशि-गुणकार। सम० ६१।
अभ्युद्यतविहारेण-जिनकल्पादिना। बृ० प्र० ११० आ।
अमंडलिजवजीवो-अमण्डल्युपजीवक –तत्र योऽमण्डल्युपजीवकः स साधुर्गुरुसकाशं गत्वा तमेव गुरु भणति–यथा हे आचार्या! संदिशत–ददत यूयमिदं भोजनं प्राघूर्णकक्षपक–असहनबालवृद्धशिक्षकेभ्य –साधुभ्य इति। ओघ० १५८।
अमंथरम्-अविलम्बितम्। ओघ० १८७।
अमओ-अमय, न विस्मयोऽपि। दश० १३३।
अमग्गो-अमार्ग, मिथ्यात्वादि। आव० ७६२।
अमच्च-अमात्य, राज्याधिष्ठायक। सम० ३३८। मन्त्रि। दश० १०५।
अमच्चा-अमात्या, राज्याधिष्ठायका। सम० २६४।
अमच्चो-अमात्य। आव० ११६। राज्यचिन्तक। प्रश्न० ३९, ९६। राज्याधिष्ठायक। ओघ० १४। राजमन्त्री। बृ० सू० ३३ अ। यो राजानमपि शिक्षां प्रयच्छति सो। व्य० प्र० १६१ आ। उत्त० ३८०।

अमच्छरी-अमत्सरी, परगुणग्राही। प्रश्न० ७४।
अमण-अवमानम्। विशे० १३०७।
अमणाम-अमनोऽमम्, न मनसा अन्त मगम्यन्ते, पुन पुन स्मरणगम्यम्। भग० ७२।
अमणामत्ता-अमनोऽम्यता, अमनोगम्यता। भग० २३। न मनसा अम्यते–गम्यते सस्मरणतोऽमनोऽम्यस्तद्भावस्तत्ता, प्राप्तुमवाञ्छितत्वम्। भग० २५३। भोज्यतया मन आप्नुवन्तीति मनआपा प्राकृतत्वाच्च पकारस्य मकारत्वे मणाम इति सूत्र निर्देश, न मनआपा अमनआपा। प्रज्ञा० ५०४।
अमणुण्ण-अमनोज्ञम्, न मनसा –अन्त सवेदनेन शुभतया ज्ञायन्ते। भग० ७२। अमनोज्ञ –रजनशील। ओघ० १५३। अमनोज्ञ –असविग्न। ओघ० १२०।
अमणुण्णसंपओगसंपउत्ते – अमनोज्ञसम्प्रयोगसम्प्रयुक्त –अमनोज्ञ –अनिष्टो य शब्दादिस्तस्य य संप्रयोगो–योगस्तेन सम्प्रयुक्तो य स। औप० ४३।
अमणुण्णा-असाम्भोगिका। बृ० द्वि० १८ आ।
अमणुण्णत्ता-अमनोज्ञता, न मनोज्ञा अमनोज्ञा, विपाककाले तु स्वानन्दतया न मन प्रह्लादहेतु। प्रज्ञा० ५०४। न मनसा ज्ञायते सुन्दरता। भग० २५३। कथयाऽप्यमनोरमतया। भग० २३।
अमणुये – अमनोज्ञो–न कश्चित् प्रतिभाति स्पर्शादिस्वरूपेण सर्वथाऽपि हिण्डते। ओघ० १०१। सर्वेषामप्यनिष्ट। बृ० प्र० २६६ अ।
अमणो-अमनस्क, मनोरहित –सम्मूर्च्छिम। ओघ० ३३१।
अमत-अमृतम्–क्षीरोदधिजलम्। जीवा० ३१०।
अमम-अमम, ममकाररहित। भग० ३०६। द्वादशोऽर्हन्। ठाणा० ६३४। जातिवाचक शब्द। बृ० प्र० १०६, २१३। भरत वर्षे मनुष्यसेन्यविशेष। बृ० प्र० १२६।
अममायमाणे-अममीकुर्वन्–अस्वीकुर्वन्। आचा० ११२।
अममे-जिनकल्पनाम। सम० १०३। भारते द्वादशोऽर्हन्। अन्त० १६। अमम, पर्वदिवसानो मुहूर्त। जं० प्र० ४९१। मुहूर्तनामविशेष। सूर्य० १४६।
अमम्मणा-अव्यक्तवचनाऽन्यता। ओघ० ४८।

अमुत्ती – अमुक्तिः, सलोभता, परिग्रहस्य षड्विंशतितमं नाम। प्रश्न० ९२।

अमुय-अस्मृतम्, मनोऽपेक्षया अस्मृतम्। भग० १९७।

अमुहं-अमुखं, निरुत्तरम्। व्य० द्वि० १६० अ।

अमुहा-अमुखाः, निर्वाचः। भग० ३७६।

अमूढ-अमूढः, अविप्लुतः। दश० २६६।

अमूढदिट्ठी-अमूढदृष्टिः, बालतपस्वितपोविद्यातिशयदर्शनैर्न मूढाः स्वभावाचलिता दृष्टि.–सम्यग्दर्शनरूपा यस्यामावमूढदृष्टिः। प्रज्ञा० ५६। अचलितसम्यग्दृष्टिः। दश० १०२। ऋद्धिमत्कुतीर्थिकदर्शनेऽप्यनवगीतमेवास्मद्दर्शनमिति मोहविरहिता सा चासौ दृष्टिश्च-बुद्धिरूपा। उत्त० ५६७।

अमूढलक्खो – अमूढलक्षः, सर्वज्ञेयाविपरीतवेत्ता। आव० ३१४।

अमूतरसा-वापीनाम। जं० प्र० ३७१।

अमेज्झं-अमेध्यम्। आव० २९३।

अमोसलिं-न विद्यते मोसली यत्र तदमोसलि। ठाणा० ३६१।

अमोहं-अमोघम्, अन्तरिक्षम्। सूत्र० ३१८। अवन्ध्यम्। उत्त० २३३। जुवगो। नि० चू० तृ० ७०आ।

अमोहदंसणं-अमोघदर्शनम्, पुरिमताले उद्यानम्। विपा० ५५।

अमोहदंसि-अमोहदर्शी, योऽमोहं-यथावत्पश्यति। दश० २०७।

अमोहदंसी – अमोघदर्शी, पुरिमतालनगरेऽमोघदर्शनोद्याने यक्षः। विपा० ५५।

अमोहपहारी – अमोघप्रहारी, जितशत्रो राज्ञो रथिक। उत्त० २१४।

अमोहरहो-अमोघरथः, जितशत्रो राज्ञो रथिक। उत्त० २१२।

अमोहमत्थं-अमोघमस्त्रम्। आव० ४०७।

अमोहा – अमोघा, पूर्वदिग्भागजनपर्वतस्य दक्षिणस्यां दिशि पुष्करिणीविशेषः। जीवा० ३६४। ठाणा० २३०। अनिष्फला, जम्ब्वा सुदर्शनाया द्वितीयं नाम। जीवा० २९९। सफला। जं० प्र० ३२६। अमोघाः, आदित्योदयास्तमययोरादित्यकिरणविकारजनिता दण्डाः। भग० १९६। सिद्धशिलानाम। (दि०)। सूर्यबिम्बस्याधःकदाचिदुपलभ्यमानशकटोर्द्धिसंस्थिता श्यामादिरेखा। जीवा० २८३।

अमोहे-अमोहः, वैश्रमणस्य पुत्रस्थानीयो देवः। भग० २००। ग्रैवेयकविमानप्रस्तटनामविशेषः। ठाणा० ४५३।

अमोहो-अमोघ। उत्त० ४०३। अमोघ, आदित्यकिरणविकारजनित आदित्योद्गमनास्तमयने आताम्र. कृष्णश्यामो वा शकटोर्द्धिसंस्थितो दण्ड., यूपक। आव० ७३६। अमोह., शाहञ्जनीनगर्यां देवरमणोद्याने यक्ष.। विपा० ६५।

अम्मड-(अम्मड.), परिव्राजकः। भग० ६५३।

अम्मधाई-धात्री। उत्त० ३३१।

अम्मया-अम्बा, पुरुषसिंहवासुदेवमाता। आव० १६२। अम्बा। आव० ८१६।

अम्माहिती – पञ्चमवासुदेवमाता। सम० १५२। व्य० प्र० १८० आ।

अम्मि(ब्भि)ओ-अभ्यागतः। आव० ५६०।

अम्मो-अम्बा। आव० २७२।

अम्मोगइया-अहपूर्विका। आव० २९३।

अम्मोगतिया-अभिमुख.। आव० ३००।

अम्ल –(अंबिले), आश्रवक्लेदनकृत्। ठाणा० २६। अम्लम्–(अंबिले), काञ्जिकम्। ठाणा० ४९२। रसविशेष। प्रज्ञा०४७३।

अम्लवेतस-अम्लरसपरिणताः। प्रज्ञा० १०।

अम्हपहिं-अस्मदीयम्। आव० ८१३।

अम्हच्चयं-अस्मदीयम्, अस्मत्सत्कमपि। दश० ११२।

अम्हच्चय-अस्माकीन। आव० २९५।

अम्हे-अस्माकम्। पउ० २८-४६।

अयं-अय, प्रत्यक्षगोचरीभूत मगारी। आचा० १६३। उष्फल, कर्म। जीवा० ३२। लोहं। भग० ६६७। इष्टफलम्। भग० ४।

अयंतिय-अयन्त्रित, अनियमित। उत्त० ४७८।

अयंते-(अइंते), पुन कायिका व्युत्सृज्य वसतिं प्रविशत। ओघ० ८१।

अयंपिर-अजल्पनशीला, नोच्चैर्लसविरुमा। दश० २३६।

अयंपुले – वरुणस्य पुत्रस्थानीयो देव। भग० १९९। मत्स्यबन्धविशेष। विपा० ८१। गोशालकश्रावक। भग० ६८०।

अयंबुले-आजीवकोपासकविशेष । भग० ३७० ।

अय-अय, लोह । प्रज्ञा० २७। पृथिवीभेद । आचा० २९।

अयआकरो-लोहाकर यत्र लोह ध्मायते। ठाणा० ४१९।

अयकक्करभोई-अजकर्करभोजी, अज-छागस्तस्य कर्कर-यवनकवद्भक्ष्यमाणं कर्करायते तस्येह प्रस्तावान्मेदोऽनुरम-लिपक वा मास तद्भोजी वा। उत्त० २७४।

अयकरए-अजकरक, ग्रहविशेष । ठाणा० ७८। ज० प्र० ५३८।

अयकोट्ठसि-लोहप्रतापनार्थ कुशूले। भग० ६९७।

अयकोट्ठसंठिते-अय कोष्ठसंस्थित, अय कोष्ठ लोहमय कोष्ठस्तद्वत्संस्थिता। जीवा० १०९।

अयगरा-अजगरा, उर परिसर्पभेदविशेषा । प्रज्ञा० ४०।

अयगरो-अजगर, उर परिसर्पविशेष । जीवा० ३९।

अयगोलो-बालो विद्रूमो वा। नि० चू० प्र० ६० अ।

अयण-अयन, त्रय ऋतव । जीवा० ३४४। सूर्य० ९१। भवन-मातृभवनप्रष्ठ। विशे० ११४३।

अयणाति-अयनानि-ऋतुत्रयमानानि। ठाणा० ८६।

अयणे-(अयन), त्रय ऋतव । भग० ८८८।

अयत-(अजय) अयतनया। आव० ७१९।

अयधायंम्-पलाशाभिधानवन। आव० ५१।

अयमाणे-आददान प्रवत्समान । सूर्य० १० । आयान आगच्छन । सम० ९८।

अयमाणे (अयमाण)-अददान । ज० प्र० ४८०।

अयराइ अनराति, सागरप्रमाण। विशे० १०७१।

अयरामर-अजरामरम् अविद्यमानौ जरामरणौ यस्मिन तत्। आव० ८।

अयल-अचल स्वाभाविकप्रायोगिकचलनक्रियाव्यपोहात। जीवा० ०५। अचल-स्वाभाविकप्रायोगिकचलनहेत्व भावात निश्चल । भग० ७।

अयलपुर-अचलपुर नगरविशेष । उत्त० ९९। पिंड० १४८।

अयलभाया-अचलभ्राता, नवमगणधर । आव० २४०।

अयले-अचल, प्रथमबलदेव । आव० १०९ १७४। सम० ८८। अन्तकृद्दशाना प्रथमवर्गस्य दशमाध्ययनम्। अन्त० १।

अयलो-अचल, उज्जयिन्या वणिक् । उत्त० ११८।

स्वाभाविकप्रायोगिकचलनहेत्वभावात्। सम० ५।

अयवीही-अजवीथी, शुक्रमहाग्रहस्य सप्तमी वीथी। ठाणा० ४६८।

अयस-कीत्तिनाम (अजसोकित्तिणाम), यदुदयवशात् मध्यस्थस्यापि जनस्याप्रशस्यो भवति तत्। प्रज्ञा० ४७०।

अयसोभयम्-अश्लाघाभयम्। आव० ६४६।

अयसि-अतसी, धान्यविशेष । दश० १९३। भग० ८०२, ८०३। मद्दी, धान्यविशेष । भग० २७४। अतसी-पुष्पम्। उत्त० ६६०। कुसुभिआ। ओघ० १४६।

अयसिकुसुमं-अतसीकुसुमम्, । प्रज्ञा० ३६०।

अयसिवणं-अतसीवनम्। आव० १८६।

अयसिवणं-(अतसीवनम्)। भग० ३६।

अयसी-औषधिविशेष । प्रज्ञा० ३३। धान्यविशेष । उत्त० ६५३।

अया-द्विखुरविशेष । प्रज्ञा० ४९।

अयागर-अयआकर, यस्मिन् निरन्तर महामूषास्वयोदल प्रक्षिप्याऽय उत्पाद्यते स । जीवा० १२३। लोहाकर-यत्र लोह ध्मायते। भग० १९९।

अयि-अयि कोमलामन्त्रणे प्रयुज्यमान शब्द । दश० ८९।

अयोगी न सन्ति योगा यस्य स, न योगीति वा यो-ऽसावयोगी शैलेशीकरणव्यवस्थित । ठाणा० ५०।

अयोग्ग (अजोग्गो) अजय, अपथ्य । नि० चू० द्वि० ७० आ।

अयोध्या-दशरथराजधानी। प्रश्न० ८७। भरतसगरादि-चक्रवर्तिना नगरी। प्रज्ञा० ३००। कोशला। जं० प्र० १३९।

अयोमुह्य-अयोमुख एकादशमान्तरद्वीप । प्रज्ञा० ५०।

अव्यापारपेक्षा-मृतस्य ज्वलनादिभस्म संस्थियमाणसुपश्य-माणास्तत्रानाला । ठाणा० ०३।

अव्याहतपौर्वापर्यम्-वाग्गुणविशेष । सम० ६३।

अरजर-अरजस्कम्, रजोरहिता, अम्बरम्। ठाणा० ७८३, ००८।

अरइ-अरति, मोहनीयादयाच्चित्तोद्वेग । सम० ८०।

अरइकम्म-अरतिकर्म यदुदयेन तत्वेवारतिर्भवते तत्। ठाणा० ८८९।

अरइमोहणिज्जं-अरतिमोहनीयम्-यदुदयवशात् पुनर्बाह्याभ्यन्तरेषु वस्तुषु अप्रीतिं करोति तत्। प्रज्ञा० ४६९।

अरइयं-अरतितो जं ण पचति। नि० चू० प्र० १८९ अ।

अरई - अरतिः, इष्टप्राप्तिविनाशोत्थो मानसो विकारः। आचा० १६८। वातादिजनितश्चित्तोद्वेगः। उत्त० ३३८।

अरए-अरजाः, ग्रहविशेषः। जं० प्र० ५३५। ठाणा० ७९।

अरक्खुरी-आरक्षुरीम्, संवेगोदाहरणे मित्रप्रभस्य प्रत्यन्तनगरम्। आव० ७१०।

अरगंतरं-अरकान्तरम्। आव० ३४४।

अरगाउत्तासिया-आरकोत्तासिता, अरकैरायुक्ता-अभिविधिनाऽन्विता अरकायुक्ता, 'सिय'त्ति स्यात्-भवेत्, अथवाऽऽरकावत्तासिता-आस्फालिता यस्यां सा। भग० १५४।

अरघट्टघटीनिवहादिः। उत्त० ५९९।

अरजा-अरजाः। जं० प्र० ३५७।

अरणी-काष्ठविशेषः। प्रज्ञा० २९।

अरण्णं-अरण्यम्, काननम्। दश० १४७।

अरण्णवडिंसगं-विमानविशेष.। सम० ३९।

अरण्णाणी-अरण्यम्। उत्त० ३८१।

अरति - अरतिः, मोहनीयोदयजचित्तविकार उद्वेगलक्षणः। ठाणा० २६।

अरते - अरजा, ब्रह्मलोके विमानप्रथमप्रस्तटनाम। ठाणा० ३६७।

अरय-अरजांसि स्वाभाविकरजोरहितत्वात्। सम० १४०।

अरयं-अरत, रतस्याभावरूपः, अरओ-संयमोऽभावरूपः। अरमं-शृङ्गारादिरसाभावम्। उत्त० ४४८।

अरविंद-अरविन्द, [illegible]विशेष.। प्रज्ञा० ३०। [illegible]विशेषः। प्रज्ञा० ३३।

अरसं-अरसम्, हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृतम्, प्रश्न० १५६। प्रश्न० ६३। अविद्यमानाहार्यरसम्। हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृतमिति। प्रश्न० १६३। अरसाहारम्। दशा० चू० ८३। अरसं रसवर्जम्, हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृतम्। दश० १८०।

अरसजीवी - [illegible]। ठाणा० २९६।

अरसहिं-अरसैः, असंस्कृतैः। भग० ३०६।

अरसाहारे - अरसाहारः, अरसं-हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृतमाहारयतीति, अरसो वाऽऽहारो यस्यासावरसाहारः। ठाणा० २९८।

अरसाहिं-प्रहरणविशेषैः। उत्त० ४६०।

अरसिया-अर्शांसि। उत्त० १२१।

अरसेहिं-अविद्यमानरसैः। भग० ४८४।

अरसो-अरसः, हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृतः। औप० ४०।

अरहंत-अर्हन्तः, अशोकाद्यष्टमहाप्रातिहार्यादिरूपां पूजामर्हन्तीति। दश० ९२।

अरहंतघरं-अर्हद्गृहम्। आव० २९५।

अरहंता -अर्हन्, अमरवरविनिर्मिताशोकादिमहाप्रातिहार्यरूपां पूजामर्हन्तीति। भग० ३। अरहोऽन्तः-अविद्यमानं रहः-एकान्तदेशोऽन्तो-मध्यं गिरिगुहादीनां सर्ववेदितया येषां ते। भग० ३। अरथान्तः-अविद्यमानो रथः-स्यन्दनः सकलपरिग्रहोपलक्षणभूतः अन्तः-विनाशो जराद्युपलक्षणभूतो येषां ते। भग० ३। अरहन्तः-क्वचिदप्यासक्तिमगच्छन्तः। भग० ३। अरहयन्-प्रकृष्टरागादिहेतुभूतमनोज्ञेतरविषयसम्पर्केऽपि वीतरागत्वादिकं स्वं स्वभावमत्यजन्। भग० ३। अर्हाः-अर्हन्तः। आव० ४०६। प्रज्ञा० ५५। अशोकाद्यष्टमहाप्रातिहार्यादिपूजामर्हन्तीति तीर्थंकराः। आव० ४८। अर्हन्ता। ठाणा० ३३०।

अरहंतुवएसो-अर्हदुपदेश., आगम.। आव० ४५९।

अरह-अर्हन्, अष्टविधमहाप्रातिहार्यरूपपूजायोग्य। ठाणा० ४६५। अर्ह.-पूजार्हः। भग० ६०।

अरहई-अरघट्ट। (आउ०)।

अरहट्टो-अरघट्ट। औप० १०८।

अरहण्णय-मुनिविशेष। (मर०)।

अरहण्णओ-अर्हन्नक., [illegible]। आव० ६३६।

अरहण्णगा - [illegible]। (मर०)। अर्हन्नक, [illegible]। दश० चू० ३५६ अ।

अरहदत्ता - अर्हद्दत्ता, [illegible]। विपा० ९५।

अरहधम्मो-अर्हद्धर्मः। आव० ३८८। उत्त० [illegible]।

अरहन्नग-अर्हन्नक, मुनिविशेष। बृ० द्वि० ८९ अ।

अरहमित्तो-अर्हन्मित्र., [illegible]। आव० ४३४। अर्हन्मित्र। आव० ३८८।

अरहया-अर्हत्ता, तीर्थंकरता। आव० २३०।

अरहस्सं - अमीरहस्यभूतं छन्नाभार्यनरकम्। बृ० तृ० २६१ आ।

अरहसिज्जा-अरहच्छाया, अर्हद्वचनम्। व्य० प्र० ३० आ।

अरहा-देवादिकृतां पूजामर्हन्तीति अर्हन्त, अरहस अथवा नास्ति रह-प्रच्छन्नं किञ्चिदपि येषां प्रत्यक्षज्ञानित्वात्। ठाणा० १७४। जिन। सम० १०२। अर्हन-पूजा महंतीति। अरहा, नास्य रहस्य किञ्चित् इति वा। उत्त० २०७।

अरहितं-समपादेनैवाग्रेषुकाग्रेण वा साधुनाभ्यां परस्परं स्थितयो वा। बृ० द्वि० १८ अ।

अराति:-व्याधि। विशे० ७३०।

अरायाणि-अराजानि, यत्र राजा मृत। आचा० ३७८।

अरि-अरि, सामान्यत शत्रु। स० प्र० १२०।

अरिक्को-अरिक्त। ओघ० १९९।

अरिट्ठ-अरिष्ट, पिचुमन्द वृक्षविशेष। प्रज्ञा० ३१।

अरिट्ठनेमि-अरिष्टनेमि। आव० २७३, ५१७। दश० ३६, ९६। तीर्थंकरविशेष। बृ० प्र० ३० आ। अन्त० २ ५। समुद्रविजयतनय। उत्त० ४८९। समुद्रविजयस्य प्रथम पुत्र। उत्त० ४९६।

अरिट्ठयं-अरिष्टकं, रत्नविशेष। प्रज्ञा० ३६०।

अरिट्ठा-मेडवगोत्रस्य नामविशेष। ठाणा० ३९०।

अरिट्ठ-धर्मजिनप्रथमशिष्य। सम० १०२।

अरिणो-अरय, इन्द्रियविषयकषायपरीषहवेदनोपसर्गरूपा। आव० ४०६।

अरिदमन-अरिदमनो अभयसेनस्यान्वये वसन्तपुरे राजा। सम० १००।

अरिमर्दन-संवाससन्ताने वसन्तपुरे राजा। पिंड० ४८।

अरिष्टनगरम्-रामसानुल्हिरण्यनाभराजधानी। प्रश्न० ८८।

अरिष्टपुरम्-रुधिरराजधानी। प्रश्न० ९०।

अरिस-अर्शासि रोगविशेष। विपा० ४०। नि० चू० प्र० १८९ अ। नि० चू० द्वि० ६२ आ। अर्श गुदाङ्कुर। ज० प्र० १३०।

अरिहंत अर्हन्त, अरहन्त-न रहन्तीन। ज्ञा० ७९। अशोकाद्यष्टमहाप्रातिहार्यादिरूपां पूजामर्हन्तीति अर्हन्त -। सामान्य। आव० ११९।

अरिहंतचेइयं-अर्हच्चैत्यम्, तीर्थंकरप्रतिमा। भग० ४८६।

अरिहंता-अरिहन्ता, कर्मारिविनाशक। भग० १। कर्मारिहन्ता। भग० ३। अरिहन्तार, इन्द्रियविषयकषायपरी-षहवेदनोपसर्गनाम(नाश)का। आव० ४०६। अरिह-न्तार, रजोहन्तार। आव० ४०६।

अरिहमित्तो-अर्हन्मित्र। उत्त० ९०।

अरिहा-अर्हा। आव० ३८०।

अरिहो-अर्ह, अर्घ। प्रश्न० ७६।

अरी-अरि, शत्रु। जीवा० २८०।

अरुम-अर, मर्म। बृ० द्वि० ११ आ। अर-मर्म। बृ० तृ० २०८ आ।

अरुगं-अर्क, व्रण। बृ० द्वि० २५८ अ।

अरुज्झंते-अरुध्यमाने-तस्मिन् पात्रके। ओघ० १४९।

अरुण-अरुण, नन्दीश्वरसमुद्रानन्तरं द्वीप, तदनन्तरं समुद्रोऽपि। प्रज्ञा० ३०७। सप्तमहाग्रहेषु प्रथमभेद। आचा० २३०।

अरुणुत्तरवडिंसगं-ब्रह्मलोककल्पे विमानविशेष। सम० १८।

अरुणप्पभ-शीतलनाथदीक्षाशिबिका। सम० १०१।

अरुणप्पभो-अरुणप्रभ, चतुर्थोऽनुवेलन्धरनागराज सर्व-वाचानपर्वतश्च। जीवा० ३११। ठाणा० २२६।

अरुणमहावरो-अरुणमहावर, अरुणवरोदसमुद्रेऽपरार्धा-धिपतिर्देव। जीवा० ३६७।

अरुणवर-अरुणवर अरुणसमुद्रानन्तरं द्वीप, तदनन्तरं समुद्रोऽपि। प्रज्ञा० ३०७। द्वीपविशेष। ठाणा० २१७।

अरुणवरभद्दो-अरुणवरभद्र अरुणवरद्वीपे पूर्वार्धाधिप-तिर्देव। जीवा० ३६७।

अरुणवरमहाभद्दो-अरुणवरमहाभद्र, अरुणवरद्वीपेऽप-रार्धाधिपतिर्देव। जीवा० ३६७।

अरुणवरावभास-अरुणवरसमुद्रानन्तरं द्वीप तदनन्तरं समुद्रोऽपि। प्रज्ञा० ३०७।

अरुणवरावभासभद्दो-अरुणवरावभासभद्र, अरुणवरा-वभासद्वीपे पूर्वार्धाधिपतिर्देव। जीवा० ३६७।

अरुणवरावभासमहाभद्दो - अरुणवरावभासमहाभद्र, अरुणवरावभासद्वीपेऽपरार्धाधिपतिर्देव। जीवा० ३६७।

अरुणवरावभासवरो - अरुणवरावभासवर, अरुणवरा-वभाससमुद्रे पूर्वार्धाधिपतिर्देव। जीवा० ३६७।

अरुणवरावभासो – अरुणवरावभास, अरुणवरोदसमुद्रसत्को द्वीपः । जीवा० ३६७।

अरुणवरो–अरुणवर, अरुणोदसमुद्रसत्को द्वीपः । जीवा० ३६७। अरुणवरोदे समुद्रे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः । जीवा० ३६७।

अरुणवरोए – अरुणवरोद, अरुणवरद्वीपसत्कः समुद्रः । जीवा० ३६७।

अरुणा–शिखरिपर्वतवासिदेवनाम। ठाणा० ८०।

अरुणाभे–ब्रह्मलोककल्पे विमानविशेषः । सम० १४।

अरुणाभे–अरुणाभ, राहुपलापीसत्के कृष्णपुद्गलविशेषः । सूर्य० २८७। सौधर्मकल्पे विमानः । भग० ५५१।

अरुणावभासो – अरुणावभास, अरुणावभासद्वीपसत्कः समुद्रः । जीवा० ३६७।

अरुणे–ग्रहविशेषः । ठाणा० ७९।

अरुणो–अरुण – लोकान्तिकदेवविशेषः । आव० १३५। महाशुक्रस्य प्रथमो भेदः । प्रश्न० १६१। ग्रहविशेषः । जं० प्र० ५३०। द्वीपविशेषः, यो देवप्रभया परिनादिगमन प्रत्ययप्रभया चारण इति। जीवा० ३६७। देवः । जं० प्र० ४००।

अरुणोए–अरुणोद, अरुणद्वीपसत्कः समुद्रः, सभद्रसुमनोभद्रदेवाभरणद्युत्याऽरुणम्-आरक्तमुदकं यस्यासौ। जीवा० ३६७।

अरुणोदग–अरुणोदक, अन्धकार, तमस्कायस्य नाम। भग० २७०।

अरुणोद–समुद्रविशेषः । ठाणा० ४१७।

अरुणोपपात–ग्रन्थविशेषः । वृ० प्र० ६० आ।

अरुणोववाते–अरुणोपपात, इहारुणो नामदेवस्तत्समयनिबद्धो ग्रन्थस्तदुपपातहेतु, अध्ययननाम । ठाणा० ५१३।

अरुय – अरुज्, अविद्यमानरोगः । भग० ९। अरुजः । सूत्र० ९२। अरुज, शरीरमनसोरभावेनाधिव्याधिरहितम्। जीवा० २५२। अरुजम्-अविद्यमानरोगं शरीरमनसोरभावात। सम० ५।

अरुयं–अरु । आव० ८२०।

अरुह–न रुहोऽरुह अपुनर्भवी। आचा० २३१।

अरुहंत–अरोहत्,क्षीणकर्मबीजत्वादनुत्पद्यमान । भग०३। अरोहत, अनुत्पद्यमान क्षीणकर्मबीजत्वात्। भग० ३।

अरुहय–अर्हता। विशे० ८६१।

अरूविणः–अमूर्ता । ठाणा० १९०।

अरूवी–अरूपि, अमूर्तम् । भग० १५०।

अरेण–आरत । आव० ३८५।

अरो–अर, तीर्थकृच्चक्रवर्तिविशेषः । उत्त० ४४८। सप्तमचक्रवर्ती। आव० १५९। सम० १५२। सर्वोत्तमे कुले वृद्धिकरो जायतेऽत, अरादशो जिन, यस्मिन् गर्भगते माता स्वप्ने सर्वरत्नमयोऽतिमहारोऽतिप्रमाणश्चारको दृष्टोऽत । आव० ५०५।

अरोगी–अरोगी–रोगविप्रमुक्तः । दश० २०५।

अरोस–अरोष, विरुद्धदेशनिवासी म्लेच्छविशेषः । प्रश्न० १४।

अर्कतूलम्–उत्त० ६७७। प्रज्ञा० १०।

अर्गलम्–अधिकम्। उत्त० ६६०।

अर्गलपाशका–अर्गलपाशकानि, यत्रार्गलाऽऽणि निक्षिप्यन्ते। आचा० ३२७।

अर्गला–(अग्गल), चक्ररत्नभेदः । आचा० ६०। परिघ। उत्त० ३११।

अर्घति–(अग्घइ), अर्हति। उत्त० ३१६।

अर्चा – (अच्चे) लेश्या, शरीर, क्रोधाद्यध्यवसायाभिका ज्वाला। आचा० २८४।

अर्चि–(अच्ची), अच्छिन्नमूल । ठाणा० ३३६। अर्चि – मूलप्रतिबद्धा ज्वलनाग्रजा । उत्त० ६९४।

अर्चिषा–(अच्चीए) शरीरनिर्गततेजोज्वाला। ठाणा० ४२१।

अर्जितद्रव्या–अर्जित उपार्जित द्रव्यं यैस्ते। दश० २६३।

अर्जुन–तृणविशेषः । प्रज्ञा० ३०। उत्त० ६९० । जीवा० २१। जं० प्र० १३।

अर्जुनसुवर्णकम्–(अज्जुणसुवण्ण) अर्जुन शुक्लं तच्च तत्सुवर्णकम् । उत्त० ८८०।

अर्जुनसुवर्णमयी–सर्वा यस्ता कलकमयी। जं० प्र० ३३३।

अर्ति –(अट्ट) शारीरमानसी पीडा तत्र भवा। आचा० १३६।

अर्थ–अर्यते गम्यते, परिच्छिद्यत इति । आव० १० आचा० आव० ६०४। मिद्धान्तपर्याय । ठाणा० ०० ।

अर्थम्–निमित्तम्। उत्त० ७०३।

अर्थकर–(अट्ठकर) मन्त्री नैमित्तिक । ठाणा० २४१।

अर्थजाता–(अट्ठजाय) अर्थ –कार्यमुत्पन्नमस्य सर्वीय परिणमादेवात यया सा पतिचौरादिना सयमात्प्रायमत स्पर्शता सा। ठाणा० २००।

अर्धदण्ड –(अद्वादडे), दण्डयतेऽऽत्माऽन्यो वा प्राणी येन स दण्ड । ठाणा० ३१६ ।
अर्थधर्माभ्यासानपेतम्–वाण्यतिशयविशेष । सम० ६३ ।
अर्थनिर्यापणा – अर्थस्य पूर्वापरसाङ्गत्येन गमनिकेत्यर्थ । ठाणा० ४२३ । अर्थ –सूत्राभिधेय वस्तु तस्य निरिति-भृशं यापना-निर्वाहणा पूर्वापरसाङ्गत्येन स्वयं ज्ञानतोऽन्येषा च कथनतो निर्गमना । उत्त० ३९ ।
अर्थपदम् । भग० २०२ ।
अर्थपदानि–(अट्ठपदा) अर्थप्रधानानि पदानि । उत्त० ३४१ ।
अर्थशास्त्र–धनुर्वेदादि । बृ० प्र० १३० आ ।
अर्थाशया – पुनरभिनिवेशतोऽन्यथा प्ररूपणादिलक्षणया । सम० १३२ ।
अर्थात्–(अट्ठ), निमित्तात् । उत्त० ४९१ ।
अर्थाधिकारः–(अत्थाहिगारो), शास्त्रीयोपक्रमस्य पञ्चमभेद । आचा० ३ । ठाणा० ४ । वक्तव्यताविशेष एव, न चैक-त्वविशिष्टारमादिपदार्थप्ररूपणलक्षण इति । ठाणा० ५ । आव० ५६ । अध्ययनसमुदायार्थ । आव० ५८ ।
अर्थान्तराभिधानम् – गामश्वमित्याद्यन्यार्थप्रतिपादनम् । आव० ५८८ ।
अर्थान्तरोक्ति–मृषावादविशेष । ठाणा० २९० ।
अर्द्धवितर्दी–विकृता । जं० प्र० १०० ।
अर्द्धचन्द्र–अद्धचद । सम० ३०, १३९ ।
अर्द्धतृतीया–अर्द्ध तृतीय येषा ते । प्रज्ञा० ४७ ।
अर्द्धपेटा–यस्यां तु साधु क्षेत्रं पेटावच्चतुरस्रं विभज्य मध्य वर्त्तीनि गृहाणि मुक्त्वा चतसृष्वपि दिक्षु समश्रेण्या भिक्षा मटति सा पेटा एवमेव नवरमर्द्धपेटासदृशसस्थानयोर्दिग द्वयसम्बद्धयोर्गृहश्रेण्योरटन यत्रगति । बृ० प्र० २५७ अ ।
अर्द्धभारम्–पञ्चसहस्रात्मकम् । जं० प्र० ९५३ ।
अर्द्धमागधभाषा–भाषाविशेष । जं० प्र० १४ ।
अर्द्धासन्यासम्–उत्तरासगरूपम् । बृ० प्र० १-५ अ ।
अर्धापक्रान्ति – (अड्ढापक्कंतीए), यत्रदेवार्धापक्रान्त्या गिरिरे कुर्वन्ति तत्रार्धस्यासमप्रतिभागरूपस्यैकदेशस्य वैका दिपदात्मकस्यापक्रमणमवस्थानम्, शेषस्य तु द्वयगत्रिप्रम द्वातरूपस्यैकदेशयोर्गमन यस्या रचनायां सा समय परिभाषया अर्धापक्रान्तिरुच्यते । विशे० ५०८ ।
अर्थाक–अघ । आव० ८२७ ।
अर्हन्–मातिशयरूपसम्पत्समन्वित । आचा० ४१२ ।
अलं–अलम्, अत्यर्थम् । दश० २३८ ।
अलकार–अलङ्कार । नि० चू० प्र० २०६ आ । अलङ्का-रान्, वस्त्रादीन् । जं० प्र० १४५ । आव० १८२ ।
अलकारियसभा–अलङ्कारसभा । जीवा० २३६ । अल-ङ्कारभवनविमानभाविनी सभा । प्रश्न० १३५ ।
अलंकारिता–अलङ्कारिका, यस्यामलङ्क्रियते । ठाणा० २५३ ।
अलकियं–अलङ्कृतम्, उपमादिभिरुपेतम् । सूत्रगुणविशेष । आव० ३७६ । अन्योऽन्यस्फुरच्छुभस्वरविशेषाणां करणात् । जं० प्र० ४० । मुकुटादिभिर्विभूषितम् । भग० ११९ । काव्यालङ्कारयुक्तम् । ठाणा० ३९७ । अन्यान्यस्वरविशे-षाणां स्फुरच्छुभानां करणात् । ठाणा० ३९६ । अलङ्कृतं । जं० प्र० ४२० ।
अलगारो–अलङ्कार, आभरणम् । जीवा० २४९ ।
अलन्द । नि० चू० द्वि० ९१ आ ।
अलंदक–वलीमूलम् । बृ० द्वि० १०९ अ ।
अलबुसा–अलम्बुषा, उत्तररुचकवास्तव्या दिक्कुमारी । आव० १२२ । उत्तररुचकवास्तव्या प्रथमा दिक्कुमारी महत्तरिका । जं० प्र० ३९१ ।
अलकम्–ललाटम् । जीवा० २७३ ।
अलकापुरी अलकापुरी, लौकिकशास्त्रे धनदपुरी । जं० प्र० १८९ । वैश्रमणयक्षपुरी । अन्त० १ ।
अलक्का–मविषश्वा । (भग०) ।
अलक्खण–अलक्षणं शुभम् । आव० ४२१ ।
अलक्खणया – अलभणता-असमञ्जसा, अभिधायिता । विशे० २०५ ।
अलक्खे–अलक्ष्य, वाणारस्या राजा । अन्त० २५ । अन्तकृद्दशानां षष्ठमवर्गस्य षोडशाध्ययनम् । अन्त० १८ ।
अलत्त–अलक्तक । उत्त० ६५३ ।
अलत्तगपहो – जमेत्त अलत्तगेण पादो रजति तमेत्तो कद्दमो जमि पहे सो अलत्तगपहो । नि० चू० ७९आ ।
अलत्तगा–रंगविशेष । नि० चू० प्र० १८८ अ ।
अलब्धमध्यम –गम्भीर । उत्त० ५५४ ।
अलमथु–समयभाषया समर्थोऽभिधीयते । ठाणा० २१६ ।
अलमत्थु–अलमस्तु, पर्याप्तं भवतु । भग० ६७ । निषेधो भवतु निषेधक । ठाणा० २१६ ।

अलल्ल-अलाक्षं, व्यक्ता भाषा। दश० २३५।
अलवो-अलपः, मौनव्रतिको निष्ठितयोगः, मुद्रिकादियुक्तो वा। सूत्र० ३९३।
अलसंडविसयवासी-अलसण्डविषयवासिनः, म्लेच्छविशेषाः। जं० प्र० २२०।
अलस-अलसः, अन्येन सह प्रभूतं पर्यटितुमसमर्थः। ओघ० १५०। गण्डूलकः। प्रश्न० २४।
अलसगे-हस्तपादादिस्तम्भः श्वयथुर्वा। आचा० ३६२।
अलसा-अलसाः, प्रयत्नरहिताः। ओघ० २२२। द्वीन्द्रियजीवभेदः। उत्त० ६९५।
अलाउ-अलाबु, अलाबुतुम्बयोर्लम्बवृत्तवृत्तभेदः। जं० प्र० २४४। अलातं-उल्मुकम्। ओघ० १७।
अलाउय-अलाबुके। आचा० ४००।
अलातं-अलातम्, उल्मुकम्। जीवा० २९, १०७। प्रश्न० २५। ओघ० १७। ठाणा० ३३६। दश० १६९।
अलातद्रव्यम् - वक्तव्याऽवभासमानमेकान्तवादाभ्युपगतं वा वस्तु। ठाणा० ४८१।
अलाबुकं। ओघ० १४५।
अलाभ-अलाभः, याचितभिक्षाद्यलाभः, पञ्चदशः परीषहः। आव० ६५७। अभिलषितविषयाप्राप्तिः। उत्त० ८३।
अलायं-अलातम्, उल्मुकम्। उत्त० ८३। दश० ३२८, १५४।
अलायचक्कं-अलातचक्रं, कालभेदेन दिक्षु भ्रमत्। विशे० ९७५।
अलाहि-अलम्। आव० ११६, ७०२। भग० ४७०। ओघ० ३५१।
अलिंजरम्-कुम्भम्। दश० २६०।
अलिंद-कुण्डकम्। ओघ० १६६।
अलिंदट्ठिओ-अलिन्दकस्थितः। उत्त० ३५५।
अलिंदाति। नि० चू० प्र० १६२ अ।
अलिंदेण-अलिन्देन-कुण्डकेन। ओघ० १६७।
अलिंदो-दोषविशेषः। बृ० द्वि० ६२ अ। नट इव। व्य० प्र० १६४ अ।
अलिए-अलीकम्, भूतनिह्नवरूपं, असत्यं वा। भग० ३३२।
अलिसय-अलिशम्। आचा० ३३।
अलिय-अलीकं, मृषावादः। प्रश्न० ९५। मिथ्या, अधर्मद्वारस्य प्रथमं नाम। प्रश्न० २६। सद्भूतार्थनिह्नवरूपम्। प्रश्न० १२१। अभूतं-अभूतोद्भावनं भूतनिह्नवश्च, मृषादोषविशेषः। आव० ३७४। विशे० ४६४। शुभफलापेक्षया निष्फलः। प्रश्न० २७।
अलियवयणे-अलीकवचनम्। ठाणा० ३७०।
अलिया-अलिका, पक्षिविशेषः। अनुत्त० ४।
अलियाण-अलीकाज्ञः, अलीका आज्ञा-आगमो यस्य सः। प्रश्न० ४०।
अलिसिंदा-चवलगारा। नि० चू० प्र० १४४ आ।
अलुद्धो-अलुब्धः। आव० ८५९।
अलेप-म्रक्षणेन सर्पिषा-घृतेन वसया च निर्वृत्तो लेपोऽलेपो ज्ञातव्यः। बृ० प्र० ८२ आ।
अलेभड्डो-अस्थिरः, अनाहारः। आव० २१२।
अलोए-अलोकः-केवलाकाशरूपः। औप० ७१।
अलोला-इंद्रियविषयणिग्गहकारी, एमणं ण पेल्लेति। नि० चू० प्र० ३३२ आ।
अलोलुओ-अप्पडिबद्धो। दश० चू० १४०।
अलोहे-अलोभः, योगसङ्ग्रहेऽष्टमो योगः। आव० ६६४। अल्पलोभः। जं० प्र० १४८।
अलौकिकत्वम्-असाधारणम्। दश० १६७।
अल्पगृहभिक्षादः। आचा० ३३६।
अल्पझञ्झ-अविद्यमानवाक्कलहः। उत्त० ५८९।
अल्पपरिकर्माणि-यानि कचिन्मनाक् तर्दितानि। ओघ० १३२।
अल्पलेपा-चतुर्थी पिण्डैषणा। आचा० ३५७।
अल्पार्थके- ठाणा० ३३०।
अल्लइ-वृक्षविशेषः। भग० ८०३।
अल्लइकुसुमं-अल्लकीकुसुमम्, लोके प्रतीतम्। प्रज्ञा० ३६१। जं० प्र० ३८।
अल्लगं-आर्द्रकम्, कन्दविशेष। आव० ८२८। भाई आर्द्रं च। आव० ८२८।
अल्लचम्मे। नि० चू० प्र० १९० अ।
अल्लपल्लो-अल्ली, ग्रंथिकपुष्पाकृतिः। विपा० ७१।
अल्लय-आर्द्र (सं०)
अल्लिउं-अभिद्रोतुम्, आश्रयितुं वा। आव० ४३०।

अल्लिए–आश्रयेत्। (गणि०)
अल्लितो–अर्पित । आव० ४३४।
अल्लियंतुं–उपसर्प्तुम्। आव० ६५।
अल्लियतो–आश्रयन्। आव० ४००।
अल्लियइ–आश्रयति। आव० ६६५।
अल्लियउ–अलगीन्। आव० १११।
अल्लियस्सइ–आश्रयत। उत्त० ३६६।
अल्लियह – आलीयेताम्– आश्रयताम्। उत्त० ३६४। औप० १५६।
अल्लियावं–प्रवेशम्। आव० ३४१।
अल्लियावणबंधे–अल्लियावण द्रव्यस्य द्रव्यान्तरेण श्लेषादिना ऽऽलीनस्य करणं तद्रूपो यो बन्ध स। भग० ३९०।
अल्लियावो–प्रवेश, आश्रयणम्। उत्त० १४५।
अल्लिविओ–अर्पित । आव० ४२१।
अल्लिवेई–अर्पयति, ददाति। आव० ५६०।
अल्लीण–आलीनम्, सुश्लिष्टम्। जं० प्र० २२९। आलीन – मस्तकभित्तौ लग्निकौ न तु टप्परौ। जं० प्र० ११३। मनोवाक्कायगुप्ताश्रितौ वा, यद्वा अलीनौ–पृथगवस्थानम् परस्परमश्लिष्टौ। उत्त० ४९९। गुरुजनमाश्रित । अनु शासनेऽपि न गुरुषु द्वेषमापद्यन्ते, अथवा आ–समन्तात् सर्वासु क्रियासु लीना–गुप्ता नोल्वणचेष्टाकारिण। जं० प्र० ११०। जीवा० २७८। गुरुमाश्रित । औप० ८८। उप गत । आव० ११०। आलीन । आव० ६३। आश्रित (आउ०)। आ–समन्तात् लीना आलीना। व्य० द्वि० ४४० आ।
अल्लेसेहिं अल्पै । आव० ६३।
अवं-(अवाङ्) अधस्तात्। आचा० ६३।
अवंगाओ–अपाङ्गा, नयनप्रान्तम्। जं० प्र० ९२।
अवंगुअ–अप्रावृतम्। नि० चू० प्र० २०४ अ।
अवंगुदुवारे – अप्रावृतद्वार कपाटादिभिरस्थगितगृहद्वार। औप० १००।
अवंगुय–अप्रावृतम् न स्थगयति। बृ० द्वि० २५ आ, १६४ अ।
अवंगुतंमि–उद्घाटिते। बृ० द्वि० ५१० आ।
अवंगुयदुवारो–अप्रावृतद्वार, अप्रावृतं द्वारं येन स, उद् घाटितद्वार। सूत्र० ३३१।
अवंगो–अपाङ्ग, नयनोपान्तम्। जीवा० २०६।
अवंझ–अवन्ध्य, एकादशपूर्वनाम। ठाणा० १९९।
अवंझपुव्वं–अवन्ध्यपूर्वं–यत्र सम्यग्ज्ञानादयोऽवन्ध्या –सफला वर्ण्यन्ते तत्, एकादशपूर्वनाम। सम० २६।
अवंतिवद्धण–अवन्तीवर्धन, अज्ञातोदाहरणे प्रद्योतात्मज-पालकसुत। आव० ६९९।
अवंतिसुकुमार–प्राणिन आहारविमोचने दृष्टांत। आचा० २६१।
अवंतिसुकुमालो–अवन्तिसुकुमार, योगसङ्ग्रहेऽनिश्रितो-पधानदृष्टान्ते उज्जयिन्या भद्रापुत्र। आव० ६७०। वंश-कुडंगेऽनशनी (मर०)। शृगालीभक्षित (भक्त०)।
अवंतिसेण – अवन्तीषेण, अज्ञानोदाहरणे धारिणीपुत्र। आव० ६९९।
अवंती – देशविशेष। बृ० तृ० २१८ अ। उत्त० ४९।
अवंतीजणवय – अवन्तीजनपद, देशविशेष। आव० २८९। उत्त० ४९। नि० चू० प्र० ६४ आ।
अवंतीजणवय–देशविशेष। व्य० प्र० १४९ आ।
अवंतीसुकुमार–नामविशेष, उदाहरणविशेष। बृ० द्वि० २२४ अ।
अवंतीसुकुमालो–वंशकुडंगेऽनशनी (मर०)। शृगालीभ-क्षित (भक्त०)
अवंतीसुत–शृगालीभक्षितो मुनि। (सं०)
अवंतीसोमालो। नि० चू० प्र० ११७ आ।
अव–अपृथक्त्वम्। आव० २७८। अध। प्रज्ञा० ५२६। उत्त० ५०७। मर्यादया एतावत्क्षेत्र पश्यन। विशे० ५४।
अवइद्धो – अपविद्ध, तोमराग्निना सम्यग्विद्ध। प्रश्न० ४९।
अवइक्कमो–अवक्रीणक। आव० ७१८।
अवउज्झिअ–अधोऽवनम्य। आचा० ३४४।
अवउज्झत्ति–परित्यज्यते। आव० ७६५।
अवउज्झियथोयमाहारो – उज्झितस्तोकाहार, उज्झित-धर्मा स्तोक–स्वल्प आहारो यस्य स। आव० ५६८।
अवउडग – अवकोटनम्, ग्रीवाया पश्चाद्भागनयनम्। विपा० ५३। अवकोटक, कृकाटिकाया अधोनयनम्। विपा० ४७।

अवप-अवकम्, अनन्तजीववनस्पतिभेदः। आचा० ५९। जलरुहविशेषः। प्रज्ञा० ३१, ३३। साधारणबादरवनस्पतिकायविशेषः। जीवा० २६। प्रज्ञा० ३४। साधारणवनस्पतिविशेषः। प्रज्ञा० ४०।

अवपडए-तापिकाहस्तकात्। भग० ५४८।

अवओडयबंधणयं - अवमोटनतोऽवकोटनतो वा पृष्ठदेशे बाहुशिरसा संयमनेन बन्धनं यस्य सः। अन्त० १९।

अवकंखइ - अवकाङ्क्षति, अपेक्षते, अनुकम्पते। भग० १०२।

अवकरिसो-अपकर्षः-अभावः। प्रश्न० ६२।

अवकारं-अपकरणम्, अङ्गारोपरिक्षेपः। प्रश्न० ४०।

अवकिन्नतो-अवकीर्णकः, करकण्डोः प्रथमं नाम। उत्त० ३०१।

अवकिरति-उत्सृजति। आव० ७७१।

अवकिरियव्वं-अवकरणीयम्, विक्षेपणीयम्, त्याज्यम्। प्रश्न० ९६।

अवकुंडिय-अवगाढ-व्याप्त। (मर०)

अवकुज्जियं-उद्दाए सिरियहुत्तकरणं। नि० चू० तृ० ५९ अ।

अवकोडकबंधणं-अवकोटकबन्धनम्, बाहुशिरसां पृष्ठदेशबन्धनम्। प्रश्न० १४।

अवकोडयं-अवकोटकम्, कोटायाः-ग्रीवाया अधोनयनम्। प्रश्न० ५६।

अवक्कंत-अपक्रान्तः, सर्वशुभभावेभ्योऽपगतः-भ्रष्टः, अपक्रान्तः-अकमनीयः। ठाणा० ३६६। आव० ५०४। अवक्रान्तः-अवस्थितः। उत्त० १५६।

अवक्कमइ-अपक्रामति, च्यवते। जीवा० ११०। गच्छति। जीवा० २४३, ३०६, ३२२, ४००। अपक्रामति। आव० १९६। अपक्राम्यति। उत्त० १५७।

अवक्कमिज्जा-अपक्रामेद्-गच्छेत। आचा० ३८५।

अवक्कमित्ता-अपक्रम्य, गत्वा। दश० १७८।

अवक्कमेज्ज - अपक्रामेत्, अपगच्छेत्, उत्तमगुणस्थानकाद् हीनतरं गच्छेदित्यर्थः। भग० ६४।

अवक्कासे-अपकर्षणं, अपकर्षणं, अवकाशो वा। भग० ५७२। अपकर्षः। सम० ७१।

अवक्खित्तं-अपत्र। दश० चू० ११३।

अवक्खत्य-विनिर्गत्य। व्य० प्र० १४६ आ।

अवक्खारणं-अपक्षारणम्, अपशब्दं क्षारायमाणं वचनं, अपक्षकरणम्-सान्निध्याकरणम्। प्रश्न० ४१।

अवक्खित्तो-आक्षिप्तः। उत्त० ११७।

अवगति-बुद्धिः। उत्त० ३९२।

अवगम-संज्ञा। आचा० १२।

अवगाढ-अवस्थिताः। ठाणा० ५१४।

अवगाढगाढ - गाढावगाढम्, अतिगाढम्, प्राकृतत्वादेवं रूपम्। भग० ३७।

अवगाढा-आश्रिताः। ठाणा० ५२७।

अवगाढावगाढं - अवगाढावगाढम्-अत्यन्तव्यापिदर्शनम्। भग० १५३।

अवगायति-परिभवति। आचा० १०६।

अवगासो-अवकाशः, यवस्योत्पत्तिस्थानम्। सूत्र० ३५०। अवस्थानम्। विशे० ५७१। गमनादिचेष्टास्थानम्। आव० ८३५। अवस्थानमवतारो। ठाणा० २३७। बहूनां विवक्षितद्रव्याणामवस्थानयोग्यं क्षेत्रम्। भग० ६०५।

अवगाहणा-आश्रयभावः। भग० ६०९। अवस्थानरूपा। विशे० ८६२।

अवगीत-वाङ्मात्रेणापि केनचिदप्यननुवर्त्यमानः। आचा० १०६।

अवगीतम्-निन्दितम्। भग० ११।

अवगुणेति-अपावृण्वन्ति। भग० ६८३।

अवगूहितो-अवगूहितः। आव० ३४४।

अवगुप्यते-लिप्यते। आचा० १४७।

अवग्गहो-अवग्रहः, अव इति-प्रथमतो, ग्रहणं-परिच्छेदनम्। ठाणा० २८३। अवग्रहः। ओघ० २११। सामान्यार्थस्याशेषविशेषनिरपेक्षानिर्देश्यस्य रूपादेरवग्रहणम्। आव० ९।

अवग्रह-ओग्गह, अव्यक्तं यथास्वमिन्द्रियैर्विषयाणामालोचनावधारणं। तत्त्वा० १-१५।

अवग्रहावधि-कारणे आपन्ने संयमार्थं यो गृह्यते। ओघ० २०८।

अवघाटनप्रायश्चित्तं दोषप्रायश्चित्तानि दोषयति। व्य० प्र० ९३ आ।

अवघाडो। नि० चू० प्र० १२६ अ।

अवच-जघन्यः। सूत्र० १९२।

अवचए-अपचय, ह्रास, शरीरेभ्य पुद्गलानां विघटनम्। प्रज्ञा० ४३०। देहातोऽपगम। भग० ५४०।
अवचयो-अपचय-हीनत्वम्। सूर्य० १६।
अवचनम्-त्रिविधवचनप्रतिषेध। ठाणा० १४१।
अवचुलकम्। बृ० प्र० २९८ आ।
अवचूल-अवचूलम्। भग० ३१८।
अवच्छलेणसारक्खणा-अपत्यलयनसरक्षणा। आव० ४०५।
अवच्चे-अपत्ये। आव० १९९।
अवच्छेय-अवच्छेद, देश। ठाणा० २०५।
अवजाते-अपजात-अप-हीन, जातोऽपजात, पितु सकाशात्तीयद्धीनगुण। ठाणा० १८४।
अवज्जं-अवद्यम्, पाप। विशे० १११७। आव० ३६४।
अवज्जपडिच्छन्नो-अवद्यप्रतिच्छन्न, पापप्रच्छादित। आव० ५३७।
अवज्जभीरू-अवद्यभीरु, साधु। ओघ० २२४।
अवज्जुत्त-पृथग्भूतम्। आव० ७५८।
अवज्झा-अवध्या, गन्धिलविजयराजधानी। ज० प्र० ३५७।
अवज्झाओ। ठाणा० ८०।
अवज्झाणायरिए-अपध्यानाचरित, अप्रशस्तध्यानाचरित। आव० ८३०।
अवट्ठिए-अवस्थित, नित्य। भग० ७०। एवमुभयरूप नया। ठाणा० ३३३। नित्यत्वात्। ठाणा० ३३३। अवस्थितानि-शाश्वतानि। ठाणा० १४१। अवधे पञ्चमभेद। प्रज्ञा० ५४३। आव० २८।
अवट्ठिय-अवस्थित, स्थितम्। भग० ११९। अवट्ठिया। जीवा० २७२। अवस्थिता-स्वप्रमाणावस्थिता। जीवा० ९९। स्वप्रमाणेऽवस्थिता मानुषोत्तरपर्वताद्बहि समुद्रवत्। ज० प्र० ७७।
अवट्ठिया कप्पा-अवस्थित कल्पा-सामायिकसागुणाम वस्थित विन। ठाणा० ३७४।
अवडिंसगभूय-अवतसकभूतम्, शेखरकल्पम्, प्रधान मित्यर्थ। प्रश्न० १३७।
अवडेसग-अवतसक, शेखरक। भग० ३२२।
अवड्डं-ह्रासितम्। भग० ६७९।

अवड्ढं-अपार्द्धम्, अर्धमात्रम्। सूर्य० ३०, १०४। अर्द्धपुवमात्रम्। ओघ० ८६।
अवड्ढक्खेत्ता-अपार्द्धक्षेत्रम्, अपार्द्ध-समक्षेत्रापेक्षया अर्द्धमेव क्षेत्रम्। ठाणा० ३६७।
अवड्ढखेत्तं-अपार्द्धक्षेत्रम्, अर्धमात्रक्षेत्रम्। सूर्य० १०४। पञ्चदशमुहूर्तभोग्य नक्षत्र अभिचिर्वा, पञ्चदशमुहूर्तभोग्यानि भरणी आर्द्रा अश्लेषा स्वातिर्ज्येष्ठा च। बृ० तृ० १४८ आ।
अवड्ढगोलावलिच्छाया-अपार्द्धगोलावलिच्छाया, गोलानामावलिर्गोलावलिस्तस्या छाया गोलावलि-छाया अपार्द्धाया-अपार्द्धमात्राया गोलावले छाया। सूर्य० ९५।
अवड्ढचंदो-अपार्धचद्र-अर्धचंद्र। बृ० प्र० १०९ अ।
अवड्ढवाविसंठित-अपार्द्धवापीसंस्थित। सूर्य० ११०।
अवड्ढा-अपार्द्धा। ठाणा० १४९।
अवड्ढो-अर्द्ध। नि० चू० प्र० १४२ आ।
अवड्ढोमोयरिया-उपार्द्धावमोदरिका, द्वात्रिंशतोऽर्द्ध षोडश, एव च द्वादशानामर्द्धसमीपवर्तित्वादुपार्द्धावमोदरिका द्वादशभिरिति। औप० ३८। भग० ७९२।
अवणए-अपनय-पूजासत्कारादेरपनयनम्। ठाणा० ४१८।
अवणय-एकान्ते स्थापनम्। बृ० द्वि० २६२ अ।
अवणिज्जतु-अपनीयन्ताम्। आव० ४३६।
अवणितमूलो-अपनीतमूल, अपनीतमूलत्रिभाग, त्रिभागनिर्वर्तितवान्, ऊर्ध्वभागादपि त्रिभागहीन इति। जीवा० ३५५।
अवणीओवणीयवयणं-अपनीतोपनीतवचनम्, यत्रिन्दित्वा प्रशसति। प्रज्ञा० २६७।
अवणीय अपनीतम्, स्थानान्तरस्थापित निराकृतगुण वा। औप० ३९।
अवणीयवयणं-अपनीतवचनम्, निन्दावचनम्। प्रज्ञा० २६७। गुणापनयनरूपम्। प्रश्न० ११८। निंदावचनम्। आचा० ३८७।
अवणीयोवणीयवयणं-अपनीतोपनीतवचनम्, यत्रैक गुणमपनीय गुणान्तरमुपनीयते। प्रश्न० ११८। अरूपवती स्त्री किन्तु सद्वृत्ता। आचा० ३८७।
अवणेति-महामर्गि प्रकाशयति। नि० चू० प्र० ११६ आ।
अवणेज्जा-अपनयेत्, परित्यजेत्। दश० १०६।

अवण्ण-अवर्णः, अवज्ञा वा, अनादरः, वर्णनाया अकरणम्। औप० १०५। अश्लाघात्मकः। उत्त० ५१०। निन्दा। आव० १०३।

अवण्हाणं-अपस्नानम्, तथाविधद्रव्यसंस्कृतजलेन स्नानम्। विपा० ४१।

अवतंसो-पुरुषव्याधिनामको रोगः। बृ० तृ० २४९ अ।

अवतासण-बाहाहिं अवतासिता। नि० चू० प्र० ११३ अ।

अवत्त-अप्राप्तम्-अस्पृष्टम्। भग० १२७। अव्यक्तः, अज्ञानां बर्वाणामभो बालः। ओघ० १६२।

अवत्तदंसणे-अव्यक्तदर्शनः-अव्यक्ते-अस्पष्टे दर्शने-अनुभवः। भग० ७०६।

अवत्तमय-अव्यक्तमताः, संयतासंयतादावगमे संदिग्धबुद्धयः। विशे० ९३३।

अवत्तव्वं-अवक्तव्यम्। प्रज्ञा० २३४। यअरमशब्देनान्तरमशब्देन वा स्वनिमित्तशब्दान्तरतया वक्तुमशक्यं तत्। प्रज्ञा० २३५। अमन्तगुणे। दश० २२१।

अवत्तव्वगसंचिता-अव्यक्तव्यकसंचिता-समये समये एकतयोत्पन्नाः। ठाणा० १०५।

अवत्ता-छगणमट्टियाए पाणिएण य। नि० चू० प्र० २२३ अ।

अवत्तिता-अव्यक्तिकाः, अव्यक्तं-अस्फुटं वस्तु अभ्युपगमतो विद्यते येषां ते। ठाणा० ४१०।

अवत्तो-सोलसवरिसारेण वयसा। नि० चू० प्र० २९० आ।

अवत्थयं-अपार्थकम्, पौर्वापर्यायोगादप्रतिसम्बद्धार्थं, चतुर्थं सूत्रदोषः। आव० ३७४। अमवद्वार्थम्। विशे० ४६८। अनु० २६१।

अवदारं-अपद्वारम्। आव० ३०६।

अवदारियं-अवदारितम्, उद्घाटम्। आव० ६८७।

अवदाल-पादादिन्यासेऽधोगमनम्। भग० ५४०।

अवदालिओ-अवदारितः। आव० १७०।

अवदालियं-अवदालितम्, रविकरैर्विकासितम्। औप० १७। रविकिरणैर्विकासितम्। जीवा० २०३। मशाना-वदलनं-विकसितम्। प्रश्न० ८२।

अवदाली-अवदारयति-दाकर्तुं स्वस्वामिनं विनाशयतीत्येवंशीलः। उत्त० ५४८।

अवदालेइ-अवदारयति, उत्पाटयति। प्रज्ञा० ६००।

अवदू-कृकाटिका। विपा० ७२।

अवद्दहणा-दम्भनम्। विपा० ४१।

अवद्दारं-अपद्वारम्। आव० ३०६।

अवड्ढगाढलगोलछाया-अपार्द्धगाढलगोलच्छाया। सूर्य० ९५।

अवड्ढगोलच्छाया-अपार्द्धगोलच्छाया। सूर्य० ९५।

अवड्ढगोलपुंजछाया-अपार्द्धगोलपुञ्जच्छाया। सूर्य० ९५।

अवड्ढचंद-अपकृष्टमर्द्धं चन्द्रस्यापार्द्धचन्द्रः। ठाणा० ७१।

अवड्ढजवरासिसंठाणसंठिए-अपार्द्धयवराशिसंस्थानसंस्थितः, अपगतमर्द्धं यस्य सः, स चासौ यवश्च राशिश्च अपार्द्धयवराशी तयोरिव यत्संस्थानं यस्य तेन संस्थितः। जीवा० ३४२।

अवड्ढपोरिसी-उपार्द्धपौरुषी, अपगतमर्द्धं यस्याः सा अपार्द्धा सा चासौ पौरुषी। सूर्य० ९५।

अवद्ध-मिथ्यात्वकषायनोकषायलक्षणम्। आव०।

अवद्धाय-मृत्वा। जीवा० २६२।

अवधारियं-तात्पर्यग्रहणतो हृदये विभावितं। व्य० प्र० २५७ अ।

अवधिकेवली-केवलिद्वितीयभेदः। नि० चू० द्वि० १३६ आ।

अवधिजिनः-विशिष्टावधिधरः। आव० ५०१।

अवधिज्ञानम्-ज्ञानस्य तृतीयभेदः। ठाणा० ३३०।

अवधिज्ञानजिनाः-विशुद्धावधिज्ञानाः। व्य० प्र० ८९ अ।

अवधीरयेत्-उपेक्षेत। उत्त० ११०।

अवधीरित-परिभूतः। आचा० १०६।

अवधूतम्-अवज्ञातम्। ओघ० १५।

अवन्नं-अवर्णम्, निन्दा। आव० ६६२। अश्लाघामवज्ञा। ठाणा० ३६०।

अवन्ना-अवज्ञा, परिभवः। ओघ० १८६।

अवपंगुरे-अपावृणुयात्, उद्घाटयेत्। दश० १६७।

अवपात-पर्वतविशेषाः, येषु वैमानिका देवा अवपतन्ति अवपत्य च मनुष्यलोकामागच्छन्ति। प्रश्न० ९६।

अवपीलइ-अवपीडयति, अल्पेन शाययति। जीवा० ३२६।

अवबोह-अवबोधः, मतिः। आचा० १२।

अवभासियं-अवभासितं, दुष्टभाषणं, विरूपं भाषणं। व्य० प्र० २० अ।

अवमंथित-अधोमुखीकृत। बृ० प्र० ८० आ।
अवमः-लघु पर्यायेण। ठाणा० २४२।
अवमण्णइ-अवमन्यते, अवमाऽऽस्त्वा मन्यते। भग० १६६।
अवमण्णह - उचितप्रतिपत्त्यकरणेन। भग० २१९।
अवमद्द-अवमद। जै० प्र० १०१।
अवमद्द-अपमर्दम्, उपमर्दनम्। प्रश्न० ३७।
अवमप्रतिजागरणम्-गुणविशेष। आव० ७२८।
अवमा-हीना। आचा० ३३२।
अवमाणणं-अपमाननम्, विनयभ्रंश। प्रश्न० ९७। अन-भ्युत्थानादिकरणम्। भग० २२७। मानहरणम्। प्रश्न० ४१। अपमानम्, अपूजनम्। औप० ४६।
अवमाणो-अपमान०, दैन्यम्। प्रश्न० १३८।
अवमानं-हस्तादि। ठाणा० १५८।
अवमारियं-अपस्मार -अपगत स्मार स्मरणं यस्मात् स अपस्मार, तस्मिन् सति तद् रोगिणः सदसद्विवेका स्मृति नश्यति। आचा० २३३।
अवमोदर -अवमं-ऊनमुदरं-जठरं यस्य स। ठाणा० १४८।
अवयमो-अपाम्य। आव० १०१।
अवयकाओ-अवपाकयाकलापक। भग० ०८८।
अवयक्खंत-अपेक्षमाण (भग०)। पृष्ठतोऽभिमुख निरूपयन। औप० १२७।
अवयक्खमाणस्स-अवकाङ्क्षतोऽपेक्षमाणस्य वा। भग० ८९६।
अवयग्गं - अन्त, अन्यथाप्यको देशविवक्षतोऽर्थ शब्द। भग० ३०। अवदग्रम् पर्यन्तम्। ठाणा० ८४।
अवयणं-अवचनम्। आव० ३८३।
अवयव-अवयवा, प्रतिज्ञादय। दश० ७०। अवयव-प्रमाणाद्यलक्षण। दश० ७३। अवयवा तथाविधासास्त्र परिणामापन्नमा। ठाणा० ११।
अवयविद्रव्यता-तथाविधैकपरिणामिता। ठाणा० ११।
अवयवी - अवयवानां तथाविध महातपरिणामविशेष। जीवा० ६।

अवयाणं-नेत्रविशेष। बृ० द्वि० २२१ आ।
अवयानी-अनुबन्धनिषन्धिनी। व्य० प्र० ३० आ।
अवयारो-अवतार, प्रस्ताव। व्य० द्वि० २५ आ।
अवयासं-आश्लिषनम्। औप० १६४।
अवयासणं-कार्यानामाश्लिषनम्। बृ० प्र० ११९ अ।
अवयासि-आश्लिषनम्। बृ० नृ० २६ आ।
अवयासिज्जमाणे - अवत्राप्यमान, अन्याश्लिष्यमाणो वा। औप० १०३।
अवयासित्ता-अवकाश्य। आव० ३००।
अवयासेउं-निवारयितुं, निरोद्धुम्। आव० ४३८।
अवरं-अपरं, पश्चात्कालभावी। आचा० ३६७।
अवरज्झियाउ - अपराद्धवान्। आव० ८३०।
अवरकंका-अपरकङ्का, ज्ञाताया षोडशाध्ययनम्। अन्त० ६०। नगरी धेवकी ज्ञातम्। उत्त० ६१८। सम० ३६।
अवरगत्तओ-अपरगर्वम। आव० ३८०।
अवरज्झइ-अपराध्यति, अपराधमापद्यते। दश० ९०६।
अवरण्हसंखडी दिवा पश्चिमे प्रहरे भुक्ते, पश्चिमेऽवराह्ने विचित्रसंखडी। नि० चू० द्वि० १५ अ।
अवरत्तो-अपरत्त, अपरत्र। निशी० ०३०।
अवरत्त - अपरात्र, अपरत्र रात्रि, पश्चिमरात्रिभाग। भग० १२७। रात्रि पश्चिमयामो। दश० चू० ३६८।
अवरद्दक्खिणा-अपरदक्षिणा। भग० ६३०।
अवरद्धारिता - अपरद्धारिकाणि, अपरस्यां दिशि द्वाराणि येषु। ठाणा० ४१४।
अवरद्धं-अपराद्धम्, दुष्टम्। उत्त० १४३।
अवरद्धिगा-लूता स्फोटक, तस्यां भूतायामिहायामुपचितायां शाकपात्राद्यवस्थनेन पूर्वक्रियादीन परिषेक क्रियते। आव० १३०। सर्पदंशनस्थिन परिषेकादि क्रियते। औप० १३०।
अवरभू-अपरभू, अधोभू। सूर्य० ४६।
अवररायं-अपररात्रे-रात्रे पश्चार्द्ध याम। आचा० २१०।
अवरविदेहकूडे-अपरविदेहकूटम्, निषधे अष्टमकूट। जं० प्र० ३०८। अपरविदेहाधिपकूटम्। जं० प्र० ३३७।

अवरविदेहे-अपरविदेहः, मेरोर्जम्बूद्वीपगतः पश्चिमविदेहः। जं० प्र० ३१०। महाविदेहापरभागः। ठाणा० ६८। निषधे कूटविशेषः। ठाणा० ७२। नीले कूटविशेषः। ठाणा० ७२।
अवरवीयावो-अपरबीजापः। आव० ३८७।
अवरा-अपरा। आव० ६३०।
अवराइअ-अपराजितः, पद्मबलदेवपूर्वभवनाम। आव० १६३।
अवराइआ-अपराजिता, शङ्खविजये नगरी। जं० प्र० ३५७।
अवराओ। ठाणा० ८०।
अवराजिआ-अपराजिता, पूर्वदिग्रुचकवास्तव्या दिक्कुमारी। आव० १२२।
अवराजिया-अपराजिता, उत्तरदिग्भाव्यञ्जनपर्वतस्योत्तरस्यां पुष्करिणी। जीवा० ३६४।
अवराह-अपराधः, गुरुविनयलङ्घनरूपः। आव० ५४१।
अवराहखामणा-अपराधक्षामणा, वन्दनके षष्ठं स्थानम्। आव० ५४८।
अवरुंडिओ-आलिङ्गितः। आव० २७४।
अवरुज्जय। आव० ६३८।
अवरुत्तरा-अपरोत्तरा। आव० ६३०।
अवरुद्धो-अवरुद्धः, अन्तर्भूतः। विशे० ११६७।
अवरेय-अवरेकः, रिक्तता। उत्त० ३०५।
अवरेण-अपरेण-जन्मादिना सार्द्धम्। आचा० १६७।
अवरो-अववादो। नि० चू० तृ० १४६ अ।
अवरोप्परमसंबद्ध-परस्परमसम्बद्धः। आव० ६३५।
अवण्णे - अवर्णः, अश्लाघा। असद्दोषोद्भावनम्। ठाणा० २७५। अयशः, सर्वदिग्गामिन्यप्रसिद्धिः। ठाणा० ४१८।
अवन्न-अवर्णः अप्रसिद्धमात्रम्। भग० ४८९। अश्लाघा। ओघ० १२१। अयशः। ओघ० १२५।
अवलंयण - अवलंबिज्जतित्ति अवलंबणं, सो पुण वेतिता मत्तावलंबो वा। नि० चू० प्र० ११९ अ। बाह्वादिमात्रैकदेशग्रहणम्। बृ० तृ० २३० अ। अवतरतामुत्तरतामवलम्बनहेतुभूताः। जं० प्र० ४३। अवलम्बनः, अवतरतामुत्तरतां चालम्बने हेतुभूतः। जीवा० १९८। अवलम्बनं देशे ग्रहणम्। ठाणा० ३२७।
अवलंबणबाहा-अवलम्बनबाहा, उभयोरुभयोः पार्श्वयोरवलम्बनाश्रयभूता भित्तिः। जीवा० १९८।
अवलंबनीयम्-लम्बयितव्यं रज्ज्वादिनिबद्धं हस्तादिना धरणीयम्। भग० ४७।
अवलंबमाणे - अवलम्बयन् हस्तवस्त्राञ्चलादौ गृहीत्वा। ठाणा० ३५३।
अवलंबमाने - अवलम्बमानः, पतन्तीं बाह्वादौ गृहीत्वा धारयन्। ठाणा० ३२७।
अवलगका-सेवकाः। भग० ४६४।
अवलगनं-सेवा। आचा० १३२।
अवलद्ध - अपलब्धः न्यक्कारपूर्वकतया। ठाणा० ४६६। ईषल्लब्धः, अलब्धो वा। प्रश्न० ११८।
अवलद्धि-अपलब्धिः, अलाभोऽपरिपूर्णलाभो वा। भग० १०१।
अवलम्बए - अवलम्बेत-अवष्टम्भादिकां क्रियां कुर्यात्। आचा० २९३।
अवलियाति। ठाणा० ८६।
अवलितं-वस्त्रं शरीरं वा न वलितं कृतं तत्। ठाणा० ३६१। यथाऽऽत्मनो वस्त्रस्य च वलितमिति मोटनं न भवति। उत्त० ५४१।
अवलियं-अवलितम्। ओघ० १०९।
अवलुप्पण। आचा० ३७८।
अवलहणिया - वायामु कर्दमकेटणी। नि० चू० प्र० १२४ अ।
अवलेखर्क-मायाया लक्षणम्। आचा० १७०।
अवलोकनम्-गवाक्षः। बृ० प्र० २०७ अ।
अवलोवो - अपलोपः, वस्तुसद्भावप्रच्छादनम्। अधर्मद्वारस्य त्रिंशत्तमं नाम। प्रश्न० २७।
अवल्गन। आचा० १०६।
अवल्लु-गोणी। आव० ६६५।
अवल्लखेवा-नविलवा क्षेपा। नि० चू० द्वि० ७८ अ।
अवल्लगं। ओघ० ३३। निर्यामकः (मर०)।
अववं - अववम्, चतुरशीतिरववाङ्गशतसहस्राणि। जीवा० ३४५।
अववंगं-अववाङ्गम्, चतुरशीतिस्त्रुटितशतसहस्राणि। जीवा० ३४५। भग० ८८८।

अववंगाति। ठाणा० ८६।
अववरय-अपवरक, गृहान्तर्भाग। दश० ४२।
अववाइयं-आपवादिक यद्द्रव्यक्षेत्राद्यपेक्षम्। उप० मा० गा० ४००।
अववाओ-अपवाद, द्वितीयपदम्। नि० चू० द्वि० ९२ अ।
अववाडणं-अवपाटनम्, विदारणम्। भग० १२०।
अववाति। ठाणा० ८६।
अववाय-अपवाद, परदूषणाभिधानम्। प्रश्न० ११६।
अववायसुत्तं-तिण्हमन्नयरागस्स इत्यादि। बृ० प्र० २०१ आ। नि० चू० तृ० ११ अ।
अववायाववाओ-अववाए पुण अन्नो अववाओ। नि० चू० द्वि० ६५ आ।
अववायाववातियं। नि० चू० प्र० २२५ आ।
अवविहे-आजीविकोपासकविशेष। भग० ३६९।
अववे-कालविशेष। भग० २१०, २७५, ८८८। सूर्य० ९१।
अवश्रावणम्-आयामम्। ओघ० १३३।
अवग्गहम्-उवग्रह। ओघ० १०४। उत्त० ५५।
अवष्टब्धा-आक्रान्ता। आचा० २५८।
अवसण्णा-अवसन्ना। आव० ६५०। मग्गूडप्राया। ओघ० ११६।
अवसद्दो-अपशब्द। आव० ४०१।
अवसरो-अवसर, उपयोगकाल। सूत्र० ११। विभाग, पर्याय, देश, प्रस्ताव। विशे० ८३७।
अवसर्पण। आचा० ३६४।
अवसाणं-अवसानम्। आव० ३८४। अन्त। प्रज्ञा० ३६७।
अवसाय-निश्चय। प्रश्न० १०४।
अवसावणं-अवश्रावणम्, कांजिकम्। बृ० द्वि० १२९ आ।
अवसिओ-अवसित, जित। विशे० ९९४।
अवसिद्धंतो-अपसिद्धान्त। आव० ३२०।
अवसोहिय-अवशोध्य, अपनार्य, पृथक् कृत्, परिहृत्य। उत्त० ३४०।
अवसेसं-अवशेषम्, उद्धरितम्। उत्त० ५९६। भिक्षा प्रक्रमात्पात्रनियोगाद्धरितम्, यद्वाऽपगत शेषमपशेषम्। उत्त० २४४।
अवस्कन्द-शिबिर। आचा० १४०।
अवस्थानम्-सम्पिति। सूर्य० ७।
अवस्सं-अवश्यम्, नियोगत। आव० २६५।
अवस्सकरणिज्जं-अवश्यकरणीयम्, आवश्यकस्यापि द्वितीयनाम। विशे० ४१५।
अवह्-अव्याप्रियमाण। बृ० द्वि० २७ आ।
अवहट्टण-त्याग। (मर०)
अवहट्टु-अपहृत्य, त्यक्त्वा। भग० १००। परिहृत्य। औप० २४। परित्यज्य। ओघ० ११४। आहृत्य-निष्कृष्य, त्यक्त्वा। आचा० ४००।
अवहट्टुअसंजमे-अपहृत्यासंयम-अविधिनोच्चारादीनां परिष्ठापनतो य स। सम० ३३।
अवहट्टुसंजमो-अपहृत्यसंयम-प्राणिभि संसक्तं भक्तपानमथवाऽविशुद्धमुपकरण पात्रादि यद्वाऽतिरिक्तं भवेत् तत्परिष्ठापनं विधिना। आव० ६५३।
अवहडे-अपहृतम्। भग० २७७।
अवहन्न-उद्गलम्। बृ० द्वि० ६० अ।
अवहारइ-अवधार्यते, प्रथमतया स्थाप्यते। सूर्य० ११३।
अवहारय-अवधारणावान्। ठाणा० ४८४।
अवहाराइ-अपहरन्त-गृह्णन्त। आचा० ३३७।
अवहारो-अपहार, अधर्मद्वारस्य दशम नाम। प्रश्न० ४३। जलचरविशेष। प्रश्न० ६२। अवधार्य-ध्रुवराशि। सूर्य० ११३। बृ० प्र० ७०७।
अवहितचित्तः-एकाग्रमना। उत्त० ५९९।
अवहीयं-अपधीकम्, अपमदा-निन्द्या धीर्यस्मिन्सत। अधर्मद्वारस्याष्टाविंशतितम नाम। प्रश्न० २६।
अवहीयए-अवधीयते, अवशब्दस्याव्ययत्वेनानेकार्थवादधोऽधोविस्तृत धीयते-परिच्छिद्यते रूपिवस्तु तेन ज्ञानेनेत्यवधि, अथवा अव-मर्यादया एतावत्क्षेत्रं पश्यन्, एतावन्ति द्रव्याणि, एतावन्त काल पश्यतीत्यादिपरस्परनियमितक्षेत्रादिलक्षणया धीयते-परिच्छिद्यते। विशे० ७४।
अवहेडय-अर्धशिरोरोगम्। उत्त० १४३।
अवहेडियं-अवहेठितम्, अधोमुखो, हेठित-बाधित अधोनामितमिति। उत्त० ३६७।
अवाअ-अपाय, उदाहरणस्य प्रथमो भेद। दश० ३५।

अवाईण-अवाचीनम्, अधोमुखम्। औप० ७। अवातीनानि, न वातोपहतानि, न वातेन पातितानि। जं० प्र० २९।

अवाईणपत्ता-अवाचीनपत्रा, अधोमुखपर्णा, अधोमुखपलाशा वा। औप० ७। अवातीनपत्रा-अवातोपहतपर्णा। औप० ९।

अवाउड-अप्रावृतम्, प्रावरणरहितम्। दश० ११६। अप्रावृता। ओघ० १६७। प्रावरणाभाव। भग० १२५।

अवाउडय-अप्रावृतक, प्रावरणवर्जक। औप० ४०। न विद्यते प्रावरणकम्। ठाणा० २९९।

अवाउडिय-अप्रावृतिक, सकलां रात्रिं यावद् अप्रावरणाभिप्रहवान्। बृ० द्वि० २१२ अ।

अवाए-अवाय, अवधारणात्मको निर्णय। प्रज्ञा० ३१०। अपाय-अवग्रहज्ञानेन ईहितस्यार्थस्य निर्णयरूपो योऽध्यवसाय। प्रज्ञा० ३१०।

अवाओ-अवाय-प्रक्रान्तार्थविनिश्चय। भग० ३४४। ईहार्थविशेषनिश्चय। आव० ९।

अवायाय-अभ्यापात, समन्तात्प्रार्थग्रहणादिक्रियाऽऽनुपूर्व्या विपद्यमानमायुष्कक्षयमनुभवतो यो भवति सोऽभ्यापात। आचा० २६१।

अवाच्यप्रदेश-गुह्यम्। प्रज्ञा० ४१०।

अवातदसी-अपायदर्शी। ठाणा० ४८४।

अवातीणपत्तो-अवातीनपत्र, न वातोपहतं पत्र, वातेनापातित पत्रम्। जीवा० १८७।

अवाते-अपाय-अनर्थ। ठाणा० २७३।

अवादाणे-अपादान-विश्लिष्यतो मर्यादया दीयते, गृह्यते, अवधिमात्रम्। ठाणा० ४२८।

अवाय-अपाय, विवक्ष। विशे० ८७३।

अवायदसी-आणालोयणस्स पलिउंचणस्स परिहारे अवायं तस्स सुमाए जम्मणमरणादीदुक्खवार्णियस च परलोगावाए दरिसेति इहलोगे च ओमासिवादी सो अवायदंसी। नि० चू० तृ० १२८ आ। मानिचारस्य पारलौकिकापायदर्शी। ठाणा० ४८६। अपायान्-अनपान लिप्सापि अभावनिर्वादादीन् दुर्भिक्षदौर्बल्यादीन्प्रकाश, परलोके सम्यगनालोचनायां वा दुर्लभबोधिकत्वादीन् अपायान् शिष्यस्य दर्शयति। ठाणा० ४२४।

अवायाणुप्पेहा-अपायानुप्रेक्षा, आश्रवाणामपायानामनुप्रेक्षा। ठाणा० १८८।

अवालुयाखिल्लु-अवारितऐप्प। (त०)

अवावारे-अव्यापार, इन्द्रियाव्यापार। आव० ६५२।

अवाहाणं-देशविशेष। भग० ६८०।

अविंदतो-अलभमान। आव० ५३७।

अविंधणं-आव्यधनम्, मन्त्राद्यावेशनम्। प्रश्न० ३८।

अवि-अपि, अपिशब्द एवकारार्थत्वेन पादपूरणार्थ एवाकारार्थो वा। जं० प्र० ३४५। प्रकारवाची। नि० चू० प्र० १६८ आ।

अविअ-अपिच, अभ्युच्चये। ओघ० ३६।

अविअत्तो-अव्यक्त, मुग्ध-सहजसद्विवेकविकल। सूत्र० ३४।

अविइ-समन्ताद् वीचय इव वीचय। उत्त० २३१।

अविउट्टमाणो-पीड्यमान। सूत्र० ५१४।

अविउप्पकड-अविद्वत्प्रकृता, अभ्युत्प्रकृता वा न विशेषत उत्-प्राबल्येन प्रकृता। भग० ३२५। अपिशब्द सम्भावनार्थे उत्-प्राबल्येन च प्रकृता-प्रस्तुता प्रकृता वा प्रकृता वा। भग० ७०३।

अविउस्सिया-अव्युत्सृज्य, अपरित्यज्य। सूत्र० ३१४।

अविओगिमो-अवियोगिक, वियोगासहिष्णु। आव० ४२६।

अविओगो-अवियोग, धनादेरव्ययनम्। परिग्रहस्य पञ्चविंशतितमं नाम। प्रश्न० ९२।

अविओसित-अव्यवशमितम्, अनुपशान्तम्। ठाणा० १६६।

अविकत्थण-अविकत्थन-न बहुभाषी। दश० ०। अविकत्थनम्-स्तिमितभाषणम्। आचा० २।

अविकप्प-अविकल्प, निश्चय। आव० ०६४।

अविकलकुल-अविकलकुल, ऋद्धिपरिपूर्णकुल। भग० ४६०।

अविकोविओ-जो वा अगीआ अजओ ण वा सुत्ते सुत्तत्थे विहिणा तो स छंदं सुत्तं वा गहासे, एवं विकोविदो, तं पव विवरीओ जो स पदमनाणं पडित परिणओ सो अकोविओ भण्णति। नि० चू० तृ० १२१ अ।

अविकडिय-अपकटित अकर्षित। बृ० द्वि० ०३ आ।

अविक्कयेण-अविक्रयेण-भाटकेन। व्य० प्र० २३८ आ।
अविक्किअ - असस्कृतम्, सुलभमीदृशमन्यत्रापि। दश० २२१।
अविक्कीवो-आमायमाणो। दश० चू० १२३।
अविकूलं-अप्रतिकूल। (मर०)
अविगणिया-अविमता। आव० ६९२।
अविगियवयणो-अविकृतवदन, नात्यन्तनिर्वाग्निमुख। ओघ० १८२।
अविगीत-अविप्रतिपन्न। व्य० प्र० १९२ अ।
अविगुह-अवारित। (मर)
अविग्गहगइसमावन्नग - अविग्रहगतिसमापन्न, ऋजुगतिक, स्थितो वा। भग० ८५। विग्रहगतिनिषेधादृजुगतिक अवस्थितश्च। भग० ८७७।
अविग्गहमणो-अविग्रहमना, अकलहचेता अभ्युदग्रहमना वा, अविद्यमानासदभिनिवेश। प्रश्न० १११।
अविघाडा-अप्रकट। व्य० द्वि० २०३ अ।
अविघुट्ठ-विक्रोशनमिव यत्र विस्वरम्। ठाणा० ३९६। विक्रोशनमिव यद्विस्वरं न भवति तत्। ज० प्र० ४०।
अविच्चिंतिय-अविचिन्तितम्, अविवक्षितम्। विशे० ७३।
अविच्चुति-धारणाभेद। दश० १२५।
अविज्जा-अविद्या, न विद्या-मिथ्यात्वोपहतकुत्सितज्ञानात्मिका। उत्त० २६२।
अविज्जापुरिसा - अविद्यापुरुषा, अविद्या-मिथ्यात्वोपहत कुत्सितज्ञानात्मिका तत्प्रधाना पुरुषा अविद्यमाना वा विद्या-प्रभूतश्रुत येषां ते। उत्त० २६२।
अविज्ञोपचितम्-अविज्ञानमविज्ञा तयोपचित, अनाभोग कृतमिति। सूत्र० ११।
अविणए-अविनय। आव० ७९२।
अविणासी - अविनाशी, क्षणपेक्षयाऽपि न निरन्वयनाशधर्मा। दश० १२९।
अविणीअप्पा-अविनीतात्मा, भवान्तरेऽकृतविनय। दश० २४९। विनयरहिता अनात्मज्ञा। दश० २४८।
अविणीओ - अविनीत, सूत्रार्थदातृवन्दनादिविनयरहित। ठाणा० १,५। अविनीता, ये बहुशोऽपि प्रतिनोद्यमाना प्रमाद्यन्ति, ते च छन्देऽवर्तमाना भण्यन्ते। बृ० प्र० २५९ अ।
अविण्णाय-अविज्ञातम्, अवध्यपेक्षया अज्ञातम्। भग० १९७, २००।
अवितथभाव -अर्थविनिश्चय। दश० २३५।
अवितहं - अवितथम्, सत्यम्। आव० ७६१। भग० १२१।
अवितहमेयं-अवितथमेतत्-न कालान्तरेऽपि विगताभिमतप्रकारम्। भग० ४६७।
अविदलकडाओ-अद्विदलकृता, न द्विदलकृता अद्विदलकृता, अनूर्ध्वपाटिता। आचा० ३२३।
अविद्धंतो-अविद्वस्न। उत्त० २७९।
अविद्धकण्ण-अविद्धकर्ण, अव्युत्पन्नम्। भग० ६७७।
अविद्धत्थ-अविध्वस्त, प्ररोहसमर्थ। दश० १४०।
अविद्यमानम्-मातलनयाऽनुपलभ्यमानम्। जीवा० २७१।
अविधिभिन्न - उर्ध्वपालिकया पेश्य कृत तदनुविभिन्नं, यत्पुनस्तिर्यक्कृहरकतलिकाकृत तच्च कलिकाभिन्नमेते द्वे। बृ० प्र० १७५ अ।
अविधो-कुत्सितो। नि० चू० प्र० २७७ अ।
अविनेया - ग्रहणधारणविज्ञानेहापोहवियुक्ता महामोहाभिभूता दुष्टावग्राहिताश्च। तत्त्वा० ७-६।
अविपक्कदोसा-कषायेन्द्रियनिग्रहेऽसमर्था, अकोविदा वा। बृ० द्वि० १४१ अ।
अविपरीतदर्शन -साम्प्रतक्षी। सूत्र० ३९४।
अविपु(घु)ट्ठ-अविपु(घु)ष्टम्, न विस्वरं क्रोशतीव। जीवा० १९४।
अविप्पकड - अविप्रकृष्ट, आनुकूल्येन प्रकृता-प्रक्रान्ता, अथवा न विशेषेण प्रकृता अविप्रकृता। भग० ३२५।
अविप्पणासो-अविप्रणाश, शाश्वतं, सिद्धाना नमस्कारार्हत्वे हेतु। आव० ३८३।
अविप्पणणं। नि० चू० द्वि० ३१ आ।
अविबंधणो - अविबन्धन, अविद्यमानमन्त्रादिनियन्त्रण। उत्त० ४७९।
अविभागा-अविभागा, अनुभागा। ठाणा० २२१।
अविभागपलिच्छेदो - अविभागपरिच्छेद, केवलिप्रज्ञाछेदेनाविभागम्। बृ० तृ० १५ आ।
अविमणे - अविमना, न शून्यचित्त, अदीनस्य द्वितीयं नाम। अन्त० २२।

अविमोत्ति-अविमुक्ती, गृद्धि । नि० चू० प्र० १५५ अ।
अवियं-उच्छिष्टम्। बृ० प्र० २७१ आ।
अवियत्तकुलं-जत्थ बहुणावि कालेण भिक्खा न लब्भइ। दश० चू० ७७।
अवियद्धो-अविदग्ध, अतृप्त । (महाप्र०)
अवियाइ-इत्येवमादीनुद्दिश्य। आचा० ३५३।
अवियाउरी-अप्रसविनी। आव० २१२।
अवियाणओ-अविजानन्, हिताहितप्राप्तिपरिहारशून्यमना। आचा० ७०।
अवियारं-अपराक्रमप्रभवति काले। (भक्त०)
अवियार-अविचारम्, चेष्टात्मकविचारविरहितमरणानशनतप। उत्त० ६०२। अविकारा-गीतादिविकाररहिता। बृ० प्र० ११० आ।
अवियोगज्झवसाणं-अवियोगाध्यवसानम्, अविप्रयोगदृढाध्यवसाय। आव० ५८५।
अविरइ-अविरति, इच्छाया अनिवृत्ति। भग० १०१।
अविरइय-अविरतिक। आव० २१८, ६२०, ६४०, ४०४, ५६०। दश० ८९। गृहस्थो। ओघ० १९४।
अविरए-अविरत, प्राणातिपातादिविरतिरहित, विशेषेण वा तपसि रतो यो न भवति स। भग० ३६।
अविरओ अविरत, न विरत, सावद्यव्यापारादनिवृत्तमना। प्रज्ञा० २६८।
अविरतओ-अविरत। आव० ३९६।
अविरतकायिकी-कायिकीक्रियाया प्रथमो भेद। मिथ्यादृष्टेरविरतसम्यग्दृष्टेश्च उत्क्षेपणादिलक्षणा क्रिया कर्मबन्धनिबन्धना। आव० ६११।
अविरति-अविरति, अब्रह्म। ठाणा० ३७२। अप्रत्याख्यानमथवा अविरतिरूपो भाव, शस्त्रम्। ठाणा० ४९२। अविरति। आव० ९२।
अविरतिया-अविरतिका, न विद्यते विरतिर्यस्या सा। ठाणा० ३७२। अविरतिका। आव० ३९६।
अविरत्ताप-अविरक्तया विप्रियकरणे। भग० ५७९।
अविरत्तो-अविरक्त। औप० १३।
अविरय-अविरत, अनिवृत्त। प्रश्न० ३०। मिथ्यादृष्टिसम्यग्दृष्टिश्च। आव० ५८८।
अविरयसम्मद्दिट्ठी-अविरतसम्यग्दृष्टि, देशविरतिरहितसम्यग्दृष्टि, भूतग्रामस्य चतुर्थं गुणस्थानम्। आव० ६५०।
अविरलं-परस्परासन्नम्। प्रश्न० ८३।
अविरलपत्तो-अविरलपत्र। जीवा० १८७।
अविरहिय-अविरहितम्-चूकरदलितन्यायादपि न विरहित, अथवा प्रदीर्घकालोपभोग्याहारस्य सकृद्ग्रहणेऽपि भोगोऽनुसमय स्यादतो ग्रहणस्यापि सातत्यप्रतिपादनार्थम्। भग० २०।
अविरहिय-अविरहित, अविमुक्त। आव० ५३२।
अविरहो-अविरह, सातत्येनावस्थानम्। आचा० १९।
अविराहणं-अविराधना। भग० ८९८।
अविराहियसंजम-अविराधितसंयम, प्रव्रज्याकालादारभ्याभग्नचारित्रपरिणाम, सञ्ज्वलनकषायसामर्थ्यात्प्रमत्तगुणस्थानकसामर्थ्याद्वा स्वल्पमायादिदोषसम्भवेऽप्यनाचरितचरणोपघात। भग० ५०।
अविरिक्का-अविरक्ता, अविभक्तरिक्था। बृ० तृ० २४३ अ।
अविरेक-रोष। व्य० द्वि० १३७ अ।
अविरुद्धो-अविरुद्ध, वैनयिक। औप० ९०।
अविलं-लोमपक्षिदं। दश० चू० ६। गड्डलमाउल वा। सम० ५३।
अविलंबियं-अविलम्बितम्, नातिमन्थरम्। भग० २९४। अमन्थरम्। ओघ० १८७। अनतिमन्दम्। प्रश्न० ११२।
अविवज्जओ-अविपर्यय। विशे० ६४१।
अविशुद्धकोटि। आचा० २७१।
अविवक्ख-अविपक्ष, अप्राप्तविपत् मन्त्रादिभिरनियन्त्रित। उत्त० ४०९।
अविसेस-अविशेष, विशेषरहित। भग० ९११। प्रज्ञा० ७४।
अविसंधि-प्रवाहेणाव्यवच्छिन्नम्। भग० ४७१। अव्यवच्छिन्नम्। आव० ७६१।
अविसंवायण-अविसंवादनम्, पराविप्रतारणम्। उत्त० ५९१।
अविसंवायणाजोगे-अविसंवादनायोग। ठाणा० १९६।
अविसादी-अविषादी, चिन्तारहित, अदीनस्य प्रथम नाम। अन्त० ३२।
अविसारओ-अविशारद। प्रज्ञा० ६०।

अविसुद्धलेस्से – अविशुद्धलेश्य, कृष्णादिलेश्य । जीवा० १४२ । विभङ्गज्ञान । भग० ३८४ ।

अविसुद्धो – पागत्थादी तेसिं भज्झातो जो आगमो विहारो विसुद्धो तस्स जो पुव्वोवदी सो अविसुद्धो । नि० चू० द्वि० ११३ अ ।

अविसेसियं–अविशेषितम्, विशेषरहितम् । जं० प्र० ८८ ।

अविसोहिकोडी–अविशोधिकोटि । दश० १६२ ।

अविहड–बालक (देश्यम्) । बृ० प्र० ।

अविहम्ममाण –विविध परीषहोपसर्गैर्हन्यमानो विहन्यमान, न विहन्यमानोऽविहन्यमान, न निर्विण्ण सन् वैहानस गार्द्धपृष्ठमन्यद्वा बालमरण प्रतिपद्यत इति । आचा० २५५ ।

अविहाड–अप्रगल्भ । व्य० द्वि० ३७९ अ ।

अविहाय–अविभाव्य, अविभावनीयस्वरूप । प्रश्न० १९ ।

अविहि – अविधि । आव० ५२ । अयतना । बृ० द्वि० १५ अ ।

अविहिगहिअ – अविधिग्रहणम् अशुद्धस्य-उद्गमादिदोषान्वितस्य यद् ग्रहण, अथवा गुडादेर्द्रव्यस्य मण्डकादिना प्रच्छाद्य यदेतत् पात्रकदेशे स्थापन तत् । आव० १९२ ।

अविहेवरिट्ठावणिया – अविधिपरिष्ठापनिका । आव० ६३८ ।

अविहेडए–अविहेठक न कञ्चिदुक्तिभिर्विहेठयति नादरवान । दश० २६६ ।

अवीइ–अवीचि वीचि –वि च्छेदस्तदभावात् । उत्त० २३१ ।

अवीरिए–अवीर्य उत्थानादिक्रियाविकल । भग० ९५ । मानसशक्तिवर्जित । भग० ३२३ ।

अवीरिय–अवीर्य सिद्ध । भग० ९५ ।

अवीसंभो – अविश्रम्भ अविश्वास, प्राणवधस्य तृतीय पर्याय । प्रश्न० ५ ।

अवीहीपुच्छण–अविभित्य्य, बाधापायपरस्य विहाराय मुद्गाय पृच्छति । बृ० प्र० २४१ अ ।

अवुण्ण–अपुण्यम् । उत्त० २१० ।

अवुत्तपुव्वं । आव० २३० ।

अवेइअ अवदित, मनसाऽप्यनालोचित । आव० ४१५ ।

अवोच्छिन्ना–अव्यवच्छिन्ना यावदेकोऽपि निर्ग्रन्थ तावत् । आव० ७२७ ।

अव्वुच्छेदम्–पारम्पर्याविच्छेदेन, निर्गमनिमित्तानां प्रभृति सिद्धि यावदनवच्छिन्नप्रमाणेन । नम० ६३ ।

अव्वइओ । दश० चू० २० ।

अव्वए–अव्ययम्, व्ययरहितम् । भग० ११० ।

अव्वओ–अव्यय, अव्ययस्वरूपस्य । जीवा० १८३ ।

अव्वत्ते–अव्यय पर्यायापगमेऽप्यनन्तपर्यायतया । ठाणा० ३३३ । अव्ययापेक्षया । ठाणा० ३३३ । व्ययाभाव । भग० ७६० ।

अवत्तं–अव्यक्त, अव्यक्तमतं, अस्फुटमतं, संयतादयो सन्दिग्धबुद्धि । आव० ३११ । अव्यक्तम् । औप० १०६ । शब्दार्थरहितं, अनिर्देश्यम् । पिं० १०० । अगीतार्थो गुरो सकाशे यदालोचन तत् । ठाणा० ४८४ ।

अव्वत्तगमणिया–अव्यक्तमणिका, ह्यादिमिरन्यान्यव्यवहारैर शीर्षप्रहरणिकाया परतोऽन्यान्यानव्यवहारैरन्यानप्रत्यनीकत्वेन च यत्नु स शक्यतेऽवसरकल्प्य स चैक्रस्तन्नाक्रमेन–एकेन एका यादृश गणिका । भग० ७६६ ।

अव्वत्तलिंगो – अव्यक्तलिङ्ग । आव० ३०२ । अव्यक्त लिङ्ग । आव० ५६० ।

अव्वत्तस्स अव्यक्तस्य-अगीतार्थस्य सूत्रार्थापरिनिष्ठितस्य । आचा० १९६ ।

अव्वत्तो – जाव कक्खादिसु रोमसंभवो ण भवति, ताव अहवा जाव सोलसवरिसो ताव अव्वत्तो । नि० चू० तृ० ८२ अ । श्रुतऽगीतार्थ वयसि अर्वाक् षोडशभ्य । बृ० तृ० ११० अ । अगीयट्ठो । नि० चू० प्र० १०३ आ ।

अव्वया – अव्यया । पिंड० ९९ । अव्ययस्वरूपा, मनागपि स्वरूपान्नस्य तदनुचितस्यसम्भवात् । जं० प्र० ७० । तदारम्भकद्रव्यापरिहाण । जं० प्र० ७७ ।

अव्वयमितस्स अव्यवसितस्य–अनिश्चयवतोऽपराक्रमवतो वा । ठाणा० १७६ ।

अव्वहिओ–अव्यथित, परीषहापादितदुःखे । जं० प्र० १६ । जीवा० ९९ । आचा० ४०४ । अदीनमना । दश० ३० । अभग्गो । दश० चू० १३३ ।

अव्वहे–अव्ययम्, देवादकृतविभ्यागोतिरिति भय चलनं वा व्यथा तस्या अभावो अव्ययम् । ठाणा० १९२ ।

अव्वाण आस्यान, म्लान, स्त्यानम् । ओघ० १०१ ।

अव्याबाधं,०हं–अव्याबाधम्, केनापि विबाधयितुमशक्यत्वात्। जीवा० २५६। वन्दनके तृतीयं स्थानम्। आव० ५४८। अव्याबाधः, परेषां पीडाकारित्वाभावाद्विनष्टबाधः। भग० ७। अव्याबाधम्–उपरतसकलपीडं मोक्षम्। उत्त० ५७८।

अव्याबाह–शुक्राभविमानवासी सप्तमो लोकान्तिकदेवः। भग० २७१। ठाणा० ४३२। अव्याबाधः सप्तमलोकान्तिकदेवः। आव० १३५। अपीडाकारित्वम्। सम० ५।

अव्यायडा–अव्याकृता, अस्पष्टा अप्रकटार्था, असत्यामृषाभाषाभेदः। दश० २१०।

अव्वावारपोसहे–अव्यापारपौषधः। आव० ८३५।

अव्वाहयं – अव्याहतम्, एकान्तिकमिहपरलोकाविरुद्धं फलान्तराबाधितं वा। आव० ४१५।

अव्वाहितो–अव्याहितः, अनाहूत। जीवा० १६६।

अव्वितिगिट्ठ – अव्यतिकृष्टे, उद्घाटाया पौरुष्यामित्यर्थः। व्य० द्वि० २२७ आ।

अव्वुक्कंताइं – अव्युत्क्रान्ताः, अविध्वस्तपर्यायाः। आचा० ३४८।

अव्वुच्छित्तिनयट्ठया–अव्युच्छित्तिनयार्थता, द्रव्यास्तिकनयमतम्। सूर्य० २८६।

अव्वुच्छिन्ननयट्ठता–अव्यवच्छिन्ननयार्थता, द्रव्यास्तिकनयमतम्। सूर्य० २५८।

अव्वो–सम्बोधने, अहम्। व्य० द्वि० २०१ आ।

अव्वोगडं–अव्याकृतम्, गुरुभिर्दिदेपतोऽनाख्यातम्। भग० १००। दायादादिभिरविभक्तं अननुज्ञातं वा। बृ० तृ० ५० अ। अव्याकृतं नाम दायिना सामान्यं न पुनर्विभक्तं, यदिविकृतं न केनापि विशारमापादितं, यद् भवेत् पूर्वराजेन संदिष्टं, वंशस्य परम्परया समागतम्। व्य० द्वि० २७१ आ। अविभक्तम्। व्य० द्वि० २७५ अ। अव्यक्तोऽपरिस्फुटः। आचा० ३२०।

अव्वोगडा–अव्याकृता, अविस्पष्टा। आव० ७२७। कृतेऽपि भागे निर्देशहीना अभिका। बृ० द्वि० १९९ आ। अतगम्भीरशब्दार्था, अव्यक्ताक्षरप्रयुक्ता वा अनत्यामृषाभाषाभेदः। प्रज्ञा० २५६।

अव्वोच्छित्तिणय – अव्यवच्छित्तिनय, द्रव्यास्तिकनय। उत्त० १५१।

अव्वोच्छित्तिणयट्ठया–अव्यवच्छित्तिनयार्थता, अव्यवच्छित्तिप्रधानो नयोऽव्यवच्छित्तिनयस्तस्यार्थो-द्रव्यमव्यवच्छित्तिनयार्थस्तद्भावस्तत्ता। भग० ३०२।

अव्वोच्छिन्न–अव्यवच्छिन्नम्, अखण्डितम्। आचा० ४०५। अव्यवच्छिन्नाः, अनवरतम्। ओघ० १२६।

अव्वोच्छिन्ना–कृतेऽपि भागे मूलदारोरव्यवच्छेदो यावत्। बृ० द्वि० १९९ आ।

अव्वोच्छिन्नाओ–अव्यवच्छिन्नाः, अव्यवच्छिन्ना–जीवरहिता न व्यवच्छिन्ना अव्यवच्छिन्नाः। आचा० ३३३।

अव्वोयडा–अव्याकृताः, गम्भीरशब्दार्था मन्मनाक्षरप्रयुक्ता वाऽनाविर्भावितार्थाः। भग० ५००।

असरणानुप्रेक्षा – असरणस्य–अत्राणस्यात्मनोऽनुप्रेक्षा। ठाणा० १९०।

असुसिरे–अशुषिरे, तृणपर्णादिनाकीर्णे। उत्त० ५१८।

अशून्यान्तरा–न शून्यानि अन्तराणि यासां ता। आव० ३५।

अशोकपल्लवप्रविभक्तिः – विंशतितमो नाट्यविधिः। जीवा० २४७।

अशोकलता–लताविशेष। आचा० ३०।

अश्रयः–(अस्र), कोणा, कोटय। ठाणा० ४३५। चतुर्दिग्विभागोपलक्षिता शरीरावयवा पर्यङ्कासनोपविष्टस्य जानुनोरन्तरं, आसनस्य ललाटोपरिभागस्य चान्तरम्, दक्षिणस्कन्धस्य जानुनश्चान्तरम्, वामस्कन्धस्य दक्षिणजानुनश्चान्तरमिति। ज० प्र० ११। चतुर्दिग्विभागोपलक्षिताः शरीरावयवाः। ठाणा० ३५७।

अश्रुतनिश्रितम्–यत्पुनः पूर्वं तदपरिकर्मितमते क्षयोपशमपटीयस्त्वादौत्पत्तिक्यादिलक्षणमुपजायते तत्। आव० ९।

अश्वंद्रसः–बादर। उत्त० ६२।

अश्विनी–प्रथमं नक्षत्रम्। दश० २३६।

अष्टभाग–अट्ठभागो–अष्टमो भाग। भग० ८३२।

अष्टमीपौषध –अट्ठमीपोसहो – अष्टम्यां पौषध –उपवासादिरोऽष्टमीपौषध। आचा० ३२७।

अष्टमीपौषधिका – अट्ठमीपोसहिया–उत्सवः। आचा० ३२७।

अष्टापदम्–अट्ठावय, सारिफलम्। आचा० ४१८। आव० २८७। बृ० तृ० ५२ अ।

अष्टाष्टिका–चतुःषष्टिः। व्य० द्वि० ३४७ आ।

अष्ठीवती–जानुनी। प्रश्न० ८०।

अष्ठीवान्–जानु। जीवा० २७०।

असंकप्पिय–असङ्कल्पित, असङ्कल्पितानि च तानि शब्दादि-विषयभावेन परिणतद्रव्यरूपाणि। विशे० १४५।

असंकमणो–असङ्कमनाः, न विद्यते शङ्का यस्य मनसः स्तदशङ्कम्, अशङ्कं मनो यस्य सः। आचा० १२२।

असंकिया–अशङ्किता। आव० ५६१।

असंकिलिट्ठ–असंक्लिष्टम्, निर्दूषणम्। औप० ४९। विशुद्ध्यमानपरिणामवान्। प्रश्न० ११०।

असंक्षेपकालः। ठाणा० २७८।

असंखड–कलह, वैरं वा। बृ० तृ० ४८ अ। बृ० प्र० ८६ अ। नि० चू० प्र० ३१ अ। कलह। (गणि०)। ओघ ८०।

असंखडबोलो–कलहबोल। आव० ६५४।

असंखडि। आव० ६३०।

असंखडिओ–असङ्खडिक, कलहकारक। ओघ० १५१।

असंखय–असंस्कृतम्। दश० १०५। उत्तराध्ययनेषु चतुर्थमध्ययनम्। उत्त० ९। सम० ६४।

असंखया–असङ्ख्यका, सङ्ख्याविरहिता। उत्त० ३१६।

असंखेज्जजीविया – असङ्ख्यातजीविका वृक्षविशेषा। भग० ३६४। यथा निम्बाम्रादीनां मूलकन्दस्कन्धत्वक्शाखाप्रवाला। ठाणा० १२२।

असंखेज्जवित्थडे–असङ्ख्येयविस्तृत, असङ्ख्येयं विस्तृतं यस्य ■। जीवा० १०६।

असंखेप्पद्धा – असङ्क्षेप्याद्धा, त्रिभागादिना प्रकारेण या सङ्क्षेप्तुं न शक्यते सा चासौ अद्धा च। प्रज्ञा० ४८९।

असङ्ख्येयकः। अनु० २४०।

असंगहरुई–असङ्ग्रहरुचि, यदौपग्रहस्य-पीठादिकस्यो पकरणस्यैषणा दोषविमुक्तस्य लभ्यमानस्यात्मम्भरित्वेन न विद्यते सङ्ग्रह रुचिर्यस्यासौ। प्रश्न० १२५।

असंगे – असङ्ग, वैश्रमणस्य पुत्रस्थानीयो देव। भग० २००।

असंघयणो – आदिल्लेहिं तिहिं संघयणेहिं वज्जितो। नि० चू० तृ० १३२ अ।

असंघातिमो–एगगिओ। नि० चू० द्वि० ७९ अ।

असंचइया–असञ्चयिता –ये मासिके द्वैमासिके त्रैमासिके चतुर्मासिके पञ्चमासिके षण्मासिके वा प्रायश्चित्ते वर्तन्ते ते। व्य० प्र० ९७ आ।

असचेअयओ–असचेतयत, अजानानस्य। ओघ० २२०।

असंजअ–असंयत, गृहस्थ। आचा० ३४२। अप्रशस्ताध्यवसायवान्। विशे० १०२७।

असंजगविसओ – भगवया पडिसिद्धो। नि० चू० द्वि० १८ अ।

असंजण–असगो, अगेही। नि० चू० प्र० ८१ अ।

असंजमो–असंयम, प्राणवधस्य चतुर्दशपर्याय। प्रश्न० ५। अधर्मद्वारस्य षष्ठं नाम। प्रश्न० ४३।

असंजय – असंयत चरणपरिणामशून्य। भग० ४९। गृहस्थ। दश० २२२। असंयमवान्। प्रश्न० ३०।

असंजलं – जम्बूद्वीपैरवते पञ्चदशतीर्थंकरनाम। सम० १५३।

असंजातकिणस्कन्ध.। आचा० ८७।

असंजोगरया–असंयोगरता –संयोग –सम्बन्ध पुत्रकलत्र-मित्रादिभिस्तस्मिन्न रता संयोगरतास्तद्विपर्ययेणैकत्वभावना-भाविता असंयोगरता। आचा० १८०।

असंजोगिमे – असंयोगिम, संयोगिमाद्विपरीत आदित्य-बिम्बादि। उत्त० २१२।

असंज्झा–असन्ध्या, विगतसन्ध्या। ओघ० २०२।

असण्णी–असंज्ञी-अविदितपूर्वमुद्रातम्। व्य० द्वि० १७५ आ।

असंतई–असन्तान, असत्ता वा। बृ० प्र०। असन्तति (त्ता) परिणामविशेष। आव० ८४८।

असंतक–असत्कम्, असदर्थाभिधानरूपत्वात्, द्वितीयाधर्मद्वारस्य पञ्चमं नाम। प्रश्न० २६।

असंतगं–असत, असद्भूतार्थम्। अशान्त–अनुपशमप्रधानम्, अशोभनं वा। प्रश्न० १२१। असत्क–अविद्यमानार्थम्, असत्यमिति। प्रश्न० ३६।

असंतती–भायणवोच्छेदो अभाव इत्यर्थ। नि० चू० द्वि० ११६ आ।

असंतय – अशान्तक, अनुपशान्त, असत्–अशोभनम्। प्रश्न० ४१।

असंतरणए–असंतरणे। ओघ० १४३।

असंतासंते–मार्गितस्याप्यलाभ। बृ० द्वि० २७२ आ।

असंते-असत्, नाभाववचन शब्दोऽयम्। आचा० ७४। अविद्यमान। उत्त० ६१७।

असंतोसो-असन्तोष, परिग्रहस्य निंशत्तम नाम। प्रश्न० ९३।

असंथडाइं – असस्तृतानि, बीजादिभिरव्याप्तानि। उत्त० ४८७।

असंथडो-छट्ठऽट्ठमादिणा तवेण किलंतो असंथडो, गेलण्णेण वा दुब्बलसरीरो, दीहठाणेण वा पज्जत अलभंतो। नि० चू० प्र० ३१३ अ।

असंथरताणं-अपूर्यमाणे। ओघ० ७८।

असंथरमाणा-असस्तरमाणा, अतृप्ता। ओघ० ७८।

असंथरे-असस्तरताम्। ओघ० १५४।

असंथुओ-इय सइरितो सणायगो अनायगो वा। नि० चू० द्वि० १२१ आ।

असंदिग्धम् – वाण्यतिशयविशेष, असंशयकारिता। सम० ६३।

असंदिग्धवचनता-परिस्फुटवचनता। उत्त० ३९।

असंदिद्ध – असन्दिग्धा, स्पष्टम्। दश० २१३। असन्दिग्धम्-सूत्रस्य द्वितीयगुण, सैन्धवशब्दवल्लवणघोटकपुरुषादिअर्थसंशयकारि न भवति। आव० ३७६। सन्देहवर्जितम्। भग० १२१।

असंदीणो – असन्दीन, सन्दीनादितर जलप्लावनात् न क्षयमाप्नोति। उत्त० २१२। आदित्यचन्द्रमण्यादि। आचा० २४७। प्रचुरेन्धनतया चिरकालावस्थायि। आचा० २४७। कुतार्किकदुर्धर्षितोऽसन्दीन। आचा० २४८। पुनर्भ्रंशाप्राप्ततयाऽसन्दीन अक्षोभ्य, प्राणिना त्राणाय द्वीपभूमि। आचा० २४८।

असंधिए-असन्धित, असंयोजित। उत्त० २१२।

असंधिया-पीरजिता। नि० चू० प्र० १६१ अ।

असंनिहिसंचय-असंनिधिसंचय, न विद्यते संनिधिरूप संचयो यस्य स। जीवा० २७८।

असंपओगचिंता – कथंचिदभाव असंप्रयोगचिन्ता। आव० ५८९।

असंपओगाणुसरणं – मनि प्रयोग संप्रयोगानुस्मरणम्-चिन्तनम्। आव० ५८६।

असंपग्गहिया-असंप्रग्रहिता-संप्रग्रहरहितता। व्य० द्वि० ३९१ अ।

असंपत्त-असम्प्राप्त। दश० १९४। असम्प्राप्तम्। जीवा० १८१। विशिष्टान् वर्णादीननुपगत। जीवा० २१।

असंप्रग्रह –आत्मनो जात्याद्युत्सेकरूपग्रहवर्जनमिति भाव। ठाणा० ४२३।

असंप्रग्रहता-असम्प्रग्रह, समन्तात्प्रकर्षेण जात्यादिप्रकृतात्कर्षेण ग्रहणम्-आत्मनोऽवधारण सम्प्रग्रहस्तदभाव। जात्याद्यनुत्सिक्ततेति। उत्त० ३९।

असंफुरो-असफुट। बृ० तृ० ३ आ, बृ० द्वि० २२४ आ। सङ्कुचितपादो, ग्लान। बृ० द्वि० २२९ अ।

असंबद्ध-असम्बद्धम्, स्वशरीरात्पृथग्भूतम्। जीवा० १२०।

असंभंतं-असम्भ्रान्तम्, असम्भ्रान्तज्ञान। भग० १४०।

असंभवंता-अस भवन्त, ते गौरवत्रिकान्यतरदोषाज्ज्ञानादिके मोक्षमार्गे न सम्यग्भवन्त-नोपदेशे वर्तमाना। आचा० २५०।

असंभासो-असम्भाष्य। आव० २२१।

असंभमं-असम्भ्रम, न भय वर्तव्यम्। ओघ० ५२।

असंमत्तं-असम्यक्त्वम्, द्वाविंशतितम परीषह। आव० ६५७।

असंलोए – असंलोके, न विद्यते संलोको-दूरस्थितस्यापि स्वपक्षादेरालोको यस्मिंस्तत्। उत्त० ५१८। आचा० ३३५।

असंववहारिए – असांव्यवहारिक, अनादिकालादारभ्य निगोदावस्थामुपगता एवावतिष्ठन्ते ते व्यवहारपथातीतत्वात्। प्रज्ञा० ३८०।

असंविग्गा पासत्थोसण्णो कुसीलो संसत्तो अहच्छंदो। नि० चू० तृ० ३३ अ।

असंविभागी-असंविभागी-गुरुग्लानबालादिभ्य उचितमशनादि अन्ऽदीयमानशील सविभागी, न तथा य आत्मपोषकत्वेनैव स। उत्त० ४३४। आचार्यग्लानादीनामेषणागुणविशुद्धिमन्न मद्य विभजतेऽसौ। प्रश्न० १२९।

असंवुडए। नि० चू० प्र० २१६ आ।

असंवुडयउसो – असंवृतबकुश, यो मूलगुणादिष्वसंवृत सन् करोति, बकुशस्य चतुर्धा भेद। उत्त० २५६। भग० ८९०। प्रश्नोत्तरा। ठाणा० ३३७।

असंवुडे-असवृत, प्रमत्त । भग० ३१५ ।
असंशुद्धम्-सङ्कीर्णम् । आव० ७६० ।
असंसट्टा-दायगो असंसट्ठेहिं हत्थमत्तेहिं देतित्ति । नि० चू० तृ० १२ अ । असमृष्टा-अक्खरडिय । ठाणा० ३८६ ।
असंसारसमावण्णा-असंसारसमापन्ना, मुक्ता । प्रज्ञा० १८ ।
असंसारो-असंसार, संसारप्रतिपक्षभूतो मोक्ष । जीवा० ८ । न संसारोऽसंसार, मोक्ष । प्रज्ञा० १८ ।
असंहनन-असंघयण, आदिमानां त्रयाणां संहननानामन्य तमेनापि संहननेन विकल । व्य० प्र० ११४ अ ।
अस-अशानरूपाणि । व्य० द्वि० १२९ आ ।
असइ-असकृत्, अनेकधा । उत्त० ३१३ ।
असइ-अशति, अवाङ्मुखहस्ततलरूपा मुष्टि । जं० प्र० २४४ ।
असई-असती । ओघ० १४६ । सस्तरणाभावे । बृ० द्वि० १९३ आ ।
असईपोसणया-असतीपोषणता, असती पोषयति । आव० ८२९ ।
असक्कओ-असस्कृत, स्वभावसम्पन्न । आव० ११४ ।
असक्कय-असस्कृत, न विद्यते सस्कृत-सत्कारो यस्य स । असत्कृत -अविद्यमानसत्कार । प्रश्न० ४१ ।
असक्कयमसक्कय-असस्कृतासस्कृत, अविद्यमानसत्कारम त्कार । न विद्यते सस्कृत-सत्कारो यस्य सोऽसस्कृत, असत्कृत -अविद्यमानसत्कार । प्रश्न० ४१ ।
असगडताती-शकटासहन । (मर०)
असगडपिया-अशकटपिता, अशकटाया पिता । उत्त० ११० । नामविशेष । व्य० प्र० १८ अ । नि० चू० प्र० १५ अ ।
असगडा-अशकटा । उत्त० १२९, १३० । एतन्नाम्नी आभीरपुत्री । दश० १०१ ।
असगडाताए-अशकटापिता । व्य० प्र० १८ अ ।
असच्चसंधत्तणं - असत्यसन्धत्वम्, असत्य-अलीक सन्द धाति अभिप्रैति करोतीति, तद्भाव । द्वितीयाधर्मद्वारस्य पञ्चविंशतितम नाम । प्रश्न० २६ ।
असच्चो-असत्य, सत्योऽहित । प्रश्न० ३० ।
असज्झं(ब्भं)-असभ्यवचनं, कर्कश, कटुकं, निष्ठुरं, जकारादिक वा । नि० चू० तृ० ८० आ ।
असज्झाइयं - अस्वाध्यायिकम्, अशोभन आध्याय एव, रुधिरादि कारणे कार्योपचारात् । आव० ७३१ ।
असढ-शठभावरहित । ओघ० २२० ।
असढकारणो-'सढ' च्छादने, जो अप्पाणं मायाए छाति-असढो होऊणं करण करेति । नि० चू० तृ० १४९ अ ।
असढत्तणं-अशठत्वम् । आव० ५२ ।
असण-अशनम्, घृतपूर्णादि । आव० ८११ । मण्डकौदनादि, आशु-शीघ्र क्षुधा-बुभुक्षा शमयतीति । आव० ८५० । बीजक । आव० १८६ । अश्यत इत्यशनम्, मोदकादि । दश० १४९ । अश्यते-भुज्यत इति अशोदाराभिधानम् । उत्त० ६०० ।
असणवण-अशनवनम्, बीजवनम् । आव० १८६ । वनविशेष । भग० ३६ ।
असणि-अशनि, वज्रम् । दश० १६४ । आकाशे पतत्रग्निमय कण । जीवा० २९ । प्रज्ञा० २९ । वइरोयणिंदस्स अग्गमहिसी । भग० ५०४ । ठाणा० २०४ ।
असणिमेहा-अशनिमेघा, करकादिनिपातवन्त, पर्वतादिदारणसमर्थजलत्वेन वज्रमेघा । जं० प्र० १६८ । करकादिनिपातवन्त पर्वतादिदारणसमर्थजलत्वेन वा वज्रमेघा । भग० ३०६ ।
असणे-अशन, वृक्षविशेष । प्रज्ञा० ३१ । बीयक । उत्त० ६५३ ।
असण्णातय-असज्ञातीय । आव० ८४६ ।
असतिं-असकृत्, अनेकवारम् । जीवा० १२८ ।
असतिणिवेसणे । नि० चू० प्र० १६१ अ ।
असतिवाडगा । नि० चू० प्र० १६२ अ ।
असतिसाहीओ । नि० चू० प्र० १६२ अ ।
असत्थ-अशस्त्रम्, सप्तदशभेद संयम । आचा० ५२ ।
असत्थस्स-अशस्त्रस्य, निरवद्यानुष्ठानरूपस्य संयमस्य । आचा० १५६ ।
असदभ्यारोपणम्-आव० ८२१ ।
असद्-अविद्यमानम् । उत्त० ३४७ ।

असद्दहंतो-अश्रद्दधान, अश्रद्दधान । आव० १८१ ।
असद्दहण-अश्रद्धानम् । आव० ५७३ ।
असद्भुते-साधो कर्मयुक्ते । आचा० २४२ ।
असनिरूवेण-ईतिरूपो हि पतङ्गादेरापात इति दश० १६४ ।
असनो-अशन, बीयक । आचा० ४११ ।
असन्निआउए-असंज्ञ्यायु, असञ्ज्ञी सन् परभवयोग्य यद्-मायु । भग० ५१ ।
असन्निभूए-असञ्ज्ञिभूत, असञ्ज्ञिभ्य उत्पन्न । प्रज्ञा० ५५८ ।
असन्निभूय-असञ्ज्ञीभूता, असञ्ज्ञिनो या जायते सा । प्रज्ञा० ३३१ ।
असन्नी-असञ्ज्ञी, मिथ्यादृष्टिरमनस्को वा । प्रज्ञा० ३३९ । यथोक्तमनोविज्ञानविकल । प्रज्ञा० ५१३, ४०७ ।
असबलायारे-अशबलो यस्य सितासितवर्णोपेतबलीवर्द इव कर्बुर आचारो-विनयशिक्षाभाषागोचरादिक । व्य० प्र० ३३५ अ ।
असबलो-अशबल, एकान्तशुद्ध । उत्त० २५७ ।
असब्भं – असभ्यम्, अनुचित जकारमकारादि । आव० ५८८ ।
असब्भावं-असद्भावम्, अविद्यमाना सन्त –परमार्थसन्तो भावा–जीवादयोऽभिधेयभूता यस्मिन् तत् । उत्त० ५५१ ।
असब्भावणिहुतर–रहस्य पार्श्वत पुरोहडेऽङ्गणे मध्ये वा । बृ० तृ० २२ आ ।
असब्भावठवणा – एक एवाक्ष पिण्डकल्पनया बुद्ध्या कल्प्यते तत् । ओघ० १२९ । असद्भावस्थापना, असद्भावकल्पना । जीवा० १२२ ।
असब्भावपट्ठवणा-असद्भावप्रस्थापना । आव० १५१ ।
असब्भावभावणा-असद्भावभावना । उत्त० १६५, २२३ ।
असब्भावुब्भावणा – असद्भावोद्भावना । उत्त० १५७ । आव० ३१४ ।
असब्भावो असद्भाव । आव० ३२० ।
असब्भूए – असद्भूतम् अभूतोद्भावनरूपमयोमनर्थं वा । भग० ३३० ।
असब्भूय-असद्भूतम्, अनृतम् । आव ५८८ ।
असब्भम अप्लीलम् । आव० ८३८ । खरपरुषादि । उत्त० ३४७ ।

असमंजसं-अननुकूलम् । उत्त० २२६ ।
असमओ – असमय, असम्यगाचार, द्वितीयाधर्मद्वारस्य पञ्चविंशतितम नाम । प्रश्न० २६ ।
असमणपाउग्गो-अश्रमणप्रायोग्य । आव० ७७८ ।
असमणुन्न – असमनुज्ञ, आचाराङ्गेऽष्टमाध्ययनस्य प्रथमोद्देशक । आचा० २६० । असमनोज्ञा, असाम्भोगिका । ओघ० ५४ ।
असमत्थी-अतिभारेण न शक्नुवन्ति पलानि धारयितुम् । आचा० ३९१ ।
असमाणो-असमान, न विद्यते समानोऽस्य गृहिष्वाश्रयमूर्च्छितत्वेनान्यतीर्थिकेषु वाऽनियतविहारादिनेति, असदृश समानो वा साहङ्कारो न तथेति । उत्त० १०७ ।
असमारभमाणस्स – असमारभमाणस्य, सङ्घट्टादीनामपरिहरत । ठाणा० ३२४ ।
असमासद्दोसो-असमासदोष, समासव्यत्यय सूत्रदोषविशेष । आव० ३७४ ।
असमाहडा-असमाहृता, अनङ्गीकृता । सूत्र० ३१४ ।
असमाहडाए-असुद्धया लेश्यया–उद्गमादिदोषदुष्टमिदमिथैव चित्तविप्लुता । आचा० ३३८ ।
असमाहि असमाधि, अस्वास्थ्यनिबन्धना कायादिचेष्टा । आव० ४९९ । समाधि –समाधानं–ज्ञानादिषु चित्तैकाग्र्य न समाधि । उत्त० ६१४ । चित्तोद्वेगरूपम् । उत्त० ७०१ ।
असमाहिकरो असमाधिकर, अस्वास्थ्यनिबन्धनकर । आव० ४९९ ।
असमाहिठाणा – असमाधिस्थानानि, न विद्यमाहस्य स्थानानि । प्रश्न० १४४ । सम० ३७ ।
असमिक्खियप्पलावी – बुद्धाए अणुहिय पुव्वावरं इह परलोयगुणदोस वा ना सहसा भण्इ । नि० चू० तृ० ८० आ । असमीक्षितप्रलापी अपर्यालोचितार्थवक्ता । प्रश्न० ३० ।
असमित्त-अश्रामत्र । निन्० ९३८ ।
असमीक्ष्य अनालोच्य । उत्त० ३६७ ।
असमोहएण-अनुपयुक्तात्मना । भग० ५८९ ।
असमोहयाविं-दण्डादुपरता असमुद्घाता वा । भग० ७६४ ।
असम्मोहे – असम्मोह स्वाभिप्रेतमायाजनितस्य सूक्ष्म

पदार्थविषयस्य च सम्मोहस्य मूढताया निषेधात्। ठाणा० १९२।

असरण–अशरणः, शरणरहितः, अर्थत्रापकाभावात्। प्रश्न० ११। अर्थकारकविरहितः। प्रश्न० १९। गृहं नास्ति शरणं यस्यासावशरणः संयतः। आचा० ३०३। शरणमनालम्बमानोऽदीनमनस्कः। आचा० ३०६।

असहीण–अस्व। बृ० द्वि० १८७ अ। अस्वाधीनः, परायत्त। आचा० १५२।

असहु–सुकुमारो राजपुत्रादिप्रव्रजितः। ठाणा० ३३८। अशक्तः। नि० चू० प्र० ३६० अ। असहिष्णु। ओघ० १४३। सुकुमारशरीरं। उत्त० मा० गा० ४०३। असमर्थ.–राजपुत्रादि.। ओघ० ३३८।

असहु–असमर्थ–क्षुत्पीडितः। ओघ० ४४। राजादिदीक्षित। बृ० द्वि० २१४ अ। रायाजुवराया सेट्ठि अमच्चपुरोहिया य एते असहू। नि० चू० प्र० १०१ अ। भिक्षावेलां प्रतिपालयितुमशक्त। ओघ० ८६। असहिष्णु.। आव० ८५८। असमर्थ। ओघ० १५५।

असांव्यवहारिक.–छेद। आव० ५२७।

असाय–असात, असातोदयकलित। जीवा० १३०।

असाढभूई–आषाढभूतिः, मायापिण्डोदाहरणे धर्मरुचिशिष्य। पिण्ड० १३७।

असाढय–तृणविशेष। प्रज्ञा० ३३।

असाढा–अषाढा, पूर्वोत्तराषाढानक्षत्रविशेष। आव० १००।

असाधु–असाधव, असयता। ठाणा० १९९।

असामन्नं असामान्यम्, असाधारणम्। सूर्य० २३८।

असारजरढा–अकालजरा। ओघ० २१८।

असारणा–अगवेषणा। बृ० प्र० १५६ अ।

असारयणा–अगवेषणा। नि० चू० द्वि० १३६ अ।

असारहिय–असारथिक, सारथिरहित। भग० ३२२।

असारिय–असागारिक। नि० चू० द्वि० ३१ आ।

असासयं–अशाश्वतम्, अशाश्वतस्य प्रथमं पर्याय। ओघ० २२२।

असासय–अशाश्वतम्, प्रतिक्षणमावीचीमरणेन मरणम्। आचा० ९६। अशाश्वतम्। भग० ४६९।

असासयं–अशाश्वतम्, प्रतिक्षणं विनाशित्वम्–अनित्यम्। प्रश्न० ९६।

असाहुया–असाधुता, दौष्ट्यभावना। उत्त० ११४।

असाहु–असाधु, अशोभनभावसाधुर्वा। उत्त० ५८।

असि–असिः, खड्गः। जीवा० ११०। भग० १८३। प्रज्ञा० ९७। तलवारः। आव० ५८८, ४८७, ३६०। खड्गाभ्यासम्। प्रश्न० ९७। खड्ग.-करवालः। भग० १९१। शस्त्रविशेषः। आव० ३६०।

असिअं–असितम्, कृष्णमशुभं च संक्लेशानुबन्धित्वात्। आव० ४३९।

असिअपत्त–दात्रेण। भग० ६९०।

असिय–असितः–अबद्ध–नैः सार्धं संगमकुर्वन् भिक्षु। अचा० ४३०।

असिकच्छप–असिकच्छपः, कच्छपविशेषः। मम० १३५।

असिक्खग–अशिक्षकः, चिरप्रव्रजितः। दश० ३९।

असिखेडगं–असिखेटकम्, असिना सह फलकम्। प्रश्न० ७९।

असिचम्मपायं–असिचर्मपात्रम्–स्फुरक, अथवा असि.–खड्गधर्मपात्रं च–स्फुरक, खड्गकोशको वा। भग० १९१।

असिचम्मपायहत्थकिच्चगय–असिचर्मपात्रहस्तकृत्यगत, असिचर्मपात्रं हस्ते यस्य स तथा कृत्यं–सङ्ग्रामादिप्रयोजनं गत'–आश्रित कृत्यगतस्तत. कर्मधारय, अथवाऽसिचर्मपात्रं कृत्वा हस्ते कृत येनासौ असिचर्मपात्रहस्तकृत्याहन', प्राकृतत्वाच्चैवं समास', अथवाऽसिचर्मपात्रस्य हस्तकृत्यं–हस्तकरणं ततः–प्राप्तो य. स तथा। भग० १९१।

असिट्ठो–अशिष्ट, अप्रतिपादित। प्रश्न० १११। अशिष्ट'। आव० २१८।

असिणाइ – अन्ये श्रमणादयो येऽमुमप्रविष्टमशितवन्त। आचा० ३३७।

असिणाणय–अस्नानतया। आचा० ३६४।

असिता–गृहवासविमुक्ता। आचा० २२३।

असिद्ध–न सिद्ध', हेत्वाभासविशेष। ठाणा० ४९३। संसारी। जीवा० ४३६।

असिपंजरं–असिपञ्जरम्, मण्डितपञ्जरम्। प्रश्न० ११०।

असिपत्त–असिपत्र, असीनां पत्रम्। विपा० ७१। खड्गपत्रम्। जीवा० १०६। असिः–खड्ग, स इव पत्रम्। ठाणा० २७३। असय–खड्गाकाण्डेङ्कनतया पत्राणि–पर्णानि यस्मिंस्तत्। उत्त० ४६०। प्रज्ञा० ८०। परमा-

धार्मिकेषु नवम । उत्त० ६१४ । नवम परमाधार्मिक । आव० ६५० । सूत्र० १२४ । सम० २९ ।

असिपुत्रिक । उत्त० ४५ ।

असिय-असित, कृष्ण । प्रज्ञा० ९१ ।

असियअं-दात्रम् । आव० २५५ ।

असियग-असियगम्, दात्रम् । आचा० ६१ ।

असिरयणं - असिरत्नम्, चक्रवर्तेरेकेन्द्रियपञ्चमरत्नम् । जं० प्र० २३८ । ठाणा० ३९८ ।

असिलट्ठी-असियष्टि, खड्गलता । विपा० ५६ । असि-खड्ग स एव यष्टि-दण्डोऽसियष्टि, अथवा असिश्च यष्टिश्च । जं० प्र० २६४ ।

असिलायं-विलसम् । बृ० तृ० २१ आ ।

असिलिट्ठं-अश्लिष्टम् । आव० ९९ ।

असिलोगभए - अश्लोकभयम्, अकीर्तिभयम् । ठाणा० ३८९ । अश्लाघाभयम् । आव० ४७२ ।

असिलोगो-अश्लाघा, अयश । आव० ६४६ ।

असिव-अशिवम्, व्यन्तरकृतं व्यसनम् । आव० ६२६ । उद्दाइयाए अभिद्रुत । नि० चू० प्र० ९७ अ । नि० चू० प्र० ७१ अ । व्यन्तरकृत उपद्रव । बृ० प्र० २२१ अ । देवतादिजनितो ज्वराद्युपद्रव । ओघ० ११, १४ ।

असिवाइखेत्तं-अशिवादिक्षेत्रम्, अशिवादिप्रधानं क्षेत्रम्, आदिशब्दादवमोदरताराजद्विष्टादिपरिग्रह । दश० ३९ ।

असिवुवसमणी-अशिवोपशमनी कृष्णस्य चतुर्थी भेरी । आव० ९७ ।

असिवोवसमणी-अशिवोपशमनी, कृष्णस्य चतुर्थी भेरी, पण्मासात् सर्वे रोगोपशमनी । बृ० प्र० ५६ अ ।

असी-असि, अस्युपलक्षित मनुष्यपुरुष । जीवा० २५० । [illegible] । नि० चू० द्वि० १४१ अ । खड्ग, असुरसीह्य जन [illegible] भवति, यत्र मादवर्णरक्षणया अभिशब्दन अत्र अभ्युपगमिता पुरुषा गृह्यन्ते । जं० प्र० १०२ ।

असील-अशील, अविद्यमानशील, सर्वथा विनष्टशील धर्म । उत्त० ३४० । अशीला-कुशीला । ठाणा० १०३ ।

असीलिया-अशीलता नारित्रवर्जितत्वात् । अब्रह्म नाम [illegible] नाम । प्रश्न० ६६ ।

असुआ-असूया, असूयाकम्, ईर्ष्या । दश० २४३ ।

असुइ-अशुचि अशुचिर्वा । पञ्च० ६१ । स्नानब्रह्मचर्यादिवर्जितत्वात् अशुचि, शास्त्रवर्जितो वा अश्रुति । भग० ३०८ । स्नानब्रह्मचर्यादिवर्जिता, अश्रुतय, शास्त्रवर्जिता । जं० प्र० १७० । विगन्ध शरीरमलादि । जीवा० २८२ ।

असुण्णंतरा अशून्यान्तरा, एकोत्तरवृद्ध्या सर्वदैवाशून्या न्यव्यवहितान्यन्तराणि यासां ता अशून्यान्तरा । विशे० ३३१ ।

असुति-अशुचीनि, अमेध्यानि मूत्रपुरीषाणि । ठाणा० ४०६ ।

असुद्ध-अशुद्धम्, आधाकर्मादि । ओघ० १७७ ।

असुन्नकाल-अशून्यकाल, नारकभवानुगमसमारावस्थानका [illegible] द्वितीयभेद । भग० ४७ ।

असुभ-अशुभकार्ये मृतकस्थापनादौ । व्य० प्र० १६९ अ ।

असुभजोग-अशुभयोग, अनुपयुक्ततया प्रत्युपेक्षादिकरणम् । भग० ३२ ।

असुभणाम - अशुभनाम, यदुदयवशात् नाभेरधस्तना पादादयोऽवयवा अशुभा भवन्ति तत् । प्रज्ञा० ४७४ ।

असुभत्ता-अशुभता, न शुभता । प्रज्ञा० ५०४ । अश [illegible] । भग० २५३ ।

असुभाणुप्पेहा-अशुभानुप्रेक्षा, अशुभ । संसारस्यानुप्रेक्षा-अनुस्मरणम् । ठाणा० १८८ ।

असुभाते-असुखाय-दुःखाय । ठाणा० १४९ । अशुभाय, अपुण्यबन्धाय असुखाय वा । ठाणा० २९२ । पापाय, असुखाय वा-दुःखाय । ठाणा० ३०८ ।

असुयंग-अश्रुताङ्गम्, नोश्रुताङ्गम् । उत्त० १४४ ।

असुय-अश्रुत परवचनद्वारेण । भग० २००, ११३ ।

असुर-रौद्रकर्मकारी । उत्त० २७६ ।

असुरकुमार-असुरकुमारा, देवाधीना । भग० १०७ । असुराश्च ते नवयौवनतया कुमारा इव कुमाराश्चासुरकुमारा । ठाणा० २८ । भवनपतिभेदविशेष । प्रज्ञा० ६० ।

असुरकुमारीओ-असुरकुमार्य, देवीविशेषा । भग० १०७ ।

असुरद्दारे-विदायतनस्य द्वितीयं द्वारम् । ठाणा० २१० ।

असुरसुरं-असुरसुरम्, [illegible] । भग० ११४ । [illegible] । ओघ० १८७ । [illegible] । प्रज्ञा० १३० ।

असुरा - असुरा न सुरा असुरा, भवनपतिदेवा । ठाणा० २३ । भवनपतिदेवा भवनपति [illegible] वा ।

ठाणा० १०४। असुरकुमार । भग० १३५। भवनपति व्यन्तरलक्षण । ठाणा० ४६६।

असुरो-असुर, आसुरभावान्वितत्वाद् यक्ष । उत्त० ३६६। भवनवासी। बृ० द्वि० २६४ अ।

असुह-अशुभम्, अशुभस्वभावम्। भग० ७२। अशुभ-अतीवासातरूप । जीवा० १०३।

असुहदुक्खभागी - असुखदुःखभागी, दुःखानुबन्धिदुःख भागी। भग० ३०८।

असुहया-अशुभदा, असुखदा। आव० २३६।

असुहिय-असुखित, अविद्यमानसुहृद् वा। प्रश्न० ४१।

असूइअ-असूचितम्, व्यञ्जनादिरहितम्। दश० १८१।

असूयया-साक्षात्। ठाणा० ३०४।

असूयपुत्तो-असूयपुत्र । आव० २११।

असूया-अप्पणो दोस भासति ण परस्स। नि० चू० प्र० २७८ अ। आत्मगता। नि० चू० प्र० २७८ अ।

असूत्वा-स्फुटमेव परदोषोद्घट्टनम्। बृ० प्र० १२८ अ।

असेयं-सुख। नि० चू० प्र० ८८ आ।

असोंढो-अमज्जपाणो। नि० चू० द्वि० १४४ अ।

असोअ-अशोक, सुप्रभबलदेवपूर्वभवनाम। आव० १६३। अरुणद्वीपे महर्द्धिको देवविशेष । जीवा० ३६७। द्विमत तितमग्रह । ज० प्र० ५३५। वृक्षविशेष । जीवा० २२२। किन्नरव्यतराणां चैत्यवृक्ष । ठाणा० ४४२। अशोकनामदेव । ज० प्र० ३२०। लताविशेष । प्रज्ञा० ३२। बिन्दुसारपुत्र । बृ० प्र० ४७ अ। वृक्षविशेष । भग० ८०३। एकास्थिकवृक्षविशेष । प्रज्ञा० ३१। ठाणा० ७९। मल्लिनाथस्य चैत्यवृक्ष । सम० १५२। विजयपुरस्य नन्दन वनोद्याने यक्ष । विपा० ९५। बिंदुसारपुत्तो। नि० चू० प्र० २४३ अ।

असोगचंदो-अशोकचन्द्र, योगसंग्रहेषु शिक्षाया दृष्टान्त । आव० ६७९।

असोगदत्तो-अशोकदत्त, मायोदाहरणे साकेतपुरे समुद्रदत्तसागरदत्तपिता। आव० ३९४।

असोगललिए-चतुर्थबलदेवपूर्वभवनाम। सम० १५३।

असोगवण - अशोकवनम्। आव० १८६। पुष्करिण्या वनम्। ठाणा० २३०। वनखण्डनाम। ज० प्र० ३२०। भग० ३७।

असोगसिरी - पाडलिपुत्ते असोगसिरी राया। नि० चू० तृ० ४४ आ। बृ० द्वि० १५३ आ। अशोकश्री, बिन्दुसारपुत्र । विशे० ४०९।

असोगा-अशोका, नलिनविजयराजधानी। जं० प्र० ३५७। नागकुमारेन्द्रस्याग्रमहिषी। भग० ५०४। ठाणा० २०४।

असोच्चा-अश्रुत्वा। भग० ४२५। आगमानपेक्षम्। भग० ४५५।

असोणिअ-अशोणितम्, रक्तरहितम्। आव० ७६४।

असोत्थो-अश्वत्थ । आव० ४१७।

असोयणया-अशोचनता, दैन्यानुत्पादनेन। भग० ३५।

असोयलया-अशोकलता, लताविशेष । भग० ३०६।

असोयवडेंसए। भग० १९४।

असोयाओ। ठाणा० ८०।

असोही-अशोधि, प्रतिसेवना, स्खलना। ओघ० २२५।

अस्तमयनप्रविभक्तिः-नाट्यभेद । जं० प्र० ४१६।

अस्तान्ते-अत्थंतमि, अस्तमयपर्यन्ते। उत्त० ४३५।

अस्ति-अत्थि, प्रदेश । ठाणा० १५, ५१६।

अस्तिकायः-अत्थिकाय, धर्मादिपञ्चविधास्तिकायमाश्रित्य काय । आव० ७६७।

अस्तिकायधर्म - अत्थिकायधम्म, अस्तिशब्देन प्रदेशा उच्यन्ते, तेषां कायो-राशिरस्तिकाय स चासौ संज्ञया धर्मश्चेति गत्युपष्टम्भलक्षण धर्मास्तिकाय । ठाणा० १५४। योऽस्तिकायानां धर्मादीनां धर्मो-गत्युपष्टम्भादि । उत्त० ५६६।

अस्तिकायाः-अत्थिकाया, अस्तीत्यय त्रिकालवचनो निपात, अभूवन् भवन्ति भविष्यन्ति चेति भावना, अतोऽस्ति च ते प्रदेशानां कायाश्च राशय इति, अस्तिशब्देन प्रदेशा क्वचिदुच्यते, ततश्च तेषां वा काया अस्तिकाया । ठाणा० १९६। अस्तीना-प्रदेशानां सङ्घातात्मकत्वात् काय । ठाणा० १५।

अस्तिनास्तिप्रवादपूर्वम् - अत्थिनत्थिप्पवातपुव्व, चतुर्थ पूर्वम्। ठाणा० ४८४। तत्र यद्वस्तु लोकेऽस्ति धर्मास्तिकायादि यच्च नास्ति खरशृङ्गादि तत् प्रवदति, सर्वं वस्तु स्वरूपेणास्ति पररूपेण नास्तीति प्रवदति। नदी १४१।

अस्थानस्थापनम् - अठाणठवण - अयोग्यस्थापनम् । ओघ० १३१।

अस्थिका-अट्ठिय, कपास्थिपर्याय । व्य० प्र० २०६ अ।

अस्थितकल्पिकः-साधुभेदविशेषः । भग० ४१ ।
अस्थिमिंजा-अट्ठिमिंजा, अस्थिमध्यरसः। ठाणा० १७०।
अस्थिमिंजानुसारि-अट्ठिमिंजाणुसारी। ठाणा० ३७५।
अस्थिरम्-अथिरं, जीर्णम् । आचा० ३१६ ।
अस्थिरणाम-(अथिरणाम), यदुदयवशाज्जिह्वादीनामवयवानामस्थिरता भवति तत् । प्रज्ञा० ४७४ ।
अस्निहः-(अणिह), स्निह्यते-श्लिष्यतेऽष्टप्रकारेण कर्मणेति स्निहः, न स्निहोऽस्निहः, यदि वा स्निह्यतीति स्निहो रागवान् यो न तथा सोऽस्निहः, उपलक्षणार्थत्वाच्चास्य रागद्वेषरहित इत्यर्थः। आचा० १५१। स्नेहरहितः। आचा० २१०। स्निह्यतीति स्निहो, न स्निहोऽस्निहः-रागद्वेषरहितत्वात् अप्रतिबद्धः। आचा० २५८।
अस्पृशद्गति-समयप्रदेशान्तरमस्पृशती। आव० ४४१।
अस्फुटितम्-अफुडिआ, सर्वविराधनापरित्यागः। दश० १९६।
अस्संजए-असंयतः-गृहस्थः, स च श्रावकः प्रकृतिभद्रको वा। आचा० ३२६। असंयताः-असंयमवन्तः, आरम्भपरिग्रहप्रसक्ताः, अब्रह्मचारिणः। ठाणा० ५२४।
अस्संजतो-गिहत्थो। नि० चू० प्र० २० आ।
अस्संजमो-असंयमः, प्राणातिपातादिलक्षणः। आव० ५१६।
अस्संपडियाए-न विद्यते स्वं-द्रव्यमस्य सोऽयमस्वो निर्ग्रन्थ इत्यर्थः, तत्प्रतिज्ञया। आचा० ३२५।
अस्सकण्णी-अश्वकर्णी, वनस्पतिविशेषः। आचा० ५७। साधारणवनस्पतिकायिकभेदः। जीवा० २७।
अस्सकन्न-साधारणबादरवनस्पतिकायविशेषः। प्रज्ञा० ३४।
अस्सकन्नी-अनन्तकायभेदः। भग० ३००। भग० ८०४। कन्दविशेषः। उत्त० ६९१।
अस्सतरो-अश्वतरः, खरतरः, एकखुरश्चतुष्पदः। जीवा० ३८। एकखुरचतुष्पदः। प्रज्ञा० ४५।
अस्सपुरं-अश्वपुरम्, पुरुषसिंहपुरम्। आव० १६२।
अस्सपुरा-अश्वपुरी, पक्ष्मविजयराजधानी। जं० प्र० ३५७।
अस्सरोनिवाए-अप्परोनिपातः, चप्पुटिका। जीवा० ३९९।
अस्सगालापेलयं। आचा० ४०३।
अस्सलेसा-नक्षत्रविशेषः। ठाणा० ७७।
अस्सवाणियओ-अश्ववणिक्। आव० २२०।
अस्सवाहणिया-अश्ववाहनिका। उत्त० २७७। आव० ५६।
अस्ससेणे-अश्वसेनः, सनत्कुमारपिता। आव० १६२। पार्श्वपिता। आव० १६१।
अस्सादणसगोत्ते-आस्वादनसगोत्रम्, अश्विनीनक्षत्रगोत्रम्। सूर्य० १५० ।
अस्सामिणी-अस्वामिनी। आव० ३२४।
अस्सायणे-आश्वायनम्, अश्विनीगोत्रम्। जं० प्र० ५००।
अस्सासणे-अष्टाशीतिमहाग्रहे चतुर्दशमहाग्रहः। ठाणा० ७८।
अस्सासो-आश्वासः, प्राणिनामेव आश्वासनम्, अहिंसायाः पञ्चाशत्तमं नाम। प्रश्न० ९९।
अस्सिं-अयम्। ठाणा० १३८।
अस्सिंपडियाए-एतत्प्रतिज्ञया एतान् साधून् प्रतिज्ञाय-उद्दिश्य। आचा० ३६१।
अस्सिंलोए-अयं लोकः, अयं मनुष्यलोकः। जीवा० ३४८।
अस्सिणि-अश्विनी, नक्षत्रविशेषः। सूर्य० १३०। ठाणा० ७७। मेतार्यजन्मनक्षत्रम्। आव० ३५५।
अस्सीइ-अश्विनी, नक्षत्रविशेषः। ठाणा० ४६६।
अस्सेसा-अश्लेषा। सूर्य० १३०।
अस्सो-अश्वः, घोटकः, एकखुरश्चतुष्पदः। जीवा० ३८। अश्वः। जीवा० २८४। प्रज्ञा० ४५।
अहं-अधः-अधस्तात्। आचा० ६३। अधः-बुध्ने। ओघ० १६८।
अह-एए। नि० चू० प्र० ११८ आ। व्य० प्र० १०३ आ। अयं। नि० चू० द्वि० ९२ आ।
अहक्खाओ-यथास्थितः। (सं०)
अहक्खायं-अथाख्यातम्, अथशब्दो यथार्थे, आङ्-अभिविधौ, याथातथ्येनाभिविधिना वा यत् ख्यातं-कथितं अकषायं चारित्रम्। प्रज्ञा० ६८। यथाख्यातम्-अकषायमित्यर्थः। विशे० ५४७। यथाख्यातं-सूक्ष्मसम्परायानन्तरं सर्वत्र साधुजीवलोके ख्यातं-प्रसिद्धं, पश्चमं चारित्रम्। विशे० ५५५। यथाख्यातं-यथैवाख्यातम्-अकषायम्। आव० ७८। यथैवाख्यातं-यथाख्यातं प्रसिद्धं सर्वस्मिन् जीवलोके, अकषायचारित्रमिति। आव० ७९।

अथशब्दो यथार्थे, आख्यात-अभिहित अथाख्यातम्। ठाणा० ३२४।

अहक्खित्तो | नि० चू० प्र० १६४ अ।

अहगुरु-येन प्रव्राजितो यस्य वा पार्श्वे अधीत, रत्नाधिकतरक। व्य० द्वि० ३९५ अ।

अहछंदो-यथाछन्द, यथेच्छयैवाममनिरपेक्ष प्रवर्त्तते य। आव० ५१८।

अहछंदिया-अथाछन्दिका, अव्यापारिता, स्वय प्रवृत्ता। बृ० द्वि० २६१ अ।

अहण्णो-अधन्य। उत्त० ३२९।

अहतह यथातथ, सूत्रकृताङ्गाद्यश्रुतस्कन्धे त्रयोदशमध्ययनम्। आव० ६५१। सूत्रकृताङ्गस्य त्रयोदशमध्ययनम्। उत्त० ६१४।

अहतानि | भग० ५०६।

अहत्ता-अधस्ता, गुरुपरिणामता। प्रज्ञा० ५०४। भग० २१। जघन्यता। भग० २५३।

अहत्थे-यथास्थान्, यथावस्थितान् यथार्थान् वा-यथाप्रयोजनान् भावान् जीवादीन्, यथा द्रव्यान्, पर्यायान्। ठाणा० ३५१।

अहप्पहाण-यथाप्रधान। भग० ६७९, ६८३। यथाप्रधान, यो यत्र प्रमादौ प्रधान। ओघ० ५९।

अहमं-अधमम्, जघन्यम्। आव० ५८५।

अहमंती-अह अन्त इति अन्तो-जात्यादिप्रवर्षपर्यन्तोऽस्यास्तीयन्त अहमेव जात्यादिभिरुत्तमतया पर्यन्तवर्त्ती। ठाणा० ४७३।

अहमिंदा अहमिन्द्राणि, अह अह इत्येवमिन्द्रा। सम० ४३।

अहमो-अधम, मलाविन्त्वाज्जुगुप्सित। सूत्र० ८२।

अहम्म-अधम, अप्रयम। दश० २७१। धर्मविपक्ष-पापम्। उत्त० २७४। धर्मप्रतिपक्ष। उत्त० २४८। अधर्म, अधर्मपोषकं दान अधर्मकारणत्वात्। ठाणा० ४९६। भारहरामायणादिपावसुत। नि० चू० द्वि० ४ आ। धर्मविपक्ष विपर्यासश्चिरूप्यम्। उत्त० २८५।

अहम्मक्खाई अधर्माख्यायिन, न धर्ममाख्यान्तीत्येवशीला न धर्मान् ख्यातिर्यषा ते। भग० ५६०।

अहम्मखाई-अधर्माख्यायी, अधर्मभाषणशील। अधर्मख्याति-अधार्मिकप्रसिद्धिर्को वा। विपा० ४८।

अहम्मजुत्तं-अधर्मयुक्तम्, पापसम्बद्धम्। दश० ५२।

अहम्मपलज्जणे-अधर्मप्ररञ्जन, अधर्मे हिंसादौ प्ररज्यते अनुरागवान् भवतीति। विपा० ४८।

अहम्माणी-अहमानी, अहमेव विद्वान् इति मानोऽस्येति। आव० २४१।

अहम्माणुए-अधर्मानुग, अधर्मान्-पापलोकान् अनुगच्छतीति। विपा० ४८।

अहम्मिट्ठा-अधर्मीष्टा अधर्मिष्ठा वा-धर्म-श्रुतरूप एवेष्टो-वल्लभ पूजितो वा येषा ते धर्मेष्टा, धर्मिणां वेष्टा धर्मीष्टाः अतिशयेन वा धर्म्मिणो धर्मिष्ठास्तन्निषेधादधर्मेष्टा अधर्मीण अधर्मिष्ठा वा। भग० ५६०।

अहम्मिट्ठे-अधर्मिष्ठ, अतिशयेनाधर्मी-धर्मरहित। विपा० ४८। अधर्मेष्ठ, अधर्मो-धर्मविपक्ष-पापमिति स इष्ट-अभिलषितोऽस्येति, यद्वा अधर्मगुणयोगादधर्म, अतिशयेनाधर्मी। उत्त० २७४।

अहम्मियं-आधार्मिक-अधार्मिकाणामिदम्। प्रश्न ११०।

अहय-अहतम्, मलमृषिकादिभिरनुपद्रुपितं, प्रत्यग्रमिति। औप० ६६। अव्यवच्छिन्नम्। औप० ७४। अपरिमलितम्। जीवा० २५४। तत्तुगत। नि० चू० प्र० २५३ अ। आख्यानकप्रतिबद्धम्, अव्याहत, नित्य, नित्यानुबन्धि वा। जीवा० २१७। प्रज्ञा० ८९। ज० प्र० ६१। अव्याहतम्। भग० १५४। सूर्य० २६७। अपरिभुक्तम्। भग० २५४।

अहर-अधरम्, अध-नरकतिर्यक्। दश० २०१। नरक। आव० ५३२।

अहरगतिगमणं-अधरगतिगमनम्, अधोगतिगमनकारणम्। प्रज्ञा० ३६८।

अहराई-अहोरात्रिकी। आव० ६४८।

अहव-अथवा-अथार्थे। विशे० ११३०।

अहवण-अथवा। बृ० द्वि० १४ आ। विकल्पप्रदर्शने। नि० चू० प्र० २९० अ। विकल्पार्थो निपात। बृ० द्वि० २४६ आ।

अहवा-अनन्तरम्। नि० चू० प्र० १८ आ। अथ निपात। नि० चू० प्र० १६८ आ।

अहव्वणवेद-अथर्वणवेद, चतुर्णां वेदाना चतुर्थ वेद। भग० ११२।

अहसंथडं-निष्प्रकम्पं चम्पकपट्टादि। बृ० तृ० ३१ अ।
अहसिता-न सहेतुकमहेतुकं वा हसन्तेवास्ते। उत्त० ३४५।
अहसुद्धो-यथाशुद्ध, निर्दोषोपदेशदाता। बृ० तृ० ७१ आ।
अहसिरे-अहसनशील। उत्त० ३४५।
अहस्ससच्चे-अहास्यात्सत्य, हास्यपरित्यागात्सत्य, द्वितीयव्रतस्य प्रथमा भावना। आव० ६५८।
अहाअरथं-यथार्थम्-निर्युक्त्यादिव्याख्यानानतिक्रमेणेत्यर्थ। ठाणा० ३८८। अर्थस्य निर्युक्त्यादेरनतिक्रमेण। ठाणा० ५१९।
अहाउअकाल-यथायुष्ककाल, देवाद्यायुष्कलक्षण। दश० ९।
अहाउनिव्वत्तिकाले-यथायुर्निर्वृत्तिकाल, यथा-येन प्रकारेणायुषो निर्वृत्ति-बन्धनं, तथा य काल-अवस्थितिरसौ। भग० ५३३।
अहाउयं-यथायुष्कम्, यथाबद्धमायुष्कम्। प्रश्न० १९। यथायुष्कम्। आव० ११५, २५८। यथायु-आयुषोऽनतिक्रमेण। उत्त० १८८।
अहाकडं-यथाकृतम्, गृहस्थेन स्वार्थं निर्वर्तितम्। प्रश्न० १२७।
अहाकडा-आधाकृता, साधूनाधाय-मनःप्रधार्य कृता। बृ० प्र० ९२ अ।
अहाकप्पं-यथाकल्पम्, प्रतिमाकल्पानतिक्रमेण तत्कल्पवस्त्वनतिक्रमेण वा। भग० १२४। कल्पनीयानतिक्रमेण प्रतिमासमाचारानतिक्रमेण वा। ठाणा० ३८८।
अहाकम्मं-यथाकर्म, बद्धकर्मानतिक्रमेण। भग० ६५।
अहाकम्मिए। भग० ४६६।
अहागडा-याथाकृतानि, अल्पपरिकर्माणि। ओघ० ९२।
अहागडे-यथाकृतम्, आत्मार्थमभिनिर्वर्तितम्। दश० ७२।
अहाचरा-अधधरा-निलवासित्वात्मार्प्यादय। आचा० २९१।
अहाचयं-रहितवादे सूत्रमेद। भग० १२८।
अहाच्छंदे-यथाछन्दान्, स्वच्छन्दान्। ओघ० ५६।
अहाछंद-यथाछन्दा-यथा कथंचित्गमपरतन्त्रतया छन्द-अभिप्रायो-बोध। भग० ५०२। यथा स्वामिन्नि तथा प्रज्ञापयन्। नि० चू० द्वि० २३ आ।
अहाजातो-अप्पोयधी। नि० चू० द्वि १३१ आ।
अहाजायं-रजोहरणमुखवस्त्रिकाचोलपट्टयुत रचितकरपुटश्च। बृ० तृ० १० आ।
अहाड-यथाकृतम्, परिकर्मशून्यं। बृ० द्वि० २०२ आ।
अहाणी-असीयण। नि० चू० प्र० ५ आ।
अहातच्चं-यथातत्त्वम्, तत्त्वानतिक्रमेण वर्तमानम्। भग० १२४। सप्तसप्तमिकेत्यभिधानार्थानतिक्रमेणान्वर्थसत्यापनेनेत्यर्थं। ठाणा० ३८८। शब्दार्थानतिक्रमेण। ठाणा० ५१९।
अहातच्चे-यथातथ्यो यथातत्त्वो वा, यथा-येन प्रकारेण तथ्य-सत्य तत्त्व वा। भग० ७०९।
अहातचो-जहेव दिट्ठो तहेव जो भवति सो अहातचो भवति। नि० चू० द्वि० ८६ अ।
अहापज्जत्तं-यथापर्याप्तम्। भग० १३६।
अहापडिरूवं-यथाप्रतिरूपम्। आव० १९९। भग० ६६१।
अहापदं-यथापदम्। आव० ३५९।
अहापरिग्गहिए-यथाप्रतिगृहीतम्, यथाप्रतिपन्नम्। भग० १३६।
अहापरियाय-यावन्मात्र क्षेत्रमनुजनीचे तावन्मात्र काल तावन्मात्र च क्षेत्रमाश्रित्य वस यथाम इतिमावत्। आचा० ४०३।
अहापवत्तं-यथाप्रवृत्तम्। आव० ११०।
अहाबायरा-यथाबादरा, यथोचितबादरा आहारपुद्गला इत्यर्थं। भग० १८९। यथाबादराणि, स्थूलतरस्कन्धा असाराणि। भग० २५१।
अहाबायरे-यथाबादरम्, स्थूलप्रकारम्। भग० २५१। असारम्। भग० १५४।
अहाभद्गो-यथाभद्रक। आव० ७१९।
अहाभद्दे-यथाभद्र, शासनबहुमानवन्। बृ० प्र० ३ १ अ।
अहाभद्दो दाण्णो। नि० चू० प्र० १९९ आ। दंसणविराहिनो अरहतेसु तम्मासणे साधू उभयभद्दो गो। नि० चू० प्र० ३३५ अ।
अहाभावो-यथाविद्धं पारम्भ। बृ० द्वि० ७४ आ। अधाप्रवृत्ति। नि० चू० प्र० २५१ आ। प्रतिस्थामिनं-प्रतिगृहीत न तु भुज्यते यस्मात्रादि। बृ० द्वि० २८६ आ।

अहामग्गं-यथामार्गम्, ज्ञानादिमोक्षमार्गानतिक्रमेण क्षायोपशमिकभावानतिक्रमेण वा वर्तमानम्। भग० १२४।

मार्ग -क्षायोपशमिको भावस्तदनतिक्रमेण। ठाणा० ३८८।

अहारिणो-मनसोऽनिष्टा। आचा० २४२।

अहारियं-यथारीतम्, रीत-रीति -स्वभाव, नसानतिक्रमेण वर्तते तत्, यथास्वभावमित्यर्थ। भग० २१२। यथाऽऽर्यम्। आचा० ३७९। यथाऋजु। आचा० ३८१।

अहालंद - मध्यमसमयेरपीमानम्। बृ० तृ० ३५ आ। पोरिसी। नि० चू० तृ० १८ अ। जघन्येन तरुणीदकार्द्रकरयोपकाल, उत्कृष्ट पूर्वकोटी। बृ० द्वि० ३२ आ। सभोग वर्जिते तृतीयभेद। नि० चू० प्र० २३९ अ। यावन्मात्र काल भवानानुजानाति। आचा० ४०३।

अहालहुस्सए-स्तोकप्रायश्चित्तदानम्। बृ० तृ० २०९ आ।

अहालहुस्सगाइ-यथालघुस्वकानि, 'यथे ति-यथोचितानि लघुस्वकानि-अमहास्वरूपाणि, महतां हि तेषा नेतुं गोपयितु वाऽशक्यत्वादिति यथालघुस्वकानि, अथाऽघूनि-महान्ति वरिष्ठानीति वृद्धा। भग०।

अहापधा-यथापल्याति, पुनस्थानीया। भग० १९७।

अहासंथड-पिण्डकर पट्ट। नि० चू० प्र० १७० अ।

अहासंथडा-अचला। नि० चू० प्र० १६० आ।

अहासच्चं-यथासत्यम्, इद यन्मया कथित कथ्यमान च तयथासत्यम्, याथातथ्यम्। आचा० १८३।

अहासन्निहिआ-यथासन्निहिता। आव० १७५।

अहासमं-यथासाम्यम्, समभावानतिक्रमेण वर्तमानम्। भग० १२४।

अहासुत्तं - यथासूत्रम् सूत्रानतिक्रमेण। ठाणा० ३८८। सामान्यसूत्रानतिक्रमेण वर्तमानम्। भग० १२४।

अहासुहुमणियंठो - यथासूक्ष्मनिर्ग्रन्थ, यथासूक्ष्म एतेषु सर्वषु। उत्त० ०५७।

अहासुय-यथाश्रुत यथासूत्र वा। आचा० ३०१।

अहासुहुमकसायकुसील-कषायकुशीलस्य पञ्चमो भेद। भग० ८९०।

अहासुहुमपुलाए पुलाकस्य पञ्चमो भेद। भग ८९०। यथासूक्ष्मपुलाक, पुलाकस्य पञ्चमो भेद। पञ्चस्वपि पुलाकेषु य स्तोक स्तोक विराधयति स। उत्त० २०६।

अहासुहुमबउस-बकुशस्य पञ्चमो भेद। भग० ८९०। उत्त० २५६। यथासूक्ष्मबकुश, योऽक्ष्णो दूषिकामपनयति, शरीराद्वा धूल्यादिकमपनयति। उत्त० २५६।

अहासुहुमे-यथासूक्ष्मान सारान्। भग० १५५।

अहि-सर्प, पृथिव्याश्रितो जीवविशेष। आचा० ५५। सर्प। उत्त० ६९९। उर परिसर्पभेद। सम० १३५। परिसर्पविशेष। प्रज्ञा० ४०।

अहिंडिंतओ-अहिण्डमान, असहिष्णोर्द्वितीयभेद। आव० ८५८।

अहिंसा-अनुकम्पा। प्रश्न० १०३। प्राणातिपातविरति। दश० २१।

अहिअ-अधिकम्, अहितम्, अपथ्यम्। ज० प्र० १६७।

अहिअगामिणि - अहितगामिनीम्, उभयलोकविरुद्धाम्। दश० २३५।

अहिउत्थ-अभ्युषित। उत्त० १२०।

अहिकरणं-अधिकरणम्, यन्त्रीयन्त्रकादि। भग० १३५।

अहिकरणकरो - अधिकरणकर, योऽन्येषा कलहयति, द्वादशमसमाधिस्थानम्। आव० ६५३।

अहिकरणोईरण-अधिकरणोदीरण, योऽन्येषा यन्त्रादीन्युदीरयति, त्रयोदशमसमाधिस्थानम्। आव० ६५३।

अहिकिच्च-अधिकृत्य-आश्रित्य। भग० २४।

अहिक्खेव-अधिक्षेप, निन्दाक्षेप। प्रश्न० ४१।

अहिगमरुइ-अधिगमरुचि, विशिष्ट परिज्ञान तेन रुचिर्यस्यासौ। प्रज्ञा० ५८।

अहिगमास-अधिकमास। दश० २५०।

अहिगमो अधिगम, विशिष्ट परिज्ञानम्। प्रज्ञा० ५०। ज्ञानम्। आव० ५३०। अभिगम -सेवा। सम० ५३।

अहिगरणं-अधिकरणम्, कलह। सूत्र० ६६। बृ० तृ० १९२ अ। कूटपाशरूपम्। भग० ९३। अधिक्रियते आत्मा नरकादिषु येन तदधिकरण-अनुष्ठान बाह्य वा वस्तु चक्र-महादि। आव० ६११। कलह यन्त्रादि वा। आव० ६५४। ज्योतिषादि। आव० ६६२। अनुष्ठानविशेष, बाह्य वा वस्तु चक्रखड्गादि। भग० १९१। अनुष्ठान बाह्य वा वस्तु। ठाणा० ४१। वास्तुदृषलशिलापुत्रकगोधूमयन्त्रकादि। आव० ८३१। रात्रि। ओघ० १८२।

अहिगरणकिरिया - अधिकरणक्रिया, दुर्गतौ ययाऽधिक्रियन्ते प्राणिनः सा। प्रश्न० ३७।

अहिगरणि-अधिकरणि, सुवर्णकारोपकरणम्। ज० प्र० २२६।

अहिगरणिए-अधिकरणकर-कलहकरम्। आचा० ४२५।

अहिगरणिया-अधिकरणिकी-अधिक्रियते नरकादिष्वात्माऽनेनेति अधिकरण-अनुष्ठानविशेषः बाह्यं वा वस्तु चक्रखड्गादि, तत्र भवा तेन वा निर्वृत्ता, क्रियाभेदविशेषः। भग० १८९। अधिक्रियत आत्मा नरकादिषु येन तदधिकरणम्-अनुष्ठानं बाह्यं वा वस्तु चक्रखड्गादि, तेन निर्वृत्ता क्रिया। आव० ६११। सम० १०।

अहिगरणी-अधिकरणी, यत्र लोहकारा अयोघनेन लोहानि कुट्टयन्ति। भग० ३५१।

अहिगरणे-अधिकरणसिद्धान्तः। बृ० प्र० २१ आ।

अहिगारनिउत्तो-अधिकारनियुक्तः। आव० ७३८।

अहिगारो-अधिकार, प्रयोजन, प्रस्ताव। आव० २७६। विशे० ८५९। ओघप्र० प्रयोजनप्रस्तावश्च। दश० २७८। आ-अध्ययनपरिसमाप्तेर्योऽनुवर्तते स। दश० १२। नियोग। प्रश्न० ६६। प्रयोजनम्। दश० ११९। व्य० प्र० ४ अ। वृत्ति। उत्त० मा० गा० ३७१।

अहिगरणिता - अधिकरणिकी-खड्गादिनिर्वर्तनी। ठाणा० ३१७।

अहिछत्ता - अहिच्छत्रा - नगरीविशेषः। उत्त० ३७०। पार्श्वनाथस्य धरणेन्द्रमहिमास्थानम्। आचा० ४१८। पञ्चालेषु जनपदस्यार्यक्षेत्रम्। प्रज्ञा० ५०। नागपरिहरणनिमय पुरी। आव० ७२१।

अहिजुंजिय-अभियुज्य वशीकृत्य, अभियुज्य वा। भग० ११३।

अहिज्ज-अभिज्ञ। उत्त० ३६२।

अहिज्जिउ-अध्येतुम्, पठितुम्, धर्तुं, आसेवितुम्। दश० ११८।

अहिट्ठए-अधिष्ठाता [illegible] वर्णी। दश० २२८। अधिष्ठाता यथावत् करोति। दश० २५६।

अहिट्ठग-अधिष्ठाता, कर्त्ता। दश० २०६।

अहिट्ठाण अधिष्ठानम्, [illegible]। आव० ४१०।

अहिट्ठाणकुड-अधिष्ठानकुडम्। अप० [illegible]।

अहिट्ठित्तए-अधिष्ठातुम्-परिभोक्तुम्। बृ० द्वि० २१८ अ।

अहिट्ठित्ता-अधिष्ठाय, आरोहणं कृत्वा। दशा० ६१।

अहिठाणि-अधिष्ठाने, अपानप्रदेशे। ओघ० ६९।

अहित अनुचितविधायी। बृ० प्र० २१४ अ। अपथ्यम्। उत्त० २७६।

अहितुंडए-अहितुण्डिक, गारुडिकः। दशा० १७।

अहिनदइ - अभिनन्दति, बहु मन्यते। आव० ५६०।

अहिन्नायदसणे-अभिज्ञातदर्शने-सम्यक्त्वभावनया भावित। आचा० ३०४।

अहिमडे-अहिमृत, मृतादिदेहः। जीवा० १०६।

अहिमन्त-मन्त्रप्रसाधनोपायप्रज्ञप्ति। सम० ४९।

अहिमर-अभिमर, अभिमुखमाकार्य मारयति म्रियते तेति। आव० १८। राजादिघातकः। विशे० ७४०। विशे० ६५१। अभिमुखं परं मारयति य स। प्रश्न० ४६।

अहिमरका-घातका। बृ० द्वि० ८२ आ।

अहिमार-अभिमार, वृक्षविशेष। उत्त० १४१।

अहिमासयसि-अधिकमासे। आव० ५५७।

अहिय-अधिक, अहितं वा अधिकं, अपथ्यं वा। भग० ३०६। अनर्थम्। उत्त० ६३२। अर्गल, दीप्ततरम्। उत्त० ७। अतिशयेन। जीवा० २२९। जीवा० ३५०। अहितम्, अपथ्य। आचा० २८।

अहियपिन्छणिज्ज अधिकप्रेक्षणीयम्। आचा० ४२१।

अहियाते-अहिताय, अपायाय। ठाणा० १४५। अपायाय। ठाणा० २९२। अपायाय। ठाणा० ३५८।

अहियासपन्ना-अधिसहेत्, सहेत, क्षमेत। सूत्र० ११४।

अहियासणया-अधिसहना उपसर्गसहनम्। आव० ६६०। अधिसहना। आव० ७००।

अहियासेयए-अध्यासितुम्। [illegible] ९३।

अहियासेमि- अध्यासयामि-[illegible]। ठाणा० २४७।

अहिरीगो अहिलीक, [illegible]। बृ० [illegible] अ।

अहिराया-अधिराजा [illegible]। बृ० [illegible] अ।

अहिरिय [illegible]। [illegible] अ।

अहिरिमाणा-[illegible]।

अहिर्बुध-[illegible]।

अहिलाणं-मुखसयमनम् । भग० ४८०, जं० प्र० २६५ । औप० ७१ । मुखसयमनविशेष । जं० प्र० २३५ ।

अहिलिंति-समागच्छति । बृ० द्वि० १०८ अ ।

अहिलोडिया - गोपालिकाख्यो हिंसकजीव । बृ० तृ० १९० आ ।

अहिल्लियाए-अहिल्लिका, मैथुने दृष्टान्त । प्रश्न० ८९ ।

अहिवई-अधिपति -आचार्य । ओघ० ७४ ।

अहिवास-अधिवास -अरस्थान । भग० ४७० ।

अहिवासिऊण-अधिवास्य । आव० २६१ ।

अहिसक्का-अभिशङ्का, तथ्यनिर्णय । सूत्र० ३९३ ।

अहिसक्कण-उत्सूरे आगच्छति । नि० चू० प्र० १४२ आ । अभिष्वष्कण-तस्यैव विवक्षितकालस्य सवर्द्धन, परत कर णमित्यर्थ । बृ० प्र० २६८ आ ।

अहिसरणेहिं-अगतो वा सरेति । नि० चू० द्वि० ४९ आ ।

अहिसरिया-अभिसृता । आव० ३७२ ।

अहिसलागा-मुरुलि-अहिभेदविशेष । प्रज्ञा० ४६ ।

अहिसेया-अभिसेका, गणावच्छेदिनी । बृ० द्वि० २६३ अ ।

अही-अहि , सर्प , उर परिसर्पविशेष । जीवा० ३९ । प्रज्ञा० ४५ । मुरुलि अहिभेदविशेष । प्रज्ञा० ४६ । सामान्यत सर्प । ज० प्र० १२५ ।

अहीणपडिपुन्नपंचिंदियसरीर-अहीनप्रतिपूर्णपंचेंद्रियशरीर , प्रतिपूर्णानि स्वकीयस्वकीयप्रमाणत , प्रतिपुण्यानि वा पवित्राणि पञ्चेन्द्रियाणि-करणानि यस्मिंस्तत्तथा अही नमङ्गोपाङ्गप्रमाणत प्रतिपूर्णपञ्चेन्द्रिय प्रतिपुण्यपञ्चेन्द्रिय वा शरीरं । ठाणा० ४५८ ।

अहीणपुन्नपंचिंदियसरीर-अहीनानि-स्वरूपत पूर्णानि सङ्ख्यया, पुण्यानि वा-पूतानि पञ्चेन्द्रियाणि यत्र तत्तथा तदेवंविध शरीर यस्य स । भग० ५४१ ।

अहीणो - अहीन , प्रकृष्ट , अधानो वा स्थावत । प्रश्न० १३६ ।

अहीनग्रहण-समग्रहणम् । न्यु० प्र० ८६ आ ।

अहीलणिज्ज - अहीलनीयम् अवज्ञातुमनुचितम् । उत्त० ३६५ ।

अहुणुच्चासिय-अधुना यदुद्गमितम् । ओघ० ५७ ।

अहुणोत्तणो-अधुनातन । आव० ४२१ ।

अहुणोववन्ने-अधुनोपपन्न , अचिरोत्पन्न । ठाणा० १८७ ।

अहुमरंतो-स्पन्दयन् । आव० २७३ ।

अहे-अध , आकाश । सूर्य० ४५ । अथशब्दार्थे । बृ० द्वि० १७९ अ । आमन्त्रणार्थो निपात । भग० ४६० । अध-आनन्तर्यार्थोऽय शब्द । भग० ८३, ८६ । गर्तायाम् । उत्त० २१३ । भूमितले । प्रज्ञा० ८० । अध । ठाणा० १६२ । अथेति परिप्रश्नार्थे । ठाणा० ४०६ । अध - अधस्तात् नीचै । भग० २६९ । अथशब्दोऽत्र पदत्रयेऽपि त्रयाणामप्याश्रयाणा प्रतिमाप्रतिपन्नस्य साधो कल्पनीयतया तुल्यताप्रतिपादनार्थं । ठाणा० १५७ । यथार्थं । ठाणा० ३२४ । अथशब्दार्थं । बृ० द्वि० १७९ अ । आधाकर्म । बृ० प्र० ८३ अ ।

अहेपन्नगद्धरूवो-अध पन्नगार्द्धरूप , अधस्तन यत्पन्नगस्यार्द्धं तस्येव रूपमाकारो यस्य स , अध पन्नगार्द्धवदति-सरलो दीर्घश्च । जीवा० २०६ । अध -अधस्तन यत्पन्नगस्यार्द्धं तस्येव रूपम्-आकारो यस्य स । जीवा० २६१ ।

अहेऊहिं - अहेतुभि , क्रियावादादिपरिकल्पितकुहेतुभि । उत्त० ४४९ ।

अहेवाए-अधोवात योऽध उद्गच्छन् वाति वात स । जीवा० २९ ।

अहेनिगडे - अधोविकटे-अध -कुड्यादिरहिते छन्नेऽप्युपरि तदभावेऽपि च । आचा० ३०९ ।

अहेपिवड-पार्श्वतोऽपावृत गृहम् । बृ० द्वि० १८१ अ ।

अहेसणिज्जे - यथाऽनावृष्टयादिदोषरहित एषणीयो भवति तथाभूतो दुर्लभ । आचा० ३०६ । यथाऽसौ मूलोत्तर गुणदोषरहितत्वेनैषणीयो भवति, तथाभूतो दुर्लभ इति । आचा० ३६८ ।

अहेसि-अभूवम् । आव० १४६ । अभूत् । उत्त० ४९६ ।

अहो-अध अर्वाक । आव० ८७७ । दैन्यभावे, विस्मय, आमंत्रणे च । दश० चू० ९६ । उद्गच्छतोऽनुत्तमम् । नि० चू० तृ० ८३ आ ।

अहोकाय-अध काय पादलक्षण । आव० ५४७ ।

अहोत्था-अभूत् । उत्त० ४७५ ।

अहोधार-अहतधारा वर्षा । आव० ७९१ ।

अहोधिय - नियतक्षेत्रविषयोऽवधिस्तद्रूप ज्ञानदर्शनम् । ठाणा० ४७३ ।

अहोरत्ता-अहोरात्रा -त्रिंशन्मुहूर्त्तप्रमाणा । ठाणा० ८६ ।

अहोरत्ते-अहोरात्रम् । भग० ८८८ ।

अहोराइयाभिक्खुपडिमा – अहोरात्रप्रमाणा एकादश भिक्षुप्रतिमा । सम० २१ ।

अहोलोए-अधोलोक, तिर्यग्लोकस्याधस्ताल्लोक । प्रज्ञा० १४४ ।

अहोलोयतिरियलोए-अधोलोकतिर्यग्लोक, यदधोलोकस्योपरितनमेकप्रादेशिकमाकाशप्रदेशप्रतरं यच्च तिर्यग्लोकस्य सर्वाधस्तनमेकप्रादेशिकमाकाशप्रदेशप्रतरम्, एतद्द्वयमपि । प्रज्ञा० १४४ ।

अहोवाए-अधोवात, अध उद्गच्छन् यो वाति वात स । प्रज्ञा० ३० ।

अहोविहारो-आश्चर्यभूतो विहार । आचा० १०७ ।

अहोवेइया – अधोवेदिका, यत्र जान्वोरधो हस्तौ कृत्वा प्रतिलिख्यते सा । ओघ० ११० । जाणू हेट्ठाओ द्वितेसु हत्थेसु पडिलेहेति । नि० चू० प्र० १८२ अ ।

अहोसिरा-अध शिरस, अधोमुखा । जं० प्र० १५४ ।

आ

आगुल-०याक्षिप्त । नि० चू० प्र० ३४७ अ ।

आइरगमाइ-वनस्पतिविशेष । नि० चू० द्वि० १५७ अ ।

आइ-निपात । भग० ६७५ । विस्मयनक्षयन्ते । ठाणा० ५२३ । वाक्यालङ्कारे । भग० १७६ । वाक्यालङ्कारार्थ । प्रश्न० ११७ । अलङ्कार । प्रश्न० १२६ । वाक्यालङ्कार, अवधारणे वा निपात । उपा० २७ । आदि-धर्मस्य प्रथमा प्रवृत्ति । जीवा० ०५५ । गणितप्रक्रियाया आदि (आगा धर्मव्याख्यान)। सूत्र० ० । यस्मात्परमस्ति न पूर्वम् । अनु० ५४ । [illegible] । अनु० ३४ ।

आइत्तिणिया-[illegible] [illegible] [illegible] सूत्र० ३१० अ ।

आइमत्ता-[illegible] । सू० चू० [illegible] अ ।

आइय(ग)रे-आदिकर, आदौ-प्रथमत श्रुतधर्म आचा [illegible] । भग० ७ ।

आइयवति-[illegible] । भग०

५८ । ईषद् भाषन्ते । ठाणा० १३६ । आचक्षते । आचा० १७८ ।

आइक्खगा-आख्यायका, शुभाशुभकथका । जं० प्र० १४२ । य शुभाशुभमाख्याति । प्रश्न० १४१ ।

आइक्खणं-कहितोच्चारणम् । सू० चू० २५ अ ।

आइक्खिए-मातङ्गविद्या यदुपदेशान्तीतादि कथयन्ति [illegible] घण्टिका इति लोकप्रतीता । ठाणा० ४५१ ।

आइगर-आदिकर, ऋषभनामा भगवान् । उत्त० ६२० ।

आइच्च – आदित्य, अर्चिमालिविमानवासी द्वितीयो लोकान्तिकदेव । भग० २७१ । आदित्यमासो येन कालेना दित्यो राशिं भुङ्क्ते । सम० ५६ । आदित्य । आव० १३५ । सूर्य० २९२ ।

आइच्चजसाई-आदित्ययश प्रभृति । नन्दी २४२ ।

आइच्चजसे-आदित्ययशा, भरतचक्रिपुत्र । ठाणा० ४३० ।

आइच्चपेढ-आदित्यपीठम् । आव० १४६ ।

आइच्चसंवच्छरे-आदित्यसंवत्सर, युगभाविसंवत्सरविशेष । सूर्य० १६८ । 'पुढविदगाण' मित्यादिलक्षण संवत्सरविशेष । सूर्य० १७१ ।

आइज्ज-आदेय-रम्य । प्रश्न० ८३ ।

आइज्जा आदेया दर्शनपथमुपगता, उपादेया [illegible] । जीवा० २७१ ।

आइद्ध-विक्षिप्तम् । सू० चू० ६६ अ । आविद्धा-अविद्धा । ठाणा० ३२८ ।

आइ(य)हि – आत्महित, आत्मवति [illegible] । भग० १०७ ४९० ।

आइणग-[illegible] । जं० प्र० ३६ । [illegible] । आचा० ३९४ ।

आइणियाय [illegible] । भग० ५४० ।

आइण्ण – [illegible], [illegible] । भग० १५१ । [illegible] । आव० ४८ । [illegible] । नि० चू० द्वि० १०७ अ । [illegible] । सू० चू० ३३० अ ।

आइण्णता-[illegible] । आव० ६२० ।

आइण्णपोग्गल [illegible] (ओर्थ) [illegible] । नि० चू० चू० ५४ अ ।

आइण्णा-[illegible] । नि० चू० प्र० १८६ [illegible] । नि० चू० प्र० १८६ अ । [illegible] । भग० ३३३ ।

आइण्णे-पश्चाद् गतस्य ज्ञातम् । उत्त० ६१४ । सम० ३६ ।

आइण्णो-आकीर्णः, गुणैर्व्याप्तः । जीवा० २७० । आकरः । औप० ७१ । विनयमिव राजेव गुणेहिं जयविजयाईहिं आपूरिओ, अहवा जातिरेव वा । दश० चू० १६५ ।

आइद्ध-आरब्ध । (मर०) । आदिग्धः, आश्लिष्टः । प्रश्न० ४१ । आविद्धः, प्रेरितः । आव० ६०२ ।

आइन्न – आकीर्णम्, आसेवितम् । आचा० ५ । आयरियपरंपरएण आलुथसाओ आदिण्ण जिम्मीलोयरयाइ आसेवित त आइन्न । नि० चू० द्वि० १५७ आ । आत्मीयात्मीयाऽऽचारमर्यादानुल्लघनेन व्याप्ताः । भग० ३७ । कल्प्यम् । पिण्ड० १६५ । आकीर्णम्-राजकुलसङ्कुलादि । दश० २८० ।

आइन्नवर-जात्यप्रधानः । भग० ३२२, ४८१ ।

आइन्नसंलिपखं-हयादिभिराकीर्णं । आचा० ३८१ ।

आइन्ना-आकीर्णानि, गुणवन्ति । जं० प्र० २१२ ।

आइन्ने-आकीर्ण., आकीर्यते-व्याप्यते विनयादिभिर्गुणैरिति आख्यादिगुणोपेतं । उत्त० ३४९ । व्याप्त. । उत्त० ३४८ ।

आइन्नो-आकीर्ण, गहीर्ण, गुणव्याप्तो मनुष्यजन. । औप० ७ । विनीत. । उत्त० ४८ । आचार्यगुणैराचारश्रुतसंपदादिभिर्व्याप्त.-परिपूर्ण । उत्त० ५५- ।

आइमउ-आदिमृदु, प्रथमत' कोमलम् । अनु० १२१ ।

आइमूल-वृक्षादिमूलो यत्रावाधं कारणम् । आचा० ८७ ।

आइयणं-अदनं, भक्षणम् । आचा० ७२६ । व्य० प्र० १८० अ । भोजनम् । बृ० द्वि० १२६ आ । समुद्देशनम्-भोजनम् । बृ० तृ० ४ आ । आपानम् । बृ० द्वि० ३४ अ । ठाणा० ३३१ । भूम प्रत्यागियमि । बृ० तृ० १८५ आ ।

आइयंति-आददति, गृह्णन्ति, कामन्तीरार्थ । ठाणा० ३२० ।

आइयति-आदत्ते । उत्त० १९८ ।

आइलं-आविलम्-गडुलम् । जीवा० ३०० ।

आइल्लचंदसहिय-उद्दिष्टचन्द्रसहितः । सूर्य० २८० ।

आइसुप – आदिश्रुतः, सामायिकादिश्रुत. । बृ० प्र० ३८ आ ।

आइसुयं-प्रथममङ्गलम् । बृ० तृ० २४९ आ ।

आइस्सइ-आविश्यते-अधिष्ठीयते । भग० ७४९ ।

आई-आदिः, संसारः, धर्मकारणानां वाऽऽदिभूतं शरीरम् । सूत्र० १६२ । सामीप्यम्, व्यवस्था, प्रकारः, अवयवश्च । प्रश्न० ७ । निर्नेतः । औप० ५ ।

आईण-आनीतः, आ-समन्तादनीव इतो-गतोऽनाद्यनन्ते संसारे । आचा० २८५ ।

आईणं-आजिनकम्, चर्ममयं वस्त्रम् । जीवा० १९१ ।

आईणगं-आजिनकम्, चर्ममयं वस्त्रम् । जीवा० २१० । औप० ११ । जं० प्र० ५५ । जं० प्र० १०७ । निरया० १ ।

आईय-आ समन्तादनीव इतो-गतोऽनाद्यनन्ते संसारे भ्रमणम् । आचा० २८६ ।

आईयट्ठे-आ-समन्तादतीव इताः-गताः, परिच्छिन्ना जीवादयोऽर्था येन सोऽयमातीनार्थः आदत्तार्थो वा, यदिवाऽतीता.-सामस्त्येनातिक्रान्ता अर्था'-प्रयोजनानि यस्य स तथा, उपरतव्यापार । आचा० २८६ ।

आउ – वैचरम् । आव० ६६० । मारियतिहेनव' कार्मपुद्गला । आचा० १०२ ।

आउंटणं – आकुञ्चनम्, गात्रसङ्कोचलक्षणम् । आचा० ५७४ ।

आउंटणपसारणं-आकुञ्चनप्रसारणम् । आव० ८०३ ।

आउंटियं-सङ्कोचितम् । भग० ६३१ ।

आउ-आयु, स्थिति । भग० २३६ । उत्साहो । बृ० प्र० २१० अ । एति-उपक्रमहेतुभिरनपवर्तनया यथाभिप्रदैवानुभवनीयतां गच्छतीति । उत्त० ३३५ । जीवितं । ठाणा० १०८ । आयु, कर्मविशेष । ठाणा० ११० ।

आउकाप-अप्काय, पूर्वसमुद्र, पश्चिमसमुद्रो वा । सूर्य० ४७ ।

आउक्खपणं-आयु क्षयेण, आयु पूर्णीकरणेन । आचा० ४०१ ।

आउखेम – आयुक्षेम-आयुष सम्यक् पालन । आचा० १५० । जीवितं । आचा० २९१ ।

आउज्जं-आतोद्यम्, वादित्रं, मृदंगादि । आव० ५२८ । पटहभेरीवंशवीणादयोऽपीति । आचा० ६१ ।

आउज्जंगं-आतोद्याङ्गम्, आतोद्यकारणम् । उत्त० १४३ ।

आउज्झिय-आयोजित, उपयोगवान्, ज्ञानी । भग० १४० ।

आउज्जिया–आयोजिका, आ–मर्यादया केवलिदृष्टया योजनं–शुभानां योगानां व्यापारणम्। प्रज्ञा० ६०४।

आउज्जियाकरणं–आयोजिकाकरणम्। प्रज्ञा० ६०४।

आउज्जीकरणं–आवर्जीकरणम्, उदीरणावलिकायां कर्मप्रक्षेपव्यापाररूपम्। औप० ११०। आवर्जितकरणम्। प्रज्ञा० ६०४।

आउज्जो–आवर्जः, आत्मानं प्रति मोक्षस्याभिमुखीकरणं–आत्मनो मोक्षं प्रत्युपयोजनमिति, अथवा आवर्ज्यते–अभिमुखीक्रियते मोक्षोऽनेनेति वा–शुभमनोवाक्कायव्यापारविशेषः। प्रज्ञा० ६०४।

आउट्ट–आकुट्टम्, आलजालम्। उत्त० १४६। आवर्जितः। बृ० द्वि० ३४ आ।

आउट्टइ–आवर्तते, प्रवर्तते। भग० २८९।

आउट्टणं–आकम्पनम्। बृ० तृ० ८५ अ।

आउट्टणया–आवर्तना, आवर्तते–ईहातो निवृत्त्यापायभावं प्रत्यभिमुखो वर्तते येन बोधपरिणामेन सः, तद्भावः, अपायपर्यायः। नन्दी १७६।

आवट्टति–निवर्त्तते। सूत्र० १९०। आवर्तते–निवर्तते तमालोचयतीत्यर्थः। ठाणा० ११९। करोति। नि० चू० प्र० २५६ अ।

आउट्टा – आराधिता। बृ० द्वि० ११२ अ। आवर्जिता। औप० १५९।

आउट्टामो–प्रवर्त्तामहे। आचा० ३३१।

आउट्टावेज्ज–अभिमुखयेत्। आचा० ३६४।

आउट्टिआए–आकुट्या–उपेत्य। सम० ३९।

आउट्टिज्जमाणं – *आकोट्यमानम्, सङ्घोट्यमानम्। सूत्र०* २९८।

आउट्टि–उपेत्य। व्य० प्र० १६ आ।

आउट्टिय–ज्ञात्वा। आव० ७५८। उत्तमार्थकृतः आहारः। नि० चू० द्वि० ५७ आ।

आउट्टिया–आउट्टिया नाम आभोगो जानान इत्यर्थः। नि० चू० द्वि० ५९ आ। आवर्जिताः। बृ० द्वि० १८६ आ।

आउट्टी–समाधानम्। बृ० तृ० १२३ आ।

आउट्टे – कर्मभिलषेत्। आचा० ४१७। निवर्तयेत्। आचा० १११। आवर्तयेत्–अनुकूलयेत्। व्य० द्वि० २८१ आ। आवृत्तः–व्यवस्थितः। आचा० २७९। समन्तात् व्यवस्थितः। आचा० २७९।

आउट्टेउं–आवर्ज्य। बृ० तृ० ३४ अ।

आउट्टो–व्यावृत्तः। उत्त० ३३२। आवर्जितः। हृष्टः। उत्त० ३३२। स्वस्थः। उत्त० ३५५। आव० ३२०। उत्त० १०८। आवृत्तः। आव० ५७८, २९४, ५३६ ३८७। उत्त० ३२४। आवर्जितः। आव० ४१२।

आउडिज्जमाण–'जुड' बन्धने, इतिवचनाद् 'आजोड्यमानेभ्यः' आसम्बध्यमानेभ्यो मुखहस्तदण्डादिना सह शङ्खपटहझल्लर्यादिभ्यो वाद्यविशेषेभ्य आकुट्यमानेभ्यो वा एभ्य एव ये जाताः शब्दास्ते, आजोड्यमाना आकुट्यमाना एव चोच्यन्ते, अतस्तानाजोड्यमानानाकुट्यमानान् वा शब्दान् शृणोति, इह च प्राकृतत्वेन शब्दशब्दस्य नपुंसकनिर्देशः, अथवा आकुट्यमानानि–परस्परेणाभिहन्यमानानि। भग० २१६।

आउडेइ–आजुडति, सम्बद्धं करोति, लिखति। जं० प्र० २५०। आकुट्टयति, ताडयति। जं० प्र० २२४। आकुट्टयति। भग० १७३।

आउत्त–आयुक्तम्, उपयोगपूर्वकम्। भग० १८४। सम्यक् प्रवचनमालिन्यादिरक्षणतया। प्रज्ञा० २१८। उपयुक्तः। ठाणा० ४०९। प्रयत्नपरो मरणाराधनयुक्तः। उपयुक्तः। औप० २०२। उपयोगतत्परम्। औप० १७६। आयुक्तः। व्य० द्वि० २६६ अ।

आउत्तगो–आवर्तकः। उत्त० ३०४।

आउत्तियं–आयुक्तिकम्। उत्त० ११९।

आउत्तो–आयुक्तः, व्यवस्थितः। दश० २२६।

आउय–आयुष्कम्, जीवितम्। आव० २४१। आयुष्ककाल., देवाद्यायुष्कलक्षणः। आव० २५७।

आउयकम्मस्स गालणा–आयुःकर्मणो गालनं, प्राणवधस्य द्वादशः पर्यायः। प्रश्न० ५।

आउयकम्मस्स णिट्ठवणं–आयुःकर्मणो निष्ठापनम्, प्राणवधस्य द्वादशः पर्यायः। प्रश्न० ५।

आयुकम्मस्स भेय –आयुःकर्मणो भेदः, प्राणवधस्य द्वादशः पर्यायः। प्रश्न० ५।

आउयकम्मस्स संवट्टगो–आयुःकर्मणः संवर्तकः, प्राणवधस्य द्वादशः पर्यायः। प्रश्न० ५।

आउयकम्मस्सुयद्दयो–आयुःकर्मणः उपद्रव, प्राणवधस्य द्वादश पर्याय । प्रश्न० ५।

आउयबंधद्धा–आयुर्बन्धाद्धा । प्रज्ञा० ४८० ।

आउयसंवट्टय–आयुःसंवर्तक–आयुष्पक्रम । ठाणा० ६७।

आउर–आतुर, शारीरदुःखेनागन्तुकेन वा प्रणेन ग्लान । दश० २७०। क्षुधा पिपासया वा पीडित । व्य० प्र० ३१ आ। दयान्त । नि० चू० प्र० २०२ आ। आतुर, यत्किंचिदपि स्वास्थ्यमलभमान सन् आकुल ।जीवा० १२२। आतुर –दुःस्थ । भग० ७०५। ग्लाने सति प्रतिजागरणार्थं (प्रतिसेवा)। ठाणा० ४८४। अत्यन्तातुलतनु । उत्त० ८६। कामेष्वाऽन्धा' । आचा० १३८। प्रतिसेवनाभेद'। भग० ९१९। आतुर, चिकित्साया अविषयभूत' । विपा० ७६। चिकित्साया अविषयभूतो रोगी। सू० प्र० २८१ आ। मर्तुकाम । उत्त० २७३।

आउरपच्चक्खाण – नोपूर्वश्रुतप्रत्याख्यानभेद । विशे० १३२०। प्रकीर्णकनाम। आव० ८०४। श्रुतप्रत्याख्यानम्। आव० ४७९। अस्वास्थ्यमना । आचा० ७२। आतुर –चिकित्साक्रियाव्यपेत तस्य प्रत्याख्यानवर्णनम्। नंदी २०६। अपूर्वश्रुतप्रत्याख्यानम्। आव० ४७९।

आउरसरणं–आरोग्यशाला। दश० चू० ५१।

आउरस्सरण–आतुरस्मरणम्, दोषातुराश्रयदानम्। दश० ११८। आतुरस्मरणम्, क्षुधाद्यातुराणां पूर्वोपभुक्तस्मरणं नानाचरितम्। दश० ११७।

आउरीभूएहिं–आतुरीभूतैः, आतुरीभूतैः ।सू०प्र० १९आ।

आउल–आकुलम्। व्याप्तम्। आव० ५८५। प्रचुरम्। भग० ९५। आकुल, दस्य । विशे० ४२६। सङ्कुले, आदीले वा। सम० ५३।

आउलगमणं–आकुलगमन–एकत्र मिलिता गच्छन्ति ।ओघ० १२६।

आउलमाउल–आकुलाकुलम्, दयाभिरभिभोगविवाहयुद्धादिसंदर्शननानाप्रकारम्। आव० ५७४।

आउला–आकुला, त्वरमाणा। सू० द्वि० ६५ आ।

आउलाकुल–आकुलाकुल, अनिष्पाकुल । प्रश्न० ५०।

आउली–तरुविशेषः । जीवा० १९१।

आउलो–आकुल, अभिभूत। आव० ८२९।

आउसं – आयु–जीवितं तत्संयमप्रधानत्वया सम्यग् प्रभूतं वा विद्यते यस्यासावायुष्मांस्तस्यामन्त्रणम्। ठाणा० ५।

आउसंत–आयुष्मान्, शिष्यः। दश० ११०। अथवा शुश्रूषमाणस्य वा। दश० ११७।

आउसंतेणं–आयुष्मता, धर्माचार्यपर्यायेण गुरून् सेवमानेन। उत्त० ८०। भगवतेत्यस्य विशेषणमायुष्मता–चिरजीविना। सम० ३। धर्माचार्यपर्यायेण गुरूनासेवमानेन। ठाणा० ९। आयुष्मदन्ते, आयुष्मता। नंदी ११३। आयुष्मतेन–प्रीतिविशेषमनसा। सम० ३। हे आयुष्मन्। सम० ३। नंदी ११२। आयुष्मता–गुरुकुलमनुसंवसता। सम० २। शुश्रूषमाणेन। दश० ११०। आवसता गुरुकुले। सम० ३। आयुष्मन्, शिष्यामन्त्रणम्। उत्त० ८०।

आउसंवट्टणं आयुष्पक्रम । नि० चू० प्र० ३११ अ।

आउसणाहिं – आक्रोशना मृतोऽसि त्वमित्यादिभिर्वचनै । भग० ६८३।

आउसेइ–आक्रोशयति, शपति। भग० ६८३।

आउसो–आयुष्मन्, पुत्रादेरामन्त्रणम्। भग० १३०।

आउस्स–आक्रोश, अनभ्यवचनम्। सूत्र० ९३।

आउस्सियकरणं – आवश्यककरणम्, आवर्जिकरणम्। प्रज्ञा० ६०४।

आउह–आयुधम्, क्षेप्यं शस्त्रम्। प्रश्न० ४७। अक्षेप्यम्। विपा० ४६। खड्गादि। जीवा० २४९। क्षेप्यायुधम्। भग० १९४। शस्त्रम्, अथवाऽऽयुधं–अक्षेप्यशस्त्रं खड्गादि। भग० ३१८।

आउहसाला–आयुधशाला–शस्त्रागारम्। आव० १४८।

आऊ–आयु एति–आगच्छति प्रतिबन्धकतां स्वकृतकर्म बद्धनरकादिकुगतेर्निष्क्रमितुमनसो जन्तोरिति। अथवा आ–समन्तादेति–आगच्छति भवात् भवान्तरसङ्क्रान्तौ निश्चयेनेति वा। प्रज्ञा० ४५४।

आए–अनन्तकाय –वृक्षविशेष । प्रज्ञा० ३३। आगमन।

ठाणा० ११९।

आएस–प्राघूर्णक । ओघ० ६७। निर्देश । नि० चू० प्र० १९ आ। प्राघूर्णक आयान । ओघ० १०१। आदेश। नि० चू० प्र० २८० आ। आदेश–कृत्रिमवृत्त–भृकुटीभंगादय । आचा० ९१। प्राघूर्णक । आचा०

१२६, ३५२। धर्मकरादि। आचा० ४१५। व्यापारनियोजना। आचा० ३१८। दर्शन। आचा० २६१। आदिश्यते इत्यादेश आचार्यपारम्पर्यश्रुत्यायातो वृद्धवादो, यमैतिह्यमाचक्षते। आचा० २६१। उद्वाद। आचा० २६३। प्राघूर्णक। ठाणा० ११८। उपचारो, व्यवहार (देशे प्रधाने च)। ठाणा० २२३। एतद्भविष्यतीत्यादि निर्णय। उत्त० मा० गा० ११५। आदेश, विदेश, आङिति मर्यादया विशेषस्थानतिक्रमात्मिकया दिश्यते-कथ्यत इति। उत्त० ३२। प्राघूर्णकसाधु। आव० २६१। प्राघूर्णक। ओघ० १८३। आदेश-प्रकार सामान्यविशेषरूपस्तत्र आदेशेन-ओघतो द्रव्यमात्रतया न तु तद्गतसर्वविशेषापेक्षयेतिभाव, अथवा आदेशेन-श्रुतपरिकर्मिततया। भग० ३५७। आदेश, कथनम्। उत्त० १४७। सर्वविषयो दृष्टान्त। सू० द्वि० १३५ आ। उपचार। विशे० १३१५। प्राघूर्णक। नि० चू० प्र० १४ आ। पाहुणक। नि० चू० प्र० २६३ आ। प्राघूर्णक। बृ० द्वि० १५५ अ। प्रायश्चित्तप्रकार। बृ० द्वि० १८ आ। सूत्रमुच्यते। विशे० २३१। आदेशो नाम ज्ञातवस्तुप्रकार। स च द्विविध-सामान्यप्रकारो विशेषप्रकारश्च। विशे० २३०। असत्यापदेश। प्रश्न० १७। विध्यन्तरम्। दश० १३। व्यपदेश। आचा० ७४। अभ्यर्हित प्राहुणकम्। उत्त० २७२। अधिकार। बृ० प्र० २७६ आ। प्रकार। विशे० १२२। अनुज्ञा। व्य० द्वि० ३४६ अ। उपचार, व्यवहार, स च महत्तरे प्रधाने वाऽऽदिश्यते। ठाणा० १२३। नयान्तरविकल्प। व्य० द्वि० ३५४ आ। आदिश्यते-आज्ञाप्यत इत्यादेश-कर्मकरादि। आचा० ४१५।

आएसणं-आवेशन अयस्कारकुम्भकारादिस्थानम्। औप० ६६।

आएसणाणि-आदेशनानि-लोहकारादिशाला। आचा० ३२६।

आएसपर-आदेश-कर्मकरादि स चासौ पश्चादेशपर। आचा० ४१५।

आएसा-आदेश, प्रतिवचनमुत्पादव्ययध्रौव्यवाचक पदत्रयम्। विशे० २९८।

आएस्सारि-आगमिष्या। सूत्र० ७६।

आएसिय-आदेशम्, विभागोद्देशिकस्तृतीयभेद। पिण्ड० ७६।

आओ-आय, प्राप्ति। विशे० ४५०। उताहो। बृ० द्वि० ७ अ। लाभ। आव० ३४२। लाभ, उपादान, हेतु। विशे० ५४३। ज्ञानादिलाभहेतुत्वादध्ययनम्। ठाणा० ६। भूमिस्फोटकविशेष। आचा० ५७।

आओग-आयोग, द्विगुणादिवृद्ध्या अर्थप्रदानम्। भग० १२५। द्विगुणादिवृद्ध्यर्थं प्रदानम्। जं० प्र० ३३१। अर्थलाभ। औप० १२। अर्थोपाय यानपात्राद्युपकरणादि। सूत्र० ४०७। परिकर। औप० ६३।

आओगपओगसंपउत्तं-आयोगेन-द्विगुणादिलाभेन द्रव्यस्य प्रयोग-अधमर्णानां दानं तत्र सम्प्रयुक्तानि-व्यापृतानि तेन वा सम्प्रयुक्तानि-संयुतानि तानि। ठाणा० ४२२। आयोगो-द्विगुणादिवृद्ध्याऽर्थप्रदानं, प्रयोगश्च-कलान्तरं तौ सम्प्रयुक्तौ-व्यापारितौ यैस्ते। भग० १३५।

आओगपओगसंपउत्ते-आयोगप्रयोगा-द्रव्यार्जनोपायविशेषा सम्प्रयुक्ता-प्रवर्तिता येन। ठाणा० ४२३।

आओडावेइ-आस्फोटयति, प्रवेशयति। विपा० ७२।

आओसे-प्रद्वेषे। ओघ० ७६।

आओसेज्जा-आक्रोशयेत्। उपा० ४२।

आओहण-आयोधनम्, (युद्धम्)। ठाणा० ४०२।

आकंदिय-आक्रन्दितम्, बृहद्विलापकरणम्। प्रश्न० २०।

आकंपइत्ता-वैयावृत्याभि आकम्प्य-आवर्ज्य। ठाणा० ४८४। यदालोचनाऽऽचार्यं वैयावृत्यकरणादिनाऽवर्ज्य यदालोचनम्। भग० ९१९।

आकड्डविकड्डि-आकर्षविकर्षिकाम्। भग० ६८५।

आकड्डि-आकृष्टि। भग० ६८३।

आकड्ढविकड्ढिं करेइ-आकर्षविकर्षिं करोति आकर्षविकर्षिकां करोति। भग० १६७।

आकरणम्-आगरण आह्वानम्। आव० २०४।

आकासम् आङिति सर्वभावाभिव्याप्त्या काशत इति। उत्त० ६७७। सर्वभावावकाशनात् आ-मर्यादया चास्मिन्दीप्यन्ते पदार्था यत्र तत्। आ-अभिविधिना काशन्ते दीप्यन्ते पदार्था यत्र तत्। अनु० ७४। आङिति मर्यादया-स्वस्वभावापरित्यागरूपया काशन्ते-स्वरूपेण प्रतिभासन्ते तस्मिन् पदार्था इति। उत्त० ६७७। बृ० प्र० ९१ अ।

आकासगा-आकाशगा भूतविशेषा। प्रज्ञा० ७०।

आकासाहि-आकर्षय । आचा० ३७८ ।
आकासिइ-खाद्यविशेष । जं० प्र० ११८ ।
आकिण्ण-अतिकीर्ण । नि० चू० तृ० १३ अ ।
आकुट्टि-हिंसा । आचा० ३०५ ।
आकुट्टिय-उपेत्य । बृ० तृ० १२२ आ ।
आकुल-आकुल, व्याप्त । जं० प्र० १८८ ।
आकूतम्-अभिप्रेतम् । विशे० ८८५ ।
आकृष्टिविकृष्टि । व्य० प्र० ९४ आ ।
आकेवलिआ-आकेवलिका, न केवल अकेवलम्, तत्र भवा आकेवलिका-सद्वन्द्वा-सप्रतिपक्षा इतियावत् असम्पूर्णा वा । आचा० २४१ ।
आकोट्टिमं-आकुट्टिक यथा रूप्यकोऽधस्तादपि उपर्यपि मुख कृत्वाऽऽकुट्यते । दश० ८६ ।
आकोडन-आकोटनम्, कुट्टनेनाक्षे प्रवेशनम् । प्रश्न० ५७ ।
आकोडेमाणे-आउडेमाणे, आकुट्यमानम्, आहन्यमानम् । भग० २५१ ।
आकोसायंत-आकोशायमानम्, विकचीभवत । जीवा० २७१ । जं० प्र० १११ ।
आक्षोधुका-क्षुधा रहिता । दश० १२७ ।
आख्यातिकम्-क्रियाप्रधानत्वात् धावतीति । अनु० ११३ ।
आख्यायिकास्थानानि-अक्खाइयठाणाणि, कथानकस्थानानि । आचा० ४१३ ।
आगतागारं-गामपरिसट्ठाण, आगतागारं-बहिया वासो । नि० चू० प्र० १८३ अ । आगन्तुकाना कार्पटिकादीनाम गारमागन्तागारम् । सूत्र० ३९३ । ग्रामादेर्बहिरागत्यागत्य पथिकादयस्तिष्ठन्ति । आचा० ३६५ ।
आगतार-यत्र गारिण आगत्य तिष्ठन्ति तदागन्तुकागारम् । बृ० तृ० ४८ आ । प्रत्ययाता आगत्य वा यत्र तिष्ठन्ति तदागन्तारम्, तत्पुनर्ग्रामाद्नगराद्वा बहि स्थान तत्र । आचा० ३०७ । आगन्तागारम् (धर्मशाला)। आचा० ३०२ । पत्तनाद्बहिर्गृहम् । आचा० ३४८ ।
आगतु-आगन्तुक पथिकादिरगारस्थजनो यत्रागत्य सन्तिष्ठते । बृ० द्वि० १७९ आ ।
आगतुओ-आगन्तुक, कण्टकादिप्रभव । आव० ७६४ ।
आगतुगो-आगन्तुक । आव० २७० । आगतुएण सत्थातिगाकओ पो गो । नि० चू० प्र० १८८ आ ।

आगंतुय-आगन्तुक । दश० १०८ ।
आगंतू-आगन्तुक । उत्त० १९३ ।
आगंपिया-वशीकृता । नि० चू० द्वि० ९७ अ ।
आगइ-आगति, प्रत्यावृत्त्या-प्रातिकूल्येनागमनम् । आव० २८१ । प्रज्ञापकप्रत्यासन्नस्थाने आगमनम् । ठाणं० ११३ ।
आगम-आगमनम्-आगम -आ-अभिविधिना मर्यादया वा गम -परिच्छेद इति । आव० २६ । आचार्यपारम्पर्येणागत, आप्तवचनं वा । अनु० ३८ । आगम्यन्ते-परिच्छिद्यन्ते अर्था अनेनेति, केवलमन पर्यायावधिपूर्वचतुर्दशकदशकनवकरूप । ठाणा० ३१७ । सूत्रार्थोभयरूप । आव० ५२४ । आगम्यन्ते-परिच्छिद्यन्ते अर्था अनेन इति आगम -आप्तवचनसम्पाद्यो विप्रकृष्टार्थप्रत्यय । ठाणा० २६२ । गुरुपारम्पर्येणागच्छतीति आगम, आ-समन्ताद्गम्यन्ते-ज्ञायन्ते जीवादय पदार्था अनेनेति वा । अनु० २१९ । आप्तप्रणीत । आचा० ४८ । (आगममिद) । ठाणा० २५ । सूत्रम् । आव० ६०४ । श्रुतपर्याय । विशे० ४१६ । अध्ययनम् । आव० ३०० । आगम, प्राप्ति । दश० १६ । सद्भावम् । बृ० प्र० ३२ आ । अर्थपरिज्ञानम् । व्य० प्र० २५१ आ । आ-अभिविधिना सकलश्रुतविषयव्याप्तिरूपेण मर्यादया वा यथावस्थितप्ररूपणारूपया गम्यन्ते-परिच्छिद्यन्तेऽर्था येन स । नदी २४९ । आगच्छति गुरुपारम्पर्येणेत्यागम । भग० २२२ । आगम । विशे० ४३२ ।
आगमकुसला-आगम -श्रुतिस्मृत्यादिरूपस्तस्मिन् कुशला-आगमकुशली । उत्त० ५२१ ।
आगमणं-प्रयोजनपरिसमाप्तौ पुनर्यद्गति गमनम् । आव० ५७३ । आवसण । नि० चू० तृ० ६३ आ ।
आगमणगिहं-सभाप्रपादेवकुलादिपथिकस्थानम् । बृ० द्वि० १७९ आ । आगमनगृह-सभाप्रपादि, पथिकादीनामागमनेनोपेन, तदर्थं वा गृहम् । ठाणा० १५७ ।
आगमत-आगममाश्रित्य (ज्ञानापेक्षयेत्यर्थ)। अनु० १४ ।
आगममाणे-आगमयन्-आपादयन् । आचा० २७८ । २८३ । अवगमयन्, बुध्यमान । आचा० २४५ ।
आगमववहारी-आगमववहारी छव्विहे-केवलणाणी ओहीणाणी मणपज्जवणाणी चोद्दसपुव्वी अभिण्णदसपुव्वी णवपुव्वी य । नि० चू० तृ० १०० अ । आगमव्यवहारिण,

व्यवहारपञ्चके प्रथमभेदः। व्य० प्र० ५ अ। प्रत्यक्षज्ञानिनः। व्य० प्र० ६३ अ।

आगमसत्थ-आगमशास्त्रम्, आ-अभिविधिना सकलश्रुतविषयव्याप्तिरूपेण मर्यादया वा यथावस्थितप्ररूपणारूपया गम्यन्ते-परिच्छिद्यन्तेऽर्था येन स आगमः, स चैवं व्युत्पत्त्या अवधिकेवलादिलक्षणोऽपि भवति ततस्तद्व्यवच्छेदार्थं विशेषणान्तरमाह-'शास्त्रे'ति शिष्यतेऽनेनेति शास्त्रमागमरूपं शास्त्रमागमशास्त्रम्। नंदी २४९।

आगमियफुलगो-ज्ञानः। आव० ३१७।

आगमिओ-आगमितः, ज्ञातः। आव० ४३७।

आगमियं-ज्ञातम्। आव० ३१६। ओघ० १०५। ज्ञातः। आव० ३१६।

आगमियाणि-प्राप्तानि, अधीतानि। आव० ४३३।

आगमिस्सं-आगमिष्यम्, आगामि। आचा० १६७।

आगमिस्सभद्दयाए - आगमिष्यदिति-आगामिकालभावि भद्रं-कल्याणं यस्मिंस्तथा तस्य भावस्तत्ता तया, यदि वाऽऽगमिष्यतीत्यागमः-आगामी कालस्तस्मिन् शश्वद्भद्रतया-अनवरतकल्याणतयोपलक्षितम्। उत्त० ५८५।

आगमिस्सा-आगामिकालः। आव० ५३२।

आगमेति-जानाति। विपा० ७३।

आगमेयव्वं-आगमयितव्यम्-ज्ञातव्यम्। बृ० प्र० १६२ अ।

आगमेसा-आगमिष्यन्ती। आव० १७४।

आगमेसिभद्दा-आगमिष्यत् भद्रा-द्वितीयभवे अन्तकृत.। उपा० २९।

आगमेस्संति - आगमिष्यामि-गृहीष्यामि। व्य० द्वि० ४१८ आ।

आगमेस्सा-भविष्यतः (मर०)।

आगमेस्साणं-आयत्याम्। आव० ३५८। भविष्यताम्। (महाप्र०)।

आगमोगं-आगमौक, पथिकागारिणां स्थानं, तेषा आगमने वा यद् गृहं तत्। बृ० द्वि० १७९ आ।

आगयं-आगतम्-स्वीकृतम्। आचा० १८१।

आगया-आगता-सिद्धा। रागद्वेषाभावात् पुनरावृत्तिरहिता सर्वज्ञा। आचा० १६७।

आगयपण्हय - आयातप्रश्नवा पुत्रस्नेहादागतस्तनमुखस्मेत्यर्थं। भग० ४६०।

आगर - आकर, यत्र खनिवैरो लवणाद्युत्पद्यते। ठाणा० ४४९। उत्पत्तिस्थानम्। (मर०)। अन्त० ७। पृथिव्याद्याकरः। आव० ६२२। लोहाद्युत्पत्तिभूमि। ठाणा० २९४, ७८६। आकरः, हिरण्याकरादि। प्रज्ञा० ४८। खानि। प्रश्न० ३८। ओघ० ९। रत्नादीनामुत्पत्तिभूमि। प्रश्न० १३४। उत्त० ६०५। हिरण्याकरादिकं। जीवा० २७९। लोहाद्युत्पत्तिस्थानम्। प्रश्न० १२७। अनु० १४२। आगस्स तस्मिन्नुर्नतीत्याकरः। आचा० ५। हिरण्याकरादिः। जीवा० ४०। लोहाद्युत्पत्तिस्थानम्। भग० ३६। भिलपल्ली भिल्लकोट्टे वा। नि० चू० तृ० ५२ अ। बृ० द्वि० २४६ अ। कुत्रिकापणादिः। बृ० द्वि० २४२ अ। जत्थ घरट्टादिसमीवेसु बहुं जव मुसुई तो। नि० चू० प्र० ६२ अ। रूप्यसुवर्णाद्युत्पत्तिस्थानम्। नंदी २२८। सुवर्णादिरुत्पत्तिस्थानम्। ओघ० ९५। ताम्रादेरुत्पत्तिस्थानम्। आचा० ३२९। सुवर्णादिधातूनां खानि। नि० चू० द्वि० ७० आ।

आगरमहेसु-आकरमहो-खानिमहोत्सवः। आचा० ३२८।

आगररूवं-आकररूपम्। भग० १९३।

आगरिस-आकर्ष-चारित्रस्य प्राप्तिः। भग० ९०५। आकर्ष-तथाविधेन प्रयत्नेन कर्मपुद्गलोपादानम्। प्रज्ञा० ३१८। आकर्षणम्, प्रथमतया मुक्तस्य वा ग्रहणम्। आव० ३६३। एकानेकभवेषु ग्रहणानि। आव० १०५। आकर्षमाकर्ष-एकस्मिन्नानाभवेषु वा पुनः पुनः सामायिकस्य ग्रहणानि प्रतिपत्तये। अनु० २६०।

आगलणं-वैकल्यम्। व्य० प्र० ११३ आ।

आगलेंति-आकलयन्ति, जेष्याम इत्यध्यवस्यन्ति। भग० १७८।

आगलेइ-गृह्णाति। उप० मा० गा० ३१३।

आगल्लो-ग्लानः। बृ० तृ० १२१ आ।

आगसणं-आकृष्यत इति आगमणं तं च दविय। नि० चू० प्र० १७४ आ।

आगाढ-कर्कशम्। बृ० द्वि० ७३ आ। तीव्र। आव० ५८८। अत्यर्थम्। व्य० प्र० २५३ अ।

आगाढजोग-आगाढयोगः, गणियोग। ओघ० १८१।

आगाढपण्ण-आगाढप्रज्ञ, आगाढा-अवगाढा परमार्थ-

पर्यवसिता तस्यनिष्ठा प्रज्ञा-बुद्धिर्यस्यासौ। सूत्र० २३७। शास्त्राणि। व्य० प्र० २२६ अ।

आगाढो-आगाढतरा जम्मि जोगे जतणा सो। नि० चू० प्र० १९७ अ।

आगामिपहं-आगामिपथ, आगामिनो-उपभ्यस्य वस्तुन पन्था। ठाणा० ९८।

आगार-गृहम्। अनु० २४४। आगार-आक्रियतेऽनेनामिश्रेत आयत इति, आकारचेष्टारूप। आव० २८१। प्रत्याख्यानापवादहेतवोऽनाभोगादय। आव० ८४०। आकार-आक्रियत इत्याकार-प्रत्याख्यानापवादहेतुर्महत्तराद्याकार। भग० २९६। आकारा-प्रत्याख्यानापवादहेतवोऽनाभोगादय। ठाणा० ४९८। शरीरगता भावविशेषा। व्य० प्र० ६४ आ। प्रतिनियतोऽर्थग्रहणरिणाम। प्रज्ञा० ५२६। तच्छायामात्रम्। प्रज्ञा० २७१। प्रत्याख्यानापवादहेतुरनाभोगादि। आव० ८४०। बाह्यचेष्टारूप। विशे० ८८५। आकृतय, स्वरूपाणि। अनु० १३१। ठाणा० २५५। दिगवलोकनादि। बृ० प्र० ४३ अ। आकृति। जीवा० २०७। प्रभा। जीवा० २६९। प्रतिवस्तु प्रतिनियतो ग्रहणपरिणाम। जीवा० १८। मूर्ति। जीवा० २७३। विशेषग्रहणशक्ति। भग० ७३। स्थूलधीसंवेद्य प्रस्थानादिभावाभिव्यञ्जको दिगवलोकनादि। उत्त० ४४। सन्निवेशविशेष। सूर्य० २९३।

आगारधम्मं-आगारधर्मं द्वादशव्रतरूपो गृहस्थधर्मं।

आगारभाव-आकारभाव, स्वरूपविशेष। जं० प्र० १८। जीवा० १७६। आकार एव भाव। आव० ३३८।

आगारभावपडोयारे-आकारभावप्रत्यवतार, आकारस्य-आकृतेर्भावा-पर्याया, अथवा आकाराश्च भावाश्च आकारभावास्तेषां प्रत्यवतार-अवतरणमाविर्भाव। भग० २७७।

आगारभावमायाए-आकारभाव एव आकारभावमात्र। आव० ३३८।

आगारभेए-आकारभेद। प्रज्ञा० ५३१।

आगाल-आगाल, आगालनमागाल-समप्रदेशावस्थानम्। आचा० ५।

आगास-आकाशम्, अनावृतस्थानम्। प्रश्न० १३८। आकाशम्, सर्वद्रव्यस्वभावानाकाशयति-आदीपयति तेषां स्वभावलाभेऽवस्थानदानादिति, आङ्-मर्यादाऽभिविधिवाची, तत्र मर्यादायामाकाशे भवन्तोऽपि भावा स्वात्मन्येवाऽऽगते नाकाशतां यान्तीत्येवं तेषामात्मस्वरूपात्, अभिविधौ तु सर्वभावव्यापनादाकाशमिति। ठाणा० ५५। 'आङ्' इति मर्यादया स्वस्वभावापरित्यागरूपया काशन्ते-स्वरूपेण प्रतिभासन्ते अस्मिन् व्यवस्थिता पदार्था इत्याकाशम्, यदा स्वभिविधावाङ् तत्र 'आङ्' इति सर्वभावाभिव्याप्त्या काशते इत्याकाशम्। प्रज्ञा० ९। आकाशम्-गृहादिरहितम्। बृ० प्र० ६१ अ। आ-मर्यादया अभिविधिना या सर्वेऽर्था काशन्ते-स्वं स्वभावं लभंते यत्र तदाकाशम्। भग० ७७६। आदिति मर्यादया स्वस्वभावापरित्यागरूपया काशन्ते-स्वरूपेणैव प्रतिभासन्ते तस्मिन्पदार्था इत्याकाशं, यदा स्वभिविधावाङ् तदा आदिति-सर्वभावाभिव्याप्त्या काशत इति। उत्त० ६७२।

आगासगामित्तं-आकाशगामित्वम्। ठाणा० ३३०।

आगासगयं-आकाशगतं-व्योमवर्ति आकाशे वा-प्रकाशमित्यर्थ। भग० ६१।

आगासतल-आकाशतलम्। जीवा० २६९। कदाचच्छन्नकुट्टिमम्। जं० प्र० १०६। आव० ६९५, ६९९।

आगासथिग्गलं-आकाशथिग्गलं, शारदि मेघापान्तरालवर्त्याकाशखण्डम्। प्रज्ञा० ३६०। शारदि मेघमुक्तमाकाशखण्डम्। जं० प्र० ३२।

आगासफलिहं-आकाशस्फटिकम्, अतिस्वच्छस्फटिकविशेष। जीवा० २५३। जं० प्र० २७५। भग० १०।

आगासफलितोवमा-आकाशस्फटिकोपमा। प्रज्ञा० ३६४।

आगासफलोवमाइ-रत्नविशेष। जं० प्र० ११८।

आगासवासिणो-जातिजुंगितविशेषा। नि० चू० द्वि० ४३ आ।

आगासाइवाई-आकाशादिवादिन, अमूर्त्तानामपि पदार्थानां साधन(ने) समर्थवादिन। औप० २९। आकाशातिपातिन-आकाशं व्योमातिपतन्ति-अतिक्रामन्ति आकाशगामिविद्याप्रभावात् पादलेपादिप्रभावाद्वा आकाशाद्वा हिरण्यवृष्ट्यादिकमिष्टमनिष्टं वाऽतिशयेन पातयन्तीत्येवंशीला। औप० २९।

आगासिया-आकाशिता, आकाशं-अम्बरमिता-प्राप्ता, आकर्षिता वा-आकृष्ट, उत्पादितेति वा। औप० ७२।

आघ-सूत्रकृतांगे प्रथमश्रुतस्कंधे दशमाध्ययननाम। सूत्र० १८६। आख्यानवान्। सूत्र० १८८।

आघंसणं-एतेहिं एकसिं आघसणं। नि० चू० द्वि० ११९ अ। नि० चू० प्र० १९० अ।

आघवइत्ता-धर्ममाख्याय, आख्याय सामान्यतो यथा कार्यो धर्म्मं। ठाणा० ११९। आख्यायक-प्रज्ञापक। ठाणा० २६७।

आघवउ-आख्यात, तस्मिन् क्षेत्रे प्रसिद्ध। आव० ५२४।

आघवणा-आख्याना। उपा० ४७।

आघविए-आख्यात, सामान्यविशेषपर्यायाभिव्याप्तिकथनेन। उत्त० ५९८।

आघविज्जंति-प्राकृतशैल्या आख्यायन्ते-सामान्यविशेषाभ्यां कथ्यन्ते। सम० १०९। नंदी० २१२।

आघवियं-अर्घापितम्, अर्घ-पूजा तस्य आप-प्राप्तिर्जाता यस्य तत्, अर्घे वा आपितं-प्रापितं यत्तत्। प्रश्न० ११३।

आघवेइ-आख्यापयति सामान्यविशेषरूपतः। ठाणा० ५०२। भग० ७११।

आघवेज्ज-आमाहवेज्जि इत्यान् अर्घापयेद् वा-प्रतिपादनतः पूजां प्रापयेत्। भग० ४३६।

आघाअ,०ए-आघात। दश० २०१। मरणम्। सूत्र० १७८। तथाविधयतनया॰अन्यप्राणिनामात्मनश्च विधिवत् संलिखितशरीरतया यस्मिंस्तत्। उत्त० १४९।

आघातणं-आघातनम्, यत्र सङ्ग्रामे बहूनि मृतानि तत्। आव० ७४४।

आघातो-जावंतो भूतो अप्पणि मणसमहिए ते सव्वे घातयतीति। दश० चू० ९८।

आघादियं-वधयित्वा। नि० चू० द्वि० ७१ अ।

आघायट्ठाणं-आघातस्थानम्, वधस्थानम्। आव० ७४१।

आघायणं-आघातनम्, वध्यभूमिमण्डलम्। प्रश्न० ५९। जत्थ (मूषकादि) हतो त। नि० चू० तृ० ७२ अ।

आघायाय-आघातयन्, क्लेशनाभिदयक्रमकारणं समस्ताद्धातयन्-विनाशयन्। उत्त० ३५४।

आचरियं-आचरितम्, कल्प्यम्। दश० ११६।

आचार-(आयार), मर्यादा-ज्ञानाद्याचारः। बृ० प्र० २४९ आ। साध्वाचारप्रतिपादको ग्रन्थः। विशे० ६४८। शास्त्रविहितो व्यवहारः। उत्त० ७११। व्यवहारः। ठाणा० ६७। ज्ञानादिविषयः क्रियाकलापः। उत्त० ४५६। पूर्वपुरुषाचरितो ज्ञानाद्यासेवनविधिः, तत्प्रतिपादको ग्रन्थः। नंदी २०९। चारित्रम्। उत्त० ५८३। आचरणमाचारः-उचितक्रिया विनय इतियावत्। उत्त० ३४४।

आचारप्रणिधिः-(आयारपणिही), दशवैकालिकस्याष्टममध्ययनम्। दश० २२४।

आचारवस्तु-(आयारवत्थू), नवमपूर्वगततृतीयवस्तु। उत्त० २५९।

आचारसम्पत्-(आयारसंपया), संयमध्रुवयोगयुक्ततादिचतुर्भेदभिन्ना सम्पत्। उत्त० ३९।

आचारिकम्-(आयरिय), निजनिजाचारभवमनुष्ठानम्। उत्त० २६६।

आचार्यपरिभाषित्वम्-(आयरियपरिभासित), प्रथमसमाधिस्थानम्। प्रश्न० १४४।

आचालो-आचाल, आचाल्यतेऽनेनातिनिबिडं कर्मादीत्याचालः। आचा० ५।

आच्छिदणं-एकसिं ईषद्वा छेदनम्। नि० चू० प्र० १८९ अ।

आजवंजवीभाव-पुनः पुनर्भ्रमणभाव। आचा० ७९। उत्त० ३३६।

आजवंजवे-अजवंजवी, पुनः पुनर्भ्रमणम्। आचा० १९१।

आजाइ-आजायन्ते तस्यामित्याजातिः, आचारधर्मः। आचा० ६। आजातिः-मनुष्यजन्म गर्हिता आर्यधर्मकर्मादिरहिततया। ठाणा० ४१९। सम्मूर्च्छनगर्भोपपातानां जन्म। ठाणा० ५११। च्युतस्योद्वृत्तस्य वा कुमानुषत्वतिर्यक्त्वरूपा गर्हिता कुमानुषादित्वादेव। ठाणा० ३३३।

आजाइसहस्स-आजातिसहस्रम्, अनेकेषु देवादिजन्मप्रतिबद्धकर्मप्रदेशेषु अधिकरणभूतेषु यदन्यान्यभवगमनानि तत्स्वामिजीवानामाजातीनां च बहुशतसहस्राणामुपचारः। भग० २१७।

आजिणभद्दो-आजिनभद्र, आजिने द्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६१।

आजिणमहाभद्दो-आजिनमहाभद्र, आजिने द्वीपेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६१।

आजिणवरं-आजिनवरम्, चर्ममयं वस्त्रम्। जीवा० ३६१।

आजिणवरभद्दो-आजिनवरभद्र, आजिनवरे द्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६१।

आढत्तं-आरब्धम्। भग० २८२।
आढत्ता-आरब्धा। आव० ३३७।
आढत्तो-आरब्धः। आव० १०३, ४१३, ३६२। दश० ९७।
आढयं-आढकः, सेतिकाप्रमाणः। जं० प्र० २४४।
आढवेइ-आरभते। दश० ३८।
आढवेऊण-आरभ्य। आव० ३४१।
आढा-आदरः। सू० द्वि० ६७ आ।
आढाति-आद्रियते। दश० ५९। आव० ९९, ८१२।
आढायमाणे-आद्रियमानः। आचा० २८४।
आणं-आज्ञा-योगेषु प्रवर्तनलक्षणाम्। ठाणा० ३३१। विधिविषयमादेशम्। ठाणा० ३८६।
आणंतरिए-आनन्तर्यम्-सातत्यमच्छेदनमविरहः। ठाणा० ३४६।
आणंद-आनन्दः, द्वितीयमासक्षपणे भिक्षादाता। आव० २००। उपासकदशांगाद्यध्ययनम्, तन्नाम श्रावकः। उपा० १। गाथापतिः। आव० २१५। बालंदपादिरिकायां गाथापतिः। भग० ६६२। आनन्दः, षष्ठो बलदेवविशेषः। आव० १५९। श्रुतेन सामायिकाप्तौ दृष्टांतः। आव० ३४७। षोडशः मुहूर्तविशेषः। सूर्य० १४६। जं० प्र० ४५१। धरणेन्द्ररथानीकाधिपतिः। ठाणा० ३०२। षष्ठो बलदेवः। सम० १५४। शीतलजिनाद्यगणभृत्। सम० १५२। भगवान महावीरशिष्यः। भग० ६६८। अवधिनिर्णयविषये श्रमणोपासकः। दश० ९। प्रथमश्रावकनाम। आव० २१५।
आणंदकूडे-आनन्दनाम्नो देवस्य कूटमानन्दकूटम्। जं० प्र० ३१२।
आणंदपुरं - आनन्दपुरम्, इहलोकगुणविषये कच्छदेशे नगरम्। आव० ८२४। द्रव्यमुखोदाहरणे पुरं। नि० चू० द्वि० ४२ अ। स्थलपत्तनविशेषः। नि० चू० प्र० २२९अ। (मार्गोपसंपदि) नगरविशेषः। नि० चू० प्र० २४१ अ। नगरविशेषः। नि० चू० द्वि० ७१ अ। क्षेत्रविपर्यासे नगरविशेषः। नि० चू० द्वि० ८ अ।
आणंदपुरे मूलचैत्यगृहे सर्वजनसमक्षं दिवसतः सरस्कर्षणं भवति। नि० चू० प्र० ३५५ अ।
आणंदरक्खिए - आनन्दरक्षितः, पार्श्वापत्यस्थविरनाम। भग० १३८।
आणंदा-आनन्दा, पूर्वदिग्रुचकवास्तव्या दिक्कुमारी। आव० १२२। दक्षिणदिग्भाव्यञ्जनपर्वतस्यापरस्यां पुष्करिणी। जीवा० ३६४। अंजनकपर्वते पुष्करिणी। ठाणा० २३०। पौरस्त्यरुचकवास्तव्या तृतीया दिक्कुमारी। जं० प्र० ३९१।
आणंदिए-आनन्दितः, तुष्टः, हृष्टः, ईषन्मुखसौम्यतादिभावैः समृद्धिमुपगतः। भग० ११६, ३१७।
आणंदियं-आनन्दितम्, स्फीतीभूतम्। जीवा० २४३।
आण-आज्ञा, श्रुतपर्यायः। विशे० ४२३।
आणइंति-आनयन्ति। सू० द्वि० १०९ अ।
आणक्खिऊण-परीक्ष्य। आव० २५१।
आणक्खिस्सामि - अन्वीक्षिष्यामि - अन्वेषयिष्यामि। आचा० २८३।
आणक्खेउं-परीक्ष्य। ओघ० ३३। अनुमीय। सू० चू० १६४ आ।
आणक्खेऊण-ज्ञात्वा, लिखित्वा। नि० चू० प्र० ६ आ।
आणतं-एकोनविंशतिसागरोपमस्थितिके विमानम्। सम० ३७।
आणत्तं-अन्यत्वम्-अनगारद्वयसम्बन्धिनो ये पुद्गलास्तेषां भेदः। भग० ७४१।
आणत्तिअं - आज्ञप्तिकाम्, आज्ञां प्रत्यर्पयत। जं० प्र० १६२।
आणत्तो-आज्ञप्तः। आव० ४११।
आणपाण-आनप्राणः। सूर्य० २९२।
आणपाणकालो-आनपानकालः, उच्छ्वासनिःश्वासौ समुदितावेकः। जीवा० ३४४।
आणपाणलद्धी - अंतर्मुहूर्तेन चतुर्दशपूर्वपरावर्तनशक्तिः। ओघ० १५८।
आणमंति - आनन्ति। भग० १९१ उच्छ्वसन्ति, अन्तःस्फुरन्तीमुच्छ्वासक्रियां कुर्वन्ति, आनमन्ति उच्छ्वसन्ति। प्रज्ञा० २१९। 'अण प्राणने' इत्येतस्यानेकार्थत्वेन श्वसनार्थत्वात्, आनन्ति इत्यनेनाध्यात्मक्रिया। भग० १९।
आणमणिया-आज्ञापनी, त्रिंशत्क्रियामध्ये द्वादशी क्रिया। आव० ६१२। कार्ये परस्य प्रवर्तनं यथेदं कुर्विति भाषा। प्रज्ञा० २५६।
आणय-आनत, नवमदेवलोकनाम। प्रज्ञा० ६९।

आणरुई–आज्ञारुचि, आज्ञा–सर्वज्ञवचनात्मिका तस्यां रुचि–अभिलाषो यस्य स आज्ञारुचि । जिनाज्ञैव मे तत्त्व न शेषं युक्तिजातमिति योऽभिमन्यते स आज्ञारुचि । प्रज्ञा० ५६ ।

आणरुती–आज्ञारुचि आज्ञा–सर्वज्ञवचनात्मिका तया रुचि र्यस्य स तथा, यो हि प्रतनुरागद्वेषमिथ्याज्ञानतयाऽऽचार्यादीनामाज्ञयैव कुग्रहाभावाज्जीवादि तथेति रोचते स । ठाणा० ५०३ ।

आणवणप्पओगे–आनयनप्रयोग । आव० ८३४ । इह विशिष्टावधिके भूदेशाभिग्रहे परत स्वयगमनायोगाद्यदन्य सचितादिद्रव्यानयने प्रयुज्यते सन्देशकप्रदानादिना स्वयमेवमाने यम् इत्यानयनप्रयोग (दशाश्रुतकाशिके अतिचार)। उपा० १० ।

आणवणिया–आज्ञापनिका, जीवाजीवानानाययत । ठाणा० ३१७ । आज्ञापनस्य–आदेशनस्येयमाज्ञापनमेव वेत्याज्ञापनी सैवाज्ञापनिका, तज्ज कर्मबन्ध, आदेशनमेव चेति, आनायन वा आनायनी । ठाणा० ४३ ।

आणवणी–आज्ञापनी, असत्यामृषाभाषाभेद । दश० २१० । कार्य परस्य प्रवर्तनी । भग० ५०० ।

आणवेस्सामि–आनायिष्यामि । आव० ४१० ।

आणा–आज्ञा, मौनीन्द्रवचनम् । आचा० ४४ । तीर्थकर गणधरोपदेश । दश० २६५ । ज्ञानाद्यासेवारूपजिनोपदेश । भग० ५४ । कर्तव्यमेवेदमित्याद्यादेश । भग० १६७ । दुवालसगं गणिपिडग । नि० चू० तृ० ४ अ । उपदेश । सूत्र० १८३ । अर्थ । आव० ६०४ । आज्ञाप्यत– आज्ञा – हिताहितप्राप्तिपरिहाररूपतया सर्वज्ञोपदेश । आचा० ११३ । आज्ञया सूत्राज्ञया अभिनिवेशतोऽन्यथा पाठादिलक्षणया अतीतकाले अनंता जीवाश्चतुरन्त समार कान्तारं नारकतिर्यग्नरामरविविधवृक्षजालदुस्तरं भवा_वीगह नमित्यर्थ, अनुपरावृत्तवन्तो जमालिवत् अर्थाज्ञया पुनराभि निवेशतोऽन्यथाप्ररूपणादिलक्षणया गोष्ठामाहिलवत् उभयाज्ञया पुन पञ्चविधाचारपरिज्ञानकरणोद्यतगुर्वादेशादेरन्यथाकरण लक्षणया गुरुप्रत्यनीकद्रव्यलिङ्गधार्यनेकश्रमणवत् सूत्रार्थोभये विराध्येत्यर्थ, अथवा द्रव्यक्षेत्रकालभावापेक्षमागमोक्तानुष्ठान मेवाज्ञा तया तदकरणेनेत्यर्थ । सम० १३३ । हे साधो ! भवतेदं विधेयमित्येवंरूपामादिष्टि । ठाणा० ३०१ । गूढार्थपदे रगीतार्थस्य पुरतो देशान्तरस्थगीतार्थनिवेदनाय गीतार्थो यदतिचारनिवेदनं करोति सा । ठाणा० ३०१ । यदगीतार्थस्य पुरतो गूढार्थपदैर्देशान्तरस्थगीतार्थनिवेदनायातिचारालोचन इतरस्यापि तथैव शुद्धिदान सा । भग० ३८४ । ठाणा० ३१८ । आदेश । भग० १२२ । जीवा० २४३ । सर्वज्ञवचना० त्मिका । प्रज्ञा० ५८ । आङिति स्वस्वभावावस्थानात्मिकया मर्यादयाऽभिव्याप्त्या वा ज्ञायन्तेऽर्था अनयेति, भगवदभि हितागमरूपा । उत्त० ४४ । आगम । सूत्र० ४०५ । आव० ८६२ । उत्त० ४४९ । अनुज्ञा । पिण्ड० १६९ । गुर्वनियोगा त्मिका । उत्त० ५७२ । यथोक्ताज्ञापरिपालना । नंदी २४८ । द्वादशांग सूत्रार्थोभयभेदेन त्रिविधे, द्वादशांगमेव चाज्ञा, आज्ञाप्यते जन्तुगणो हितप्रवृत्तौ यया साऽऽज्ञेति, अथवा पञ्चविधाचारपरिपालनशीलस्य परोपकारकरणैकरतस्य गुरोर्हितोपदेशवचनमाज्ञा । नंदी २४८ । श्रुतस्य पर्याय । विशे० ४१६ ।

आणाइपो–आज्ञादय, आज्ञाप्रसादय । पिण्ड० ६९ ।

आणाइयं – आज्ञातिगं–आज्ञा–जिनादेशमतिगच्छति–अति- क्रामति यत्तत्, अधर्मद्वारस्य पाठान्तरेणाष्टात्रिंशत्तिनम नाम । प्रश्न० २७ ।

आणाईसरसेणावच्चं–आज्ञेश्वरसेनापत्यम्, आज्ञाप्रधानस्य सतो यत् सेनापत्यम् । भग० १५४ । स्वस्वसैन्य प्रत्य द्भुतमाज्ञाप्राधान्यम् । प्रज्ञा० ८९ ।

आणाकरवी–आज्ञाकारी, आगमानुसारप्रवृत्तिक । आचा० २१० ।

आणानिद्देसयरे – आज्ञानिर्देशकर, आज्ञा–'सौम्य ! इद कुरु इद च मा कार्षी' इति गुरुवचन तस्या निर्देश, इदमि त्थमेव करोमीति निश्चयाभिधानं, तत्कर । उत्त० ४४ । भगवदभिहितागमरूपया उत्सर्गापवादाभ्यां प्रतिपादनमाज्ञा निर्देश इदमित्थ विधेयमिदमित्थं चयेवमात्मक तत्करणशील स्तदनुलोमानुष्ठानो वा । उत्त० ४४ । आज्ञानिर्देशतर- आज्ञानिर्देशेन वा तरति भवाम्भोधिमिति । उत्त० ४४ ।

आणानिद्देसे–आज्ञानिर्देश, आज्ञा–भगवदभिहितागमरूपा तस्या निर्देश –उत्सर्गापवादाभ्यां प्रतिपादनम् । उत्त० ४४ ।

आणापाण – आनप्राण, उच्छ्वासनिश्वासकाल । भग० २११ ।

आणापाणू-आनप्राणा - उश्वासनिःश्वासकालः संख्याताव-लिकाप्रमाणः। ठाणा० ८५।

आणाफलं - आज्ञाफलम्-जनेन यथोदितवचनप्रतिपत्तिरूपा फलं प्रयोजनं अस्य। उत्त० ५८०।

आणामं-(अननम्-श्वसनम्)। भग० १०९।

आणामियं-आनामितम्, ईषन्नामितम्। प्रश्न० ८२। आरोपितम्। जीवा० २७३।

आणाय-आज्ञाय, स्वरूपाभिव्याप्त्याऽवगम्य। उत्त० १०४। आनायम्, जालम्। उत्त० ४०७। प्रश्न० २२।

आणारुइ-आज्ञारुचिः, आज्ञा-सर्वज्ञवचनात्मिका तया रुचि-र्यस्य सः। उत्त० ५६३। आज्ञा-सूत्रव्याख्यानं निर्युक्त्या-दिश्रद्धानम्। औप० ४४। निर्युक्त्यादि तत्र तया वा रुचिः। ठाणा० १९०। भग० ९२६।

आणाविजए - आज्ञाविचयम्, आज्ञागुणानुचिन्तनम्। औप० ४४। प्रवचनपर्यालोचनविषयमाज्ञालोचनविषयं धर्म-ध्यानम्। ठाणा० १९०। आणाविजय-आज्ञा-जिनप्रवचनं तस्या विचयो-निर्णयो यत्र तदाज्ञाविचयम्। भग० ९२६। आज्ञा वा विजीयते अधिगमद्वारेण परिचिता क्रियते यस्मि-न्निति। ठाणा० १९०। आ-अभिविधिना ज्ञायन्तेऽर्था यया साऽऽज्ञा-प्रवचनं सा विचीयते-निर्णीयते पर्यालोच्यते वा अस्मिन्नत्। ठाणा० १९०।

आणावियं-आनायितम्। आव० ४११।

आणासाएमाणे-अनास्वादयमानः, आज्ञाविषयमनुवर्णोऽना-स्वादयन् वाऽभुञ्जानोऽतर्कयन्नस्पृहयन्नप्रार्थयमानोऽनभिलषन्। उत्त० ५८८।

आणितिल्लयं-आनीतः। आव० ५५८।

आणिमलो-अनलगिरिगजस्य विष्टा। नि० चू० प्र० १४९ अ।

आणुकंपिए-अनुकम्पितः, कृपावान्। भग० १६९।

आणुग-अनूप-नद्यादिपानीयप्रायः। सू० प्र० १७५ आ।

आणुगामिय-देशान्तरगतमपि ज्ञानिनं यदनुगच्छति लोच-नवदिति तदेवानुगामिकम्। ठाणा० ३७०। धूमादिहेतुर-नुगामि ततो जातमानुगामिकम्-अनुमानं तद्रूपो व्यवसाय.। ठाणा० १५१।

आणुगामियं-आनुगामिकम्। औप० ५८। आनुगामुकः-अनुगमनशीलः। आव० २८।

आणुगामियत्ताए-आनुगामिकत्वाय, शुभानुबन्धायेत्यर्थः। भग० ४५९। भवपरम्परानुबन्धसुखाय। भग० ११५।

आणुपुव्वी-आनुपूर्वी, शिष्यप्रशिष्यपरम्परात्मिका। उत्त० ८। क्रमेण मरणकालं पत्तस्स आणुपुव्वी। नि० चू० द्वि० ५३ अ। वृषभनासिकान्यस्तरज्जुसंस्थानीया, यया कर्म-पुद्गलसंहत्या विशिष्टं स्थानं प्राप्यतेऽसौ, यथा बोर्व्योसमा-ग्राधश्चरणादिरूपो नियमतः शरीरविशेषो भवति सा। आव० ८४। यथाऽऽसन्नम्। भग० ३१। मूलादि-परिपाटी। जीवा० १८७। आव० ८०३। क्रमेण यथाऽऽ-सन्नम्। जं० प्र० ४६१। शाब्दीयोपक्रमाद्यभेदः। ठाणा० ४। आव० ५६। यदुदयादन्तरालगतौ जीवो याति सदा-नुपूर्वीनाम। सम० ६७। उत्त० ६४१। आनुपूर्वी-यथा-सन्नम्। जीवा० २०।

आणुपुव्विगढिया-आनुपूर्व्या-परिपाट्या ग्रथिता-गुम्फिता इति आनुपूर्वीग्रथिता। भग० २१४।

आणुपुव्वो-आनुपूर्व्यः, क्रमेण नीचैर्नीचैस्तरभावरूपः। जीवा० १९८।

आणू-तरसालो। दश० चू० ५४।

आतंतमे - आत्मतमः-आत्मानं तमयति-खेदयति इति आत्मतमः-आचार्यादिः। आत्मनि तमः-अज्ञानं क्रोधो वा यस्य स आत्मतमाः। ठाणा० २१४।

आत-(आय)-अप्पा। नि० चू० प्र० १२ अ।

आतवेतावच्चकरे - आत्मवैयावृत्त्यकरः, भक्तो विम्भो-गिको वा। ठाणा० २४१। आत्मवैयावृत्त्यकरः-यस्मात् स तपसा पूर्वसञ्चितकर्ममलं शोधयन्नात्मन एवोपकारे वर्तते ततः सः। व्य० प्र० १४८ आ।

आतसरीरसंवेगणी - आत्मशरीरसंवेगनी - यदेतदस्मदीयं शरीरमेतदशुचि अशुचिकारणजातमशुचिद्वारविनिर्गतमिति न प्रतिबन्धस्थानमित्यादिकथनरूपा। ठाणा० २१२।

आतानवितानं-(आयाणवियाण), तन्तुषु वेमादिक्रिया। विशे० ८६९।

आतावणा-आतापना। प्रश्न० १०७।

आतावते - आतापयति-आतापना शीतातपादिसहनरूपां करोति इति आतापक.। ठाणा० २९९।

आतियं-आचितम्, रचितम्। प्रश्न० ४७।

आतियणो-अदने-भक्षणे। व्य० प्र० १८० अ।

आतियाणे-धुंजणवेलाए ठाति। नि० चू० तृ० ३८ आ।
आतुरीभूः। नंदी १५४।
आतुलुगा-साधारणबादरवनस्पतिकायविशेषः। प्रज्ञा० ३४।
आतो-आयः। उत्त० १४७। आहोस्वित्। उत्त० ३२३।
आतो(उ)ज्जं-आतोद्यम्, वाद्यम्। प्रश्न० ८। पटहादिः। ठाणा० ६३।
आत्तग्गंणं-आदत्तेन-गृहीतेन, आत्मीयेन वा। अनु० २२।
आत्ततरः-दृढतरः, अयमनयोरतिशयेनात्तो-गृहीतो यत्नेनाध्यवसित इत्यर्थः। आचा० २९४।
आत्तप्रज्ञाहा-(अत्तपण्णहा), आत्तां-सिद्धान्तादिश्रवणतो गृहीतामात्तो वा-इहपरलोकयोः सद्बोधरूपतया हितां प्रज्ञाम्-आत्मनोऽन्येषां वा बुद्धिं कुतर्कव्याकुलीकरणतो हन्ति यः ■। उत्त० ४३५।
आत्मच्छन्दाः-आत्मनैव उपधेरानयनाय छन्दोऽभिप्रायो विद्यते येषां ते आत्मछन्दसः। व्य० द्वि० २१ आ।
आत्मरक्षा-शिरोरक्षस्थानीयाः। तत्त्वा० ४-४।
आत्मरक्षी-विषयाभिलाषविगमान्निर्निदानः सन् आत्मानं रक्षत्यपायेभ्यः-कुगतिगमनादिभ्य इत्येवंशीलः। उत्त० २२५।
आत्मवादी-अस्त्यात्मा सनो नित्य इति वादी। आव० ८१६।
आत्मसमीपे-आत्मोत्सङ्गे। ओघ० ११८।
आत्मसंवेदनीय-आत्मना क्रियत इति। आव० ४०५।
आत्मागम-अत्तागम, गुरूपदेशमन्तरेणात्मन एव आगमः। अनु० २१९।
आत्माधिष्ठितयोगी-अत्ताहिट्ठियजोगी, आत्माधिष्ठितेन-लब्धेन भक्तादिना युज्यत इति, अत्तलद्धिओ। ओघ० १५१।
आत्मार्थ-अत्तट्ठे, अर्थ्यमानतया स्वर्गादि-, यद्वा आत्मैवार्थ.। जैत्त० २८४। विशेषनम्। व्य० प्र० १९५ आ।
आत्माधिकम्-अत्तट्ठिय, आत्मनोऽर्थ, आत्मार्थस्तस्मिन् भवम्। उत्त० ३६०।
आदंसग-आदर्शक-दर्पणः। उत्त० ६५०।
आदंसगहत्थिआ-आदर्शहस्ता। आव० १२२।
आदंसिआइ-वाद्यविशेष। जै० प्र० ११८।
आदण्ण-खिन्नः। आव० ९४, ३५५।
आदत्ति-निरधनि। प्रश्न० १०७।
आदर्शकगृहं-भरतस्य केवलज्ञानस्थानम्। प्रज्ञा० २०।
आदर्शसमानः-(अदागसमाण), आदंसगसमाणे, सो हि साधुभिः प्रज्ञाप्यमानानुत्सर्गापवादादीनार्गमिकान् भावान् यथावत्प्रतिपद्यते यथिद्विनार्थानादर्शवत् ॥ आदंसगसमाणः। ठाणा० २४३।
आदाण-आदानम्, आदीयते-स्वीक्रियतेऽनुष्ठानं (?) कर्म येन तत्, कषायाः, परिग्रहः, ज्ञानाद्यनुष्ठानं वा। सूत्र० २६४। (बहिद्धादाणं)-बहिर्द्धा-मैथुनम् आदानं च-परिग्रहः, परिग्राह्यं वा वस्तु धर्मोपकरणाद् बहिः। ठाणा० २०२। मोक्षार्थिनाऽऽदीयते-गृह्यत इति, संयमः। सूत्र० २२९। कारणम्। नि० चू० प्र० ११६ अ। प्रभवः, प्रसूतिः। नि० चू० प्र० ११६ अ। ग्रहणम्। आव० ८२२। आदीयत इति, धनम्। आव० ६४६। नि० चू० प्र० ३१७ अ। आदानः, अश्व। सूर्य० २०९।
आदाणणिक्खेयणासमिती-आदाननिक्षेपणासमितिः, जं वत्थपायसथारगफलगपीढगकारण्डादा गहनिक्खेवकरणे पडिलेहिय पमज्जिय सा। नि० चू० प्र० १७ अ।
आदाणनिक्खिवणअणाभोगकिरिया-आदाननिक्षेपाऽनाभोगक्रिया, रजोहरणेनाप्रमार्ज्य पात्रचीवरादीनामादानं निक्षेपं वा करोति सा। आव० ६१४।
आदाणभयं-आदानभयम्, धनस्य चौरादिभ्यो यद्भयम्। आव० ६४६। धनहरणभये। आव० ४७२। आदानं-धनं-तदर्थं चौरादिभ्यो यद्भयम्। ठाणा० ३८९। द्रव्यमाश्रित्य भयम्। प्रश्न० १४३।
आदाणमरियंसि-आदानमृते। उपा० ३८।
आदाणिज्जं-आदानीयम्, सूत्रकृताङ्गस्य पञ्चदशमध्ययनम्। सूत्र० १५९।
आदाणियं-आदानीयम्, आदीयते-गृह्यते उपादीयत इति, पदमर्थो वा। सूत्र० ९।
आदाननिक्षेपणासमितिः-रजोहरणपात्रचीवरादीनां पीठफलकादीनां चावश्यकार्थं निरीक्ष्य प्रमृज्य चादाननिक्षेपौ। तत्त्वा० ९५।
आदाणीय-आदानीयः, उपादेयः। सम० ८१। ठाणा० ३६९। परमार्थतो भवतादानीयं ज्ञानदर्शनचारित्ररूपं तद्। आचा० १४०।

आदितियमरण-यानि हि नरकाद्यायुष्कतया कर्मदलिकान्यनुभूय म्रियते मृतश्च न पुनस्तान्यनुभूय पुनर्मरिष्यत इत्येवं यन्मरणं। भग० ६२४।

आदि-आदि:, कारणम्। प्रश्न० ४।

आदिए-आददीत, गृह्णीयात्। उत्त० ५१७।

आदिकरः-आइगर, आदौ प्राथम्येन श्रुतधर्ममाचारादिग्रन्थात्मकं करोति - तदर्थप्रणायकत्वेन प्रणयतीत्येवंशील आदिकरः। सम० ३। प्रथमतया प्रवर्तनशीलः। व्य० द्वि० ३८५ अ।

आदिगरमंडलगं-आदिकरमण्डलम्। आव० १४६।

आदिच्चो-आदित्यः। जीवा० ३२१। सूर्यसंवत्सरः। सूर्य० १२।

आदिट्ठ-आदिष्टः, विशेषितः। भग० ४७।

आदिट्ठा-गृहीता। नि० चू० प्र० २०७ आ।

आदित्यमासः-त्रिंशदहोरात्राणि रात्रिन्दिवस्य चार्द्धं, दक्षिणायनस्योत्तरायणस्य वा षष्ठभागमानः। बृ० प्र० १८६ आ।

आदित्ययशा-भरतपुत्रनाम। व्य० द्वि० १२९ आ।

आदिमा भाषा - आवश्यकादय॰ सूत्रकृताङ्गं यावत् ये आगमग्रन्थास्तेषु ये पदार्था अभिधेयास्ते। बृ० प्र० १२८ आ।

आदित्यरथः-वालिसुग्रीवपिता विद्याधरः। प्रश्न० ८९।

आदियणं - ग्रहणं। नि० चू० प्र० ११४ अ। पिबतस्स। नि० चू० तृ० ६५ आ।

आदियणआ-आदानम्, ग्रहणम्। आव० ६१४।

आदियणा-आदानम्, परधनस्य ग्रहणं, तृतीयाधर्मद्वारस्य पञ्चदशं नाम। प्रश्न० ४१।

आदिस्पर्शे। जीवा० १४०।

आदीअदिट्ठभावे - आदौ-आवश्यकादिशास्त्रेषु वर्तमाना अदृष्टा भावा येन सः। बृ० प्र० १२६ आ।

आदेज्ज-आदेया, दर्शनपथमुपगता सती पुनः पुनराकाङ्क्षणीया। जं० प्र० १११। आदेय॰, रम्यः। प्रश्न० ८२।

आदेज्जनाम-आदेयनाम, यदुदयवशात् यच्चेष्टते भाषते वा तत्सर्वं लोकः प्रमाणीकरोति दर्शनसमनन्तरमेव च जनोऽभ्युत्थानादि समाचरति तत्। प्रज्ञा० ४७५।

आदेयवचनता-सकलजनग्राह्यवाक्यता। उत्त० २१।

आदेयाकमाय-दैवकृतभ्रुकुटिभङ्गुराकारः। आव० ३१०।

आदेयातः। नंदी ७०।

आदेसिकं-श्रमणानुद्दिश्यादेशम्। बृ० प्र० ८३ अ।

आदेसं-उद्दिष्टं। नि० चू० प्र० २३० आ। विशेषं प्रतिनियतव्यक्त्यात्मकम्। उत्त० ६७३।

आदेसतिगं-आदेशत्रिकम्, मतत्रिकम्। पिण्ड० १०।

आदेसदव्वसुद्धी - आदेशद्रव्यशुद्धिः, द्रव्यशुद्धिभेदः। दश० २११।

आदेसफलं-आदेशफलम्। आव० ३४३।

आदेसा-पाहुणा। नि० चू० प्र० १११ अ। प्राघूर्णका। बृ० प्र० ८५ आ।

आदेसे - आदेशः, आदिश्यते यस्मिन्नागते सम्भ्रमेण परिजनस्तद्यथासनदानादिव्यापारे सः, प्राघूर्णकः। सूत्र० १००।

आदेसो-आदेशः, प्रकारः। जीवा० ५३। मुत्ताएसो। नि० चू० प्र० ७१ अ। अनुज्ञा। व्य० द्वि० १४६ अ। नयान्तरविकल्पः। व्य० द्वि० ३५४ आ।

आद्यशब्द - तर्कणाक्षेपादिप्रतिपादनः। नि० चू० प्र० २२५ अ।

आद्रहणम्-उच्छलदुष्णजलम्। दश० १७४। पिण्ड० ३५।

आधरिसितो-आधर्षितः। आव० ३७१।

आधत्त-आधत्तम्, ग्रहणके मुक्तम्। बृ० द्वि० १२० अ।

आधरिसेहिति-आधर्षिष्यति। आव० १७४।

आधाकम्मिए-आधाय-आश्रित्य साधून् कर्म्म-सचेतनस्याचेतनीकरणलक्षणा अचेतनस्य वा पाकलक्षणा क्रिया यत्र भक्तादौ तदाधाकर्म्म तदेवाधाकर्म्मिकम्। ठाणा० ४६०।

आधायणं-जत्थ वा महा सगाणे मता। नि० चू० तृ० ७३ अ।

आधिः-मनःपीडा। भग० ४।

आधिदैविकम्-दैवादिसत्कं दुःखम्। उत्त० २६६।

आधिभौतिकम्-अन्यभूतसत्कं दुःखम्। उत्त० २६६।

आधूय - प्रकम्पित्वा, उत्क्षेन शाखाहस्ताहत्य। जं० प्र० २३०।

आध्यारुहकम्-हरितभेद। आचा० ५७।

आध्यात्मिकम्-अज्झत्थियं, आत्मसत्कं दुःखम्। उत्त० २६६। आत्मनि क्रियमाणम्। आचा० ४१६।

आनगारिकम् - अनगारेषु-भावभिक्षुषु भवमानगारिकमनुष्ठानम्। उत्त० ३३९।

आनन्द-श्रुतसामायिकलाभे दृष्टान्तः। आव० ३४०।

आनन्दपुरम्–स्थलपत्तने नगरविशेष । बृ० प्र० १८१ आ । जितारिराज राजधानी । बृ० तृ० १०७ आ । नगरविशेष. । व्य० प्र० १४६ अ, ४ आ । व्य० द्वि० २६६ अ ।

आनन्दविजयः–आचार्यनामविशेष । जं० प्र० ५४५ ।

आनन्दविमलः–आचार्यनामविशेष । जं० प्र० ५४३ ।

आनुगामिकः–आ-समन्तादनुगच्छतीत्येवंशीलमानुगामिक, अनुगमः प्रयोजनं यस्य सः । प्रज्ञा० ५३९ । अनुगच्छति साध्यभावे न भवति यो धूमादिहेतु सोऽनुगामी ततो जातमानुगामिक, अनुमानं, तद्रूपो व्यवसाय । ठाणा १५१ ।

आनुपूर्वी–यथासक्रम् । प्रज्ञा० ५०३ । कूर्परलाङ्गलगोमूत्रिकाकारेण यथाक्रम द्विनिचतु समयप्रमाणेन विग्रहेण भवान्तरोत्पत्तिस्थानं गच्छतो जीवस्यानुश्रेणिनियता गमनपरिपाटी । प्रज्ञा० ४७३ । अन्तर्गतौ गत्यन्तरमानुपूर्व्या प्रापणसामर्थ्यं, शरीराङ्गोपाङ्गानां विनिवेशक्रमनियामक वा कर्म । तत्त्वा० ८-१२ ।

आनुक्रमः–अनुपरिपाटी । अनु० ५१ ।

आपणवीही–आपणवीथि, रथ्याविशेष । जं० प्र० ४१३ । आपणवीथि । भग० ४७६ ।

आपन्नपरिहारः–मासिक वा द्विमासिक वा यावत् षण्मासिक वा प्रायश्चित्तं । व्य० प्र० ४५ आ ।

आपाकः–भाण्डपचनस्थानम् । ठाणा० ४१६

आपागपत्तं – आपाकप्राप्तम्, ईषत् पाकाभिमुखीभूतम् । प्रज्ञा० ४५९ ।

आपाण्डु–आ-ईषत्पाण्डुत्वभाज', पाण्डु । उत्त० ६८९ ।

आपीडः–शेखरक । जीवा० २७२ । आमेलक –शेखरक । जीवा० २०७, २६१ ।

आपुच्छणा – आपृच्छनमापृच्छा, विहारभूमिगमनादिप्रयोजनेषु गुरोः कार्या, समाचार्या षष्ठभेद । आव० २५९ । आपृच्छना । ओघ० १५१ । भग० ९२० । स्वकार्यप्रवृत्तावापृच्छनम् । बृ० प्र० २२२ अ । विहारभूमिगमनादिषु प्रयोजनेषु गुरो पृच्छा । ठाणा० ४९९ ।

आपूपिकः । नंदी १६५ ।

आपूरितं – आपूर्यमाणम्, परिपूरिते पवने भूयो जलेन भ्रियमाणम् । जीवा० ३०८ ।

आपूरियं – आपूरितम्, व्याप्तं, भृतं, वासितम् । विशे० १५० ।

आप्त–आप्त, ज्ञानदर्शनचारित्राणि येनाप्तानि स, रागद्वेषप्रहीण, इष्टा. शोध्ये शोधि विषये ये आप्ता । व्य० द्वि० ३८९ आ ।

आप्तप्रज्ञाहा – सिद्धान्तादिश्रवणतो गृहीतामार्गा या इहपरलोकयो सद्बोधरूपतया हिता–प्रज्ञाम्–आत्मनोऽन्येषां वा बुद्धि कुतर्कव्याकुलीकरणतो हन्ति य' गः । प्रश्न० ४३५ ।

आप्नोति–आत्मवशता नयति । प्रज्ञा० १६२ ।

आप्रच्छना–भदन्त ! करोमीदमित्येवं गुरो' प्रच्छनमाप्रच्छना । अनु० १०३ । सम० १५८ ।

आप्फोडिऊण–आस्फोट्य । आव० ११८ ।

आबद्धसेओ–आबद्धस्वेद । आव० ५१५ ।

आबद्धो–आबद्ध', आरब्ध । आव० ५१५ ।

आबाहा–आबाधा, ईषद्बाधा । भग० २१८ । जं० प्र० १२४ । जन्मजरामरणक्षुत्पिपासादिका आबाधा । ठाणा० ४८८ ।

आबाहाए–अन्तरे कृत्वेति शेष । सम० १६ ।

आभंकरं – सनत्कुमारकल्पे त्रिसागरस्थितिकं विमानं । सम० ८ ।

आभंकरपभंकरं–आभंकरवत् । सम० ८ ।

आभंकरे–आभङ्कर, सप्ततितमग्रहनाम । ठाणा० ७९ । अष्टषष्ठितमग्रहनाम । जं० प्र० ५३५ ।

आभट्ठो–आभाषित, सलप्त. । आव० २४१ ।

आभरण–आभरणानि, मुकुटादीनि । जं० प्र० १४५ ।

आभरणचक्केरी–देवछन्दके पृथ्वीपकरणम् । जीवा० २३४ ।

आभरणपिया । नि० चू० तृ० ९ अ ।

आभरणवासा – आभरणवर्षा, आभूषणवर्षणम् । भग० १९९ ।

आभरणविचित्ताणि–आभरणविचित्राणि, गिरिविटकादिविभूषितानि । आचा० ३९४ । नि० चू० प्र० २५५ अ ।

आभरणविधी–हारऽर्द्धहारादिया आभरणविधी । नि० चू० प्र० २७६ आ । उपभोगविधिविशेष । उपा० ३ ।

आभरणवुट्ठी–आभरणवृष्टि । भग० १९९ ।

आभरणाणि – आभरणानि, अङ्गारिधेयानि । जं० प्र० २२१ । आभरणप्रधानानि । आचा० ३९४ । नि० चू० प्र० २५५ अ ।

आभवंतितो-आभवन्तिक -व्यवहार । व्य० द्वि० ३८१ आ।

आभवति- *स्वं भवति । आव० ८२१।*

आभव्वं--आभाव्यं, शैक्ष दीक्षिका वा । बृ० द्वि० ७० आ।

आभा-आभा, आकार । प्रज्ञा० ८७। छायावर्ण । सूर्य० १४०। प्रतिभास । जीवा० ३११। वर्णस्वरूपम् । जीवा० १०३।

आभागी-भोक्ता । आव० ८१५।

आभासइ-आभासयति, समन्तात सर्वासु दिक्षु अवभासयति । जीवा० ३१२।

आभासिआ-म्लेच्छविशेष । प्रज्ञा० ५५।

आभासिय-*म्लेच्छान्तरद्वीपनाम । ठाणा० २२६।*

आभासितो-आभाषिक , अन्तरद्वीपविशेष । जीवा० १४४।

आभासियं-अभाषिकम्-विवक्षितभाषामजानाम । आव० ६१४।

आभासिय-आभाषिक , म्लेच्छविशेष । प्रश्न० १४।

आभासियदीवे-अन्तरद्वीपनाम । ठाणा० २२६।

आभिओग-आ - समन्तादाभिमुख्येन युज्यन्ते-प्रेष्यकर्मणि व्यापार्यन्ते इति आभियोग्या -शक्रलोकपालप्रेष्यकर्मकारिणो व्यन्तरविशेषा । जं० प्र० ७५। आभियोग्यम्-कर्मकर भाव । दश० २४८। अभियोग्यभावना-कुत्सितभावना। उत्त० ७०७। अभियोगभावनाजनित । ठाणा० २०४।

आभिओगसेढीओ - आभियोग्या -शक्रलोकपालप्रेष्यकर्मकारिणो व्यन्तरविशेषास्तेषामावासभूते श्रेण्यौ । जं० प्र० ७५।

आभिओगिए-आभियोगिक अभियोगे-प्रेष्यकर्मणि व्यापार्यमाणत्वे नियुक्ता । जीवा० २४३।

आभिओगिय-आभियोगिक , वशीकरणाय मन्त्राभिसंस्कृतम् । आव० ६४२।

आभिओगा-आभियोग्यम्, वशीकरणादि द्रव्यतो द्रव्यसंयोगजनितं, भावतो विद्यामन्त्रादिजनितम् , बलात्कारो वा, प्रश्न० ३८। आभियोग -कार्मणम् । बृ० तृ० १२२ आ।

आभिग्गहिओ-आभिग्रहिक , अभिग्रहेण निर्वृत्त , कायोत्सर्ग । आव० ७८३।

आभिचारुका-विद्याविशेष । बृ० तृ० २०३ आ।

आभिट्ठ *आपतितम् । पउ० ४-४२।*

आभिडणं-आवडणम् । ओघ० २०४।

आभिणियोहिय-आभिनिबोधिकम् , अभिमुखो-योग्यदेशावस्थितवस्त्वपेक्षया नियत -स्वस्वविषयपरिच्छेदकतयाऽवबोध -अवगमोऽभिनिबोध , स एवाभिनिबोधिकम् । उत्त० ५५७। विशे० २२६। अर्थाभिमुखो नियत -प्रतिनियतस्वरूपो बोधो-बोधविशेष , अभिबुध्यतेऽस्माद् अस्मिन् वेति । प्रज्ञा० ५२६। आभिनिबोधिकम्-मतिज्ञानम् । आव० १८। आभिमुख्येन निश्चितत्वेनावबुध्यते-संवेद्यते आत्मा वस्ति, आभिनिबोध , अवग्रहादिज्ञान, अथवा आत्मा तेन प्रस्तुतज्ञानेन तदावरणक्षयोपशमेन वा करणभूतेन यगादि वस्त्वभिनिबुध्यते, तस्माद् वा प्रकृतज्ञानात् *क्षयोपशमाद्वाऽभिनिबुध्यते, तस्मिन् वाऽभिबुध्यते, क्षयो-*पशमे वा सत्यभिनिबुध्यतेऽवगच्छतीत्यभिनिबोधो ज्ञानम् , क्षयोपशमो वा, सो वा 'अभिणिबुज्झए'त्ति, अथवाऽभिनिबुध्यते वस्त्वभिगच्छतीत्यभिनिबोध , स एवाभिनिबोधिकम् । विशे० ५३। अर्थाभिमुख्ये नीति नैयत्ये, ततश्चाभिमुखोवस्तुयोग्यदेशावस्थानापेक्षी नियत-इन्द्रियाण्याश्रित्य स्वस्वविषयापेक्षी बोध , अभिनिबुध्यते आत्मना स । अभिनि-*बुध्यते वस्त्वसौ इत्यभिनिबोध स एवाभिनिबोधिकम् ।* अनु० ३।

आभिणियोहियनाण-अर्थाभिमुखोऽविपर्ययरूपत्वात् नियतोऽसंशयरूपत्वाद्बोध -संवेदनमभिनिबोध स एव स्वार्थिके कप्रत्ययोपादानादाभिनिबोधिक ज्ञातिर्ज्ञायते वाऽनेनेति ज्ञानम् , आभिनिबोधिक च तज्ज्ञान चेति आभिनिबोधिकज्ञानम्, इन्द्रियानिन्द्रियनिमित्तो बोध इति । भग० ३४३। इन्द्रियपञ्चकमनोनिमित्तो बोध । अनु० २। *अर्थाभिमुखो नियतो बोध , अभिनिबोधे भव तेन वा निर्वृत्त तन्मयं तत्प्रयोजनं वा, अथवा अभिनिबुध्यते तत् , अथवा अभिनिबुध्यते* ऽनेनास्मादा अस्मिन् वा तत् तदावरणकर्मक्षयोपशम इति भावार्थ । आव० ७। अभिनिबोधिकम् , आत्मैव वाऽभिनिबोधोपयोगपरिणामानन्यत्वाद् अभिनिबुध्यत इति वा । आव० ७।

आभियोगिक - *अभियोगभावनाभावितत्वेनाभियोगिकदेवे* भूत्पत्ता अभियोगवर्तिन । भग० १९०।

आभियोगिय -- *आभियोगिक , अभियोजनं-विद्यामन्त्रा* दिभि परेषां वशीकरणादि येषा ते । प्रज्ञा० ४०६।

आभियोगी–अभिओगा– किङ्करस्थानीयदेवविशेषास्तेषामिय माभियोगी। बृ० प्र० २१२ आ। आभियोग्या –आभिमुख्येन युज्यन्ते–प्रेष्यकर्म्मणि व्यापार्यन्त इत्याभियोग्या, किङ्करस्थानीयदेवविशेषा । बृ० प्र० २१२ आ।

आभिसेक्कं–आभिषेक्यम्, अभिषेकयोग्य, राजपरिधेयम्। जं० प्र० २१६।

आभीरविसओ–आभीरविषय, देशनाम। आव० ४१२। नि० चू० द्वि० १०२ आ।

आभोइत्ता–आभोगयित्वा, ज्ञात्वा। दश० १७९।

आभोईतो–आभोगित । उत्त० १३३।

आभोएउं–आभोगयित्वा, उपयोगपूर्वकेनावधिना विज्ञाय। आव० १२८।

आभोएति–आभोगयति। आव० १२४।

आभोग – आभोग, जानता योऽतिचार कृत । आव० ५६४। अभिसन्धि । भग० २०। आलोचनमभिसन्धि । प्रज्ञा० ५००। उपकरणम्। ओघ० ३३। उपयोग । बृ० द्वि० २११ आ। ठाणा० ५०५। आभोगनमाभोग, उपयोगविशेष । आव० ६१९, ६२६। विस्तार । विपा० ३९।

आभोगण–आभोगनम्, अर्थावग्रहसमनन्तरमेव सद्भूतार्थ विषयाभिमुखमालोचनम्। १०६।

आभोगणिव्वत्तिय–यदा परस्यापराधं सम्यगवबुद्ध्य कोप कारण च व्यवहारत पुष्टमवलम्ब्य नान्यथाऽस्य शिक्षो पजायते इति आभोग्य कोप विधत्ते तदा स कोप आभोगनिर्वर्तित । प्रज्ञा० २९१। आभोगेन निर्वर्तित –उत्पादित आभोग निर्वर्तित आहारयामीतीच्छापूर्वं निर्मापित । प्रज्ञा० ५००।

आभोगबउस–आभोगबकुश, य आभोगेन जानन् करोति स, बकुशस्य प्रथमो भेद । उत्त० २५६। आभोग –साधूना मकृत्यमेतच्छरीरोपकरणविभूषणमित्येवं ज्ञान तत्प्रधानो बकुश आभोगबकुश । भग० ८९०। शरीरोपकरणभूषयो संविग्नलकारी। ठाणा० ३३७।

आभोगिणी–य परिजपिता सती मानस परिच्छेदमुत्पादयति सा। बृ० तृ० ३३ अ। जा विज्जा जविता माणस परिच्छेदमुप्पादयति सा। नि० चू० प्र० १७७ अ।

आमं आमम्। दश० १७६। अपरिणतम्। पिण्ड० ६५। अविशोधिकोटि । बृ० प्र० २०१ अ, ५१ अ। आम णाम जं अपोलिय अग्गिणा ण पक्कंति, अण्णेण वा केणइ पगारेण न पक्क–णिज्जीव। नि० चू० द्वि० १५७ अ। असत्यपरिणय। दश० चू० ५१। अनुमतार्थद्योतकमव्ययम्। बृ० द्वि० १६६ अ। सचित्त। दश० चू० ८६। अपक्वरसम्। प्रश्न० ६०। अनुमतौ सम्मतमेतदस्माकं सर्वमितिभाव । व्य० प्र० ७१ अ। अपक्व । व्य० द्वि० १०६ आ। जओ तेहिं उग्गमादिदोसेहिं घेप्पमाणेहिं चारित्त अविपक्क अपज्जत्त आम भवति तेण ते आम भण्णति, शब्दमात्रोच्चारणम् सरही भूत जो वरिससतायुपुरिसो वरिससत अतरे मरंतो आमो भण्णति। नि० चू० द्वि० १२६ अ। अपक्वम्। आव० ११०। स्वीकारेऽव्ययम्। आव० ६४। आव० १९४। आव० ४०८। अशस्त्रोपहतम्। आचा० ३४८। दश० २२९। अजीर्णम्। दश० २७०। आमाम्–असिद्धा, सचेतनाम्, अपरिणतं, अपक्वाम्। दश० १८५। अपरिशुद्धम्। आचा० १३१।

आमडे–आमलकम्, परिणामिकया सप्तदशमोदाहरणम्। नंदी १६५। आम्लकम्–आमलकम्। आव० ४३६।

आमंतणी–आमन्त्रणी, असत्यामृषाभाषाया प्रथमो भेद । दश० २१०। हे देवदत्त! इत्यादिरूपा भाषा। प्रज्ञा० २५६। हे देवदत्त! इत्यादिका, असत्यामृषाभाषा। भग०। ५००।

आमंतयामो–आमन्त्र्यावहे, पृच्छाव । उत्त० ३९८।

आमंतिओ–आमन्त्रित, सम्भाषित, पृष्टो वा। उत्त० ३९२।

आमंतेयव्वो–आपुच्छियव्वो। नि० चू० तृ० ९७ आ।

आमग–अपक्वम्। भग० ६८४।

आमगंधि–आमगन्धम, विभा । सम० ११६।

आमज्जति – अक्खिपत्ततोमे सठवेति। नि० चू० प्र० ११० अ। हत्थेण आमज्जति। नि० चू० प्र० १८७ आ।

आमज्जमाणे–आमर्जयन्, सकृद्धस्तादिना शोधयन्। आचा० ३४३।

आमज्जिज्ज–सकृदामृज्यात्। आचा० ३३७।

आमट्ट–विपर्यासीकृतम्, परामट्ट। ओघ० १९२। आमृष्टम्, तेज प्रक्षपरिरोपणाय मन शिलादिना समन्तात्परामृष्टम्। उत्त० ५२७।

आमडागं-आमपत्रम्, अरणिकतन्दुलीयकादि तथार्द्धपक्वमपक्वं वा। आचा० ३४८।

आममहुरे-आममधुरम्, ईषन्मधुरम्। ठाणा० १९६।

आमरणदोसो-आमरणदोषः, महदापद्गतोऽपि स्वतो महदापद्गतेऽपि च परे आमरणादसञ्जातानुतापः, अपि त्वसमाप्तानुतापानुशयपर इति। आव० ५९०।

आमरणंतदोसे-आमरणान्तदोषः-आमरणान्तमसञ्जातानुतापस्य हिंसादिषु प्रवृत्तिः सैव दोषः। ठाणा० १९०।

आमर्षौषधिः-ऋद्धिविशेषः। प्रश्न० ४२४।

आमलए-आमलकम्। आव० ८३१। आमरकः, सामस्त्येन मारिः। ठाणा० ५०८। फलविशेषः। पिण्ड० २२। दश० १००।

आमलकप्प-आमलकल्पा, नगरीविशेषः। आव० ३१४, ३१५, ७०७। उत्त० १५९। विशे० ९५०।

आमलग-आमलक, बहुबीजो वृक्षविशेषः। प्रज्ञा० ३२। भग० ८०३।

आमलगा-आमलकानि। अनु० १९२।

आमलपाणगं-फलविशेषप्रक्षालनजलं। आचा० ३४७।

आमाघाओ-अमाघातः, (अमारीपटहः)। आव० ४०१।

आमिस - आमिष-मांसः। उत्त० ६३४। आमिषाद्-गृद्धिहेतोरभिलषितविषयादेः। उत्त० ४०९।

आमिसभोगगिद्ध - आमिषभोगगृद्धः, आमिषस्य-मांसादेर्भोगः-अभ्यवहारस्तत्र गृद्धः। उत्त० ६३४।

आमिसावत्ते-मांसार्थं परिभ्रमणम्। ठाणा० २८८।

आमुसंत - आमृशन्, स्पृशन्। दश० १३७। आचा० ११। आमृशन्, भगवत्पादारविन्दं भक्तितः करतलयुगादिना स्पृशन्। ठाणा० ९। उत्त० ८०।

आमुसिज्जा - आमर्षणम्, सकृदीषद्वा स्पर्शनम्। दश० १५३।

आमे-आम, अविशोधिकोट्याख्यदोषः। सूत्र० १४५।

आमेड-आमेलः, आपीडः, शेखरकः। जीवा० १७२।

आमेडणा-आमेडना, विपर्यस्तीकरणम्। प्रश्न० ५६।

आमेल-आपीडः, शेखरकः। प्रज्ञा० ९६। भग० ४५९। पुष्पशेखरकः। औप० ५१।

आमेलओ-आमेलकः, आपीडः, शेखरकः। जीवा० २६१।

आमोदकः-पुष्पोन्मिश्रो बालबन्धविशेषः। उत्त० १४३।

आमेलग-आमेलकः, आपीडकः, शेखरः। जीवा० २७५। आपीडः, शेखरकः। जं० प्र० ५२। जीवा० २०७।

आमेलय-आमेलकः, चूडा। औप० ६३।

आमेलिय-आपीडिका, चूडा। भग० ३१८।

आमो-वासत्योपहतो। नि० चू० प्र० ११६ अ।

आमोअ - आमोदः, मानसे उत्सवः। आव० ७२१। आमोकः-कचवरपुञ्जः। आचा० ४११।

आमोक्ख-आमोक्षः, आमुच्यन्तेऽस्मिन्नित्यामोक्षणं वाऽऽमोक्षः। आचा० ६।

आमोडणं-हत्थेहिं आमोडणं। नि० चू० प्र० २४५ अ।

आमोडेति-सीमन्तयति। नि० चू० द्वि० ३१ अ।

आमोद-गन्धः। उत्त० ३६९।

आमोयगो-आमोदकः। जीवा० २६८।

आमोसगा-आमोषकाः, चौराः। ठाणा० ३१५।

आमोसलि-आमर्शकवर्त्तितिर्यगूर्ध्वमधो वा कुड्यादिपरामर्शो यथा न भवति। उत्त० ५४१।

आमोसहि - आमर्षौषधिः, तत्रामर्षणमामर्षः-संस्पर्शनमित्यर्थः, स एवौषधिर्यस्यासावामर्षौषधिः, करादिसंस्पर्शमात्रादेव व्याध्यपनयनसमर्थो लब्धिलब्धिमतोरभेदोपचारात्साधुरेवामर्षौषधिः। विशे० १७९। आचा० १५८। आमर्षौषधिः। ठाणा० ३३२। आमर्शणमामर्शः-संस्पर्शनमित्यर्थः, स एवौषधिः। आव० ४७। आमर्षणमामर्षः-हस्तादिसंस्पर्शः। औप० २८।

आमोसे-आमर्षणम् आमर्ष-अप्रमृज्य करेण स्पर्शनम्। आव० ५७४। आमोषाः-आ-समन्तान्मुष्णन्ति-स्तैन्यं कुर्वन्तीति। उत्त० ३१२।

आम्नाय-गुणनं, घोषविशुद्धं परिवर्तनं रूपादानं। तत्त्वा० ९-२५।

आम्रसालवनम् - आमलकल्पानगर्यां वनम्। विशे० ९५०।

आम्लसालिकायाम्। विशे० ६०६।

आम्लम्-चतुर्थरसम्। आव० ८५४। अंबिला। उत्त० ६७७।

आयं-तोसलिविसए सीयलदाए आयाणं नरेसु सेवालतरिया रामंति, तत्थ वत्था कीरंति। नि० चू० प्र० २५४ आ। कर्माधानहेतुत्वम्। सूत्र० १८९। इष्टफलम्। भग० ४।

आयंकं-आतङ्क, आशुघाती रोग । आव० ७५९ । सद्यो घाती रोग । दश० २५३ । कृच्छ्रजीवनं दुःख । आचा० ७५ । आशुघाती शूलादि । जं० प्र० १२५ । भग० ४७१ । सद्योघातिव्याधि । भग० १२२ । नरकादि-दुःखम् । आचा० १६० । कृच्छ्रजीवितकारी, सद्योघाती स्पर्श शूलादि । ठाणा० ११६ । शूलविशूचिकादि सद्यो घाती । ठाणा० १५० । व्याधि । भग० ६६० । आङिति सर्वात्मप्रदेशाभिव्याप्त्या तकयन्ति – कृच्छ्रजीवितमात्मान कुर्वन्ति इत्यातंका –सद्योघातिनो रोगविशेषा । उत्त० ३३८ । आतङ्क, सद्योघातिन । औप० ९६ । आव० ५८५ । ज्वरादि । पिण्ड० १७७ । आचा० २९७ । कृच्छ्रजीवित कारी ज्वरादि । भग० ७०२ । आतङ्क, आशुकारी व्याधिविशेष । दशा० चू० १४ । रोग । उत्त० ४८६ । ज्वरादि । आव० ८४८ । औप० ९९० । कष्टजीवितकारी । विपा० ४० । आशुजीवितापहारी शूलादिक । सूत्र० २९२ । आचा० २०५, ३३०, ३६२ ।

आयकसंपओग – आतङ्कसम्प्रयोग, आतङ्क –रोग तस्य योग । औप० ४३ ।

आयगुल-पुरुषात्मसम्बन्धि आत्माङ्गुलम् । अनु० १५६ । अङ्गुलस्य प्रथमभेद । प्रज्ञा० २९९ ।

आयचणं – गोमुत्त । नि० चू० तृ० १२७ अ । ज० प्र० १०४ आ ।

आयचामि-लिंपामि, आश्रियामि । उपा० ३२ ।

आयतकारे – आत्मनोऽन्तम्– अवसान भवस्य करोतीति आत्मान्तकर, धर्म्मदेशनानासेवक प्रत्येकबुद्धादि । ठाणा० २१३ ।

आयति-आगच्छन्ति, उत्पद्यन्ते । आव० १७९ ।

आयतियमरणे-यानि नारकाद्यायुष्कतया कर्मदलिकान्य नुभूय म्रियते मृतश्च स पुनस्तान्यनुभूय मरिष्यतीति । सम० ३३ ।

आयंती आयान्ती । आव० ३०७ ।

आयंते-आचान्त, नवानामपि श्रोतसां शुद्धोदकप्रक्षालनेन गृहीताचमन । जीवा० २४३ । कृतपान । भग० १६४ ।

आयदमे – आत्मदम, आत्मानं दमयति–शमयन्त करोति शिक्षयति चेति । ठाणा० २१४ ।

आयंबिलं-आयाम्लम्, ओदनकुल्माषादि । औप० ४० । आचाम्लम् । आव० ८५३ । शुद्धौदनादि । अनुत्त० ३ । सङ्गरा । आव० ८५५ । पानकम् । औप० ९३ ।

आयंबिलपाउग्गं-आचाम्लप्रायोग्यम्, (कूरविहाणाणि) । आव० ८५५ ।

आयंबिलवद्धमाणं आचाम्लवर्द्धमानम्, तपोविशेष । अन्त० ३२ ।

आयंबिलिए-आचाम्लिक । ठाणा० २९८ ।

आयंभरे – आत्मानं बिभर्ति पुष्णातीत्यात्मम्भरि । ठाणा० २४८ ।

आयंस-आदर्श, वृषभादिग्रीवाभरणम् । अनु० ४७ । दर्पण । जं० प्र० ३९२ । आदर्श । जं० प्र० ५१० ।

आयंसघरं-आदर्शगृहम् । आव० १७० ।

आयसघरगं – आदर्शगृहकम्, आदर्शमयमिव गृहकम् । जीवा० २०० । जं० प्र० ४५ ।

आयंसमुहदीवे-आदर्शमुखद्वीप, अन्तर्द्वीपनाम । ठाणा० २२६ ।

आयसमुहा – आदर्शमुखनामा नवमोऽन्तरद्वीप । प्रज्ञा० ५० । जीवा० १४४ ।

आयंसलिवी-ब्राह्मीलिपिपञ्चदशभेद । प्रज्ञा० ५६ ।

आय-आय, श्रुतनाम । दश० १६ । लाभ । अनु० १५४ । आत्मा–शरीरम् । उत्त० ४१५ । जीवभित्त वा । उत्त० ५०४ । अतति–सतत गच्छति तानि तान्यध्यवसायस्थाना न्तराणीति आत्मा–मन । उत्त० ३१४ ।

आयइ-आयति –अनागत, उत्तरकालम् । आव० ५०९ ।

आयकाय अनन्तकायविशेष । भग० ८०४ ।

आयक्खाहि-आख्याहि, कथय, निवेदय । भग० ११२ ।

आयगय-आत्मनि गत आत्मगत, आत्मस्थ इति । सूत्र० १२४ ।

आयगवेसए-आत्मगवेषक, आत्मान–कर्मविगमाद् दुद्धरू-रूप गवेषयति–अन्वेषयते य स । आयगवेषक –आय – सम्यग्दर्शनादिलाभस्त गवेषयतीति । आयतगवेषक –सूत्र त्वाच्चायतो वा–मोक्षस्त गवेषयतीति वा । उत्त० ४१५ ।

आयगुत्ते – आत्मा शरीरं तेन गुप्त आत्मगुप्त –न यत स्तत करणचरणादिविक्षेपकृत्, गुप्तो–रक्षितो–संयमस्थानेभ्य आत्मा येन स । उत्त० ४१५ ।

आयजोगे-आत्मयोगी, आत्मनो योगः-कुशलमनःप्रवृत्तिरूप आत्मयोगः, स यस्यास्ति स तथा, धर्मध्यानावस्थितः। सूत्र० ३४२।

आयट्ठं - आत्मनोऽर्थ आत्मार्थः, स च ज्ञानदर्शनचारित्रात्मकः, आत्मने हितं-प्रयोजनमात्मार्थं, चारित्रानुष्ठानमेव, आयतः-अपर्यवसानान्मोक्षः स एवार्थः। आयत्तः-मोक्षः, अर्थः-प्रयोजनं यस्य। आचा० ११०। आत्महितं। आचा० १०९। ज्ञानादिरूपं स्वकार्यम्। सू० द्वि० ७१ अ।

आयट्ठी-आत्मार्थी, यो ह्यन्यमपायेभ्यो रक्षति सः, आत्मवान्। सूत्र० ३४२।

आयणाणं-आत्मज्ञानम्, वादादिव्यापारकाले किममुं प्रतिवादिनं जेतुं मम शक्तिरस्ति न वा? इत्यालोचनम्। उत्त० ३९।

आयणीली-वल्लीविशेषः। प्रज्ञा० ३२।

आयण्णं-आकीर्णम्, स्थानविशेषः। ओप० १५४।

आयतंगुली-एगापएसिणी। नि० चू० प्र० २०८ अ।

आयतगुत्ते-आत्मगुप्तः-सततोपयुक्तः। आचा० २७२।

आयतजोग - आयतयोगः-सुप्रणिहितं मनोवाक्कायात्मकम्। आचा० ३१४। ज्ञानचतुष्टयेन सम्यग्योगप्रणिधानं। आचा० ३१४।

आयतणं-आयतनम्, गुणानामाश्रयः, अहिंसायाः सप्तचत्वारिंशत्तमं नाम। प्रश्न० ९९। आविष्करणं कथनं, निर्णयनं वा। सूत्र० १८१। स्थानम्। ओप० २२२। नि० चू० प्र० १९२ आ। देवकुलम्। नि० चू० द्वि० ६९ आ। दोषाणां स्थानं। आचा० ३९९। ज्ञानादित्रयम्। आचा० २०५।

आयतणा-आयतनानि-बन्धहेतवः। ठाणा० ४५१।

आयतणाइं-आयतनानीति, दोषरहितस्थानानि, वसतिगतानि, संस्तारकगतानि च। आचा० ३७२। देवकुलपार्श्वापवरकाः। आचा० ३६६। कर्मोपादानानि। आचा० ४०७। उपभोगास्पदभूतानि। आचा० १२७। कर्मोपादानस्थानानि। आचा० ३५६। दोषस्थानानि। आचा० ३८६।

आयतरो-तवबलिओ। नि० चू० तृ० १२३ अ।

आयतसंठाण-आयतसंस्थानम्। प्रज्ञा० ११।

आयता-दीर्घा। जीवा० १६४।

आयती-सन्ततिः। सू० द्वि० २९३ अ।

आयतीहितं-आगामिकालहितं, आत्मना हितं वा। दश० चू० १५७।

आयते-आयतः, संस्थानपञ्चमभेदः। प्रज्ञा० २४२। भग० ८५८।

आयतो-आयतः, मोक्षः। सूत्र० १७१। मोक्खो। दश० चू० ८८।

आयत्तं-आयत्तम्, सम्मिश्रम्। पिण्ड० ८१। आधिनीकृतम्। आव० ३६६।

आयत्ताए-आत्मत्वाय-आत्मीयकर्म्मानुभवाय। आचा० २३३।

आयपइट्ठिते-आत्मप्रतिष्ठितः, आत्मना वा परप्राक्रोशादिना प्रतिष्ठितो-जनित आत्मप्रतिष्ठितः। ठाणा० ९२। आत्मापराधैहिकामुष्मिकापायदर्शनादात्मविषयः। ठाणा० १९३।

आयपतिट्ठिए- आत्मप्रतिष्ठितः, आत्मन्येव प्रतिष्ठितः। प्रज्ञा० २९०।

आयपवायं-आत्मप्रवादं, सप्तमपूर्वम्। ठाणा० १९९।

आयप्पवाय-आत्मप्रवादः, यत्रात्मनः संसारिमुक्ताद्यनेकभेदभिन्नस्य प्रवदनम्। दश० १२। आत्मानं-जीवमनेकधा नयमतभेदेन यत्प्रवदति तत्। नंदी २४१।

आयप्पवायपुव्वं - आत्मप्रवादनाम सप्तमपूर्वम्। सम० २६। विशे० ९४६।

आयभाव-आत्मभावः, स्वस्वरूपः। अनु० २२६। जीवसम्बन्धः। अनु० २२०। उत्थानशयनगमनभोजनादिरूप आत्मपरिणामविशेषः। भग० १४९। अनादिभवाभ्यस्तो मिथ्यात्वादिकः, विषयगृद्धता वा। सूत्र० २४०।

आयभाववंकणया - आत्मभाववंकनता, आत्मभावस्याप्रशस्तस्य वञ्चनता-वक्रीकरणं प्रशस्तत्वोपदर्शनता। ठाणा० ४२।

आयभाववंचणा - आत्मभाववञ्चनता, मायाप्रत्ययिकीक्रियायाः प्रथमो भेदः। आव० ६१२।

आयभाववत्तव्वया-आत्मभाववक्तव्यता, अहंमानिता। भग० ९३९।

आयमणं-आचमनम्, निर्लेपनादि। ओप० १२७, १९०, १६२। आशातनायाः दशमभेदः। आव० ७२९। गण्ड-

पादिस्करणम् । उत्त० ३७० । निर्लेपनम् । सू० तृ० २०४ आ । निर्लेपन । नि० चू० प्र० २२० आ । पुरीषोत्सर्गानन्तरं शौच करणम् । पिण्ड० ११ । आचमनम् । ठाणा० ३३९ ।

आयमाणे-आददान , प्रवर्तमान । सूर्य० १२ ।

आयमेज्जा-निर्लेपन चापाने एवमेव कुर्यात् । ओघ० १२५ ।

आयय-आयतम् , प्रसारितम् , दीर्घम् । भग० ३३० । आयतं – मोक्ष , आयतम्-अत्यन्तम् । दश० २५८ । आकृष्ट , दीर्घश्च । भग० ९३, ३३३ । मोक्ष । व्य० द्वि० १९७ अ । आत्मा । आचा० १२२ । मोक्ष संयमो वा । उत्त० ५८७ । संयत । आचा० ३१४ । प्रयत्नवान् । भग० ९३ । दीर्घ सर्वकालभवनात् मोक्ष । सूत्र० ७० ।

आययकण्णायत्त-आयतकर्णायतम् , प्रयत्नवत्कर्णं यावदाकृष्टम् । भग० ९३ ।

आययचक्खू – आयतचक्षु – दीर्घमैहिकामुष्मिकापायदर्शि चक्षु –ज्ञान यस्य स । आचा० ११६ ।

आययट्ठिए-आयतार्थिक , मोक्षार्थी । दश० २५६ ।

आययट्ठिया-आयतार्थिका , आयतो-मोक्ष संयमो वा स एवार्थ प्रयोजनं विद्यते येषामिति । उत्त० ५८७ । आयत – मोक्षस्तत्र स्थिता आयतस्थिता उद्यतविहारिण संविग्ना इत्यर्थ । व्य० द्वि० १९७ अ ।

आययट्ठी-आयतार्थी, मोक्षार्थी । दश० १८७ ।

आययण-आयतनम् । आव० २११ । आदानम् । अंत० २४ । गमनम् गृहम् । जीवा० २७९ । स्थानम् । ज० प्र० ७७ । दश० १९८ । आङ्-अभिविधौ समस्तपापारम्भेभ्य आत्मा आयस्यते-आनियम्यते यस्मिन् कुशलानुष्ठाने वा यत्नवान् क्रियते इत्यायतनं-ज्ञानादित्रयम् । आचा० २०९ । उत्पत्तिस्थानम् । उत्त० ६२३ ।

आययतरे-आयततर , आयमनयोरतिशयेनायत आयततर । आचा० ९९४ । यत्नेनाध्यवसित । आचा० २९३ ।

आयरंति-आचरन्ति, आसेवन्ते । दश० १९८ ।

आयरंतो-आचरन् , व्यवहरन् , कुर्वन् वा । उत्त० ६४ ।

आयरक्खा-आत्मरक्षा, स्वाम्यात्मरक्षा । भग० १९४ । अंगरक्षा राज्ञाम् । ठाणा० ११७ ।

आयरक्खिए-आत्मरक्षित , आत्मा रक्षितो दुर्गतिहेतोरपध्यानादरनेनेति । उत्त० ९९ । आयरक्षित –आयो वा-ज्ञानादिलाभो रक्षितोऽनेनेति । उत्त० ९९ । आत्मा रक्षितो दुर्गतिपातनात् आतोऽनेनेति, रक्षिता आया –सम्यग्दर्शनादिलाभा येनेति । उत्त० ४१४ ।

आयरणं-आचरणम् , अनुष्ठानम् । उत्त० ५३३ ।

आयरणया-आदरणं, अभ्युपगमं आचरणम् वा । भग० ५७३ ।

आयरणा-आचरणा, विधि , मर्यादा, सीमा च । आव० ६३९ । सतियमर्यादावर्तिन्यो । नि० चू० प्र० १९८ अ । चर्या । बृ० तृ० १२९ आ ।

आयरिअ-आचार्य , शिल्पी , उपदेष्टा । भग० ३१७ । औप० ६२ । अनुयोगाचार्य । उत्त० १७ । व्य० प्र० ११३ अ । अनुयोगधर । आचा० ३५३ । तदर्थनिर्दलयक्ता । नि० चू० प्र० १६ अ । आयरिए-आचार्य –प्रतिबोधकप्रव्राजकादि अनुयोगाचार्यो वा । ठाणा० १४३, २४४ ।

आयरियं-आचरितम् , आसेवितं । आव० २६३ । आर्य – आराद् यात पापकर्मभ्य इति । भग० ९० । आचरणमाचरितं तत्क्रियाकलाप । उत्त० २६६ । आराद्याते सर्वकुयुक्तिभ्य इत्यार्य-तत्त्वं तत् । उत्त० २६६ । आर्यम्-आर्याणां कर्तव्यं आचार्यं वा, मुमुक्षुणा यदाचरणीयं ज्ञानदर्शनचारित्रम् । सूत्र० १८४ । पापकर्मभ्य आराद्यातमित्यार्यम् । ठाणा० ११९ ।

आयरिय-आचार्य । प्रश्न० ३२७ । शिल्पी । जं० प्र० २१२ । आभिविधिव्याप्त्या मर्यादया वा स्वयं पञ्चविधाचार चरत्याचरयति वा परान् , आचर्यते वा, मुक्त्यर्थिभिरासेव्यत इति । उत्त० ३७ । आ-मर्यादया-तद्विषयविनयरूपया चर्यते-सेव्यते, जिनशासनार्थोपदेशकतया तदाकाङ्क्षिभिरिति, आचार –ज्ञानाचारादि , आ-मर्यादया वा चारो विहार आचार तत्र स्वयंकरणात्प्रभाषणात्प्रदर्शनाच्च साधु स , आ-ईषत्-अपरिपूर्णा हेरिका ये ते चारा – आचारा –चारकल्पा , युक्तायुक्तविभागनिरूपणनिपुणा विनेया शिष्यास्तेषु यो यथावच्छास्त्रार्थोपदेशकतया । भग० ३ ।

आयरियउवज्झाए – आचार्योपाध्याय , आचार्येण सहोपाध्याय । भग० २३२ । आचार्योपाध्याय । नि० चू० प्र० १९६ आ ।

आयरियजणवय देशविशेष । नि० चू० प्र० ३४४ आ ।

आयरियत्ते – आचार्यकम्-तद्भाव्याख्यानादित्वम् । व्य० प्र० १९६ अ ।

आयरियव्वं-पढियव्वं। नि० चू० प्र० ५ आ।

आयवणाम-आतपनाम-यदुदयात् जन्तुशरीराणि स्वरूपेणानुष्णान्यपि उष्णप्रकाशलक्षणमातपं कुर्वन्ति तदातपनाम, तद्विपाकश्च भानुमण्डलगतेषु पृथिवीकायिकेष्वेव न वह्नौ, प्रवचनेऽपि निषेधात्, तत्रोष्णत्वमुष्णस्पर्शनामोदयात्, उत्कटलोहितवर्णनामोदयाच्च प्रकाशकत्वम्। प्रज्ञा० ४७३।

आयरिया-आचार्याः-प्राणाचार्या वैद्याः। उत्त० ४७५। व्य० प्र० १७१ अ।

आयरिसो-आदर्शः। आचा० ५।

आयरेणं-आदरेण, प्रयत्नेन। जं० प्र० १६२।

आयरो - आदरः, आद्रियते आदरणं वा, परिग्रहस्याष्टमं नाम। प्रश्न० ९२। सम्भ्रमः। बृ० सू० ११ अ।

आर्य-अज्ज, पितामहः। व्य० प्र० १०१ अ। अनुग्रहीकारी। व्य० प्र० १४ अ।

आयल्लयं-शूहम्। पञ्च० ३३-६६। पराधीनताम्। पउ० २४-१५।

आयवं-आतपवान्, चतुर्विंशतितममुहूर्त्तनामविशेषः। सूर्य० १४६। जं० प्र० ४९१। रविबिम्बजनित उष्णप्रकाशः। उत्त० ५६१। आतपः, आ-समन्तात्तपति सन्तापयति जगदिति। उत्त० ३८। घर्मः। उत्त० १२१।

आयवतत्तए-आतपतप्तं पयः। भग० ६८०।

आयवत्ताइं-आतपत्राणि, छत्राणि। जं० प्र० ८१।

आयवाइ-विश्वकारणात्मवादिनः। आव० ८१६।

आयवाई-आत्मवादिनः, क्रियावादिविशेषः। सम० ११०। 'पुरुष एवेदं ग्नि' मित्यादि प्रतिपत्तुरिति। ठाणा० २६८।

आयवाभा - आतपाभा, सूर्यस्य ज्योतिषेन्द्रस्य द्वितीया अग्रमहिषी। जीवा० ३८५। सूर्यस्य परनाम। भग० ५०५।

आयवी - आत्मवित्, आत्मानं श्वभ्रादिपतनरक्षणद्वारेण वेत्तीति। आचा० १५४।

आयवीरियं-वीर्यस्य प्रथमभेदः। नि० चू० प्र० १९ अ।

आयसंचेयणिज्जा - आत्मना संचेयन्ते-क्रियन्त इति आत्मसंचेतनीया (घट्टन-पतन-स्तंभन-श्लेषजन्या उपसर्गाः)। ठाणा० २८०।

आयसंचेयतो-आत्मसंचेतनीयः-आत्मनःआत्मनो दु खोत्पादनम्। व्य० प्र० १९६ अ।

आयसा-आत्मना। सूत्र० १०६।

आयसी-लोहमयी, दर्भमयी च। प्रश्न० ११।

आयसंवेणिज्जा-आत्मसंवेदनीया-आत्मना क्रियन्ते ये, उपसर्गाः। आव० ४०५।

आयसरीरसंवेयणी-आत्मशरीरसंवेजनी, संवेजनीकथायाः प्रथमोभेदः। दश० ११२।

आयसरीरावकंखिया-स्वशरीरक्षतिकारिणी क्रिया। ठाणा० ४३।

आयसेण - आत्मसेनः, जंबूद्वीपैरवते अस्यामवसर्पिण्यां चतुर्थतीर्थकृत। सम० १५९।

आया - आत्मा, जीवः। आचा० १६। आत्मा। भग० १२३। आत्मा, रूपं। नंदी २१२। द्वादशशते आत्मभेदनिरूपणार्थो दशमोद्देशकः। भग० ५५२। अतति-सततमवगच्छति 'अत सातत्यगमने' इति वचनादतो, धातोर्गत्यर्थत्वाद्गत्यर्थानां च ज्ञानार्थत्वादनवरतं जानातीति निपातनादात्मा-जीवः उपयोगलक्षणत्वादस्य सिद्धसंसारयवस्थाद्वयेऽप्युपयोगभावेन सततावबोधभावात्, अतति-सततं गच्छति स्वकीयान् ज्ञानादिपर्यायानित्यात्मा, संसार्यपेक्षया नानागतिषु सततगमनात् मुक्तापेक्षया च भूततद्भावत्वादात्मेति। ठाणा० १०।

आयाए-आत्मविराधनादोषः। ओघ० ७९।

आयाणं-आदानम्, ईप्सितार्थग्रहणम्। औप० १८। अर्गलास्थानं वा। औप० १८। कुप्रणिहितमिन्द्रियं। आचा० २०४। कर्मादानम्। आचा० ३३७। आदीयते-स्वीक्रियते प्राप्यते वा मोक्षो येन तत्, ज्ञानदर्शनचारित्रत्रयम्। सूत्र० ५२। ढक्कणा। नि० चू० प्र० ११०,आ। ग्रहणे, जेण मग्गेण गंतूण दगमट्टियहरियादीणि पेच्छंति तं दगमट्टियं। दश० चू० ७८। कूपादिग्रहणम्, सम्प्राप्तकामस्यैकादशो भेदः। दश० १९४। आदानः-आदीयतेऽनेनेत्यादानो-मार्गः। दश० १६८। इन्द्रियम्, चरणम्। भग० २८६। आदीयते-द्वारस्थगनार्थं गृह्यत इत्यादानः। जं० प्र० १११। आदीयते- गृह्यते आत्मप्रदेशैः सह श्लिष्यतेऽष्टप्रकारं कर्म येन तदादानम्, हिंसाद्याश्रवद्वारमष्टादशपापस्थानरूपं वा। आचा० १००। संयमानुष्ठानं। आचा० १२८। कर्मोपादानं। आचा० २४३, ३३०। आदीयते-सावद्यानुष्ठानेन स्वीक्रियते। आचा० १५३। आदिः। व्य०प्र० ११८

आ। हिंसायाश्रवद्वारमष्टादशपापस्थानरूपं वा तत्स्थितेर्नि मित्तत्वात्स्थाया वा। आचा० १७१। आदीयत इति, धनधान्यादि। उत्त० २६५। आदीयत इति आदि – प्रथमम्। उत्त० ५७०। आदीयन्ते-गृह्यन्ते शब्दादयोऽर्था एभिरिति आदानानि–इन्द्रियाणि। सू० प्र० २११ आ। आदीयते सद्विवेकैर्गृह्यत इति, चारित्रधर्म। उत्त० ३३८। आदीयते गृह्यतेऽर्थ अनेनेत्यादानम्–इन्द्रियम्। भग० २२४। आदान, आदेयो रस्य। प्रश्न० ८१। आदीयते–स्वीक्रियते आत्महितमनेनेति–संयम। उत्त० २२५। सम्यग्दर्शनज्ञान चारित्ररूपम्। सूत्र० ४०५।

आयाणपयण – आदीयते-प्रथममेव गृह्यत इत्यादान तच्च तत्पद चादानपद तेन आदानपदेन। आचा० १९६।

आयाणपय – आदानपदम्, शास्त्रस्याध्ययनोद्देशकादेर्थादि पदम्। अनु० १४१।

आयाणपरिसाडे–आधानपरिसाटम्, गर्भाधानपरिशाटरूप मूलकर्मतृतीयभेद। पिण्ड० १४२।

आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिई – आदानभाण्डमात्र निक्षेपणासमिति, भाण्डमात्रे आदाननिक्षेपविषया समिति – सुन्दरचेष्टा। आव० ६१६। आदाने–ग्रहणे भाण्डमात्राया वस्त्राद्युपकरणरूपपरिच्छदस्य, उपकरणस्य वा, भाण्डस्य– वस्त्रादेर्मृन्मयभाजनस्य वा मात्रस्य च–पात्रविशेषस्य निक्षे पणायां–विमोचने ये समिता –सुप्रत्युपेक्षितादिक्रमेण सम्यक् प्रवृत्तास्ते। औप० ३५।

आयाणरक्खी – आदानरक्षी, आदीयते–स्वीक्रियते आत्म हितमनेनेत्यादान –संयमस्तद्रक्षी। उत्त० २२५।

आयाणसो–आदानशः –आदेरारभ्य। सूत्र० ४२४।

आयाणसोय – आदानस्रोत, आदीयते – सावद्यानुष्ठानेन स्वीक्रियत इति आदानम्–कर्म्म संसारबीजभूत तस्य स्रो तांसि–इन्द्रियविषया मिथ्यात्वाविरतिप्रमादकषाययोगा वा। आचा० १९२।

आयाणसोयगढिए – संसारबीजभूतेन्द्रियविषय मिथ्या त्वादिगृद्ध –अध्युपपन्न। आचा० १९३।

आयाणिज्जं–आदानीयम्–श्रुत। आचा० १२२। कर्म। आचा० २४२। आदातव्य भोगाङ्ग, आदानीय–कर्म आचा० १९१। प्राप्य, आदयवचनश्च। आचा० १९१।

आयाणी–इन्द्रियार्थानिन्द्रियाणि सूक्ष्मरोमाणो भवन्ति, तत्र प्रसनिष्पन्नानि आजकानि भवन्ति। आचा० ३९४।

आयाणीय–आदानीयम्, प्राप्यम्। आचा० ३८।

आयाती–आयाति, सम्मूर्छिम। ठाणा० ६७।

आयापरिणामो – आत्मपा परिणाम। व्य० द्वि० ४५० अ।

आयाम – अवश्रायनम्। आव० ५४। दैर्घ्यम्। भग० १८०, १७१। भग० ११९। ठाणा० ६९। आव० १८४। अवधावणम्। ओघ० १३३। पिण्ड० १७। आयाम। ठाणा० ३३९। अवस्रामण। नि० चू० प्र० ४७ आ। आचाम्लम्। उत्त० ७०६। उच्चत्वम्। भग० ३११।

आयामग–आयामकम्, अवश्रावणम्। उत्त० ४११।

आयामणया–आकर्षणम्। भग० ९३।

आयामते–आयामकम्–अवश्रावणम्। ठाणा० १४७।

आयामविक्खंभो – आयामविष्कम्भ। आव० १५०।

आयामुसिणोदग–अवश्रावणमुष्णोदकं च। ठाणा० ३३९।

आयामे–आयाम, दैर्घ्यम्। प्रज्ञा० ४२७।

आयामेति–ददाति। भग० ६६३।

आयामेत्ता–आयामेन समाकृष्य। सूत्र० ३०९। आयम्य, आकृष्य। भग० ९३।

आयामेत्था–भोजितवान्। भग० ६६२।

आयाय–आदाय, स्वीकृत्य चरित्वा। उत्त० १२८। अव गम्य। आचा० ३३९। गृहीत्वा मयैनदर्थं यतितव्यमिति निश्चित्य बुद्ध्या सम्प्रधार्येतियावत्। उत्त० २६८। बुद्ध्या गृहीत्वाऽभ्युपगम्य। उत्त० २९३। गृहीत्वा, अवगम्य। आचा० ३३५। बुद्ध्या गृहीत्वा। उत्त० १०४।

आयार–स्वरूपम्। जै० प्र० १८। मूलगुणादि। दश० २५६। लोचास्नानादि। दश० ११०। आङ्–मर्यादया चरण चारः–मर्यादया कालनियमादिलक्षणया चार आचार इति। आव० ४४८। चतुर्थनिर्युक्ति। आव० ६१। श्रुतज्ञानादिविषयमनुष्ठान कालाध्ययनादि। भग० १२२। व्यवहार। ठाणा० ६४। चारित्रम्। उत्त० ५८३। ज्ञानाचारादि। उत्त० ५८३।

आयारअक्खेवणी–आचाराक्षेपणी, आचारो–लोचास्नाना- दिस्तत्प्रकाशनेन आक्षेपणी। ठाणा० २१०।

आयारकहा। नि० चू० द्वि० ६५ अ।

आयारकुसल-ज्ञानाद्याचारेण कर्मकुशलो लावकः। व्य० प्र० २३४। आचारे ज्ञातव्ये-प्रयोक्तव्ये वा दक्षः, अभ्युत्थानासनप्रदानाद्युपदिष्टतान्तद्गुणानामाकरो वा। व्य० प्र० २३६।

आयारक्खी-आत्मरक्षी, आत्मानं रक्षत्यपायेभ्यः दुर्गतिगमनादिभ्य इत्येवंशीलः। उत्त० २२५।

आयारगोयर - आचारगोचरः, क्रियाकलापः। दश० १९१। आचारः - मोक्षार्थमनुष्ठानविशेषस्तस्य गोचरः। आचा० २६६।

आयारग्ग-चूलिका। आचा० ७।

आयारतेणे-आचारस्तेनः, विशिष्टाचारवत्तुल्यरूप. इति। दश० १९०।

आयारदंसणं-आचारदर्शनम्, प्रत्युपेक्षणादिक्रियादर्शनम्। आव० ४४८।

आयारदोसो-आचारदोष। आव० ६५४।

आयारपकप्प -आचारप्रकल्पः, आयरणं आयारो सो य पंचविहो-णाणदंसणचरित्ततववीरियायारो य, तस्स पकरिसेणं कप्पणा-सप्तभेदप्ररूपणेत्यर्थ.। नि० चू० प्र० ४ आ। आचार-प्रथमाङ्गं तस्य प्रकल्प.-अध्ययनविशेषो निशीथमित्यपराभिधानं, आचारस्य वा-साध्वाचारस्य ज्ञानादिविषयस्य प्रकल्पो व्यवस्थापनमित्याचारप्रकल्पः। सम० ४८। उत्त० ६१६। (निशीथ) आचार एव। आव० ६६०। प्रत्याख्यानपूर्वस्य विंशतितमं प्राभृतं। आचा० ३१९, ३२०। निशीथाध्ययनम्। ठाणा० ३२५।

आयारपभासणं-कालनियमाद्याचारव्याख्यानम्। आव० ४४८।

आयारफल-आचारफलम्, मुक्तिलक्षणम्। उत्त० ५८३।

आयारभंडय-आचारभाण्डम्। अनुत्त० १।

आयारभंडग-आचारभाण्डकं-पात्रकम्। ओघ० १५३।

आयारभाव-विशिष्टाचार। दश० १९०।

आयारमंतरे-आचारान्तरे। आव० ७९३।

आयारवं-पंचविहं आयारं जो मुणइ आयरइ वा सम्मं सो। नि० चू० तृ० १२८ आ। ज्ञानादिपञ्चप्रकाराचारवान्। ठाणा० ४२४, ४८४।

आयारवंतं-आकारवत्, सुन्दराकारं, आकारचित्र वा। औप० २।

आयारसमाही-आचारसमाधिः, चतुर्थं विनयसमाधिस्थानम्। दश० २५५।

आयारे-आचारः। नि० चू० तृ० १४८ आ। ज्ञानादिविषयाऽऽसेवा। ठाणा० ३२५। आचार्याणां नमस्कारार्हत्वे तृतीयहेतु., तानाचारवत आचाराख्यापकांश्च प्राप्य प्राणिन आचारपरिज्ञानानुष्ठानाय प्रभवन्ति। आव० ३८३।

आयारो-आचारः, साधुसामाचारी। प्रश्न० १२५। आचार्यते आसेव्यत इत्याचारः। आचा० ५। आचार। व्य० द्वि० ३९१ अ।

आयावए-आतापनाकारी। प्रश्न० १०७।

आयावगा-असुरकुमारविशेष.। भग० ६२०।

आयावणा-आतापनास्थानम्। आव० ३९१।

आयावादी-आत्मवादी। आचा० २२।

आयावतं-सकृदीषद्वा तापनमातापनम्। दश० १६३।

आयाविंतो-आतापयन्। आव० ३७१।

आयास-पीडा। ओघ० १५७। लोहमयम्। भग० ३१९। मन प्रभृतीना खेद., परिग्रहस्य चतुर्विंशतितमं नाम। प्रश्न० ९२।

आयासकर-आदेशित. आदेश, आदेशत इति आदेश। व्य० द्वि० ३३६ आ।

आयाहिणपयाहिणं - आदक्षिणप्रदक्षिण., आदक्षिणात्-दक्षिणहस्तादारभ्य प्रदक्षिण -परितो भ्राम्यतो दक्षिण एव। सूर्य० ६। आव० १२४। जं० प्र० १७। भग० ११४।

आयाहिणं-आदाहिणा, आदक्षिणाप्रदक्षिणा। आव० २३२।

आयु:कर्मानुभूतिः - स्थितिर्जीवनमिति। प्रज्ञा० १६९।

आयुःक्षेमस्य-जीवितस्य। आचा० २९१। आयुष क्षेम - सम्यक्पालनं तस्य। आचा० २९०।

आयुर्वेद:-वैद्यकशास्त्रम्। विपा० ७५।

आयो-लाभ। भग० ९। गमनं, वेदनम्। ठाणा० ३४८।

आयोगठाणं - आयोगस्थानम्, खेलनस्थानम्। आव० ८२३।

आयोगगहो-आयपमाणं खेत्तं। नि० चू० प्र० २४६ आ।

आयोधनस्थानम्-अट्टालकम्। उत्त० ३११।

आरं-आरः, संसारः । बृ० प्र० ५१ अ, २०१ अ । इहभवः, गृहस्थत्वम्, संसारी वा। सूत्र० ५६। इहलोकाख्यं मनुष्यलोकं वा। सूत्र० १५२।

आरंभ – आरम्भः, जीवोपघातः, उपद्रवणं, सामान्येन वाऽऽश्रवद्वारप्रवृत्तिः । भग० ३१। श्रावकस्याष्टमी प्रतिमा । आव० ६४६ । आरम्भ । आव० ६८८ । सावद्यानुष्ठानम्। आचा० ७८ । जीवोपघातः । भग० ७३५। पृथिव्याद्युपमर्दनं । ठाणा० १०८ । सावद्यक्रियानुष्ठानम् । आचा० १५६ । आरम्भणमारम्भः, शरीरधारणायान्नपानाद्यन्वेषणा । आचा० २९० । प्राणिवधः । तत्त्वा० ६-९ । द्रव्योत्पादनव्यापाराः । उत्त० ४५६ । पृथिव्याद्युपमर्दनम् । प्रज्ञा० ३३५। जीवः, कृष्यादिव्यापारः, जीवानामुपद्रवणं वा। प्रश्न० ६ । नि० चू० प्र० ३३ आ । व्यापारः । प्रश्न० ६३ । हलदन्तालखननः । आव० ८१८ ।

आरंभइ-आरभते-पृथिव्यादीनुपद्रवयति । भग० १८३ ।

आरंभओ – आरम्भजः, आरम्भात्-हलदन्तालखननाज्जायते सः । आव० ८१८ ।

आरंभकहा-आरंभकथा, छागतित्तिरमहिषारण्यकादिका हता अत्रेति प्रशंसनं द्वेषणं वा । भक्तकथायास्तृतीयभेदः । आव० ५८१ । तित्तिराद्युपयोगकथा । ठाणा० २०९ ।

आरंभपरिण्णाय-आरम्भः-पृथिव्याद्युपमर्दनलक्षणः परिज्ञातः-तथैव प्रत्याख्यातो येनासावारम्भप्रतिज्ञातः, श्रमणोपासकाष्टमी प्रतिमा । सम० १९ ।

आरंभसमारंभो-आरंभसमारंभः, आरंभा-जीवास्तेषां समारंभ-उपमर्दः, अथवा आरंभ.-कृष्यादिव्यापारस्तेन समारंभो जीवोपमर्दः, अथवा आरंभो-जीवानामुपद्रवणं तेन सह समारंभ', परितापनमिति वा, प्राणवधस्यैकादशपर्यायः । प्रश्न० ५ ।

आरंभिया- आरंभिकी, आरंभ.-पृथिव्याद्युपमर्दनं स प्रयोजनं-कारणं यस्याः सा, सम्यग्दृष्टेः प्रथमक्रिया । प्रज्ञा० ३३४। विंशतिक्रियामध्ये प्रथमा। आव० ६१२। आरम्भणमारम्भः तत्र भवा आरम्भिकी । ठाणा० ४१ ।

आरक्खि-आरक्षकः चौरग्राहकः । बृ० द्वि० १०७ अ। आरक्षिकः । ओघ० ८९ ।

आरक्खिगो-दंडवासिगो। नि० चू० तृ० ३० आ।

आरक्खियतो-कोट्टवालो । नि० चू० प्र० २६२ अ ।

आरक्खिय – आरक्षकः । उत्त० १६५ । दण्डनायकः । दश० १६६ । आव० ६२३ । ओघ० १०६ । आरक्षिकाणामप्युपरि स्थायिनो हिंडिका आरक्षिकाः, पुररक्षकाः । व्य० प्र० १३५ अ ।

आरक्खियपुरिसो-आरक्षकपुरुषः । आव० ३५१ ।

आरगय – आराद्गतम्-आराद्भागस्थितमिन्द्रियगोचरमागतमित्यर्थः। भग० २१७।

आरघट्टिकम् । उत्त० ३८२।

आरटन्ती-रटन्ती । नंदी १५४ ।

आरर्ण-संशब्दनम् । ओघ० ८१ ।

आरणा – आरणाः, कल्पोपगैकादशवैमानिकभेदः । प्रज्ञा० ६९ ।

आरण्ण-आरण्यः, तापसादिः । अनु० २४४ ।

आरण्णगतणं-श्यामाकादितृणम् । बृ० द्वि० २३० अ ।

आरण्णिय-आरण्यकः, अरण्ये भवः, तीर्थिकविशेषः । सूत्र० ४२२ ।

आरण्यकम्-लौकिकश्रुतम् । आव० ४५५ ।

आरतः-अत्र इतो वा । उत्त० ५४० ।

आरत्तं-आरक्तम्, ईषद्रक्तम् । आचा० १३१ ।

आरद्धो-आरब्ध. । विशे० ९८१ ।

आरनालं-कंजियं (देशीभासाए) । नि० चू० प्र० ४७ अ ।

आरनियद्धा-आरकनिबद्धा, यन्त्री । पिण्ड० १०२ ।

आरन्निय-अरण्ये वसतीति आरण्यकः । सूत्र० ३१५ ।

आरबके – आरबदेशोद्भवान्, म्लेच्छविशेषान् । जं० प्र० २२० ।

आरबदेसजा-आरब्यः । जं० प्र० १९१ ।

आरबी-आरबदेशवासिनी स्त्री । भग० ४६० ।

आरबो-आरबः, मिलक्खदेशवासी म्लेच्छः । प्रश्न० १४ ।

आरभंती-आरभमाणा, षट्कायान् विनाशयन्ती । पिण्ड० १५७ ।

आरभटभसोलः-त्रिंशत्तमो नाट्यविधिः । जीवा० २४७ ।

आरभड – आरभटम्, नृत्यविशेषः । जं० प्र० ४१२ । नि० चू० तृ० १ अ । जहाभिहितविधाणतो विवरीयं, अहवा तुरियं अण्णंमि वा दरपडिलेहंति अण्णं आढवेति । नि० चू० प्र० १८१ आ । वितथकरणरूपा, त्वरितं सर्वमारभमाणस्य, अर्द्धप्रत्युपेक्षित एवैकत्र यदन्यान्यवस्त्रग्रहणं सा । ठाणा०

३६१। विपरीता प्रत्युपेक्षणा, आवुल यदन्यान्यवस्त्रग्रहण तद्वा। ओघ० १०९। सोत्साह मुभः वेषामिदम्। ज० प्र० ४१७। अष्टाविंशतितमो नाट्यविधि। जीवा० २४७। ज० प्र० १४७।

आरयं–आरतं, उपरतम्। सूत्र० १०५। अभिविधिना आगत्य। प्रश्न० १२८।

आरसिउं–आरस्य, रटित्वा। आव० १०४।

आरसियं–आरसितम्, शब्दित। आव० २२७।

आरा–आरा, प्रवणदण्डान्तर्वर्तिनी लोहशलाका। प्रश्न० २२। तुट्टोवाणहसिब्वण्हा। नि० चू० द्वि० १८ अ।

आराओ–आराठी, आसन्नम्। आव० ६७७।

आरादण्डः–प्रतोद। दश० २५०।

आराम–तत्र रमणीयत्वातिशयेन स्त्रीपुरुषमिथुनानि यत्र आरमन्ति स विविधपुष्पजात्युपशोभित आराम। अनु० २४। विविधपुष्पजात्युपशोभित। ठाणा० २१२। रति। आचा० २२९। आराम–आरमन्ति यस्मिन्माधवीलतादिके दम्पत्यादीनि स आराम। भग० २३८। आरामा–दम्पत्यादीनि येष्वारमन्ति ते। अनु० १४९। वाटिका। प्रश्न० ८। आरमन्ति–यस्मिन् माधवीलतागृहादौ दम्पत्यादीनि क्रीडन्तीति। औप० ३। पुष्पप्रधानवनम्। औप० ४१। दम्पत्योर्नगरासन्नरतिस्थानम्। ज० प्र० १८८। आगत्य रमन्तेऽत्र माधवीलतागृहादिषु दम्पत्य इति स। जीवा० २५८। दम्पतिरमणस्थानभूतमाधवीलतादिगृहयुक्त। प्रश्न० १२७। दम्पतिरतिस्थानलतागृहोपेतवनविशेष। प्रश्न० ७३। माधवीलतागुपेतो दम्पतिरमणाश्रयो वनविशेष। प्रश्न० १२६।

आरामाइ–विविधवृक्षलतोपशोभिता कदल्यादिप्रच्छन्नगृहेषु स्त्रीसहितानां पुनः रमणस्थानभूता। ठाणा० ८६।

आरामागार–आराममध्यवर्ति गृहम्। औप० ६१। उद्यानगृहम्। आचा० ३६५। आचा० ३०६।

आरामिओ–आरामिक। आव० ३९०।

आराहइत्ता–आराध्य, उत्सन्नग्रहणनादिप्रकारेणावाधयित्वा। उत्त० ५७२। यथावदुत्सर्गापवादकुशलतया यावज्जीवं तद्धर्मसेवनेन। उत्त० ५७२।

आराहए–आराधयति, प्रगुणीकरोति। दश० २४४।

आराधक–निरतिचारपालनाकृत्। उत्त० ५७८।

आराहओ–आराधक, अविराधक। ओघ० ११२।

आराहगा–आराधका–आराधयन्ति–अविकलतया निष्पादयन्ति सम्यग्दर्शनादीनि इत्याराधका। उत्त० २१३। आवर्जका। उत्त० ३६३।

आराहण–आराधनम्, अखण्डकालकरणम्। भग० २९७।

आराहणा–आराधना, सम्यगासेवना। उत्त० ५८६। अनुष्ठानम्। उत्त० ५९१। ज्ञानाद्याराधनात्मिका। उत्त० ५८२। आवर्जनार्थम्। उत्त० ५९१। अखण्डकालस्य करणम्। आव० ८४०। चरमकाले निर्यापणरूपा। दश० २६२। मोक्षमार्गासेवना। आव० ५६२। आवश्यकस्य पर्याय। विशे० ४१५। अष्टमशते दशमोद्देशक। भग० ३२८। अखण्डकालकरणम्। उपा० १२। मोक्षाराधनाहेतुत्वात्। अनु० ३१। निरतिचारज्ञानाद्यासेवा। ठाणा० ९८।

आराहणामरणंते–आराधनामरणान्ते, मरणकाले आराधना, योगसंग्रहे द्वात्रिंशत्तमो योग। आव० ६६४।

आराहणी–आराधनी, आराध्यते–परलोकापीडया यथावद् विधीयते वस्त्वनया, द्रव्यभावभाषाभेद। दश० २०८।

आराहा–आरोहन्ति ते आराहा। नि० चू० प्र० १७७ अ।

आराहिय–आराधितम्, एभिरेव प्रकारैः सम्पूर्णैर्निष्ठां नीता। ठाणा० ३८८। सफलीकृत। उत्त० १९८।

आराहियचरणया–आराधितचरणता, चरणप्रतिपत्तिसमयादारभ्य मरणान्त यावन्निरतिचारतया तस्य पालना। भग० ६९५।

आराहेइ–आराधयति, साधयति। उत्त० ५८२।

आरिय–आर्या, आराद् याता सर्वहेयधर्मेभ्य इत्यार्या–समाराणवत वर्तिन क्षीणघातिकर्माशा समारोहदविवर वर्तिभावा दि तीर्थकृत। आचा० ११०। ऋद्धिप्राप्ता अर्हदादय, क्षेत्रजात्याद्यार्या। सम० १३५। आर्य–चारित्रार्ह। आचा० १३१।

आरिओ–आर्य, आराद् यात सर्वहेयधर्मेभ्य इति। सूत्र० ३३। आराद्यात सर्वहेयधर्मेभ्य इति, मोक्षमार्ग सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रात्मक। सूत्र० १७३।

आरियदंसी–आर्य–प्रगुण न्यायोपपन्न पश्यति तच्छील इति आर्यदर्शी–पृथक्प्रहेयकस्यासासनादिसत्त्वरहित। आचा० १३१।

आरियपदेसिए-आर्यप्रदेशित -तीर्थंकरप्रणित । आचा० २४७ ।

आरियपन्ने – आर्यप्रज्ञ -श्रुतविशेषितशेमुषीक । आचा० १३१ ।

आरिया-आर्या , आराद्देयधर्मेभ्यो याता -प्राप्ता उपादेय धर्मैरिति। प्रज्ञा० ५५।

आरुग्ग-आरोग्य-सिद्धत्वम् । आव० ५०७ ।

आरुग्गबोहिलाभो आरोग्यबोधिलाभ , आरोग्यस्य भाव आरोग्य-सिद्धत्व, तदर्थं बोधिलाभ -प्रेत्य जिनधर्मप्राप्ति । आरोग्याय बोधिलाभ । आव० ५०८ ।

आरुभिता छायाया नवमभेद । सूर्य० ९५ ।

आरुहय-आर्हतम् । आव० ४६५ ।

आरुहेत् । आचा० ३७९ ।

आरुहते-अध्यास्यते । उत्त० ५१० ।

आरूढ-आरुढ अध्यासित । उत्त० ३४९ ।

आरूढे पाउयाहिं-आरुढ पादुकयो -काष्ठमयोपानहो , एकगाथा नवमदायकरोष । पिण्ड० १५७ ।

आरुवणा-आरोपणा, यत्रैकस्मिन्प्रायश्चित्तेऽन्यदप्यारोप्यते। प्रश्न० १४५ । आचारप्रकल्पस्याष्टाविंशतितमो भेद । आव० ६६० । पर्यनुयोग । विशे० ११७२ । पच्छित्त । नि० चू० प्र० २३९ आ ।

आरे-पंकप्रभापर्यन्तमहानरका । ठाणा० ३६१ ।

आरेण-आरत , प्रत्यूर्वाक् । ओघ० १४८ । आरात् । सूत्र० ४२३ । समारभ्य । विशे० ९३८ ।

आरोगसाला-अगदशाला । नि० चू० द्वि० ३८ आ ।

आरोग्ग-आरोग्य, रोगाभाव । आव० २०१ । नीरोगता । आव० ३४१ ।

आरोग्गा-अरोगा -व्याधिवर्जिता । ठाणा० २४७ ।

आरोवणा – आरोपणा, आरोपणमेकापराधप्रायश्चित्ते पुन पुन आसेवनेन विजातीयप्रायश्चित्ताध्यारोपणम् । ठाणा० २०० । प्ररूपणाया प्रथमभेद । आव० ३८२ । परस्परा धारणम् । आव० ३८३ । प्रायश्चित्तम् । बृ० प्र० ८९ आ । चडावना (मायाप्रत्ययमधिकप्रायश्चित्तम्) । ठाणा० ३२५ । चडावणा, अहवा ज दव्वादि पुरिस विभागेण दाण सा आरोवणा । नि० चू० तृ० ८५ अ । आचाराङ्गस्याष्टाविंशति तममध्ययनम् । उत्त० ६१७ ।

आरोवणाकसिणं-आरोपणाकृत्स्नं, षण्मासिर्क तत्र परम भगवतो वर्द्धमानस्वामिनस्तीर्थे आरोपणाभावात् । व्य० प्र० ११८ आ ।

आरोवणापायच्छित्तं-प्रायश्चित्तभेद । व्य० प्र० ११ अ ।

आरोहकः । उत्त० ४८ ।

आरोहणा – आरोपणा-प्रायश्चित्तविशेष । व्य० प्र० १२४ आ ।

आरोहपरिणाहयुक्तता-आरोहो-दैर्घ्यं परिणाहो-विस्तर स्ताभ्यां तुल्याभ्यां युक्तता, शरीरसम्पत्प्रथमभेद । उत्त० ३९ ।

आरोहा-महामात्रा । विपा० ४६ ।

आरोहो-उसेहो । नि० चू० द० २६६ आ । नातिदीर्घो नाति हस्वता शरीरे कृतो वा । बृ० प्र० ३०१ आ ।

आर्जिका-अज्जिए, आर्यिका, मातु पितुर्वा माता । दश० २१६ ।

आर्जवम्-मायादोषवर्जनम् । तत्त्वा० ९-६ ।

आर्त्त -दु खित रागद्वेषोदयेन । आचा० १८३ ।

आर्द्रक -आर्द्रकनगराधिपति । सूत्र० ३६ । सिक्तिवस्त्र धारणकलवान् । सूत्र० २९९ । सचित्त तरुशरीरम् । आव० ८३८ ।

आर्द्रकुमार-प्रतिमादर्शने दृष्टान्त । बृ० प्र० १८७ अ । सदाचारप्रयत्नवज्ज्ञात । सूत्र० ३८९ ।

आर्य.-आरात्-सर्वहेयधर्मेभ्योऽर्वाग् यात । नंदी ४९ ।

आर्यकम्-हरितम् । दश० १८५ ।

आर्यकृष्ण-अज्जकण्हे, आचार्यनाम । विशे० १०२० ।

आर्यखपुट-विद्यायां दृष्टान्त । बृ० तृ० १०६ अ । विद्या सिद्ध , सिद्धमन्त्र । दश० १०३ ।

आर्यगङ्ग.-आचार्यनाम । विशे० ९२७ ।

आर्यमंगु-आचार्यनाम । बृ० प्र० २४ अ ।

आर्यरक्षित-अज्जरक्खिय, आचार्यनाम । विशे० ९२९, ९३०, १००२ ।

आर्यवचनम् – अज्जवयणे, आर्याणा-तीर्थकृता वचनम्-आगम । उत्त० ५२६ ।

आर्यवज्र.-कर्णाभ्यां श्रुते दृष्टान्त । बृ० प्र० ६३ अ ।

आर्यवैरः-अज्जवेर, आचार्यनाम । विशे० ९२९ ।

आर्यश्याम.-आचार्यविशेष । प्रज्ञा० ,०, ।

आर्यसमुद्दः-आचार्यविशेषः। बृ० प्र० २४ अ।
आर्यसुहस्ती-आचार्यविशेषः। बृ० प्र० २४ आ।
आर्या-अज्जा, प्रशान्तरूपा। अनु० २६। भिक्षुणी। ओघ० २०८।
आर्यापाढा-आचार्यनाम। विशे० ९५२।
आर्यासूत्रम्-अज्जासुत्तं, सूत्रभेदः। बृ० प्र० २०१ आ।
आर्यिका-आर्जिका, मातुः पितुर्वा माता। दशा० २३६।
आर्यैः-तीर्थकृद्भिः। आचा० २७४। सकलहेयधर्मेभ्यो दूरे यातैस्तीर्थकरादिभिराचार्यैर्वा। उत्त० २९३।
आलंकारिअभंड-आलङ्कारिकभाण्डम्, आभरणभूतभाजनम्। जं० प्र० २५५।
आलंकारियं-आलङ्कारिकम्, अलङ्कारयोग्यं भाण्डम्। जीवा० २३६।
आलंब-आलम्बः, द्रव्यस्य चतुरंगेतराक्षिभिर्लोके प्रतीतभेदः। प्रश्न० ५६।
आलंब-आलम्बः, अलम्बः। भग० १०५।
आलंबण-आलम्बनम्, प्रयतता साधारणस्थानम्। आव० ५३४। प्रवृत्तिनिमित्तं शुभमध्यवसानम्। आव० ५८६। ज्ञानादि। उत्त० ५८७। रज्ज्वादिवदापद्गर्तादिनिस्तारकत्वादालम्बनम्। भग० ७१८, ७१९। आश्रयणीयं गच्छकुटुंबकादि। ठाणा० १५४।
आलंबणबाहा-अवलम्बनबाहा, द्वयोः पार्श्वयोरवलम्बनाश्रयभूता भित्तयः। जं० प्र० २९२।
आलइअ-आलगितम्, आविद्धम्। आव० १८५। यथास्थानं स्थापितम्। जं० प्र० १६०। प्रश्न० १०१।
आलइयमालमउड-आमालितमालमुकुटम्, आगलितमालं मुकुटं यस्य सः। भग० १७४। आलगितमालमुकुटः। आचा० ४२३।
आलए-आलयः, आश्रयः। जीवा० २७९। उत्त० ४५४। जं० प्र० १८। वसतिः, गुप्तमानिजाः स्त्रीपशुपण्डकविवर्जिना। आव० ५२९।
आलग्गो-अवलम्बतः, वासरः। आव० ८००।
आलपाल-प्रलाप। आव० ६६९।
आलभिया-आलंभिका नगरीविशेषः, बीरस्य सप्तमवर्षारात्रस्थानम्। आव० २०१, २२१।
आलभिया-आलंभिका, नगरीविशेषः। भग० ५५०। नगरीविशेषः। भग० ६७५।
आलय-आवासः। ओघ० १५६। आश्रयः। जीवा० १७६। जं० प्र० १२१।
आलयविन्नाणं-आलयविज्ञानं-ज्ञानसंततिः। सूत्र० २६।
आलयगुणेहिं-आलयगुणैः, बहिर्वेष्टाभिः प्रतिलेखनादिभिः रुपशमगुणेन च। बृ० प्र० ६२ अ।
आलवंते-आलपन्, अल्पं लपन्। अनु० १४२। आलपति, आभिति ईपल्पति-वदति। उत्त० ५५।
आलविउ-ईषत्सकृद्वा लपनमालपनम्। दशा० २१६।
आलविसए-आलपनम्, सकृत्सम्भाषणम्। आव० ८११। आलपितुं-सकृत्सम्भाषितुम्। उपा० १३।
आलस्स-आलस्यम्, अनुद्यमस्वरूपम्। उत्त० १५१। अनुत्साहात्मा। उत्त० ३४५।
आला-विद्युत्कुमारीमहत्तरिका। ठाणा० १९१।
आलापति-आलपयति। आव० १००।
आलानम्-हस्तिबन्धनस्तम्भम्। नंदी० १५३।
आलाप-आलापः, सकृज्जल्पः। भग० २२३। आलापकः ईषदर्थस्याशीघ्रलपनम्। ठाणा० ४०७।
आलापगो-आलापकः। आव० २६०।
आलावणबंधे-आलापनबंधः-आलाप्यते-आलीनं क्रियते एभिरित्यालापनानि रज्ज्वादीनि तैर्बन्धस्तृणादीनाम्। भग० ३९५, ३९८।
आलावो-बहुमाणेणालितो सरभसं णमोक्कारमाणमादि तितो गुरुआलावो भण्णति। नि० चू० प्र० २३७ आ।
आलि-वनस्पतिविशेषः। जीवा० २००।
आलिंग-आलिङ्गः, यो वारकेन मुरजं आलिङ्ग्य वाद्यते। जं० प्र० १०१। मुरजो मार्दलीय। जं० प्र० १११। मृन्मयो मुरजः। जीवा० १०५।
आलिंगकसंठित-आलिङ्गसंस्थितः, आलिङ्गवाद्यस्य चतुर्दशी मृण्मयम्। जीवा० १०४।
आलिंगण-आलिङ्गनम्, ईषत्स्पर्शनम्, सर्वाङ्गस्पर्शनम् स्पर्शो भेदः। दशा० १९४। स्पर्शनम्। नि० चू० प्र० २५६ आ।

आलिंगणवट्टि-आलिङ्गनवर्ती, शरीरप्रमाणमुपधानेन वर्तते यत्। जं० प्र० २८५। जीवा० २३२। सूर्य० २९३।
आलिंगणि – आलिङ्गिनी, अप्रतिलेखितदूष्यपञ्चके चतुर्थो भेद। आव० ६५२।
आलिंगपुक्खरे – आलिङ्गपुष्करम्, मुरजमुखम्। भग० १४५।
आलिंगणी-पुरुषप्रमाणं पार्श्वमुपधानं। बृ० द्वि० २२० अ। जाणुकोप्परादिसु जा दिज्जति सा। नि० चू० द्वि० ६१ अ।
आलिंगिता – पुरिसेणित्थीस्तनादिसु स्पृष्टा। नि० चू० प्र० ११३ अ।
आलिंगो-आलिङ्ग। जीवा० १६६। आलिङ्ग, मुरजो वाद्यविशेष। जीवा० १८९।
आलिंपइ-सकृत् लिंपइ। नि० चू० द्वि० ७६ आ।
आलि-वनस्पतिविशेष। जं० प्र० ४५। जीवा० २००। दल। विशे० ६११। औषधविशेष। प्रज्ञा० ३३
आलिखिज्जति-आलिख्यते। आव० ८५७।
आलिघरं -आलिगृहकम्, वनस्पतिविशेषस्तन्मय गृहकम्। जीवा० २००।
आलिद्धमणालिद्ध-आलिष्टानाश्लिष्टम्, कृतिकर्मणि चतुर्मुश भिन्न सप्तविंशतितमो दोष। आव० ५४४।
आलित्त-अभिविधिना ज्वलित। भग० १२१। आदीप्त। अन्त० १७। आलिन, नौवाहनोपकरण। आचा० ३७८।
आलिद्धा – आदिग्धा, शिलायां शिलापुत्रके वा लग्ना। भग० ७६६।
आलिन्दकम्-अलिंदग, कुण्डलकम्। अनु० १५१।
आलिसंदग-चपलका। जं० प्र० १२४। चवलकप्रकारा, चवलका। भग० २७४। धान्यविशेष। भग० ८०२।
आलिसिंदया-चवलया। ठाणा० ३४४।
आलिहइ-आलिखति, विन्यस्यति। जं० प्र० १९२।
आलिहमाण-आलिखन्, ईषत् सकृद्वाऽऽलिखन्। भग० ३६५।
आलिहाविज्जा ईषत्सकृद्वाऽऽलेखनम्। दश० १५२।
आलिहित्ता – आलिख्य आकारकरणेन कृत्वा अन्तवर्णकादिभरणेन पूर्णानि कृत्वा। जं० प्र० १९२।
आलीढ-आलीढम्, आक्रान्तम्। आव० ७०४। दक्षिणपादमग्रतो मुखं कृत्वा वामपादं पश्चादपसारयति, अन्तरं द्वयोरपि पादयो पञ्च पादा, लोकप्रवाहे प्रथमस्थानम्। आव० ४६१। यत्र दक्षिणं पादमग्रत कृत्वा वामपादं पृष्ठत सारयति, अन्तरं द्वयोरपि पादयो पञ्च पदानि तत्स्थानम्। व्य० २०५। दक्षिणमूरुमग्रतो मुखं कृत्वा वाममूरुं पश्चान्मुखमपसारयति, अन्तरा च द्वयोरपि पादयो पञ्च पदा ततो वामहस्तेन धनुर्गृहीत्वा दक्षिणहस्तेन प्रत्यञ्चामाकर्षति तत्। व्य० प्र० ४६ आ। योधसंस्थानं। आचा० ८९। योधस्थानम्। ठाणा० ३। वामूरुअ अग्गओ काउं दाहिणं द्वितो वामहत्थेण धणू घेत्तुं दाहिणे एव गच्छइ। नि० चू० तृ० ९० अ।
आलीणाणि-ईसिं लीणाणि। दश० चू० १२५।
आलीणो-आलीन। जीवा० ३७१। गुरुसमाश्रित, संलीनो वा। भग० ८१।
आलीवग-आदीपक, गृहादिप्रदीपनकारी। प्रश्न० ४६।
आलीवणं-व्याकुललोकानां मोषणार्थं ग्रामादिप्रदीपनकम्। विपा० ३९।
आलीवण। नि० चू० द्वि० १७० अ।
आलुंचन-आलुञ्चन, ग्रहणम्। आव० ५६२।
आलुंपे – आलुम्प, निर्लाञ्छनमलकर्षनचौर्यादिक्रियाकारी। आचा० १०२।
आलुए-आलुक –अनन्तकायभेद। भग० ३००। कन्दविशेष। उत्त० ६९१। आलुकम् – साधारणवनस्पतिकायिकभेद। जीवा० २७। आलुका-कुण्डिका। अनुत्त० ५५।
आलुय-आलुकम्, कन्दविशेष। अनुत्त० ६। त्रयोविंशति तमशतकस्योद्देशक। भग० ८०४। आर्द्रकम्। भग० ८०४।
आलेक्खः-विचित्रम्। जीवा० १९९।
आलेवण-आलेपनम्। आव० ६२३। आचा० ३०।
आलेक्खो-आलेख, चित्रम्। जं० प्र० ३२।
आलो-आल, असत्यमिथ्यम्। आव० ९४।
आलोअ-अवलोक, निर्यूहकादिरूप। दश० १६६। बहि – प्रस्थानभाविनि शकुनानुकूल्यालोकेन। जं० प्र० २६३। सौरप्रकाशम्। प्रज्ञा० ५००।
आ(अव)लोअचल-आ(अव)लोकचलम्, अवलोकनमालोकस्तस्मिंश्चलं, दर्शनलालसम्। आव० ७८४।
आलोअणं-आलोकनम्, निरूपणम्। ओघ० ५२। अप्पेणिं आख्यान। नि० चू० प्र० ३३४ अ। आलोक्यन्ते दिशोऽ

रिमन् स्थितैरिति। उत्त० ४५१। आलोचनम्-गुरुनिवेदनम्। ठाणा० १२७। प्रायश्चित्तभेदः। ठाणा० २००।

आलोअणा-आलोचना, आभिमुख्येन गुरोरात्मदोषप्रकाशनम्। आव० ४६९।

आलोअभायणं-आलोकभाजनम्, मक्षिकाद्यपोहाय प्रकाशप्रधानं भाजनम्। दश० १८०।

आलोइज्ज-आलोचयेत्-प्रकाशयेत्। उत्त० ५४४।

आलोइज्जा-आलोकयेत्-पश्येत्-मुयात्। आचा० ३२८। अवलोकयेत्। आचा० ३९६।

आलोइत्ता-आलोकिता, ईषद्द्रष्टा। उत्त० ४२५। समन्ताद्द्रष्टा। उत्त० ४२५।

आलोइत्तए-आलोचयितुम्, गुरवेऽपराधान्निवेदयितुमिति। ठाणा० ५६।

आलोइयं-आलोकितं-प्रत्युपेक्षितं। आचा० ४२८।

आलोइयपडिक्कंते-आलोचितप्रतिक्रान्तः, आलोचितं गुरूणां यदतिचारजातं तत्प्रतिक्रान्तम्-अकरणविषयीकृतं येनाथवाऽऽलोचितश्चासावालोचनादानात्प्रतिक्रान्तश्च मिथ्यादुष्कृतदानादालोचितप्रतिक्रान्तः। भग० १२८।

आलोए-आलोक., दर्शनम्। भग० ११८। दर्शनं, दृश्यमानता। जीवा० ३११। आलोचयेत्-दत्तावधानो भवेत्। आचा० ३४२। चक्षुर्दर्शनपथे। ओघ० १८३।

आलोएइ-आलोचयति। आव० ७२५।

आलोएज्जा-आलोचनं-गुरुनिवेदनम्। ठाणा० १२७।

आलोएत्तो-आलोयणा। व्य० प्र० १०८ अ।

आलोको-आलोक्यत इति आलोक.-स्थानदिगादिनिरूपणम्। ओघ० १८१। अतिरिक्तधदीपशिखादिदर्शनम्। उत्त० ६२१। सावकाशे मुक्त्वाऽभ्यन्तरे स्थापन्ति। ओघ० १०७। आलोक्यन्ते दिशोऽस्मिन् स्थितैरिति। उत्त० ४५१।

आलोग - आलोकम्, सौरप्रकाशम्। ज० प्र० २२९। चोपलपादी। दश० चू० ७६। समो भूभाग.। ओघ० १९३। आलोकनमालोको यावद्दृष्टिप्रसर.। ओघ० २३।

आलोचनम् - प्रकटनं प्रकाशनमाख्यानं प्रादुष्करणम्। तत्त्वा० ९-२२।

आलोचयति-गणयति प्रेक्षते च। आव० ५३६।

आलोचयेत्। व्य० द्वि० ७१ अ।

आलोयं - आलोकम्। ओघ० ८४। दृष्टिपथम्। औप० ६९। स्थानदिक्प्रकाशादिरूपतयाऽऽलोकम्। सू० तृ० १४० आ। प्रकाशः। आव० ६४२। आलोकस्थानं-गवाक्षादिकं। आचा० ३४१।

आलोयणं - आलोचनम्, यथागृहीतभक्तपाननिवेदनम्। प्रश्न० १११। आलोचना, प्रयोजनतो हस्तशताद्बहिर्गमनागमनादौ गुरोर्विकटना, मिथ्यादुष्कृतं च। आव० ७६४। एकादशी गुर्वाशातना। आव० ७२५। गुरोः पुरतो वचसा प्रकटीकरणम्। व्य० प्र० १४ अ। ठाणा० २००। अलवणं। व्य० द्वि० ३३५ अ। सकृत् अनेकशः प्रलोकनम्। नि० चू० प्र० २२१ अ।

आलोयणा - आलोचना, आङिति-सकलदोषाभिव्याप्त्याऽऽलोचना-आत्मदोषाणां गुरुपुरतः प्रकाशना। उत्त० ५७९। आलोचना। ओघ० २२५। योगसङ्ग्रहे प्रथमो योगः। आव० ६६३। परस्स पागडं करेइ। नि० चू० तृ० ८५ अ। व्य० प्र० १०७ आ।

आलोयणाणुलोमं - आलोचनानुलोम्यम्, पूर्वं लघवः आलोच्यन्ते पश्चाद् गुरव.। आव० ७८१।

आलोयणारिहं-आलोचना-निवेदना तल्लक्षणां शुद्धिं यदर्हत्यतिचारजातं तदालोचनार्हम्। भग० ९२०।

आलोयभायणं - आलोकभाजनम्, प्रकाशमुखे भाजने, अथवा आलोके-प्रकाशे नान्धकारे पिपीलिकावालादीनामनुपलम्भात्, तथा भाजने-पात्रे, पात्रं विना जलादिसम्पातितसत्त्वादर्शनादिति। प्रश्न० ११२।

आलोविअ-अलोपिक। दश० ४४।

आलोवेइ-आलोचयति। आव० ७१०।

आवंति-आचारप्रकल्पे प्रथमश्रुतस्कन्धस्य पञ्चममध्ययनम्। प्रश्न० १४५। आचाराङ्गस्य पञ्चममध्ययनम्। उत्त० ६१६। आचाराङ्गे प्रथमश्रुतस्कन्धस्य पंचमाध्ययनम्। सम० ४४। आचा० १९६। यावन्तः। आचा० १८५। आचारप्रकल्पस्य पञ्चमो भेदः। आव० ६६०।

आवंती-लोकसारापराभिध, आचारांगपंचमाध्ययनम्। ठाणा० ४४४।

आवइ-आगच्छत्यापतति। उत्त० २८०।

आवईसु दढधम्मया - आपत्सु दृढधर्मता, योगसङ्ग्रहे तृतीयो योग। आव० ६६४।

आवकधाते–यावत्कथा–यावज्जीवम् । ठाणा० २३६ ।

आवकहियं–यावत्कथिकम्, प्रव्रज्याप्रतिपत्तिकालादारभ्या प्राणोपरमात् तच्च भरतैरावतभाविमध्यद्वाविंशतितीर्थंकरतीर्थान्तरगतानां विदेहतीर्थान्तरगतानां च साधूनामवसेयम् । प्रज्ञा० ६३ । सकृद्गृहीत यावज्जीवमपि भावनीयम् । आव० ८३९ । यावज्जीविक प्रतादिलक्षणम् । आव० ५६३ । यावज्जीविक महाव्रतभक्तपरिज्ञादिरूपम् । ठाणा० ३८० । ये कल्पसमाप्त्यनन्तरमव्यवधानेन जिनकल्पं प्रतिपत्स्यन्ते ते यावत्कथिका । प्रज्ञा० ६८ ।

आवज्जणं–आवर्जनम् । ओघ० १६९ ।

आवज्जय–आवर्जक, आराधक । उत्त० ३६१ ।

आवज्जीकरणं – आवर्जीकरणम्, आवर्जित –अभिमुखीकृत मोक्षगमन प्रत्यभिमुखीकृतस्य करणं–क्रिया शुभयोग व्यापार । प्रज्ञा० ६०४ । आवर्जीकरणम्–अन्तर्मौहूर्तिक उदीरणावलिकाया कर्मप्रक्षेपव्यापाररूपम् । ठाणा० ४४२ ।

आवट्ट–आवर्त्त शङ्खसत्क । उत्त० ६०५ । ससार । आचा० ६२ ।

आवट्टजोणी – आवर्त्तयोनि, आवर्त्तोपलक्षिता योनि । उत्त० १८३ ।

आवट्टणं–आवर्त्तनम्, परिभ्रमणम् । सूर्य० २७६ ।

आवट्टती–आवर्त्यते, पीड्यते–दु खभाग्भवति । सूत्र० १९० ।

आवट्टितो–आरत्त । आव० ९५ ।

आवट्टो–आवर्त्त, आवर्त्तयति–प्राणिनं भ्रामयतीति । सूत्र० ८६ । उत्त० १८३ । जीवा० २४३ ।

आवड–आवर्त्त –मणीना लक्षण । जीवा० १८९ ।

आवडइ–आपतति, भवति । ओघ० ९० ।

आवडण– अभिघात, आपतनं वा । बृ० द्वि० ७७ आ । प्रस्फोटनम् । ओघ० १२२ । आभिडण । ओघ० २०४ । पक्खलण । नि० चू० प्र० ४९ अ । आपतन–द्वारादौ शिरसो घट्टनम् । बृ० प्र० २९५ अ ।

आवडणपडणादी–आपतनपतनादय । ओघ० ९० ।

आवडणा–उक्खआदिसु पक्खलणा । नि० चू० तृ० २१ अ ।

आवडिऊण–आपत्य । आव० १९६ ।

आवडिए – अवकोणितानि, अधस्तादाकोणितानि । उत्त० ३६७ ।

आवडिओ – आपतित । आव० ५७८ । आस्फालित । आव० १९६ । आपतितम् । उत्त० १७० । आव० ३२० ।

आवडिया–आपतिती, प्राप्ती । उत्त० ५१० ।

आवण–आपण, हट्ट । भग० २३८, ११६ । प्रश्न० ८ । वीथि । दश० १७६ । ज० प्र० १०७ । अनु० १५९ । आपण, पण्यस्थानम् । प्रश्न० १२७ ।

आवणवीहि–आपणवीथि, हट्टमार्ग, रथ्याविशेष । जीवा० २४६ ।

आवणाइ–आयतनानि, आपतनानि वा उपभोगार्थमागमनानि । ज० प्र० १२१ ।

आवण्ण–आपन्नपरिहारिका । बृ० तृ० २० अ ।

आवण्णपरिहारो–आपन्नपरिहारिक, जो मासियं वा जाव छम्मासियं वा पायच्छित्तं आवण्णो तेण सो सपच्छित्ती असुद्धो अ विसुद्धचरणेहिं साहूहिं परिहरिज्जति इह तेण अहिकारो । नि० चू० तृ० ८९ आ ।

आवण्णसत्ता–आपन्नसत्त्वा, गर्भवती । उत्त० ५३ ।

आवती – प्रतिसेवनापञ्चमभेद । भग० ९१९ । आपत्–द्रव्यत प्रासुकद्रव्य दुर्लभ क्षेत्रतोऽध्वप्रतिपन्नता कालतो दुर्भिक्ष भावतो ग्लानत्व । ठाणा० ४८४ ।

आवतीगंगा –गंगामहागंगासादीनगंगामृत्युगंगालोहितगंगात सप्तगुणा आवतीगंगा । भग० ६७४ ।

आवत्त – आवर्त्त, आवर्त्तनम्, प्रादक्षिण्येन परिभ्रमणम् । ज० प्र० १८७ । षोडशसागरस्थितिक महाशुक्रविमानम् । सम० ३२ । आवर्त्तक, पयसां भ्रम । ज० प्र० १११ । चिकुरसंस्थानविशेष । ज० प्र० १८३ । मणीनां लक्षणानि । ज० प्र० ३१ । महाविदेहे विजयनाम । ज० प्र० ३४६ । अप्राप्तम्–अस्पृष्टम्, आवर्त्त अङ्गुलिनावर्तन–परिभ्रमणम् । भग० १२८ । आवर्त्तिका । जीवा० २४४ ।

आवत्तकूडे – आवर्त्तकूटम्, नलिनकूटे तृतीयकूटनाम । ज० प्र० ३४६ ।

आवत्तगा–एकखुरादिचतुष्पद । प्रज्ञा० ४५ ।

आवत्तणपेढिया–आवर्तनपीठिका, यत्रेन्द्रकीलिका । जीवा० २०४ । यत्रेन्द्रकीलको निवेशित । जीवा० ३०१ । यत्रे-न्द्रकीलो भवति । ज० प्र० ८८ । अग्रद्वारम् । नि० चू० तृ० ३१ अ । आवर्त्तनम्–भक्तीभवनम् । व्य० प्र० ०२३ आ ।

आवत्ता-आवर्ता, ग्रामविशेष । आव० २०६। आवर्त्तव हुलजला नदी। बृ० तृ० १६२ आ। धातकीखंडे तन्नाम महाविदेहगतो विजय । ठाणा० ८०।

आवत्ते-आवर्त्त, विजयस्य नाम। जं० प्र० ३४६। घोष व्यन्तरेन्द्रलोकपाल । ठाणा० १९८।

आवत्तो-आवर्त्त, एकखुरविशेष । प्रश्न० ७। एकखुरश्च तुष्पद । जीवा० ३८। नाट्यविशेष, भ्रमद्भ्रमरिकादा नैर्त्तनम्। जं० प्र० ४१४। जीवा० २४६।

आवपनम्-लोहमय शक्टोपकरणम्। पिण्ड० ३२।

आवबहुले-अब्बहुलम्, जलबहुल, रत्नप्रभापृथ्व्यास्तृतीयकाण्ड । जीवा० ८९।

आवयं-आवर्त्त, अहोकायमित्यादि सूत्रपाठ गुरुचरणन्यस्त हस्तशिर स्थापनारूप, सूत्राभिधानगर्भ कायचेष्टाविशेष। आव० ५४२।

आवयइ-अतिपतति । आचा० २६५।

आवरणं-आवरणम्, स्फुरकादि। प्रश्न० ५३। आव्रियते आकाशमनेनेति, भवनप्रासादभगेरादि तल्लक्षणशास्त्रम्। ठाणा० ४५१। सन्नाहे। प्रश्न० ४९। कमचादि। उत्त० १४३। आव० ३४६। कपाट। बृ० द्वि० १११ अ। कवच । भग० ९४। आवरणे-प्रच्छादनपटे। जं० प्र० २३६। फरकादि। आचा० ६४। स्फुरकस्फटादि। भग० ३१८। आङो मर्यादेपदर्थपचनत्वात् इह मर्यादया धाऽऽरणवन्तीत्यावरणा, ततश्च सर्वविरतिनिषेधार्थ एवाय वर्तते न देशविरतिनिषेधे तस्यावरणशब्द । आव० ७८। खेटकसन्नाह वा। जं० प्र० ३५९। सन्नाहं। ठाणा० ४५०।

आवरणप्रविभक्ति-अष्टमनाट्यभेद । जं० प्र० ४१६।

आवरिसणं-पाणिएण उप्फोसण। नि० चू० प्र० १०२ आ।

आवरेत्ता-आवृत्य-अवष्टभ्य। भग० ५७६।

आवर्जनम्-आराधना। उत्त० ५९१। आवर्जन गन्धोदकादिना। अनु० २६।

आवर्तना-आउट्टणा, आवर्जनं, निम्नम्। बृ० प्र० ४० आ।

आवलगनादिका-क्रियाविशेष । आचा० १२४।

आवलण-आवलनम्, मोटन, अथवा बन्धनस्य मध्यादाकर्षण मार्ग वर्ति। प्रश्न० २२।

आवलियपविट्ठो-आवलिकाप्रविष्ट, श्रेणिव्यवस्थित। जीवा० १०५।

आवलिया-आवलिका-असङ्ख्यातसमयमाना। ठाणा० ८५। आवलिका, श्रेणि । जीवा० १०५। असङ्ख्येयसमयसंघातोपलक्षित काल । आव० ३१। परंपरा। आव० ८५८। असङ्ख्यातसमयात्मिका। भग० २११। वृत्ति, प्रवाह । जं० प्र० १६६। तत्र या विच्छिन्ना एवं तिर्भवति मण्डली सा आवलिका। व्य० द्वि० ३१ अ। असङ्ख्येयसमयसमुदायिका। सूर्य० २९३। वृत्ति, प्रवाह । जं० प्र० ३५८।

आवलियाआयरो-आवलिकास्थापक आचार्यपारम्पर्यम्। आव० ३०७।

आवलियापविट्ठ-आवलिकाप्रविष्टम्, यत्पूर्वादिषु चतसृषु दिक्षु श्रेण्या व्यवस्थितम्। जीवा० ३९७।

आवलियाबाहिरं-आवलिकाबाह्यम्, यत्पुनरावलिकाऽऽविष्टाना प्राङ्गणप्रदेशे पुष्पप्रकर इव यतस्ततो विप्रकीर्णम्। जीवा० ३९७।

आवली-हार । बृ० प्र० ४८ अ। पुद्गलाना दीर्घतया श्रेणि । सूर्य० १३०। आवली, पङ्क्ति । ओघ० ८२।

आवल्लिक-आवलिक । विशे० १३५५।

आवल्लो-बलीवर्द । आव० ६६५। उत्त० १९२।

आवसंत-आवसन्, विवसन्। आचा० ११। आङिति-गुरुदर्शितमर्यादया वासना। उत्त० ८०। ठाणा० ९। मया गुरुकुले आसृशन्। राम० २। आवसन्-सेवमान। आचा० २९३।

आवसह-आवसथ, आश्रय । उत्त० ६२६। दश० २४५। देवभवनप्रकार । उत्त० ३८५। आवसथ, परिव्राजकस्थानम्। प्रश्न० १२६। औप० ६१। परिभाजना श्रय । प्रश्न० ८९ उत्तरकरं गृहम्। सूत्र० ३९९।

आवसहिय-आवसथिक, तीर्थिकविशेष । सूत्र० ४१३।

आवसिया-आवश्यिकी, अवश्यकर्त्तव्ययोगैर्निष्पन्ना। अनु० २५९।

आवस्सय-आवश्यकम्, अवश्यकर्त्तव्य संयमव्यापारनिष्पन्नम्। आव० ११६। कायिकादिवृत्तम्। ओघ० १४७।

आवस्सग-आवश्यकम्, समन्तादावश्यकारकम्। अनु० ११। अवश्य कर्त्तव्य आवश्यकं-कायिकाद्युत्सर्गरूपम्। ओघ० १४०। कायिकोच्चारादि। आव० ८७। प्रतिक्रमणम्।

ओघ० ९३, ५८। सामायिकादि षडध्ययनकलाप । अनु० ७। आवश्यकम्, श्रमणादिभिरवश्य क्रियत इति, ज्ञानादिगुणा मोक्षो वा आ-समन्तात् वश्य क्रियतेऽनेन इति, आ समन्ताद्वश्या इन्द्रियकषायादिभावशत्रवो येषां ते तथा, तैरेव क्रियते यत् तत् । अनु० ३। । आवासकं वा समग्र गुणग्रामावासक वा। अनु० ३१। दोषत्यागलक्षणमवनता दिकम्। आव० ५४५। गुणानां आ-समन्ताद्वश्यमात्मानं करोति। अनु० १०। श्रमणादिभिरहोरात्रमध्येऽवश्यकरणात्। विशे० ४१५। नियमत करणीयम्। आव० ५१४। अवश्यं कर्तव्यम्, सामायिकादिरूपम्, आ-समन्ताज्ज्ञानादिगुणै शून्य जीव वासयति, तैर्युक्तं करोतीत्यावासक-सामायिकादिरूपम्। विशे० २। अष्टम्। आव० ४२६। मूल गुणोत्तरगुणानुष्ठानलक्षण । आव० २६७। आवर्त्तादिकम्। आव० ५११। कायिका-व्युत्सर्गलक्षणम्। आव० १५२। सामायिकादिषड्विधम् । ठाणा० ५१। अवश्य कर्तव्यमावश्यक, अथवा गुणानामावश्यमात्मानं करोतीत्यावश्यक, यथा अन्त करोतीत्यन्तक, अथवा 'वस निवासे' इति गुण शून्यमात्मानमावासयति गुणैरित्यावासकम्। आव० ५१।

आवस्सय – अपाश्रय –आधार । विशे० ४१५। सम्झा कायिकीलक्षणम्। बृ० द्वि० २६१ अ।

आवस्सयाइ – आवश्यकानि, शरीरचिंतादेवार्चनादीनि। व्य० प्र० १६९ आ।

आवस्सिआ–आवश्यकी, क्वचिद्बहिर्गमनकार्ये समुत्पन्ने ऽवश्यगन्तव्यमितिभणनम्। बृ० प्र० २२२ अ । ज्ञाना द्यभ्यनेनोपाश्रयाद् बहिरवश्यगमने समुपस्थितेऽवश्य-कर्तव्यमिदमतो गच्छाम्यहमित्येवं गुरुं प्रति निवेदना । अनु० १०३।

आवस्सिता–चतुर्थी सामाचारी। ठाणा० ४९९।

आवस्सिया–आवश्यिकी, अवश्यकर्त्तव्यैश्चरणकरणयोगैर्निर्वृत्ता। आव० ५४७। बृ० द्वि० २२४ अ।

आवहो–द्वारकपश्चिमामावह । व्य० द्वि० ३४२ आ।

आवाए–आपात , अन्यतोऽन्यत्र आगमनात्मक । उत्त० ८६ ।

आवाओ–आपाक । विशे० ८७२। आपाकंतीर्णा-नूतना। विशे० ६३०।

आवागसीसाओ–आपानशिरस । नंदी० १५७।

आवागो–आपाक, आवूं । आव० १०१।

आवाडा–आपाता इति नाम्ना किराता । जं० प्र० २३२।

आवातभद्दते – प्रथममीलके दर्शनामात्राभिरा भद्रकारी। ठाणा० १९७।

आवाय–आपात, तत्प्रथमतया संसर्ग । भग० १२६। आभिमुख्येन समवाय । आव० १२६। अभ्यागम । ओघ० ११९।

आवारि–रूपापण्यम्, आरूपदम्। आव० ६७५।

आवायकहा–आवापकथा, इयद्द्रव्या शाकघृतादिश्वाश्रीत युक्ता इत्यादि प्रशमन द्वेषणं वा, भक्तकथाया प्रथमभेद । आव० ५८१। शाकघृतादीन्येतावन्ति तस्यां रसवत्यामुप युज्यन्ते इत्येवंरूपा कथा आवापकथा। ठाणा० २०९।

आवास – आवास, देववासस्थानम्। जं० प्र० ३१७। आवश्यकम्-प्रतिक्रमणम्। आव० ७८४। ओघ० २००। प्रज्ञा० ६०६। निवास । जीवा० १८०।

आवासग–आवासकम्, समन्ताद्वासयति गुणैरिति। अनु० ११। गुणशून्यमात्मानमावासयति गुणैरिति, गुणसान्निध्य मात्मन करोतीति भावार्थ । आव० ५१। प्राभातिकवैका लिकप्रतिक्रमणलक्षणे। व्य० द्वि० १८२ अ।

आवासिय–आवासित, स्थित । दश० १०७।

आवासेंति–आवासयन्ति, वसन्ति। आव० ६५४।

आवाह–सरीरवज्जा पीडा। नि० चू० प्र० ११५ अ।

आवाह–आवाह, विवाहात्पूर्वं ताम्बूलदानोत्सव । जं० प्र० १२३। जीवा० २८१।

आवाहणं–आवाहनम्, गमनम्। प्रश्न० २०।

आवाहिओ–आहूत । आव० १६९, १९३।

आवाहो–आवाह, अभिनवपरिणतस्य वधूवरस्यानयनम्। प्रश्न० ११९। मुह भिवस। नि० चू० द्वि० ९२ आ। वध्वा वरगृहानयनम्। बृ० तृ० ४३ आ। आहूयन्ते स्वजनास्ता म्बूलदानाय यत्र स । जीवा० २८१।

आविंध–परिधेहि। आव० ९९।

आवि–आवि, जनसमक्ष प्रकाशदेश इतियावत्। उत्त० ५४।

आविइ–अनुसमयम्-प्रतिक्षणम्। भग० ६२५।

आविइत्ता–अवनम्य दद्यात्। व्य० द्वि०

आविय–आपित। उत्त० ३३९।

आविद्धं-परिहितम् । जं० प्र० १९०, २७८ । आलिंगितम् । प्रश्न० १०१ । व्याप्तम् । उत्त० ५४८ । समन्तात्ताडितः । उत्त० ४५५ । शिरस्यारोपणेन आविद्धः । भग० १९३ ।

आविद्धामो-परिदध्मः । आव० ६५ ।

आविर्भावः-प्रकाशः, प्रकटत्वम् । विशे० १०६२ ।

आविलं-आविलम्, सकालुष्यमाकुलं वा । प्रश्न० ५३ । अविमलमस्वच्छं प्रकृत्या । जीवा० ३०३ ।

आविद्धलिंगं । नंदी ९ ।

आविसामि-आविशामि, निवेशे । विशे० १२४७ ।

आवी-गंगागामी नदीविशेषः । ठाणा० ४७७ ।

आवीईमरणे-आ-समन्ताद्वीचय इव वीचयः-आयुर्दलिकविच्युतिलक्षणाऽवस्था यस्मिंस्तदावीचि, अथवा वीचिः-विच्छेदस्तदभावादवीचि, दीर्घत्वं तु प्राकृतत्वात्तदेवंभूतं मरणमावीचिमरणं-प्रतिक्षणमायुर्द्रव्यविचटनलक्षणम् । सम० ३३ ।

आवीचिमरणं-आवीचिमरणं, सप्तदशमरणभेदे प्रथमः । उत्त० २३० ।

आवीचियमरणं - आ-समन्ताद्वीचय.-प्रतिसमयमनुभूयमानायुषोऽपरापरायुर्दलिकोदयात्पूर्वपूर्वायुर्दलिकविच्युतिलक्षणाऽवस्था यस्मिन् तदावीचिकं, अथवाऽविद्यमाना वीचिः-विच्छेदो यत्र तदवीचिकं अवीचिकमेवावीचिकं तच्च तन्मरणं चेत्यावीचिकमरणम् । भग० ६२४ ।

आवीलए-आङ् ईषदर्थे, ईषत्पीडयेद्-अविकृष्टेन तपसा शरीरकमापीडयेत्, एतच्च प्रथमप्रव्रज्याऽवसरे । आचा० १९२ ।

आवीलाविज्ञा-आपीडनम्, सकृदीपद्वा पीडनम् । दश० १५३ ।

आवेउं-आपातुम्, भोक्तुम् । दश० ३६ ।

आवेढिओ-एगदुतिदिसिद्वितेसु, अहवा एगपंतीए समंतांठिएसु, आङ् मर्यादयाऽऽवेष्टितः । नि० चू० तृ० ४६ आ ।

आवेढियं-आवेष्टितम्, सकृदावेष्टितम् । ठाणा० ५०२ ।

आवेढियपरिवेढिए - आवेष्टितपरिवेष्टितः, गाढतरं सवेष्टितः । प्रश्न० ३०६ ।

आवेयणं - आवेदयति, निवेदयति कालमित्यर्थं । ओघ० २०४ ।

आवेलिज्ज-आपीडयेत्, गाढमवगाहयेत् । उत्त० ४७५ ।

आवेसणं - लोगसमवायट्ठाणं । नि० चू० द्वि० ६९ आ ।

-आ-समन्ताद्विशन्ति यत्र तदावेशनम्-शून्यगृहम् । आचा० ३०७ ।

आशातनम्-आ-समन्तात् शातयति मुक्तिमार्गाद् भ्रंशयति । अनन्तानुबन्धिकषायवेदनम् । विशे० २८३ ।

आशाम्बराः-दिगम्बराः । प्रज्ञा० २० ।

आश्रयानः । ओघ० ३२ ।

आश्रयं गच्छामि-भक्तिं करोमीत्यर्थः । आव० ५७९ ।

आश्रित्य-प्रतीत्य । जीवा० ५६ । उत्त० ६०२ ।

आसं-अश्वम्, मनः । प्रज्ञा० ६०० । आशां-भोगाकांक्षां । आचा० १२७ ।

आसंकलनम्-चयनम् । ठाणा० १७९ ।

आसंतर - अश्वतरः, वेगसरः, अजात्या घोटक. । दश० १९४ ।

आसंदओ-आसन्दकः । आव० ५५८ ।

आसंदग-कट्ठमओ । बृ० द्वि० २११अ । कट्ठमओ अज्झसिरो । नि० चू० प्र० २०८ अ । पल्यङ्कः । आव० ३५८ ।

आसंदयं-आस्यन्दकम् । आव० ६९३ ।

आसंदी - मञ्चिका । पिण्ड० १०९ । उपवेशनयोग्या मञ्चिका । सूत्र० ११८ । दश० २०४ । उपवेशनार्हमासनम् । दश० ११७ । आसनविशेषः । सूत्र० १८२ । मञ्चकः । सूत्र० २७८ ।

आसंसइयं-असंशयितं, निःसंशयं मनःसंधिन वा । सूत्र० ३९० ।

आसंसपओगो-निदानकरण । नि० चू० प्र० ३५ अ ।

आसंसा-आशंसा-अप्राप्तप्राप्त्यभिलाषः । आचा० ११५ ।

आस-अश्वः, वाल्हीकादिदेशोत्पन्न., आत्मा । दश० १९४ । क्षेपः । आव० ३६४ ।

आसइ-आस्ते । आव० ३९६ ।

आसइत्तु-आसितुम्, उपवेष्टुम् । दश० २०४ ।

आसएण - आश्रयतीति आश्रयः-धूमवलकादि । अनु० २१४ ।

आसकण्णो-अश्वकर्णः, सप्तदशान्तरद्वीप. । जीवा० १४४ ।

आसकण्णदीवे-अन्तरद्वीपनाम । ठाणा० २२६ ।

आसकन्ना-अश्वकर्ण., सप्तदशान्तरद्वीपः । प्रज्ञा० ५० ।

आसकरणं-आसमिक्खणं । नि० चू० द्वि० ७१ अ ।

आसकिसोरो-अश्वकिशोर. । आव० ३७०, ३६१ ।

आसकखंधसंठिते-अश्वस्कन्धसंस्थितम्, अश्विनीनक्षत्रं स्थान । सूर्य० १३० ।

आसखंधसंठिओ-अश्वस्कन्धसंस्थित, उभयोरपि पार्श्वयो पञ्चनवतियोजनसहस्रपर्यन्तेऽश्वस्कन्धस्येवोन्नततया षोडशयोजनसहस्रप्रमाणोच्चैस्त्वयो शिखायाभावात् । जीवा० ३२५।

आसगं-आस्यकम्, मुखम् । जीवा० ११६ । आस्यके, पिठरादिमुखे । ठाणा० १४८ ।

आसग्गीव-अश्वग्रीव, त्रिपृष्ठवासुदेवशत्रु । आव० १५९ । महामाण्डलिकराजा आव० १७४ ।

आसघडगर-अश्वगृह । आव० ३७० ।

आसज्ज-आसाद्य-अंगीकृत्य । आचा० १५९ ।

आसण-आसनं, सिंहासनादि । प्रश्न० १६१ । आधारलक्षणानि धर्मास्तिकायादीनां लोकाकाशादीनि, स्वस्वरूपाणि वा । आव० ५९९ । पीठफलकादिकम् । आव० ६५४ । स्थानम् । उत्त० १०९ । पीठकादि । आव० ७९५ । दश० २८१ । अपवादगृहीतं पीठकादि । दश० २३१ । दश० २२८ । पतल्लादि । सूत्र० ६६ । काष्ठपीठकादि । दश० चू० १२६ । विष्टरम् । प्रश्न० १३८ । प्रश्न० ८ । सिंहासनादि । जीवा० ४०६ । आसन्दकादिविष्टरं, आस्यते-स्थीयतेऽस्मिन्निति वाऽऽसन-शय्या । आचा० १२४ । उपवेशनम् । उत्त० ६०९ । अवस्थानम् । उत्त० ६२६ । आसन गोदोहिकोत्कुटुकासनवीरासनादिक । आचा० ३१२ । पादपीठपुञ्छनादि । उत्त० ४२३ । सिंहासनादि । उत्त० ३६२ । पीठकादि । सम० ३८ । शक्रादीनां सिंहासनम् । ठाणा० ११७ । आसन्दकादि । दश० २१८ । आचा० ६० । भग० ३३८ । आसन-आसनप्रदान, गुर्वादीनां समागतानां पीठकाद्युपनयनम् । व्य० प्र० २३५ आ ।

आसणअणुप्पदाणं आसनानुप्रदानम्, स्थानात्स्थान संचारणम् । दश० ३० ।

आसणअभिग्गहो-आसनाभिग्रह, तिष्ठत एवासनानयनपूर्वकमुपविशतोऽत्रेतिभणनमिति । सम० ९५ । ठाणा० ४०८ ।

आसणगाणि पताणि पांशुकरशर्करालोष्टाद्युपचितानि का ष्ठानि च दुर्घटितानि । आचा० ३१० ।

आसणत्थ-आसनस्थं, निषद्यागतम् । आव० ५४१ ।

आसणदाणं - आसनदानम्, पीठकाद्युपनयनम् । दश० २४१ । पीठाददानम् । उत्त० ६०९ ।

आसणमणुप्पयाणं-आसनानुप्रदानम्, आसनस्य स्थानान्तरसञ्चारणम् । ठाणा० ४०८ । सम० ९५ ।

आसणाणुप्पयाणं – आसनानुप्रदानं, गौरव्यमासनस्य स्थानान्तरसञ्चारणम् । भग० ६३७ ।

आसणाभिग्गह-आसनाभिग्रह -तिष्ठत एव गौरव्यस्यासनानयनपूर्वकमुपविशतेतिभणनम् । भग० ६३७ । यत्र यत्रो पवेष्टुमिच्छति तत्र तत्रासननयनम् । औप० ४३ । तिष्ठत एवादरेणासनानयनपूर्वकमुपविशतात्रऽप्रतिभणनम् । दश० ३० ।

आसणेय-आश्वासन । जं० प्र० ५१४ ।

आसतरगा-वेगरा । नि० चू० प्र० १४४ आ ।

आसत्त-आसक्त, भूमी लग्न । जं० प्र० ७६ । आ-अवाङ् अधोभूमौ सक्तं आसक्तं, भूमौ लग्नं । प्रश्न० ८६ । जीवा० १६० । जीवा० २२७ । भूमौ सम्बद्ध । औप० ५ ।

आसत्तमल्लदामा-आसक्तमाल्यदामा । आव० १८४ ।

आसत्ती-आसक्ति, धनाशासक्त, परिग्रहस्यैकोनत्रिंशत्तमं नाम । प्रश्न० ९३ ।

आसत्थ-पीप्पलक । भग० ८०३ । असुरकुमारचैत्यवृक्ष । ठाणा० ४८७ । समाश्वासित । आव० ५३ । अश्वत्थ नैलक्षविशेष । सम० १५२ । आश्वस्त । आव० ३१० ।

आसन्दकम्-आसनम् । दश० २१८ । आचा० ११४ ।

आसन्नं-समुत्तीनम् । निर० ८ ।

आसपुराओ-धातकीखण्डे सिन्धुविशेषस्य राजधानी । ठाणा० ८० ।

आसम-आश्रम, तापसादिस्थानम् । भग० ३६ । अनु० १४२ । सूत्र० ३०९ । तीर्थस्थानम् । आचा० ३२९ । ठाणा० २९४ । ठाणा० ८६ । तापसावसथोपलक्षित आश्रय । आचा० २८५ । प्रथमतस्तापसादिभिरावासित पश्चादपरोऽपि लोक तत्र गत्वा वसति । बृ० प्र० १८१ आ । तापसावसथादि, आ-समन्तात् श्राम्यन्ति-तप कुर्वन्त्यस्मिन्निति । उत्त० ६०५ । प्रथमतापसनिवास । दश० २७९ । आश्रम, तापसादिनिवास । प्रश्न० ५२ । तापसावसथो पलक्षित आश्रय । प्रज्ञा० ४८ । जीवा० ४० । जीवा० २७९ । तापसाद्यावास । औप० ७४ ।

आसमडे-अश्वमृत मृताश्वदेह । जीवा० १०६ ।

आसमपय-आश्रमपदम्, पार्श्वनाथदीक्षास्थानम् । आव० १३७ । आ-समन्तात् श्राम्यन्ति-तप कुर्वन्त्यस्मिन्निति

श्रमः-तापसावसथादिस्तदुपलक्षितं पदं-स्थानम्। उत्त० ६०५।

आसममारी-मारीविशेषः। भग० १९७।

आसमरूवं-आश्रमरूपम्। भग० १९३।

आसमित्त-अश्वमित्रः, कौण्डिन्यशिष्यः। विशे० ९६०। आव० ३१६। उत्त० १६३। चतुर्थनिह्नवनाम। ठाणा० ४१०। यस्मात्सामुच्छेदा उत्पन्नाः। आव० ३११।

आसमुद्दीवे-अंतरद्वीपभेदः। ठाणा० २२६।

आसमुहा-अश्वमुखनामा त्रयोदशान्तरद्वीपः। प्रज्ञा० ५०। जीवा० १४४।

आसय-आशयः, निदानम्। आव० ६१०।

आसयइ-आस्वादते-अभिलषति, आश्रयति वा। सम० ४५।

आसरयणे-अश्वरत्नम्। ठाणा० ३९८।

आसरह-अश्ववहनीयो रथः। भग० ३२२। अश्वरथः-नियुक्तोभयपार्श्वतुरङ्गमो रथ इत्यर्थः। जं० प्र० १९८।

आसल-आसलं, आस्वाद्यम्। जीवा० ३३१। जीवा० ३७०। आस्वादनीयः। जीवा० ३५१।

आसव-आसवः, मद्यम्। उत्त० ६१९। पत्रादिवासकद्रव्यभेदादनेकप्रकारः। जीवा० २६५। पुष्पप्रसवमद्यम्। उत्त० ६५४। आश्रवाः-उपादानहेतवो हिंसादयः। उत्त० ५९२। चन्द्रहासादिकम्। जीवा० १९८। चन्द्रहासादिपरमासवम्। जं० प्र० ४२। नि० चू० प्र० ३५ अ। आश्रव-सूक्ष्मरन्ध्रम्। भग० ८३। आश्रवन्ति-प्रविशन्ति कर्म्माण्यात्मनीत्याश्रवः-कर्मबन्धहेतुरितिभावः, स चेन्द्रियकषायाव्रतक्रियायोगरूपः। ठाणा० १८। आश्रवं। प्रज्ञा० ५६।

आसवा-आस्रवाः-कर्मबन्धस्थानानि। आचा० १८१। पापोपादानस्थानानि। आचा० ४१३। बन्धकाः। आचा० १८२। पत्रादिविशेषेण व्यतिरिक्त आसवः। प्रज्ञा० ३६४। आश्रवः-आ-समन्तात् शृणोति-गुरुवचनमाकर्णयतीति। उत्त० ४९। कर्मबन्धहेतुर्मिथ्यात्वादिः। आव० ५९८। आश्रवः-इन्द्रियजयादिरूपः परमार्थेशलः कायवाङ्मनोव्यापारः। दश० २७९। जलप्रवेशस्थानम्। व्य० प० १९७ आ। पापोपादानहेतुरारम्भादिः। जीवा० १२८। शुभाशुभकर्मादानहेतुः। ठाणा० ४४६।

आसवओ-आश्रावकः, बन्धकः। विशे० १०९३।

आसवदारं-आश्रवद्वारम्, कर्मबन्धद्वारम्। आव० ८५१। आश्रवणं-जीवतडागे कर्म्मजलस्य संगलनमाश्रवः-कर्म्मनिबन्धनमित्यर्थः, तस्य द्वाराणीव द्वाराणि-उपाया आश्रवद्वाराणीति। ठाणा० ३१६।

आसवपीतो-पीतासवः। उत्त० २६३।

आसववुच्छेओ-आश्रवस्य व्यवच्छेदः-कर्मबन्धद्वारस्थगनेन संवरणेनेत्यर्थः। आव० ८५१।

आसवार-अश्ववारः, अश्वारूढपुरुषः। भग० ४६१।

आससणाय वसणं-आशातनाय-विनाशाय व्यसनम्, तृतीयाधर्मद्वारस्य षड्विंशतितमं नाम। प्रश्न० ४३।

आससप्पओगे-आशंसा-इच्छा तस्याः प्रयोगो-व्यापारण करणं आशंसैव वा प्रयोगो-व्यापारः आशंसाप्रयोगः। ठाणा० ५१५।

आससा-आशंसा। विशे० १००८। आव० ३३२। अप्राप्तप्रार्थनम्। ठाणा० १४५।

आससाए-आशंसया, यदत्यन्तप्रवर्धनं भावि तदा स्थलेषु फलावाप्तिरेवान्यथा तदा निम्नेष्वित्येवमभिलाषात्मिकया। उत्त० २६१।

आससेण-अश्वसेनः, पार्श्वजिनपिता। सम० १५३। पंचमचक्रिपिता। सम० १५१।

आसा-अश्वाः। आव० २६१। आशा-इच्छाविशेषः। प्रश्न० ९४। औप० ४७।

आसाइज्जा-आशातयेत्-हीलयेत्, बाधयेत्। आचा० ३५७।

आसाएज्जा-आस्वादयेत्-परिभुञ्जीत। आचा० ३५८।

आसायमाणे-आस्वादयन्, ईषत्स्वादयन्। भग० १६३। आसादयेत्-संस्पृशेत्। आचा० ३८०।

आसाढ-आषाढः, निह्नवनाम। विशे० ९३४। यस्मादव्यक्ता उत्पन्नाः। आव० ३११। तृतीयो निह्नवः। ठाणा० ४१०।

आसाढग-तृणभेदः। भग० ८०२।

आसाढबहुलं-आषाढबहुलं, आषाढकृष्णपक्षम्। आव०

आसाढभूई-आषाढभूति-देशभाषानेपथ्यादिविपर्ययकरणे दृष्टान्तः। सूत्र० ३२९। दर्शनपरीषहोदाहरणम्। (मर०)। व्य० द्र० १९६ अ।

आसुरत्तं-आसुरत्वम्, क्रोधभावम्। दश० २३१।
आसुरत्तभावणा-आसुरत्वभावना। उत्त० ७०७।
आसुरत्तो-क्रुद्धः। आव० ३८९।
आसुरिनामा-कपिलशिष्यः। आव० १७१।
आसुरिपत्तं। नि० चू० द्वि० ६० अ।
आसुरियं-असुरभावम्। प्रश्न० १२१। अविद्यमानसूर्याम्। उत्त० २७६। असुराणामियमासुरीया। उत्त० २७६।
आसुरी - असुरा-भवनपतिदेवविशेषास्तेषामियं आसुरी। बृ० प्र० २१२ आ।
आसुरुत्ते-आशुरुप्तः, आशु-शीघ्रं रुप्तः-कोपोदयादिमूढः स्फुरितकोपलिङ्गो वा। भग० १२२। आशु-शीघ्रं रुप्त.-क्रोधेन विमोहितो यः स.। आसुरोक्त-आसुरं वा-असुरसत्कं कोपेन दारुणत्वादुक्त-भणितं यस्य सः। विपा० ५३। आसुरत्त.-शीघ्र कोपविमूढबुद्धिः, स्फुरितकोपचिह्नो वा। भग० १६७। क्रुद्धः। आव० ६५, १५२, ७११। आशु-शीघ्रं रुष्टः-क्रोधेन विमोहितो यः स आशुरुष्टः, आसुरं वा-असुरसत्कं कोपेन दारुणत्वात् उक्तं-भणितं यस्य स आसुरोक्तः। निर० ८।
आसुरे काए - असुराणामयमासुरस्तम् - असुरसम्बन्धिनं, चीयत इति कायस्तं, निकायमित्यर्थः। उत्त० १८२। असुरसम्बन्धिनि काये असुरनिकाये इत्यर्थः। उत्त० २९६।
आसूणि-आशूनिः, श्लाघा। सूत्र० १८०। येन घृतपानादिना आहारविशेषेण रसायनक्रियया वा अशूनः सन्, आ-समन्ताच्छूनीभवति-बलवानुपजायते तत्। सूत्र० १८०।
आसूणियं-आशूनितम्, ईषत्स्थूलीकृतम्। प्रश्न० ४९।
आसूय-आसूयम्, औपयाचितकम्। पिण्ड० १२०।
आसेवणासिक्खा - आसेवनशिक्षा, प्रत्युपेक्षणादिक्रियोपदेशः। विशे० ९। उत्त० ५४५। शिक्षाद्वितीयभेदः। नंदी २१०। सामाचारीशिक्षणम्। बृ० प्र० ६४ अ। प्रत्युपेक्षणादिक्रियाइपोऽभ्यासः। आव० ८३३।
आसेवियं-स्तोकं आस्वादितं, अनास्वादितं वा। आचा० ३२५।
आसो-जात्या आशुगमनशील. अश्वः। जीवा० २८२। मनः। प्रश्ना० ८८। य एकस्मिन् द्विप्रादीनर्थान् वक्ति यथा अश्नातीत्यश्वः, आशु धावति न च श्राम्यति। बृ० प्र० २४ अ। चतुष्पदविशेषः। प्रज्ञा० ४५।
आसोकंता-मध्यमग्रामपंचमी मूर्च्छना। ठाणा० ३९३।
आसोट्ठे-अश्वत्थ। आचा० ३४८।
आसोठे-अश्वत्थः, बहुबीजवृक्षविशेषः। प्रज्ञा० ३२।
आसोत्थमंथु। आचा० ३४८।
आस्तिक्यम्-सम्यक्त्वस्य पञ्चमलक्षणम्। आव० ५९१।
आस्थानमण्डपः - उपस्थानगृहम्। भग० २००। नंदी ६१।
आस्फोटनम्-सकृदीषद्वा स्फोटनम्। दश० १५३।
आस्या-यत्रास्यते यथासुखेन स्वाध्यायपूर्वकम्। ओघ० ६९।
आस्रपः-मूलः। जं० प्र० ४९९।
आहंसु-आहुः, उक्तवन्तः। भग० ९८। आख्यातवान्। प्रश्न० २६।
आहच्च - आहत्य, कदाचित्। भग० ३०५, २३। उत्त० १८८, ४८। प्रज्ञा० ३३३। बृ० तृ० ११४ आ। कादाचित्कम्। आव० ५३०। सहसा। नि० चू० द्वि० १२० अ। कदाचित् साम्तरमित्यर्थ.। भग० ४१। उपेत्य स्वतः एव, अत्यर्थं कदाचिद्वा। आचा० ५५। ढौकित्वा। आचा० २७२। उपेत्य। आचा० ३६२। सहसा। आचा० ३२२, ३५५। कदाचित् अनन्यगत्या। व्य० प्र० ८ आ। आहत्य-आहननं प्रहारः। भग० ६७३।
आहच्च गंथा-आहत्यमन्था-स्वयीकृतद्रव्या। आचा० २७२।
आहट्टु-आहृत्य, उपेत्य। सूत्र० २००। गृहीत्वा। आचा० २८७, ३४५।
आहट्टो-आडम्बरः (उपाधिः)। आव० ३४१।
आहडं - आहृतम्, ग्रामादेः साध्वर्थमानीतम्। प्रश्न० १५४। साध्वर्थमशनादि। दश० २०३।
आहणइ-आहन्ति, समीकरोति। आव० ३८५।
आहत्तहिए-सूत्रकृताङ्गे त्रयोदशाध्ययनम्। सम० ४२।
आहम्मिए जोगे-वशीकरणादीनि। आव० ६६२।
आहयंति-कथयन्ति। नि० चू० प्र० २७७ अ।
आहय - आहतं, त्वक्षणया लिखितम्। जं० प्र० २०३। आख्यानकप्रतिबद्धं यथाख्यं तेन युक्तं तद्गीतम्। ठाणा० ४२१। आहतं, आख्यानकप्रतिबद्धम्। सूर्य० २६७। जीवा० १६२। आव० २९८। आख्यानकप्रतिबद्धं, आहतमिति वा। औप० ७४।
आहया-आख्यानकप्रतिबद्धानि। राज० ११।

आहरणं-आ-अभिविधिना ह्रियते-प्रतीती नीयते अप्रतीतो ऽर्थोऽनेनेति । ठाणा० २५४ । साध्यसाधनान्वयव्यतिरेक प्रदर्शन दृष्टान्तो वा । आव० ६२ ।

आहरणतद्देसे-आहरणतद्देश, आहरणार्थस्य देशस्तद्देश स चासावुपचारादाहरणं चेति प्राकृतत्वादाहरणशब्दस्य पूर्वनिपाते आहरणतद्देश इति यत्र दृष्टान्तार्थदेशेनैव दार्ष्टान्तिकार्थस्योपनयनम् क्रियते तत् । ठाणा० २५४ ।

आहरणतद्दोसे - आहरणतद्दोष, आहरणस्य सम्बन्धी साक्षात्प्रसङ्गसम्पन्नो वा दोषस्तद्दोष स चासौ धर्मे धर्मिणः उपचारादाहरणं चेति आहरणस्य दोषो यस्मिँस्तथा यत्साध्यविकलत्वादिदोषदुष्ट तद्दोषाहरणं । ठाणा० २५४ ।

आहरणा-घोरयति चोरणं करोति । ओघ० ५८ । ज्ञात विशेष । ठाणा० २५३ । उदाहरणम् । दश० ३५ ।

आहरे-आहारयेत्-व्यवस्थापयेत् । आचा० २९२ ।

आहव्वणी-आथर्वणी आथर्वणाभिधाना सद्योऽनर्थकारिणी विद्या । सूत्र० ३१९ ।

आहा-आधा । भग० १०२ । साधूना मनसाधानम् साधूनाधिकृत्य । प्रश्न० १२७ । आधानम्, साधुनिमित्त चेतस प्रणिधानम् । पिण्ड० ३५ । अधस्तात् । नि० चू० प्र० २९४ आ । आधीयतेऽस्यामिति । पिण्ड० ३६ ।

आहाकम्म-आधाकर्म, आधाय-निमित्तत्वेनाश्रित्य पूर्वोक्तम षट्प्रकारमपि कर्म बध्यते, शब्दस्पर्शरसरूपगन्धादिकं । कर्मनिमित्तभूता मनोज्ञेतरशब्दादय एवाधाकर्म । आचा० ९८ । आधानं आधाकरण तदुपलक्षितं कर्म । यथाकर्म वा तत्स्वरूपानुरूपचेष्टितं वा । उत्त० १८२ । साधुप्रणिधानेन यत्सचेतनमचेतन क्रियते अचेतन वा पच्यते चीयते वा गृहादिकं व्यूयते वा वस्त्रादिकं तदाधाकर्म । भग० १०२ । प्रथम उद्गमदोष । आधानं आधा तया आधया कर्म-पाकादि क्रिया, आधाय-साधु चेतसि प्रणिधाय यत् क्रियते भक्तादि तत् । पिण्ड० ३४ । चतुर्थशबलदोष । प्रश्न० १४४ । सम० ३९ ।

आहाकम्मिय-आधाकर्म, दोषविशेष । आचा० ३२९ ।

आहाकम्मेहिं - आधाकर्मभि, आधानं-आधाकर्मं आत्मनेतिगम्यते, तदुपलक्षितानि कर्माण्याधाकर्माणि, तै -स्वकृतकर्मभि । उत्त० २४७ ।

आहाण आधानम्, विधानम् । विशे० ८४० ।

आहार-आहार, भोजनम्, जीवनम् । प्रश्न० १०६ । मनसा तथाविध पुद्गलोपादानरूप । भग० ८६ । त्रयोदशशतके पञ्चमोद्देशक । भग० ५९६ । अष्टाविंशतितममाहारप्रतिपादकत्वादाहार । प्रज्ञा० ६ ।

आहारए - आहारकम्, चतुर्दशपूर्वविदा कार्योत्पत्तौ योगबलेनाह्रियत इति । प्रज्ञा० २६८ । तथाविधकार्योत्पत्तौ चतुर्दशपूर्वविदा योगबलेनाह्रियत इति । ठाणा० २९० । चतुर्दशपूर्वविदा तीर्थकरस्फातिदर्शनादिकतथाविधप्रयोजनोत्पत्तौ सत्यां विशिष्टलब्धिवशादाह्रियते-निर्वर्त्यते इति । जीवा० १४ । प्रज्ञा० ४०९ । तथाविधप्रयोजने चतुर्दशपूर्वविदा यदाह्रियते गृह्यते तत् । आह्रियन्ते-गृह्यन्ते केवलिन समीपे सूक्ष्मजीवादय पदार्था अनेनेति वा । अनु० १९६ । *आहारयति-आहारं गृह्णातीति । नदी ९० ।*

आहारएसणा-आहारैषणा । दश० १८ ।

आहारग-आहारकम्, तृतीय शरीरम् । प्रज्ञा० ४६९ ।

आहारगगोवगणाम-*आहारकाङ्गोपाङ्गनाम, उपाङ्गनाम ।* प्रज्ञा० ४७० ।

आहारगत्त - आहारकत्व, आहारकशरीरकरणलब्धि । ठाणा० ३१० ।

आहारगबंधण-आहारकबन्धनम्, बन्धननाम । प्रज्ञा० ४७० ।

आहारगमो-आहारगम, प्रज्ञापनाया अष्टाविंशतितमाहारपदोक्तसूत्रपद्धति । भग० १०९ ।

आहारगसंघायणाम-आहारकसंघातनाम, यदुदयवशादाहारकशरीररचनाऽनुकारिसंघातरूपा जायते तदाहारकसंघातनाम । प्रज्ञा० ४७० ।

आहारगसमुग्घात-आहारकसमुद्घात, आहारके प्रारभ्यमाणे समुद्घात । जीवा० १७ ।

आहारट्ठ-आहारार्थं, आहारप्रयोजनमाहारार्थित्वम् । भग० २० । आहारलक्षण प्रयोजन, आहाराभिलाषो वा । प्रज्ञा० ५०० ।

आहारट्ठि-आहारार्थी, आहारमर्थयते-प्रार्थयते इत्येवंशील, अर्थो वा-प्रयोजनमस्यास्तीत्यर्थी, आहारेण-भोजनेन अर्थी आहारार्थी, आहारस्य-भोजनस्य वाऽर्थी आहारार्थी । भग० २० ।

आहारपच्चक्खाण–आहारप्रत्याख्यानम्, अनेषणीयभक्तपाननिराकरणरूपम्। उत्त० ५८८।

आहारपदे–प्रज्ञापनाया अष्टाविंशतितमपदम्। प्रज्ञा० २५१। नंदी १०५।

आहारपयाइं–आहारपदानि, आहारग्रहणविषयकानि पदानि। जं० प्र० ४६१।

आहारपरिण्णा–आहारपरिज्ञा, सूत्रकृताङ्गे द्वितीयश्रुतस्कंधे तृतीयाऽध्ययनम्। आव० ६५८। ठाणा० ३८७। उत्त० ६१६।

आहारपर्याप्तिः–यया शक्त्या करणभूतया भुक्तमाहारं खलरसरूपतया करोति सा। बृ० प्र० १८४ आ। शरीरेन्द्रियवाङ्मनप्राणापानयोग्यदलिकद्रव्याहरणक्रियापरिसमाप्तिः। तत्त्वा० ८-१२।

आहारपोसहे – आहारपौषधः, आहारनिमित्तं पौषधः, आहारनिमित्तं धर्मपूरणं पर्वेति भावना। आव० ८३५।

आहारसण्णा–आहारसञ्ज्ञा, आहाराभिलाषः–क्षुद्वेदनीयोदयप्रभव आत्मपरिणामः। आव० ५८०।

आहारसन्ना–आहारसञ्ज्ञा, क्षुद्वेदनीयोदयाद् या कवलाद्याहारार्थं तथाविधपुद्गलोपादानक्रिया सा। प्रज्ञा० २२२। क्षुद्वेदनीयोदयात्कावलिकाद्याहारार्थं पुद्गलोपादानक्रियैव सञ्ज्ञायतेऽनया तद्वानित्याहारसञ्ज्ञा। भग० ३१४। आहाराभिलाषः–क्षुद्वेदनीयप्रभवः खलु आत्मपरिणामविशेषः। जीवा० १५।

आहारवं–आलोइज्जमाणं जो समेई सव्वं अवधारेति सो। नि० चू० तृ० १२८ आ। आलोचितापराधानां अवधारणावान्। भग० ९२०।

आहाराइणियाए – रत्नैः–ज्ञानादिभिर्व्यवहरतीति रात्निकः–बृहत्पर्यायो यो यो रात्निकः यथारात्निकं तद्भावस्तत्ता तया यथारात्निकतया–यथाज्येष्ठं। ठाणा० ३०१।

आहारुद्देस – आहारोद्देशः, प्रज्ञापनाष्टाविंशतितमपदस्योद्देशकः। भग० २०।

आहारेंति–विशेषाहारापेक्षया सामान्याहारस्याविग्रहशरीरबन्धनसमय एव कृतत्वात्। भग० ७६३।

आहारे–आहारः, चरमाचरमपदगतसूत्रम्। प्रज्ञा० २४६। आहारप्रतिपादकं प्रज्ञापनाया अष्टाविंशतितमं पदम्। प्रज्ञा० ६। आधारः। भग० ७३८। फलपत्रकिसलयमूलकन्दत्वगादिनिर्वर्त्यः। आचा० ६०।

आहारेत्ताइतो–आहृतवान्। आव० ३०८।

आहारे भोयणा–आहाराभोगता। प्रज्ञा० ५४३।

आहारो–आहारः, कूरादि एकं चेव खुधं णासेति पाणे तक्खीरदगमज्जादि एगंगिया तिसं णासेति, आहारकिंचं च करेंति खाइमे एगंगिया फलमंसादि आहारकिंचं च करेंति, साइमेऽवि मधुफाणिम तंबोलादिया एगंगिया खुहं णासेति। नि० चू० द्वि० ५० आ। मुक्खतो जं किंचिवि भुंजति सो सव्वो आहारो। नि० चू० द्वि० ५१ अ। आधार आधेयस्येव सर्वकार्येषु लोकानामुपकारित्वात्। भग० ७१९।

आहारोवचया–आहारोपचयाः, आहारेणोपचयो येषां ते। आचा० २७५।

आहार्यः–अभिनयचतुर्थभेदः। जं० प्र० ४१४। काष्ठफलपुस्तमृत्तिकाचर्मादिघटितप्रच्छन्नैर्यो विदवाच्यप्रदेशासेवनमित्यर्थः। आव० ८२५। आहार्यं अन्धकाररहितत्वं। सम० १४०।

आहालंदिया–कल्पविशेषः। नि० चू० प्र० ३३८ आ।

आहावंति–आगच्छन्ति। बृ० द्वि० २९३ अ।

आहावणा–आभावना, उद्देशः। पिण्ड० ११६।

आहाविज्ज–आधावेत्। आव० ६३३।

आहासिया–आभासिकनामद्वितीयान्तरद्वीपः। प्रज्ञा० ५०।

आहिंडइत्तु। ओघ० ९६।

आहिंडओ–आहिण्डकः, दूरदेशविहारकर्ता। आव० ५३९।

आहिंडगा–विहरता। नि० चू० प्र० ३१४ आ।

आहिंडा–सततं परिभ्रमणशीलाः। बृ० तृ० १८४ आ।

आहिंडिओ – आहिण्डकः, आहेटकः। आव० ४३३। अगीतार्थः, चक्रस्तूपादिदर्शनप्रवृत्तः। ओघ० ६०।

आहिंडितो–आहिण्डकः। उत्त० १०८।

आहिंयइ–परिदधाति। आव० ३६०।

आहिअग्गि–आहिताग्निः, अग्निं गृहीत्वा स्वगृहे स्थापनात्। आव० १६९। ब्राह्मणः। दश० १५२। कृतावसथादिर्ब्राह्मणः। दश० २४५। प्रतिपादितोऽनुष्ठितो वा। सूत्र० १७८।

आहिए–आहितः, जनितः। सूत्र० ६६। प्रथितः, प्रसिद्धिमान्। सूत्र० ६९।

आहिज्जइ-आधीयते, व्यवस्थाप्यते, आख्यायते वा। सूत्र० ३३७। सम्बध्यते। सूत्र० २०६। आख्यायते। सम० ११३।

आहितविशेषत्वम्-आहितविशेषत्वं-वचनान्तरापेक्षया ढौकितविशेषता। एकत्रिंशत्तमवाणीगुण। सम० ६३।

आहितुण्डिग-आहितुण्डिक, गारुडिक। दश० ३७।

आहितो-आख्यात, कथित। सूत्र० ११।

आहित्थ। जीवा० १९४।

आहियं-आहितम् ढौकितम्। सूत्र० ७१। आत्मनि व्यवस्थितं, आ-समन्तात् हित वा। सूत्र० ६८। गृहीतम्। आव० ३७०।

आहियग्गी-ब्राह्मणो। दश० चू० ११२।

आहियडमर-आहितडमरम्, शत्रुकृतविड्वरोऽधिकविड्वरो वा। औप० १२।

आहिया-आख्याता। ठाणा० ३९७।

आहियोग-आभियोगदेवतासूचका आदेशवर्तिन। भग० १९८।

आहिड्ड्यण-आहिंड्यम्, अहितत्व-शत्रुभावम्। प्रश्न० ३८।

आही-आधि, मनःपीडा। प्रश्न० ७५।

आहुइ-आहुति, अग्नौ घृतादिद्रव्यप्रक्षेपणा। दश० २४५।

आहुणिय-आधुनिक। सूर्य० २९४। अष्टाशीती महाग्रहे पञ्चमग्रहनाम। ठाणा० ७८। जं० प्र० ५३४।

आहुणिज्ज-आहवनीय-सम्प्रदानभूतम्। औप० ५।

आहुणिय-आधूय। आव० १२१।

आहुस्स-आहोतु, दातु। औप० ५।

आहृय-उद्धृत। आचा० ४२१।

आहुतो-उत्पन्न। आव० ३४३। लग्न, उत्पन्न। उत्त० १४८।

आहय-आहतम्-आह्वानमामन्त्रणं नित्य मद्गृहे पोषमात्रमन्नं ग्राह्य इत्येवंरूपम्, कर्मकराकारणं वा आन्वय स्थानान्तरादभ्यानयनाय यत्र स, स्पर्धा वा। भग० २९३। भग० २९४।

आहेडगो-मिगव्व। नि० चू० द्वि० १३६ आ।

आहेण-जमन्नगिहातो आणिज्जति तं अहवा ज वहुगिहातो, वरगिहं णिज्जति तं। नि० चू० द्वि० २२ अ। वधूविवाहोत्तर काले वधूप्रवेशे वरगृहे भोजनं क्रियते। आचा० ३३४।

आहेति-आधाय, कृत्वा। उत्त० २४७।

आहेवच्च-आधिपत्यम्, अधिपतिकर्म। भग० १०४। अधिपते कर्म, रक्षा। जं० प्र० ६३। जीवा० २१७, १६२।

आहेवणं-आक्षेपम्, पुरुषोभादिकरणम्। प्रश्न० ३८।

आहोपुरुषिका-आत्मशक्त्याविष्करणम्। सूत्र० ३४०।

आहोहिओ-आधोऽवधिक, परमावधेरधस्तात् योऽवधिस्तेन यो व्यवहरति स परिमितक्षेत्रविषयावधिक। भग० ६७।

आहोहिय-नियतक्षेत्रविषयावधय। सम० ९६।

आहोही-यत्प्रकारोऽवधिरस्येति यथावधि परमावधेरधोऽवर्यवधिर्यस्य सोऽधोऽवधि। नन्दी० ६१।

आह्निका-पिशाच जनुर्भेद। प्रज्ञा० ७०।

आह्रियते-निर्वर्त्यते। जीवा० १४।

इ

इखिणिका-कर्णमूले घण्टिकां चालयन्ति। आव० ११०।

इंखिणी-विद्याभिमंत्रिता घण्टिया कण्णमूले चालिज्जति, तत्थ देवता कहेति कहतस्स पसिणापसिणं सभवति स एव ईखणी भण्णति। नि० चू० द्वि० ८५ अ। निन्दा। सूत्र० ६१।

इंगना-इङ्गना, गण्डा। नन्दी १०।

इंगाल-अङ्गार, दग्धेन्धनो विगतधूमज्वाल। आचा० ४१। चारित्रेन्धनमङ्गारमिव य करोति भोजनविषयरागाग्नि सो अङ्गार। भग० २९१। अङ्गाराग्निमयमङ्गार। दश० १६४। ज्वालारहितोऽग्नि। दश० १०४, २३८। महाग्रहविशेष। भग० ५०५। निर्ज्वलितेन्धनम्। भग० २९३। विगतधूम। प्रज्ञा० २९। निर्धूमाग्नि। आचा० १०७। विगतधूमज्वाला आज्वल्यमान खदिराग्नि। जीवा० २८। अङ्गार। आव० ४२२, ३१३। गगो। नि० चू० मृ० ४ अ। ज्वालारहितो वह्नि, अग्निकायभेद। निर० १५२।

इंगालए-अङ्गारक, अष्टाशीतिमहाग्रहविशेष। सूर्य० २९४। महाग्रहविशेष। जं० प्र० ५३४। ठाणा० ७८।

इंगालकड्ढिणि ईषद्वक्राग्रा लोहमयघण्टा। भग० ६०३।

इंगालकम्म-अङ्गारकर्म, अङ्गारकरणविक्रयक्रिया। आव० ८२९।

इंगालदाहओ-अङ्गारदाहक। आव० १५१।

इंगालब्भूया-अङ्गारराशिना भूता। भग० १६६।

इंगालवडेंसए-अङ्गारावतंसकं, ज्योतिषविमानविशेष। भग० ५०५।

इंगालसोल्लियं-अङ्गारैरिव पक्वम्। भग० ५१९। औप० ९१। निर० २६।

इंगाला-अग्निधर्माणि ज्वाला। नि० चू० प्र० ५२ आ।

इंगिअ-इङ्गितम्, अन्यथा प्रवृत्तिलक्षणम्, निष्ठीवनादिलक्षणम्। दश० २५२। नयनादिचेष्टया। जं० प्र० २२३।

इंगिणि-इङ्गिनी, अनशनविशेष। आव० ६७०।

इंगिणिमरणे-इङ्गिनीमरणम्, प्रतिनियतदेश एव चेष्टते ऽस्यामनशनक्रियायाम्, सप्तदशमरणे षोडश। सम० ३३। इङ्गिते प्रदेशे मरण इङ्गितमरणम्। आचा० २६२। "इंगियदेसंमि सयं चउव्विहाहारचायनिप्फन्नं। उव्वत्तणाइजुत्त नऽन्नेण उ इंगिणीमरणं"। ठाणा० ९६। यावत्कथिकानशन द्वितीयभेद। ठाणा० ३६४।

इंगिणी-इङ्गिनीमरणम्, मरणस्य षोडशो भेद। उत्त० २३०। इङ्गिनी, इङ्ग्यते-प्रतिनियतप्रदेश एव चेष्टते अस्यामनशन क्रियायामिति। उत्त० २३५। सम० ३५। विशे० ९०।

इंगितं-सूक्ष्मबुद्धिगम्यचेष्टा। ठाणा० ४। सूक्ष्मचेष्टाविशेष। बृ० प्र० ४२ अ।

इंगिनीमरणं-उक्तन्यायेन प्रतिपद्य शुद्धस्थण्डिलस्थाता एकाकयेव कृतचतुर्विधाहारप्रत्याख्यानस्ततस्थण्डिलस्यान्तश्छा यात उष्णमुष्णाच्च छाया स्वयं सङ्क्रामति। उत्त० ६०२। नियतप्रदेशस्थायित्वेऽनशनादित्याग। आव० ५६३।

इंगियं-इङ्गितम्, ज्ञानविशेष। आव० ७२४। नयनादि चेष्टाविशेष। निर० ८। ज्ञाता० ४१। निपुणमतिगम्य प्रवृत्तिनिवृत्तिसूचकमीषद्भ्रूभ्रिर कम्पादि। उत्त० ४४। अगभङ्गादि। उत्त० ६२६।

इंगियपत्थिय-चेष्टितप्रार्थित। (मर०)।

इंगियमरणं-इङ्गितमरणम्, इङ्गिते प्रदेशे मरणम्। दश० ७७।

इंगियागारकुसलो-इङ्गिताकारकुशल। आव० ५६।

इंगियागारसंपन्ने-इङ्गिताकारसम्पन्न, इङ्गित-निपुणमति गम्य प्रवृत्तिनिवृत्तिसूचक, आकार-स्थूलधीसंवेद्य प्रस्थानादि भावाभिव्यञ्जको दिगवलोकनादि, द्वन्द्वे इंगिताकारौ, तौ अर्थाद्गुरुगतौ सम्यक् प्रवेदेन जानातीति। उत्त० ४४।

इंगिताकारसम्पन्न-इङ्गिताकाराभ्यां गुरुगतभावपरिज्ञानमेवोक्त तेन सम्पन्न-युक्त। उत्त० ४४।

इंग्यते-प्रतिनियतदेश एव चेष्यते। सम० ३५।

इंत-आयान्तम्। उत्त० ३२५, १३९।

इंती-एति-आगच्छन्ति। ओघ० ७८।

इंतो-आयान्, आगच्छन्। दश० ३७। आव० ८८१। बृ० सू० १०९ अ।

इंदं-एकोनविंशतिसागरोपमस्थितिकं विमानम्। सम० ३७।

इंद-इन्द्र, सप्तमदिनस्य सैद्धान्तिकं नाम। सूर्य० १४५। ऐन्द्री-पूर्वदिक्सैद्धान्तिकनाम। ठाणा० १२३।

इंदकाइया-त्रीन्द्रियविशेष। प्रज्ञा० ४२। त्रीन्द्रियजन्तु विशेष। जीवा० ३२।

इंदकील-इन्द्रकील, गोपुरे कीलविशेष। जीवा० ३५९, २०४। गोपुरकपाटयुगसन्धिनिवेशस्थानम्। जं० प्र० ४८। गोपुरावयवविशेष। औप० ३। गोपुरकपाटयुगसन्धिनिवेशस्थानम्। भग० १७५। पुरमध्यम्भाग। (-वी, १५०।

इंदकुंभ-कुम्भानामिन्द्र विजयदेवाभिषेककलशा"। जं० प्र० ५०।

इंदकुंभसमाणो-इन्द्रकुम्भसमान, महाकुम्भप्रमाणकुम्भ सदृश। जीवा० ३६०।

इंदकुमारिया-इन्द्रकुमारिका। आव० ४३४।

इंदकेऊ-इन्द्रकेतु, लोकमहनीयो ध्वजविशेष। उत्त० ३०२।

इंदकेतु-इन्द्रकेतु, रश्मिनियन्त्रिते यन्द्रयष्टि। प्रश्न० १३४।

इंदखीलो-इन्द्रकील। आव० ८१७।

इंदगाइ-त्रीन्द्रियजीवविशेष। उत्त० ६९५।

इंदग्गाह-इन्द्रग्रह, उन्मत्तताहेतु। भग० १९८।

इंदगोवए-इन्द्रगोपक, प्रावृट्प्रथमसमयभावी कीटविशेष। प्रज्ञा० ३६९।

इंदगोवया-इन्द्रगोपक, त्रीन्द्रियजन्तुविशेष। जीवा० ३२। त्रीन्द्रियविशेष। प्रज्ञा० ४२।

इंदगोवसमाइय-त्रीन्द्रियजीवभेद। उत्त० ६९५।

इंदगोवेइ-इन्द्रगोपक, प्रावृट्कालभावी कीटविशेष। जै० प्र० ३४। आचा० ३७६।

इंदग्गहो-इन्द्रग्रह। जीवा० २८।

इंदग्गी-इन्द्राग्नि, नक्षत्रदेव। ठाणा० ७९। जं० प्र० ४९५।

इंदजसा-इन्द्रयशा, ब्रह्मराजराज्ञी। उत्त० ३७७।

इंदियनिग्गहो – इन्द्रियनिग्रहः, इन्द्रियाणां – श्रोत्रादीनां निग्रहः–इष्टेतरेषु शब्दादिषु रागद्वेषाकरणं, पर्थतेऽनगारगुणाः। आव० ६६०। .

इंदियपच्चक्खे – इन्द्रियं–श्रोत्रादि तन्निमित्तं–सहकारिकारणं यस्योत्पित्सोस्तदैन्द्रियकं शब्दरूपरसगन्धस्पर्शविषयज्ञानमिन्द्रियप्रत्यक्षम्। अनु० २११।

इंदियपज्जत्ति–इन्द्रियपर्याप्तिः–यया धातुरूपतया परिणमितादाहारादिन्द्रियप्रायोग्यद्रव्याण्युपादायैकद्वित्र्यादीन्द्रियरूपतया परिणमय्य स्पर्शादिविषयपरिज्ञानसमर्थो भवति सा। बृ० प्र० १८४ आ।

इंदियपडिपुण्णो–सोविगलिंदियो। नि० चू० प्र० २६६ आ।

इंदियबलं–इन्द्रियबलम्, चक्षुरादीन्द्रियाणां बलं–स्वस्वविषयग्रहणपाटवम्। जीवा० २६८।

इंदियमुंडा–न जितेन्द्रियाः। नि० चू० द्वि० ३७ अ।

इंदियलद्धी–इन्द्रियलब्धिः, पञ्चेन्द्रियप्राप्तिः। उत्त० १४५। इन्द्रियाणाम्–स्पर्शादीनां मतिज्ञानावरणक्षयोपशमसम्भूतानामेकेन्द्रियादिजातिनामकर्मोदयनियमितक्रमाणां पर्याप्तकनामकर्मादिसामर्थ्यसिद्धानां द्रव्यभावरूपाणां लब्धिरात्मनोतीन्द्रियलब्धिः। भग० ३५०।

इंदियलाघवं – इंद्रियलाघवं, इंद्रियाणि तस्य वशे वर्त्तते। व्य० द्वि० १०२ आ।

इंदियाइं–इन्द्रियाणि–नयननासिकादीनि। उत्त० ४२५।

इंदियाईणं–इन्द्रियादीनाम्, पृथ्व्याद्येकेन्द्रियाणाम्। विशे० २६०।

इंदियाणि–इन्द्रियाणि–नयननासिकादीनि। सम० १६।

इंदीवर–इंदीवरविशेषः। प्रज्ञा० ३३।

इंदुत्तरवडिंसगं–एकोनविंशतिसागरोपमस्थितिकं विमानम्। सम० ३७।

इंदुवसु–इन्दुवसुः, ब्रह्मराजराज्ञी। उत्त० ३७७।

इंदे–इन्द्रः। ठाणा० २९२। मल्लिनाथप्रथमार्यिकाः। सम० १५२। .

इंदो–इन्द्रः, अधिपतिः। प्रज्ञा० १०५। इन्दनाद्–इन्द – आत्मा। प्रज्ञा० २८५। जीवा० १६। इन्दनात्–इन्द्रः, सर्वोपलब्धिभोगपरमैश्वर्यसम्बन्धाज्जीवः। आव० ३९८। जीव –सर्वविषयोपलब्धिभोगलक्षणपरमैश्वर्ययोगात्। ठाणा० ३३४। परमैश्वर्ययोगात्प्रभुर्महान्। ठाणा० १९८। भवनवास्याद्यधिपाः। तत्त्वा० ४–४।

इंदोकंतं–एकोनविंशतिसागरोपमस्थितिकं विमानम्। सम० ३७।

इंधणपलिआमं – जहा कोद्दवपलालेणं अंबगादि फलाणि वेढेत्ता पाविज्जंति आदिग्गहणेणं सालिपलालेण वितत्थ जे ण पक्का फला ते इंधणपलियामं भण्णति। नि० चू० द्वि० १५२ आ।

इंधणपलियामं–इंधनपर्यायामं–कोद्रवपलालादिना वेष्टयित्वा पाच्यानि फलानि। बृ० प्र० १४२ आ।

इंधणसाला–जत्थ तणाकरिसभारा अच्छंति। नि० चू० तृ० २१ आ। तृणकरीषकचवरस्थानम्। बृ० द्वि० १०५ अ।

इइकट्टु–इतिकृत्वा, निश्चित्य। जं० प्र० ३८६। इतिहेतौ–यस्मात् कारणात्। अनु० १६।

इइकम्मं–इतिकर्म्म, इति–सांसारिकं दुःखं कर्म–अष्टप्रकारकर्मकृतम्। आचा० १४५।

इइहास–इतिहासः–पुराणम्। औप० ९३। भग० ११२। निर० २३।

इक्क–देशीवचनम्। विशे० १३१४।

इक्कड–कठिनं तृणविशेषः। बृ० तृ० ५२ आ। ढंढणसदृशं तृणविशेषम्। प्रश्न० १२८। तृणविशेषः। भग० ८०१।

इक्कडदासो–इक्कडदासः। उत्त० २८६।

इक्कडा–लाडदेसे वणस्सतिभेओ। नि० चू० प्र० ११४ आ। वनस्पतिविशेषाः। सूत्र० ३०७।

इक्कमिक्क–एकैकम्–परस्परम्। उत्त० ३८२।

इक्काई–राष्ट्रकूटविशेष.। विपा० ३९।

इक्कारसालंकारं – एकादशालङ्काराः, स्वरप्राभृतकथितालंकाराः। जं० प्र० ३९।

इक्खाग–इक्ष्वाकुः, कुलविशेषः। आव० १५९।

इक्खागकुलो–इक्ष्वाकुकुलः, कुलविशेष। नि० चू० प्र० २९० अ। आव० १०३।

इक्खागभूमि–इक्ष्वाकुभूमिः, ऋषभजन्मभूमिः। आव० १६०।

इक्खागा–इक्ष्वाकवः, नाभेयवंशजाः। भग० ४८१। औप० ५८। कुलार्यभेदविशेषः। प्रज्ञा० ५६। प्रथमप्रजापतिवंशजाः। ठाणा० ३५८। ऋषभस्वामिवंशिकाः। आचा० ३२७।

इड्डुर-गन्त्रीदयनरम्। भग० ३११। गन्त्र्या सम्बन्धि। आव० १६६, १६७।

इड्डुरग-इड्डुरक-महत् पिण्डम्। राज० १४१।

इड्डुरिकादि-पर्युषितस्त्रीकृता अम्लरसा भवन्ति, आर नालस्थिनाप्रपलादिर्वा। ठाणा० ३२०।

इड्ढि-ऋद्धि-आमर्षौषध्यादि। दश० १०३। भवनपरिवारादिका। ज० प्र० ६२। उत्त० ३५०। आव० १७८। ठाणा० ११२।

इड्ढिपत्ता-ऋद्धिप्राप्ता आर्या। प्रज्ञा० ५५। ऋद्धिप्राप्ता-आर्यप्रथमभेद, अर्हदादय। सम० १३५।

इड्ढिम-इस्मरो। नि० चू० द्वि० १६६ आ।

इड्ढिमत-ऋद्धिमत-विस्मयनीयवर्णादिसम्पत्तिमत। उत्त० ४७३।

इड्ढिसिय-इन्तिगम्या। भग० ४८१।

इड्ढी-ऋद्धि। प्रज्ञा० ४२४। इस्सरिय। नि० चू० प्र० ११ आ। आत्मशक्तिरूपा। प्रज्ञा० ४१७। भवनपरिवारादिका। जीवा० २१७। विभवैश्वर्य। जीवा० २८०। विमानपरिवारादिका। सूर्य० २५८। ठाणा० ११६। औषधिविशेष। उत्त० ४८०। कनकादिसमुदाय। उत्त० २८४। आमर्षौषध्यादि। आचा० १७८। विमानवस्त्रभूषणादि। उपा० २६। दीनानाथदानादिका विभूति। उत्त० ४६५। श्राव कग्पकरणादिसम्पदामर्षौष व्यादिरूपा। उत्त० ६६८।

इड्ढीगारव - ऋद्धिगौरवम्, ऋद्धया-नरेन्द्राभिपूज्याचार्यादिस्थानमिलाषरूपया गौरव - ऋद्धिप्राप्त्याभिमानाप्राप्ति सम्प्रार्थनाद्वारेणा मनोऽशुभभावगौरवम्। आव० ५७९। ऋद्धया-नरेन्द्रादिपूजालक्षणया आचार्यत्वादिलक्षणया वा अभिमानादिद्वारेण गौरवम् ऋद्धिप्राप्त्यभिमानाप्राप्तप्रार्थनाद्वारेणात्मनोऽशुभभावो भावगौरवम्। ठाणा० १७३।

इण-अयम्, अनन्तरोक्तत्वेन प्रत्यक्ष। भग० ३८।

इणमो-इद, वक्ष्यमाणतया प्रत्यक्षासन्नम्। प्रश्न० २। नम। पन्न० ६-६३।

इणामेव एवमेव। प्रज्ञा० ६००।

इण्हि-इदानीम्। आव० २७३।

इत-स्थित। २६९।

इतर-मामा-यमाधुभ्यो विशिष्टतर। आचा० २४३। शय्यातर। व्य० द्वि० २७६ अ। अन्तप्रान्त कुल। आचा० २४३।

इता-ज्ञाता। आचा० २८६।

इति-इति-प्रकृति। ठाणा० ३४३। उपदर्शने। सूर्य० २८६। प्रज्ञा० २५५। परिसमाप्तौ एवमर्थे वा। उत्त० ६७। उपप्रदर्शनार्थ। विशे० १५३। एवप्रकारार्थ। ठाणा० ५०३। पूर्वप्रक्रान्तपरामर्शक। आचा० १४१। इतिसद्दो वा अर्थे। नि० चू० द्वि० १३७ आ। आमतणे परिसमत्तीए उवप्पदरिसणे वा। दश० चू० ६१। हेतौ। आचा। १००। उपप्रदर्शने। उत्त० ५७०। दश० ७६। आद्यर्थ। उत्त० ५६१। प्रत्येक पर्यायस्वरूपनिर्देशार्थ। उत्त० ८। आद्यर्थे। आव० २८। प्रख्यातगुणानुवादनार्थ। भग० ६७। एवप्रकारा। ठाणा० ३५४।

इतिकत्तव्व-इतिकर्तव्य। आव० २१३। इतिकर्तव्यता-आदर्शनिक्षेपे सपूर्णकर्तव्यतार्थ। आचा० ५।

इत्तर-इत्वरम्-अल्पकालीनम्। विशे० २४। स्वल्प। नि० चू० प्र० १८९ अ। परिमितकालम्। दश० २६। चतुर्थादि षण्मासान्तमिद तीर्थमाश्रित्य। ठाणा० ३६४। पादपोपगमनापेक्षया नियतदेशप्रचाराभ्युपगमादिङ्गितमरणम्। आचा० २८५।

इत्तरक-इत्वरकम्, स्वल्पकाल, नियतकालावधिक। उत्त० ६००।

इत्तरकालिकं-प्रथमपश्चिमतीर्थंकरतीर्थेष्वनारोपितव्रतस्य इत्वरकालिकम्। ठाणा० ३२३। अल्पकालिकम्। भग० ९०९।

इत्तरा-इत्वरा, ये कल्पसमाप्त्यनन्तर तमेव कल्प ग च्छ वा समुपयास्यन्ति ते इत्वरा। प्रज्ञा० ६८। स्वल्पकालभाविनी। अनु० १३। प्रस्तुतकल्पपरिसमाप्तौ ये भूय स्थविरकल्प प्रतिपद्यन्ते ते। बृ० प्र० २२७ आ।

इत्तरिए - अल्पकालीन। भग० ९२१। नि० चू० प्र० २३९ अ।

इत्तरिय इत्वरम्-स्वल्पकालभावीनि आव० ८३८। उत्तरगुणप्रत्याख्यानम्। आव० ८०४। अल्पकालिक दैवसिकादि प्रतिक्रमणमेव। आव० ५६३।

इत्तरिय दिसं-इत्वरं दिशम् आचार्यरक्षणाम्। व्य० द्वि० ९०० अ।

इत्तरिय – इत्वरं, भरतैरावतेषु प्रथमपश्चिमतीर्थकरतीर्थ-ष्वनारोपितमहाव्रतस्य शैक्षकस्य विशेषणम्। प्रज्ञा० ६१। अयनशीलम्–स्वल्पकालभावी। उत्त० ३३५। इत्वराः–प्रस्तुतकल्पपरिसमाप्तौ ये भूयः स्थविरकल्पं प्रतिपद्यन्ते ते। बृ० प्र० २२७ आ।

इत्तरियतवो – इत्वरतपः स्वल्पकालं अनशनरूपं तपः। उत्त० ६००।

इत्तरियपरिग्गहियागमणे–तत्रेत्वरकालपरिगृहीता काल-शब्दलोपादित्, इत्वरपरिगृहीतागमनम्, भाटीप्रदानेन कियन्तमपि काल दिवसमासादिक स्ववशीकृताया गमनं–मैथुनासेवनम्। आव० ८२५।

इत्तिरिउग्गहो – रक्खातिहेउठिताण धीरमणठ्ठा इत्तरिओ उग्गहो भवति। नि० चू० प्र० २३९ आ।

इत्तिरियं–इत्वरं, स्वल्पकालिकं दैवसिकरात्रिकादि। ठाणा० ३६०। नि० चू० प्र० ३५४ आ।

इत्थंथं – इत्थं तिष्ठतीति इत्थंस्थं। प्रज्ञा० १०९। नारका-दिव्यपदेशभाजि वर्णसंस्थानादि सत्। दशा० २५८।

इत्थत्तं–अनेन प्रकारेणेत्थं तद्भाव इत्थत्वं, मनुष्यादित्वम्। भग० ११९।

इत्थरथं–इत्यर्थम्, एतमर्थम्–अनेकशस्तिर्यग्नरनानिनारकता-निगमनलक्षणम्। भग० ११३।

इत्थिकहा–स्त्रीकथा–स्त्रीणां स्त्रीषु वा कथा, विकथायाश्चतुर्थ-भेदः। ठाणा० २०९। दश० ११४।

इत्थिपोसए–स्त्रीयं पोषयतीति स्त्रीपोषकः, अनुष्ठानविशेषः। सूत्र० ११९।

इत्थिरयणे– स्त्रीरत्नम्, चक्रवर्तेः पञ्चमं पञ्चेन्द्रियरत्नम्। ठाणा० ३९८।

इत्थिलिंगं – स्त्रीलिङ्गम्, स्त्रीत्वस्योपलक्षणमित्यर्थः। प्रज्ञा० २०।

इत्थिवऊ – स्त्रीवाक्, स्त्रीलिङ्गप्रतिपादिका भाषा। प्रज्ञा० २४९।

इत्थिवेए – स्त्रीवेदः, स्त्रियाः पुमांसं प्रत्यभिलाषः। प्रज्ञा० ४६८।

इत्थिवेदो – अंतो अणुसमय डाहो अणुवसंतो वि घट्टिज्ज-माण दिप्पंतो फुंफुअग्गिसमाणो इत्थिवेदो। नि० चू० द्वि० ३१ अ।

इत्थिवेय–स्त्रीवेदः, स्त्रियाः पुंस्यभिलाषः। जीवा० १८।

इत्थिसंसग्गी–अवत्ताइगज्झावादि। दश० चू० १२७।

इत्थिसंसत्तो–स्त्रीसंसक्त–स्त्रीसम्बन्धः। प्रश्न० ११८।

इत्थिसागारिए–स्त्रीजनः। नि० चू० तृ० १० अ।

इत्थिसागारियं। नि० चू० द्वि० ३४ अ।

इत्थी–स्त्री, पुरुषोत्तमवासुदेवलिङ्गानकारणम्। आव० १६३।

इत्थीउ–स्त्रियः, अष्टमः परीषहः। आव० ६५६।

इत्थीणपुंसियर – इत्थिवेशे वि से नपुंसकवेदमपि वेदेति। नि० चू० द्वि० २५ आ।

इत्थीनामगोत्तं–स्त्रीनामगोत्रम्। आव० १२०।

इत्थीपण्हाइ–स्त्री उपलक्षणमेतत्, पुरुषो वा प्रस्तौति प्रस्यंदते मिथुनकर्म समारभते इत्यर्थः। व्य० द्वि० १९५ आ।

इत्थीपरिण्णा–स्त्रीपरीज्ञाध्ययनम्, सूत्रकृताङ्गे प्रथमश्रुतस्कन्धे चतुर्थमध्ययनम्। सम० ३१।

इत्थीपसुविवज्जियं–स्त्रीपशुविवर्जितमित्येकग्रहणे तज्जातीय-ग्रहणात् स्त्रीपशुपण्डकविवर्जितं स्त्र्यायालोकनादिरहितम्। दश० २३७।

इत्थीरूयं – अणाभरणा इत्थीरूवं भण्णति। नि० चू० प्र० ७७ अ।

इत्थीविग्गह–स्त्रीविग्रहः, स्त्रीशरीरम्। दश० २३७।

इत्थीविपरियासो–स्त्रियां विपर्यास स्त्रीविपर्यासः–अब्रह्मा-सेवनम्। आव० ५७५।

इत्थीवेदे–स्त्रीवेदः, स्त्रियं यथावस्थितस्वभावतस्तत्संबन्धवि-पाकतश्च वेदयति–ज्ञापयतीति, वैशिकादिकं स्त्रीस्वभावाविर्भा-वकं शास्त्रमिति। सूत्र० ११२।

इदुर–मस्तकादिवहनकादि तदिदुरम्। अनु० १५१।

इद्धे–दित्तं। नि० चू० प्र० ३६ अ।

इन्द्रकूपः–उत्तम कूपविशेष.। आव० ८७७।

इन्द्रजालम्–उदकम्। दश० २५४।

इन्द्रनीलः – रत्नविशेषः। जीवा० २३। आव० १८१, २५६। प्रज्ञा० ९१।

इन्द्रियगोचरा–विषयाः। आव० ५८४।

इन्द्रियदुष्प्रणिहितकायिका–आयेन्द्रियैः–श्रोत्रादिभिर्दुष्प्र-णिहितस्य उष्टानिष्टविषयप्राप्तौ मनाक्संवेगनिर्वेदद्वारेणापवर्ग-मार्गं प्रति दुर्व्यवस्थितस्य क्रिया। आव० ६११।

इन्द्रियार्थावग्रहः-स्पर्शनादीन्द्रियाणां ये स्पर्शादयो अर्थाः तेषां अवग्रहः-सामान्यमात्रज्ञानं । नंदी १७४ ।

इन्धनं-गोमयो भण्यते। ओघ० १२९ ।

इब्भ-इभमर्हतीति इभ्यः । बृ० प्र० १९९ अ । यद्द्रव्यनिचयान्तरितो हस्त्यपि न दृश्यते । इभो-हस्ती तत्प्रमाणं द्रव्यमर्हतीति निरुक्तादिभ्यः । बृ० प्र० १२२ । हस्तिप्रमाणद्रविणराशिपतिः । औप० २७ । अर्थवान् । ठाणा० ४६३ । यद्द्रव्यनिचयान्तरितो महेभो न दृश्यते । औप० ५८ । इभमर्हन्तीतीभ्याः - यद्द्रव्यस्तूपान्तरित उच्छ्रितकदलिकादण्डो हस्ती न दृश्यते ते । ठाणा० ३५८ । महाधनाः । भग० ४६३ । धनवान् । प्रज्ञा० ३३० । इभो-हस्ती तत्प्रमाणं द्रव्यमर्हतीतीभ्यः । यत्सत्कपुञ्जीकृतहिरण्यरत्नादिद्रव्येणान्तरितो हस्त्यपि न दृश्यते सोऽधिकतरद्रव्यो वा इभ्य इत्यर्थः । जीवा० २८० । अनु० २३ । यावतो द्रव्यस्योत्करेणान्तरितो हस्ती न दृश्यते तावद् द्रव्यपतयः । प्रश्न० ९६ ।

इब्भजाति - मातिपक्षविशुद्धा इब्भजाइ । नि० चू० प्र० २९० अ । विशिष्टा जातयः । ठाणा० ३५८ ।

इमंपि-इदमपि, इतिपूर्वकोऽपिशब्दः । आचा० ६५ ।

इमेसु-इमेषु । आचा० ३२६ ।

इय-इतः, आर्षत्वात् अस्य । प्रज्ञा० ११२ । आगतः । (मर०)।

इयणिंह-इत इदानीम् । ठाणा० १४३ ।

इयपट्ठा-इतिप्रष्ठाः-प्रधानाः, यामिनः । उपा० ४६ ।

इयरं-इतरं, रजोहरणनिषद्या औपग्रहिकं कार्पासिकं और्णिकं वा चीरं, सार्थो वा । ओघ० २१ । इतरशब्देन रजोहरणनिषद्योच्यते । ओघ० २१ ।

इयरेयर-इतरेतरः, इतरेतरसंयोगः । दश० २१ ।

इरिआवहं-ईरणमीर्या, पथि ईर्या ईर्यापथं-गमनागमनम् । ओघ० ३७ ।

इरिआवहिए - ऐर्यापथिकः, केवलयोगप्रत्ययः कर्मबन्धः, क्रियास्थाने त्रयोदशं क्रियास्थानम् । सम० २५ ।

इरितासमिती-जीवगरकगणजुगमेत्ततरदिट्ठिस्स अप्पमादिणो गंतमागंतरणुणावणणिमित्त जा गमणकिरिया सा । नि० चू० प्र० १६ आ ।

इरिमंदिर-लक्ष्मीमन्दिरम् , लक्ष्म्यालयं, प्रभूतलक्ष्मीकम् । दश० ५८ ।

इरिया-ईरणमीर्या-गतिपरिणामः । उत्त० ५१४ । वर्तनी । उप० मा० गा० ३६० । ईर्या-आचारप्रकल्पस्य द्वादशो भेदः । आव० ६६० । ईर्या-गमनम् । भग० ३२३ । ईरणमीर्या-गमनमित्यर्थः । आचा० ३७४ । ईर्या-आचारप्रकल्पस्य द्वितियश्रुतस्कन्धस्य तृतीयमध्ययनम् । प्रश्न० १४६ । ईर्या-गमनं, ईर्याकार्यं कर्म । आव० २६५ । ईर्या-गमनम् । भग० १०६ ।

इरियाइ-ईर्यादि, संयमविषया विराधना । ओघ० ८० ।

इरियामि-ईरे-गच्छामि गोचरचर्यादिष्विति । उत्त० ४४५ ।

इरियावह - ईर्या-गमनं, तत्प्रधानः पन्था ईर्यापथः । आव० ५७६ ।

इरियावहकिरिया - ईर्यापथक्रिया, या उपशान्तमोहाद्यारभ्य सयोगिकेवलिनं यावदिति । सूत्र० ३०४ ।

इरियावहियं-ऐर्यापथिकी, ईर्या-गमनं तद्विषयः पन्था-मार्गस्तत्र भवा, केवलकाययोगप्रत्ययः कर्मबन्धः इत्यर्थः । भग० १०६ । ईरणमीर्या-गतिस्तस्याः पन्था यदाश्रिता सा भवति तस्मिन् भवमध्यात्मादित्वाट्ठञि ऐर्यापथिकं, पथिस्थस्येत्युच्चैर्यापथिकम् । उत्त० ५९५ ।

इरियावहिया - ईर्यापथक्रिया, क्रियायास्त्रयोदशो भेदः । आव० ६४८ । ईर्यापथिकी - विंशतिक्रियामध्ये विंशतितमा । आव० ६१२ । ऐर्यापथिकी-गमनप्रधानः पन्थाः ईर्यापथस्तत्र भवा । आव० ५७३ । ईर्यापथिकी-चंक्रमणक्रिया । बृ० तृ० २७ अ ।

इरियासमिइ - ईर्यासमितिः - निरवद्यप्रवृत्तिरूपा । प्रश्न० १४३ । ईर्यासमितिः-आवश्यकार्येण सम्मार्गे सर्वतो युगमात्रनिरीक्षणायुक्तस्य शनैर्न्यस्तपदा गतिः । तत्वा० ९-५ ।

इरियासमिय-ईरणं-गमनमीर्या तस्यां समितो-दत्तावधानः पुरतो युगमात्रभूभागन्यस्तदृष्टिगामीत्यर्थः । आचा० ४१८ ।

इला-हिमवते चतुर्थकूटं । ठाणा० ७१ । धरणेन्द्रस्य महिषीनाम । भग० ५०४ ।

इलाइपुत्त-सर्वधेयः । (मर०)।

इलादेवया - इलादेवता, इलावर्द्धननगरदेवता । आव० १५९ ।

इलादेवी-पश्चिमरुचकवास्तव्या दिक्कुमारी । आव० १२१ । पुण्डरीकायाः पञ्चममध्ययनम् । निर० ३७ । पश्चिमरुचकवास्तव्या दिक्कुमारीमहत्तरिका । जं० प्र० ३९१ ।

इहलोगासंसप्पओगे – इहलोकाससाप्रयोग, इहलोक – मनुष्यलोकस्तस्मिन्नाशसा–अभिलापप्रयोग । आव० ८३९ ।

इहलोगो–इहलोक, मनुष्यलोक । आव० ८४० ।

इहलोयभयं – इहलोकभय–मनुष्यादिमजातीयादन्यस्मान्मनुष्यादेरेव भयम् । आव० ६४५ ।

इहलोयसंवेयणी–इहलोकसंवेजनी, संवेजनीकथायास्तृतीयो भेद । दश० ११० ।

इहेहे–विप्साभिधान सम्भ्रमख्यापनार्थं, यदि वा इहेति लोके इहेहास्मिन् भूयो । उत्त० ४०९ ।

ई

ईइ–ईति, गड्डरिकादिरूपा । जीवा० १८८ । ज० प्र० २९ ।

ईति – दुरितविशेष । भग० ८ । धान्याद्युपद्रवकारिशलभमूषकादि । ज० प्र० ६६ ।

ईती–ईति –धान्याद्युपद्रवकारी प्रचुरमूषकादिप्राणिगण । सम० ६० ।

ईप्सितप्रतीप्सित–व्यवहारविशेष । विशे० ६२४ ।

ईरियट्ठा–ईर्याविशुद्धयर्थम् । ठाणा० ३६० ।

ईरिया–गमन । ठाणा० २४३ । ईरणमीर्या–गतिपरिणाम । उत्त० ५२४ ।

ईरियावहिया–ऐर्यापथिकीक्रिया, योगमात्रज कर्मबन्ध । आव० ६१२ । ईर्या–गमन तत्प्रधान पन्था–मार्ग ईर्यापथस्तत्र भवमैर्यापथिकं–केवलयोगप्रत्यय कर्म । भग० ३८५ । आव० ६४८, ६४९ ।

ईरियावहियाकिरिया – ईर्यापथिकक्रिया–यदुपशान्तमोहादेरेकविधकर्मबन्धनमिति । ठाणा० ३१६ ।

ईरियासमिइ– ईर्यासमिति, ईर्याया समिति, ईर्याविषये एकीभावेन चेष्टनम् । आव० ६१५ । रथशकटयानवाहनाक्रान्तेषु मार्गेषु सूर्यरश्मिप्रतापितेषु प्रासुकविविक्तेषु पथिषु युगमात्रदृष्टिना भूत्वा गमनागमन कर्तव्यम् । आव० ६१५ ।

ईर्याप्रत्यय–ईरणमीर्या–गमनं तेन जनितम् । सूत्र० १२ ।

ईर्याप्रथमाप्ता:–योगसंयमप्राप्ता । तत्त्वा० ९–४८ ।

ईर्याविशुद्धि–ईर्या–गमन तस्या विशुद्धियुगमात्रनिहितदृष्टित्वम् । ठाणा० ३६० ।

ईलिकागति:–गतिविशेष । प्रज्ञा० ३५१ । –वी० ३५३ ।

ईली–करवालविशेष । प्रश्न० ८८ ।

ईश्वरकारणिक:–क्रियावादिद्वितीयविकल्प । सम० ११० ।

ईश्वरकारणिन:–क्रियावादिद्वितीयविकल्प । ठाणा० २६८ ।

ईश्वरपुत्र:–इभ्यानां पुत्र ईश्वरपुत्र । नदी २५८ ।

ईश्वरवादिन: । आव० ८१६ ।

ईषत्कुटिला–कुण्डलीभूता । ज० प्र० ११३ ।

ईषा–मात्राविशेष । जं० प्र० ५५ । राज० १२ ।

ईसक्खो–ईशाख्य, ईशनमैश्वर्यमात्मन ख्याति अन्तर्भूतण्यर्थतया ख्यापयति–प्रथयति य स । जीवा० २१७ ।

ईसत्थ–इषुशास्त्रम्, धनुर्वेद । आव० १२९ । प्रश्न० ९७ । धणुवेदादि–धनुर्वेदादि । नि० चू० तृ० ७० आ ।

ईसत्थसत्थरहचरियाकुसलो – इष्वस्त्रशास्त्ररथचर्याकुशल । उत्त० २१४ ।

ईसर – ईश्वर, भोगिकादि अणिमाद्यष्टविधैश्वर्ययुक्तो वा । ज० प्र० १२२ । लवणे उत्तरपातालकलश । ठाणा० ४८०, २२६ । प्रभुरमात्यादि । अन्त० १६ । स्फातिमान् । जीवा० २६५ । युवराजादि भोगिको वा । प्रश्न० ९६ । भोगिकादि, अणिमाद्यष्टविधैश्वर्ययुक्तो वा । जीवा० २८० । बृ० तृ० २५५ आ । युवराज, अणिमाद्यैश्वर्ययुक्त । औप० ५८ । प्रज्ञा० ३१०, ३२७ । महेश्वर । प्रश्न० ३३ । प्रधान, प्रभु, स्वामी । आव० ५०३ । भूतवादिकव्यन्तरेन्द्र । प्रज्ञा० ९८ । 'ईस ईश्वर्ये' ऐश्वर्येण युक्त ईश्वर, सो य गामभोतियादि । नि० चू० प्र० २७० आ । गृहस्वामी । आचा० ४०३, ३७० । द्रव्यपति । उत्त० ३५३ । युवराजो माण्डलिकोऽमात्यो वा, अणिमाद्यष्टविधैश्वर्ययुक्त ईश्वर । ठाणा० ४६३ । युवराज सामान्यमण्डलिकोऽमात्यश्च । अनु० २३ । युवराज । भग० ३१८ । युवराजादय । भग० ४६२ । औप० १४ । युवराजा । राज० १२१ ।

ईसरस्स–पातालकलश । सम० ८७ ।

ईसरा–ईश्वरा, युवराजा, अणिमाद्यैश्वर्ययुक्ता । ज० प्र० १९० ।

ईसरिय ऐश्वर्य, मदस्य षष्ठ स्थानम् । आव० ६४६ ।

ईसरी–ईश्वरी, सोपारके श्राविकाविशेष । आव० ३०४ ।

ईसा – ईशा, पिशाचकुमारेन्द्रस्याभ्यन्तरिका पर्षत् । जीवा० १७१ । ईश्वरी लोकपालानामग्रमहिषीणां आद्या पर्षद् । ठाणा०

१२५। ईर्ष्या–प्रतिपक्षाभ्युदयोपलम्भजनितो मत्सरविशेष। आव० ६११।

ईसाण–ईशान –ईशानावतंसकाभिधविमानोपलक्षित द्वितीयकल्प। अनु० ९२।

ईसाणवडिंसए–ईशानावतंसक, ईशानकल्पमध्येऽवतंसक। जीवा० ३९१।

ईसाणवडेंसए–ईशानकल्पेन्द्रविमान। भग० २०३।

ईसाणा–ईशानदेवलोकनिवासिन ईशाना, द्वितीयो देवलोक। प्रज्ञा० ६९। पूर्वोत्तरदिक्कोणनाम। ठाणा० १३३।

ईसाणी–पूर्वोत्तरदिक्कोणनाम। भग० ४९३। ऐशानी ईशानस्येश, पूर्वोत्तरमध्यवर्तिदिक्। आव० २१५।

ईसाणे–द्वितीयकल्पेन्द्र। ठाणा० ८५। अहोरात्रस्यैकादश मुहूर्तनाम। सूर्य० १४६। एकादशमुहूर्तनाम। जं० प्र० ४९१। देवलोकविशेष। आव० ११५।

ईसिं–ईषत्, मनाक्। जीवा० १८१।

ईसिं ओट्ठुवलंबिणी–ईषदोष्ठावलम्बिनी, ईषत्–मनाक् तत परम्परमास्वादतया झटित्येवाग्रतो गच्छति ओष्ठेऽवलम्बते–त्यतीत्येवंशीला। प्रज्ञा० ३६४।

ईसिं ओणयकाओ–ईषदवनतकाय। आव० २१६।

ईसिं तंबच्छिकरणी–ईषत्ताम्राक्षिकरणी, ईषत्–मनाक् ताम्रे अक्षिणी क्रियेते अनयेति। प्रज्ञा० ३६४।

ईसिंपब्भारगओ – ईषत्प्राग्भारगत – ईषदवनतकाय। आव० २१६।

ईसिं वोच्छेदकडुई – ईषद्व्युच्छेदकटुका, ईषत्–मनाक् पानव्य-छेद सति तत ऊर्ध्वं कटुका एलादिद्रव्यसम्पर्कत उपलक्ष्यमाणतिक्तवीर्येति। प्रज्ञा० ३६४। जीवा ३५१।

ईसि–ईषत्, मनाक्। प्रज्ञा० ९१। आव० ८५७। ईषत्प्राग्भारानाम। प्रज्ञा० १०७। सिद्धशिलानाम। रत्नप्रभाद्यपेक्षया ह्रस्वत्वाद् ईषत्। ठाणा० ४४०। सम० २२।

ईसिगि–स्वरसल्ली–त्वक्। नि० चू० तृ० ६३ आ।

ईसिपंचह्रस्सक्खरुच्चारणद्धा–अयोगिकालमान। उत्त० ५७७। ईषदिति–स्वल्प प्रयत्नापेक्षया पञ्चानां ह्रस्वाक्षराणां अइउऋऌइत्येवंरूपाणामुच्चरणमुच्चारो भणनं तस्याद्धा–कालो यावता त उच्चार्यन्त। उत्त० ५९६।

ईसिपब्भारा–ईषत्प्राग्भारा, ईषद्भाराक्रान्तपुरुषवन्नता अन्ते दिशति। अनु० ९२। सिद्धशिलानाम, प्राग्भारस्य ह्रस्वत्वादीषत्प्राग्भारा। ठाणा० ४४०। सम० २२। सिद्धशिला। आव० ६००।

ईसी ओट्ठावलंबिणी–ईषदोष्ठावलम्बिनी, ईषद् ओष्ठमवलम्बते–तत परमतिशयश्लाघ्यास्वादगुणयोगेनाग्रतो गच्छति परत प्रयाति। जीवा० ३५१।

ईसी तंबच्छिकरणी–ईषत्ताम्राक्षिकरणी, किंचित्ताम्राक्षिकरणी। जीवा० ३५१।

ईसीपब्भारगए–ईषत्प्राग्भारगत। आव० ६४८।

ईसीपब्भारा–ईषत्प्राग्भारा, सिद्धभूमि। आव० ४४२। अष्टमभूमि, अन्त्याभूमि। आव० ६००। पञ्चचत्वारिंशद्योजनलक्षायामविष्कम्भप्रमाणा शुक्लस्फटिकसंकाशा सिद्धशिला। प्रज्ञा० २२८। ईषद् अल्पो रत्नप्रभाद्यपेक्षया प्राग्भार – उच्चत्वादिलक्षणो यस्या सा। ठाणा० २५१। सिद्धशिला। प्रज्ञा० १०७। ईषत्–अल्पो योजनाष्टकबाहल्यपञ्चचत्वारिंशल्लक्षविष्कम्भात् प्राग्भार पुद्गलनिचयो यस्या सा। ठाणा० १२५।

ईसेणिआ ईशिनिका। जं० प्र० १९१।

ईहइ–ईहते–पर्यालोचयति। आव० २६।

ईहते–पूर्वापराविरोधेन पर्यालोचयति। नदी २५०।

ईहा – अन्वयधर्मघटनप्रवृत्तथागायाभिमुख एव बोध। विशे० १७०। सदर्थपर्यालोचने। भग० ३४४। सदर्थाभिमुखा ज्ञानचेष्टा। भग० ६३३। 'ईहमणयाए' ईहनमीहा-सतामन्वयिना व्यतिरेकिणां चाऽर्थानां पर्यालोचना। विशे० २०६। वितर्क। सम० ११५। अवग्रहादुत्तरकालमवायात्पूर्वं सद्भूतार्थविशेषोपादानाभिमुखोऽसद्भूतार्थविशेषत्यागाभिमुख –प्रायोऽत्र मधुरत्वादय शङ्खादिशब्दधर्मा दृश्यन्ते न खरकर्कशनिष्ठुरतादय शार्ङ्गादिशब्दधर्मा इत्येवंरूपो मतिविशेष। नदी १६८। ईहनमीहा–सदर्थपर्यालोचनम्। नदी १८६। ईहनमीहा–सतामर्थानामन्वयिनां व्यतिरेकिणां च पर्यालोचना। आव० १८। सदर्थपर्यालोचनार्थविमर्शालोचनम्। आव० ९। ईहनमीहा–सद्भूतार्थपर्यालोचनरूपा चेष्टा। प्रज्ञा० ३१०। नदी १६८। किमिदमित्यवगृहीतस्यार्थस्य सद्भूतार्थपर्यालोचनाभिमुखा मति चेष्टा। जं० प्र० ९९। सदर्थपर्यालोचनात्मिका। दश० १२६। अवगृहीतार्थकदेशाच्छेषानुगमनं। निश्चयविशेषजिज्ञासा। तत्त्वा०

१ – १५। अवग्रहार्थगतासद्भूतसद्भूतविशेषालोचनम्। राज० १३०।

ईहामिग–ईहामृग –वृक। भग० ४७८। ज० प्र० ४३। जीवा० १९९। नाट्यविधिविशेष। जीवा० २४६। ज० प्र० ४१५। आटव्य पशु। आचा० ४२३।

ईहामिय–ईहामृगा–वृका। राज० २८।

उ

उंछं–उञ्छ–भक्त। ओघ० १५४। अन्यान्यवेश्मत स्वरुप स्वल्पमामीलनात्। उत्त० ६६७। जुगुप्सनीय, गर्ह्यम्। सूत्र० १०८। भैक्ष्यम्। सूत्र० ७४। अल्पाल्पम्। प्रश्न० १११। छादनाद्युत्तरगुणदोषरहित। आचा० ३६८। अज्ञात पिण्डोञ्छसूचकत्वादिति साधोरुपमानम्। दश० १८। एषणीय। आचा० ३७६। उञ्छ्यते–अल्पाल्पतया गृह्यत इति, भक्तपानादि। ठाणा० २१३।

उंछवित्ती–उञ्छवृत्ती–कणयाचनवृत्ति। आव० ७०५। व्य० द्वि० ३५५ अ।

उंछविही–कणयाचनवृत्ति। आव० ७०५।

उंजणं–अवम(स)त्तुअण। दश० चू० ६९।

उंजण–उञ्जनम्। उत्सेचनम्। दश० २२८, १५४।

उंजायणा–वासिष्ठगोत्रस्य नामविशेष। ठाणा० ३९०।

उंजेज्जा–उत्सिञ्चेत्। दश० १५४।

उंडक–उण्डक, पिण्डक। ओघ० ७९।

उंडगं–उन्दकम्, स्थण्डिलम्। दश० १५६।

उंडसं–उद्वेध। ठाणा० ५२५।

उंडया–मन्थय। नि० चू० प्र० २४५ आ।

उंडि–मुद्राम्। व्य० द्वि० १६७ आ।

उंडिका–मुद्रा। बृ० प्र० २२ अ।

उंडुभ–उन्दुकम्–स्थानम्। दश० १७०। बृ० प्र० २०२ अ।

उडेरगा। नि० चू० द्वि० १२५ आ।

उडेरय–घटका। आव० ६८०।

उंदर उन्दुर.। प्रश्न० ८।

उंदु–उन्दु–मुखम्। अनु० २९।

उंदुर–उन्दुर–मूषक। ओघ० १२६। आव० ६४१। उत्त० १०९। नि० चू० द्वि० २२ अ।

उदुकयं–मुखेन वृषभादिशब्दकरणम्। अनु० २९।

उंदोइयाय–भरोलिया, यवनृपतिर्दुहिता। बृ० प्र० १०१ अ।

उंबर–उदुम्बर, बहुबिजकवृक्षविशेष। प्रज्ञा० ३२। भग० ८०३। चतुर्थभवनवासिदेवस्य वृक्ष। ठाणा० ४८७। उम्बर। व्य० द्वि० ३६२ अ। गिहेलुको। नि० चू० द्वि० ८३ आ।

उंबरदत्त–उदुम्बरदत्त, दुःखविपाके सप्तममध्ययनम्। विपा० ७८। पाटलखण्डनगरे सागरदत्तसार्थवाहसुत। विपा० ७४। यक्षविशेष। विपा० ७४।

उंबरमंथुं–चूर्णविशेष। आचा० ३४८।

उंबरवच्च–उंबरस्स फला जत्थ गिरिउडे उच्चविज्जंति त उंबरवच्च भण्णति। नि० चू० प्र० १९२ आ।

उंबरिय–वृक्षविशेष। भग० ८०३।

उंबरो–उदुम्बरदत्त, सार्थवाहसुत, दुःखविपाकाना सप्तमाध्ययनम्। विपा० ३५।

उ–उपयोगकरणे। आव० ४४९।

उअत्तं–उत्तीर्णम्। नि० चू० प्र० ३४५ आ।

उअरदंते–उदरदान्त –येन वा ते१ वा दृप्तिशील। दश० २३३।

उआहणित्ता–उपाहृत्य, समीपमानीय। दश० ५९।

उइंति–उद्यन्ति उदयं यान्ति। उत्त० ४८६।

उइओदए उदितोदय, सिद्धो कायोत्सर्गफलमिति दृष्टान्ते राजा। आव० ८००।

उइज्जंति–उदीर्यन्ते, उद्रेकाऽवस्थां नीयन्ते। आव० ५६८।

उइण्णा–अवतीर्णा। उत्त० ३७०।

उइन्न–उदीर्ण –विपाकापन्न। आचा० १५१।

उईरय–उदीरकं–प्रवर्त्तकम्। प्रश्न० ८६।

उईरयइ–उदीरयति–अन्यान् वातान् जलमपि चोत्–प्राबल्येन प्रेरयति। जीवा० ३०७।

उउ–उत। नि० चू० प्र० ३४८ अ। ऋतु। भग० ५४३। ऋतु–रक्ततरुप, शास्त्रप्रसिद्धो वा। रसकालविलक्षण। ठाणा० ३१३।

उउबद्ध–ऋतुबद्ध उच्यते शीतकाल उष्णकालश्च। ओघ० ११८। ऋतुबद्ध। आव० १८९। शीतोष्णकालयो। ओघ० २०५। शीतोष्णकालो मिलितो चैव भण्यते। ओघ० ११३।

उउबद्धपीढफलग–य पर्यन्ताभ्यन्तरे पीठफलकादीनां बन्धनानि मुक्त्वा प्रत्युपेक्षणां न करोति य या निशा

यस्तृतसस्तारक सोऽबद्धपीठफलक तम्। व्य० प्र० १६४ अ। जो य पक्खस्स पीढफलिगादियाण बधे मोत्तु पडिलेहण ण करेति सो सत्तओ उउबद्धपीढफलगो अथवा णिच्चयणिय सथारगा णिच्चुत्थरियसथारगो य उउबद्धपीढफलगो भण्णति। नि० चू० द्वि० ९१ अ।

उउयद्धोग्गहो-ऋतुबद्धावग्रह । नि० चू० प्र० २३९ अ।

उउपरियट्ट-ऋतुपरिवर्त -ऋत्वन्तरम्। आचा० ३२७।

उउय-ऋतुज -कालोचित । प्रश्न० १६३।

उउसंधी-ऋतुसन्धि -ऋतो पर्यवसानम्। आचा० ३२७।

उऊ-ऋतु, मासद्वयमान । भग० २११। ऋतु। आचा० ३२७।

उऊसंवच्छरे-ऋतवो-लोकप्रसिद्धा वसन्तादय तद्व्यव हारहेतु सवत्सर ऋतुसवत्सर, तृतीयप्रमाणसवत्सर। ज० प्र० ४८७।

उएट्टे-शिल्पे चतुर्थभेद । अनु० १४९।

उकट्ठणं-गाढतरम्। नि० चू० प्र० ११५ अ।

उक्कंचण - कार्ये कचनमुत्कचन-हीनगुणस्य गुणोत्कर्षप्रति पादनम्। उत्कोचा। राज० ११५।

उक्कंचणदीर-ऊर्ध्वदण्डबल । भग० ५४८।

उक्कंचणया-उत्कचनता-मुग्धवचनप्रवृत्तस्य समीपवर्तिविद ग्धचित्तरक्षार्थं क्षणमव्यापारतयाऽवस्थानम्। औप० ८१। मुग्धवचनप्रवृत्तस्य समीपवर्तिविदग्धचित्तरक्षणार्थं क्षणमव्या पारतया अवस्थानम्। राज० २९।

उक्कंतो-उत्क्रान्त, आयुक्षयेण मृत। उत्त० ४१०। उत्कृत्त-स्वगात्रयनेन छिन्न। उत्त० ४१०।

उक्कथिओ-नैशादिपक्ष्याभिरवबद्ध । आचा० ३६१।

उक्क-उल्का। व्य० द्वि० २४१ अ। गगनाग्नि। दश० १५४।

उक्कइयकरण सिव्वण, तुण्णण। नि० चू० प्र० १२४ अ।

उक्कच्छिय-आर्यिकाणा त्रयोदशमेोपधौ एकादशी। ओघ० ३०५।

उक्कच्छिया-कच्छाए समीव उवकच्छ, न छादयतीति। नि० चू० प्र० १८० अ।

उक्कज्जिय-उद्घायत। नि० चू० तृ० ७९ अ।

उक्कट्ठ-उत्कृष्ट-उपेतम्। ज० प्र० २७५। कुष्टनम्। आव० ७८२। प्रचुर। आव० ७७४।

उक्कडुआ - उत्कटुकानि, यथास्थानमनिविष्टानि। ज० प्र० १७०।

उक्कडुआसणिए-उत्कुटुकासन-पीठादौ पुतालगनेनोपवेशन-रूपमभिप्रहतो यस्यास्ति स। ठाणा० २९८।

उक्कड्डग-अपकर्षक, यो गेहाद् ग्रहण निष्काशयति, चौराद् वा आकार्य परगृहाणि मोषयति, चौरपृष्ठदो वा। प्रश्न० ४७।

उक्कड्डियं-उत्कर्षितम्-उत्पाटितम्। पिण्ड० ११६।

उक्कढ्ढणं-उत्कर्षणं-स्वचोऽपनयनम्। प्रश्न० २४।

उक्कम-उत्क्रम, पश्चानुपूर्वीभवनम्। विशे० १६। उत्क्रम। विशे० १०४।

उक्कमणअणाभोगकिरिया-उत्क्रमणानाभोगक्रिया, उद्द नप्लवनधावनासमीक्ष्यगमनागमनादिक्रिया। आव० ६१४।

उक्करं - उत्कर-क्षेत्रगवादि प्रति अविद्यमानराजदेयद्रव्यम्। विपा० ६३।

उक्करियाभेदे-उत्करिकाभेद -द्रव्यस्य पञ्चमभेद। प्रज्ञा० २६७।

उक्करिसियखग्गो-आकृष्टखड्ग । आव० ५५४।

उक्कलंबिजिउं-उल्लम्बयितुम्। आव० २२०।

उक्कलंबेइ - अवलम्बयति। आव० ४२६। उद्बध्नाति। नि० चू० द्वि० ५२ आ।

उक्कलंबेति- उल्लम्बेति। नि० चू० प्र० ११८ अ।

उक्कल-उत्कल -ऊर्ध्वं यत्कला यस्य। प्रश्न० २७। उत्कल -प्रदेशविशेष, नैमित्तिकविशेष। आचा० ३५९। नैमित्तिक। आचा० ३५९। त्रीन्द्रियजीवभेद। उत्त० ६९७।

उक्कलति-उत्कलति उन्द्रवति। उत्त० १२४।

उक्कला-उत्कटा, उत्कला वा। ठाणा० ३४१।

उक्कलिया-उत्कलिका-लघुतर समुदाय। औप० ५७। भग० ४६३। त्रीन्द्रियजन्तुविशेष। जीवा० ३२। उन्माद। सूर्य० २९६। लघुतर समुदाय। भग० ११५।

उक्कलियाअंड-वृश्चिकोत्कलिकाण्डम्। दश० चू० १२१।

उक्कलियावाउ - उत्कलिकावात, बादरवायुकायभेद। आचा० ७८।

उक्कलियावाए-उत्कलिकाभि प्रचुरतराभि सम्मिश्रो यो वात उत्कलिकावात। प्रज्ञा० ३०। जीवा० २६।

उक्कलियावाया-उत्कलिकावातः, उत्कलिकाभिर्यो वाति सः। भग० १९६। ये स्थित्वा स्थित्वा पुनर्वान्ति। उत्त० ६९४।

उक्कस-उत्कर्षः-औद्धत्यम्। दश० १८९।

उक्कसणं-उद्वर्तेण प्रेरणं। नि० चू० तृ० ६३ आ।

उक्कसाई-उत्कषायी-प्रबलकषायी। उत्त० ४९०।

उक्कसाहिज्जा। आचा० ३७८।

उक्कसिस्सामि-लघु सदपरकलशमनत उत्कर्षयिष्यामि। आचा० २४४।

उक्कसे-उत्कर्षेत्-उत्कामयेत्। आचा० २९३।

उक्कस्स-उत्कर्षवन्तीत्युत्कर्षाः-उत्कर्षवन्तः, उत्कृष्टसङ्ख्याः, परमानन्ताः। ठाणा० ३५।

उक्का-उल्का-चुडुली। जीवा० २९। ये मूलाग्निमो विच्छिन्नविच्छ्याग्निकणाः प्रसर्पन्ति ते। जीवा० १२४। महद्देहला, प्रकाशकारिणी, रेखारहितो विस्फुलिङ्गः प्रभाकरो वा। आव० ७५१। दीपिका। नंदी ८४। चुडुली। आव० ५६६। निपतन् रेखायुक्तो ज्योतिष्पिण्डः। ओघ० २०९। स्वदेहवर्णा रेखां कुर्वन्ती या पतति सा रेखाविरहिता वा उद्द्योतं कुर्वन्ती पतति सा। आव० ७३५। गगनाग्निज्वाला। जं० प्र० ५२। चुडुली। प्रज्ञा० २९। पगासविरहितो य, महंतरेहा पहा। नि० चू० तृ० ७५ आ। सदेहवण्णं रेहं करेंती जा पडइ सा उक्का, रेहविरहिता वा उज्जोतं करेंती पडती सा वि उक्का। नि० चू० तृ० ७० आ। अग्निपिण्डाः। ठाणा० ४२०। आकाशजा। ठाणा० ४७६।

उक्कापडणं-उल्कापातनम्, उल्कापातः। आव० ७३५।

उक्कापाए-उल्कापातः-व्योम्नि संमूर्च्छितज्वलनपतनरूपः। जीवा० २८३।

उक्कापाय-उल्कापातः, सरेखः सोद्द्योतो वा तारकस्येव पातः। भग० १९६।

उक्कामयंति-उत्कामयन्ति-अपनयन्ति। दश० ८६।

उक्कामुहदीवे-अन्तरद्वीपनाम। ठाणा० २२६।

उक्कामुहा-उल्कामुखनामैव विंशतितमोऽन्तरद्वीपः। प्रज्ञा० ५०। अन्तर्द्वीपविशेषः। जीवा० १४४।

उक्कारियभेय-उत्कारिकाभेदः, एरण्डबीजानामिव यो भेदः। भग० २२४।

उक्कालिय-उत्कालिकं-कालवेलावर्जं पठ्यते तद्रूपं कालिकादित्युत्कालिकं-दशकालिकादि। ठाणा० ५२। कालवेलावर्जं पठ्यते तत्। नंदी २०४।

उक्कावाते-उल्का-आकाशजा तस्याः पातः उल्कापातः। ठाणा० ४७६। व्योमसम्मूर्च्छितज्वलनपतनरूपः प्रसिद्ध एव। अनु० १२१।

उक्कासे-उत्कर्षणं, उत्कासनं वा। भग० ५७२।

उक्किट्टणा-सूत्रार्थकथनम्। सू० तृ० २५ अ। उक्कीर्तना-संशब्दना। आव० ५६।

उक्किट्ठ-उत्कृष्ट-उत्कृष्टिनादः, आनन्दमहाध्वनिः। प्रश्न० ४९। प्रधानां कर्षणनिषेधाद्वा। भग० ५४४। उत्कृष्टिः-आनन्दध्वनिः। जं० प्र० २००। उत्कृष्टिः-आनन्दमहाध्वनिः। भग० ११५। उत्कृष्टः-उत्कर्षवती। भग० १६७। उत्कृष्टम्-कालिङ्गालाबुत्रपुषफलादीनां शस्त्रकृतानि अक्षत्राणि चिर्भिटिकादिप्रसमुदायो वा उत्कृष्टकाण्डितः। दश० १७०। सेढियकालिंगादीणि उक्कले छुब्भंति। दश० चू० १७९।

उक्किट्ठकलयलो-उत्कृष्टकलकलः। आव० १७३।

उक्किट्ठरस-उत्कृष्टरसः-प्रचुररसोपेतः। पिण्ड० १४९।

उक्किट्ठि-उत्कृष्टि-आनन्दमहाध्वनिः। औप० ५९। राज० १२२।

उक्किट्ठिसीहनादो-उत्कृष्टिसिंहनादः। आव० १४९।

उक्किट्ठी-उत्कृष्टिः। आव० ४१३। उत्कर्षवतः। सूर्य० २८९।

उक्किण्णं-उत्कीर्णं-भृशमुत्कीर्णं पालीरूपम्। सम० १३७।

उक्किण्णंतरा-उत्कीर्णान्तराः, उत्कीर्णमन्तरं यासां आतपरिस्थाना ताः। जीवा० १५९।

उक्किण्णा-उत्कीर्णं-गुणितः। प्रश्न० ५९। उत्कीर्णमिवोत्कीर्णं, अतीवव्यक्तम्। जं० प्र० ७६। आकीर्णं। प्रश्न० २५। प्रज्ञा० ५६१। औप० ५४।

उक्कित्तणं-उत्कीर्तनम्, नामान्येन सशब्दनम्। आव० ६०४। सशब्दनम्। निशी० ४४२।

उक्कित्तणा-उत्कीर्तना, नामान्येन-परया भक्त्या संशब्दना। आव० ४९२।

उक्कित्तिया-उत्कीर्तिता-कथिता। सूर्य० २९६।

उक्किन्नं-अतिरम्यतनम्। दशा० ८९।

उक्किरंतर–उत्कीर्णमन्तरं यासां यातयित्वानां ता उत्कीर्णान्तराः। प्रज्ञा० ८५।

उक्किन्न–उत्कीर्णं–शिलादिषु नामकादि। दश० ८६।

उक्किरणगाइं–फलनायकपदंकादिविकिरणानि। बृ० द्वि० १५५ अ।

उक्किरिज्जमाण–क्षुरिकादिभिः कोष्ठादिपुटानां कोष्ठादिद्रव्याणां वा उत्कीर्यमाणः। जीवा० १९२। उत्कीर्यमाण–क्षुरिकादिभि कोष्ठादिपुटानां कोष्ठादिद्रव्याणां वा उत्किर्यमानं। जं० प्र० ३६।

उक्किलंतो–उत्कलन्। आव० २०७।

उक्कीरमाण–उत्किरन्–वेधनकेन मध्यादिक्रिन्न्। अनु० २२३।

उक्कुंचणं–उत्कुचनं, ऊर्ध्वं शलाकारोपणार्थं कुचनम्। सूत्र० १९९।

उक्कुज्जिय–ऊर्ध्वकायमुख्यस्य। आचा० ३४४।

उक्कुट्ठ। आचा० ३४२।

उक्कुट्ठहत्थो – उत्कृष्ट–सचित्तवनस्पतिपत्तंकुरफलाणि वा उक्खले छुब्भति, तेहिं हत्थो लित्तो एव। नि० चू० प्र० ३८ अ।

उक्कुट्ठि–उत्कृष्टि –हर्षविशेषप्रेरित। आव० २११।

उक्कुट्ठिकलयलो–उत्कृष्टिकलकल। आव० १७१।

उक्कुट्ठिसीहणायं–उत्कृष्टिसिंहनादः, हर्षविशेषप्रेरितो ध्वनिविशेष। आव० २११।

उक्कुट्ठी–पुत्कारकरणं। नि० चू० तृ० ६१ आ।

उक्कुट्ठो–सचित्तवणस्सतिपत्तंकुरफलाणि वा उक्खले छुब्भति। नि० चू० प्र० ३८ अ।

उक्कुड–उत्कुटुकासन। आव० ६४८। ठाणा० २९९।

उक्कुडुअ–उत्कुटुकम्, यथास्थानमनिविष्टम्। भग० ३०८। ओघ० १०७। मुत्कासन। उत्त० ५५। आधारे पुतालगनरूपम्। भग० १२५। आचा० ४२३।

उक्कुडुयासण–उत्कुटुकासनम्, कायक्लेशभेदः। दश० २८।

उक्कुडुती – उत्कुटुका–आसनालग्नपुतः पादाभ्यामवस्थित उत्कुटुकस्तस्य या सा। ठाणा० ३०२।

उक्कुडुयभाणवरये–उत्कुटुक सन् भाजनवस्त्रादि–गोच्छकादीनि पत्युपेक्षयेत्, यतो वस्त्रप्रत्युपेक्षणा उत्कुटुकेनैव कर्त्तव्या। ओघ० ११७।

उक्कुडुयासणिय – कायक्लेशभेदः। भग० ९२१। कायक्लेशस्थितीयभेदः। ठाणा० ३९०।

उक्कुद्दइ–उत्कूर्दते–ऊर्ध्वं गच्छति। उत्त० ५५१।

उक्कुरुडिका–तृणभस्मगोमयाङ्गारादिनिकर। दश० १५०।

उक्कुरुडिया–उत्कुरुट। आव० १६४।

उक्कूइय–उत्कूजित–कृताव्यक्तमहाध्वनि। प्रश्न० २०।

उक्कूजियं – उत्कूजितं – अव्यक्तमहाध्वनिकरणम्। प्रश्न० १६०।

उक्कूलं–उत्कूलयति–सन्मार्गादन्यत्रनयति कूलात्तटात्–स्थानगतिप्रवाहतटाद्वर्धं यन्त्, उत्कूलम्। द्वितीयाधर्मद्वारस्य पञ्चदशं नाम। प्रश्न० २६।

उक्केरो–उत्कर–समूहः। ओघ० ११७, ११६, २११। तिलकादिवर्धनस्य उक्केर –उत्करता। विशे० १००६।

उक्कोचा–उत्कोचा–उत्कोचा, लंचा। औप० ११।

उक्कोड लंचा। नि० चू० द्वि० ४५ अ।

उक्कोडा–उत्कोटा–उत्कोचा–लंचा। विपा० ३६। उत्कोचा, लंचा। औप० २।

उक्कोडालंच–उत्कोचलंचयो –द्रव्यस्य बहुत्वेनलाभादिभिर्लोकै प्रतीनभेदयो। प्रश्न० ५६।

उक्कोडिय – उत्कोटा–लंचा तया चरन्ति उत्कोटिका। राज० २।

उक्कोस–उत्कृष्ट –अतिशयेन। ओघ० २२३। उत्कर्षणी उत्कर्षं, उत्कृष्ट। सूर्य० १३। जात्यादिभिर्मदस्थानैरत्मनुत्कृति पुरुषमुत्कर्षयन्तीति उत्कर्ष –मानः। सूत्र० ६१। उत्कोश –कुरर। प्रश्न० ८। उत्कृष्टम्–कमनीयम्। दश० २११।

उक्कोसए–उत्कर्ष एव उत्कर्षक उत्कृष्ट। सूर्य० ११। उत्कर्षिका उत्कृष्टा। सूर्य० १४।

उक्कोसए कुंभे–उत्कृष्ट कुम्भ –आढकषष्टिनिष्पन्न। अनु० १५१।

उक्कोसयसियं–सतसहस्समूल्लं। नि० चू० प्र० १३९ आ।

उक्कोसमयपत्तो–उत्कर्षेण मदं प्राप्तः उत्कर्षमदप्राप्त। जीवा० ३५३।

उक्कोसतिसामासा–जेट्ठे आसाढे य। नि० चू० प्र० १२३ आ।

उक्कोसतिसामासे-उत्कृष्टतृण्मासः-उत्कृष्टा तृड्मासयोः-ज्येष्ठाषाढयोर्यस्मिन् काले सः। ओघ० २१०।

उक्कोससंथरणं-उत्कृष्टं सस्तरणं-भिक्षार्थमवतीर्णास्ततः पर्याप्त हिंडिला यावत् तृतीयपौरुष्या आदौ स्वाध्यायप्रस्थापनवेला तावत् सन्निवर्तते एतद्, अथवा तृतीयपौरुष्या आदौ स्वाध्यायप्रस्थापनवेलावान सन्निवर्त्तते एतद्। व्य० द्वि० १६३ आ।

उक्कोसा - उत्कर्षं -प्रकर्षं तद्योगादुत्कर्षा उत्कर्षतीति वा उत्कर्षा-उत्कृष्टा। ठाणा० १३६।

उक्कोसेणं। अनु० १६१।

उक्खं-उक्ष-मन्यन्थो-विषयविषयीभावलक्षणः। नदी ७१। सम्बन्धन-अन्यजनकशास्त्रलक्षणम्। ठाणा० ५०।

उक्खंदं-उत्कन्दम्। आव० १७५। अवस्कन्दः। आव० ३००।

उक्खंधो-अवस्कन्दः, छलेन परबलमर्दनम्। प्रश्न० ३८।

उक्खंपिर-उत्कण्ठित। (सं०)।

उक्खड्डुमड्डा - देशीपदं, पुनःपुनःशब्दार्थे। व्य० प्र० ६५ आ।

उक्खणिहिति-उत्खनीः। आव० ७२६।

उक्खलं-स्थानविशेषः। नि० चू० द्वि० ८३ आ।

उक्खलि-उखा-स्थाली। पिण्ड० ८४।

उक्खिओ-सेवितः। मर०।

उक्खित्त-उत्क्षिप्तं, गेयविशेषः। जं० प्र० ४१७। उत्पाटितम्। विपा० ४७। भाजनयनम्। ओघ० ८८।

उक्खित्तचरए-उत्क्षिप्त-स्वप्रयोजनाय पाकभाजनादुद्धृतं तदर्थमभिग्रहविशेषाच्चरति-तद्गवेषणाय गच्छतीति उत्क्षिप्तचरकः। ठाणा० २९८।

उक्खित्तचरगा-पिण्डैषणाभेदविशेष.। नि० चू०तृ० १२ अ।

उक्खित्तचरगो-उत्क्षिप्तचरक.-उत्क्षिप्तं-पाकपिठरादुद्धृतमेव चरति-गवेषयति यः सः। प्रश्न० १०६।

उक्खित्तणा - ज्ञाताया प्रथममध्ययनम्। आव० ६५३। षष्ठाङ्गे प्रथमं ज्ञातम्। उत्त० ६१४।

उक्खित्तणाए-षष्ठाङ्गे प्रथमज्ञातः। सम० ३६। ज्ञाताया प्रथममध्ययनम्। आव० ६५३।

उक्खित्तणिक्खित्तचरगा - पिण्डैषणाभेदविशेष। नि० चू० तृ० १२ अ।

उक्खित्तपुव्वा - उत्क्षिप्तपूर्वा-तेषामादौ दर्शिता यथाऽस्या वसत यूयमिति। आचा० ३६९।

उक्खित्तय-उत्क्षिप्तं-प्रथमतः समारभ्यमाणम्। जीवा० २४७।

उक्खित्तविवेगो-उत्क्षिप्तविवेकः। आव० ८५४।

उक्खित्ता-उत्क्षिप्ता.-भिक्षाः। जं० प्र० २२१।

उक्खित्तायं-उक्षिप्तकं-प्रथमतः समारभ्यमाणम्। जीवा० १९४।

उक्खित्तो-उत्क्षिप्तः-कृतः स्थापितः। आव० ४१३।

उक्खिविया-उत्क्षिप्ता। आव० ३७०।

उक्खु-वनस्पतिविशेषः। भग० ८०७।

उक्खुलनियत्था - उत्खुलनिवसिता, विपर्यस्तवस्त्रा। बृ० द्वि० २५५ अ।

उक्खेव-उत्क्षेपः-हस्तोत्पाटनम्। व्य० प्र० २३२ आ।

उक्खेवओ-उत्क्षेपः-प्रारम्भवाक्यम्। निरय० २३।

उक्खेवग-उत्क्षेपक.-वंशदलादिमयो मुष्टिग्राह्यदण्डमध्यभागः। भग० ४६८। शिष्याणामुत्क्षेपकः। व्य० प्र० ११३ आ।

उक्खेवण-उत्क्षेपकः-वंशदलादिमयो मुष्टिग्राह्यो दण्डमध्यभागः। ज्ञाता० ४८।

उक्खेवो - उत्क्षेप.-प्रस्तावना। विपा० ५५। क्षेपणम्। ओघ० ११०।

उक्खो-परिधानवस्त्रैकदेशः। बृ० प्र० १०७ अ। परिधार्य, वत्थस्स अब्भिंतरचूलाए उवरिं कण्णो णाभिहिज्ज उक्खो भण्णति। नि० चू० द्वि० १५४ अ।

उखंदचोरभयणं। नि० चू० प्र० ११० अ।

उखल-उद्गाला। प्रश्न० ८।

उखलियं-पुड्याकारं। नि० चू० द्वि० १ आ।

उखली-उद्खली। आव० ८५५।

उखा-स्थाली। भग० ३२६।

उगुत्तो-निमग्नो। नि० चू० प्र० ७३ अ।

उगहणंतगो-योनिद्वारस्थार्थं वस्त्रम्। ओघ० २०९।

उग्गं-उग्रम्-अप्रधृष्यम्। सूर्य० ४। भग० १२। ज्ञाता० ९।

उग्ग-उग्रः-क्षत्रियपुत्रेण शस्त्रिया आगत। आचा० ८। आदिदेवावस्थापितारक्षकवंशजातः। भग० ११० आरक्षकः। आव० १२८। आदिदेवेन य आरक्षकत्वेन नियुक्तास्तद्वंशजाश्च। औप० २६। सुभाष्यकमाणवंश।

आव० ८०२। आरक्षिकाः। आचा० ३२७। आदिराजेनाऽऽरक्षकत्वेन ये व्यवस्थापितास्तद्वंश्य। ठाणा० ३५८। भगवतो नाभेयस्य राज्यकाले ये आरक्षका आसन्। ठाणा० ११४। आरक्षकादय। उत्त० ४१८। आदिदेवेनारक्षकत्वे नियुक्तास्तद्वंश्या। भग० ४८१।

उग्गकुलं-उग्रकुलम्। आव० १७९।

उग्गच्छ-उद्गत्य-क्रमेण तस्योद्गमनं कृत्वा। भग० ७०७।

उग्गतवा-उग्रतपा -अप्रधृष्यानशनादियान्। सूर्य० ४। अप्रमादि। ठाणा० २३३। उग्र-उत्कटं दारुणं वा कर्मेशत्रून् प्रति तप -अनशनादि। उत्त० ३६५।

उग्गतवित्ती – उग्गते आदिच्चे वित्ती जस्स सो, आदिच्च सुत्तीए जस्स वित्ती सो उग्गतवित्ती। नि० चू० प्र० ३०८ आ।

उग्गतेय-उग्रतेजा -तीव्रप्रभाव, तीव्रविष। प्रश्न० १०७।

उग्गपुत्तो-उग्रपुत्र, क्षत्रियविशेषजातीय। सूत्र० २३६।

उग्गम-उद्गम षोडशविध आधाकर्मादिदोष। प्रश्न० १५५। आधाकर्मादिदोषविशेष। आव० ५७६। उद्गमनमुद्गम – पिण्डादे प्रभव.। ठाणा० १५९।

उग्गमइ-आगच्छति। आव० ४२२।

उग्गमकोडी – उद्गमकोटि – उद्गमदोषरूपा। पिण्ड० १९७।

उग्गमिसं-उद्गमितम्। आव० ८०९।

उग्गमोवघाते – उद्गमोपघात –उद्गमस्याधाकर्मादिभि षोडशप्रकारैर्भक्तपानोपकरणालयानामशुद्धता। ठाणा० ३२०।

उग्गय- उद्गत -निष्काशित। औप० ५८। ऊर्ध्वं गता उद्गता –व्यवस्थिता। ज्ञाता० १४। ध्यूना। ज्ञाता० ९३। उद्गता-संस्थिता। ज० प्र० ७१। निर्गत। भग० ४७८। उपरिवर्तिनी। ज० प्र० २९२।

उग्गयमुत्ती – सर्वाद्गमात् परं प्रतिश्रयावग्रहाद् बहि प्रचारवच्छरीरत्वात्। बृ० तृ० १७९ अ। मूर्ति –शरीरं त जस्स प्रतिश्रयावग्रहात् उदिते आइच्च निमित्त प्रचारं करोति सो। नि० चू० प्र० ३०८ आ।

उग्गयवित्ती – उग्गय इति वा उदओत्ति, वत्तने वृत्ति, उग्गयए सूरिए जस्स वित्ती सो। नि० चू० प्र० ३०९ आ।

उग्गवई-उग्रवती, रात्रितिथिनाम। ज० प्र० ४९१।

उग्गवती-उग्रवती, रात्रितिथिनाम। सूर्य० १४८।

उग्गविसं-दुर्धरविषम्। भग० ६७२।

उग्गविसा – उग्रं विषं येषां ते उग्रविषा। प्रज्ञा० ४६। दर परिसर्पविशेष। जीवा० ३९।

उग्गसेण-उग्रसेन, द्वारिकाया राजा। आव० ९४। नृपविशेष। बृ० प्र० ३० अ। मथुरानृपति, कंसपिता। उत्त० ४९०। राजमुख्य। अन्त० २।

उग्गहं-योनिद्वारं तद्वस्त्रमपि। बृ० द्वि० २७१ आ।

उग्गह-अवग्रह। ओघ० १७०। धर्मलाभदानम्। दश० १६७। अव-ईषत् सामान्य गृह्णातीति। विशे० १९०। आश्रय। विपा० ३३। ओगिहतव्वस्स सामइगी सेज्जा उग्गह इति। नि० चू० प्र० १७९ आ। ग्रहम्-अवष्टम्भम्। ओघ० १५४। पतद्ग्रहम्। ओघ० १७१। प्रथमपरिच्छेदन अशेषविशेषनिरपेक्षानिर्देश्यस्य दर्शनग्रहणम्। ठाणा० ५१। अवगृह्यते-स्वामिना स्वीक्रियते य सोऽवग्रह। भग० ७००। सामान्यार्थस्य-अशेषविशेषनिरपेक्षस्यानिर्देश्यस्य रूपादि अव इति प्रथमतो ग्रहण-परिच्छेदनमवग्रह। भग० ३४४। अवग्रह –अर्थानां परिच्छेद। प्रज्ञा० ३११। अवधारणम्। मुद्गरान्त इव यथारणम्। उत्त० १४५। अवग्रह –परिग्रह। सूत्र० १७९। अनिर्वर्णितानेकस्य सामान्यरूपस्यानिर्देश्यस्य रूपादेरवग्रहणमवग्रह। राज० १३०। पडिग्गहो। नि० चू० द्वि० ११६ अ। अवग्रह –आभवनव्यवहार। व्य० द्वि० ९३ अ। अवग्रहणमवग्रह –अनिर्देश्यसामान्यमात्ररूपार्थ ग्रहणम्। नंदी १६८। आवास। निरय० २। अवग्रहण-मव्यक्तमानस्य शब्दादिरूपस्यार्थस्याव्यक्तस्य परिच्छेद। नंदी १६८।

उग्गहजायणे – अवग्रहयाच्या-वसतिस्वाम्यनुज्ञा। आव० ६५८।

उग्गहणंतय-योनिद्वारस्याच्छादकं वस्त्रम्। बृ० द्वि० २५१ आ।

उग्गहणमेधावी-अवग्रहमेधावी, सूत्रार्थग्रहणसमर्थ। बृ० प्र० १०५ आ।

उग्गहपडिमा – अवग्रहस्य इत्वग्रहो-वसतिस्तत्प्रतिमा – अभिग्रहा अवग्रहप्रतिमा। ठाणा० ३८७। आचाराङ्गस्य षोडशमध्ययनम्। उत्त० ६१७। आचा० ४०२। सम० ४४। आचाराङ्गस्य द्वितीयश्रुतस्कन्धस्य सप्तममध्ययनम्। प्रश्न० १४९। आचाराङ्गस्य षोडशो भेद। आव० ६८०।

उग्गहिआ-अवगृहीता-पञ्चमी पिण्डैषणा। आव० ०७२।

उग्गहिए-अवगृहीत-परिवेषणार्थमुत्पाटित । ठाणा० ४६५।
उग्गहियं – अवगृहीतम् । आव० २८८ । बद्ध । भग० ४५९। अवगृह्णाति-आदत्ते हस्तेन दायस्तद् । ठाणा० १४८। अवगृहीता-भोजनकाले शरावादिपूपहतमेव भोजनजात यश्चतो गृह्णत । ठाणा० ३८६। यद् अवगृह्णाति यच्च संहरति यच्च आस्यके प्रक्षिपति। व्य० द्वि० २५४ आ। परिवेषणार्थमुत्पाटितम् । औप० ३७। अवग्रहोऽस्यास्तीति अवग्रहिकं-वसतिपीठफलकादिक। औपग्रहिकं-दण्डकादिकमुपधिजातम् । औप० ३७।
उग्गहियए-अवगृहीतक –बद्ध । राज० ५४।
उग्गहिया-ज परिवेसगेण परिवेसणाए परस्स कडुच्छुतादिणा उग्गहियं आणियति बुत्त भवति, तेण य त पडिसिद्ध त तहुक्खित्तं चेव साधुस्स देति एसा उवग्गहिया। नि० चू० तृ० १२ अ।
उग्गा-आरक्षिका । बृ० द्वि० १७१ आ। कुलार्यप्रथमभेद । प्रज्ञा० ५६। स्वादविशेष । ज० प्र० ११८। आदिदेवावस्थापिता । राज० १२१। प्रभुणा आरक्षकत्वेन नियुक्तास्ते उग्रा । ज० प्र० १४२।
उग्गाढो-प्रगुण । बृ० प्र० २९७ अ।
उग्गारो-उद्गिरण उग्गालो । नि० चू० प्र० ३१९ अ।
उग्गालिदासो-दासविशेष । नि० चू० द्वि० ४० अ।
उग्गाले-उद्गालयेत्-श्लेष्मनिष्ठीवन कुर्यात । ओघ० १८६।
उग्गालो-उद्गिरण उग्गालो। नि० चू० प्र० ३१० अ।
उग्गाहिऊणं-उद्ग्राह्य । आव० ३९९।
उग्गाहियण-उद्ग्राहितेन-पात्रबन्धबद्धेन पात्रकेण । ओघ० १२२।
उग्गाहियं-उद्ग्राहितम्-गृहीतम् । आव० ६१८। उत्क्षिप्त, उपकरणम् । ओघ० ७२।
उग्गाहिमं-अवगाहिम पक्वान्नं खण्डखाद्यादि । प्रश्न० १६३।
उग्गाहिय-उद्ग्राहितं-गृहीतं पात्रकम् । ओघ० १४९।
उग्गाहे-उद्ग्राहयति-मद्गृहीतेनास्ते । ओघ० १८४।
उग्गाहेउ-उद्ग्राह्य-सपात्रयित्वा । ओघ० ७४।
उग्गाहेऊण-उद्ग्राह्य । उत्त० १००।
उग्गिरिऊण-उद्गीर्य । आव० ७०८।
उग्गुंडया-उद्गुण्ठितम् । भग० ३०८।
उग्गोवणा-उद्गोपनम्-विवक्षितस्य पदार्थस्य जनप्रकाशचिकीर्षा । पिण्ड० २९।
उग्गोवेति-उप्पाएति । नि० चू० प्र० २३४ अ।
उग्घडयं-अनुवर्तनम्, अनुकरणम् । आव० ५११।
उग्घाइयं-उद्घाइए-उद्घातित, विनाशितं विनाशयिष्यमाणत्वेनोपचारात् । ठाणा० ५०२।
उग्घाइम-उद्घातिमम्-उद्घातो-भागपातस्तेन निर्वृत्तम्, लघु । ठाणा० १६३।
उग्घाड-उद्घा०-अदत्तार्गलमीषत्स्थगित वा । आव० ५७१।
उग्घाडकवाडउग्घाडणा-उद्घाटकपाटोद्घाटना, उद्घाटम्-अदत्तार्गलमीषत्स्थगित वा कपाट तस्योद्घाटन-पुनः प्रेरणम् तदेव । श्वानवत्सदारकरक्षणा । आव० ५७५।
उग्घाडणकवाड-उद्घाटकपाट-अनर्गलितकपाट । आव० १६६।
उग्घाडाए पोरिसिए-उद्घाटपौरुष्याम् । आव० ८३८।
उग्घाडितो-उद्घाटित । आव० ३१७, ३१८।
उग्घाडिया-उद्घाटिता । आव० २१२।
उग्घात – उद्घात भागपात । ठाणा० १६१, ३१५। लघुकरणलक्षण । ठाणा० ३११।
उग्घातिते-उद्घात –भागपातो यत्रास्ति तदुद्घातिकं, लघु सर्वं । ठाणा० ३२५।
उग्घाय – आचाराङ्गस्य षड्विंशतितममध्ययनम् । उत्त० ६१७। आचारप्रकल्पस्य षड्विंशतितमो भेद । आव० ६६०।
उग्घायाइं-लघूनि । बृ० प्र० १४५ अ।
उग्घोसणाट्ठाणीया-उद्घोषणास्थानीया । आव० ३८५।
उग्गतेजा-आधाकर्मेव एव अभोज्यतया पदाति । पिण्ड० ७१।
उग्गसेन –मथुराराजा, राजीमत्याः पिता । दश० ९७।
उग्गसेनतनय-नभ सेनकुमार । विशे० ९१०।
उघरिमा । नि० चू० प्र० १०९ आ।
उघोसेहि । नि० चू० प्र० ३४४ आ।
उचित –जित अभ्यस्ता वा। आव० ५९४।
उचूलयालग-अध शिरस उपरि पादस्य [illegible] बोलकारणम् । विपा० ७०।
उच्च-उच्च -पूज्य । भग० १६४।

उघंतप–उघन्तक:–दन्तरागः । प्रज्ञा० ३६० । उग्घंतगो–दन्तराग । जं० प्र० ३२ ।

उघंते–उग्घंतगो–दन्तराग. । राज० ३२ ।

उघंपिय–सपातितं । (तं०) ।

उच्चछंदो–उच्चछन्द:-उच्चो-महानात्मोत्कर्षप्रवणछन्दः-अभिप्रायो यस्य सः । प्रश्न० ३१ ।

उच्चता–उच्चतया-निर्देशत्वेन । अप्रातिहारिकतया । बृ० द्वि० २१६ आ ।

उच्चतायभयगो–तुमे ममं एत्तियं कालं कम्मं कायव्वं जं जं अहं भणामि, एत्तियं तेग धणं दाहामिति । नि० चू० द्वि० ४४ ।

उच्चत्तं–उच्चत्वं । जै० प्र०-२० । अनु० १७१ । उच्चत्वं-उत्सेध । जं० प्र० ३२१ । उच्छ्रयः । ठाणा० ६६ । ऊर्ध्वं-स्थितस्यैकस्यदं निर्यक्स्थितस्यान्यत् गुणोत्पन्निरूपम् । ठाणा० ३६ ।

उच्चत्तछाया–उच्चत्वछाया, छायाया षष्ठो भेद । सूर्य० ६५ ।

उच्चत्तभयते – उच्चताभृतक:-मूल्यकालनियमं कृत्वा यो नियत यथावसरं कर्म्म कार्यते स । ठाणा० २०३ ।

उच्चत्तविसाणो – उच्चविषाण: उच्चशृङ्गः । उत्त० ३०३ । उत्तमविषाग । आव० ७१६ ।

उच्चत्ता–सुषिरता । पिण्ड० १०० ।

उच्चयबंधे–उच्चयः-ऊर्ध्वं चयनं-राशीकरण तद्रूपो बन्ध उच्चयबन्ध । भग० ३९५ ।

उच्चरेति । नि० चू० प्र० २०७ आ ।

उच्चलिओ–उच्चलित. । आव० ३८५ । आव० ३१७ ।

उच्चा–ऊर्ध्वं चिता, उच्छ्रितत्वेन वा । उत्त० ११० ।

उच्चाओ–उच्चातो–श्रान्त । ओघ० १७७ । नि० चू० प्र० १८८ अ ।

उच्चागोए–उच्चैर्गोत्रं-यदुदयवशादुत्तमजातिकुलबलतपोऐश्वर्यश्रुतसत्काराभ्युत्थानासनप्रदानाञ्जलिप्रग्रहादिसम्भवस्तत् । प्रज्ञा० ४७४ । माननसत्कारादि । आचा० ११६ ।

उच्चागोत्ते –उच्चैर्गोत्र –उच्चै:-लक्ष्म्यादिक्षयेऽपि पूज्यतया गोत्रं-कुलमस्येति । उत्त० १८८ ।

उच्चारे – उच्चार:-विष्ठा । भग० ८७ । मला । बृ० प्र० ३०६ अ । मण्ण । नि० चू० प्र० १८३ आ । पुरीष । आव० ५६४, ६१६, ७८१ । उत्त० ५१७ । सम० ११ । जं० प्र० १८८ । ठाणा० ३४३ । शरीरादुत्-प्राबल्येन च्यवते-अपयाति चरतीति वा उच्चारः-विष्ठा । आचा० ४०० । पुरीषपरिष्ठापनम् । उत्त० ३५७ । मूत्रस्य. मह पुरीषमु त्सर्गं कुर्वन्ति, श्लेष्मणः परिष्ठापनमपि कुर्वन्ति वा । ओघ० ५६ ।

उच्चारभूमी – उच्चारभूमि –पुरीषभूमि. । आव० ७८४ । उच्चारप्रश्रवणविधिसंवेष्टन., सप्तसप्तकर्ता तृतीयस्य भेद । ठाणा० ३८७ ।

उच्चालइय–ऊर्ध्वमुत्क्षिप्य भूमौ । आचा० ३११ । उच्चालयितारम्–अपनेतारम् । आचा० १६६ ।

उच्चालियंमि–उच्चालिते–उत्पाटिते । ओघ० १२० ।

उच्चावइत्ता–उच्चैः कृत्वा । उत्पाद्य । प्रज्ञा० ३५३ ।

उच्चावय–उच्चावच:–उत्तमाधमः । ओघ० ३७४ ।

उच्चावयं–उच्चावचम्–असमञ्जसं । ठाणा० २४७ ।

उच्चावयं–उच्चावचं–उच्चं नाम मैनं कुर्वन्तु, अवचं नाम कुर्वन्तु । आचा० ३६३ । शोभनाशोभनम् । ओघ० १६६ । उच्चावचम् । दश० १६६ । अनुकूलप्रतिकूलम्, असमञ्जस वा । भग० १०१ ।

उच्चावया–अनुकूलप्रतिकूला, असमञ्जसा । भग० १८ । उच्चावचा –गुरुलघवो नानारूपा वा । सूत्र० २०३ । ऊर्ध्वं चिता उच्चा, शीतातपनिवारकत्वादिगुणं श्रण्यानसं-परिविशिष्टत्वेन वा उच्चा, तद्विपरीतास्त्ववचाः, अनयोर्द्वन्द्वे उच्चावचा, नानाप्रकारा वा । उत्त० ११० । शोभनाशो-भनभेदेन नानाप्रकारा । दश० १८४ । असमञ्जसा । भग० ६८३ । ज्ञाता० २०० ।

उच्चावयाई–उच्चावचानि-विरूपाविरूपाणि नानाविधानि उच्चनतानि वा शोधनानीति वा महानतानि । उत्त० ३६३ ।

उच्चिअ–उच्चिनं, उच्चितावरणं, पादस्योत्पाटनम् । जं० प्र० ३६५ ।

उच्चिक्खित्तं–उच्चोत्क्षिप्तम् । पिण्ड० ११० ।

उच्चिट्ठ–कांमारादिभिरुत्क्षिप्तं । बृ० प्र० २१० आ ।

उच्चिट्ठप–उच्छिष्टम्–प्रथम् । दश० १०४ ।

उच्चिणिउं–उच्चेतुं–गृहीतुम् । आव० ८१० ।

उच्चियपउमं–उच्चितपद्म । आव० १३० ।

उच्चुणेउं–अवचूर्ण्य, चूर्णयित्वा । ओघ० १४३ ।

उच्चूलं–अवचूल–सकण्ठभागेर्मुखावलम्बेत । ओघ० ६३ ।

उच्चिंती-उच्चिन्वती-अवचयं कुर्वती। दश० ४११।
उच्चैःश्रवा-सुरवरेन्द्रवाहनं हयः। जं० प्र० २३५।
उच्चोदए-उच्चोदयः, ब्रह्मदत्तस्य प्रधानः प्रथमः प्रासादः। उत्त० ३८५।
उच्चोलपहिं-उच्चुलुकैः, ऊर्ध्वभिः चुलुकैः। आव० ६७८।
उच्छंग – उत्सङ्गः-पृष्ठदेशः। जं० प्र० २६५। पृष्ठदेशः। औप० ७१। भग० ४८०।
उच्छण्णं-उच्छिन्नम्, क्षीणम्। आव० ६७०, ६७१।
उच्छदयति-योल करोति। ओघ० १५३।
उच्छत्तं-अपशब्द-विरूपं छत्रं-स्वदोषाणां परगुणानां वाऽऽवरणमपच्छत्रं। उत्थत्वं, न्यूनत्वं वा, द्वितीयाधर्मद्वारस्य चतुर्दशं नाम। प्रश्न० २६।
उच्छन्ननाणी – उच्छन्नज्ञानी-यावत्शक्तिप्रच्छादितज्ञानी। प्रज्ञा० ४६१।
उच्छयं-उच्छ्रयं-स्थापितम्। आव० १८४।
उच्छलंत-उच्छलन्तः-उद्वलन्तः। प्रश्न० ६२।
उच्छ(त्थ)ल-उत्-उन्नतानि स्थलानि-धूल्युत्करूपाण्युच्छ(त्थ)लानि। भग० ३०७।
उच्छलिओ-उच्छलितः-निर्गतः। आव० ४०२।
उच्छयो-उत्सवः-शर्करसवादिः। प्रश्न० १५५। इन्द्रोत्सवादिः। प्रश्न० १४०।
उच्छहया-उत्सहन्-अर्थोद्यमवान्। दश० २५३।
उच्छा-तुच्छा, रिक्ता। (गणि०)।
उच्छाइओ-उत्पादितः। आव० ३९८।
उच्छाएइ-आच्छादयति। आव० ६२४।
उच्छाडणं। नि० चू० प्र० १२१ अ।
उच्छायणयाए-उच्छादनतायै, सर्वेषामपि नरदुर्गपर्यन्तमुच्छादनाय। भग० ६८४।
उच्छाह-उत्साहः-वीर्यं। भग० ११८।
उच्छिंपय-अर्थ-उच्छम्पक-चौरविशेषः। प्रश्न० ४७।
उच्छिंपणं – उच्छेपणं-उत्क्षेपणं-आक्षेपणं वाऽर्थापकर्षणम्। प्रश्न० २२।
उच्छिरणं। नि० चू० द्वि० १०४ अ।
उच्छिन्नगोत्तागारं-उच्छिन्नगोत्रागारम्, उच्छिन्नगोत्रागारं-सस्त्वामिगोत्रगृहं यस्य तत्। भग० २००।
उच्छिन्नसामिय-उच्छिन्नस्वामिकम्, निःसत्ताकीभूतस्वामिकम्। भग० २००।
उच्छिन्नसेउय-उच्छिन्नसेतुकम् त्यक्तमर्यादम्। भग० २००।
उच्छिन्ना-विनिष्टसत्ताका। ठाणा० २९४।
उच्छु-इक्षु। दश० २२६। आव० ८५४।
उच्छुकिओ-जुगुप्सितः। बृ० द्वि० २५५आ।
उच्छुखण्ड-इक्षुखण्डः। दश० ११६।
उच्छुगंडिय-इक्षुगण्डिका-सपर्वेक्षुशकलम्। आचा० ३५४।
उच्छुघर-इक्षुगृहम्। व्य० द्वि० ३११ अ। आव० ३०१। नि० चू० द्वि० १०९ अ। विशे० १००२।
उच्छुजंतं-इक्षुयन्त्रम्। आव० ८२९।
उच्छुड्डो-उन्मत्त.। विशे० ५१५।
उच्छुद्धं-विक्षिप्तम्। ओघ० १५०। परित्यक्तं। बृ० द्वि० १३३ आ। रोगाघ्रातं। बृ० तृ० २२ आ।
उच्छुभ-आधिक्येन क्षिप, प्रवेशयेत्यर्थं। प्रश्न० ७०।
उच्छुभइ-क्षिपति क्षिपतेत्यर्थं। भग० ६८५।
उच्छुमेरगं-अपनीतत्वगिक्षुगण्डिका। आचा० ३४८।
उच्छुहइ-अवष्टभ्नाति, विध्यतीत्यर्थः। ज्ञाता० ६८।
उच्छूढं-उज्झितं सत्कारपरित्यागात्। सूर्य० ५। उज्झितम्। भग० १२। राज० ५७। विपा० ३४। औप० ८४। जं० प्र० १६।
उच्छूढ-निःसृतः। सूर्य० ९२। अपक्षिप्त-अर्गलाभ्यामाक्षिप्तमितः। जीवा० २७१। स्कन्धावारक्षिप्तो-निःसारितः। जं० प्र० १११। प्रश्न० ८१।
उच्छूढसरीरे-उच्छूढशरीरः-उज्झितमिवोज्झितं शरीरसंस्कारत्यागात् शरीरं येन स.। भग० १२।
उच्छूढाइं-हष्टितानि। बृ० प्र० ५० आ।
उच्छूढं। औप० ११६।
उच्छूनायस्था-विनष्टावस्था। जीवा० १०७।
उच्छूरं-अचारम्। ओघ० १४८।
उच्छूरिया-मन्यूना। बृ० द्वि० ३९६ आ।
उच्छेया-उच्छेदा नाम यत्र परिभुज्यते तत्र तत्र तस्य संपादनम्। व्य० द्वि० ७ अ।
उच्छोडेइ-उत्क्षिपति। आव० ३९१।
उच्छोभवंदणयं-उच्छोभ समागमणो वंदिरे न चलिया:

निसीहियाए तिविहेणं एयं उच्छोभवंदणयं। नि० चू० द्वि० ९३ अ।

उच्छोभो-आलः, कलङ्क। आव० ४०१।

उच्छोलणं – एगंसि धोयण उच्छोलणं। नि० चू० द्वि० ११८ आ। तेल्लादिणा फासुगअफासुएण देसे उच्छोलणं। नि० चू० द्वि० ८९ अ। उच्छोलनं–अयतनया शीतोदकादिना हस्तपादादिप्रक्षालनम्। सूत्र० १८१।

उच्छोलणा-उच्छोलना–पुरीषमुत्सृज्य प्रभुतेन पयसा क्षालनम्। ओघ० ५५। ओघ० १३०। एगंसि उच्छोलणा। नि० चू० प्र० १८८ अ।

उच्छोलणापहोअ– उत्सोलनया – उदकायतनया प्रकर्षेण धावति–पादादिशुद्धिं करोति य स उत्सोलनाप्रधावी। दश० १६०।

उच्छोलिंति-प्रक्षालयन्ति। गणि०।

उच्छोलेइ-अभतो मुखा चपेटा ददाति। भग० १७५।

उच्छोलेज्ज-ईषद् उच्छोलनं विदध्यात्। आचा० ३६३। सकृदुदकेन प्रक्षालनं कुर्यात्। आचा० ३४२।

उच्छोलेति-सकृदुदकेन प्रक्षालनम्। नि० चू० प्र० ११६ आ।

उज्जु-ऋजु –मायारहित संयमवान् वा। दश० २६२।

उज्जुगं-दृष्टिवादे सूत्रभेद। सम० १२८।

उज्जुमइ-ऋजुमति, ऋज्वी–प्रायो घटादिमात्रग्राहिणी मति। विशे० ३८०।

उज्जुवालिआ-ऋजुवालिका, वीरस्य केवलोत्पत्तिस्थानम्। आव० १३९।

उज्ज-आर्जवादुद्द्योतगतीति उद्द्योत। नन्दी० ३८।

उज्जमंतो-मूलुत्तरगुणेसु विसुद्धो वित्तित्तो। नि० चू० द्वि० ९५ अ।

उज्जम-उद्यम –यथाशक्ति अनुष्ठानम्। आचा० १५०। अनालस्यम्। औप० ४८।

उज्जममाणो-उप्पज्जन्–उद्यम कुर्वन्। आव० २३४।

उज्जयनी-नगरीविशेष। नंदी १४५।

उज्जयन्त-पर्वतविशेष। जं० प्र० १६८। क्रीडापर्वतविशेष। भग० २०६। रैवतकम्। उत्त० ४९२। अट्टनमल्ल वास्तव्यनगरम्। व्य० द्वि० ३५७ अ।

उज्जयिनी-चण्डप्रद्योतराजधानी। प्रश्न० ९०। नगरीविशेष। आचा० २४८। बृ० तृ० २१८ आ। विशे० ४०६। पुष्पलक्ष्य पितृदत्ता नगरी। विशे० ४०९।

उज्जयिनीराजपुत्र-उज्जयिन्या राजपुत्र। आचा० २४८।

उज्जरा-प्रवाहा। आव० ६२०।

उज्जल-उज्ज्वल –विपक्षलेशेनाप्यकलङ्कित। भग० ४८४, ३३१। निर्म्मल। जीवा० २३७। ज्ञाता० २२१। बहि० श्वेतवर्ण। जं० प्र० ५२८। उज्ज्वलम्–सर्वाङ्गव्यापितम्। प्रश्न० १५६। शुद्धम्। जीवा० १८८।

उज्जला-उज्ज्वला। आव० १९२। विपक्षलेशेनाप्यकलङ्किता। प्रश्न० १७। उत्–प्राबल्येन सर्व्विशरीरं ज्वलयन्ति या सा दाधा। बृ० द्वि० ४० अ।

उज्जा-ऊर्जा–बलम्। व्य० प्र० १४४ आ।

उज्जाण-जत्थ लोगो उज्जाणियाए वच्चति। जं वा ईसि णगरस्स उवकंठ ठियं तं। नि० चू० प्र० २६५ अ। पुष्पादिमद्वृक्षसङ्कुलादी उत्सवादौ बहुजनभोग्यम्। प्रश्न० १२७। ऊर्ध्वं यानमस्मिन्निति उद्यानम्–उद्वरम्। आव० ७९७। पुष्पादिसद्वृक्षसङ्कुलमुत्सवादौ बहुजनोपभोग्यम्। जीवा० २५८। आव० १९७। ऊर्ध्वं यानमुद्यानं–मार्गस्योन्नतो भाग, उद्दिष्टस्यार्थे। सूत्र० ८८। पुष्पादिमद्वृक्षसङ्कुलबहुजनभोग्यवनविशेष। प्रश्न० ७३। पुष्पादिमद्वृक्षसङ्कुलमुत्सवादौ बहुजनभोग्यम्। प्रश्न० १२७। औप० ३। क्रीडार्थागतजनानां प्रयोजनाभावेनोर्ध्वविलम्बितयानवाहनाश्रयभूतं तरुखण्डम्। जं० प्र० ३८८। पुष्पफलोपेतादिमहावृक्षसमुदायरूपम्। औप० ४१। जनक्रीडास्थानम्। दश० २१८। पुष्पादिमद्वृक्षसङ्कुल, उत्सवादौ बहुजनभोग्यम्। भग० २३८। पुष्पादिमद्वृक्षसङ्कुलमुत्सवादौ बहुजनोपभोग्यम्। राज० ११२। ऊर्ध्वं विलम्बितानि प्रयोजनाभावात् यानानि यत्र तदुद्यान–नगरादासन्नवर्ती यानवाहनक्रीडागृहाश्रयतरुखण्ड। राज० ९३। चम्पकवनाद्युपशोभितमिति। ठाणा० ३१०। औद्यानिका निर्गतो जनो यत्र भुंक्ते। व्य० द्वि० ३६२ अ। वस्त्राभरणादिसमलङ्कृतविग्रहा सन्निहितासनाद्याहारमदनोत्सवादिषु क्रीडार्थं लोका उद्यान्ति यत्र तच्चम्पकादितरुखण्डमण्डितम्। अनु० २४। पत्रपुष्पफलच्छायोपगतरूपोपशोभित, विशिष्टवेशोन्नतमानध बहुजनो यत्र भोजनार्थं यातीति। सम० ११७। पुष्पफलादिसमृद्धानेकवृक्षसङ्कुलानि उत्सवादौ बहु-

जनपरिभोग्यानि । अनु० १५९ । पुष्पादिमद्वृक्षयुक्तम् । भग० ४८३ । आरामः-क्रीडावनं वा । उत्त० ४५१ ।

उज्जाणगिहाणि-उद्यानगृहाणि । ठाणा० ८६ ।

उज्जाणानि-उद्यानानि-पत्रपुष्पफलच्छायोपगादिवृक्षोपशोभितानि बहुजनस्य विविधवेषस्योन्नतमानस्य भोजनार्थं यानं-गमनं येषु । ठाणा० ८६ ।

उज्जाणियलेणाइं-उद्यानगतजनानामुपकारिकगृहाणि नगरप्रदेशगृहाणि वा । भग० ६१७ ।

उज्जाणिया-उद्यानिका । आव० ६७९ ।

उज्जाणियागओ-उद्यानिकागतः । आव० ४०२ ।

उज्जाणियागमणं-उद्यानिकागमनं । आव० ४५२ ।

उज्जाणेत्ति-प्रतिलोमगामिनीत्यर्थः । नि० चू० प्र० ४४ आ ।

उज्जालंतं-उज्ज्वालनम्-व्यजनादिभिर्वृद्ध्यापादनम् । दश० १५४ ।

उज्जालओ-प्रज्वालकः । नि० चू० प्र० ५० अ ।

उज्जालेह-उज्ज्वालयत, दीपयत । जं० प्र० १६२ ।

उज्जितगिरि-उज्जयन्तगिरिः, पर्वतविशेषः । आचा० ४३८ । नंदी ६० ।

उज्झिओ-पलायान् । बृ० द्वि० १९५ अ ।

उज्झितं-ऊर्जितम् । आव० ३०४ ।

उज्जीवावियया-उज्जीविता । आव० ५५९ ।

उज्जीवितेयाशीर्वाद । नंदी १६० ।

उज्जु-समं सजलो वा । दश० चू० ५२ । ऋजोः-ज्ञानदर्शनचारित्रात्मकस्य मोक्षमार्गस्यानुष्ठानादकुटिलः, यथावस्थितपदार्थस्वरूपपरिच्छेदाद्वा, सर्वोपाधिशुद्धोऽवक्रः । आचा० १५४ । ऋजुः-अकुटिलः । आचा० ४२ । अवक्रः, अविपरीतस्वभावः । ठाणा० १८३ । अवक्रः । उत्त० ५९० । गृहाभिमुखः । ओघ० १५६ । वर्तमानमतीतानागतवक्रपरित्यागाद् वस्त्वृजुः, यद्वा विपर्ययादभिमुखं वा । आव० २८४ । अतीतानागतपरकीयपरिहरणमात्रस्थं वस्तु । अनु० १८ ।

उज्जुअ-ऋजुकम्-मायारहितः । पिण्ड० १४७ । अभिमुखः । दश० १८४ ।

उज्जुआयता - ऋज्वायता श्रेणिः ऋज्वायता यया जीवादय ऊर्ध्वलोकादेरधोलोकादौ ऋजुतया यान्ति । भग० ८६६ । ऋज्वी-सरला सा चासावायता च-दीर्घा ऋज्वायता । ठाणा० ४०५ ।

उज्जुकडे-ऋजुकृत-ऋजुः-संयमस्तत्प्रधानं ऋजु वा-मायात्यागतः कृतम्-अनुष्ठानं यस्य सः । उत्त० ४१४ ।

उज्जुग-ऋजुम् । आव० ३८४ । दक्षिणहस्तः । ओघ० १७५ ।

उज्जुजड्ड-ऋजवश्च प्राञ्जलतया जडाश्च तत एव दुष्प्रतिपाद्यतया ऋजुजडाः । उत्त० ५०२ ।

उज्जुतभिन्नं-यत् चिर्भटादिक विदार्य ऊर्ध्वफालिरूपाः पेश्यः कृतं तद् ऋजुकभिन्नम् । बृ० प्र० १७५ अ ।

उज्जुत्ते - ऋजुकः-अवक्रः, उद्यतो वा-अनलसः । प्रश्न० १५७ ।

उज्जुत्तो-उद्युक्तः । ओघ० १६० ।

उज्जुदंसी - ऋजुदर्शी-ऋजुर्मोक्षं प्रति ऋजुत्वात्संयमस्तं पश्यत्युपादेयतयेति ऋजुदर्शी-संयमप्रतिबद्धः । दश० ११८ ।

उज्जुपन्न-ऋजुप्रज्ञ । ठाणा० २०२ ।

उज्जुभूयं-ऋजुभूतं-प्रगुणीभूतम् । उत्त० १८५ ।

उज्जुमइ-ऋजुमतिः-मार्गप्रवृत्तबुद्धिः । दश० १६० ।

उज्जुमई - ऋज्वी-सामान्यग्राहिणी मतिरस्य स । नंदी १०९, १०८ । ऋज्वी-सामान्यतो मनोमात्रग्राहिणी मतिः-मनःपर्यायज्ञानं येषां ते । औप० २८ ।

उज्जुया-ऋजुका-न वक्रा । जीवा० ३७१ ।

उज्जुवालिया-ऋजुवालिका, वीरस्य केवलोत्पत्तिस्थानम् । आव० २२७ ।

उज्जुसंधिसंखेहयं-उज्जुसंधिसंखेड्याओ वा अगड्डसदं पवेसेति । नि० चू० द्वि० ८६ अ ।

उज्जुसुअ-ऋजु-अतीतानागतपरिहारेण परकीयपरिहारेण वाऽकुटिलं वस्तु सूत्रयतीति ऋजुसूत्रः । विशे० ३१ । ऋजुसूत्र - ऋजु - वर्तमानमतीतानागतवक्रपरित्यागाद् वस्त्वक्षितं तत्सूत्रयति-गमयतीति । ऋजुश्रुत-ऋजु-यथार्थपर्यायाभिमुखं श्रुतं-ज्ञानमस्येति । आव० २८४ । ऋजु-अवक्रं श्रुतमस्य सोऽयमृजुश्रुतः, ऋजु-अवक्रं वस्तु सूत्रयतीति ऋजुसूत्रः । विशे० ९०७ । ठाणा० १९२ ।

उज्जुसुत्ते - ऋजु-वर्तमानपर्यायाभिमुखं श्रुतं-ज्ञानं यस्यासौ ऋजुश्रुतः, ऋजु वा-वर्तमानमतीतानागतवक्रपरित्यागाद्वस्तु सूत्रयति-गमयति इति ऋजुसूत्रः । ठाणा० ३९० । ऋजु-वर्तमानपर्यायाभिमुखं श्रुतं-ज्ञानं यस्य सः । ठाणा० १०२ । ऋजु-अवक्रमभिमुखं श्रुतं-श्रुतज्ञानं यस्येति । ठाणा० १५२ ।

ऋजु –अतकं श्रुतमस्येति। अनु० २६५। स्वकीयं संप्रान्तं न यम्तु नान्यदित्यभ्युपगमपरः, ऋजु वा–अतीतानागतवक्रपरित्यागाद्वर्त्तमानं वस्तुसूत्रयति–गमयतीति ऋजुसूत्रः। ठाणा० १५२।

उज्जुसुयं–ऋजुसूत्रं–नयगनो भेद.। प्रज्ञा० ३२७। ऋजु–अतीतानागतपरिहारेण प्राञ्जलं वस्तु सूत्रयति–अभ्युपगच्छतीति ऋजुसूत्रः। अनु० १८।

उज्जुसेढीपत्ते – ऋजुश्रेणिप्राप्तः–ऋजु –अवक्रा श्रेणि –आकाशप्रदेशपंक्तिस्तां प्राप्त.। अनुश्रेणिगमः। उत्त० ५९७।

उज्जुहिसा–प्रेर्य। उत्त० ५५१।

उज्जू–ऋजु –यति , यतिरेव परमार्थेनः ऋजु। आचा० १५६।

उज्जूहिगा–गावीओ उज्जूहिताओ अडविहुत्तीओ उज्जुहिज्जंति अहवा गोसराडि उज्जूहिगा। नि० चू० द्वि० ७१ अ।

उज्जेंत–रैवतक । बृ० द्वि० १०६अ। उज्जयन्त –पर्वतविशेष । आव० ८२७। परदारगमने पर्वतविशेष । आव० ८२३।

उज्जेणय–उज्जयिनीक । आव० ६३६।

उज्जेणा–उपयोजना–सघट्टना। बृ० द्वि० १४६ अ।

उज्जेणि–उज्जयिनी, गुरुनिग्रहविषये पुरी। आव० ८१३। सर्वकामविरक्तताविषये नगरी। आव० ७१८। अज्ञानोदाहरणे प्रद्योतराजधानी। आव० ६९९। मालवदेशे नगरी। दश० ५७। शिल्पसिद्धदृष्टान्ते पुरी। आव० ४१०। कायदण्डोदाहरणे नगरीविशेष । आव० ५७७। भद्रगुप्त स्थविरनिर्यामणास्थानम्। आव० ३०२।

उज्जेणिगाओ–औज्जयिन्य । आव० ६४।

उज्जेणिया–उज्जयिनी। आव० २१०।

उज्जेणी–उज्जयिनी, लवालवोदाहरणे नगरी। आव० ७२१। गुणविषये पुरी। आव० ८१९। विनयदृष्टान्ते पुरी। आव० ७०८। शिल्पकर्मविषये नगरी। आव० ४०९। शिक्षीकरणोदाहरणे नगरी। दश० १०३। योगसंग्रहेऽनिश्रितोपधानदृष्टान्ते नगरी। आव० ६६८। जितशत्रुराजधानी। उत्त० २१३, १९२। औत्पात्तिकीदृष्टान्ते नगरी। आव० ४१५। भद्रगुप्ताचार्यस्थानम्। आव० २९२। नगरीविशेष । बृ० प्र० ११९ अ, ११० आ। योगसंग्रहे शिक्षादृष्टान्ते नगरी। आव० ६७२। प्रथमे आलोचनायोगे नगरी। आव० ६६४। योगसंग्रहे आपत्सु दृढधर्मतादृष्टान्ते नगरीविशेष । आव० ६६०। हस्तिमित्रगाथापतिस्थानम्। उत्त० ८५। देवदत्तागणिकास्थाननगरी। उत्त० २१८। उज्जयिनी–नगरीविशेष.। उत्त० ९९, ३९४, १२०, ८०। प्रद्योतनराजधानी। उत्त० ९६। मेढिरनीर्षक ग्रामगमस्थानम्। बृ० प्र० १७३ आ। बृ० प्र० ३९ अ। नगरीविशेष। नि० चू० प्र० २८३ अ। नि० चू० द्वि० ७० आ। बृ० प्र० १९१ अ। बृ० द्वि० २६७ अ। कालकाचार्यविहारभूमि। नि० चू० प्र० ३३९ आ। बृ० प्र० ४७ अ। बृ० तृ० १४९ अ।

उज्जेणीनयरी–अवन्तीजनपदे नगरी। उत्त० ४९।

उज्जेणीसावगसुतो – उज्जयनीश्रावकपुत्र –उज्जयिन्यां श्रावकसुत। उत्त० २९४।

उज्जोअ–उद्द्योत–प्रभाप्रसर। जीवा० २६७। अनुष्णप्रकाश.। जं० प्र० ४३३। दीप्यमानता। जीवा० ३९९। उद्योतं–चान्द्रप्रकाशम्। जं० प्र० २१९।

उज्जोइंति–उद्द्योतयन्ति। भग० ३२७।

उज्जोवइ–उद्द्योतयति–भृशं प्रकाशयति। भग० ५८।

उज्जोएमाणा–उद्योतयन्। औप० ५०।

उज्जोओ–उद्योत –रत्नादिप्रकाश। उत्त० ५६१।

उज्जोयगरे – उद्योतकर –केवलालोकेन सम्पूर्णप्रवचनदीपेन वा सर्वलोकप्रकाशकरणशील। आव० ४९४।

उज्जोयणामे–यदुदयाज्जन्तुशरीराण्यनुष्णप्रकाशरूपमुद्योतं कुर्वन्ति यथा यतिदेवोत्तरवैक्रियचन्द्रनक्षत्रतारविमानरत्नौषधयस्तदुद्योतनाम। प्रज्ञा० ४७४।

उज्जोवणं–गाविण पसरणं। नि० चू० प्र० १०७ अ।

उज्जोवेंति–उद्योतयन्ति। सूर्य० ६३। उद्द्योतयन्–प्रकाशयत। जं० प्र० ४६१।

उज्जोवेमाणा–उद्योतयमान स्थूलवस्तुदर्शनेन। ठाणा० ४२१।

उज्झतगं–उज्झितक, त्याज्यम्। आव० ६३८।

उज्झंता–क्षपयन्त। अनु० १३१।

उज्झंसिओ–निर्भर्त्सित । आव० ७०८।

उज्झरूक्खणिया – पवनप्रेरिता उदककणिका। बृ० द्वि० ७९ आ।

उज्झखणी-दगवातो सीतभरो सा य उज्झखणी भण्णति। नि० चू० प्र० २३३ आ।

उज्झणं-बहिर्नयन। विशे० १०२९।

उज्झनं-परिशाटः। आव० ५७६।

उज्झमज्झी-उद्घाटनम्। आव० ६६५।

उज्झयारेमि-उपकरोमि। बृ० प्र० ४६ आ।

उज्झर-अवझरः-पर्वततटादुदकस्याधःपतनम्। भग० २३८। प्रवाहः। (तं०)। उज्झरः-प्रवाहः। नंदी ४७। गिरितटादुदकस्याधःपतनानि। जं० प्र० ६६। गिरिप्रस्रवणमां प्रस्रवाः। प्रज्ञा० ७२। निर्झरः। ज्ञाता० २६।

उज्झररवो-निर्झरशब्दः। ज्ञाता० १६१।

उज्झा-उज्झा-उपयोगपुरस्सरं ध्यानकर्त्तारः। विशे० १२२९। अयोध्या, मगधराजधानी। आव० १६१। अजितनाथजन्मभूमि। आव० १६०। उ इत्येतदक्षरं उपयोगकरणे वर्तते, उज्झ इति चेदं ध्यानस्य भवति निर्देशो, ततश्च प्राकृतशैल्या उज्झा, उपयोगपुरस्सरं ध्यानकर्तार इत्यर्थः। आव० ४४९। अनन्तनाथजन्मभूमिः। आव० १६०।

उज्झाइओ-विरूपः। बृ० द्वि० २४१ अ।

उज्झाइयं-जुगुप्सा। बृ० द्वि० २२९ आ।

उज्झाइत्तं-विरूपं। बृ० द्वि० २२९ आ।

उज्झातो-उपाध्यायः। उत्त० १४९।

उज्झाहि-उज्झीः। आव० २१७।

उज्झिभा-उज्झिता-परिष्ठापनयोग्या। सूत्र० ९२।

उज्झिणिका-पारिष्ठापनिका। बृ० तृ० १०३ अ। बृ० द्वि० २४० आ।

उज्झिनं-छर्दितं, त्यागम्। पिण्ड० १६९।

उज्झितक-विजयसार्थवाहपुत्रः। ठाणा० ५०७। दुःखविपाकानां द्वितीयमध्ययनम्। ठाणा० ५०७।

उज्झितव - उज्झितुं-सर्वथा [illegible]। ज्ञाता० ११८।

उज्झिय-उज्झित.-[illegible], [illegible]। आव० ५७२। उज्झितधर्मा। आव० ५६८।

उज्झियए-[illegible] -[illegible]। सूत्र०। विशे० ४६। [illegible], [illegible]। विशे० ३५।

उज्झियधर्मा-[illegible]। [illegible] ८२१।

उज्झियधम्मा-चतुर्थी षडेषणा। आचा० २७७। यत्परित्यागार्हं भोजनजातमन्ये च द्विपदादयो नावकाङ्क्षन्ति तदर्द्धत्यक्तं वा गृह्णत इति, सप्तमी पिण्डैषणा। ठाणा० ३८७। आव० ५६८, ५७२।

उज्झियधम्मिय-उज्झितधर्मिकं-उज्झितं-परित्याग. स एव धर्मः-पर्यायो यस्यास्ति तत्। अन्त० ३। उज्झितधर्मिका-सप्तमी पिण्डैषणा। आचा० ३५७। जं भत्तपाणादिगं गिही उज्झिउकामो साहू य उवट्ठितो तं तस्स देति ण य तं अण्णो दुपदादि अभिलसति एसा उज्झियधम्मिया। नि० चू० तृ० १२ अ। नि० चू० द्वि० १६१ आ।

उज्झियधम्मी-उज्झितमेव धर्मः-स्वभावो यस्य तद् उज्झितधर्म-परित्यागार्हम्। बृ० प्र० ९७ आ।

उट्ट-उष्ट्रः। प्रश्न० २५२। उष्ट्रः-द्विखुरचतुष्पदविशेषः। प्रज्ञा० ४५। जीवा० ३८। म्लेच्छविशेषः। प्रज्ञा० ५५।

उट्टण-आवर्तनम्-भक्तीभवनम्। व्य० प्र० २०३ आ।

उट्टयामा-उष्ट्री। आव० ४१८।

उट्टिय-उष्ट्राणामिदम् औष्ट्रिकम्। अनु० ३५। उष्ट्रिका-बृहन्मृन्मयभाण्डम्। उपा० ४।

उट्टिते-उष्ट्रलोममयम्। ठाणा० ३३८।

उट्टितो-उत्थितो। नि० चू० प्र० १७८ आ।

उट्टियं-उष्ट्रलोमेषु उट्टियं। नि० चू० प्र० ११६ अ।

उट्टिया - उष्ट्रिका-महामृन्मयो भाजनविशेषः। औप० १०६। मृन्मयो महाभाजनविशेषः। उपा० २१। सुरा[illegible]भाजनविशेषः। उपा० ४०। [illegible]। नि० चू० तृ० ५५ अ, ६१ अ।

उट्टियासमणा - उष्ट्रिका-महामृन्मयो भाजनविशेषस्तत्र प्रविश्य ये तप्यन्ति-तपश्चरन्ति। उष्ट्रिकाश्रमणाः। औप० १०६।

उट्ठं-ओष्ठ-[illegible]। औप० ३११।

उट्ठंमिया-[illegible]-[illegible]। आचा० ३१३।

उट्ठण-[illegible]। बृ० द्वि० [illegible] अ।

उट्ठवेमि-उत्थापयामि। ज्ञाता० ६०।

उट्ठा-उत्था-[illegible]। औप० ८३। ऊर्ध्व[illegible]। सूर्य० ६। भग० १९। [illegible]। दश० १९३।

उट्ठा(ट्ठा)-[illegible]-[illegible]। सूत्र० ३६०।

उट्ठाए–उत्थाय–उग्रविहारं प्रतिपद्य सर्वालङ्कारं परित्यज्य पञ्चमुष्टिकं लोचं विधायैकेन देवदूष्येणेन्द्रक्षिप्तेन युक्त कृत सामायिकप्रतिज्ञ आविर्भूतमनःपर्यायज्ञानोऽष्टप्रकारकर्म्मक्षयार्थं तीर्थप्रवर्त्तनार्थं चोत्थाय। आचा० ३०१। उत्थान उत्था–ऊर्ध्वं वर्त्तनं। राज० ५८।

उट्ठाण–उत्थानम्–उद्वसनम्। नंदी २०७। प्रथममुद्गमनम्। उत्त० ३५१। जन्म। भग० ६६१। चेष्टाविशेष। ठाणा०। २३। उत्थानम्। पिण्ड० ७१। ऊर्ध्वीभवनम्। भग० ३११। सूर्य० २८६। श्रवणाय गुरुं प्रत्यभिमुखगमनम्। सूर्य० २९६। देहचेष्टाविशेष। प्रज्ञा० ४६३। ऊर्ध्वं भवनम्। ज० प्र० १३०। उत्पत्ति। ज्ञाता० १८९।

उट्ठाणपरियाणियं–परियान–विविधव्यतिकरपरिगमनं तदेव पारियानिकं–चरितं उत्थानात्–जन्मन आरभ्य पारियानिकं उत्थानपारियानिकम्। भग० ६६०।

उट्ठाणपरियावणियं–उत्थानपर्यापनिकम्। आव० ६५।

उट्ठाणसुए–उत्थानश्रुतं–उद्वसनं तद्धेतु श्रुतमुत्थानश्रुतम्। नंदी २०७। –

उट्ठाय–उत्थाय–अभ्युपगम्य। आचा० ३८। सर्वं सावद्यं कर्म्म न मया कर्त्तव्यमित्येवं प्रतिज्ञामन्दरमारुह्य। आदाय–गृहीत्वा। आचा० १४०।

उट्ठावणा–उत्थेव ठावणा उत–प्राधान्येन वा ठ्ठावणा उट्ठावणा। नि० चू० द्वि० ४७ अ।

उट्ठावणागहणं–उपस्थापनाया हस्तिदन्तोन्नताकारहस्ता दिभिर्यद् रजोहरणादिग्रहणं। बृ० द्वि० २८६ अ।

उट्ठिअ–उद्युक्त। ओघ० २२०। उत्थित –उद्वसित। ओघ० ७९। उद्यत। ओघ० २२०।

उट्ठिए–उत्थित –ज्ञानदर्शनचारित्रोद्योगवान्। आचा० १७६। उत्–प्राधान्येन स्थित उत्थित। आचा० २४८।

उट्ठिय–उत्थित –संयमोद्योगवान्। आचा० २३४। २४। नि० चू० प्र० २०८ आ। ईश्वरीभूतम्। पिण्ड० १२३।

उट्ठी–अण। आव० ६२४।

उट्ठुभइ–अवष्ठीव्यन–निष्ठीवति। भग० ९८०।

उट्ठेइ–उत्थाय–विबुद्धय। भग० १००।

उट्ठेमि–आयामि–आगच्छामि। आव० ९८१।

उडक्गिसी–ऋषिविशेष। बृ० प्र० २८६ आ।

उडए–उटज –तापसाश्रमगृहम्। निरय० २६।

उडओ–ओटज –तापसाश्रम। उत्त० ११४।

उडय–उटज –तापसाश्रम। जीवा० १०१। कोटिरो। नि० चू० द्वि० ७७ आ। पर्णकुटी। आव० १८९।

उडयसंठिया–उटजसंस्थिता –तापसाश्रमसंस्थिता। आव० लिकावाद्यस्य दशमं संस्थानम्। जीवा० १०४।

उडुंकरिसि–ऋषिविशेष। नि० चू० द्वि० ६८ आ।

उडुंडुग–उद्दण्ड –जनहास्य। नि० चू० तृ० ५० अ।

उडु–ऋतु। नि० चू० प्र० २३९ अ। उडुग –लग्नकाप–तुम्बकादि। पिण्ड० १०२।

उडुकः–तप। विशे० ३५१।

उडुकल्लाणिआ–ऋतुकल्याणिका, ऋतुषु षट्स्वपि कल्याणिका – ऋतुविपरीतस्पर्शत्वेन सर्वदाऽपि अष्टाऽमृतकल्पत्वेन सदा कल्याणकारिण्य। जं० प्र० २६३।

उडुपं–नौ। आचा० ४१।

उडुबद्धियं–ऋतुबद्धम्–शीतोष्णकालयोर्मासिकल्पम्। आचा० ३६५।

उडुवई–उडुपति –उडूना–नक्षत्राणां पति –प्रभु स। उत्त० ३५१।

उडुविमान–सौधर्मे प्रथम प्रस्तट। ठाणा० ३५१।

उडू–कालविशेष। भग० ८८८। ऋतव –द्विमासमाना। ठाणा० ८६। नक्षत्र। उत्त० ३५१।

उडूसंवच्छरे–ऋतुसंवत्सर, कर्मसंवत्सर, सावनसंवत्सरश्च। सूर्य० १८८। यस्मिन् संवत्सरे त्रीणि शतानि षष्ट्यधिकानि परिपूर्णान्यहोरात्राणां भवति एष ऋतुसंवत्सर, ऋतवो लोकप्रसिद्धा वसन्ताद्य तत्प्रधानसंवत्सर ऋतुसंवत्सर। सूर्य० १६६।

उडुं–कुड्य। बृ० द्वि० ६१ आ।

उडुंचकादि–उद्घट्टकादि। ओघ० ८९।

उडुंचगा–उद्भका –याचका। बृ० प्र० ८६ आ।

उडुंचय–उद्भका –उद्भेल्कारस्तान् कुर्वन्ति, आलापकान् वर्णाद्याठेन पठित्वा तथैवोद्भन्ति उत्तरं। बृ० द्वि० ६० आ।

उड्डुचये–कुट्टियाआ। नि० चू० प्र० ११३ अ।

उड्डुडग–ऊर्द्धीकृतदण्ड। औप० ९०।

उड्डुति–स्वचम्भापयन्ति। आव० ६१०।

उड्डुयालग.– कोट्टपालकः। आव० २०४। आरक्षकः। आव० २०४।

उड्डुग–पलालं। नि० चू० द्वि० ६१ अ।

उड्डुच्छे–उद्घोषिते। नि० चू० द्वि० १३२ अ।

उड्डुणकं–प्रपंचः। नि० चू० तृ० २६ आ।

उड्डु(ड्डे)ति। नि० चू० प्र० २३२ आ।

उड्डुमरं–उत्थाणं। नि० चू० प्र० १९४ आ।

उड्डुमादी–खितिखाणतो उड्डुमादी। नि० चू० द्वि० ४४ आ।

उड्डुहणं–व्यङ्गनयोर्द्वयोरनवस्थाप्यः। बृ० प्र० ३०८ अ।

उड्डाह – उपघातः। ओघ० ८९। प्रवचनहीला। ओघ० ४८। खिंसा। पिण्ड० १०९। अपवादः। आव० ८००। उपघातः। ओघ० १४९। आव० १९५।

उड्डाहितो–निर्भर्त्सितः। उत्त० १३९।

उड्डिओ–अवतारितः। आव० ३९६।

उड्डियाओ–अवतारिता। दश० ५७।

उड्डुयं–उद्गारितम्। आव० ७७९।

उड्डुयरो–यः समुद्दिशन् संज्ञां वा व्युत्सृजन् चपलतया हस्तादीन्यपि लेपयति। बृ० प्र० २७२ अ।

उड्डुयालेउं–मथितुम्–मन्थनं कर्तुम्। दश० ६०।

उड्डुति–छोति। नि० चू० प्र० २९० अ।

उड्डुह–धरय। नि० चू० प्र० २३७ अ।

उड्ढ–वमनं। नि० चू० प्र० ३१५ आ। नि० चू० ५८ अ। बृ० प्र० ७५ अ। णदीए समुद्दे वा वेलापाणियस्स प्रतिकूल उड्ढं। नि० चू० तृ० ६३ आ।

उड्ढंघत्त–ऊर्ध्वस्थितस्यैवमपरं, तिर्यक्स्थितस्यान्यत्, गुणोपतिरूपं, मन्निनरापोद्देनोर्ध्वस्थितस्य यदुच्चत्व तदूर्ध्वोच्चत्वम्। ठाणा० ३९।

उड्ढंकप्पेसु–ऊर्ध्वं कल्पेषु–ऊर्ध्वं कल्पोपरिवर्तिषु ग्रैवेयकादिविमानकेषु कल्पेषु–सौधर्मादिषु, ऊर्ध्वं वा उपरिकल्प्यन्ते विशिष्टपुण्यभाजामवस्थितिविषयतयेति सौधर्मादयो ग्रैवेयकादयश्च सर्वेऽपि कल्पा एव तेषु। उत्त० १८६।

उड्ढंजाणू–शुद्धपृथिव्यासनवर्जनात् औपग्रहिकनिषद्याभावाच्च उत्कटुकासनः सन्नपदिश्यते ऊर्ध्वं जानुनी यस्य स ऊर्ध्वजानुः। ज्ञाता० ९।

उड्ढ–ऊर्ध्वं–ऊर्ध्वः। ओघ० १६८। सर्वोपरिस्थितम्। उत्त० २६८। अनाच्छादितममालगृहम्। ठाणा० १५७। ऊर्ध्वं। नंदी १५४।

उड्ढकवाडे–ऊर्ध्वमपि लोकान्तं स्पृष्टे ते अधोऽपि च लोकान्तं स्पृष्टे ते ऊर्ध्वकपाटे। प्रज्ञा० ७५।

उड्ढकाएहिं–ऊर्ध्वकायैः–द्रोणैः कार्ष्वैर्क्रियैः। सूत्र० १३७।

उड्ढगो। ठाणा० १५८।

उड्ढघट्टणा–ऊर्ध्वघट्टना–मुसलीद्वितीयभेदः। ऊर्ध्वं कुड्यादिपटलानि घट्टयति। ओघ० १०९।

उड्ढचरा–ऊर्ध्वचरा–गृध्रादयः। आचा० २९१।

उड्ढठाण – ऊर्ध्वस्थानम्–कायोत्सर्गादि। उत्त० ६९९। कायोत्सर्गः, ऊर्ध्वतया स्थानम्–अवस्थानं पुरुषस्य ऊर्ध्वस्थानम्। ठाणा० ३।

उड्ढत्ता–मुख्यता। भग० २५४। ऊर्ध्वता–लघुपरिणामता। प्रज्ञा० ५०४। भग० २३।

उड्ढमंतो – उद्वमन्–अधस्तनमध्यमत्रिभागगतवातसङ्क्षोभवशाज्जलमूर्ध्वमुत्क्षिपन्। जीवा० ३०८।

उड्ढरेणु – ऊर्ध्वरेणुः–ऊर्ध्वाधस्तिर्यक्चलनधर्मोपलभ्यो रेणुः। भग० २७७।

उड्ढरेणू–ऊर्ध्वरेणुः–स्वतः परतो वा ऊर्ध्वाधस्तिर्यक्चलनधर्मा रेणुः। अनु० १६३।

उड्ढलोए–तिर्यग्लोकस्योपरिष्टादूर्ध्वलोकः। प्रज्ञा० १४४।

उड्ढलोयतिरियलोए–ऊर्ध्वलोकस्य यदधस्तनमाकाशप्रदेशप्रतरं यच्च तिर्यग्लोकस्य सर्वोपरितनमाकाशप्रदेशप्रतरमेव ऊर्ध्वलोकतिर्यग्लोकः। प्रज्ञा० १४४।

उड्ढलोयपयरं–ऊर्ध्वलोकप्रतरं–तिर्यग्लोकस्य चोपरि यदेकप्रादेशिकमाकाशप्रतरं तत्। प्रज्ञा० १४४।

उड्ढवाए – ऊर्ध्वमुद्गच्छन् यो वाति वातः स ऊर्ध्ववातः। जीवा० २९। ऊर्ध्वमुद्गच्छन् यो वाति वातः स ऊर्ध्ववातः। प्रज्ञा० ३०।

उड्ढवियडं–मालरहितं छायरहितं परं पार्श्वतः कुड्यकुड्यं तदूर्ध्वविवृतं भवति। बृ० द्वि० १८१ अ।

उड्ढवेइया–ऊर्ध्ववेदिका, यत्र जान्वोरुपरि हस्तौ कृत्वा प्रतिलिख्यते सा। ओघ० ११०।

उड्ढस्सासो–ऊर्ध्वश्वास। आव० ६२९।

उड्ढा–ऊर्ध्व–वमनम्। बृ० प्र० ७५ अ।

उड्ढाई–ऊर्ध्वादि–मर्दनादिदोष। ओघ० ११९।

उड्ढिया–ऊर्ध्वीकृता। आव० २२३।

उड्ढोववन्नगा–ऊर्ध्वलोकस्तत्रोपपन्नकाः–उत्पन्ना ऊर्ध्वोपपन्नकाः। ठाणा० ५७। सौधर्मादिभ्यो द्वादशभ्यः कल्पेभ्य ऊर्ध्वमुपपन्नाः ऊर्ध्वोपपन्नाः। जीवा० ३४६।

उणादि–उणप्रभृतिप्रत्ययान्तं पदम्। प्रश्न० ११७।

उणुयत्ता–स्थिता। आव० २७२।

उण्डी–पिण्डी। ज्ञाता० ९१।

उण्णए–उच्छ्रितं नतं–पूर्वप्रवृत्तं नमनमभिमानादुन्नतम्, उच्छ्रितो वा नयो–नीतिरभिमानादेवोन्नयो नयाभाव इत्यर्थः। भग० ५७२।

उण्णणं। नि० चू० प्र० १२४ अ।

उण्णमणी–उन्नामिनी–विद्याविशेषः। दश० ४१।

उण्णय–उन्नतः–प्रधानजातिकः। आव० २४०।

उण्णयविसालकुलवंसा–उन्नताः प्रधानजातित्वात् विशालाः–पितामहपितृव्याद्यनेकसमाकुलाः कुलान्येव वंशाः–अन्वया येषां ते उन्नतविशालकुलवंशाः। आव० २४०।

उण्णया–उन्नतानि–गुणवन्ति, उच्चानि। औप० ३।

उण्णयासणं–उन्नतासनं–उच्चासनम्। जीवा० २००।

उण्णागं–उर्णाकं, ग्रामविशेषः। आव० २११।

उण्णिए–अविलोममयम्। ठाणा० ३३८। ऊर्णाया इदम् औणिकम्। अनु० ३५।

उण्णियं–ऊरणो रोमेसु उण्णियं। नि० चू० प्र० १२६ अ।

उण्णेज्जं–उपनेयम्। दश० ८६।

उण्हं–उष्णं, उष्णरूपः। सूर्य० १७२। उपति–दहति जन्तुमिति उष्णम्। उत्त० २८। चतुर्थः परीषहः। आव० ६५६। उष्णः–घर्मः। ठाणा० ३४५।

उण्हकालो–उष्णकालः–ग्रीष्मः। ओघ० २१२।

उण्हयं–उष्णम्। आव० ८५८।

उण्हवणं–उष्णापनम्–उष्णीकरणम्। पिण्ड० ८२।

उण्हा–उष्णा। आव० ३८९।

उण्होदए–उष्णोदकं–स्वभावत एव क्वचिन्निर्झरादावुष्णपरिणामम्। जीवा० २५।

उण्होदय–उष्णोदकः। आव० ८५५।

उण्होला–पूतलिका। आव० ३१७।

उत्–प्राबल्येन, अपुनर्भवरूपतया वा। प्रज्ञा० ११२। प्राबल्ये। प्रज्ञा० ५५९।

उत्कम्पनदीपाः–ऊर्ध्वदण्डवन्तः। ज्ञाता० ४४।

उत्करिकाभेदः–समुत्कीर्यमाणप्रस्थकस्येवेति। ठाणा० ४७५।

उत्कर्षण। ठाणा० ३१२। आचा० २७७।

उत्कुट्टित–चिंचनकादिः। व्य० प्र० २८ अ।

उत्कुरुटिकादि–आसनविशेषः। ओघ० ४१। तुरुरादयादि। ओघ० ४१।

उत्क्षिप्तचरका–उत्क्षिप्तं–पाकपिठरात् पूर्वमेव दायकेनोद्धृतं तदे चरन्ति–गवेषयन्ति ते। सू० प्र० २५७ आ।

उत्क्षिप्यते। ओघ० २१५।

उत्तइया–उत्तेजिता–अधिकं दीपिता। दश० ११५।

उत्तणं–उत्तृणम्–उद्गततृणम्। प्रश्न० १४।

उत्तणा–दीर्घत्रि(तृ)णा। नि० चू० प्र० ३३६ अ।

उत्तणाणि–उत्तृणानि–ऊर्ध्वीभूतानि तृणानि दीर्घाणीतियावत् तानि यत्र मार्गे भवन्ति। बृ० द्वि० ७९ आ।

उत्ततकणगवन्ना–उत्तप्तकनकवर्णाः–ईषद्रक्तवर्णाः। प्रज्ञा० ९५।

उत्तम–उत्तमो गिरिषु सर्वतोऽप्यधिकमुन्नतत्वात्, मेरोश्चतुर्दशं नाम। जं० प्र० ३७५। गिरीणामुत्तम इति उत्तमः। मन्दरस्य चतुर्दशं नाम। सूर्य० ७८। मिथ्यात्वमोहनीयज्ञानावरणचारित्रमोहादित्रिविधतमसः उन्मुक्ता इति उत्तमाः। आव० ५०८। उपरिवर्ति। देवलोकाद्यपेक्षया प्रधानम्। उत्त० ३१९। ऊर्ध्वं तमसः–अज्ञानाद्यत्तथा, अज्ञानरहित इत्यर्थ.। ज्ञाता० ७९।

उत्तमकट्ठ–उत्तमकाष्ठा–प्रकृष्टावस्था। जं० प्र० ९८। उत्तमकाष्ठा–परमकाष्ठा, उत्तमावस्था परमकाष्ठा वा। भग० ३०५।

उत्तमकट्ठपत्त–उत्तमकाष्ठाप्राप्त–परमप्रकर्षप्राप्त। सूर्य० ११।

उत्तमकट्ठपत्ता–परमकाष्ठाप्राप्ता, उत्तमावस्थायां गता, परमकष्टप्राप्ता वा। भग० ३०५।

उत्तमट्ठ–अनशनाय। (आउ०)। उत्तमार्थ–अनशनम्। ओघ० १४। उत्तमः–प्रधानोऽर्थः–प्रयोजनं स उत्तमार्थः–मोक्ष। उत्त० ३५३। पर्यन्तसमयाराधनारूपः। उत्त० ४७९। मोक्षः। उत्त० ५२३।

उत्तमट्ठकालंमि–उत्तमार्थकाले–अनशनकाले। ओघ० २२७

उत्तमट्ठगवेसए–उत्तमार्थगवेषकः–उत्तमः–प्रधानोऽर्थः–प्रयो-

जन उत्तमार्थ, स च मोक्ष एव तं गवेषयति-अन्वेष यतीति । उत्त० ३५२ ।

उत्तमट्ठपत्ता – उत्तमार्थप्राप्ता, उत्तमान् तत्कालापेक्षयो त्कृष्टानर्थान्-आयुष्यकादीन् प्राप्ता उत्तमार्थप्राप्ता, उत्तम काष्ठा प्राप्ता वा-प्रकृष्टावस्थां गता । भग० २७७ ।

उत्तमसाहवेहिं-उत्तमसाधुभि । पउ० १-१० ।

उत्तमा-उत्तमा -प्रधाना, ऊर्ध्वं वा तमस इति उत्तमस । आव० ५०७ । पूर्णभद्रस्य तृतीयाग्रमहिषी । भग० ५०४ । ठाणा० २०४ । प्रथमरात्रिनाम । सूर्य० १४७ । जं० प्र० ४९१ ।

उत्तमार्घम्-परार्घं, महार्घं वा । दश० २२१ ।

उत्तमुत्तम-उत्तमोत्तमम्-अतिशयप्रधानम् । उत्त० ३१५ ।

उत्तमेणं-ऊर्ध्वं तमस -अज्ञानायत्तात्, तथा तेन ज्ञानयुक्तेन । उत्तमपुरुषासेवितत्वाद्वोत्तमेन । भग० १२० ।

उत्तयंतं-उद्गमान-ऊर्ध्वं व्यध्यमानम् । विपा० ७४ ।

उत्तर-वासकप्पकवली । नि० चू० प्र० ३५३ आ ।

उत्तरंग-उत्तराङ्ग । जीवा० ३५९ । उत्तराङ्ग-द्वारस्योपरि ति र्यग्व्यवस्थित काष्ठम् । जीवा० २०४ । जं० प्र० ४८ ।

उत्तर-उत्तरत-उत्तरदिग्वर्त्ती सर्वेभ्या भरतादिवर्षेभ्य इति, मेरनाम । जं० प्र० ३७६ । ऐरावते द्वात्रिंशत्तितमतीर्थंकर । सम० १५४ । अप्रवर्त्ती । विवादिदाक्लभावेऽनुल्लङ्घनीय । जं० प्र० ४६२ । भवधारणीयशरीरापेक्षया कार्योत्पत्त कालापेक्षया चोत्तरकालभावि । जं० प्र० ४०२ । कार्यम् । सूत्र० २८७ ।

उत्तरभरतदीवा – उत्तरस्यां दिशि यऽन्तरद्वीपा । भग० ४९२ ।

उत्तरउत्तरा-उत्तरोत्तरविमानवासिन, उत्तरो वा उपरितन स्थानवर्ती, उत्तर -प्रधाना येषु ते उत्तरोत्तरा । उत्त० १८७ ।

उत्तरकंचुइज्ज-उत्तरकञ्चुक -तनुत्राणविशेष । विपा० ४,१ ।

उत्तरकंचुइय उत्तरकञ्चुक -तनुत्राणविशेष । विपा० ४१ ।

उत्तरकरण – मूलत स्वहेतुभ्य उत्पन्नस्य पुनरुत्तरकाल विशेषाधानात्मकं करणम् । उत्त० १९४ । औदारिकवै क्रियाहारेषु तैजसकार्मणयोस्तत्सम्भवात्द्वोपाङ्गनामतामग्र गतामनि । उत्त० १९७ ।

उत्तरकिरियं-उत्तरक्रियम्-उत्तरा-उत्तरशरीराश्रया क्रिया-गतिलक्षणा यत्र गमने तदुत्तरक्रियम् । भग० २१० ।

उत्तरकुरा-उत्तरपूर्वरतिकरपर्वतस्य पश्चिमायामीशानदेवेन्द्र स्य रामाराख्या राजधानी । जीवा० ३६५ । ठाणा० २३१ । नेमनाथशिबिकानाम । सम० १५१ । उत्तरकुरु । आव० ११६ । मेरोर्जम्बूद्वीपगत उत्तरत उत्तरकुरुनामा विदेह । जं० प्र० ३१० ।

उत्तरकुरु-कुरुविशेष । जीवा० २६६ । वापीनाम । जं० प्र० ३७० । नेमनाथस्य शिबिका । उत्त० ४९२ । साकेत नगरे उद्यानम् । विपा० ९५ । आव० ११५ । क्षेत्रवि शेष । ठाणा० ५८ । अकर्मभूमिविशेष । प्रज्ञा० ५० ।

उत्तरकुरुकूडे-उत्तरकुरुदेवकूट । जं० प्र० ३३७ ।

उत्तरकुरुद्दहे-उत्तरकुरौ महाह्रद । ठाणा० ३२६ । उत्तर कुरुह्रद ह्रदविशेष । जं० प्र० ३३० ।

उत्तरकुरुवत्तव्वया उत्तरकुरुवक्तव्यता । भग० ७०१ ।

उत्तरकुराए-उत्तरकुरुषु । पउ० ३१-८ ।

उत्तरकुरुकूड – उत्तरकुरुकूट -गन्धमादनपर्वते चतुर्थकूट । जं० प्र० ३१३ ।

उत्तरकूलग-गङ्गाया उत्तरकूले ग च वास्तव्यम् । भग० ५१९ । औप० ९० ।

उत्तरकूला– उत्तरकूलगा-गङ्गोत्तरकूलवास्तव्यास्तापसा । निरय० ९५ ।

उत्तरखत्तियकुंडपुर-नगरविशेष । आचा० ४२१ ।

उत्तरगंधारा-उत्तरगान्धारा-गान्धारस्वरस्य पञ्चमी मूर्छना । जीवा० १९३ । गान्धारग्रामस्य पञ्चमी मूर्छना । ठाणा० ३९३ ।

उत्तरगब्भो-उत्तरगर्भ -वातविशेष । आव० ३८७ ।

उत्तरगुण-उत्तरगुण, पौरुष्यादिमार्धयावमनकोपवासादितया रूप । विशे० १०१६ ।

उत्तरगुणनिर्मित – पुरुषप्रयोगव्यापारनिर्वर्तितानि द्रव्याणि । आव० ७०३ ।

उत्तरगुणनिर्वर्त्तित – यस्तु रागानन्तरकर्मादिस्वातिरिक्त म । बृ० प्र० १४३ अ ।

उत्तरगुणपच्चक्खाण – उत्तरगुणप्रत्याख्यानम् । आव० ८३९ ।

उत्तरगुणलद्धि – उत्तरगुणाः–पिण्डविशुद्ध्यादयस्तेषु चेह प्रक्रमात्तपो गृह्यते ततश्च उत्तरगुणलब्धि–तपोलब्धिम्। भग० ७१५।

उत्तरगुणा–दशविधप्रत्याख्यानरूपाः। भग० ८९४। नि० चू० द्वि० १६६ अ। मूलगुणापेक्षया स्वाध्यायादीन। उत्त० ५३६।

उत्तरगुणे–उत्तरगुणविषयं–शीतकृत्यादि। आव० ३२५।

उत्तरचूलियं–उत्तरचूडम्, यद् वन्दनं कृत्वा पश्चान्महता शब्देन मस्तकेन वन्द इति भणति, कृतिकर्मणि एकोनविंशतमो गुणः। आव० ५४४।

उत्तरज्झ–उत्तराध्यः–उत्तराध्ययनम्। तृतीया निर्युक्तिः। आव० ६१।

उत्तरज्झयणा–उत्तराध्ययनानि। आव० ७१९।

उत्तरज्झयणाई – उत्तराध्ययनानि–सर्वाण्यपि चाध्ययनानि प्रधानान्येव तथाऽप्यमून्येव रूढ्योत्तराध्ययनशब्दवाच्यत्वेन प्रसिद्धानि। नंदी २०६।

उत्तरज्झाए–उत्तराध्यायाः–उत्तराः–प्रधाना अधीयन्त इत्यध्यायाः–अध्ययनानि तत उत्तराश्च ते अध्यायाश्च। उत्त० ७१२।

उत्तरड्ढभरहकूड – उत्तरार्द्धभरतनाम्नो देवस्य निवासभूतं कूटं उत्तरार्धभरतकूटम्। जं० प्र० ७१।

उत्तरणं–निस्तरे। नि० चू० द्वि० ७७ अ। एहाए येव अण्णो य गम्मा मे उत्तरणं। नि० चू० द्वि० ७७ आ। तुंबोडुपादिभिर्नौवर्जितैर्यद् उत्तीर्यते तद् उत्तरणम्। बृ० तृ० १६१ अ। जत्थ तरंतो जले संघट्टेति तं सव्वं उत्तरणं भणति। नि० चू० द्वि० ७८ आ।

उत्तरद्दारिता–उत्तरद्वारिका। ठाणा० ४२८।

उत्तरद्धे–उत्तरार्द्धे–उत्तरभागे। जं० प्र० ४८२।

उत्तरपओगकरणं–उत्तरप्रयोगकरणं, जीवप्रयोगकरणद्वितीयभेदः। आव० ४०८।

उत्तरपट्टो–उत्तरपट्टकः। ओघ० २१७। उत्तरपट्टः। ओघ० ८३।

उत्तरपदव्याहतं–सत्यानतिलक्षणे द्वितीयो भेदः। आव० २८१।

उत्तरपरिकम्मिज्जयते–उत्तरार्ध्यते। आव० ७६९।

उत्तरपासो–उत्तरपार्श्वः। जीवा० २०४, ३५०।

उत्तरपुरच्छिमिल्लाओ–उत्तरपूर्वस्याः, उत्तरपूर्वस्या दिशः। जीवा० १४४।

उत्तरपुरच्छिमे–औत्तरपौरस्त्यः, उत्तरपूर्वायां दिग्विभाग–ईशानकोणः। सूर्य० २।

उत्तरपुरत्थिमेल्लं–उत्तरपूर्वं, ईशाने कोणे इत्यर्थः। सूर्य० २१।

उत्तरपुव्वा–ईशानकोणः। आव० ६३०।

उत्तरफग्गुणी–उत्तराफाल्गुनी, इत्येका। आव० २५५।

उत्तरबलिस्सहगणे–गणविशेषः। ठाणा। ४५१।

उत्तरभद्दपदाः–प्रोष्ठपदाः। सूर्य० ११४।

उत्तरमंदा –उत्तरमन्दाभिधा गान्धारस्वरान्तर्गता सप्तमी मूर्च्छना। जै० प्र० २८। मध्यमग्रामस्य प्रथमा मूर्च्छना। ठाणा० ३९३। गान्धारस्वरस्य सप्तमी मूर्च्छना। जीवा० १९३।

उत्तरमेहुर–वणिग्विशेषः। नि० चू० प्र० ११० अ।

उत्तरवाए–उत्तरवादः–उत्तरवातः। आचा० १४३।

उत्तरवेउव्विए–उत्तरवैक्रियम्। प्रज्ञा० २१८।

उत्तरवेउव्वियं–उत्तरवैक्रियम्, उत्तरगुणप्रत्ययं निजस्वभावविलक्षणम्, वैक्रियं विरूपं तेन क्रियते वैक्रियम्। विशिष्टरूपम् विशिष्टाभरणभूषितसर्वाभरणभूषितं प्रीतिजनकरूपतया प्रत्येकमतिमनोहारिरमणीयकम्। ज्ञा० प्र० १९५ आ। उत्तरवैक्रियम्–पूर्ववैक्रियाऽपेक्षयोत्तरकालभावि वैक्रियम्। भग० ७२।

उत्तरवेउव्विया–उत्तरवैक्रिया, तद्भवगोत्रकालं कर्मनिमित्तं वा क्रियते सा। अनु० १६३।

उत्तरसत्तासुमो–उत्तरसत्यामृषः, सत्यामृषावादभेदः। आव० ३८६।

उत्तरसाढा – उत्तराषाढा,–अवशिष्टं नक्षत्रम्। आव० २५५।

उत्तरसाला – अश्वनिर्गमनिर्मिता स्थानाश्रयो वा माला उत्तरमाला। नि० चू० प्र० २६० अ।

उत्तरा–उत्तरमथुरा। आव० ६८८। उत्तरशाला। आव० १९५। उत्तराभाद्रपदा–उत्तराफाल्गुनी "उत्तराषाढा"। सूर्य० १३०। उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तरभद्रपदा। जं० प्र० ५०२। उत्तरमथुरा। आव० ३५३। कौण्डिन्य-

भूतेर्मगिनी। आव० ३२४। शिवभूतेर्भगिनी। विशे० १०२२। मध्यमग्रामस्य तृतीया मूर्छना। ठाणा० ३९३।
उत्तराधर्यम्] भग० २६८।
उत्तरापथे-देशविशेषः। नि० चू० तृ० ४४ अ।
उत्तरावक्कमणे-उत्तरस्यां दिश्यपक्रमणं-अवतरणं यस्मात्तद् उत्तरापक्रमणम्-उत्तराभिमुखं पूर्वं तु पूर्वाभिमुखमासीदिति। भग० ४७७। उत्तरस्यां दिश्यपक्रमणं-अवतरणं यस्मात्तदुत्तरापक्रमणं-उत्तराभिमुखम्। ज्ञाता० ५६।
उत्तरावह-उत्तरापथः, उत्तरदिग्भागः। आव० ९९। नि० चू० प्र० ९६ आ। उत्तरदिग्गता देशाः। विशे० ६२४। उत्तरदिक्सम्बन्धी देशः। आव० ८३०, २९५। बृ० द्वि० २२७ अ। नि० चू० प्र० १६ अ।
उत्तरासंग-उत्तरासङ्गः, वक्षसि निर्यग्विस्तारितवस्त्रविशेषः। जं० प्र० १८७। उत्तरीयस्य देहे न्यासविशेषः। भग० ११८।
उत्तासणगं-उत्त्रासनकं-भयङ्करम्। ज्ञाता० १३३।
उत्तरासमा-मध्यमग्रामस्य चतुर्थी मूर्छना। ठाणा० ३९३।
उत्तरासाढा-उत्तराषाढानां-उत्तराषाढापर्यन्तानां नक्षत्राणाम्। सूर्य० ११४।
उत्तरासाढाणक्खत्ते-उत्तराषाढानक्षत्रम्। सूर्य० १३०।
उत्तरिसए-उत्तरीतुं-लङ्घयितुम्। ठाणा० ३०९।
उत्तरिज्ज-उत्तरीयम्-उत्तरासङ्गः। जं० प्र० १८९। भग० ३१९। वसनविशेषः। भग० ४६८। उपरिकायाच्छादनम्। ज्ञाता० २७।
उत्तरिज्जयं-उत्तरीयकं-उपरितनवसनम्। उपा० ५०।
उत्तरीकरणं-उत्तरकरणं पुनः संस्कारद्वारेणोपरिकरणम् उच्यते, उत्तरं च तत् करणं च इत्युत्तरकरणं, अनुत्तरमुत्तरं क्रियत इत्युत्तरीकरणम्। आव० ७७९।
उत्तरीयं-प्रावरणं प्रच्छदपटीसर्थं। उत्तरीयं पुनर्यत् सदुपरि प्रक्षीप्यते। बृ० प्र० ९८ अ।
उत्तरोट्ठरोमा-दाढियाओ। नि० चू० प्र० १९० अ।
उत्तरो-उत्तरग्रहणात् सउत्तरसम्मदिट्ठिग्गहणं। नि० चू० प्र० ६३ अ।
उत्ताणग-उत्तानः। आव० ६४८। उत्तानकाः-ऊर्ध्वमुखशायिनः। जं० प्र० २३९।
उत्ताणतो-उत्तानकः। उत्त० २४४।
उत्ताणयं-उत्तानकं-उत्तानीकृतम्। प्रज्ञा० १०७। उत्तानकम्-ऊर्ध्वमुखम्। उत्त० ६८५। भग० १२५।
उत्ताणसेज्जए। निरय० ३४।
उत्ताणा-उत्ताना। ठाणा० २९९।
उत्तानं-स्पष्टम्। प्रज्ञा० ५९९। प्रतलम्। ठाणा० २७८। स्वच्छतयोपलभ्यमध्यस्वरूपत्वम्। ठाणा० २७८।
उत्तानीकृतं। सूर्य० ३६।
उत्तारंती-अवतारयन्ती। आव० ६७६।
उत्तारो-उत्तारः-अधस्तादवतरणम्। जीवा० २६९। जलमध्याद्बहिर्विनिर्गमनम्। जीवा० १९७।
उत्तालं-उत्-प्राबल्यार्थे इत्यतितालमस्थानतालं वा। ठाणा० ३९६। अनु० १३२। उत्-प्राबल्येन अतितालं अस्थानतालं वा। जं० प्र० ४०। जीवा० १९४।
उत्तालिज्जंताणं-आलपनम्। राज० ४६।
उत्तासणओ-उद्वेगजनकः। ठाणा० ४६१।
उत्तासणयं-उत्त्रासनिका-स्मरणे सत्युद्वेगजनिका। भग० १७५।
उत्तासिया-उत्त्रासिता-आस्फालिता। भग० १५४।
उत्तिंग-उत्तिङ्गः-पिपीलिकासन्तानकः। आचा० २८९। तृणाग्रः। आचा० ३२२। रन्ध्रम्। आचा० ३७९। उदगे हस्थाहिणा पिहेति। नि० चू० तृ० ६३ आ। कीटिकानगरम्। दश० १७५। सर्पच्छत्रादिः। दश० २२१। गर्दभाकृतिजीवविशेषः, कीटिकानगरं वा। आव० ५७३। कीलियावासो। नि० चू० प्र० २५५ आ। कीडयणगरगो उत्तिगो, फडगहभो वा। नि० चू० द्वि० ८३ अ। कीटिकानगरम्। बृ० तृ० १६६आ। छिद्रं। नि० चू० तृ० ६३ आ। कीडियानगरयं। दश० चू० ८०।
उत्तिंगसुहुम-उत्तिङ्गसूक्ष्मं-कीटिकानगरम्। दश० २३०।
उत्तिण्णो-उत्तीर्णः-अवतीर्णः। ओघ० २०।
उत्तिन्न-अवतीर्णः। दश० १९५।
उत्तिमं-उत्तमम्-श्रेष्ठम्। आव० ४८७।
उत्तिमट्ठो-उत्तमार्थ-अनशनम्। बृ० द्वि० १०० अ। उत्तमार्थ-कालधर्मः। आव० ६२६। भक्तप्रत्याख्यानम्। आव० ५६३।
उत्ती-उक्तिः, शब्दकरणम्। आव० ४६४।
उत्तुअणा-उत्तेजना। बृ० द्वि० ७२ आ।

उत्तुरउ-(देशी०) गर्वे। व्य० प्र० २१० आ।
उत्तुइया-उत्तेजिता। बृ० तृ० २७ आ।
उत्तुडियाइ-राज्यादि। आव० ५५५।
उत्तुप्पियं-उत्तुप्पितं-स्नेहितम्। प्रश्न०। ५९।
उत्तेड-बिन्दुः। पिण्ड० ७०।
उत्तेसा-अपवर्त्य। आव० ६२४।
उत्थरंत-आस्तृण्वन्-आच्छादयन्। प्रश्न० ४७।
उत्थरमाणो-अभिभवन्। आव० ५६७।
उत्थल्ल – उन्नतानि-स्थलानि धूल्युच्छ्रयरूपाणि। जं० प्र० १६८।
उत्थल्लं। ओघ० १६२।
उत्था-उत्थानं-मूलोत्पत्तिम्। उत्त० ४७५।
उत्थाण-अतिसारः। व्य० द्वि० २७४ अ।
उत्थिय-यूथं-सद्भावान्तरं, तीर्थान्तरमित्यर्थः। उपा० १२।
उत्थियवादः-उत्थितस्तद्वादः। आचा० २०३।
उत्थिय-उत्थियः-यूथिकः। भग० २२४।
उत्थुभण-अवस्तोभनम्, अनिष्टोपशान्तये निष्ठीवनेन थुथुक-रणम्। बृ० प्र० २१५ अ।
उत्पला-हस्तिनागपुरे भीमस्य भार्या। ठाणा० ५०७।
उत्पलिनीकन्द-पद्मनीकन्दः। प्रज्ञा० ३७।
उत्पातनिपातप्रसक्तसंकुचितप्रसारितरेकरचितभ्रान्तसम्भ्रान्तः – एकत्रिंशत्तमो नाट्यविधिः। जीवा० २४७।
उत्पादपूर्व-प्रथमपूर्वनाम। उत्त० ३६२।
उत्पादसभा-उत्पादभवनविमानभाविनी सभा। प्रश्न० १३५।
उत्पादिताच्छिन्नकौतूहलं-स्वविषये श्रोतॄणां जनितमविच्छिन्नं कौतुकं येन तत्तथा। षड्विंशतितमो वचनातिशयः। सम० ६३।
उत्प्रासनं। उत्त० ४३४।
उत्प्रासयेत्-आचा० १२९।
उत्प्रासवचनं। नि० चू० प्र० १०८ आ।
उत्प्रास्यमान-अपत्रपमाना-गर्वोध्मातो महता चारित्रमोहेन मुधानि ससारमोहेन बोधात इति। आचा० २१६।
उत्प्लुत-भीतः। ज्ञाता० १६१।
उत्प्लुत्य-बुद्ध्या गत्वा। सूर्य० ४७।
उत्सफलय-अनुजानीहि। ओघ० ६८।
उत्सर्गसमितिः-स्थण्डिले स्थावरजङ्गमजन्तुवर्जिते निरीक्ष्य प्रमृज्य च मूत्रपुरीषादीनामुत्सर्गः। तत्त्वा० ९-५।
उत्सर्गसूत्रं। बृ० प्र० ५१ आ।
उत्सर्गापवादसूत्रं। बृ० प्र० ५१ आ।
उत्सर्पण-क्रियाविशेषः। आचा० ३६४।
उत्सादितं। उत्त० ६५।
उत्साहः-सूत्रार्थपरावर्तनायामभियोगः। बृ० प्र० ११३ आ।
उत्सिक्तं-काञ्जिकस्य सौवीरिणीतो यद् निष्काशनं तत्। बृ० प्र० २७५ अ।
उत्सिक्ता। उत्त० ३११।
उत्सूर वेलातिक्रमः। पिण्ड० ७१। विशे० ६३७।
उत्सृजति-मुञ्चति, निसृजति। विशे० २०६।
उत्सृ(त्स्तृ)तम्-प्रासादादि। आव० ८२६।
उत्सृष्टम्-उत्सर्जनम्-त्यागः। आचा० ३६२।
उत्सेधबहुलं-उत्सेधाख्यो नाभेरधस्तनो देहभागो गृह्यते, ततः सह आदिना-नाभेरधस्तनभागेन यथोक्तप्रमाणलक्षणेन वर्तत इति सादि, उत्सेधबहुलमिति भावः। जीवा० ४२।
उदंक-उदङ्को-येनोदकमुदच्यते। जं० प्र० १०१। जीवा० २६६।
उदंचमम्-अरघट्टघटीनिवहादिभिरुत्सेचनम्। उत्त० ५९९। पिण्ड० १५३।
उदंत-सरीरवट्टमाणी, वत्ता। नि० चू० तृ० ११३ अ। उदन्तः-वृत्तान्तः। आव० ६९२।
उदंतवाहगो-उदन्तग्राहकः, वृत्तान्तग्राहकः। आव० ५३६।
उदंतवाहतो-उदन्तवाहकः-दूतः। उत्त० १०८।
उदइए-उदयः-कर्मणां विपाकः स एवौदयिक-क्रियामात्रं, उदयेन निष्पन्न- औदयिकः। भग० ६४९, ७१२। औदयिकः-ज्ञानावरणादीनामष्टानां प्रकृतीनामात्मीयात्मीयस्वरूपेण विपाकतोऽनुभवनमुदयः स एव, यथोक्तेन वेदयेन निष्पन्नः। अनु० ११४।
उदई-उदयः-अनुक्रमोदितस्यैवेति। भग० ५१२। अनुक्रमगतानामुदयः। भग० ९०३।
उदउल्ल-उदकार्द्रं, यद् बिन्दुसहितं भाजनादि गलद्बिन्दुरिति। ओघ० १७०। स्पष्टोपलभ्यमानजलसंसर्गं, अभ्य-

यम्रक्षिता चतुर्थभेद । पिण्ड० १४९ । उच्चैनार्द्र । अनु० १६०॥ गउदबिन्दु । आचा० ३४६, ३७९।

उदउल्लादि-उदकार्द्रादि। आव० ५२।

उदए-पर्वगवनस्पतिविशेष । प्रज्ञा० ३३। उदय । ओघ० ११३। उदक -अन्ययूथिक । भग० ३२३। पेडालपुत्रो निर्ग्रन्थ । सूत्र० ४०९। षष्ठ आजीविकोपासक । भग० ३६९ । जलरुहवनस्पतिविशेष । प्रज्ञा० ३१, ३३। जम्बूद्वीपभरते आगामिसप्तमतीर्थंकर । सम० १५३। तृतीयतीर्थकृत्पूर्वभवनाम। सम० १५४। उदय -जीवगतो लेश्यापरिणाम, फलप्रदानाभिमुख्यलक्षणं कर्म। उत्त० ३५। उदय -विपाकवेदनानुभवरूप । पिण्ड० ४१। उदक । प्रश्न० २७। निर्ग्रन्थविशेष । सूत्र० ४०७।

उदएचरा-उदकचरा -उदके चरन्तीति उदकचरा -पूतरक च्छदनकल्लोडणकनसा मत्स्यकच्छपादय । आचा० २३८।

उदकं-जलरुहविशेष । आचा० ?६। जलरुहभेद । आचा० ५७।

उदकगृहम्-उदकभवनम्। आचा० ३४१, ?३८।

उदकप्रतिष्ठापनमात्रक-उपकरणधावनोदकप्रक्षेपस्थानम्। आचा० ३४१।

उदकरज-उदकरेणुसमूह । औप० ४७। नावा० १९१।

उदकार्द्र-बिन्दुसहित। बृ० प्र० २८२ आ।

उदग-उदक। सूत्र० ३०७। अणनवणप्पइ। दश० चू० १२७। नि० चू० द्वि० ७९ अ। उदकम्-अनन्तवनस्पति विशेष । दश० १९९। नगरपरिखाजलम्। ज्ञाता० १०। जलाशयमानम्। भग० ९२। जनपदसलवे पय उद कादिवर्णनं। दश० २०८। सुजुदकोपमावत सुखसम्पा नमुपभोकव्यम्। माथीरपमानम्। दश० १९। शिरापा नीयम्। दश० १५३।

उदगगब्भे-उदकगर्भ -कालान्तरेण जलप्रवर्षणहत । भग० १३३।

उदगजोणिया-उदकस्य योनय -परिणामकारणभूता उद कयोनय त एवोदकयोनिका-उदकजननस्वभावा । ठाणा० १४२ ।

उदगणाए-षष्ठाङ्गे द्वादशं ज्ञातम्। उत्त० ६१४। उदक-नगरपरिखाजलं तदेव ज्ञात-उदाहरणं उदकज्ञातम्। ज्ञाता० १०। सम० ३६। ज्ञाताया द्वादशमध्ययनम्। आव० ६५३।

उदगतीर-उदगागाराता जत्थ भिज्जति उदगं त उदगतीरं दूरंपि गज्जति उदगं तम्हा ण होइ त उदगतीरं, तो जत्थियं णदीपूरेण अक्कमति त उदगतीरं अहवा जहिं ठिएहिं जल धीमति अहवा णदीए णडीए उदगतीरं अहवा जहिं ठितो जलछिट्टेण सिंचति सिंधुगंगादिणा तं जलतीरं, अहवा जावतियं विविभो फुसति अहवा जावतितं जलेण फुस त उदगतीरं। नि० चू० तृ० १६ आ।

उदगत्ताभा-गौतमगोत्रान्तरभेद । ठाणा० ३९०।

उदगदोणी-उदगदोणी वा अरहट्टस्स भवति जीए उवरि घडीओ पाणियं पाडेंति । अहवा घरंगणए कट्ठमया अप्पोदएस देसेसु कीरइ तत्थ मणुस्सा ण्हावात। दश० चू० ११०। जलभाजनं यत्र तप्तं लोहं शीतलीकरणाय क्षिप्यते। भग० ६९७। उदकद्रोणि -अरहट्टजलधारिका। दश० २१८ आ।

उदगपउरो-उदकप्रचुर -देशविशेष सिन्धुविषयवत्। बृ० तृ० ११८ आ।

उदगपडण-उदकपतनम्। आव० ८७३।

उदगबिंदु उदकबिन्दु । अनु० १६१।

उदगभाविया-जा उल्ले छूढपुव्वा सा। नि० चू० प्र० ४६ अ।

उदगभासो - उदकभास -नागकभुजगेन्द्रस्यावासपर्वत । नावा० ३११।

उदगमच्छ-उदकमत्स्य -इन्द्रधनु खण्डम्। भग० १९६। इन्द्रधनुष खण्डम्। जीवा० २८३। इन्द्रधनु खण्डानि। अनु० १२१।

उदगमाला - उदकमाला - समपालीयोपरिभूता माला। जीवा० ३२४। उदकशिखा वेलेत्यर्थ । ठाणा० ४८०।

उदगवलणी। नि० चू० प्र० २४ अ।

उदगवारगसमाण-उदकवारकसमान-लघुपानीयघटकसमा नम्। जीवा० १२२।

उदगावत्त-उदकावर्तादक्षिणलोम य अवगाय निष्ठतिदत्यर्थ । अनु० १६१।

उदग्ग-उदग्र -उन्नतपर्यवसानेन उत्तरोत्तरं वृद्धिमान्। भग० १२१। ऊर्ध्वं मसृणितशिर इत्यर्थ प्रधान वहि । जीवा०

३४३। उदग्रः-उग्रः। ज्ञाता० ६६। उदग्रः-तीव्रः। ज्ञाता० ७६।
उदड्ढे-रत्नप्रभायां अपक्रान्तमहानरकः। ठाणा० ३६५।
उदतण-उदयनं-उदयगामि, प्रवर्द्धमानं। ठाणा० ३४२।
उदत्त-तुदनम् भूमिस्फोटनशस्त्रविशेषः। आव० ८२९।
उदात्तः-उन्नतभाववान्। भग० १२५।
उदधि-जलनिचयः। ठाणा० १७७।
उदधिघनं। जीवा० १९१।
उदपानं-कूप.। बृ० प्र० १८३ अ।
उदप्पील-उदकोत्पीलः-तडागादिषु जलसमूहः। भग० १९९।
उदब्भेया-उदकोद्भेदः-गिरितटादिभ्यो जलोद्भवः। भग० १९९।
उदय-उदीरणावलिकागततत्पुद्गलोद्भूतसामर्थ्यता। आव० ७७। आयामः। भग० १८७। पताका। भग० १८७। पेढालपुत्र। पार्श्वजिनशिष्यः। ठाणा० ४५७। भाविमा। नि० चू० प्र० २६४ आ।
उदयट्ठी-उदयार्थी, लाभार्थी। सूत्र० २९४।
उदयण-उदयनः-वीतावरसराजः। उत्त० १४२।
उदयणकुमारं-उदयनकुमारं, मृगावतीपुत्रः। आव० ६७।
उदयणमाया-उदयनमाता, भावप्रतिक्रमणदृष्टान्ते मृगावती आर्या। आव० ४८५।
उदयनिप्पन्ने-औदयिकभावस्य द्वितीयभेद.। भग० ७२२।
उदयपहो-उदकपथः, लोकानां जलानयनमार्गः। आव० ६४०।
उदयभासे-वेलन्धरनागराजस्यावासः। ठाणा० २२६।
उदयवद्दलं-उदकवर्द्दलं भाविरेणुसन्तापोपशान्तये। आव० ३३०।
उदयवत्तित्वं-समुदयः, समुदायो वा। प्रश्न० ६३।
उदयास्ताभ्तरं-तापक्षेत्रम्। जं० प्र० ४४२। प्रकाशक्षेत्रं, तापक्षेत्रम्। जं० प्र० ४५५।
उदरं। आचा० ३८।
उदरपोप्पयं-उदरामर्शनम्। आव० ६६।
उदरवलिमंसं-उदरवलिमांसं, उदरोपरि या वलयाकारा मांसरेखा तस्या मांसं। आव० ६७८।
उदरि-वा-पित्तादिमनुष्यमहोदरं तदस्यास्तीत्युदरी। आचा० २३५। उदरी-जलोदरी। प्रश्न० १६१।
उदवाहा-उदकवाहाः-अपकृष्टान्यल्पान्युदकवहनानि। भग० १९९।
उदसि-उदश्वित्। नि० चू० प्र० ६ अ।
उदहिकुमारा-उदधिकुमारा.-वरुणस्याज्ञोपपातवचननिर्देशवर्तिनो देवाः। भग० १९९। भुवनपतिदेवविशेषः। प्रज्ञा० ६९।
उदहिकुमारीओ-उदधिकुमार्यः-वरुणस्याज्ञोपपातवचननिर्देशवर्तिन्यो देव्यः। भग० १९९।
उदहिनामाणं-उदधिनाम्नाम्-अर्णवसुद्रादाम्। आचा० २६२।
उदहीसरिसनामाणं-उदधिः-समुद्रस्तेन सदृक्-सदृशं नाम-अभिधानमेषामुदधिसदृग्नामानि-सागरोपमाणि उत्त० ६४७।
उदाइ-उदायी-कूणिकराज्ञो हस्ती। भग० ३१७। नृपविशेषः। आव० ६८७। भग० ६७३, ६७५।
उदाइज्जा। भग० १८३।
उदाइमारक-साधुवेषधारक.। नि० चू० प्र० २९३ आ।
उदाइमारय-श्रमणवेषधारको विनयरत्नमुनिः। नि० चू० तृ० २३ आ।
उदाइयाए-असिवं उदाइयाए अभिद्दुतं। नि० चू० प्र० ९७ अ।
उदात्तं-उदात्तत्वं-उच्चैर्वृत्तिता। द्वितीयो वचनातिशयः। सम० ६३।
उदायण-वीतभयराजा। भग० ६१८। नि० चू० द्वि० १४५ अ। शतानीकराजपुत्रः। विपा० ६८। भग० ५५६। अन्तिमराजर्षि। ठाणा० ४३०। उदायनः-विगतिद्वारे वीतभयनगराधिपतिः। आव० ५३७। आव० २९८। सौवीरराजवृषभो राजा। उत्त० ४४८। प्रद्योतराज्ये गान्धर्वनियाप्रधानः। आव० ६७३। निर्भयनगराधिपतिः। प्रश्न० ८९। अन्तिमराजर्षिः। बृ० प्र० १६६ अ।
उदायितकुमारो-उदायिकुमारः-पद्मावतीपुत्रः। आव० ६८३।
उदायिनृपः-यः कृत्रिमसाधुभिर्मारितः। सूत्र० २५०। आव० ५२९। सूत्र० ३६५। आचा० ९।

उद्दायिनृपमारक – श्रमणवेषधारको मुनिः । बृ० प्र० २०४ अ । विशे० १२५५ । ठाणा० १८५ ।

उद्दायिमारगो – उद्दायिमारकः–श्रमणवेषधारको मुनिः । नि० चू० द्वि० ३९ अ, ४१ अ ।

उद्दायी–कूणिकराजस्य हस्तिराजः । भग० ७२० । कोणिकपुत्रः । ठाणा० ४५६ ।

उद्दार–उदारं–उद्भटम् । जं० प्र० २०३ । उदारत्वं–अभिधेयार्थस्यातुच्छत्वं गुम्फगुणविशेषो वा । द्वाविंशतितमो वचनातिशयः । सम० ६३ । शोभनं । ठाणा० २३३ । प्रधानम् । प्रज्ञा० २६९ । ठाणा० २९५ । तीर्थकरगणधरशरीरापेक्षया शेषशरीरेभ्यः प्रधानं, सातिरेकयोजनसहस्रमानत्वाच्छेषशरीरेभ्यो महाप्रमाणं वा । अनु० १९६ । औदार्यवान् । भग० १२५ ।

उद्दाला–उदाराः–महान्तः । उत्त० ४१९ ।

उद्दाहड–भणिया । नि० चू० तृ० ४९ आ ।

उदाहरण–चरितकल्पितभेदम् । आव० ५९७ । कथनम् । उत्त० ३१२ । उदाहरणम्–साध्यसाधनान्वयव्यतिरेकप्रदर्शनमुदाहरणं, दृष्टान्तः । दश० ३३ ।

उदाहरे–उदाहरेत्–उदाहृतवान् । उत्त० २४१ ।

उदाहु – उताहो निपातो विकल्पार्थः । भग० १७ । भग० २३७ । उक्तवान् । आचा० ११८ । आहोश्वित् । उपा० ३८ ।

उदिए–उदितः–उदयं प्राप्तः, स्थित इत्यर्थः । जं० प्र० ५२८ ।

उदिओदए–उदितोदयः, कायोत्सर्गदृष्टान्ते राजा । आव० ७९९ । पारिणामिकीबुद्धौ पुरिमतालपुरे राजा । आव० ४३० । उदितोदितः–पुरिमतालनगराधिपतिः । विपा० ५८ । श्रीकान्तापतिः । नंदी १६६ ।

उदिक्खंते–प्रतीक्ष्यमाणः । सू० तृ० ११६ आ ।

उदिण्णं–उदीर्णम्–पीडितम् । आव० ८६३ । विपाकोदयमागतम् । प्रज्ञा० ४०३ ।

उदिन्न–उदीर्णम्–स्वत उदीरणाकरणेन वोदितम् । भग० ९० ।

उदिन्नमोह–उदीर्णमोहः–उत्कटवेदमोहनीयः । भग० २२३ ।

उदीणपाईणं–उदगेव उदीचीनं प्रागेव प्राचीनं उदीचीनं च तदुदीच्या आसन्नत्वात् प्राचीनं च तत्प्राच्याः प्रत्यासन्नत्वाद् उदीचीनप्राचीनम्–दिगन्तरं क्षेत्रदिगपेक्षया पूर्वोत्तरदिगित्यर्थः । भग० २०७ । उदीचीनं च तदुदीच्या आसन्नत्वात् प्राचीनं च प्राच्याः प्रत्यासन्नत्वादिति । जं० प्र० ४८० ।

उदीणवाए–यः उदीच्या दिशः समागच्छति वातः स उदीचीनवातः । जीवा० २९ । यः उदीच्या दिशः समागच्छति वातः, स उदीचीनवातः । प्रज्ञा० ३० ।

उदीर–उदीरिंसु–उदयप्राप्ते दलिके अनुदितांस्तान् आकृष्य करणेन वेदितवन्तः । ठाणा० २८९ । उदीरितवन्तः–अध्यवसायवशेनानुदीर्णोदयप्रवेशनतः । ठाणा० १७९ ।

उदीरइ–उदीरयति–प्राबल्येन प्रेरयति, पदार्थान्तरं प्रतिपादयति वा । भग० १८३ ।

उदीरण – अनुदयप्राप्तस्य करणेनाकृष्योदये प्रक्षेपणमिति । ठाणा० १०१, १९५ । उदीरणम्–अनुदितस्य करणविशेषादुदयप्रवेशनम् । भग० ५३ । उदीरणाकरणवशतः कर्मपुद्गलानामनुदयप्राप्तानामुदयावलिकायां प्रवेशनम् । प्रज्ञा० २९२ । करणेनाकृष्य दलिकस्योदये दानम् । ठाणा० ४१७ ।

उदीरणा–अप्राप्तसमये उदयप्रापणं सैव उदीरणा । जं० प्र० १६८ । अप्राप्तकालफलानां कर्मणामुदये प्रवेशनम् । ठाणा० २२१ ।

उदीरणाभवियं–उदीरणाभविकम्–तत्र भविष्यतीति भवा सैव भविका, उदीरणा भविका यस्येति, उदीरणायां वा भव्यं–योग्यमुदीरणाभव्यमिति । भग० ५८ ।

उदीरिए–उदीरणम्–स्थिरस्य सतः प्रेरणम् । भग० १८ । उदीरणा–उदीरणा नाम अनुदयप्राप्तं चिरेणाऽऽगामिना कालेन यद्वेदयितव्यं कर्मदलिकं तस्य विशिष्टाध्यवसायलक्षणेन करणेनाकृष्योदये प्रक्षेपणं । भग० १५ ।

उदीरिय–उत्–प्राबल्येनेरितं–प्रेरितं उदीरितं । जीवा० ११३ ।

उदीरिया – उदीरिता–स्वभावतोऽनुदितान् पुद्गलानुदयप्राप्ते कर्मदलिके करणविशेषेण प्रक्षिप्य यान् वेदयते । भग० २४ । उदीरिता–उदयमुपनीता, वेदिता । भग० १८५ ।

उदीरेंत–उदीरयन्तं–वस्त्वन्तरं प्रेरयन्तम् । ठाणा० १८५ ।

उदीरेइ–उदीरयति–भणति, प्रवर्तयति । ठाणा० १९७ ।

उदुम्बर–द्वितीयं महाग्रहम् । प्रश्न० १५१ । महाग्रहविशेषः । आचा० २३५ । कर्मविपाकस्याष्टममध्ययनम् । ठाणा० ५०८ । मातङ्गऋषिविशेषः । आव० ८३८ ।

उदुम्बरदत्त–सागरदत्तसार्थवाहसुतः । ठाणा० ५०८ ।

उदुरुसेज्जा–स्प्येत् । नि० चू० द्वि० ४९ आ ।
उदुसुह–ऋतुसुख, ऋतुशुभे वा–कालोचितम् । प्रश्न० १४१ ।
उदू,उडू–द्विमासप्रमाणकालविशेष ऋतु । ठाणा० ३६९ ।
उदूखल–काष्ठनिर्मित खण्डनोपयोगि शस्त्रम् । भग० २१३ । आचा० ३४४ ।
उद्दुरूढो–पादनियतो । नि० चू० प्र० १८४ अ ।
उड्डो–उड्ड–म्लेच्छविशेष । चिलातदेशनिवासी । प्रश्न० १४ ।
उद्गमनप्रविभक्ति–चन्द्रसूर्ययोरुद्गमन–उदयन तत्प्रविभक्ती–रचना तदभिनयगर्भ यथा उदये सूर्यचन्द्रयोर्मण्डलमर्हणं प्राच्या चारण प्रकारास्तथा यन्नाभिनीयते तदुद्गमनप्रविभक्ति । षष्ठो नाट्यविधि । अ० प्र० ४१६ ।
उद्गीर्ण वान्तम् । उत्त० ३३६ ।
उद्ग्राहित–मेलितम् । ०ठी १५९ ।
उद्घाटित –प्रकाशित , प्रकटित । ठाणा० ४१२ ।
उद्घाटितज्ञ –प्रथमो विनेय । प्रज्ञा० ४२५ ।
उद्देहका–उद्दधका । बृ० द्वि० ६० आ ।
उद्दडगा–ऊर्ध्वकृतदण्डा ये सञ्चरन्ति । भग० ५१९ ।
उद्दडपुर–नगरनाम । भग० ६७५ ।
उद्दडा ऊर्ध्वकृतदण्डा ये सञ्चरन्ति । निरय० २५ ।
उद्दडुको–जनोपहास । बृ० द्वि० २४२ अ ।
उद्दस–त्रीन्द्रियजीवभेद । उत्त० ६९५ ।
उद्दसगा–त्रीन्द्रियविशेष । प्रज्ञा० ४२ ।
उद्दसे–उद्दश । आव० २१७ ।
उदए मारणतिए–उदये मारणान्तिके वेदनोदये मारणान्तिकेऽपि न क्षोभः कार्य । योगसमहे एकोनत्रिंशत्तमो योग । आव० ६६४ ।
उद्दर–सुभिक्षं । नि० चू० प्र० ८९ अ । सुभिक्ष । नि० चू० प्र० ३१५ अ । ऊर्ध्वदरं से दरा ऊर्ध्वं यत्र पूर्यन्ते तदुद्ध्वदरम् । बृ० द्वि० १०० अ । दुविधा दरा–धण्णदरा य पोट्टदरा य, ते उद्ध पूरेंति जत्थ ■ ⌐द्दरं–सुभिक्खं । नि० चू० प्र० २२६ अ ।
उद्दवण–उत्थान–नाश । बृ० द्वि० ७९ अ ।
उद्दवण – अपद्रावणम्–अतिपातविवर्जिता पीडा । पिण्ड० ३७ ।
उद्दवणकर – मारणान्तिकवेदनाकारि धनहरणाद्युपद्रवकारि वा । औप० ४२ ।
उद्दवणया–कृप्पाद्यधारणता । भग० ९३ । विज्ञाए सप्पो अन्यत्र नीयते । नि० चू० प्र० ३३५ अ ।
उद्दवणा–उपद्रवणमपद्रवण वा । प्राणवधस्य नवम पर्याय । प्रश्न० ५ ।
उद्दवातितगणे–गणविशेष । ठाणा० ४५१ ।
उद्दविया–अवद्राविता – उत्त्रासिता । आव० ५७४ । मारिता । भग० ७६६ ।
उद्दवेंति –अपद्रावयन्ति–जीविताद् व्यपरोपयन्ति । प्रज्ञा० ५९३ ।
उद्दवेउ–अपद्राव्य । उत्त० २०७ ।
उद्दवेह–विनाशयत । उपा० ४९ ।
उद्दवेहिइ – अपद्रावयिष्यति–उपद्रवान् करिष्यति । भग० ६९१ ।
उद्दाइता–शोभमाना । ज्ञाता० २७ ।
उद्दाइ उद्दाति–रचयति । भग० ९३ । उद्याति–जलस्योपरि वर्तते । भग० १८४ । अपद्रवति–म्रियते । भग० १११ ।
उद्दाइआ–उपद्राविका, उपद्रवकारिणी । ओघ० १७ । उपद्रोत्री । ओघ० १५ ।
उद्दाइत्ता–अपद्रुत्य–मृत्वा । भग० १११ । अपद्राय–मृत्वा । ठाणा० ४७१ । अपद्राय–मृत्वा । जीवा० २६२ । जं० प्र० ४२५ ।
उद्दाण–उद्दाण, वैधर्म्यम् । आव० ४३७ ।
उद्दाणग–भूतकम् । आव० ७०० ।
उद्दाणभत्तारा–अपद्राणभक्तृका, भत्तारेण परिठविता । नि० चू० प्र० १०९ आ ।
उद्दाणि – उद्रा –सिन्धुविषये मत्स्यास्तत्सूक्ष्मचर्मनिष्पन्नानि उद्राणि । आचा० ३९४ ।
उद्दाम – उद्दाम –चरणनिपातप्रोपमनिरपेक्षत्वाद् द्रुतचारी । अनु० २६ ।
उद्दामिया–उद्दामिता–अपनीतबन्धना, प्रलम्बिता । विपा० ४६ ।
उद्दायंति–अपद्रान्ति–प्राणैर्विमुच्यन्ते । आचा० ११७ ।
उद्दायण वीतभयपत्तने राया । नि० चू० प्र० ३४६ आ ।
उद्दाल –अवदाल , विदलनं, पादादिभ्यस्ते अधोगमनम् । विदलनम् । जीवा० २३२ । राज० ९१ ।
उद्दालक–एकोरुकद्वीपे वृक्षविशेष । जीवा० १४५ ।

उद्दाला-उद्दालाः, द्रुमविशेषः। जं० प्र० ९८।

उद्दालिओ-उद्दालितः-बलाद्गृहीतः। आव० ७१७। अपहृतः। उत्त० ३०१।

उद्दावणया-उत्त्रासनम्। भग० १८४।

उद्दावो - उद्दावः-स्थानान्तरेष्वयाप्यसङ्क्रामितः। जीवा० ३५५।

उद्दाह-प्रकृष्टो दाहः। ठाणा० ५०८।

उद्दिक्खाहि-प्रतीक्षस्व। नि० चू० प्र० ३२२ अ।

उद्दिट्ठ-यावदर्थिकाः पाखण्डिनः श्रमणान्-साधून् उद्दिश्य दुर्भिक्षापगमादौ यद्भिक्षावितरणं तदौद्देशिकमुद्दिष्टम्। प्रश्न० १५१। उद्दिष्टम्-स्वार्थमेव निष्पन्नमशनादिकं भिक्षाचराणां दानाय यत् पृथक्कल्पितं तत्। पिण्ड० ७७। उद्दिट्ठ उद्देसेण ओभासति। नि० चू० द्वि० १६२ अ। मासति। नि० चू० द्वि० १६२ आ। पञ्चेषणायाः प्रथमो भेदः। आचा० २७७। उद्दिष्टा-अमावास्या। भग० १३५।

उद्दिट्ठआदेसं-समणा निग्गंथ सक्क तावसा गेरुय आजीव एतेसु उद्दिट्ठआदेसं भण्णति। नि० चू० प्र० २३० आ।

उद्दिट्ठभत्तं-उद्दिष्टभक्त-दानाय परिकल्पितं यद्भक्तपानादिकं तत्। सूत्र० ३९९।

उद्दिट्ठभत्तपरिण्णाय - उद्दिष्टं-तमेव श्रावकमुद्दिश्य कृतं भक्तं-ओदनादि उद्दिष्टभक्तं तत्परिज्ञातं येनासावुद्दिष्टभक्तपरिज्ञातः, श्रमणोपासकस्य दशमी प्रतिमा। सम० १९।

उद्दिट्ठवज्जए-उद्दिष्टवर्जकः, श्रावकस्य दशमी प्रतिमा। आव० ६४६।

उद्दिट्ठसमादेसं-णिग्गंथा-साहू। नि० चू० प्र० २३० आ।

उद्दिट्ठा-उद्दिष्टा-यस्याः स्थापनायाः उत्कृष्टा आरोपणा शानुमिष्टा सा ईप्सिता। व्य० प्र० ७५ आ। अमावास्या। जीवा० ३०५। ठाणा० २३७। राज० १२३। उपदिष्टा। औप० १००। विपा० ९३। कथिताः। उत्त० २२९।

उद्दिट्ठाओ-उद्दिष्टाः-सामान्यतोऽभिहिताः। ठाणा० ३०८।

उद्दिट्ठो-उद्दिष्टः-प्रतिपादितः। सूत्र० १७६।

उद्दित्ता-प्रज्वालितः। बृ० द्वि० ६१ आ।

उद्दिएं। बृ० प्र० ८३ अ।

उद्दिसति-उपसंपद्यते इत्यर्थः। नि० चू० प्र० २९१ आ।

उद्दिसियपत्थं-गुरुसमक्षं उद्दिष्टं-प्रतिज्ञातं यस्मै उद्दिष्टपत्थम्। बृ० प्र० ९७ आ।

उद्दिस्स-उद्दिश्य, उद्दिशति। आचा० ३२५।

उद्दिस्सपविभत्तगती-उद्दिश्यप्रविभक्तगतिः-प्रविभक्तं प्रतिनियतमाचार्यादिकमुद्दिश्य यत्तत्पार्श्वे गच्छति सा। विहायोगतेस्त्रयोदशो भेदः। प्रज्ञा० ३२७।

उद्दिस्सामि-वाचयामि। विशे० ९३५५।

उद्दुट्ठं-कुपितम्, (देशी०)। बृ० द्वि० १०५ अ। नि० चू० प्र० २२७ अ।

उद्दुद्दसेस-जं कुंडगेहिं अप्पणट्ठा वाहिं णिणीतं तं मोत्तुं सेसं छड्डियं। नि० चू० द्वि० २० आ।

उद्देस-उद्देशः-अध्ययनैकदेशभूतम्। दश० ७। उद्देशनं उद्देशः-वस्तुनः सामान्याभिधानं। विशे० ९३९। वाचनासूत्रप्रदानम्। व्य० प्र० २६ अ। उद्दिश्यते इति उपदेशः, सदसत्कर्तव्यादेशः। नारकादिव्यपदेशः उच्चावचगोत्रादिव्यपदेशो वा। आचा० १२४। गुरुवचनविशेषः। अनु० ४। यावदर्थिकादिप्रतिविधानम्। पिण्ड० ३५। उद्देशनमुद्देशः-सामान्याभिधानरूपः। अनु० २५७। उद्देशकः-द्वीपसमुद्रोद्देशकावयवविशेषः। भग० ७६९। अध्ययनार्थदेशाभिधायी अध्ययनविभागः। भग० ५। सामान्याभिधानमध्ययनम्। आव० १०४। गुरोः सामान्याभिधायि वचनम्। उत्त० ७२। उद्देसो अभिनवस्स। नि० चू० प्र० २२३ आ। वाचयामीति गुरुप्रतिज्ञारूपः उद्देशः। विशे० १२९६। अविसेसिओ उद्देसो। नि० चू० द्वि० १०८ अ। क्षेत्रकालविभागः। बृ० द्वि० २६९ अ।

उद्देसग-उद्देहकः-त्रीन्द्रियजन्तुविशेषः। जीवा० ३२।

उद्देसणंतेवासी-उद्देशनान्तेवासी। ठाणा० २४०।

उद्देसणकाला-उद्देशनकालाः-उद्देशावसराः श्रुतोपचाररूपाः। सम० ४६।

उद्देसणायरिय-उद्देशनाचार्यः, आचार्यविशेषः। दश० ३१।

उद्देसणायरिए-उद्देशनम्-अङ्गादेः पठनेऽधिकारित्वकरणं तत्र तेन वाऽऽचार्यः-गुरुः-उद्देशनाचार्यः। ठाणा० २४०।

उद्देसिअ - उद्दिश्य कृतम् औद्देशिकम्-उद्दिष्टकृतकर्मादिभेदम्। दश० १७४।

उद्देसिअचरिमतिग-उद्देशचरमत्रितयम्, औद्देशिकस्य पाखण्डश्रमणनिर्ग्रन्थविषयम्। दश० ९६२।

उद्धाइया-उद्धाविताः। उत्त० १००। वेगेन प्रसृताः। उत्त० ३६४।

उद्धाईया-उद्धाविताः सम्मुखगताः। उत्त० १७९।

उद्धायमाणो-उत्तिष्ठन्। प्रश्न० ६२। उद्धावमानः-प्रवर्तमानः। ज्ञाता० ७०।

उद्धारपलिओवमे-तत्र वक्ष्यमाणस्वरूपवालाग्राणां तत्खण्डानां वा तदुद्धारेण द्वीपसमुद्राणां वा प्रतिसमयमुद्धरणं-अपोद्धरणमपहरणमुद्धारः तद्विषयं तत्प्रधानं वा पल्योपममुद्धारपल्योपमम्। अनु० १८०।

उद्धावणं-कार्यस्य निष्पादनम्। व्य० प्र० १७२ अ।

उद्धिअ-उद्धृतः-वैताढ्यविशेषितः। जं० प्र० २७७।

उद्धिय-उद्धृता-निष्कासनम्। ठाणा० ४६३।

उद्धी-उद्धिः। जं० प्र० ४५४। 'मेलित्तु पव्हियाओ चलणे वित्थारिऊण बाहिरओ। ठाउस्सग्गं एसो बाहिरउद्धी मुणेयव्वो॥ अंगुट्ठे मेलविउं वित्थारिय पण्हियाओ बाहिं तु। ठाउस्सग्गं एवो भणिओ अब्भितरद्धित्ति॥' आव० ७९८।

उद्धीमुहकलंबुआपुप्फसंठिता-ऊर्ध्वमुखकलम्बुकपुष्पसंस्थिता-ऊर्ध्वमुखस्य कलम्बुकापुष्पस्येव-नालिकापुष्पस्येव संस्थितं-संस्थानं यस्याः सा। सूर्य० ६७।

उद्धअ-इतस्ततो विप्रसृत.। जं० प्र० ५१। जीवा० १६०, २०६।

उद्धताए-उद्धतया-दर्पातिशयेन। भग० ५२७।

उद्धम्ममाणं-उत्पाद्यमानम्। औप० ४७।

उद्धय-उद्धुतः-उद्भूतः। औप० ५। इतस्ततो विप्रसृतः। सूर्य० २९३। उद्भूतः। भग० ५४०। उद्भूता-वायुना। ज्ञाता० ८०।

उद्धयाए-उद्धतया-वस्त्रादीनामुद्धतत्वेन, उद्धतया वा सदर्पया। भग० १६७।

उद्धव्वमाणं-उत्पाद्यमानम्। औप० ४७।

उद्धुसियं-रोमाञ्चितम्। उद्धुषितम्। नि० चू० प्र० २५१ आ।

उद्धय-उद्धृतः। आव० ५७०।

उद्धुलिता-मस्तका। नि० चू० प्र० ३२४ आ।

उद्भिज्जत्तं-सम्मूर्च्छजत्वम्। ठाणा० ११४।

उद्भामक-उपनविहारी। व्य० प्र० १६८ अ।

उद्भामकभिक्षाचर्या-यत्परिग्रामेषु भिक्षार्थं पर्यटनम्। बृ० प्र० २०६ आ।

उद्यतकं-उच्छिन्नम्। प्रश्न० १५४। पामिच्चं, भिक्षादोषः। आचा० ३२९।

उद्यतविहारेण मासकल्पादिना। उत्त० ५८७।

उद्यानि-प्रतिस्रोतोगामिनी सा। व्य० प्र० ९९ आ।

उद्युक्तः-परायणः। आव० ५८७।

उद्राः-सिन्धुविषये मत्स्यास्तत्सूक्ष्मचर्मनिष्पन्नानि। आचा० ३९४।

उद्राणि-सिन्धुविषये मत्स्यास्तत्सूक्ष्मचर्मनिष्पन्नानि। आचा० ३९४।

उद्वर्तनं-निष्क्रमणम्। आचा० ६९। तिर्यगादिभिरेकेन्द्रियकरणस्वरूपम्। भग० ७५।

उद्वर्तनकरणं-करणविशेष.। भग० २४, ९०।

उद्वर्त्य-निष्क्रम्य। आव० १७७।

उद्वसं-शून्यम्। उत्त० १०९।

उद्वसितगृहं-शून्यागारम्। उत्त० ६६५।

उद्वालयन्-आलोडयन्। दश० १८।

उन्न-और्णिकः। ठाणा० ३३८।

उन्नय-उन्नतः। सम० ७१।

उन्नतमणे-उन्नतमनाः-प्रकृत्या औदार्यादियुक्तमनाः। ठाणा० १८३।

उन्नतरूवे-सम्पानावयवाभिसौन्दर्याद् उन्नतरूपः। ठाणा० १८३।

उन्नतावत्ते-उन्नतः-उच्छ्रितः स चासावावर्तश्चेति उन्नतावर्त.। ठाणा० २८८।

उन्नय-उन्नतं-अङ्गुलिपर्वाणि। औप० १०१। गुणवन्ति, उच्चानि च। ज्ञाता० ३।

उन्नयनं-भृङ्गारविशेष.। जं० प्र० ११३।

उन्नयमाणे-उन्नतमानः, उन्नतो मानोऽस्येत्युन्नतमानः, उन्नतं माऽऽत्मानं मन्यत इति। आचा० २१५।

उपाडीओ। नि० चू० प्र० ११२ आ।

उप्पान-महाविदेहे नगरविशेष.। निरय० ४०।

उम्मओ-ऊर्मयः। आव० ४१८।

उम्मिज्जंते-उत्पाद्यते ऊर्ध्वमुत्क्षिप्यते। जीवा० २०७।

उम्मामिज्जाइ(प)-उम्मामिल-–उत्क्षिप्त°, प्रसिद्धि मन द्वीपायन। अनु० १८३।

उम्मिल्लीहृतं-यौमितम्। जीवा० २७१।

उम्मिय-औणिकम्। ठाणा० ३३०।

उम्मग्गजला-नदीविशेष.। ठाणा० ७१।

उम्माथितः। आव० १५६।

उपकारिका – राजधानीस्वामिसत्कप्रासादावतंसकादीनां पीठिका। जीवा० २२२।

उपकार्योपकारिका – राजासुगनासोपकारिका। प० प्र० ३७१। जीवा० २२२।

उपगतश्लाघं – उपगतश्लाघत्वं–उत्तमगुणयोगात्प्राप्तश्लाघता। चतुर्विंशतितमो वचनातिशयः। सम० ६३।

उपगूहनं-परिष्वजनम्। नि० चू० प्र० ३५६ आ।

उपघसरं-निर्गमनम्। ओघ० १२३।

उपचयद्रव्यमन्दः-य परिस्थूलशरीरतया गमनादिव्यापारं कर्तुं न शक्नोति। वृ० प्र० ११३ अ।

उपचयभावमन्दः-यो बुद्धेरपचयेन यत्किञ्चित् कार्यं कर्तुं नोत्सहते। वृ० प्र० ११३ अ।

उपचारोपेतं-उपचारोपेतत्वं-अग्राम्यता। तृतीयो वचनातिशयः। सम० ६३।

उपचियमंसो-वल्मियशरीरो। नि० चू० प्र० २६६ आ।

उपदर्शना – जम्बूद्वीपनीलवर्षधरपर्वते नवमकूट। ठाणा० ७२।

उपदिष्टा – महाकल्याणकसम्बन्धितया पुण्यतिथित्वेन प्रख्याता, तथा पौर्णमासीषु च तिसृष्वपि चतुर्मासकतिथिष्वित्यर्थः। सूत्र० ४०८।

उपदेशः-श्रुतस्य पर्याय। विशे० ४१६।

उपधानकं-द्रव्योपधानम्। आव० ६६८। बिब्बोयणा। बिब्बोयणा, तपनीयमया बो गण्डोपधानका। जीवा० २३१।

उपनीतरागं-उपनीतरागत्वं-मालवकौशिक्यादिग्रामरागयुक्तता। सप्तमो वचनातिशयः। सम० ६३।

उपपत्ति। भग० १७।

उपबृंहयन्-अनुमोदयन्। ज्ञाता० १८।

उपभोगपरिभोगः – अशनादिवाहनान्तानां बहुसावद्यानां वर्जनमल्पसावद्यानामपि परिमाणम्। तत्त्वा० ७-१६।

उपमानं – दृष्टान्तः। ओघ० १७। श्रुतादिज्ञानस्य समानार्थोपन्यासेन मंगलमधिगमव्यवसायानमुपमानम्। ठाणा० २६२।

उपयुक्तद्रव्यसम्यक् – यदुपयुक्त-भावतः श्रवणमनसमाधानाय प्रभवन्ति तत्। आचा० १०६।

उपरतकायिकी – अप्रमत्तसंयतस्योपरतस्य सावद्यप्रवृत्तेर्निवृत्तस्य क्रिया। कायिकीक्रियायास्तृतीयो भेदः। आव० ६११।

उपरिमलक्षुल्लकप्रतराः-यत्र तिर्यग्लोकमध्यवर्तिनः ऊर्ध्वं रज्जुप्रमाणात् क्षुल्लकप्रतरादारभ्य यावद्यावत् गोस्तनाकाराणि तावत्स्था रत्नप्रभायां पृथिव्यां ये प्रतराः ते उपरितनक्षुल्लकप्रतराः। नंदी ११०।

उपरिमाण-उपरितना। आव० ६४०।

उपर्यधिस्त्रम्भः। आचा० १०६।

उपलिंपंति – पद्मसुगन्धं तथाविधरूपं च योग्यतानिमित्तं भजन्ति। आचा० ११०।

उपयस्तुं-उपयागान् कर्तुम्। पिण्ड० १६३।

उपर्येत्तो-उपागच्छन्, आगच्छन्। आव० ४१४।

उपशमनिष्पन्नः-उपशान्तक्रोध इत्यादि उपशमनिष्पन्नः आत्मपरिणाम इति भावना। ठाणा० ३७८।

उपशान्ता-प्रदेशतोऽप्यवेद्यमाना कषाया। ठाणा० ५०।

उपधा-द्वेष। व्य० प्र० ३ अ।

उपसंप-उपगच्छन्-उपसम्पत्ति-प्राप्तिः। भग० १०१।

उपसंपदालोचना-आलोचनाया द्वितीयो भेद। व्य० प्र० ४८ आ।

उपसङ्ग्रात-अनिष्टफलस्नपनमङ्गात। नंदी १३१।

उपस्थं-उपस्थितम्। व्य० द्वि० २२७ आ।

उपस्थापनं-पुनर्दीक्षणं पुनश्चरणं पुनर्व्रतारोपणम्। तत्त्वा० ९-२२।

उपस्थापयितुं-उत्थापनाकरणम। व्य० द्वि० २१० अ।

उपस्पृशति-वस्त्राणि प्रक्षालयति। आव० ४३४।

उपहितं-भोजनस्थाने ढौकितं भक्ष्यमिति भाव। ठाणा० १४८।

उपादानकारणं-मृदादि। ठाणा० ८०।

उपाधिः-उपाधानमुपाधिः-विशेषः। भग० ८।

उपाया-व्याख्याङ्गानि। आचा० ८२।

उपायोपेयभावलक्षणः-वचनरूपापन्नं प्रकरणमुपायः तत्परिज्ञानं चोपेयम्। प्रज्ञा० २१

उपार्द्धभाग-पोपचतुर्थभागः। आचा० ३२६।

उपालंभ - उपालम्भः शिनेयस्याविहितविधायिन। ज्ञाता० ७७।

उपालक-निर्व्यूहः, गवाक्षः। व्य० प्र० १३३ अ।

उपैति-करोति। आचा० २१७।

उपोद्घातनिर्युक्तिः-निर्युक्तिभेदः। ठाणा० ६।

उप्पइयं-उत्पतितं-उद्भूतम्। उत्त० ११९।

उप्पज्जंते - उत्पद्यन्ते, एतत्प्रभावात् स्फातिमद्भवन्ति। जं० प्र० २५८।

उप्पज्जमाणकालं - उत्पद्यमानकालं - आद्यसमयादारभ्योत्पत्त्यन्तसमय यावदुत्पद्यमानत्वस्येष्टत्वाद् वर्तमानभविष्यत्कालविषयं द्रव्यम्। भग० १८।

उप्पडा-त्रीन्द्रियविशेषः। प्रज्ञा० ४२।

उप्पण-उत्पन्न-विधिना प्राप्तम्। दश० १८१।

उप्पण्णमिस्सिया-उत्पन्नमिश्रिता-उत्पन्ना मिश्रिता अनुत्पन्नैः सह सङ्ख्या पूरणार्थं यत्र सा। सत्यामृषाभाषाया प्रथमो भेदः। प्रज्ञा० २५६।

उप्पत्ति-उत्पत्ति -निदानम्। व्य० प्र० ११ अ।

उप्पत्तिअं-पर्वतिथिमन्तरेणाकस्मिकं भोज्यम्। बृ० द्वि० १९२ अ।

उप्पत्तिआ - उत्पत्तिरेव न शास्त्राभ्यासकर्मपरिशीलनादिकं प्रयोजनं-कारणं यस्याः सा औत्पत्तिकी। नंदी १४४।

उप्पत्तिकसाय-द्रव्यादिर्वाह्यात् कषायप्रभवः तदेव कषायनिमित्तत्वात् उत्पत्तिकषायः। आव० ३९०। शरीरोपधिक्षेत्रवास्तुस्थाण्वादयो यदाश्रित्य तेषामुत्पत्ति। आचा० ९१।

उप्पत्तिया-औत्पत्तिकी- उत्पत्तिरेव प्रयोजनं यस्याः सा, बुद्धिविशेषः। आव० ४१४। उत्पत्तिकी-अदृष्टाश्रुताननुभूतविषयाकस्माद्भवनशीला। राज० ११६।

उप्पत्ती-उत्पत्तिकरः स्वकल्पनाशिल्पनिर्मितः शतपत्रादि। आव० ४९९। आरभ्यमानाम्। ठाणा० २८५। सामान्यतो या च विशेषतः। ठाणा० ४४९।

उप्पन्न-उत्पन्नविषया-सत्यामृषाभाषाभेदः। दश० २०९।

उप्पन्नमीसते - उत्पन्नविषयं मिश्रं-सत्यामृषा उत्पन्नमिश्रं राद्वेोत्पन्नमिश्रकम्। ठाणा० ४८९।

उप्पयंते-भूतलादुत्पततः। ज्ञाता० ४६।

उप्पयनिवयं-उत्पातः-आकाशे उच्छलनं निपात -तस्मादवपतनं उत्पातपूर्वो निपातो यस्मिन् तदुत्पातनिपातम्। दिव्यनाट्यविधिः। जं० प्र० ४१२।

उप्पराउ-उपरितः-उपरिष्टात्। दश० ३८।

उप्परामुहो-उपरिमुखः। आव० १८१।

उप्पराहुत्तो-उपरिभूत.। आव० ५०२।

उप्पलं-उत्पल-नीलोत्पलादि। आचा० ३४८। चतुरशीतिरुत्पलाङ्गशतसहस्राणि। जीवा० ३४५। गर्दभकम्। राज० ८। जीवा० १७७। उत्पलकुष्ठं, नीलोत्पलं वा। जीवा० २७७। उत्पलं। प्रज्ञा० ३७। जलरुहविशेष। प्रज्ञा० ३३। कालविशेषः। भग० २७५। उत्पलं-चतुरशीत्या लक्षैरुत्पलाङ्गैः। अनु० १००। उत्पलार्थ एकादशशते प्रथम उद्देशकः। भग० ५११। कालविशेषः। भग० ८८८। भग० २१०। कालविशेषः। सूर्य० ९१। नीलोत्पलमुत्पलकुष्ठं वा। सम० ६१। औप० १६। आरणकल्पे विमानविशेषः। सम० ३८। उत्पलकुष्ठं-गन्धद्रव्यविशेषः। ज्ञाता० १२९। उत्पलं-नीलोत्पलादि। दश० १८५। उत्पलं-कुष्ठम्। जं० प्र० ११५।

उप्पलंग-उत्पलाङ्गं - चतुरशीतिर्हुहुकशतसहस्राणि। जीवा० ३४५। कालविशेषः। ठाणा० ८६। उत्पलाङ्ग, कालविशेषः। सूर्य० ९१। भग० ८८८। उत्पलाङ्गं चतुरशीत्या लक्षैर्हुहुकैः। अनु० १००।

उप्पलगुम्मा-उत्पलगुल्मा, पुष्करिणीनाम। जं० प्र० ३३५, ३६०।

उप्पलनालं-उत्पलनाल-उत्पलं-नीलोत्पलादि नालं-तदुपाधार। आचा० ३४८।

उप्पलपउमोपसोभिता - उत्पलपद्मोपशोभिता। आव० ८१९।

उप्पलबेंटियां - उत्पलवृन्तानि निकमविशेषान् प्राधान्यतया भैक्षत्वेन-येषां सन्ति ते उत्पलवृन्तिकाः। औप० १०९।

उप्पलयं-उत्पलक-गर्दभकम्। जीवा० १८२।

उप्पलहत्थगा - उत्पलाख्यजलजकुसुमसमूहविशेषाः। जं० प्र० ८४। उत्पलाख्यजलजकुसुमसङ्घातविशेषाः। राज० ८।

उप्पलहत्थय-उत्पलहस्तकः - उत्पलाख्यजलजकुसुमसमूहविशेषः। जीवा० १९९।

उप्पला-पिशाचेन्द्रकालस्य तृतीयाग्रमहिषी । ठाणा० २०४। पुष्करिणीविशेष. । जं० प्र० ३६० ।

उप्पलाइं-गर्दभकानि ईषन्नीलानि वा । जं० प्र० २६ ।

उप्पलावए-उत्प्लावयति । दश० २०५ ।

उप्पलुज्जला-उत्पलोज्ज्वला, पुष्करिणीनाम । जं० प्र० ३३५, ३६० ।

उप्पलुद्देसए - उत्पलोद्देशक.-एकादशशते प्रथमः । भग० ५६६ ।

उप्पह-उत्पथ -उन्मार्गं । उत्त० ५४८ । परसमयः । ठाणा० २४१ ।

उप्पा-उत्पाद । ठाणा० १९ ।

उप्पाइओ-उत्पातः । आव० ७५८ ।

उप्पाइत्ता-उत्पादयितुं-सम्पादनाय, अथवाऽनुत्पन्नानां भोगानामुत्पादयिता-उत्पादकः । ठाणा० २६४ । सम्पादनशीलः । ठाणा० ३८६ ।

उप्पाइया -उत्पाता -अनिष्टसूचका रुधिरवृष्ट्यादयस्तद्धेतुका येऽनर्थास्ते औत्पातिकाः । सम० ६२ ।

उप्पाए - उत्पातं-सहजरुधिरवृष्ट्यादिलक्षणोत्पातफलनिरूपकनिमित्तशास्त्रम् । सम० ४९ । उत्पादः । आव० ६६२ ।

उप्पाएति - उत् - प्राबल्येन पाययति । नि० चू० प्र० २५२ आ ।

उप्पाएमाणे-व्युत्पादयन् । उत्त० १५७ ।

उप्पाओ - उत्पाद -उत्पत्तिहेतुभूतः क्रियालक्षण । विशे० २४१ ।

उप्पाते-उत्पाद -सहजरुधिरवृष्ट्यादिः । ठाणा० ४२७ ।

उप्पाय-उत्पातपूर्वं-प्रथमपूर्वनाम । ठाणा० ४८४ । उत्पात - प्रकृतिविकारो रक्तवृष्ट्यादि । प्रश्न० १०९ । उल्कापातदिग्दाहादिकम् । अनु० २१६ । उत्पाद-यतो नानुत्पन्नं वस्तु लक्ष्यते अतोऽयमपि वस्तुलक्षणम् । आव० २८२ । उत्पातं-सहजरुधिरवृष्ट्यादिकम् । आव० ६६० । उत्पातं-कपिहसितादि । सूत्र० २१८ । प्रथमपूर्वम् । नन्दी ५२ । ठाणा० १९९ ।

उप्पायग-उत्पादक -ये भूमिं भित्त्वा समुत्तिष्ठन्ति ते । व्य० द्वि० २८८ आ ।

उप्पायण - उत्पादना - सम्पादनं, गृहस्थात्पिण्डादेरुपार्जनमित्यर्थ । ठाणा० १५९ ।

उप्पायणा-उत्पादना-धात्र्यादिका षोडशविधा । प्रश्न० १५५ । धात्र्यादिलक्षणदोषविशेष. । आव० ५७९ ।

उप्पायणोवघाते- उत्पादनया-उत्पादनादोषैः, उपघातः-अशुद्धता उत्पादनोपघातः । ठाणा० ३३० ।

उप्पायपव्वए-उत्पातपर्वतः । सम० ३३ । तिर्यग्लोकगमनाय यत्रागत्योत्पतति सः । भग० १४४ ।

उप्पायपव्वयगा-उत्पातपर्वताः-यत्रागत्य बहवः सूर्याभविमानवासिनो वैमानिका देवा देव्यश्च विचित्रक्रीडानिमित्तं वैक्रियशरीरमारचयन्ति । राज० ७९ ।

उप्पायपव्वया-यत्रागत्य बहवो व्यन्तरदेवा देव्यश्च विचित्रक्रीडानिमित्तं वैक्रियशरीरमारचयन्ति । जं० प्र० ४४ । जीवा० १९९ ।

उप्पायपुव्वं-उत्पादपूर्वम्, तस्य सव्वदव्वाणं पज्जवाण य उप्पायमगीकाउं पण्णवणा कया । नंदी २४१ । यत्रोत्पादमाश्रित्य द्रव्यपर्यायाणां प्ररूपणा कृता तद् । सम० २६ ।

उप्पाया-त्रीन्द्रियविशेष । प्रज्ञा० ४२ ।

उप्पाल-प्रहरणकोशविशेष । जीवा० २३२ । प्रहरणकोश - प्रहरणस्थानम् । राज० ९३ । मत्तवारणम् । जीवा० २७५ ।

उप्पालसंठिओ-उत्पालसंस्थित -मत्तवारणसंस्थित. । जीवा० २७९ ।

उप्पासितो-उत्प्रासित -असूयितः । आव० १०१ ।

उप्पासिया-हसिता । नि० चू० प्र० १९ अ ।

उप्पि-उपरि । भग० ८२ । ठाणा० ४३२ ।

उप्पिंजल-उत्पिञ्जल-आकुलकम् । राज० ५२ ।

उप्पिकुड्ड-श्वासयुक्तम् । जं० प्र० ४० । श्वासयुक्तं, त्वरितम् । ठाणा० ३९६ । अनु० १३० । आकुल गेयमूर्ध्ने बोध्यते । श्वासयुक्तं वा । जीवा० १९४ । भीती । ज्ञाता० १६१ ।

उप्पिट्टणयं-उत्पिट्टनकं-कुट्टनोत्पिट्टना । उत्त० ८ ।

उप्पिट्टणा-उत्-प्राबल्येन पिट्टना उत्पिट्टना । उत्त० ८ ।

उप्पित्थं-श्वासयुक्तम् ।

उप्पियंत-उत्पिबन्तः-आमाद्यन्त. । प्रश्न० ६३ ।

उप्पियंतं-मुहुर्मुहुः श्वसनम् । व्य० द्वि० ५३ आ ।

उप्पियणं-मुहु श्वसनम् । व्य० द्वि० ५३ अ ।

उप्पिलणा-उत्पीडनं-प्राणादीनां प्लावनम् । व्य० द्वि० १० अ ।

उप्पील-उत्पील.-समूहः । प्रश्न० ५० ।

उप्पीलइ-उत्पीडयति-प्राबल्येन बाधते । जीवा० ३२६ ।

उप्पीलिय-उत्पीडिता प्रत्यश्वारोपणेन,-गाढी बद्धा । भग०,१९३ । गाढीकृता । राज० ११८ । भग० ३१७ । ज्ञाता० २२१ । जीवा० २५९ । उत्पीडितः-गाढं बद्धः । प्रश्न० ४७ । उत्पीडिता-गुणसारणेन कृतावपीडा, गाढी बद्धा वा । भग० ३१८ । कृतप्रत्यश्वारोपणा । विपा० ४७ । आरोपितप्रत्यञ्चा । औप० ७१ । आक्रान्ता गुणेन । ज्ञाता० ८५ ।

उप्पीलेज्जा । भग० ७६६ ।

उप्पुया-उत्प्लुता-उत्सुका । प्रश्न० ५२ ।

उप्पूर - उत्पूर-प्राचुर्यम् । प्रश्न० ४३ । जलप्लव । प्रश्न० ७६ ।

उप्पेक्खेज्ज-उपेक्षते । आव० ६४० ।

उप्फंदति-उत्स्पन्दते-प्रविशति । उत्त० ३५५ ।

उप्फंसणं । ओघ० १५५ ।

उप्फणित्तु-साध्वर्थं घाताय दशवन्तः । आचा० ३४१ ।

उप्फासणा - अप्पायस्पर्शनं असदाचरितं नयणोत्तारणम् । बृ० द्वि० ६१ आ ।

उप्फालग-उत्प्रासकम् । उत्त० ६५६ ।

उप्फिडइ-मण्डूकवत्प्लवते । उत्त० ५५१ ।

उप्फुल्लं-विगसिएहिं हत्थीमाईणि रयणादि वा ण निज्झाइयव्वं । दश० चू० ७७ । उत्फुल्लं-विकसितलोचनम् । दश० १६८ । निष्पुष्पः । नि० चू० प्र० २०१ अ ।

उप्फेणउप्फेणीयं-सकोपोष्मवचनं यथा भवति । विपा० ८३ ।

उप्फेस - मुकुटम् । औप० ३५ । शिरोवेष्टनम् । आचा० ३८० । प्रश्न० ८७ ।

उप्फेसि-शिरोवेष्टने, शेखरक इत्यर्थः । ठाणा० ३०४ ।

उप्फोसं-उत्कर्षेण छेदनम् । बृ० प्र० २८५ अ ।

उप्फोसणं-क्रियाविशेष । नि० चू० द्वि० १६६ अ ।

उप्फोसणा-जलच्छटा । नि० चू० द्वि० १२ अ ।

उप्फोसेज्ज-दद्यात् । नि० चू० प्र० १८६ आ ।

उप्फुल्लो-निष्पुष्पः । ओघ० ९७ ।

उब्बद्धो-अबद्ध । आव० २९९ ।

उब्बद्धमो-उद्बद्धः । आव० ४५७ ।

उप्पुडा-उत्ताना । आव० ६०७ ।

उब्बुड्ड-अन्तःप्रवेशितम् । अनुत्त० ७ ।

उब्बुड्डनिब्बुड्डयं-उन्मग्ननिमग्नत्वम् । प्रश्न० ६३ ।

उब्भं-सव । उत्त० १४७ ।

उब्भंडो-असंवृतपरिधानादि । बृ० तृ० २२५ अ ।

उब्भज्जिय-उद्भिद्य । उत्त० १९२ ।

उब्भट्ठ-अभ्यर्थितम् । पिण्ड० ९० ।

उब्भड-उद्भट-विकरालम् । जं० प्र० १५० । अनुत्त० ७ । भग० ३०८ । स्पष्टम् । भग० ३०८ ।

उब्भमा-उत्-प्राबल्येन भ्रमयन्ति उद्भ्रमाः-भिक्षाचरा । व्य० प्र० १५३ आ ।

उब्भमे-उद्भ्रमेत्-यायात् । आचा० २९१ ।

उब्भय-उद्भवः-सम्भवः । ज्ञाता० ५० । सम्भूति. । भग० ४७० ।

उब्भयणं-निर्व्वापणं । नि० चू० प्र० ५२ आ ।

उब्भयेति-उच्छ्रयति । आव० ३४२ ।

उब्भातो-निषण्णो । नि० चू० प्र० ३५ आ ।

उब्भाम-भिक्षाचरग्रामः । व्य० प्र० २५० अ ।

उब्भामइला-उद्भ्रामिल्ला-स्वैरिणी । व्य० द्वि० ११ आ ।

उब्भामओ-उद्भ्रामकः, जारः । पिण्ड० १२१ । पारदारिक. । ओघ० ९२ । बृ० तृ० ४८ अ ।

उब्भामगा-भिक्खायरिया । नि० चू० प्र० ७७ आ । नि० चू० प्र० ३६ आ । पारदारिकाः । ओघ० ७५ । बृ० द्वि० २६ अ । पारदारिणो । नि० चू० प्र० १०७ अ । सपाहणो । नि० चू० द्वि० ९४ आ ।

उब्भामनितोय - उद्भ्रामकनियोगः-ग्रामः । व्य० प्र० १५३ आ ।

उब्भामिगा-उद्भ्रामिका कुलटा । व्य० द्वि० १५० आ । उद्भ्रामिका-मनोगुप्तिदृष्टान्ते धेष्ठिपुत्रश्रावकभिनदत्तभार्या । आव० ५७८ । असती । दश० ५७ ।

उब्भामिज्जंति-अवभ्राम्यन्ते । बृ० तृ० ११७ आ ।

उब्भामिया - पुंश्चली । बृ० द्वि० २६४ आ । उद्भ्रामिका-स्वैरिणी । आव० ४२१ ।

उब्भामे-भिक्खायरियं गच्छति । नि० चू० प्र० ११२ अ । भिक्षाभ्रमणम् । ठाणा० २६६ ।

उब्भायण-उद्भ्रावनं - महर्द्धिकतादिकरणं इत्यर्थः । बृ० तृ० ९३ अ । परिभव । ओघ० १०८ ।

उब्भावणा–उद्भावना–उत्प्रेक्षणा। भग० ४८९। उत्क्षेपणानि। ज्ञाता० १७७। उद्भावना। दश० ४४। प्रभावनम्। नंदी० ५२। अपभ्राजना। उत्त० १६९।

उब्भिगा–उद्भिदो–भूमिभेदाज्जाता उद्भिज्जाः–खञ्जनकादयः। ठाणा० ३८६।

उब्भिज्ज। नि० चू० प्र० १३५ आ।

उब्भिज्ज – उद्भेद्या – वल्लप्रभृतिशाकमञ्जिरा। पिण्ड०. १६८। उद्भिद्य भुवं जाता उद्भिज्जा खञ्जनकादिः। प्रश्न० ९०।

उब्भिज्जमाणा–उद्भिद्यमाने–उद्घाट्यमानम्। जीवा० १९१।

उब्भिन्न–उद्भेदनं उद्भिन्नं साधुभ्यो घृतादिदाननिमित्तं कुतुपादेर्मुखस्य गोमयादिस्थगितस्योद्घाटनं तद्योगाद्देयमपि घृतादि उद्भिन्नम्। द्वादश उद्गमदोषः। पिण्ड० १८।

उब्भिय–उद्भेदनमुद्भित् उद्भिज्जन्म येषां ते उद्भिज्जाः–पतङ्गखञ्जरीटपारिप्लवादयः। दश० १४१। उद्भिज्जं–लवणाकरादुत्पन्नम्। आचा० ३५५।

उब्भुतिया–आभ्युदयिकी, देवतापरिगृहीता गोशीर्षचन्दनमयी भेरी। आव० ९७।

उब्भूयाखेड। दश० चू० ८०।

उब्भेंति–उद्धूमन्ति। आव० २४२। ऊर्ध्वयन्ति। उत्त० १८७।

उब्भेइम–उद्भेद्यं–सामुद्रादि। अप्रासुकम्। दश० १९८।

उभओ – उभयत:–उभौ–किरीटस्यपार्श्वान्तावाश्रित्य। ज्ञाता० १५।

उभयं – उभयं–संयमासंयमलक्षणं श्रावकोपयोगि। दश० १५८। गोपालदारक, संहारनिपातनकरण, मध्य शब्दोदाहरणम्। आव० ४६२।

उभयंभागा – उभयभागा–चन्द्रेणोपगताः – उभयभागाभ्यां पूर्वतः पश्चाच्चैतयोर्भज्यन्ते–भुज्यन्ते यानि तानि उभयभागानि, चन्द्रस्य पूर्वतः पृष्ठतश्च भोगमुपगच्छन्तीत्यर्थः। ठाणा० ३६८। उभयभागानि – उभयं–दिवसरात्री तस्य दिवसस्य रात्रेश्चेत्यर्थः, चन्द्रयोगस्यादिमधिकृत्य भागो येषां तानि। सूर्य० १०४।

उभयओ–उभयतः, उभयो:–पार्श्वयोः। सूर्य० २९२।

उभयकप्पिय – उभयकल्पिक –यो द्वावपि सूत्रार्थौ युगपद् ग्रहीतुं समर्थः। बृ० प्र० ६३ अ।

उभयकाला–दिवा रात्रौ च। नि० चू० तृ० ७१आ।

उभयकिड्डकम्मं–उभयकृतिकर्म–वन्दनम्। ओघ० ११।

उभयजं–पुरुषनिष्पन्नं, शमयवाद्य। पिण्ड० ४।

उभयतरो–तं च तवं करेंतो आयरियाइवेयावच्चं करेति सत्तंद्धिसहिओ एस उभयतरो। नि० चू० तृ० ११३ अ।

उभयनिसेहो–उभयनिषेध, महानन्दिमानभक्त, यस्य मत्कुणोदाहरणम्। आव० ४६२।

उभयपंता–उभयप्रान्ता–अमर्यादा, अपायेनेत्यर्थः। ओघ० १५।

उभयपइट्ठिये – उभयप्रतिष्ठितः–आत्मपरविषयः। ठाणा० १९३।

उभयपदव्याहतं–सद्यासदिलक्षणे भेदः। आव० २८३।

उभयपदाव्याहतं–सत्यासत्यलक्षणो भेदः। आव० २८१।

उभयमचित्त – उभयमचित्तं–उदकलवणयोर्भक्तयोः यच्चतुर्मिलितया वर्तते तदुभयमचित्तम्। भग० ३१।

उभयामया– पश्चाद्विपाशास्परिज्ञानकरणोपगुण्ठितादिव्यव्याकरणलक्षणया गुरुप्रत्यनीकद्रव्यलिङ्गधार्येव ऐश्वभावः ग्राह्योऽभयेविकाऽयेत्यर्थः। सम० १११।

उभयास्तिकः। सम० ४२।

उमंथणा–अवमन्थयोमुखम्। व्य० द्वि० ३२१ आ।

उमज्जायणसगोत्ते–पुष्यनक्षत्रस्य गोत्रम्। सूर्य० १५०।

उमा–प्रद्योतराजधान्यामुज्जयिन्यां गणिका। आव० ६८६। त्रिपृष्ठवासुदेवमाता। आव० १६२। सम० १५२।

उमाण–भरमितः परिमितो वा। सूर्य० ९०।

उमाणं–प्रवेश स्वपक्षपरपक्षयोर्येषु तानि तथा। आचा० ३२६।

उमाव्यतिकर। आचा० १४६।

उम्मग्गं–निरये उन्मज्जतेऽनेनेति चोन्मज्जनम्, ऊर्ध्वं वा मार्गमुन्मार्गं, मरणं अनन्त्यमरणं। आचा० २३८। अकार्याचरणम्। आचा० २०३। उन्मार्गः। आव० ७७८। मार्गादूर्ध्वं, क्षायोपशमिकभावत्यागेनौदयिकभावसङ्क्रमः। आव० ५७१।

उम्मग्गगो–अट्ठनिरहेण गच्छति अहवा अरण्णेण चेव। नि० चू० प्र० ३३९।

उम्मग्गजला–उन्मग्नं जलं यस्यां सा उन्मग्नजला। जं० प्र० २३०।

उम्मग्गदेसणाए-उन्मार्गदेशनया-सम्यग्दर्शनादिरूपभावमार्गातिक्रान्तधर्मप्रथनेन। ठाणा० २७५।

उम्मग्गनिम्मग्गो - उन्मग्ननिमग्नं-ऊर्ध्वाधोगमनम्। प्रश्न० ६३।

उम्मज्जगा - उन्मज्जनमात्रेण ये स्नान्ति। तापसविशेषाः। निरय० २५। भग० ५१९।

उम्मज्जगो-उन्मज्जकः-उन्मज्जनमात्रेण यः स्नाति। औप० ९०।

उम्मज्जणिमज्जिय-उन्मग्ननिमग्निका-उत्पतनिपता। ठाणा० १९१।

उम्मज्जति-स्पृशति। नि० चू० प्र० ११५ अ।

उम्मज्जा - उन्मज्जनमुन्मज्जा-नरकतिर्यग्गतिनिर्गमनात्मिका। उत्त० २६०।

उम्मत्तजला-रम्यकविजये महानदी। जं० प्र० ३५२। नदीविशेषः। ठाणा० ८०।

उम्मत्ता-मन्मथोन्मादयुक्ताः, विटाः। बृ० द्वि० ११८ आ।

उम्मत्तिगा-उन्मत्ताः। आव० ४००।

उम्मत्तो-उत्-प्राबल्येन मत्तो उन्मत्तो, दरमत्तो वा उन्मत्तो। नि० चू० प्र० २७६ आ।

उम्मरीय-उम्बरीयः-प्रभुदुम्बरं रूपको दातव्य इत्येवं लक्षणः। बृ० तृ० ५१ अ।

उम्माओ-उन्मादः-क्षिप्तचित्तादिकः। आव० ७५९।

उम्माणं-उन्मानं-तुलारोपितस्यार्द्धभारप्रमाणता। प्रश्न० ७४। जं० प्र० २५३। ठाणा० ४६१। खण्डगुडादि धरिमम्। ठाणा० ४४९। तुलाकर्षादि तद्विषयम्। ठाणा० ४४९। माराचादिः। आचा० ४१३। तुलाकर्षादि। ठाणा० १९८। तुलारूपम्। भग० ५४४। कर्षपलादि खण्डगुडादिद्रव्यमानहेतुः। जं० प्र० २२७। अर्द्धभारमानता। भग० ११९। अर्द्धभारप्रमाणता। ज्ञाता० ११।

उम्माणजुत्तो-जइ तुलाए आरोविओ अद्धभारं तुलति तो उम्माणजुत्तो। नि० चू० तृ० ६१ अ। पुरिसो तुलारोवितो अद्धभारं तुल्लमाणो उम्माणजुत्तो। नि० चू० द्वि० ८५ आ।

उम्माणा-उन्मानानि-तुलायाः कर्षादीनि। ठाणा० ८६।

उम्माद-चतुर्दशशते द्वितीय उद्देशः। उन्मादार्थाभिधायकत्वादुन्मादो द्वितीयः। भग० ६३०।

उम्माय - उन्मादः-नष्टचित्ततया आलजालभाषणम्। असंप्राप्तकामभेदः। दश० १९४। चित्तविभ्रमः। ठाणा० १५०। महामिथ्यात्वलक्षणः तीर्थकरादीनामवर्णं वदतो भवत्येव तीर्थकराद्यवर्णवदनकुपितप्रवचनदेवतातो वा यत्। ठाणा० ३६०। सग्रहत्वम्। ठाणा० ३६०। ग्रहो बुद्धिविप्लवः। ठाणा० ४७।

उम्मिमालिणीओ-नदीविशेषः। ठाणा० ८०।

उम्मिलिज्जंते-उन्मील्यमाने। आव० ६३।

उम्मी - ऊर्म्मयः-महाकल्लोलाः। भग० ७११। ऊर्मिः-संबाधः। औप० ५७। विचिः, तरङ्गः। आव० ६०१। ऊर्म्मिः-संबाधः। भग० ४६३। कल्लोलः। ठाणा० ५०२। सम्बाधः, तरङ्गः, कल्लोलाकारो वा जनसमुदायः। भग० ११५।

उम्मीलिआ-उन्मिषितलोचनाः। जं० प्र० ५४, २९८। बहिष्कृता। जं० प्र० २९७, ५४।

उम्मीलिय-उन्मीलितं-बहिष्कृतम्। सूर्य० २६४। प्रज्ञा० ९९। जीवा० २०९।

उम्मीसं-उन्मिश्र-शबलीभूतम्। आचा० ३२१। आगासुकमरयसंवलियं मस्तुकादि। आचा० ३२२। एकीकृत्य। औप० १६९। पुष्पादिसम्मिश्रम्, सप्तम एषणादोषः। पिण्ड० १४७।

उम्मुक्को-उन्मुक्तः-प्राबल्येन मुक्तः, पृथग्भूतः। आव० ५०८।

उम्मुग्गा-उन्मग्ना-नदीविशेषः। आव० १५०।

उम्मुय-औत्सुक्यः। प्रश्न० ७३।

उम्मूलणा सरीराओ-उन्मूलना शरीरात्, निष्काशनं जीवस्य देहादिति। प्राणवधस्य द्वितीयः पर्यायः। प्रश्न० ५।

उम्ह-उष्मा-परितापः। बृ० द्वि० १९४ अ।

उयट्टी-वर्ती, अद्धा। उत्त० ११८।

उयत्ति-तेयरासी। नि० चू० प्र० ३०१ आ।

उयत्तिया-अपवृत्त। आचा० ३४६।

उयरं-जलोयरं। नि० चू० प्र० ५८ आ।

उयल्ला-मृता। आव० २७२।

उयविय-विशिष्टं परिकर्मितम्। राज० ९१।

उयवेंति-एतद्ग्रहे तत्र मधुरद्राक्षादि इत्यर्थं। बृ० द्वि० ४५२ अ।

उयारं-उपचारः। (महाप्र०)।

ईना चण्डथारभरइत्याययणत । उत्त० ४३८ । तथाविध निमित्त ऊर्ध्वभ्रमिकायुत्क्रमणे गर्त्ताप्रतिक्रमणे वा । उत्त० ५१९ ।

उलंछेइ–विगतलाञ्छन करोति । ज्ञाता० ८८ ।

उलंड–उच्छृङ्खल । आव० ३८८ ।

उलंडगा–मृद्गोलक । नि० चू० प्र० ३०६ आ ।

उलंडणा–उत्पथा । दश० चू० ७७ ।

उलंडा–मृद्गोलक । बृ० द्वि० २७१ आ ।

उलंपण–उत्प्लवन–वृक्षशाखादायुद्बन्धनम् । सम० १२६ ।

उलंबियगा – अवलम्बितका – रज्ज्वा बद्धा गर्त्तादावक्ता रिता । औप० ८७ ।

उल्ल–आर्द्र । ओघ० १८८ । उत्त० ५३० । भग० ०२२ । आर्द्रा हिमितसकलचीवरेतिआवत । उत्त० ४९३ ।

उल्लग–आर्द्र । आव० ६०१ ।

उल्लगजाति–वीरणतउणा । नि० चू० प्र० ०७४ आ ।

उल्लच्छणा–अपवर्त्तना, अपप्रेरणा । प्रश्न० ५६ ।

उल्लण–वैनौदनमार्द्रीकृत्योपयुज्यते उल्लणम् । पिण्ड० १६८ । ओघ० १४६ ।

उल्लणिया–स्नानजलार्द्रशरीरस्य जलरूक्षणवस्त्रम् । उपा० ४ ।

उल्लदेसा–अवलाद–उत्तार्य । आव० ०९१ ।

उल्लपडसाडओ–आर्द्रपटशाटक । आव० २११ ।

उल्लपडसाडगो–आर्द्रशाटिकापट । आव० ६८० ।

उल्लपडसाडया–स्नानेनार्द्रे पटशाटिके–उत्तरीयपरिधानवस्त्रे । ज्ञाता० ८४ ।

उल्ललिया–चलिता । बृ० द्वि० १४९ आ ।

उल्लवइ–उत्–प्राबल्येनासम्बद्धभाषितादिरूपेण लपति–वक्ति उल्लपति । उत्त० ३४४ ।

उल्लवित–उल्लप्तम् । आव० ३४३ ।

उल्लविय–उल्लपितम्–मन्मनभाषितादि । उत्त० ४२८ ।

उल्लवेत–उल्लापयन् । आव० ६९२ ।

उल्लवेंति–आलापयन्ति । (गणि०) ।

उल्लवेइ–उल्लपति । आव० ०९६ ।

उल्लवेयव्वो–विप्रयाणेपत० । आव० ३८४ ।

उल्लहिज्जति–उल्लिख्यमाना । आव० २०० ।

उल्ला–तिंता । नि० चू० प्र० ४६ आ । आर्द्र । आव० ६२२ ।

उल्लाटा–प्रत्यावर्त्त । व्य० प्र० १६७ आ ।

उल्लालेमाणे–उल्लालयन्–ताडयन । जं० प्र० ३९७ ।

उल्लाव – उल्लाप –वचनम् । उत्त० ३३४ । श्लाघावचनम् । ठाणा० ४०७ । श्लाघावर्णनम् । ज्ञाता० ५७ । भग० ४७८ । प्रतिवचनम् । ओघ० ५० । उल्लापम् । आव० २०३ । श्लाघावर्णनम् । औप० ५७ ।

उल्लावितो–उल्लापयन् । उत्त० ८५ ।

उल्लिचइ–उल्लिंचति–आर्द्रयति । पिण्ड० ११८ ।

उल्लिंचण–उदकनिष्काशनम् । नि० चू० प्र० २०७ आ ।

उल्लिचाविज्जिहिति । ओघ० ४३ ।

उल्लिड–उल्लिचित । उत्त० ४,० ।

उल्लिय–आर्द्र । आव० ६०१ ।

उल्लिहावेइ–चुम्बयति–आस्वादयति । आव० ६८० ।

उल्ली – पनक । ठाणा० ४३० । पनको । नि० चू० प्र० ०५५ आ । पनओ । दश० चू० ८० ।

उल्लीण–अवलीन । (मर०) ।

उल्लीणा–उपलीना–प्रच्छन्ना । आचा० ३०१ ।

उल्लुराइ । ओघ० ११७ ।

उल्लुका–जनपदा नदीविशेषश्च । विशे० ९९७ । नदीविशेष । विशे० ९२७ ।

उल्लुकातीर–उल्लुकानद्याः समीपे नगरविशेष । धूलिप्रा काराद्यतत्वात् खेटमुच्यते । विशे० ९२७ ।

उल्लुगं–अवरणम्–भग्नम् । प्रश्न० २२ ।

उल्लुगतीर – उल्लुकतीर–उल्लुकानद्यास्तीरे नगरविशेष । उत्त० १६५ ।

उल्लुगा – उल्लुका–नदीविशेष । उत्त० १६५ । आव० ३१७ ।

उल्लुगातीरं – उल्लुकातीरम् । पश्चिमदिग्वापतिस्थानम् । विशे० ९३४ । आव० ३१२, ३१० ।

उल्लुगमंगी–उल्लालाङ्गी । आव० ३९४ ।

उल्लुणिह–शिम्बी । नि० चू० द्वि० १४४ आ ।

उल्लुयतीरे – उल्लुकतीरे–उल्लुकानद्यास्तीरे नगरविशेष । भग० ७०५ ।

उल्लूह । ओघ० १४८ ।

उल्लेति–आर्द्रयति । आव० १०१ ।

उल्लोअ–उल्लोक –उपरिभाग । जं० प्र० ३९१ ।

उल्लोइआ-उल्लोयमिव उल्लोइअं च सेटिकादिना कुड्यादिषु धवलनम् । जं० प्र० ७६ ।

उल्लोइयं-सेटिकादिना कुड्यानां धवलनम् । भग० ५८० । कुड्यानां मालस्य च सेटिकादिभिः सम्मृष्टीकरणम् । जीवा० १६० । राज० ३६ । सम० १३८ । कुड्यमालानां सेटिकादिभिः सम्पृष्टीकरणम् । औप० ५ । कुड्यानां मालस्य च सेटिकादिभिः सम्मृष्टीकरणम् । जीवा० २०७ । प्रज्ञा० ८६ ।

उल्लोए-उल्लोकः, उल्लोचः । भग० ६८० । उपरिभाग । जं० प्र० ८९, ४०० । जीवा० २०५ । उल्लोच -चन्द्रोदय । सूर्य० २९३ । उल्लोक -उपरितनभाग । जीवा० २०९, ३६० ।

उल्लोय - उल्लोक -उपरिभाग । भग० ५४० । उद्देश । भग० ६२९ । लिप्तादेश । बृ० प्र० २५० आ ।

उल्लोयगं-उल्लोचनम् । आव० १२४ ।

उल्लोलिया-मलगुटिका । गुटिका । आव० ६८० ।

उल्लोलेह-उल्लोडयत । आचा० ४२३ ।

उल्हविज्झंतो-विध्याप्यमानः । आव० ३८४ ।

उवंगा - उपाङ्गानि - शिक्षादिषडङ्गार्थप्रपञ्चनपराः प्रबन्धाः । भग० ११४ । शिक्षादिषडङ्गव्याख्यानरूपाणि । अनु० ३२ ।

उवंगाइ-उपाङ्गानि-अङ्गावयवभूतान्यङ्गुल्यादीनि । प्रज्ञा० ४६९ ।

उव - उप-सामीप्यार्थे । प्रज्ञा० ४ । दश० १४५ । भग० ३७ । उपसर्गनिरर्थकोऽप्यप्यर्थेऽपि दृश्यते । उत्त० २३५ । सदृशार्थे, अन्तर्वचन । आव० ८७८ । अत्यधिक पुनः पुनः । उत्त० ६४४ ।

उवइअ-उपचिता, उन्नता, औपचयिकी, उचिता, अवगाढा, क्रमेण हीयमानोपचयी । जं० प्र० ११२ ।

उवइग-उद्देहिका । नि० चू० प्र० ७७ आ ।

उवइज्जा-अवपतेत्, आगच्छेत् । आचा० ३६५ ।

उवइस्सइ-उपदिश्यते-धातूनामपेक्षया सामीप्येन कथ्यते । दश० ११० ।

उवउग्गाहकरो-क्रियापरो । नि० चू० प्र० २६६ अ ।

उवउत्त-उपयुक्त -अनन्यचित्त । दश० १०६ । अवहित । भग० ८९ । णमोक्कारपरायणो । नि० चू० प्र० ४७अ । उपयुक्त -अभिगृहीतज्ञान । भग० ९७५ । व्यापृत, निरागम । विशे० ९७४ । अभ्याहृतम् । आचा० १७६ ।

उवएस-उपदेश -आदेश । व्य० प्र० १० आ । गुरुणा-ऽनुज्ञात । ओघ० १५१ । हिताहितप्राप्तिनिवृत्त्युपदेश-नादुपदेश । अनु० ३८ । अन्यतरक्रियायाः प्रवर्तनेच्छो-त्पादनं उपदेश । वचनविभक्तेर्द्वितीयो भेदः । अनु० १३४ । यथा आत्मा न बध्यते इत्यादिविषय । दश० १२० । उपदेश -गुर्वादिना वस्तुतत्त्वकथनम् । प्रज्ञा० ५८ । श्रुतस्य पर्याय । विशे० ८२३ । कथनम् । आव० ६०४, ३६५ ।

उवएसदव्वमूलं-उपदेशद्रव्यमूल-यच्चिकित्सको रोगप्रति-घातसमर्थं मूलमुपदिशत्यातुराय । आचा० ८८ ।

उवएसरुई-उपदेशो-गुर्वादिना वस्तुतत्त्वकथनं तेन रुचि - जिनप्रणीततत्त्वाभिलाषरूपा यस्य स उपदेशरुचि । प्रज्ञा० ५८ ।

उवएसिया-उप-सामीप्येन देशिता उपदेशिता । आव० ६२ ।

उवओग-उपयोग -स्वस्वविषये लब्ध्यनुसारेणात्मनः परि-च्छेदव्यापार । जीवा० १६ । उपयोजनमुपयोग -विवक्षित-कर्मणि मनसोऽभिनिवेश । नंदी १६४ । ज्ञान, दर्शन, प्रत्यय । विशे० ३६ । साकारानाकारभेद चैतन्यम् । ठाणा० १३४ । जीवस्य बोधरूपो व्यापार । अनु० १६ । अवहित त्वम् । उत्त० ५६१ । भावेन्द्रियस्य द्वितीयो भेद । भग० ८७ । मति । आव० ११६ । उपयोग -लब्धिनिमित्त आत्मनो मनस्मान्नियमाद् अर्थग्रहण प्रति व्यापार । आचा० १०४ । उपयोग -आत्मनः श्रुतपरिणाम । विशे० २६७ । चेतना-विशेष । भग० १४९ । चैतन्य साकारानाकारभेदम् । भग० १४८ । उपयोजनमुपयोग -विवक्षिते कर्मणि मनसो ऽभिनिवेश । आव० ४२६ । विपाकानुभवनम् । दश० ८६ । श्रानुत्तरदभिमुखता । आव० ३४१ । सावधानता । औप० ६८ । स्वाध्यायाद्युपयुक्तता । उत्त० १६५ । स्वस्व विषये लब्ध्यनुसारेणात्मनो व्यापार प्रणिधानम् । प्रज्ञा० २९४ । प्रज्ञापनाया पञ्चविंशतितम पदम् । प्रज्ञा० ६ । उपयोजन उपयोग भावे घञ्, यद्वा उपयुज्यते-वस्तुपरि-च्छेद प्रति व्यापार्यते जीवोऽनेनेत्युपयोग, 'पुंनाम्नि घ' इति करणे घप्रत्ययो बोधरूपो जीवस्य तत्त्वभूतो व्यापार । प्रज्ञा० ५२६ । दश० १०८ ।

उवकप्पिया-उपकल्पिता । उत्त० २८७ ।

उवकरण–उपकरण–अङ्गादानाख्य । बृ० तृ० ९८अ। उपकरण–ग्लानाद्यवस्थायामन्येनोपकारकरणम् । प्रश्न० १२९ । उपधि । परिग्रहस्य पञ्चदश नाम । प्रश्न० ९२ । अङ्गम् । भग० ७२४ ।

उवकरणपणिधाणे–उपकरणस्य लौकिकलोकोत्तररूपस्य वस्त्रपात्रादे संयमासंयमोपकाराय प्रणिधान–प्रयोग उपकरण प्रणिधानम् । ठाणा० ११६ ।

उवकरणसंधरे–उपकरणसंवर –अप्रतिनियताकल्पनीयवस्त्रादिग्रहणरूपोऽथवा विप्रकीर्णस्य वस्त्राद्युपकरणस्य संवरणम् । ठाणा० ४७३ ।

उवकरिंसु–अवकीर्णवन्त । आचा० ३११ ।

उवकरिज्ज–उपकुर्यात्–ढौकयेत् । आचा० ३५१ ।

उवकरेउ–उपकरोतु । उपा० १५ ।

उवकरणे–उपकरणे । बृ० द्वि० २८१ अ ।

उवकुलं–कुलस्य समीप उपकुलम् । ज० प्र० ५०६ ।

उवकुला–उपकुलानि । सूर्य० १११ ।

उवकोसा–कोशाया लघ्वी भगिनी उपकोशा । आव० ६९५ । आव० ४२५ ।

उवक्कम–उपक्रमण–आयु पुद्गलाना संवर्त्तन समुपस्थितम् । आचा० २९१ । उपक्रमणमुपक्रम, उपक्रम्यतेऽनेनास्मादस्मिन्निति वोपक्रम –व्याचिख्यासितशास्त्रस्य समीपानयनम् । आचा० १ । उपक्रमण उपक्रम –दीर्घकालभाविन्या स्थितेः स्वल्पकालताऽऽपादनम् । उत्त० ३२१ । उपेति–सामीप्येन क्रमण उपक्रम –दूरस्थस्य समीपापादनम् । ओघ० १ । उपायेन परिज्ञानम् । ठाणा० १५१ । उपायपूर्वक आरम्भ । ठाणा० १५८ । प्रकृत्यादित्वेन पुद्गलानां परिणमनसमर्थं जीववीर्यम् । ठाणा० २०१ । अभिप्रेतार्थसामीप्यानयनलक्षण । आव० २५७ । कालगमनम् । बृ० द्वि० २३० अ । नाश । (आउ०) । उप–सामीप्ये 'क्रमुपादविक्षेपे' उपक्रमण दूरस्थस्य शास्त्रादिवस्तुनस्तैस्तै प्रतिपादनप्रकारै समीपीकरण न्यासदेशानयन निक्षेपयोग्यताकरणमित्युपक्रम । विशे० ४३० । कर्मवेदनोपाय । भग० ६५ । स्वयमेव समीपे भवनमुदीरणाकरणेन वा समीपानयनम् । प्रज्ञा० ५५७ । उपक्रम –दूरस्थस्य वस्तुनस्तैस्तै प्रतिपादनप्रकारै समीपमानीय निक्षेपयोग्यताकरण, उपक्रम्यते–निक्षेपयोग्य क्रियतेऽनेन गुरुवाग्योगेनेति, उपक्रम्यतेऽस्मिन् शिष्यश्रवणभावे सतीति, उपक्रम्यतेऽस्माद्विनीतविनेयविनयादिति वा । अनु० ४५ । विशे० ४३० । उपक्रमणमुपक्रम इति भावसाधन व्याचिख्यासितशास्त्रस्य समीपानयनेन निक्षेपावसरप्रापण, उपक्रम्यते वाऽनेन गुरुवाग्योगेनेत्युपक्रम इति करणसाधन, उपक्रम्यतेऽस्मिन्निति वा शिष्यश्रवणभावे सतीत्युपक्रम इत्यधिकरणसाधन, उपक्रम्यतेऽस्मादिति वा विनेयविनयादित्युपक्रम इत्यपादानसाधन इति । ज० प्र० ५ । उपक्रम्यते–क्रियतेऽनेनेत्युपक्रम –कर्मणो बद्धस्योदीरितस्य वा निकाचितस्य परिणमनहेतुर्जीवस्य शक्तिविशेषो योऽन्यत्र करणमिति रूढ, बन्धनादीनामारम्भ । ठाणा० २०१ । वस्तुपरिकर्मकरण । ठाणा० २०१ । अप्राप्तकालस्य निर्जरणम् । भग० ७१० । आनुपूर्व्यादि । सम० ११५ । निरुक्तिस्तु उपक्रमण उपक्रम इति भावसाधन, शास्त्रस्य न्यासदेशसमीपीकरणलक्षण, उपक्रम्यते वाऽनेन गुरुवाग्योगेनेत्युपक्रम इति करणसाधन, उपक्रम्यतेऽस्मिन्निति वा शिष्यश्रवणभावे सतीत्युपक्रम इत्यधिकरणसाधन, उपक्रम्यतेऽस्मादिति वा विनीतविनेयादित्युपक्रम इत्यपादान इति । ठाणा० ४ । कर्मोदीरणकारणम् । ठाणा० ०९ ।

उवक्कमकाल–उपक्रमकाल – अभिप्रेतार्थसामीप्यानयन लक्षण । विशे० ८३७ । अभिप्रेतार्थसामीप्यानयनलक्षण सामाचार्यायुष्कभेदभिन्न । दश० ९ ।

उवक्कमिओ–औपक्रमिक –दण्डकशाशस्त्रादिनाऽसातवेदनीयोदयापादक । सूत्र० ७८ ।

उवक्कमिया–उपक्रमणमुपक्रम –स्वयमेव समीपे भवनमुदीरणाकरणेन वा समीपानयन तेन निर्वृत्ता औपक्रमिकी । प्रज्ञा० ५५७ । औपक्रमिकी । सम० १४६ । प्रज्ञा० ५५४ । उपक्रमेण–कर्मोदीरणकारणेन निर्वृत्ता तत्र वा भवा औपक्रमिकी–ज्वरातीसारादिजन्या । ठाणा० ८९ । कर्मवेदनोपायस्तत्र भवा औपक्रमिकी स्वयमुदीर्णस्योदीरणाकरणेन चोदयमुपनीतस्य कर्मणोऽनुभव । भग० ६५ । स्वयमुदीर्णस्योदीरणाकरणेन चोदयमुपनीतस्य वेद्यस्यानुभवात् औपक्रमिकी । भग० ४९७ ।

उवक्कम्म–उपक्रम्य–आगत्य । सूत्र० ३१६ ।

उवक्कयं–उपस्कृत–निष्पक्वम् । जीवा० २६८ ।

उवक्केस–उपक्लेश –कृपिपाशुपाल्यवाणिज्याद्यनुष्ठानानुगताः पण्डितजनगर्हिता शीतोष्णश्रमादयः पुनरक्रगचि-ताद

गथ। दश० २७३। उवक्केस-स्वगतशोकादिः। भग० ५२५।

उवक्खड – उपस्कृतं – उपस्कर्तुमारब्धम्। पिण्ड० ९५। उपस्करणमुपस्कृतं-पाकः। ठाणा० २२०। लवणजीरकादि-संस्कृतम्। उत्त० ३६०।

उवक्खडणसाला–महाणसो। नि० चू० प्र० २७२ आ।

उवक्खडाम–जहा वणगादीण उवक्खडियाण तेण णिउजंति ते कप्पइ। ण उवक्खडियाण भण्णति। नि० चू० द्वि० १२५ अ।

उवक्खडियं। ओघ १६०।

उवक्खडेंति–उपस्कुर्वन्ति। आव० २९१।

उवक्खडे–उपस्कृतानि–निष्पन्नानि। ज० प्र० १०५।

उवक्खडेउ–उपस्करोतु–राध्यतु। उपा० १५।

उवक्खडेज्जा–तक्षणादि पचेत। आचा० १५१।

उवक्खरो–सर्पादिक। नि० चू० प्र० १५६ अ। उपकरणम्। (मर०)। उपक्रियतेऽनेनेति उपस्कर –हिङ्ग्वादि। ठाणा० १२०।

उवग–गर्ता। बृ० द्वि० ३१ अ।

उवगओ–उपगतः। आव० ४०७। सामीप्येन कर्मनिगम लक्षणेन प्राप्त। आव० ३८६।

उवगच्छया–वक्रता। नि० चू० प्र० २०५ अ।

उवगत–उपगतः। आव० ३७८। उपगत.–आश्रित। उत्त० १७८।

उवगमं–उपगच्छति–सादृश्येन प्राप्नोति। उत्त० २३५।

उवगमण–उपगमनं–अवस्थानम्। सम० ३५। अप्रच्छन्नतयाऽवस्थानम्। भग० १२०।

उवगयं–उपगत–सामीप्येनात्मनि शब्दादिज्ञानं परिणतम्। नंदी १८०। मृतम्। पिण्ड० १३४। उपगतं–ज्ञानम्। आव० ८१२।

उवगरण–चोलपट्टकं रजोहरणं नेपथ्याद्ययोगेन मुखवस्त्रिका उपलक्षणत्वादौपग्रहिकमौपग्रिकी च कल्पी। बृ० प्र० २९९ अ। दंडकं रजोहरणं च। बृ० प्र० ७१ आ। उपकरण–औपग्रहिकम्। प्रश्न० १५६। उपकरणं–उपधिरेव। आव० ५६८। आवरणप्रहरणादिकम्। भग० ९४। लौहीकडुच्छुकादि। भग० २३८। वस्त्रादिकम्। भग० ३२२। खड्गकटक-कटकसार्गलादि। आचा० ६०। उपकरोतीति उपकरणम्। ओघ० २०७। वस्त्रादि। भग० ७०० [illegible]। उत्त० ३५८। अनेकविधं कर्तरिकसूच्यादिकम्। अनु० १५९। रजोहरणदण्डकादि। ओघ० १२५। द्रव्येन्द्रियस्य द्वितीयो भेदः। सम० ८७। प्रज्ञा० ३३। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] निर्वृत्तिमत्याः शक्तिविशेषः। जीवा० १६। [illegible] भक्तादि। आचा० १००। औपधिकम्। उत्त० ३५८।

उवगरणपडिमा – उपकरणप्रतिमा–उपकरणाभिग्रहः समागच्छन्तु। आचा० ३८८।

उवगरणसंजमे–उपकरणसंयम–महामूल्यवस्त्रादिपरिहारः, पुस्तकपञ्चकतृणपञ्चकचर्मपञ्चकपरिहारो वा। ठाणा० ३३१।

उवगरयं(यत्थ)–अपराकम्। आव० ६६६।

उवगसिसाणं-उपसंश्लिष्य, समीपमागत्य। सूत्र० १०७।

उवगहिओ–उपगृहीत –उपष्टम्भः। आव० ७६८। उपगृहीत। आव० ७९३।

उवगा–उपगाः–प्राप्ता। प्रज्ञा० ७०। उपगच्छन्ति–सौहृद-चित्ततया सापराधयो वर्तन्ते। जीवा० २६०।

उवगारयम–उपकारम्–यत्पूर्वोक्तस्य विस्तरोऽनुक्तस्य च प्रतिपादनानुपकारं यच्च तद्। आचा० ३१८।

उवगारियलेणाइ – औपकारिकलयनानि–प्रासादपीठकल्पानि। भग० ६१७।

उवगारिया–राजधानीस्वामिनः सम्बन्धिनः प्रासादावतंसकस्य उपकारिकेति–उपष्टम्भानीति उपकारिका–राजधानीस्वामिसम्बन्धिप्रासादावतंसकादीनां पीठिका। जीवा० २०२। पीठिका। राज० ८१।

उवगिण्हह–उपगृह्णीत उपष्टम्भं कुरुत। भग० २१९।

उवगुहिअ – उपगूहितं–परिरम्भम्। सदृशसम्यग्दृष्टेः षष्ठो भेदः। दश० १०४।

उवग्गो–अन्यगच्छीय साधु। बृ० तृ० २१० अ। पुराणः कुमारो वा। नि० चू० प्र० ८८ अ।

उवग्गं–उपाग्रं–समीपभूतम्। आव० ४०१।

उवग्गच्छाया–छायाभेदः। सूर्य० ९५।

उवग्गह–उपग्रह –शिष्याणामेव वस्त्रादिषु संग्रहपूर्वमुपकरणम्। व्य० प्र० १०२ अ। उपष्टम्भः। पिण्ड० २७। उपग्रह्णातीति उपग्रहः। ओघ० २०३। शिष्याणां भक्त-

उवचिए–उपशोभित–भूत । जं० प्र० २९२ । उपचित–समृद्ध । ज्ञाता० ९८ ।

उवचिओ – उपचित –निवेशित । प्रज्ञा० ८६ । जीवा० २२७, १६० ।

उवचिअंजलि–निवेशरचनत निरचनतो वा उपनीताञ्जलिः । भग० २१३ ।

उवचिट्ठइज्जा–उपतिष्ठत्–विनयेन सेवेत । दश० २४० ।

उवचिण – उपचिनवन्त –परिपोषयत । ठाणा० १७९ । उपचयनं–चितस्याबाधाकाल मुक्त्वा ज्ञानावरणीयादितया निषेक । ठाणा० १९५ । परिपोषणम् । ठाणा० ४१७ ।

उवचिणाइ – प्रदेशबन्धापेक्षया निकाचनापेक्षया चेति । भग० १०२ ।

उवचिणिंसु–उपचितवन्त । ठाणा० ७८९ ।

उवचिय–उपचित–तेजितम् । प्रज्ञा० ९१ । उपचित–परिकर्मितम् । राज० ३७ । जीवा० २३० । पुष्टम् । जीवा० २०४ । मांसलम् । जीवा० २७१ । समानजातीयप्रकृत्यन्तरदलिकसङ्क्रमेणोपचयं नीत । प्रज्ञा० ४७९ । भूत । जं० प्र० ८७ । परिकर्मितम् । भग० ५४० । विशिष्टपरिकर्मितम् । राज० ९३ । उपचय –पीन पुष्टेन प्रदेशाद्युभागादेर्वर्धनम् । भग० ५३ । औपचयिक –उपचयनिर्वृत्त औपचयिको वा–उचित । प्रश्न० ८१ । निवेशित । औप० ५ । बहुश प्रदेशसामीप्येन शरीरे चिता इति । भग० २४ । पुष्ट । जं० प्र० ४८ ।

उवचीयइ – उपचीयते–उपचयमायाति । जीवा० २२२, ३०६ । उपचयमुपगच्छति । जीवा० ४०० ।

उवच्छगो–रक्षको । नि० चू० प्र० २११ अ ।

उवच्छुभे । आव० १८० ।

उवजाइय–उपयाचिते देवताराधने भव औपयाचितक । ठाणा० ५१६ ।

उवजीवइ–उपजीवति–अनुभवति । भग० ११२ ।

उवजीवति – उपजीवति–जीवनाश्रमाश्रयते । व्य० प्र० १६२ आ ।

उवजीविओ–उपजीवित । ठाणा० ३७२ ।

उवजेमणा–रसवती । नि० चू० प्र० ३४९ आ ।

उवजोइया–ज्योतिष समीपे ये त उपज्योतिषस्त एवो पज्योतिष्का –अग्निसमीपवर्तिनो महानसिका वह्निपो वा । उत्त० ३६८ ।

उवज्झाए–उपाध्याय । प्रज्ञा० ३२७ । अध्यापक । आव० ३८३ ।

उवज्झाओ – उपयोगपूर्वक पापपरिवर्जनतो ध्यानारोहणेन कर्माण्यपनयन्तीति उपाध्याय । आव० ४४९ ।

उवज्झाय–उपाध्याय –उप–समीपमागत्य अधीयते–पठ्यते यस्य स, उप अधि–आधिक्येन गम्यते स., उप अधि–आधिक्येन स्मर्यते सूत्रतो जिनप्रवचनं यस्मात् स, उपाधि –सन्निधिस्तेन सन्निधा आय –लाभ श्रुतस्य यस्य, उपाधीना–विशेषणाना आयो–लाभ यस्मात् स, उपाधिरेव–सन्निधिरेव आयं–इष्टफलं दैवजनितत्वेन आयाना–इष्टफलाना समूहस्तदेकहेतुत्वात् यस्य, आधीना–मन पीडाना आयो–लाभ आध्याय, अधिया–कुबुद्धीना आयोऽध्याय, दुर्ध्यान वाऽध्याय, उपहत आध्यायो वा अध्यायो येन स । भग० ३ । सूत्रदाता । ठाणा० २१९ । आचारगोचरविनय स्वाध्याय वा आचार्यादिनु तस्मात् पा गीयते सद्ग्रहोपग्रहानुग्रहार्थं वा । तत्त्वा० ९–२४ । उपगम्योपेत्य यतो येभ्योऽधीयते पठन्ति शिष्यास्त उपाध्याया, यद्वा यस्मादुप–समीपे गत–प्राप्ते शिष्यमध्यापयन्ति मत उपाध्याया, यस्माच्च स्वपरहितस्योपायाध्यायका उपायन्ति स्तकास्ततस्त उपाध्याया । विशे० १२३७ । , सूत्रार्थतदुभयविद ज्ञानदर्शनचारित्रेषु युक्ता–उपयुक्तास्तथा शिष्याणा सूत्रवाचनाप्रदानाभिनिष्पादका एतादृशा भवन्ति । व्य० प्र० १७१ आ ।

उवट्टगा । नि० चू० प्र० २३० आ ।

उवट्टणं–मृष्ट उवट्टण । नि० चू० प्र० १९० आ ।

उवट्टित्ता–उद्वृत्य–तत्परित्यागेनान्यत्र गत्वा । उत्त० २१६ ।

उवट्ठिय–उपस्थापित । आव० ७८८ ।

उवट्ठवेति–उपस्थापयति, उपढौकयति, प्रभूतीकरोति । जं० प्र० २४४ ।

उवट्ठाइ–उत्तिष्ठते । आव० ३१८ ।

उवट्ठाएज्जा–उपतिष्ठेत, उपस्थानम्–परलोकक्रियास्वभ्युपगम कुर्यादित्यर्थ । भग० ६४ ।

उवट्ठाणं–गोस्थानविष्ठाण । नि० चू० द्वि० ५० अ । उपस्थानेन–धर्मचरणाभ्युपगमेन वर्तते इति उपस्थान । आचा० २२७ ।

उवट्ठाणगिह – उपस्थानगृहं – आस्थानमण्डपः। ठाणा० २९८। भग० २०० ।

उवट्ठाणसाला–उपस्थानशाला–आस्थानसभा। औप० २३। आस्थानशाला। आव० ३००। उपवेशनमण्डपः। निरय० ८। आस्थानमण्डपः। निरय० १०। जं० प्र० १८७।

उवट्ठाणा – मासद्वयं चतुर्मासद्वयं चावर्षयित्वा पुनस्तत्रैव गमनाद्युपस्थानेति। ठाणा० ३२१।

उवट्ठावणा–उपस्थापना–महाव्रतारोपणरूपा। उत्त० ५६८। उप–सामीप्येन गर्वेतावस्थानलक्षणेन तिष्ठन्त्यस्यामिति उपस्थापना–शय्या। व्य० द्वि० १०४ अ।

उवट्ठावणाए गहणं–तत्रोपस्थापनायां विधीयमानायां दरिद्रत्वोपसंताकारहस्तादिभिर्यद् रजोहरणादि गृह्यते तद् उपस्थापनाग्रहणम्। बृ० द्वि० २५६ अ।

उवट्ठावणायरिते–उपस्थापनयाचार्यः। ठाणा० २३५।

उवट्ठाविए गहणं – उपस्थापितस्य – छेदोपस्थापनीयचारित्रे स्थापितस्य यद् उपधेपरिणं परिभोगो वा तद् उपस्थापितग्रहणम्। बृ० द्वि० २८६ अ।

उवट्ठावित्तए – उपस्थापयितुं – महाव्रतेषु व्यवस्थापयितुम्। ठाणा० ५७।

उवट्ठिम–उपस्थितं–उद्यतम्। औप० १०६।

उवट्ठिए–उपस्थितं–प्रगुणम्। आव० ५४१। दीक्षितः। बृ० द्वि० २६४ अ। प्रत्यासन्नावस्थायि। भग० १००।

उवट्ठिया–दीक्षिता। नि० चू० द्वि० ९४ आ।

उवट्ठियाभो–[illegible]। नि० चू० द्वि० ४० आ।

उवट्ठिय–उपस्थितः। आव० ५५९। उपस्थितः–उद्यतः। उत्त० ६१७। प्रत्यासन्नीभूतम्। उत्त० ६६८।

उवणई–उपनयनं–[illegible] गमने धर्मश्रवणनिमित्तं वा साधुसकाशे गमनम्। आव० १२९।

उवणयणं–[illegible]। भग० ४७५। उपनयनं–[illegible] [illegible]। प्रश्न० १९।

उवणिक्खिविउं–उपनिक्षिप्य। आव० ५५५।

उवणिवाय–उपनिपातः–[illegible]। ठाणा० ४२।

उवणिविट्ठं–उपविष्टं–[illegible] स्थितम्। जीवा० १९९।

उवणिहि – उप–[illegible] निधिः [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। अनु० ५६।

उवणीअ–उपनीतः–नियोजितः। ठाणा० २५९। उपसंहारोपनयमुक्तमुपनीतम्। अनु० १३१। उपनयोपसंहृतमुपनीतम्। अनु० २६२। उपसंहारयुक्तम्। ठाणा० १९७। प्रापितम्। ठाणा० ४९४। निगमितं, योजितम्। ठाणा० २५९।

उवणीए–उपनीतं–योजितम्। जं० प्र० १०५।

उवणीते–उपनीतं–प्रापितं, दशमो विशेषः। ठाणा० ४१२।

उवणीय–उपनीतं–योजितम्। जीवा० २६८। उपनयोपसंहृतम्। आव० २७३। विनीतं, ढौकितं, शापेन पतितगुणं वा। औप० ३९। प्रापितः। आचा० ७८।

उवणीयअवणीयवयणं – उपनीतापनीतवचनं – [illegible] गुणः प्रशस्यः [illegible]। आचा० ३८७।

उवणीयवयणं – उपनीतवचनं–प्रशंसावचनम्। आचा० ३८७। प्रज्ञा० २५७। गुणोपनयनवचनम्। प्रश्न० १०८।

उवणीयावणीयवयणं – उपनीतापनीतवचनं – यत्प्रशस्य निन्दति। प्रज्ञा० २५७। यत्रैकं गुणमुपनीय गुणान्तरमपनीयते तत्। प्रश्न० ११८।

उवणेइ–उपनयति, प्राभृतीकरोति। जं० प्र० १०४।

उवण्णं–ढौकितं। नि० चू० प्र० २७८ आ।

उवण्णत्थ–उपन्यस्तं–उपन्यस्तम्। दश० १३१।

उवण्दाणयं–[illegible]। नि० चू० प्र० ११६ आ।

उवतत्तो–उपतप्तः–आपद्गतापः। प्रश्न० ११।

उवतेस्सणो–उपदिश्यत इति उपदेशनं–उपदेशक्रियाया व्यावृत्तमुपदेश [illegible] क्रियाया यत् व्याप्यं तत् कर्मेत्यर्थः। द्वितीया वचनविभक्तिः। ठाणा० ४२८।

उवत्तेसमई–[illegible] [illegible] [illegible]। ठाणा० ५०३। उत्त० ५१२।

उवत्तायत्तिए–[illegible]। सूत्र० १८०।

उवत्तिया–अपवर्तिता। ठाणा० ४८।

उवत्थड–[illegible]–[illegible]। भग० १०, १५३।

उवत्थंभ–[illegible]। नि० चू० द्वि० ६० अ।

उवत्थाण–उपस्थानं–[illegible]। निरय० ३३।

उवत्थाणिय–उपस्थानं–[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। निरय० ३३।

उवत्थाणीअ – [illegible]। जं० प्र० २०२, २०३।

उवत्थिए–अभ्युपगत । ज्ञाता० २२० ।

उवत्थिया–उपस्थिता–उपनता । सम० १८ ।

उवदंसं–उपदर्शनम् । आव० ७२६ ।

उवदंसणकूड–उपदर्शनकूट, उपदर्शननामकं कूटम् । जं० प्र० ३७७ ।

उवदंसिज्जंति – उपदर्श्यन्ते–निगमनेन शिष्यबुद्धौ नि शङ्कं व्यवस्थाप्यन्ते । नंदी २१२ । उपदर्श्यन्ते उपनयनिगमनाभ्यां सकलनयाभिप्रायतो वा । सम० १०९ ।

उवदंसिया–उप–सामीप्येन यथा श्रोतॄणा झटिति यथाव स्थितवस्तुतत्त्वावबोधो भवति तथा स्फुटवचनैरित्यर्थ, दर्शिता –श्रवणगोचरं नीता उपदिष्टा । प्रश्ना० ४ ।

उवदंसेइ–सकलनययुक्तिभि उपदर्शयति । भग० ७११ । ठाणा० ५०३ । उपदर्शयति–प्रकाशयति । भग० १४९ ।

उवदिट्ठाभावमूलं–उपदेष्टृभावमूलं – उपदेष्टा–यै कर्मभि प्राणिनो मूलत्वेनोत्पद्यन्ते । आचा० ८८ ।

उवद्दवा–उपद्रवा राजचौर्यादिकृता । भग० ४६९ ।

उवद्दवेइ–उपद्रवयति–उपद्रवं करोति । ठाणा० ३०५ ।

उवद्दवेह–उपद्रवयथ–मारयथ । भग० ३१८ ।

उवधाणं–उपदधातीत्युपधानं–तप । दश० १०४ ।

उवधायपडगो–पडगस्स बीओ भेओ । नि० चू० द्वि० ३१ अ ।

उवधारणया–धार्यतेऽनेनेति धारण, उप–सामीप्येन धारण उपधारण–व्यञ्जनावग्रहेऽपि द्वितीयादिसमयेषु प्रतिसमयपूर्वापूर्वशब्दादिपुद्गलादानपुरस्सर प्राक्तनप्राक्तनसमयगृहीतशब्दादिपुद्गलधारणपरिणाम तद्भाव उपधारणता । नंदी १७४ । उपधारणता – अविच्युतिस्मृतिवासनाविषय करणम् । ठाणा० ४४१ ।

उवधारियं–उपधारितं–अवधारितम् । भग० १०१ ।

उवनंद–उपनन्द । आव० २०१ ।

उवनगरगामं–उपनगरग्राम । आव० ३०१ ।

उवनिक्खित्ते–उपनिक्षिप्त.–व्यवस्थापित । आचा० ३४४ ।

उवनिग्गय–उपविनिर्गत –निरन्तरविनिर्गत । राज० ६ ।

उवनिहिते–उपनिधीयत इति उपनिधि –प्रत्यासन्न यद्यथा-कथञ्चिदानीतं तेन चरति तद्ग्रहणायेत्यर्थं इत्यौपनिधिक, उपनिहितमेव वा यस्य ग्रहणविषयतयाऽस्ति स प्रज्ञादेरा-कृतिगणत्वेन मत्वर्थीयाण्प्रत्यये औपनिहित इति । ठाणा० २९८ ।

उवनिहिय–उपनिधिना – प्रत्यासत्त्या चरति–प्रत्यासन्नमेव गृह्णाति य स औपनिधिक: । प्रश्न० १०६ ।

उवनिही–उपनिधि –प्रत्यासत्ति । प्रश्न० १०६ ।

उवन्नास–उपन्यसनं उपन्यास । दश० ३५ ।

उवन्नासोवणए–वादिना अभिमतार्थसाधनाय कृते वस्तूपन्यासे तद्विघटनाय यः प्रतिवादिना विरुद्धार्थोपनयः क्रियते पर्यनुयोगोपन्यासे वा य उत्तरोपनय. स उपन्यासोपनय । ठाणा० २५४ ।

उवप्पयाण–उपप्रदानं–अभिमतार्थदानम् । निरा० ६५ । उपप्रदानम् । दश० १०९ ।

उवबूहियं – उपबृंहित–समर्थितं, अनुमतं वा । आव० ७३९ ।

उवभोग–उपभुज्यत इति उपभोग –सकृद्भोगोऽशनपानादि, अन्तर्भोग, आहारादि वा । आव० ८२८ । सकृद्भोग । भग० २९७ । आव० ८३० । पुन पुनर्भुज्यत इति उपभोग –वस्त्रालङ्कारादि । प्रश्ना० ४७५ । ण्हाणवत्थाभरणगंधमल्लाणुलेवणभूसणवासतंबोलादि । नि० चू० तृ० १ आ । धारणमुपभोग । आव० ३२५ । उपभोग –पौन पुन्येन चोपभोजनमुपभोग । भग० ३५० ।

उवभोगंतराए – उपभोगान्तराय: – यदुदयवशात् सत्यपि विशिष्टवस्त्रालङ्कारादिसम्भवेऽसति च प्रत्याख्यानपरिणामे वैराग्ये वा केवलकार्पण्यान्नोत्सहते भोक्तुं तत् । प्रज्ञा० ४७५ ।

उवम–उपमीयतेऽनेन दार्ष्टान्तिकोऽर्थ इत्युपमानम् । दश० ३४ ।

उवमा उपमा–सादृश्यम् । उत्त० २७९ । दृष्टान्ता । सू० प्र० १६८ आ । सादृश्योपदर्शनरूपा । उत्त० २७२ । उपमादोष –हीनाधिकोपमानाभिधानं, अष्टाविंशतितम. सूत्रदोष । आव० ३७४ । उपमा । प्रज्ञा० ३६४ । साधर्म्यविशेष । जीवा० २७८ । उपेत्युपयोगपूर्वकं मेति ज्ञानं, उपमा–सम्प्रधारणा । उत्त० २२४ ।

उवमाणं–उपमानं–दृष्टान्त. । ओघ० १७ ।

उवमादोसो–उपमादोष –यत्र हीनोपमा क्रियते । सूत्रस्य द्वात्रिंशद्दोषेऽष्टाविंशतितमो दोष । अनु० २६२ ।

उवयंति–अवपतन्ति–अवतरन्ति । आचा० ३६६ ।

उवलिंपिज्ज-उपलिम्पनम् । आचा० १३५ ।

उवलित्ता-जातिजुंगिलामेओ । नि० चू० द्वि० ८३आ ।

उवलेहा-सतुष्टा । उत्त० १९२ ।

उवलेवण-उपलेपने छगणादिना । अनु० २६ । छगणमट्टियाए लिंपण । नि० चू० प्र० २३१अ ।

उवलेवणकओवयारो-कृतोपलेपनोपचार ।आव० ४१६।

उवल्लियंती-उपलीयन्ते-आश्रयन्ति । व्य० द्वि० २७८आ ।

उवल्लिसामि-उपालयिष्ये-वत्स्यामि । आचा० ४०६ ।

उवयज्जंति-उत्पद्यते । जीवा० ११० ।

उवयंजिऊण-उपयुज्य-उपयोग दत्त्वा । ओघ० ११६ ।

उवयज्झा-उपयाचा -राजादिवल्लभा । औपयाचा -राजादिवल्लभा कर्मकरा इति । दश० २४८ ।

उववण्णो-उपपन्न । जीवा० ९७ ।

उववत्तारो-वचनव्यत्ययादुपपत्ता भवति इति ।ठाणा० ४२०।

उववन्नो-उपपन्न -आश्रित । सूर्य० २८१ ।

उववाइए-उपपात -प्रादुर्भावो जन्मान्तरसङ्क्रान्तिः, उपपाते भव औपपातिक । आचा० १२ । उपपादुक -भवान्तरसङ्क्रान्तिभाक् । आचा० २० ।

उववाइय-उपपातेन निर्वृत्त औपपातिक -भवाद्भवान्तरगामीति । सूत्र० २० । उपयाच्यते-मृग्यते स्म यत् उपयाचित-ईप्सित वस्तु । ज्ञाता० ८९ ।

उववाइया-उपपाताज्जाता उपपातजा अथवा उपपाते भवा औपपातिका -देवा नारकाश्च । दश० १४१ ।

उववाए - उपपात - उपपाताभिमुख्येनापान्तरालगतिरूपे स्थर्थे । भग० ९६१ । देवजन्म । ठाणा० ४१९ । नारकानुपातार्थे, द्वादशशते षष्ठोद्देशक । भग० ५९६ । उपपात -प्रादुर्भाव । प्रज्ञा० ३२८ ।

उववाएणं-उपपातमुपपात, यावत्पृथ्वीकायिकाना पर्याप्ताना यदनन्तरमुक्तं स्थान तस्याभिमुख्यमिति भावेनोपपातेन, उपपातमङ्गीकृत्य । प्रज्ञा० ७३ ।

उववात-उपपाते-नारकदेवानां जन्म । ठाणा० ४६२ । उपपात -गमनमात्रम् । ठाणा० ३५६ ।

उववातसभा-उपपातसभा-यस्यामुत्पद्यते सा । ठाणा० ३१२ ।

उववातो-जन्मप्रभव । नि० चू० प्र० २४१अ ।

उववायं-उपपातं-जन्म । आचा० १६३ । भवनपतिस्थानप्राप्त्याभिमुख्यम् । भग० १४३ । उपपातेन निर्वृत्तं औपपातिकम् । आव० ७३१ । उप-समीपे पतन-स्थानं उपपात दत्वान्तर्विषयोपस्थानं । उत्त० ४४ । उपपात -सेवा । भग० १६८ ।

उववायगई-उपपाताय-उत्पादाय गमन सा उपपातगति । भग० ३८१ ।

उववायगती-उपपात एव गति उपपातगति । गतिप्रपातस्य चतुर्थो भेद । प्रज्ञा० ३२६ ।

उववायसभा-सिद्धायतनस्योत्तरपूर्वस्यां सभा उपपातसभा। जीवा० २३६ ।

उववास-उपवास , अभक्तार्थकरणम् । ठाणा० १२६ ।

उववूह-उपबृंहणं-समानधार्मिकाणां सद्गुणप्रशंसनेन तद्वृद्धिकरणम् । दश० १०२ । उपबृंहणमुपबृंहा-दर्शनादिगुणान्वितानां सुलब्धजन्मानो यूयं युष्मे च भवाशामिति(?)त्यादिवचोभिस्तद्गुणपरिवर्धनं सा । उत्त० ५६७ । समानधार्मिकाणां सद्गुणप्रशंसनेन तद्वृद्धिकरणम् । प्रज्ञा० ५६ ।

उववूहए-उपबृंहते-समर्थयति । दश० ४४ ।

उववेओ - उपेत इति स्नानवत्सकलगुणोपपेत । ठाणा० ४२१ ।

उववेय - उपपेत -युक्त । जीवा० २७४ । भग० ११९ । उप अप इत इति शब्दत्रयस्य स्थाने शकन्ध्वादिदर्शनादुपपेत -युक्त । ज्ञाता० ११ ।

उवसंकमित्ता-उपसङ्क्रम्य । सूर्य० ११ ।

उवसंकमित्तु-उपसङ्क्रम्य आगन्तीभूय । आचा० ३३१। उपसङ्क्रम्य-उपेत्य । आचा० २७१ ।

उवसंखा-उपसंख्या-सम्यग्यथावस्थितार्थपरिज्ञानम् । सूत्र० २१४ ।

उवसंत-उपशान्तं-अनाकुलम् । ओघ० ११६ । यत् क्षेत्रगतायामनुत्पन्नं वर्तते तत् । विध्यातमिथ्यात्वमुदीर्णं च मिथ्यात्वभावं च । विशे० २८६ । किञ्चिन्मिथ्यात्वकल्पनामपनीय सम्यक्त्वकल्पतया परिणत किञ्चिन्मिथ्यात्वरूपमेव । बृ० प्र० २१आ । रागद्वेषाद्युपशमात् उपशान्त । आचा० १०० । कषायोदयाभावतः शान्त । अनु० १४० । अन्तर्वृत्त्या उपशान्त । भग० ४९० । किञ्चिन्मिथ्या

दयमपनीतमिथ्यात्वभावं च । विष्कम्भितोदयमित्यर्थः । ठाणा० ४८ । उपशान्त–न सर्वथाऽभावमापन्नं, निकाचितावस्थोद्रेकरहितं वा । प्रज्ञा० ४०३ । औप० ३५ । जं० प्र० १४६ । जं० प्र० ३८९ । जम्बूद्वीपैरवते तीर्थकरनाम । सम० १५३ । पवज्जापरिणत । नि० चू० द्वि० २८अ । उपशान्त –उपरत । दश० २०६ । सूत्र० ४१७ । अपगतसन्देह सदृश इति । सूत्र० ४०९ । अनुदयावस्थ । प्रज्ञा० २९१ ।

उवसंतकसातो उपशान्तकषाय । उत्त० २५७ ।

उवसंतजीवी –अन्तर्वृत्त्यपेक्षया उपशान्तजीवी । प्रश्न० १०६ ।

उवसंतमोह–उपशान्तमोह –अनुत्कटवेदमोहनीय । भग० ७२३ । श्रेणिपरिसमाप्तावन्तर्मुहूर्तं यावदुपशान्तवीतराग । भूतग्रामस्यैकादश गुणस्थानम् । आव० ६१० ।

उवसंतमोहणिज्जो–उपशान्तमोहनीय – उपशान्त–अनुदय प्राप्त मोहनीय दर्शनमोहनीय यस्यासौ । उत्त० ३०६ ।

उवसंपज्जण – उवसंपदन उपसम्पद् – अभ्युपगमप्रतिपत्ति, सा च दान च स्वरूपपरित्याग उपसम्पद्दानम् । उत्त० ४७० ।

उवसंपज्जइ–उपसम्पद्यते । आव० ८२५ ।

उवसंपज्जणा–उपसम्पद् । दश० १०५ ।

उवसंपज्जमाणगति–उपसम्पद्यमानगति –यदन्यमुपसम्पद्य–आश्रित्य तदवष्टम्भेन गमनम् । विहायोगतेस्तृतीयो भेद । प्रज्ञा० ३२७ ।

उवसंपज्जसेणियपरिकम्मे–पञ्चम परिकर्म । सम० १२८ ।

उवसंपज्जित्ता–उपसम्पद्य–सामीप्येनाङ्गीकृत्य । दश० १५० ।

उवसंपया–उपसम्पत्–... । सूत्र० ... ।

उवसंपया–उपसपत्–सामीप्येनाङ्गीकरणं यदेतदुत्प्रव्रजनम् । दश० २७३ । सामाचार्यां दशमो भेद । उपसम्पत्–इतो भवदीयोऽहमित्यभ्युपगम । ठाणा ४९९ । उपसम्पत् । आव० २५९ । सामाचार्यां दशमो भेद । उपसम्पत्–ज्ञानादिनिमित्तमाचार्यान्तराश्रयणम् । भग० ९२० । उपसम्पत्–इदसम्पत्–ज्ञानार्थं भवदीयोऽहमित्यभ्युपगम । ठाणा० १४० । त्वदीयोऽहमित्येव श्रुतार्थमन्यदीयमत्ताभ्युपगम । अनु० १०३ । उवसंपदन उपसम्पत्–अन्यरूपप्रतिपत्ति । उत्त० ४१० ।

उवसंहार–उपसंहार –उपनय । दश० ५२ । सू० तृ० १३६आ ।

उवसग्ग–उपसृज्यते–धातुसमीपे नियुज्यते इति उपसर्ग । प्रश्न० ११७ । बाधाविशेषा । ठाणा० २८० । रागादिजनित । औप० १५० । उप–सामीप्येन सर्जनम्, उपसृज्यतेऽनेनेति वा करणसाधन, उपसृज्यतेऽसाविति वा कर्मसाधन । आव० ४०४ । प्रव्रज्याग्रहणे निवारणम् । पिण्ड० १३९ । देवादिकृतोपद्रवा । ठाणा० ५२३ । राजस्वजनादिकृतो देवमनुष्यतिर्यक्कृतो वा । पिण्ड० १५० । उप–सामीप्येन सृज्यते तिर्यग्मनुष्यामरैः कर्मवशगेनात्मना क्रियत इति उपसर्गः । उत्त० १०९ । उपसर्ग –उपसर्जन, धर्मभ्रंशनम् । दिव्यादय । भग० १७१ ।

उवसग्गपरिण्णा – उपसर्गपरिज्ञा, सूत्रकृताङ्गाद्यश्रुतस्कन्धे तृतीयमध्ययनम् । आव० ६५१ । उत्त० ६१४ ।

उवसग्गपरिन्ना–सूत्रकृताङ्गे तृतीयमध्ययनम् । सम० ३१ ।

उवसग्गसहो–उपसर्गसह । आव० ६४८ ।

उवसत्तो–उपसक्त –गाढमासक्त । उत्त० ६३२ ।

उवसमंति – उपशाम्यन्ति – सवर्त्तकवायुविशुद्धिवर्णाभिवर्तन्ते, सवर्त्तकवातविशुद्धिर्णमुपसहरन्तीति भाव । राज० २३ ।

उवसम–उपशममिति औपशमिकम् । विपाकोदयावष्कम्भणलक्षण । दश० ४३ । उपशम विपाकोदयावष्कम्भणलक्षण । नंदी ७७ । क्रोधाद्युदयाभावे भवति । आचा० १५० । शान्तिरूप । दश० २३४ । पञ्चदशदिवसनाम । जं० प्र० ४९० । सूर्य० १४७ । क्षायोपशमिक । सूत्र० ६ । विंशतितमो मुहूर्तनाम । जं० प्र० ४९१ । मध्यस्थपरिणाम । आव० ... । उदीर्णस्य क्षय अनुदीर्णस्य च ... प्रदेशतश्चानानुभवनम् । सर्वथैव विष्कम्भितोदयत्वमित्यर्थः । भग० ५९ । क्षमा । दश० चू० १२४ । उदयनिरोधोदयप्राप्तापलीकरणम् । दश० २३४ ।

उवसमणा – उपशमना – उदयोदीरणानिधत्तनिकाचनाकरणनामयोग्यत्वेन कर्मणोऽवस्थापनम् । ठाणा० ९२१ ।

उवसमविवेयसंवर – उपशमविवेकसंवरम्, चिलातस्य पदेश । आव० ३७१ ।

उवसमिए उपशम –उदीर्णस्य कर्मण क्षयोऽनुदीर्णस्य विष्कम्भितोदयत्वं वा तदेव औपशमिक क्रियामात्र उपशमेन वा

निर्वृत्त औपशमिक –सम्यग्दर्शनादि । भग० ६४९ । औप शमिक – उपशमनमुपशम –कर्मणोऽनुदयाक्षीणावस्था भस्मपटलावच्छन्नाग्निवत्, स एव, तेन वा निर्वृत्त । अनु० ११४ ।

उवसामिअ– उपशमित – भस्मछन्नाग्निकल्पता प्रापितम् । आव० ५९ ।

उवसामेमाण–शुद्धाध्यवसायविशेषेण समयप्रसिद्धविधिनोपशमयन्त इति । ठाणा० ३५१

उवसाहिज्जउत्ति–पच्यताम् । नि० चू० प्र० ३४९आ ।

उवस्सित–उपाश्रित –अङ्गीकृत । वैयावृत्यकरत्वादिना प्रत्यासन्नतर । द्वेष । शिष्यप्रतीच्छकतुल्याद्यपेक्षा । भग० ३८५ ।

उवस्सग–उपाश्रय । प्रश्न० १२७ ।

उवस्सओ–उपाश्रय –वसति । प्रश्न० १२७ ।

उवस्सग–उपाश्रय –वसति । आव० १७३ ।

उवस्सगा–उपाश्रया । सू० द्वि० १८३अ ।

उवस्सते–उपाश्रय –निलय । प्रश्न० १२८ ।

उवस्सय – उपाश्रय वसति । ओघ० ६५, १७३ । दश० २१८ । न० प्र० १२१ । उपाश्रय –गृहपतिगृहादिकम् । ठाणा० ३१९ । वसतेर्वृत्तिपरिक्षिप्त, परिगामना लोकवत इत्यर्थ । ज्ञाता० २०५ । उपाश्रया –उपाश्रीयन्ते–भज्यन्ते शीतादित्राणार्थं ये ते उपाश्रया –वसतय । ठाणा० १५७ । पडिस्सयो । मण्डव वा आसण । दश० चू० १११ ।

उवस्सयसंकिलेसे–द्वितीय सक्लेश । उपाश्रयो–वसतिस्तद्विषय सक्लेश –असमाधि उपाश्रयसक्लेश । ठाणा० ४८९ ।

उवस्सित–उपाश्रित –द्वेष । शिष्यतुल्याद्यपेक्षा । ठाणा० ४४१ । द्वेष, शिष्यप्रतीच्छकतुल्याद्यपेक्षा । ठाणा० ३१९ ।

उवहडे - उपहृत – भोजनस्थाने नीतिर्न भक्तमिति भाव । ठाणा० १४८ ।

उवहतो–अविशुद्धा । नि० चू० द्वि० ११६अ ।

उवहय–उपहति । उत्त० १४५ । मनोम । नि० चू० तृ० ८१आ ।

उवहयपरिणामो–उपहतपरिणाम । आव० ५१२ ।

उवहरइ–उपहरति–विनाशयति । ज्ञाता० १९२ ।

उवहाणं–उपधान–तप । सूत्र० ६१, ६९, ७२ । तप आचरणम् । सूत्र० २५१ । अनशनादिक तप । सूत्र० ५८ । आगमोपचाररूपमाचाम्लादि । उत्त० १२८ । गुणोपष्टम्भकारि । प्रश्न० १५७ । उच्छीर्षकम् । बृ० द्वि० २२०अ । उपधान–करणम् । व्य० प्र० ५०आ । ध्यानम् । व्य० द्वि० १आ । प्रायश्चित्तम् । व्य० द्वि० १९१अ । विहितशास्त्रोपचार । उत्त० ६५६ । तप । ठाणा० ४४० । उपधान–तप । सम० ५७ । ठाणा० ६५, १९५ । उपधीयते–उपष्टभ्यते श्रुतमनेनेति उपधान–श्रुतविषयस्तपउपचार । ठाणा० १८१ । विधानम् । सम० १२७ । उपदधातीत्युपधान–उपकरोतीत्यर्थ । ओघ० ११९ । अङ्गानङ्गाध्ययनादौ यथायोगमाचाम्लादितपोविशेष । उत्त० ३४५ ।

उवहाणग – पर्याप्तपुष्प मिगवहाण । नि० चू० द्वि० ६१अ । उपधानम् । ठाणा० ४२४ । उपधानक–अप्रतिलेखितदूष्यपञ्चके द्वितीयो भेद । आव० ६५२ ।

उवहाणपडिमा–उपधान–तपस्तत्प्रतिमोपधानप्रतिमा, ▒ दश भिक्षुप्रतिमा एकादशोपासकप्रतिमाश्चेत्येवरूपा । ठाणा० ६५ । सम ९६ ।

उवहाणवीरिए–उपधान–तपस्तत्र वीर्यं यस्य स उपधानवीर्य –तपस्यनिगूहितबलवीर्य । सूत्र० ६५ ।

उवहाणसुय – उपधानश्रुतं –आचाराङ्गस्याष्टममध्ययनम् । उत्त० ६१६ । सम० ४४ । उपधानश्रुतं, आचारप्रकल्पे प्रथमश्रुतस्कन्धस्याष्टममध्ययनम् । आव० ६६० । प्रश्न० १४९ ।

उवहार–उपहार । आव० १९० । बलि । आव० ६९८ ।

उवहारा–बलिमादद्या । नि० चू० प्र० २६९अ ।

उवहारियं–अवधारित–निर्णीतम् । आव० ६३५ ।

उवहि–उपदधातीति उपधि –उप – सामीप्येन सयम धारयति पोषयति चेत्यर्थ । स च पात्रादिरूप । ओघ० १२ । उपकरणम् । उत्त० ५८८ । वर्षाकल्पादि । उत्त० ३५० । उपकरणमाभरणादिद्रव्यतो, भावतस्तु छद्मादि यनात्मा नरके उपधीयते । उत्त० ४६३ । उपधि –वस्त्रापात्रादि । ओघ० ८० । रजोहरणादि । ठाणा० ३१७ । उपधीयते–सङ्गृह्यत इति उपधि । आचा० १८० । आगमोक्त वस्त्रादि । दश० ११६ । पात्रनियोगादि । व्य० प्र० २३७ अ । उपधि –वस्त्रादि । प्रश्न० १२४ । उपधीयते–ढौक्यते दुर्गति प्रत्यात्मा येनासावुपधि –माया, अष्ट

प्रकार वा कर्म । सूत्र० ६८ । उपकरणम् । आव० ५६८ । प्रश्ना० २९१ । प्रश्न० ३९ । उपदधातीति उपधि । ओघ० २०७ । माया । प्रश्न० ७८ । औपधिर । प्रश्न० १५६ । माया । सूत्र० १०३ । उपदधातीति उपधि –उप-सामी प्येन संयमं धारयति पोषयति चेति पात्रादिरुप । ओघ० १२ । आव० ६६१ । उपधीयते येनासावुपधि – वचनीयसमीप गमनहेतुर्भाव । भग० ५७२ । उपधि –उपकरणम् । पिण्ड० १२ । कषाय । दश० ७६ । उवकरण । नि० चू० प्र० ६४ आ ।

उवहिअसुद्धं–उपधिना–मायया अशुद्धं–सावद्य उपध्यशुद्ध, अधर्मद्वारस्यैकोनत्रिंशत्तम नाम । प्रश्न० २६ ।

उवहिए–उवधिक –मायित्वेन प्रच्छन्नचारी । ज्ञाता० ८१ । उपहित –प्रक्षिप्त –प्राप्त । भग० १०० । उपहितानि–पुरो राहारार्थं ढौकितानि । विशे० ४४० ।

उवहिओ–अधिकज्ञानादर्थव सन् गुरुषु बहुमानपर । व्य० प्र० २३६अ ।

उवहिय–उपहित –क्षिप्त । विशे० ९४१ । औपधिक – मायाचारी । प्रश्न० ३० ।

उवहिसंकिलेसे–प्रथमसंक्लेश । उपधीयते – उपष्टभ्यते संयम संयमशरीरं वा येन स उपधि –वस्त्रादिस्तद्विषय सङ् क्लेश –असमाधि । ठाणा० ४८९ ।

उवहिसंभोग–उपधे संभोग उपधिसंभोग । व्य० द्वि० ११९ आ ।

उवही–उवधि –परवचनाभिप्राय । बृ० तृ० ४६ आ । नि० चू० प्र० २८९ आ ।

उवाइ–उत्पादकप्रधाना विद्या । विशे० ९८२ ।

उवाइकम्म–उपातिक्रम्य–सम्यक परिहृत्य । आचा० ३२६ ।

उवाइणाविंत्तए – उपानाययितु संप्रापयितुम् । बृ० तृ० ११४ आ । उपादापयितु ग्राहयितुमित्यर्थ । ज्ञाता० १७० ।

उवाइणावित्ता–उपादापय्य–प्रापय्य । भग० २९२ ।

उवाइणित्ता–उपनीय–अतिवाह्य । आचा० ३६५ ।

उवाइति–उपयाचते । आव० ४०४ ।

उवाईय–उपादित–उपभुक्तम् । आचा० १०८ ।

उवाईयसेसेण–उपादित–उपभुक्तम्, तस्य शेषमुपभुक्तशेषम् । आचा० १०८ ।

उवाए–उपाय –अविनिहतनामकारणम् । ज्ञाता० ३४ ।

उवाओ–अवपात । गर्त्त । आचा० ३३८ । उपाय । आव० ४१४ ।

उवागच्छति–पविसति । नि० चू० प्र० २३० अ ।

उवागच्छिज्जा–उपागच्छेयु –अतिथयो ऽभ्येयु । आचा० ४०३ ।

उवागमण–उपागमन–स्थानम् । आचा० ३०५ ।

उवात–अवपात । सेवा । ठाणा० १२९, ५१६ । ज्ञाता० ४ ।

उवातिणा–नयति । नि० चू० द्वि० २२ आ ।

उवातिय । नि० चू० द्वि० १४४ अ ।

उवातिया–उपयाचितम् । नि० चू० प्र० ३५१ आ ।

उवाते–उपाय –उपेय प्रति पुरुषव्यापारादिका साधनसामग्री स यत्र द्रव्यादावुपेये अस्तीत्यभिधीयते यथैतेषु द्रव्यादि विशेषेषु साधनीयेष्वस्त्युपाय, उपादेयता वाऽस्य यत्राभि धीयते तदाहरणमुपाय । आहरणस्य द्वितीयो भेद । ठाणा० २५३ ।

उवातो–आणानिद्देसी । दश० चू० ११९ ।

उवादान–उपादान–आय, हेतु । विशे० ५४३ ।

उवादिणावेत्ता–उपादाय–गृहीत्वा, आक्रम्य । सूत्र० ३३४ ।

उवादीयमाणा–उपादीयन्ते–क्रमशो बध्यन्ते । आचा० ७८ ।

उवाय–सत्ता । दश० चू० ७८ । उपाय –उदाहरणस्य द्वितीयो भेद । ३५ । एकान्तमृदुमणनादिलक्षण । दश० २४७ । उप सामीप्येन (आय)विवक्षितवस्तुनोऽविरलाभ हेतुरवाइस्तु] लाभ एवोपाय –अभिलाषितवस्त्ववाप्तये व्यापा रावशेष । दश० ४० । उपार्जनहेतु । दश० ६३१ ।

उवायकारी–उपायकारी–सूत्रोपदेशप्रवर्तक । सूत्र० २३४ ।

उवायकिरिया–उपायक्रिया–यद्द्रव्य येनोपायेन क्रियते सा । सूत्र० ३०४ ।

उवायणं–अवपातयतो प्रशतोऽकुर्वत । व्य० प्र० २९अ ।

उवायवं–अवपातवान्–वन्दनशील, निकटवर्त्ती वा । दश० २५३ ।

उवारियालेणे – चमरचञ्चावलीचञ्चाभिधानराजधान्योर्मध्य भागे तद्भवनयोर्मध्येऽवताऽवतरत्पाऽ पीठरुपे अवतारिकल यने । सम० ३१ ।

उवालंभ–उपालम्भन उपालम्भो–भङ्ग्य–तरणानुशासनमेव स यत्राभिधीयते स । आहरणतद्देश द्वितीयो भेद । ठाणा० २५३ । उपालम्भ –द्वयमेवानौचित्यप्रवृत्तिप्रतिपादनगर्भा । ठाणा० १०५ । सपिपासरिंशात्म्य उपालम्भ । बृ० प्र० १५०आ । मातुनयोपदेशश्रमणम् । व्य० प्र० ११७ अ ।

उपालम्भ। उपालम्भ –भेगैव विचित्र भाजनम्। दश० ४६।

उवालियइ-उपलीयते। आचा० ३६५।

उवासंतर-अवकाशान्तर-आकाशविशेष, अवकाशस्यान्तराल वा। भग० ७७।

उवासंतराति। ठाणा० ८६।

उवासतरे-द्वयोरन्तरमवकाशान्तरम्। भग० १७२। ठाणा० ४३२।

उवासग-उपासक -श्रावक। आव० ८४६। नि० चू० द्वि० २५७अ। सम० ११९। साधू चे...वा पोसह उवासतो उवासगो भवति। नि० चू० द्वि० १२१आ। उपासते-सेवन्ते यतीनित्युपासका -श्रावका। उत्त० ६१३।

उवासगदसा-उपासकाना-श्रमणोपासकाना सम्बन्धिनोऽनुष्ठानस्य प्रतिपादिका दशा -दशाध्ययनरूपा उपासकदशा। उपा० १। दश० ४७।

उवासणा-उपासना-नापितकर्म। आव० १२९।

उवासमाणा-रात्रिजागरणादुपासना विदधाना। ठाणा० ३५३।

उवासय-उपासक। दश० ४७।

उवाहण-उपानत्। आव० ३०५, ३४१।

उवाही-उपाधीयते-व्यपदिश्यते येनेत्युपाधि -विशेषणं स उपाधि। आचा० १५६।

उविद्ध-उपेत्य स्वप्रज्ञया। उत्त० ३९१।

उविद्धो-अवनद्ध। आव० ३५१।

उविय परिकमितम्। ज्ञाता० ७३।

उवीलगो-आलोयम गहत जो महुरादिवयणपओगेहिं तहा भणइ जहा तस्स आलाएति सो उवीलगो। नि० चू० दृ० १२८आ।

उवीलण-निश्चयम्। नि० चू० प्र० १४२अ। अवपीडना, बन्धनविशेष। ज्ञाता० २३२।

उवीलेमाणे-अवपीडयन्-बाधयन। विपा० ३९।

उवेक्खेज्जा-उपेक्षेत-अवधीरयेत्। उत्त० ११२।

उवेक्खेयव्वो-उपेक्षितव्य। आव० ६४१।

उवेह-उपेक्ष, आवृङ्क्रिया। बृ० द्वि० १३९आ।

उवेहमाण-उपेक्षमाण -अपुर्वन्। आचा० १५६। परीषहोपसर्गान् सहमान इष्टानिष्टविषयेषु वोपेक्षमाणो माध्यस्थ्यमवलम्बमान। आचा० ४३०। उपेक्षमाण -अवगच्छन्। आचा० २१२। पर्यालोचयन्। आचा० २२४।

उवेहा-उपेक्षा-उप -सामीप्येनेक्षा, अवधीरणायां वर्तते। ओघ० ११४।

उवेहे-उपेक्षेत-औदासीन्येन पश्येत्। उत्त० ९१।

उवट्टंतो-अवपतन्। आव० २०३।

उव्वट्टइ-उद्वर्तयति-प्रथितलैलापनयन करोति। जं० प्र० ३६४।

उव्वट्टण-उद्वर्तन-तत्प्रथमतया वामपार्श्वेन सुप्तस्य दक्षिणपार्श्वेन वर्तनम्। आव० ५७४। अपवर्तना। विशे० १००६। उद्वर्तना-नारकतिर्यगेकेन्द्रियेभ्यो निर्गम। आव० ५१३। उद्वर्तन-लोठनम्। पिण्ड० १६४। पङ्कापनयनलक्षणम्। दश० ११७।

उव्वट्टणट्ठ-उद्वर्तनार्थं-उद्वर्तननिमित्तम्। दश० २०६।

उव्वट्टयं-उद्वर्तक-चूर्णपिण्डम्। जं० प्र० ३५४।

उव्वट्टा-उद्वृत्ता। प्रज्ञा० ३९७।

उव्वट्टिताणि-उद्वर्तितानि। आव० ९८।

उव्वट्टिया-उद्वर्तिता-च्याविता। पिण्ड० १२३।

उव्वट्टति-एकसिं उव्वट्टति। नि० चू० प्र० ११६आ।

उव्वट्टो-उद्वृत्त। आव० १७३।

उव्वणवेसो-उल्बणवेष। ओघ० १४६।

उव्वण्णो उत्कठित। व्य० द्वि २०३आ।

उव्वत्तन्तो-उद्वर्तयन। आव० ३१३। ओघ० ८४।

उव्वत्तणं-उद्वर्तनम्-मार्गपरावर्तन। बृ० तृ० १२९आ। उत्ताणयस्स पासल्लियकरण। नि० चू० प्र० २११अ। उद्वर्तते-यतो प्रभस्ततो याति। ओघ० ४७।

उव्वत्तणा-परावत्तणाकुंचणपसारणा कायस्स। नि० चू० प्र० ६०अ।

उव्वत्तमाणे-अपवर्तयन्। आचा० ३४३।

उव्वत्ता-उपाडिहारियंणिहेज्ज तं। नि० चू० प्र० २२५आ।

उव्वत्तिया-तेणेव अणणिक्खित्त ओयत्तेऊण एगपासेन देति। दश० चू० ८०।

उव्वत्तेहि-उद्वर्तय। आव० ३५८।

उव्वर-अतिप्रशस्यम्। व्य० द्वि० ४२१आ।

उव्वरए। बृ० द्वि० ६२अ।

उव्वरग-अपवरकम्। आव० ६२२। नि०चू०प्र० १७४अ।

उव्वरति-उद्वरति। आव० ८५९।
उव्वरयं-अपवरकम्। आव० ५६१।
उव्वरिअ-उदवरितं। गर्दभिक्त जातम्। ओघ० १८८। अतिरिक्तम्। ओघ० १८६।
उव्वरियं-उद्वरितम्। पिण्ड ७९। अशनादे शेषभाग। आव० ८५९।
उव्वरो-उद्वर-घर्मोपताप। बृ० द्वि० २९३अ।
उव्वलणं-उद्वलनं, अभ्यङ्गनम्। बृ० द्वि० २१९अ।
उव्वलणेहि-उद्वेलनानि-देहोपलेपनविशेषा। ज्ञाता० १८३।
उव्वसिय-उद्वसित-उरिथत। ओघ० ४९।
उव्वसिय-उद्वस (उदुष्य)। आव० ७१।
उव्वाओ-श्रान्त। नि० चू० प्र० १६०अ।
उव्वाण-उद्वानं-क्थिचित्सरिनग्ध। ओघ० १७१।
उव्वाता-परिश्रान्त। बृ०द्वि० ८०आ। व्य०द्वि० १५७अ।
उव्वाया-उद्वाता-अतीवपरिश्रान्ता। बृ०प्र० २४३आ। परिश्रान्ताः। व्य० द्वि० २०३आ।
उव्वालना-उद्वालना, निष्काशना। बृ० द्वि० २५०अ।
उव्वासिअ-उद्वासित-शोषित। ओघ० १७४।
उव्वासेइ-उपहसति। आव० ६६९।
उव्विग्ग-उद्विग्न-खिन्नम्। भग० १६६। सञ्जातभय। विपा० ४३। उद्विग्ना-अथ पुनर्नानेन सार्द्धं युद्धयामहे इत्यपुन करणाशयवन्त। जं०प्र० २३९। उद्वेगवान्। प्रश्न० ५२।
उव्विद्ध-उद्विद्धं-ऊर्द्ध्वम्। औप० ३। उद्विद्ध-उण्डम्। ज्ञाता० २। ऊर्ध्वगत। जं० प्र० १४४। उच्चा। आव० १८४। उन्मिता, उच्चैस्त्वेन वा। अनु० १५८। उद्विद्ध-असमर्मुच्च। औप० ९। उच्च। राज० ५।
उव्विहंताइं-उत्पतन्ति। ज्ञाता० २३२।
उव्विहइ-ऊर्ध्वं विजहाति, ऊर्ध्वं क्षिपति। भग० ८३०। उद्विजहाति-ऊद्ध्वं क्षिपति। ज्ञाता० १६८।
उव्विहति-उप्पाडेति। नि० चू० प्र० २५६आ।
उव्विहामि-नयामि। ज्ञाता० १३९।
उव्विहिय-उद्वृत्य-ऊर्ध्व। भग० ६२८।
उव्वीलए-अपव्रीडक-लज्जापनोदको यथा पर मुखमालोच यतीति। ठाणा० ४८६।
उव्वीलणं-अपत्रपणम्। उप० मा० गा० ७७।
उव्वीहामि-उच्चेष्यामि। नि चू० प्र० २०१अ।
उव्वेग-उद्वेगक-इष्टवियोगादिजन्य उद्वेग, उद्वेजको वा लोकोद्वेगकारी चौरादिर्वा। भग० १९८।
उव्वेयण-उद्वेजन-चलनम्। भग० ४७१।
उव्वेयणओ-उद्वेजनक-चित्तविप्लवकारी, उद्वेगकर। प्रश्न० ५।
उव्वेयणयं-उद्वेगकृत्। महाप्र०।
उव्वेला-उद्वेला। आव० ५१४।
उव्वेल्लियं-उद्वेलित, उत्सारितम्। बृ० द्वि० २५५आ।
उव्वेलेंति-उद्वेलयन्ति। आव० १८९।
उव्वेलेउं-उद्वेलयितु, उद्वेष्टयितुम्। बृ० द्वि० २५७अ।
उव्वेह-उद्वेध। अनु० १७१। जीवा० ३१२। उण्डत्वम्। ३२५, ३४३, ३२७। राज० ९१। जं० प्र० ३८४। सम० ९७। ठाणा० ५२५। बाहल्यम्। जं० प्र० ३२७। भुवि प्रवेश। ठाणा० ६९। भूगतत्वम्। जं० प्र० ३८३। भूम्यवगाह। ठाणा० ४७९। भूमिप्रवेश। जं० प्र० ७२।
उव्वेहलिया-वनस्पतिविशेष। भग० ८०४।
उष्णः-स्पर्शस्याष्टमो भेद। प्रज्ञा० ४७३।
उष्णरूपा-योनिभेद। आचा० २४।
उस-अवश्याय। विशे० १०२९।
उसक्कण-रंधियपुव्वस्स उसक्कण करेज्ज। नि०चू०प्र० १४२आ।
उसक्काविउ-उत्ष्वष्क्य, अथ प्राप्य। आव० ६२१।
उसक्को-उत्कण्ठुल्ल। नि० चू० तृ० ३६अ।
उसगार-मत्स्यविशेष। पन्ना० ४४।
उसढा-उत्सृता-उच्चा। जं० प्र० ४४।
उसण-उष्ण-प्रतिकूल। ठाणा० ४४४।
उसणं-लोअगपरिभोग उसणं अण्णइ। नि० चू० द्वि० १५६अ।
उसण्हसण्हिआओ-अतिशयेन श्लक्ष्ण्येन च श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका उश्लक्ष्णश्लक्ष्णिका। अनु० १६३।
उसभ-ऋषभ, पञ्चदश कुलकरनाम। जं० प्र० १३२। भरतचक्रिपिता। आव० १६२। सम० १५२। वृषभ-भूषणविधिविशेष। जीवा० २६९। भद्रदत्तपत्न्या शिलाया पिता। उत्त० ३७९। समग्रसयमभारोद्वहनात् वृषभ। आश्विन। आव० ७०२। मध्यदृगगणस्य द्वितियग

जं० प्र० १०७। प्र० । सम० १४९। परिवेष्टनपट्ट । ठाणा० ३५७ । प्रज्ञा० ४७२ ।

उसभकण्ठो-वृषभकण्ठ -वृषभकण्ठप्रमाणो रत्नविशेष । जीवा० २३४ ।

उसभकूड-ऋषभकूट , जम्बूद्वीपे उत्तरार्द्धभरते पर्वत । जं० प्र० ८७। आव० १५१ ।

उसभज्झया-ऋषभध्वजा -वृषभचिह्नोपेता ध्वजा । जीवा० २१५ ।

उसभनाराय-ऋषभनाराच-यत्पुन कीलिकारहित संहनन तत् । प्रज्ञा० ४७२ ।

उसभदत्त-नामविशेष । भग० ६२०,५३३, ५४५, ५५६, ५५७। आचा० ४२९ । नवमशते त्रयस्त्रिंशत्तमोद्देशकेऽभिहित । भग० ४५५। ऋषभदत्त इषुकारनगरे गाथापति । विपा० ९५ । जम्बूस्वामिन पिता। नि०चू०द्वि० २९आ।

उसभपुरं-ऋषभपुर, द्वितीयनिह्नवोत्पत्तिस्थानम् । विशे० ९३४ । धनावहराजधानी । विपा० ९४ । राजगृहस्यापरनाम । आव० ३१५ । नगरविशेष । उत्त० १०४। राजगृहम् । ठाणा० ४१४ । जीवप्रदेशप्ररूपकनिह्नवोत्पत्तिस्थानम्। आव० ३१२ ।

उसभसिरि-श्रीऋषभ । सम० १०६ ।

उसभसेण-मुनिसुव्रतजिनस्य भिक्षादाता । सम० १५१ । ऋषभस्वामिन प्रथमगणधर । सम० १५२ । सू० प्र० २५४अ । ऋषभसेन -भरतपुत्र । आव० १४९ ।

उसभा-ऋषभा-शाश्वतप्रथमप्रतिमानाम । जीवा० २२८ ।

उसभियं-उरगामिय । नि० चू० प्र० २९४अ ।

उसह-ऋषभ , समग्रभारोद्वहनादृषभ इव ऋषभ , वृषभो वा इति संस्कार , तत्र वृषभ इव वृषभ इति वा, वृषेण भातीति वा वृषभ । जं० प्र० १३५ ।

उसहकूडप्पभाई-ऋषभकूटप्रभाणि, ऋषभकूटाकाराणि । जं० प्र० ८८ ।

उसहकूडे-ऋषभकूट । जं० प्र० २५० ।

उसहच्छाया-ऋषभच्छाया-छायाया सप्तमो भेद । प्रज्ञा० ३२७।

उसहपुरं-ऋषभपुरं-नगरविशेष । उत्त० १०५।

उसा-त्रैस । नि० चू० द्वि० ८३अ ।

उसिण-तापितं तं चेव सचित्तजीव, ण्हाणमि धोवण । नि० चू० द्वि० ११८आ । निदाघादितापात्मकम् । उत्त० ८२ । उष्ण -धर्म । ठाणा० २८७। आहारपाकादिकारणं वह्नया अनुगत । अनु० ११०।उष्णो मार्दवपाककृत् । ठाणा० २६। उष्ण -अप्रासुकम् । दश० २०६।

उसिणपरितावे-उष्णपरिताप -उष्ण - उष्णस्पर्शवद् भूशिलादि तेन परिताप । उत्त० ८९ ।

उसिणब्भूए-अस्वाभाविकमौष्ण्य प्राप्त । भग० १७५ ।

उसिणोदए-उष्णोदक-स्वभावत एव क्वचिन्निर्झरादावुष्णपरिणामम् । बादराप्कायभेद । प्रज्ञा० २८ ।

उसिणोदग-उष्णोदकं-क्वथितोदकम् । दश० ११८ । उष्णतप्तनिर्वृत्तम् । पिण्ड० १७ ।

उसिणोदगवियडेण-उष्णोदकविकटेन- उष्णोदकेनाप्रासुकेनाग्निवृत्तोद्धृतेन पश्चात्सचित्तीभूतेन । आचा० ३४२ ।

उसिय-उच्छ्रितानि-उच्छ्रयमानानि । राज० ६४ ।

उसीर-उशीरं-वीरणीमूलम् । ज्ञाता० २३२। जीवा० १९१। राज० ३४ । मूलविशेष । जीवा० १३६ । ओशीरं-वीरणीमूलम् । प्रश्न० १६२ ।

उसीसदूवणं-सीसस्स समीव उवसीसं, सीसस्स वा उवगयणं उसीस ट्ठवण-णिक्खेवो । नि० चू० प्र० २४७अ ।

उसु-इषु -बाण । भग० ९३, २३० । शरपत्रकलादिसमुदाय । भग० २३० ।

उसुअ इषुक -इषुकाकाराभरण,तिलक वा। पिण्ड०१३४।

उसुआर-इषुकार -राजपुत्रविशेष । उत्त० ३९४ ।

उसुआरपुर-इषुकारपुरं-नगरविशेष । उत्त० ३७५ ।

उसुकारिज्जं-इषुकारीय-उत्तराध्ययने चतुर्दशमध्ययनम् । उत्त० ३९३ ।

उसुकाल-उदूखल, उदूखल । नि० चू० द्वि० ८३आ।

उसुगारपव्वय-पर्वतविशेष । ठाणा० ८० ।

उसुत्तियलुयं-जेण वा कट्ठार सचालेति त भवति उसुत्तियगंथ । नि० चू० प्र० ११६आ ।

उसुढसरीरो-मलपंकियसरीरो उमढसरीरो भण्णति । नि० चू० द्वि० ६५अ ।

उसुमट्टिता-वुट्टिया पुणो मट्टियाग मट्ट वुट्टिज्जति पम । नि० चू० प्र० ६४अ ।

उसुयार-इषुकार -नगरविशेष , ऋषभदत्तगाथापतिस्थानम्। विपा० ९५ । इषुकारपुरनृपति । उत्त० ३९५ ।

उसुयारपुरं-इषुकारपुरं, कुरुजनपदे नगरं, इषुकारराजधानी। उत्त० ३९५।

उसुयारिज्जं-उत्तराध्ययने चतुर्दशमध्ययनम्। सम० ६४।

उसू-इषुः-शरः। सिद्धिगमने दृष्टान्तः। आव० ४४२। तिलगो। नि० चू० द्वि० ९५अ।

उसूयालं-उदूखलम्। आचा० ३९७।

उसे-ऊषः-पांशुक्षारः। दश० १७०।

उस्सओ-उच्छ्रयः भावोन्नतत्वम्। अहिंमायाः पञ्चचत्वारिंशत्तमं नाम। प्रश्न० ९९।

उस्सक्कइ-उत्ष्वष्कते-तदाकारभावमात्रधारणतस्तत्प्रतिबिम्बमात्रधारणतो वोत्सर्पतीत्यर्थः, कृष्णलेश्यातो हि नीललेश्या विशुद्धा ततस्तदाकारभावं तत्प्रतिबिम्बमात्रं वा दधाना सती मनाग् विशुद्धा भवतीत्युत्सर्पतीति। प्रज्ञा० ३७२।

उस्सक्कण-उत्ष्वष्कणं-परतः करणम्। पिण्ड० ९१।

उस्सग्गनिवाइयाण-उत्सर्गपातिनामुत्सर्गेण सम्यमनुपालयतां यासाम्। व्य० द्वि० ४२९अ।

उस्सग्गो-उत्सर्गः-उपयोगः। ओघ० १५५। परिष्ठापनम्। ओघ० १३८। कायोत्सर्गः। आव० ७८२। उवओगे, काउस्सग्गो। नि० चू० द्वि० १६४अ। पइण्णकहा। नि० चू० प्र० २४०अ। कारणनिरपेक्षं सामान्यस्वरूपम्। बृ० तृ० ९७आ।

उस्सण्णं-लोअपरिभोगं उस्सण्णं भण्णइ। नि० चू० द्वि० १५९अ। उस्सण्णं एकान्तेनैव अलक्षणयुक्ता बोदि सरीरमित्यर्थः नि० चू० द्वि० ८५आ। उत्सन्नं-बाहुल्यतः। औप० ८६। उत्सन्नं-अनुपरतम्। आव० ५९०।

उस्सण्णदोस-उत्सन्नदोषः-अनुपरतं बाहुल्येन प्रवर्तते इति। आव० ५९०।

उस्सण्णपय-उत्सन्नपदे-प्रभूतपदे। व्य० प्र० ९३अ।

उस्सण्णा-अवसन्नाः-पङ्क इव निमग्नाः। प्रश्न० ९९।

उस्सण्णो-बहुतरगुणापराही। नि० चू० द्वि० ९०आ।

उस्सण्हसण्हिआ-उत्तरप्रमाणापेक्षया उत्-प्राबल्येन श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका उच्छ्लक्ष्णश्लक्ष्णिका। जं० प्र० ९४।

उस्सण्हसण्हिया - व्यावहारिकपरमाणुपुद्गलानां समुदायाः-द्व्यादिसमुदायास्तेषां समितयो-मीलनानि तासां समागमः-परिणामवशादेकीभवनं समुदयसमितिसमागमस्तेन या परिणाममात्रेति गम्यते, सा एकाऽनन्तं श्लक्ष्णा श्लक्ष्णश्लक्ष्णा मेव श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका उत्-प्राबल्येन श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका उत्श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका। भग० २७५।

उस्सन्नं-प्रायशः। आव० ५६८। अविरुद्धं। नि० चू० द्वि० ७०अ।

उस्सन्नकयाहारो-प्रायशोऽकृताहारः। आव० ५६८।

उस्सप्पिअ-उत्सर्पिता वस्तूत्सर्पणेन। जं० प्र० १०२।

उस्सप्पिणी-सागरोपमाणां दशकोटीकोट्य एव दुष्षमदुष्षमाद्यारकक्रमेणैवोत्सर्पिणी। जीवा० ३४५। उत्सर्पति-वर्धते आरकापेक्षया वर्धयति (वा) क्रमेणायुरादीन् भावानित्युत्सर्पिणी। जं० प्र० ८९। उत्सर्पिणी-दशसागरोपमकोटाकोटिमाना। अनु० १००। ठाणा० ८६। उत्सर्प्पति-वर्द्धतेऽरकापेक्षया उत्सर्प्पयति वा भावानायुष्कादीन् वर्द्धयतीति। ठाणा० २७।

उस्सय-यस्मिंश्च सत्यूर्ध्वं श्रयति जात्यादिना दर्पाध्मातः पुरुष उत्तानीभवति सः उच्छ्रायः-मानः। सूत्र० १८०।

उस्सरति-उत्सर्पति। आव० ३०३।

उस्सविता-उद्धृतानि काऊण। दश० चू० ८०।

उस्सविया - सस्याग्रोच्चावच्चैर्विश्रम्भजनकैरालापैर्विश्रम्भे पातयित्वा। सूत्र० १०६।

उस्सा-अवश्याय-स्नेहः। अप्कायभेदः। प्रज्ञा० २८। रजन्यां यत्स्नेहः पतति। आचा० ४०।

उस्साग-यतिविशेषणं क्रियते। उप० मा० गा० ४००।

उस्साबिन्दुग्गियुगो-अवश्यायबिन्दुः। आव० ८४५।

उस्सारिता-उत्सारिता-समीपमागता। आव० ८४१।

उस्सासनाम-उच्छ्वासनाम-यदुदयवशादात्मन उच्छ्वासनिःश्वासलब्धिरुपजायते तत्। उच्छ्वासनिःश्वासयोग्यपुद्गलग्रहणमोक्षविषया लब्धिरुपजायते तत्। प्रज्ञा० ४७३।

उस्सासविसा-उच्छ्वासे विषं येषां ते उच्छ्वासविषाः। प्रज्ञा० ४६।

उस्सासा-उच्छ्वासः-मुखादिना वायुग्रहणम्। भग० ८७०।

उस्सासो-उच्छ्वासः। आव० ८४५।

उस्साहे-उत्साहः-श्रवणविषये मनस उत्कलिकाविशेष। सूर्य० २९६।

उस्सिंघइ-उज्जिघ्रति, जिघ्रति। आव० ६०४।

उस्सिंघणा-उद्घ्राणम्। आव० ४२४।

उस्सिंचण-उदूर्ध्वं सेचनं उत्सेचनं-कूपादेः कोशादिनोत्क्षेपणम्। आचा० ४२। इसी बालस्य प्राबल्येन पूरणम्। आचा०

७४, ३७९ ।

उस्सिंचणाए-उत्सेचनेन-अरघट्टघटीनिवहादिभिरुद्घनेन । उत्त० ५९९ ।

उस्सिंचमाणे-उत्सिञ्चन्-आक्षिपन् । आचा० ३४३ ।

उस्सिंचिया-उत्सिच्य-अतिभृतादुज्झनभयेन ततो वा त्र नार्थं सीमनादीनि दद्यात् । दश० १७५ ।

उस्सिउस्सिओ-उच्छ्रितोच्छ्रित । आव० ७७९ ।

उस्सिओदए-उच्छ्रितोदक -ऊर्ध्वगदिगगनजल । भग० २८१ ।

उस्सिट्ठा-उत्सृष्टा-प्रबलतया सर्वासु दिक्षु प्रसृता । प्रज्ञा०९९ ।

उस्सित्तं-उत्सिक्तं-अत्यर्थं जलाभिषेचनम् । प्रश्न० १२७ ।

उस्सिन्नं-अस्विन्नम्-वह्न्युद्गत्योगेनानापादितविकारान्तरम् । दश० १८५ । उत्स्विन्नम्-मुण्डेरकादि । सू० प्र० २६७ आ ।

उस्सियं-उच्छ्रत-प्रह्वाणम् । सूत्र०४०८ । उच्छ्रित उत्कम् । सूत्र० २६२ । उत्सृता, उच्छ्रितोच्छ्रित-उत्तरोत्तरसमस्था नावान्या तामुच्छ्रितामिव कृत्वा वा । उत्त० ३४१ । उत्सृत -अपगत । ज्ञाता० १०९ ।

उस्सियनिसन्नओ-उत्सृतनिषण्ण । आव० ७७२ ।

उस्सियपडाग-उच्छ्रितपताकम् । आव० ७०३ ।

उस्सियफलिह-उच्छ्रित स्फटिकमिव स्फटिकं-अन्तःकरण यस्य स । ज्ञाता० १०९ ।

उस्सीवेत्ता-उत्सीव्य । आव० ४२१ ।

उस्सुक्क-उच्छुल्का-अविद्यमानशुल्कग्रहणम् । विपा० ६३ । उच्छुल्का-मुक्तशुल्का । भग० ५४४ । ज्ञाता० ४० ।

उस्सुगो-उत्सुक । आव० ३०१ ।

उस्सुत्तं-सूत्रादपेत । नि०चू०द्वि० २३आ । ऊर्ध्वं सूत्रादुत्सूत्र, सूत्रानुक्त । आव० ५७१ । आव० ७७८ ।

उस्सुय-उत्सुक । ज्ञाता० १६१ ।

उस्सूर-अकाल । नि०चू०तृ० १३६आ । ओघ० ९८ ।

उस्सूरलंभो-उत्सूरलाभ । आव० ८४२ ।

उस्सूरीभूत-उत्सूर्यीभूतम् । आव० ८५२ ।

उस्सूलय-खातिका परबलपातार्थमुपरि छादितगर्ता वा । उत्त० ३११ ।

उस्सेइमं-पिष्टोत्स्वेदनार्थमुदकम् । आचा० ३४६ । मरहट्ठ विगए उदगघडा वीवणा भीओदगे वुज्झति, अहवा पिट्ठस्स उस्सेजमाणस्स हेट्ठा ज पाणिय त । नि० चू० तृ० ६०अ ।

उस्सेतिमामं-जहा पिट्ठं पुढविकायमायण आउक्कायस्स भरेत्ता सीमए अद्दहिज्जति मुहं से वत्थेण उद्दाहिज्जति, ताहे पिट्ठपयणय रोट्टस्स भरेता ताहे तीते थालीए जलभरियाए उवरिं ठविज्जति ताहे अहोछिड्डेण ते पि ओसिज्जति हेट्ठाहुत्त वा ठविज्जति तत्थ ज आम त उस्सेतिमाम भण्णति । नि० चू० द्वि० १२५अ ।

उस्सेतिमे-उत्स्वेदेन निर्वृत्तं उत्स्वेदिम-येन व्रीह्यादिपिष्ट मु राद्यर्थं उत्स्वेद्यते तत् । ठाणा० १४७ ।

उस्सेहंगुल-उच्छ्रयाङ्गुल-अङ्गुलस्य द्वितीयो भेद । प्रज्ञा० २९९ । अनन्तानां सूक्ष्मपरमाणुपुद्गलानामित्यादिक्रमेणोच्छ्रयो वृद्धि-नयन तस्माज्जात तद् । उत्सेधो-नारकादिशरीराणामुच्चस्त्व तत्स्वरूपनिर्णयार्थमङ्गुलमुत्सेधाङ्गुलम् । अनु० १५६,१६० ।

उस्सेह-उत्सेध -उच्चत्वम् । सम० ११४ । उत्सेध -शिखरम् । जीवा० २०४, ३६० । सर्वाग्रम् । जीवा० २७५ । उच्छ्रय -शिखरम् । राज० ६३ ।

उस्सेहपरिवुड्ढी-उत्सेधपरिवृद्धि -सर्वाग्रपरिवृद्धि । जीवा० ३२३ ।

उस्सोढुं-उत्सोढु-अपोढवा । व्य० प्र० १६८अ ।

उहरिय-पेढियमादिसु आरभिउं ओआरेति, अथवा वागं उच्च करेज्जा उवरि पट्टायत तद्दद् गृह्णाति, थाय उद्ध कृत्वा गृह्णाति उत्क्षिप्य इत्यर्थं । नि० चू० तृ० ५९ अ ।

उहुलेइ-अपहसति । आव० ३१९ ।

(ऊ)

ऊखा-कुम्भी । प्रश्न० १७ ।

ऊणं-ऊनम्-वर्णादिभिर्हीनम् । ग्रन्थदोषविशेष । आव० ३७४ । यद् व्यञ्जनाभिलापावश्यकैरसम्पूर्णं वन्दते, कृतिकर्मणि अष्टाविंशतितमो दोष । आव० ५४४ ।

ऊणगसयभागो-ऊनशतभाग -शतभागोऽपि न पूर्यत इत्यर्थ । आव० ५२२ ।

ऊणोअरिआ-ऊनोदरस्य भाव ऊनोदरता । दश० २७ ।

ऊणोयरिया-अवमस्य-ऊनस्योदरस्य करणमवमोदरिका । भग० ९२१ ।

ऊनं-अक्षरपदादिभिरेव हीनमूनम् । हेतुदृष्टान्ताभ्यामेव हीन मूनम् । अनु० २६१ ।

ऊयरिणिया । नि० चू० प्र० ६१ आ ।

ऊरणय-ऊरणिका । आव० ६२३ ।

ऊरणिया-ऊर्णिका । आव० ६२३ ।
ऊरणी-अविला । पिण्ड० ७१ ।
ऊरु । आचा० ३८ ।
ऊरुगं-ऊरु । ओघ० १२५ ।
ऊरुघंटा-जङ्घाघण्टा । ज्ञाता० २३९ ।
ऊरुयाल-ऊरुदार -ऊर्व्यो -जङ्घयोर्दारो-दारणं ज्वालो वा ज्वालन य स । प्रश्न० ५७ ।
ऊरुयावल-ऊरुयोरावलन ऊरुवावल । प्रश्न० ५७ ।
ऊर्ध्वलोक -शुभलोक । जं० प्र० २४९ ।
ऊर्ध्ववेदिका-यत्र जानुनोरुपरि हस्तौ कृत्वा प्रत्युपेक्षते। वेदिकाया प्रथमभेद । ठाणा० ३६२ ।
ऊर्ध्वस्थित: । आचा० २९४ ।
ऊर्ध्वोपविष्टा । पिण्ड० १०५ ।
ऊल्लेऊण-आर्द्रीकर्तुं, जलेन भेतुम् । विशे० ६२७ ।
ऊस-उषो-यद्वशादूपर क्षेत्रम्। प्रज्ञा० २७। ऊषरादिक्षेत्रोद्भवो लवणिमसम्मिश्रो रजोविशेष । पिण्ड० ८। क्षारमृत्तिका । उत्त० ६८९ । ओष -क्षारमृत्तिका । आचा० ३४२ । अवश्याय । ओघ० १३० ।
ऊसड्ड-उत्सृत , उच्च । जीवा० २०० ।
ऊसढं-उच्छ्रित वर्णादिगुणोपेत ।आचा० ३३९। उत्सृत-ऋद्धिमत्कुलम् । दश० १८६ । वर्णगन्धरसस्पर्शोपपेतम् । आव० ७२६ । उच्छ्रित वर्णगन्धाद्युपेतम्। आचा० ३९०। उत्कृष्टम् । व्य० द्वि० १८९ अ। उच्च । दश० चू० ८७।
ऊसत्त-उत्सक्त -उपरिलग्न । जं० प्र० ७६। ऊर्ध्वं सक्त उत्सक्त -उल्लोचतले उपरिसंबद्ध ।प्रज्ञा० ८६।जीवा १६०, २२७ ।
ऊसभूमी-मिथुनविषये भूमि । नि० चू० प्र० १६१ अ ।
ऊसरणं-उत्सरण-आरोहणम् । विशे० ५३८ ।
ऊसरदेस-ऊषरदेश । आव० ८३९ ।
ऊसविए-उत्सर्प्य- ऊर्मिकिकणोत्सर्य , ऊर्ध्वीकृत्य वा । भग० ९३ ।
ऊसविय-उच्छ्रितानि । भग ५४१। उच्छ्रितं-ऊर्ध्वीकृतम्। ज्ञाता० १३९ ।
ऊसवेइ-उच्छ्रित करोति । भग० १७५ ।
ऊसवो-जत्थ सामण्णभत्तविसेसो रज्झइ सो उसवो। नि० चू० द्वि० १६२ अ। जत्थ न च उवमाहिज्जति जणो य अलंकियविभूसितो उज्जाणादिसु मित्तादिजणपरिवुडो खज्जपेज्जादिणा उवल्लति। नि० चू० तृ० १४ आ। उत्सव -शक्रोत्सवादि । आव० १२९ ।
ऊससंति-उच्छ्वसन्ति-उच्छ्वासक्रिया कुर्वन्ति । प्रज्ञा० २९९।
ऊससिअ-उच्छ्वसितं-उत्-ऊर्ध्वं प्रबल वा श्वसितम् । आव० ७७९ ।
ऊससिय-उच्छ्वसनमुच्छ्वसितम् । अनक्षरश्रुतभेद । विशे० २०४ । उच्छ्वसिता-उद्भिन्ना । उत्त० ४८१ ।
ऊससियरोमकूवो-उच्छ्वसितरोमकूप -उच्छ्वसिता इवो च्छ्वसिता -उद्भिन्ना रोमकूपा-रोमरन्ध्राणि यस्यासौ । उत्त० ४८१ ।
ऊसासनीसासे-उच्छ्वासेन युक्तो नि श्वास उच्छ्वासनिश्वास -प्राण । जं० प्र० ९० ।
ऊसासपए-उच्छ्वासपद, प्रज्ञापनाया सप्तमं पदम् । भग० १९ ।
ऊसासा-यावद्भि समयै पाशो तृतस्य नीयते तावत्समया उच्छ्वासा । ठाणा० ३९३ । उच्छ्वासा । प्रज्ञा० २४६ । सङ्ख्येया आवलिका उच्छ्वास । जीवा० ३४४। प्रज्ञापनाया सप्तम पदम्। प्रज्ञा० ६। सङ्ख्येया आवलिका उच्छ्वास -अन्तर्मुहू पवन । जं० प्र० ९० ।
ऊसासेहि-उच्छ्वासय-मारय । आव० ८१९
ऊसिअ-उच्छ्रितानि-लम्बमानानि । जं० प्र० ५० । प्रबलतया सर्वासु दिक्षु प्रसृता उत्सृता । जं०प्र०५३ । जीवा० १७५ । उच्छ्रितं-उत्कटम् । जं० प्र० ५२३ ।
ऊसिय-उच्छ्रितं-लम्बमानम् । जीवा० ३६१ ।
ऊसिओदयं-उच्छ्रित-ऊर्ध्व उदय-आयामो यत्र गमने तदुच्छ्रितोदयं, ऊर्ध्वताकमित्यर्थ । भग० १८७ ।
ऊसिता-उत्सृता-प्रबलतया सर्वासु दिक्षु प्रसृता । जीवा० ३७९ । सूर्य० २६३ ।
ऊसितोदग-उच्छ्रितोदक -उच्छ्रितमुदकं यस्मिन् स । जीवा० ३२१ ।
ऊसित्तो-उपसिक्त ,अपत्योत्पादनसामर्थ्यविकल , निर्बीज । बृ० तृ० ९७आ। णो तस्स अवच्चं उप्पज्जति णिब्बीओ सो। नि० चू० द्वि० ३१अ ।

ऊसिय-उच्छ्रितं-ऊर्द्ध्वीकृतम् । भग० ५४१ । उच्छ्रितः-ऊर्ध्वीकृतः, उत्सृतो वा-अपगतः । राज० १२३ । उच्छ्रितं-ऊर्ध्वं नीतम् । ज्ञाता० १६ । उत्सृता-प्रबलतया सर्वासु दिक्षु प्रसृता । सम० १३९ । उच्छ्रितः-ऊर्द्ध्वीकृतः । जीवा० २४६ उत्सृतः । आव० ७७२ । उत्सृतं-लम्बमानम् । जीवा० २०५ । उच्छ्रितम्-उन्नतम् । ऊर्ध्वीकृतं, अपगतः, अपनीतः । भग० ११५ । नंदी ४६ । उच्छ्रितं-ऊर्द्ध्वम् । भग० १८७ ।

ऊसियपडागं-उच्छ्रितपताकम् । आव० १०० ।

ऊसियफलिह-उच्छ्रितस्फटिकाः-उच्छ्रितमुन्नतं स्फटिकमिव स्फटिकं चित्तं येषां ते । मौनीन्द्रप्रवचनावाप्त्या परितुष्टमानसा इत्यर्थः । उच्छ्रितः-अर्गलास्थानादपनीयोर्द्ध्वीकृतो न तिरश्चीनः कपाटपश्चाद्भागादपनीत इत्यर्थः परिघः-अर्गला येषां ते उच्छ्रितपरिघाः, उच्छ्रितः-गृहद्वारादपगतः परिघो येषां ते उच्छ्रितपरिघाः । भग० ११५ । उच्छ्रितं स्फाटिकमिव स्फाटिकं-अन्तःकरणं यस्य सः । राज० १२२ ।

ऊसिरं-गीवाधयस्थानमित्यर्थः । नि० चू० द्वि० ६० आ ।

ऊसीसयं-उच्छीर्षकम् । आव० १२४ ।

ऊसूरं-वेलातिक्रमः । ओघ० १८२ ।

ऊसूरओ-उत्सूरः । आव० १०३ ।

ऊह - सम्भवत्पदार्थविशेषाभिलाषान्वयनाय ऊहस्तर्कः-गुणभेदं चैतस्यात् । आचा० २३० ।

ऊहा-बुद्धिः । दश० १२९ । ओघमात्रमज्ञा । विशे० २८१ । स्वतर्कबुद्धिः । आव० ३२६ । स्वचितर्कात्मिका । उत्त० १८१ ।

ऊहिय-ऊहित-ज्ञातः । आव० ७२१ ।

ऋ

ऋक्षाः-अच्छाः । जीवा० ३८ ।

ऋजुभावत्वं-मध्यमजिनयतीनां विशेषणम् । आव० ५९ ।

ऋजुवक्रजडत्वं । आव० ७६ ।

ऋजुश्रेणिप्रतिपन्नः-यो भवोपग्राहिकर्मांशान् क्षपयित्वाऽस्पृशद्गत्या सिद्ध्यतीति । आव० ४४१ ।

ऋजुसूत्रः - साम्प्रतार्थानामभिधानपरिज्ञानम् । तत्त्वा० १-३५ ।

ऋज्वी-यस्यामेकां दिशमभिगृह्योपाश्रयाद् निर्गतः प्राञ्जलैव यथा समश्रेणिव्यवस्थितगृहपङ्क्तौ भिक्षां परिभ्रमन् तावद् यानि यावत्पङ्क्तौ चरमगृहं, ततो भिक्षामगृह्णनेवापरांतेऽपि प्राञ्जलयैव गत्या प्रतिनिवर्तते सा ऋज्वी । बृ० प्र० २५१ आ ।

ऋणं-पापम् । प्रश्न० ७ ।

ऋणग्रा-ऋणं-कर्म तद्ग्रा । आव० ५९५ ।

ऋतं-दुःखं, पीडितम् । ठाणा० १८८ । दुःखम् । आव० ५८४ । पीडितः । भग० ५६० । दुःखस्वभावार्थी । उत्त० ६०९ ।

ऋतुबद्धावग्रहः-अवग्रहस्य द्वितीयो भेदः । सम० ११ ।

ऋतुमासः - कर्ममासः, स त्रिंशद्दिनप्रमाणः । बृ० प्र० १८६ आ ।

ऋतुसंवत्सरः-सावनसंवत्सरः । ठाणा० ३४५ ।

ऋद्धा-भवनादिभिर्वृद्धिमुपगता । ज्ञाता० १ ।

ऋषभः-प्रथमतीर्थंकरः । ज्ञाता० १३९ ।

ऋषभमण्डलप्रविभक्तिः-एकादशो नाट्यविधिः । जीवा० २४६ ।

ऋषभदत्तः-कोडालसगोत्रब्राह्मणविशेषः । आव० १०८ ।

ऋषभस्वामी-प्रथमतीर्थंकरः । व्य० द्वि० २ आ ।

ऋषितः-गोत्रस्य बीजं । व्य० द्वि० २२४ आ ।

ऋषिपालिकाः-मत्स्यविशेषः । प्रज्ञा० ७० ।

ए

एंती-आगच्छन्ती । बृ० द्वि० ११७ आ ।

एंतो आगच्छन् । आव० ८२० ।

एंतओ-आगच्छन् । आव० १२६ ।

ए-वाक्यालंकारे । अनु० १३६ । अलङ्कारे । भग० ४०५ । वाक्यालङ्कारे । भग० ८३ । आमन्त्रणार्थः, अलङ्कारोऽयवा । भग० ३५ ।

एइंसु-आगतवन्तोऽनुभूतवन्तः । भग० ७७३ ।

एइणा-अनेन । बृ० द्वि० ११० अ ।

एई-इयती । आव० ५१३ ।

एककाः-अध्ययनविशेषः । ठाणा० ३८७ ।

एकखुर-अश्वगोहरिणसिंहादयः । सम० ११५ ।

एकतश्चक्रवालं-एकस्यां दिशि नटानां मण्डलाकारेण नर्तनम् । जै० प्र० ४१५ ।

एकतोवक्रद्विधातोवक्रएकतश्चक्रवालद्विधातश्चक्रवालचक्रार्द्धचक्रवालाभिनयात्मक –चतुर्थो नाट्यविधि । जीवा० २४६ । जं० प्र० ४१५ ।

एकतोवक्र–एकतोवक्र नाम नटानां एकस्यां दिशि धनुराकारश्रेण्या नर्त्तनम् । जं० प्र० ४११ ।

एकतोवेदिका एकं जानु बाह्वोरन्तरे करोतीति । ठाणा० ३६२ ।

एकत्तवियक्कं–एकत्ववितर्कम् । आव० ३२७ ।

एकत्ववितर्कमविचारं – शुक्लध्यानद्वितीयभेद । आव० ६०३ ।

एकधारं–शस्त्रविशेष । दश० २०१ ।

एकभविक–तत्र एकस्मिन् भवे तस्मिन्नेवातिक्रान्ते भावी । एकभविक –योऽनन्तर एव भवे इन्द्रतयोत्पत्स्यत इति । ठाणा० १०३ ।

एकभावं–एकत्वम् । उत्त० ५८० ।

एकमुखं । ओघ० ९९ ।

एकल्लओ–एकाकी । आव० ३०६ ।

एकल्लशाटक–एकवस्त्रक । ओघ० ४३ ।

एकविहारप्रतिमा–पञ्चमी प्रतिमा । सम० ९६ ।

एकस्थीकृतं–न एकस्थमनेकस्थ अनेकस्थमेकस्थमिव कृतमेकस्थीकृतम् । आचा० ६३ ।

एका –एका –षष्ठा सङ्ख्याशब्दत्वात सर्वादित्वम् । जं० प्र० १३१ ।

एकाए–एक । व्य० द्वि० ४१७ अ ।

एकान्त–एक एवाहमित्यन्तो–निश्चय । उत्त० ३०७ ।

एकान्तरः–अनन्तरसमय । आव० १४ ।

एकान्तवित् एकान्तेन विदितसंसारस्वभावतया मौनीन्द्रमेव शासनं तथ्यं नान्यदित्येवं वेत्तीति । सूत्र० २६५ ।

एकायतन – एक–अद्वितीय आयतन–ज्ञानादित्रयम् । आचा० २०७ ।

एकावलि.–भूषणविधिविशेष । जीवा० २६८ ।

एकावली–विचित्रमणिकरचिता एकसरिका । जं० प्र० १०५ । विचित्रमणिका । ज्ञाता० ४३ । कनकावल्यभिप्रायेणैवार्थ । औप० ३० ।

एकाशीतिपदवास्तुन्यास० । जं० प्र० २०८ ।

एकिका–प्रश्रवणम् । आचा० ४०९ ।

एक्कई–एकीकृत्य–यौगपद्येन । ओघ० १११ ।

एक्कगमा–एकगमा –तुल्याभिलापा । ठाणा० ५८ ।

एक्कगमे–एकगम –षड्भ्योऽप्यन्तेऽप्येक एव पाठ । अन्त० ४ ।

एक्कडे–पर्वतविशेष । प्रज्ञा० ३३ ।

एक्कमुद्दा–जेसिं एकओ दलाण मुद्दा ते एक्कतोमुद्दा । नि० चू० प्र० १६१ अ ।

एक्कल्लओ–एकाकी । आव० १९३ ।

एक्कवारिआ । ओघ० ९७ ।

एक्कसंकलितबद्धा–एकशृङ्खलाबद्धा । आव० ६३ ।

एक्कसरा–सद्दैव । आव० ३६७ ।

एक्कसिं–एकशः । आव० ८१३ ।

एक्कसेल–एकशैल –वक्षस्कारपर्वत । जं० प्र० ३४७ ।

एक्काणिया–एकाकिनी । आव० ५६० ।

एक्कारसी–एकादशी तिथि । ज्ञाता० १५३ ।

एक्काहिज्जा–व्यन्तरीविशेषा । नि० चू० प्र० ३०४ आ ।

एगगिओ सघातिमासघातिमो एगगिओ भवति । नि० चू० द्वि० ७९ अ ।

एगंगियं– एकाङ्गिकं तज्जातदशिकं सदशिकाकम्बलीखण्डनिष्पादितम् । ओघ० २१४ । य एकेन फल्कादिना कृत । बृ० तृ० १६२ अ । एकाङ्गिक–तज्जातदशिकं न वा द्व्यादिखण्डनिष्पन्नम् । बृ० द्वि० २२१ अ ।

एगंत–एकान्त–विजनम् । ज्ञाता० ८८ । नियम । उत्त० २४१ । एक –अद्वितीय , कर्मणामन्तो यस्मिन्निति, मोक्ष । उत्त० ३०७ । एकनिश्चय । भग० २९० । एकान्त–अनुपघातकं स्थानम् । दश० १५६ । निश्चय । उत्त० ५८७ । इतरव्यासङ्गपरिहारात्मकम् । उत्त० ६२२ । मोक्ष । दश० १६५ । विजनम् । भग० ३२३ । योजनमण्डलान्यत्र । जं० प्र० ३८८ ।

एगंतचरिया–एकान्तचर्या–द्रव्यक्षेत्रकालभावेष्वसंबद्धता । दश० १९ ।

एगंतदिट्ठी–एकान्तदृष्टि –एकोऽन्तो–निश्चयो यस्या सा तथा, सा चासौ दृष्टि , अनन्याक्षिप्ता । उत्त० ४५७ । एकान्तदृष्टि –एकान्तेन तत्त्वेषु–जीवादिषु पदार्थेषु दृष्टिर्यस्यासौ । सूत्र० २३४ । एकोऽन्तो–निश्चयो यस्या सा एकान्ता सा दृष्टि –बुद्धिर्यस्मिन् एकान्तदृष्टिः । ज्ञाता० ५१ । एकान्ता–मा

ह्यमेवेदं मयेत्येवमेव निश्चया दृष्टिर्यस्य सः। ज्ञाता० ८०। एकान्तेन निश्चला जीवादितत्त्वेषु दृष्टिः-सम्यग्दर्शनं यस्य स एकान्तदृष्टिः-निष्प्रकम्पसम्यक्त्वः। सूत्र० १८१।

पगंतदिट्ठीए-एकोऽन्तो-निश्चयो यस्याः सा एकान्ता सा दृष्टिः-बुद्धिर्यस्मिन्निर्ग्रन्थे प्रवचने-चारित्रपालनं प्रति तदेकान्त-दृष्टिकम्। एकान्ता-एकनिश्चया दृष्टिः-दृक् यस्य स एकान्त-दृष्टिकः। ज्ञाता० ५१।

पगंतधारा-एकश्चान्ते-वस्तुभागेऽपहर्तव्यलक्षणे धारा-परो-पतापप्रधानवृत्तिलक्षणा यस्य स एकधारः। ज्ञाता० ८०। एकान्तधारा-तीक्ष्णधारा। उत्त० ३२७। एकान्ता-एकवि भागाश्रया धारा यस्य सा एकान्तधारा। ज्ञाता० ५१।

पगंतपंडिए-एकान्तपण्डितः-साधुः। भग० ९१।

पगंतबाले-एकान्तबालः-मिथ्यादृष्टिः अविरतो वा। भग० ९०।

पगंतमंतं-एक इत्येवमन्तो-निश्चयः यत्रागमावेकान्त एक इत्यर्थः अतस्तमन्। शुभागमम्। भग० २९०।

पगंतमोणेण-एकान्तमौनेन-संयमेन करणभूतेन। सूत्र० ११९।

पगंतरं-एकान्तरोऽनन्तरसमयः। विशे० २०९। एकान्तरे-एकेन चतुर्थलक्षणेन तपसाऽन्तरे-व्यवधाने यस्मिंस्तत्। उत्त० ७०६।

पग-एकः-असहायो रागद्वेषादिसहभावविरहितो गीतमादि-रित्यर्थः। उत्त० २४१। तथाविधतीर्थकरनामकर्मोदयादनु-त्तरागाप्तविभूतिरद्वितीयः, तीर्थंकरः। घातिकर्मनाद्वित्यरहितः। उत्त० २४१। एकत्र। ओघ० ३३। असहायः। ठाणा० ३५। तत्र प्रदेशार्थतया असंख्यातप्रदेशोऽपि जीवो द्रव्यार्थतया एकः, ,अथवा प्रतिक्षणं पूर्वस्वभावक्षयापरस्वरूपोत्पादयोगेनानन्त-भेदोऽपि कालत्रयानुगामिचैतन्यमात्रापेक्षया एकः, अथवा प्रतिसन्तानं चैतन्यभेदेनानन्तत्वेऽप्यात्मनां संग्रहन याश्रितसामान्यरूपापेक्षयैकत्वम् इति। सम० ५। मोक्षोऽशेषमलकलङ्करहितत्वात् संयमो वा रागद्वेषरहितत्वात्। आचा० २१२। पूर्वपूर्वेभ्यः उत्तरोत्तरम्पः, आद्यः, पर्य-वसानो वा। प्रज्ञा० २६५। धर्मसहायविप्रमुक्तः अन्यगा-मारिकरिपवो वा। दश० १८८। उद्रेकावस्थावर्तित्वेन गुणेन स्पर्शाख्येनोपलक्षितः इति एकः-वायुः। आचा० ७५। एकाकी, असहाय। ठाणा० १९०। आन्तरव्यक्तरागादि-सहायवियोगात् अद्वितीयः तथाविधपदात्यादिसहायविरहात्। ज्ञाता० ३४। सहतः। ज्ञाता० ५७। एकः-रागद्वेषरहित-तया ओजाः, यदित्राऽस्मिन् संसारचक्रवाले पर्यटन्नसुमान् स्वकृतसुखदुःखफलभाक्त्वेनैकस्यैव परलोकगमनतया सदैकक एव भवति। सूत्र० २६५। समानः। राज० ४९। मोक्षः संयमो वा। सूत्र० २३५।

पगइओ-एकदा कदाचिद् एकचरो वा। आचा० ३३०।

पगइया-एकका:, एके केचनेत्यर्थः। भग० ३९।

पगइयाणं-एकेषां, न तु सर्वेषाम्। भग० १२९।

पगईओ-एकः कश्चिदेकाकी वा। आचा० ३३७।

पगउ-एकस्मिन् देशे। ज्ञाता० । ९३।

पगओ-एकतः। ज्ञाता० ७०। एकः स एव एककः, एको वा प्रतिमाप्रतिपत्त्यादौ गच्छतीत्येकगः। एकं वा कर्मसाहि-त्यविगमतो मोक्षं गच्छति-तत्प्राप्तियोगानुष्ठानप्रवृत्तेर्यातीत्ये-कगः। उत्त० १०८।

पगओखहा-एकस्यां दिश्यङ्कुशाकारा। ठाणा० ४०७। यथा जीवः पुद्गलो वा नाड्या वामपार्श्वादेस्ताः प्रविष्टस्तथैव गत्वा पुनस्तद्वामपार्श्वादावुत्पद्यते सा एकतःखा, एकस्यां दिशि वामादिपार्श्वलक्षणायां खस्य-आकाशस्य लोकनाडी व्यतिरिक्तलक्षणस्य भावादिति। भग० ८६६।

पगओजणणोघट्टयकिच्चगए। भग० १९०।

पगओवंका-एकत.-एकस्यां दिशि वङ्का-वक्रा एकतोवक्रा। भग० ८६६।

पगओवत्ता-द्वीन्द्रियजीवविशेषाः। प्रज्ञा० ४१।

पगखम्भ-एकस्तम्भ.-एक. स्तम्भो यस्मिन् स. प्रासाद.। दश० ४१।

पगखुर-प्रतिपदमेकः खुरो येषां ते एकखुराः-अश्वादयः। जीवा० ३८। प्रतिपदमेक खुरः-शफो येषां ते एकखुरा -अश्वादयः। प्रज्ञा० ४१। एक. खुरः-चरणे येषामधोवर्त्य-स्थिशेषो येषां ते एकखुरा-हयादय। उत्त० ६९९।

पगगयं-एकाग्रिकं-तत्त्वम्। व्य० द्वि० ८१ आ।

पगगुण-एकगुणः एकेन गुणो-गुणनं-ताडनं यस्य स एक-गुणः। ठाणा० ३५।

पगगुणकालए-एक.-सर्वजघन्यो गुण-अंशस्तेन कालकः परमाण्वादिरेकगुणकालकः-सर्वजघन्यकृष्णः। अनु० १११।

पगग्ग-एकाग्रस्य-एकालम्बनस्थापितस्य भावः एकाग्र्य-ध्यानम्। उत्त० ६३१।

एगग्गचित्त-एकाग्रचित्त-एकालम्बनः। दश० ५७।

एगग्गमणो-एकाग्रमनाः-अवहितचित्तः। उत्त० ५९९।

एगग्गहण-एकग्रहणेन-एकशब्देन। भग० १४५।

एगग्गहणगहिया-एकग्रहणगृहीता-एकग्रहणेन-एकशब्देन-धर्मास्तिकाय इत्येवंलक्षणेन गृहीता ये ते तथा, एकशब्दाभिधेया इत्यर्थ। भग० १४९।

एगचरा-एकचरा-एकाकिनः। आचा० २०८।

एगचक्खू-अतिशयवद् श्रुतज्ञानादिवर्जितो विवक्षित इति एकचक्षुः, चक्षुरिन्द्रियापेक्षया। एकं चक्षुरस्येति। ठाणा० १७१।

एगचक्खू विणिहय-एकचक्षुर्विनिहत-एकं चक्षुर्विनिहतं यस्य सः। प्रश्न० २५।

एगचरिया-एकचर्या-एकाकिविहारप्रतिमाऽभ्युपगम। आचा० २४३।

एगचोरो-एकचौरः-य एकाकी सन् हरति सः। प्रश्न० ४६।

एगच्चा-एकार्चा-अद्वितीयपूज्या. संयमानुष्ठाने वा अमदशी अर्चा-शरीरं येषां ते एकार्चा.। उपा० २९।

एगच्छत्त-एकच्छत्रा एकं छत्रं-नृपतिचिह्नमस्यामिति, अभिधमानद्वितीयनृपतिः। उत्त० ४४८।

एगजंबूय-उल्लुकतीरे चैत्यविशेष.। भग० ७०५।

एगजडी-एकजटी-एकाशीतितमो महः। जं० प्र० ५३५। व्यशीतितमो महः। ठाणा० ७९।

एगज्जं-एकाद्यम्-एकवाक्यतया समधार्य। आचा० ३३०।

एगट्ठ-एकस्थ-एकत्र। आव० ७१०। एकार्थ-अनन्यविषयं एकप्रयोजनं वा। भग० १७।

एगट्ठभागमुहुत्तेहिं-मुहूर्तैकषष्टिभागाभ्याम्। सूर्य० १२१।

एगट्ठाणं-एकस्थानकं-यथा अङ्गोपाङ्गस्थापितं तेन तथावस्थितेनैव समुद्देष्टव्यम्। आव० ८५३।

एगट्ठि-एगट्ठीगं। नि० चू० प्र० ५६ आ।

एगट्ठिआणुओगे-एकस्यासावर्थश्च-अभिधेयो जीवादि स येषामस्ति त एकार्थिका-शब्दास्तैरनुयोगस्तत्कथनमित्यर्थ। ठाणा० ४८१।

एगट्ठिए-एकश्चासावर्थश्च-अभिधेयः एकार्थ स यस्यास्ति स एकार्थिक., एकार्थवाचक इत्यर्थ। ठाणा० ४९२।

एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं-मुहूर्तैकषष्टिभागाभ्याम्। सूर्य० १२।

एगट्ठिभागे-एकषष्टिभागान्। सूर्य० २५।

एगट्ठिया-एकमस्थिकं फलमध्ये येषां ते। भग० ८०४। एकमस्थिक-फलमध्ये बीजं येषां ते एकास्थिकाः। भग० ३६४। एकास्थिका-नौः। विपा० ८०। ज्ञाता० २२७। फलं फलं प्रति एकमस्थि येषां ते एकास्थिकाः। प्रज्ञा० ३१।

एगठाणं-एकस्थानम्। आव० ८५२। एकः सङ्घाटकः। ओघ० ९९।

एगणासा-एकनासा पश्चिमरुचकवास्तव्या पञ्चमी दिक्कुमारीमहत्तरिका। जं० प्र० ३९१।

एगणिसेज्जाए-एकेनासनपरिग्रहेण। सम० ७२।

एगतियाओ-एकका-काश्चन। जीवा० ११८।

एगतो-एकतः-एकस्मिन् स्थाने। व्य० प्र० १७४ आ।

एगतोनिसहसंठिया-एकतो-रथस्य एकस्मिन् पार्श्वे यो नितरां सहते स्कन्धपृष्ठे वा समारोपितं भारमिति निषधो-बलीवर्दस्तस्येव संस्थितं-संस्थानं यस्याः सा एकतोनिषधसंस्थिता। सूर्य० ७१।

एगतोघंका-एकओर्वंका एकस्यां दिशि वक्रा। ठाणा० ४०७।

एगतोवत्ता-एकतोवर्ता-द्वीन्द्रियजीवविशेषः। जीवा० ३१।

एगतोवेति-एगत्तीला। नि० चू० प्र० ११७ अ।

एगत्त-एकता, ऐकता-निरालम्बनत्वम्। भग० ११४। एकत्वे-अभेद। ठाणा० १९१।

एगत्तवियक्के-एकत्वेन-अभेदेनोत्पादादिपर्यायाणामन्यतमैकपर्यायालम्बनतयेत्यर्थो वितर्क-पूर्वगतश्रुताश्रयो व्यञ्जनरूपोऽर्थरूपो वा यस्य तदेकत्ववितर्कम्। ठाणा० १९१।

एगत्तीकरण-एकत्वकरणं-एकाग्रत्वविधानम्। ज्ञाता० ८६।

एगत्था-एकार्था-एके च ते अर्थाश्चेति एकार्था, एकैवाभिन् न सर्वेषां निखिलानां वक्तुमशक्यत्वादर्थो-जीवादय। सम० ११२।

एगदिसि-एकया दिशा पूर्वोत्तरलक्षणया। ज्ञाता० ४५।

एगदुवारा-एकद्वारा-एकप्रवेशनिर्गममार्गा। ज्ञाता० २२८।

एगदिट्ठी-एकदृष्टि-बद्धलक्ष। प्रश्न० १५८।

एगन्तुच्छेय-सर्वथा उत्-प्राबल्येन छेदो-विनाश एकान्तोच्छेद-निरन्वयो नाश इत्यर्थ। दश० ४०।

एगपक्खं-एकपक्ष, एक पक्षो ब्राह्मणलक्षणो यस्य तत्। उत्त० ३६०।

एगपक्खी-एकपाक्षिक -एकवाचन, एककुलवर्ती। व्य० प्र० २१२ अ। एकपाक्षिक अपृथुत। व्य० प्र० २१२ अ। गुरुभ्राता भ्राता गुरुगुरुर्गुरुस्तप्ता समानकुलत्व समानश्रुतो वा। बृ० तृ० १३६ आ।

एगपत्ती-एकपत्नी। आव० ९०।

एगपएसोगाढं-एकप्रदेशावगाढम्-जीवापेक्षया कर्मद्रव्यापेक्षया च ये एके प्रदेशास्तेष्ववगाढम्। भग० ८३।

एगभविय-एकभविक -नोआगमतः द्रव्यद्रुमस्य प्रथम प्रकार, य एकेन भवेनानन्तरं द्रुमेषूत्पत्स्यते। स्था० १७।

एगभायणो-समर्पित। नि० चू० तृ० ६७ अ।

एगभाव-एको भाव -सांसारिकभावविपर्ययात् स्वाभाविक गुणरूपो यस्यासावेकभाव। भग० ६४०। साधुभ्रता। आव० ११३।

एगभूए-एकभूत एक एव-आत्मोपम। ठाणा० २१। एकत्व प्राप्त। भग० ६४७।

एगमङ्गो-एकमडम्ब नाम यस्य निवेशस्य सर्वासु दिक्षु विदिक्षु च नास्ति कोऽप्यन्यो ग्रामो नगरं वा तस्मिन्नेकमडम्बे। व्य० द्वि० ११६ अ।

एगमणा-एकं दर्शनान्तराकृतजीवाजीवविभक्तत्वश्रद्धानत्वेन मन चित्त येषां ते एकमनस -श्रद्धानवन्त। उत्त० ६०१।

एगमणो-एकमना एकाग्रचित्ता। आव० ७८०।

एगमना एकम् एकत्र प्रस्तुते वस्तुन्यभिनिविष्टं येन मनो यस्यासौ एकमना। स्था० ५१९।

एगमेग-एकैकम्। सूत्र० २३।

एगयओ-एकत एकत्वेनतया। भग० १०४। एकत्र एकाश्रय, समुच्चयेनेत्यर्थ। भग० ७७८। एकत्र। ठाणा० ३१४।

एगयर – एकतर, अन्यतमत्। आव० ३३। एकतर अनुकूल। आचा० ०८२।

एगरइद्दियाण-द्वादशी एकरात्रमानानि। ज्ञाता० ७३।

एगराइया-एकरात्रिक -अपान्तराले वसास तत्र मातुलानी प्रचुरगोरसादिलाभेऽपि प्रतिबन्धमकुर्वता कारणमन्तरेण नैक रात्रमेव वस्तव्य साधुकर्मि यस्मिन्नेणाभिग्रहण। व्य० प्र० १३, आ। एकरात्रिकी। उत्त० ५३१। आव० २१६।

एगराइयाभिक्खुपडिमा – रात्रिप्रमाणा द्वादशी भिक्षुप्रतिमा। सम० ०१।

एगराई-एकरात्रिकी। आव० ६८८।

एगराय एका रात्रिर्यत्र तत् एकरात्र। एका रात्रि यावत् तत। उत्त० ११०।

एगलंभिए य एक प्रधान शिष्यमात्मना लभते गृह्णाति शेषांश्चाचार्यस्य समर्पयति, स एकलाभेन चरतीति एक लाभिक। व्य० प्र० २३२ आ।

एगल्ल-एकाकिन। ठाणा० ४१०।

एगल्लविहार-एकाकिविहार। अनु० ३६०।

एगवड-एकवड एकाकी। व्य० प्र० २०१ अ।

एगविऊ-एकमेवात्मानं परलोकगामिनं वेत्तीति एकवित्, स मे कश्चिद् दुःखपरित्राणकारी सहायोऽस्ती त्येवमेकवित्। एका-न्तवित् वा एकान्तेन विविक्तसंसारस्वभावतया मौनीन्द्रमेव शासनं स य नान्यदित्येव यस्तीत्यवगम्यवित्, एक मोक्ष संयमो वा तं वेत्ति। सूत्र० ०६०।

एगविह एकारम्भ। विशे० ३९६।

एगविहिविहाणा एकेन विधिना प्रकारेण व्यवस्थापन विधान स्वरूपस्य करणं यस्य स एकविधिविधाना। भग० २८२।

एगसर एकविनिर्गत एकस्वर तत्र स्थाने। नि० चू० प्र० ३५८ आ। यत्र ससस्वीकं पातन्ती क्वापि चरणौ एकस्मिन् वा तिष्ठति। नि० चू० प्र० १०७ अ।

एगसाडियउत्तरासगकरण एका शाटिका यस्मिन्स्तथा, तथा एतेनोत्तरासङ्गकरणं च उत्तरीयस्य न्यासविशेष। आचा० ४।

एगसाडय एकशाटकम्। ज्ञाता० २६९।

एगसित्थ एकं सिक्थं यत्रैकमेव सिक्थं भुज्यते तत्। स्था० ६८।

एगसेलकूडे एकशैलकूट एकशैलवक्षस्कारकूटनाम। जं० प्र० ३६७।

एगसेलग। ज्ञाता० ०८२।

एगसेले। एकशैलो धातकीखण्डपश्चिमार्धस्य मन्दरपूर्वतस्थे स्वनामख्यातं वक्षस्कारपर्वते। ठाणा० ८०। एकशैलो जम्बू द्वीपस्य मन्दरपर्वतस्य पूर्वस्थे स्वनामख्याते वक्षस्कारपर्वते। ठाणा० ३०६।

एगा एका-अद्वितीया। अनु० ८१०।

पगागारो-एकाकारः एकस्वरूपः । जीवा १४३ ।

पगागिसमुद्दिसगा-ये न मण्डल्युपजीविनः । ओघ० ८७ ।

पगागिओ-एकाकी । आव० ५५८ ।

पगाणुप्पेहा-एकस्य-एकाकिनो असहायस्यानुप्रेक्षा-भावना एकानुप्रेक्षा । ठाणा० १९० ।

पगाभिमुहा-एकं भगवन्तं अभिमुखं येषां ते एकाभिमुखाः । ज्ञाता० ४५ ।

पगाभोगो-एगा योगो भण्णति । नि० चू० प्र० ४७ अ ।

पगामोसा- त्रिभिरंगुलीभिर्वा यद्ग्रहीतव्यं तदेकार्ये गृह्णाति सा, मध्ये गृहीत्वा हस्ताभ्यां वस्त्रं घृषन् त्रिभागावशेषं यावन्नयति द्वाभ्यां वा पार्श्वाभ्यां यावद् ग्रहणा । ओघ० ११० । एकामर्शनं एकामर्शा । उत्त० ५४१ ।

पगाय-एकाकिनः । सूत्र० १८० ।

पगालंभी -एकलाभी-यः प्रधानः शिष्यः तमेकं यो न ददाति अवशेषांस्तु सर्वानपि प्रव्रजितान् गुरूणां प्रयच्छति । येषामेक एव लाभो-यथा यदि भक्तं लभन्ते ततो वस्त्रादीनि न, यथा वस्त्रादीनि लभन्ते तर्हि न भक्तमपि, एकमेव लभन्ते इत्येवंशीला एकलाभिनः । व्य० प्र० २३२ आ ।

पगावलि-तपविशेषः । आचा० ४२३ । एकावली-नानामणिकमयी माला । औप० ५५ । विचित्रमणिका । ज्ञाता० ४३ । विचित्रमणिकमयी । भग० ४७७ ।

पगावलिसंठिते-एकावलिसंस्थितः-अनुराधानक्षत्रसंस्थानम् । सूर्य० १३० ।

पगावली-एकावलिका-जघन्ययुक्तासङ्ख्यातकसमयानां समुदायः । जीवा० ३४४ । विचित्रमणिकमयी । भग० ४५९ ।

पगावाती-एकवादी-तमेक एवात्मादिरर्थ इत्येवं वदतीति । ठाणा० ४२५ ।

पगासणं- एकाशनं नाम सकृदुपविष्टपुताचालनेन भोजनम् । आव० ८५३ ।

पगाहं-एगाहं एकमहर्यावत् । जीवा० १०९ । दिने दिने गत्वा नोदयति, एकान्तरितं वा । बृ० तृ० १४२ आ । एगाहं-अमवसार्थम् । व्य० द्वि० ३८६ अ ।

पगाहच्चं-एका हत्या-हननं-प्रहारो यत्र जीवितव्यपरोपणे तदेकाहत्यम् । भग० ३२३ । एका एव आहत्या-आहननं प्रहारो यत्र भस्मीकरणे तदेकाहत्यम् । भग० ६७० । एकं घातं, एकेन घातेनेति भावः । राज० १३४ ।

पगाहजातगा-एकाहर्जाता एकदिवसोत्पन्नाः । आव० ११६ ।

पगाहिगारिगा-एकस्मिन् शय्यातरं पिण्डादावधिकृतदोषेऽनालोचिते एव यानि शेषदोषसमुत्थितानि प्रायश्चित्तानि तानि एकाधिकारिकाणि, एकाधिकारे भवानि एकाधिकारिकाणि । व्य० प्र० ३० अ ।

पगाहिय-ज्वरविशेषः । भग० ११७ ।

पगुरुया-एकोरुकः-अन्तरद्वीपविशेषः । जीवा० १४४ ।

पगूरूगा । ठाणा० २२५ ।

पगूरूयदीवे-अन्तरद्वीपे प्रथमः । ठाणा० २२५ ।

पगेभवं-एको भवान् । ज्ञाता० ११० ।

पगोदगं-एकोदकं, सर्वात्मनोदकप्लावितम् । जीवा० ३२६ ।

पगोरुया-अन्तरद्वीपविशेषः । प्रज्ञा० ५० ।

पच्चिरेण-इयता । ओघ० ६५ ।

पज एजतीति एजः -वायुः कम्पनशीलत्वात् । आचा० ७५ ।

पज्जंत-आयान्तमागच्छन्तम् । उत्त० ३५८ । आयान्तम् । आव० २८७ ।

पज्ज-एयातां-समागच्छताम् । बृ० तृ० १४१ अ ।

पज्जमाणं-इयत्, आगच्छत् । जं० प्र० २३१ । प्रत्यागच्छत् । ज्ञाता० १३९ । एज्यमानं-कम्प्यमानम् । जीवा० १८१ ।

पज्जा-आगच्छेत् । बृ० द्वि० १८७ अ ।

पडगारूढो-एडकारूढः । आव० ४१७ ।

पडेंति-एडयन्ति-अपनयन्ति । जं० प्र० ३८८ ।

पडेइ-छर्दयति, तीरे प्रक्षिपति । जं० प्र० २३७ ।

पडेति-अपनयति । भग० ६६५ ।

पडेसि-छर्दयसि । ज्ञाता० ६९ ।

पणी स्नायुः । प्रश्न० ८० । हरिणी । जं० प्र० ११० । जीवा० २७० । एण्य-स्नायवः । जं० प्र० ११० ।

पणीयारा-एणी-हरिणी मृगग्रहणार्थं चारयन्ति-पोषयन्ति ये ते । प्रश्न० १४ ।

पणेज्जग-गोत्रान्तरप्रवर्तितस्थानम् । भग० ६७८ ।

पतं-एतम्-एवम् । प्रश्न० १९ ।

पतमट्ठं-एतं-पुद्गलानामपरापरपरिणामलक्षणमर्थम् । ज्ञाता० १७१ ।

एत्तेवं-एतदेवमित्यर्थः । भग० ४५५ ।

एत्ताहे-अधुना । आव० ३२९ ।

एत्तिओ-एतावान् । आव० ४२० ।

एत्तिल्लयं-एतावत् । आव० ५१५ ।

एत्तियपरिक्खओ-ईयत्परीक्षक । आव० ८२६ ।

एत्तो-एतु । उत्त० १४२ । इत –अहिकण्डेरादिकत्वात् मकारान्त । ज्ञाता० १३० ।

एत्थ-अत्र, इह । दश० ९९ ।

एत्थ – अधोकवरपादपस्य यदधोऽग्रेत्येव सबन्धनीय । ज्ञाता० ६ ।

एत्थोवरए-अस्मिन् समये भगवद्वच सि वा उप-सामीप्येन रत व्यवस्थित । आचा० १६२ ।

एद्दहो-एतावान् । आव० ३४१ ।

एमेए एव अनेन प्रकारेण एते-येऽधिकृता । प्रत्यक्षेण वा परिभ्रमन्तो दृश्यन्ते । दश० ६८ ।

एयं-एतत्, एतावत्प्रमाणम् । सूर्य० ११२ ।

एयंतं-एजमान, कम्पमानम् । ठाणा० ३८५ ।

एयंतग-आगच्छत् । आव० २९१ ।

एयइ एजते कम्पते । भग० १८३ ।

एयकम्मे-एतद्व्यापार एतदेव वा काम्य-कमनीय यस्य स । विपा० ४० ।

एयग्गो-एकाग्र -एकचित्त । आव० ७७३ ।

एयणुद्देसए – एजनोद्देशक –भगवतीसूत्रस्य पञ्चमशतकस्य सप्तमोद्देश । भग० २४६ ।

एयविज्जे-एवैव विद्या–विज्ञान यस्य स एतद्विद्य । विपा० ४० ।

एयसामायारो – एतत्सामाचार –एतज्जीवकल्प । विपा० ४० ।

एयारूव-एतद्रूप-वक्ष्यमाणरूपम् । भग० ३०२ । एतद्रूप एतदेव रूप–स्वरूप यस्य स । जं० प्र० २२ ।

एयावंति एतावन्त । आचा० २३ ।

एरंड-एरण्ड । बृ० द्वि० २१९ अ । तृणविशेष । प्रज्ञा० ३३ । एरण्ड । आचा० १९७ ।

एरंडइए एरण्डयित । बृ० द्वि० १०६ आ ।

एरंडकट्ठसगडिया – एरण्डशकटिका–एरण्डकाष्ठमयी । ज्ञाता० ७६ ।

एरंडवीयाण-उत्कलिकाभेद । प्रज्ञा० २६६ ।

एरंडमिंजिया-एरण्डमञ्जिका-एरण्डफलम् । भग० ९१० ।

एरगा-एरका–गुन्द्रा भद्रमुस्तक इत्यर्थः । बृ० प्र० २०२ अ ।

एरवए-ऐरवत –क्षेत्रविशेष । ठाणा० ६८ । ऐरावत । सूर्य० २२ । ऐरवत –कर्मभूमिविशेष । प्रज्ञा० ५५ ।

एरवतीणई-नदीविशेष । नि० चू० द्वि० ७९ अ ।

एरावण-ऐरावण –शक्रगज । प्रश्न० १३५ । इन्द्रहस्ती । ठाणा० ३०२ । आव० ३११ । गुल्मविशेष । प्रज्ञा० ३२ ।

एरावणद्दहे-द्रहविशेष । ठाणा० ३२६ ।

एरावती-नदीविशेष । ठाणा० ४७७ । कुणालानगर्या समीपे नदी । बृ० तृ० १६१ आ ।

एरावय – ऐरावत–उत्तरपार्श्ववर्तिभरतक्षेत्रप्रतिरूपक्षेत्रविशेष । जं० प्र० ३१० ।

एरिंड-तृणविशेष । भग० ८०२ ।

एलए एलक –उरभ्र । प्रश्न० ३७ ।

एलक-ऊरणक । अनु० १२९ ।

एलकच्छं-एडकाक्षं – योऽसावेडकनिक्षिप्तविधानस्थाने पुरं, यत्पूर्वं दशार्णपुरं नाम नगरमासीत्, यत्र गजाग्रपदाभिध पर्वतस्तत् । आव० ६६८ ।

एलगच्छ एडकाक्ष –कायोत्सर्ग दृष्टान्त । आव० ८०० । एडकाक्ष –ग्रामविशेष । उत्त० ८७ ।

एलगमूओ – भाषमाण एडक इव मूकयते एडकमूक । आव० ६२८ ।

एलगा-एडका द्विखुरचतुष्पदविशेषा । जीवा० ३८ ।

एलते एडक –और्णक । प्रज्ञा० २१२ ।

एलमूयय-एलमूकता–अव्यक्तभाषानुकारित्वम् । दश० १९० ।

एलमूओ-एलमूगो भासइ एलगो जहा बुब्बुएति एवं एलमूगो भासति । नि० चू० द्वि० २९ आ ।

एलय-एलक ऊरणकम् । दश० ०७२ ।

एलवालुग-चिर्भटविशेषरूपम् । प्रज्ञा० ३७ ।

एला – फलविशेष । ज० प्र० ३५ । जीवा० १३६, १९१ ।

एलापाडल-एलापाटला–पाटलाविशेष । ज्ञाता० २३१ ।

एलापुडाण-एलापुटानि–द्रव्यविशेष । ज्ञाता० २३० ।

एलारस-एलारस –सुगन्धिफलविशेषरस । प्रश्न० १६१ ।

एलालुकी-वल्लीविशेष । आचा० ७७ ।

एलावच्चसगोत्तं-इलापत्येरपत्य एलापत्य, एलापत्येन सह गोत्रेण वर्तते य स एलापत्यसगोत्र । नंदी ४९ ।

एलावच्चा-गोत्रविशेष । ठाणा० ३९० । एलापत्या-रात्रे तृतीयं नाम । सूर्य० १४७ ।

एलावालुंकी-वल्लीविशेष । प्रज्ञा० ३२ ।

एलासमुग्गयं-एलासमुद्गकम् । जीवा० २३४ ।

एलिका-तृणपत्रनिश्रितो जीवविशेष । आचा० ५७ ।

एलिक्खं-ईदृशोऽभिहितार्थाभिज्ञ । उत्त० २८२ ।

एलिया-एडका । आव० ८५४ ।

एलिसय-ईदृश एतादृशम् । बृ० द्वि० २८७ अ ।

एलुय-एलुर-देहली । च० प्र० ४८ ।

एलुगावालुइक -तिन्दुकम् । दश० १८० ।

एलुक -उम्बर, देहली । बृ० प्र० २७७ आ ।

एलुग-देहली । आचा० [illegible] ।

एलुगा-एलुका-देहल्य । राज० ६१ । जीवा० [illegible] ।

एव-एव प्रकारवचनशब्द । दश० ११६ । प्रकारवाचक । आव० ५ । उपमार्थे । उत्त० २७४ । प्रकारार्थ । प्रज्ञा० २०० । इत्थंकरणार्थ । ज्ञाता० ११३ ।

एव आया एवमात्मा-एवंरूप । नंदी २१२ ।

एवं चतुर्थं - [illegible] क्षेत्रविशेषेषु । [illegible] । जं० प्र० ३१२ ।

एव भागा - एवंभागानि-वक्ष्यमाणप्रकारभागानि । सूर्य० १०४ ।

एवंभूओ-एवंभूत, यथाभूतो नय विशेषयति । आव० ३८४ । [illegible] सामेर [illegible] एवंभूतम् । अनु० २६६ ।

एवंभूत-एवमिति यथाभूत [illegible] एवंभूतो नय । ठाणा० १०१ । [illegible] नयस्य तृतीया भेद । उत्त० [illegible] [illegible] भूत - [illegible] । अनु० २६६ । [illegible] एवंभूत । ठाणा० ३९० ।

एवंभूय [illegible] । भग० १२८ । [illegible] । ठाणा० ३९० ।

एवंमहालियं-इतिमहतीम् । ज्ञाता० ६७ ।

एवंमहालिया-एतावन्ति महान्ति । जीवा० ३९९ ।

एव - एवकार -क्रमप्रदर्शनार्थ । आव० १० । समुच्चये । ठाणा० ५०४ । एव -अवधारणे भिन्नक्रमश्च । उत्त० २९४ । इति गाथ लङ्कारमात्रे । विशे० १२८७ । पूरणार्थे । आव० ११० । एवम्-अनन्तरोक्तप्रकारेण । उत्त० २८० । क्रमनियमप्रतिपादनार्थं । ओघ० २ । एवकार -परिमाणे । प्रज्ञा० ११९ । एवशब्द -अपिशब्दार्थं । बृ० प्र० २१३ आ ।

एवड्ड-एतावत् । आव० ४३० ।

एवमेयं - एवमेतत् यद्भवद्भि प्रतिपादितं तत्तथैवेत्यर्थ । ज्ञाता० ४७ ।

एवमेवं-[illegible]वमेव । उत्त० ४०९ ।

एवमेय-उपनयवचनमिति । ज्ञाता० ९६ ।

एस एष -एसम्मंतो-गवेषयन् । उत्त० ५१४ ।

एसणायामसमितिन-[illegible]भिधानम् । प्रश्न० १४४ ।

एसणासमिति -धर्मसाधनानामाश्रयस्य [illegible] । [illegible] ९-५ ।

एसणीय-प्रासुकम् । भग० १११ ।

एसयति-प्रेरयति, प्रापयति । विशे० ४१८ ।

एसणा एषणा-अभिलाष । पिण्ड० २ । [illegible] -गवेषणे [illegible] । उत्त० [illegible] । ठाणा० १०९ । [illegible] । आव० [illegible] । गवेषणा । प्रश्न० १०८ । अनुत्त० ३ । [illegible] । भग० [illegible] ।

एसणासमिए- [illegible] मुनिना [illegible] । आव० ६१६ ।

एसणाऽसमिए-[illegible] । आव० ६५१ ।

एसणासमिति - [illegible] । [illegible] बृ० प्र० १२ अ ।

एसणाऽसमिते-[illegible] । [illegible] ३०१ ।

एसणिज्ज [illegible] । ठाणा० १०८, ३११ । [illegible] । आव० ३३६ ।

एसणोवघाते-एषणया तद्दोषैर्दशभि शङ्कितादिभि तस्यो पघात -अकल्पयता। ठाणा० ३२०।

एसिं-एषणीय-शुद्धम् । पिण्ड० १४८ ।

एसिआ गोष्ठा । आचा० ३२७।

एसिज्जा-एषयेत्-पर्येषयितव्यया कुर्यात् । उत्त० ४६।

एसियं-एषणीय-आधाकर्मादिदोषरहितम् । आचा० ३३१।
एषणीय-गवेषणाविशुद्धया गवेषितम् । भग० ७९१ ।

एसिया-एषितु शीलमेषामिति एषिका-मृगलुब्धका हरित तापसाश्च मांसहेतोर्मृगान् हस्तिनश्च एषन्ति, ये चान्ये पाख पिंडका नानाविधैरुपायैर्भैक्ष्यमेषन्त्यन्यानि वा विषयसाध नानि ते। सूत्र० १७७।

एसु-एष्याम । ओघ० ७०।

एसुहुम-एतावत्सूक्ष्म । प्रज्ञा० ६०१। जीवा० ३७५।

एसे-एष्यति-आगमिष्यति । पिण्ड० १६७।

एस्सा-एष्या -भविष्यन्त । आव० ६८७।

एस्सुहुमो-एतत्सूक्ष्म । ओप० १०९।

एहता-एधयन्त -अनुभवन्त । दश० २४६।

एहति-एधते-प्राप्नोति । उत्त० ३१४।

एहा-एधा -समिधो यकाभिरग्नि प्रज्वाल्यते। उत्त० ३७२।
एधा -समिध , काष्ठानि । आचा० ३०९।

एहामो-एष्याम । ओघ० ६५।

एहिं-अर्वाकालिक । इदानीम् । नि० चू० द्वि० १०९ अ।

एहिअगुणा-ऐहिकगुणा -इहलोकगुणा भक्तपानादय । ओघ० १९।

एहिइ-एष्यति। उपा० ४०।

ऐ

ऐर्यापथिक-केवलयोगप्रत्यय कर्मबन्ध । प्रश्न० १४३।

ऐरावणापद्म्। ठाणा० ४११।

ऐरावती-शिखरिणि वर्षधरे दशम कूट । ठाणा० ७२।

ऐरावतीधा-कानिशेष । जीवा० ६०।

ओ

ओअ-ओज मानसाऽवष्टम्भ । ओप० ३३।

ओअस्सी-ओजस्वी-आन्मना वीर्याधिक । ज० प्र० २११।

ओअट्टण-उद्वर्तनम् । गात्रतस्युद्वर्तयति । बृ० तृ० ७१ अ।

ओअविअ-परिकर्मितम् । ज० प्र० ५५।

ओअविआ-आरोपितानि । ज० प्र० २६२

ओअवेहि-साधय अस्मदाज्ञाप्रवर्तनेनास्मद्वशान् कुरु। ज० प्र० २१८।

ओआलिनं-द्रावितम् । आव० ३५०।

ओइधइ-उत्तारयति । पउ० ३४-१५।

ओइण्णेसुं-उत्तीर्णेषु-अवतीर्णेषु नियतस्वगृहेषु मध्ये स्थित प्रमादि । आघ० ३३।

ओए- ओज -तैजसम् । सूत्र० ३४३। एक -असहाय ।सूत्र०१०८। विषम , प्रथमतृतीयपञ्चमसप्तमा । पिण्ड०१६९। एको रागादिविरहात् । आचा० २५६ । एकोऽशेषमलकलङ्का- ङ्करहित । आचा० २११।

ओओ-ओज -आरोहात्मिकयुक्तता । बृ० प्र० ३०९ आ।

ओकच्छिया । ओघ० २०९।

ओकसणं-एकपनस्यो परिहसणम् । बृ० तृ० १२१ अ।

ओकुरुडो-उत्कुरुट -कुणालानगर्या दोषान्तिर उपाध्याय विशेष । आव० ४६५।

ओगसण-नाशनम् । महाप्र० ।

ओगाढ-अवतीर्णा अवगाढा वा प्रकर्षप्राप्ताम् । ठाण०३९९। आत्मप्रदेशैन सह एकक्षेत्रावस्थायि अवगाढम्।प्रज्ञा० ५०२। भग०२१।शेलंभार गत । भग०८३। अर्द्धभूत। नि० चू० प्र० ३२७ आ। साधुवत्यामवीभूत । ठाणा० १९०।

ओगाढरुइ-अवगाढनमवगाढ-द्वादशाङ्गावगाहो विस्तराधिगमस्तेन रुचि , अथवा ओगाढ-साधुप्रत्यासन्नीभूतस्तस्य साधूपदेशात रुचिरवगाढरुचि । भग० ९२६।

ओगाढरुती-अवगाहनमवगाढ-द्वादशाङ्गावगाहो विस्तराधिगम इति सम्भाव्यते तेन रुचि , अथवा ओगाढत्ति-साधुप्रत्यासन्नीभूतस्तस्य साधूपदेशाद् रुचि । ठाण० १९०।

ओगाढा-प्रविष्टा । ज्ञाता० ११७।

ओगालीफलगं-आर्यक(प्रायक)प्रभृतीनामाद्या समागन्तव्यकपट्टादिरूप । व्य० द्वि० १०७ आ।

ओगास-पडिस्सगस्सोवहेसो। नि० चू० प्र० ८३ अ। अवकाश -स्थानम् । आव० ५३५। मार्ग । आव० ६७८ ।

ओगाहती-अवगाहन्ती-आगच्छन्ती । आव० ३१२।

ओगाहणगा-यदस्य इन्द्रस्याधस्तादवगाढ तदवगाहनाग्रम् । आचा० ३१८ ।

ओगाहणनामनिहत्ताउए- अवगाहनानामनिधत्तायु - अवगाहते यस्या जीव साऽवगाहना-शरीरमौदारिकादि तस्य-नाम औदारिकशरीरनामकर्म तेन सह निधत्तमायु । प्रज्ञा० २९७।

ओगाहणवग्गणाओ-अवगाहना एकैकस्य भागादध्यस्या धारभूता असङ्ख्येयप्रदेशात्मकक्षेत्रविभागरूपास्तासामवगाहनाना वर्गणा -समुदाया अवगाहनावर्गणा । प्रज्ञा०२६४।

ओगाहणसंठाण-प्रज्ञापनायामेकविंशतितम पदम्। भग०३९६ ४५५, ८४२ । अवगाहनासंस्थानम् । प्रज्ञापनाया एकविंशतितम पदम् । प्रज्ञा० १ ।

ओगाहणसेणियापरिकम्मे परिकम चतुर्थभेद ।सम०१२८।

ओगाहणा-अवगाहना-तनु , तदाधारभूतं वा क्षेत्रम्। भग०७१ । नियतपरिमाणक्षेत्रावगाहित्वम् । भग० २३६ । पड्जीवनिकायाना पादसङ्घट्टनम् । पिण्ड० १६१ । अवगाहन्तेऽस्यामवस्थायामिति अवगाहना-स्वावस्थैव । आव० ४४४ । प्रज्ञा० १०८ । अवग्रहण-परिच्छेद । प्रज्ञा० ३०९ अवगाहन्ते क्षेत्र यस्या स्थिता जन्तव साऽवगाहना-तनुरित्यर्थ । नदी ९१ । अवगाहते यस्या जीव सा अवगाहना शरीर औदारिकादि । प्रज्ञा० २१८ । ज्ञाता० २५० ।

ओगाहिमं-अग्मि जे तिण्णि घाणा पयतितै चलचलेति, सेस ते चलचल ओगाहिम भणति । नि० चू० प्र० १६७ अ ।

ओगाहिमगं-पक्वान्नम् । बृ० प्र० ३१२ आ । अवगाहिमम् । आव० ८५४ ।

ओगाहिमतो-अवगाहक । उत्त० १९८ ।

ओगाहिमाइ-अवगाहिमादि-पक्वान्नमण्डकप्रभृति । पिण्ड० १५२ ।

ओगाहेइ-आगच्छति । आव० १४८ । अवगाह -शरीरोच्छ्रय । प्रज्ञा० १८१ ।

ओगाहेज्जा-अवगाहेत-आश्रयेत । भग० २३३।

ओगाहेत्ता-प्रविश्य । सम० ८८ ।

ओगाहो-पतद्ग्रह । बृ० द्वि० २५० आ ।

ओगिज्झिय-अवगृह्य-आश्रित्य । आचा० ४०१ ।

ओगिण्हणयाते-अवग्रहणतायैमनोविषयाकरणाय । ठाणा० ४४१ ।

ओगुट्टि-निन्दा, निन्दाम् । पउ० ५६-३५ ।

ओगुडिया-मन्त्रदिग्धदेहा । बृ० प्र० २७८ आ ।

ओगेण्हणया-अवगृह्यतेऽनेनेति अवग्रहण, करणेऽनट्, प्रथम समयप्रविष्टशब्दादिपुद्गलोपादानपरिणाम , तद्भावोऽवग्रहणता। नदी १७४ ।

ओग्गह-अवधारण अवग्रह । आव० ३४१ ।

ओघ-औघिक ,अशुभकर्मप्रकृतिजनितो भावोपसर्ग । सूत्र०७८ ओघ -सामान्यम् । आव० २५८, ४५८, ४८० । विशे० ८४२ ४५० ।

ओघजीविलं नारकादिविशेषितायुर्द्रव्यमात्र सामान्य जीवितम् ठाणा० ७ ।

ओघनिप्फन्नः-ओघ -सामान्यमध्ययनादिकं श्रुताभिधान तेन निष्पन्न । अनु० २११ । सामान्यशास्त्रनिष्पन्न ।आव०५८।

ओघनिप्फन्ननिक्षेप. । ठाणा० ६ ।

ओघरूपा-सामाचारीविशेष । उत्त० ५४७ ।

ओघसामाचारी-सामाचार्या प्रथमभेद । व्य०प्र०१९ आ। ओघनिर्युक्ति । आव० १ ।

ओघसामाचार्युपक्रमकाल.-सामाचार्युपक्रमकालस्य प्रथमो भेद । आव० १ ।

ओघस्सरा । ज० प्र० ४०७ ।

ओघा-त्स्सुका निरीक्षमाणा । व्य० प्र० १३० [redacted] ।

ओघाडिज्जइ-उद्घाट्यते-बाध नियते । आव० ६९७ ।

ओघादेसेण-सामान्यत । भग० ८९३ ।

ओघायतण-आघायतनानि यानि प्रवाहत एव पूज्य स्थानानि तडागजलप्रवेशोधमार्गा वा । आचा० ४११ ।

ओचार-अपचारि-धीर्घतरधान्यकोष्ठाकारविशेष । अनु०१५१

ओचिया-आरोपिता । जीवा० १९६ ।

ओचूल-अवचूला -प्रलम्बगुच्छा । ज०प्र०२६५ । प्रलम्बमानगुच्छ । औप० ७० । भग० ४८० । ज० प्र० ५३० ।

ओचूलग- अवचूलक-अधोमुखाचल, मुखकलाचलम् । ज० प्र० २४७ ।

ओच्छगं--वस्त्र, आलिङ्गनम् । आव० ६८३ ।

ओच्छन्नपरिच्छन्न-अवच्छन्नपरिच्छन्न - अत्यर्थमाच्छादित । जीवा० १८८ ।

ओच्छविय-अवच्छादितम् । ज्ञाता० २८ ।

ओच्छाइय-आच्छादित -निरुद्ध । प्रश्न० १३४ । अवच्छादित । ज्ञाता० २८ ।

ओच्छाहिओ-उत्साहित -उत्कर्षित । पिण्ड० १३४ ।

ओज-ओज -उत्तम् । प्रश्न० ११६ । आहारादि । भग० २० ।

ओवद्धपिंडितो-अवबद्धपिण्डिकः । उत्त० २१५।
ओयारं-अवद्वारम् । आव० ३४९।
ओवोलेउं-उद्बुदयितुम् । आव० १९७।
ओभावणा-उवद्दावणा-परिभवः । ओघ० १३१। अप-भावना-लाघवम् । बृ० प्र० २७९ अ।
ओभासंति-अवभासयन्ति-सप्रकाशा भवन्ति । भग०३२७। अवभासयन्ति । सूर्य० ६३।
ओभासंतो-अवभासयन् । ईषदुद्योतयन । जं०प्र० ४६१।
ओभास-अवभासः-प्रभा । ज्ञाता० ४। अवभासः, प्रभा-विनिर्गमः । प्रश्न० ८०। प्रतिभाविनिर्गमः । जीवा० १०७। पञ्चषष्टितमो ग्रहः । जं० प्र० ५३५। सप्तषष्टितमो महाग्रह-विशेषः । ठाणा० ७९।
ओभासइ-अवभासते । आविर्भवति, प्राप्यते इति। सूत्र० २१४। अवभासयति-प्रकाशयति । सूर्य० ६।
ओभासणता । नि० चू० प्र० ९४७ अ।
ओभासिज्ज-अवभासेत-दातारं याचेत । आचा० ३४०।
ओभासिज्जा-अवभाषेत-याचेत । आचा० ३५१।
ओभासितं-अवभाषितं-याचितं याचनं वा ।बृ०द्वि० १४२अ।
ओभासी-अवभासते-प्रतिभाति, अवभाषते-याचत इत्येवं-शीलोऽवभासी । ठाणा० २०७।
ओभासेई-अवभासयति-ईषत्प्रकाशयति । भग० ७८।
ओभुग्ग-अवभुग्नं-वक्रम् । ज्ञाता० ११८।
ओमंथ-पात्रमवाङ्मुखम् । बृ० प्र० १०७ आ।
ओमंथियं-अधोमुखीकृतम् । विपा० ४१। निरय० ६। *ज्ञाता० ९९। अधोमुखम् । बृ० तृ० ११८ आ। ठाणा० २९३।*
ओम-बालः । ओघ० १५१। लघुपर्यायः । ओघ० १८५। अवं-दुर्भिक्षम् । ओघ० ११, १८, ६३। पिण्ड० ४७। आव० ५३६। न्यूनम् । आव० १३०। दुर्भिक्षम् । नि० चू० प्र० १८३ आ। नि० चू० प्र० ५४ आ। अवमानि-असाराणि। उत्त० ३५९। अवमरात्निक । बृ० द्वि० १९ अ। दुर्भिक्षम्। व्य० प्र० १९८ आ। अवमं-हीनम् । आचा० १६४। ऊनं। दश० चू० १६२। ऊनम् । उत्त० ६०४। अवमा-न्यूना । उत्त० ५३७। पर्यायलघुः । ओघ० १५०। अवमम् । न्यूनम् । दश० २७२।
ओमचरओ-ओमत्ति-अवमसुरलक्षणत्वादवमौदार्यं चरति-आसेवते अवमचरकः-न्यूनत्वासेवकः । उत्त० ६०६।
ओमचेलिए-अवमचेलिकः, अल्पारवस्त्रधारी । आचा० १९७
ओमच्छगरयहरणं-उन्मस्तकरजोहरणम् । आव० ६३८।
ओमज्जायणं-अवमज्जायनं, पुष्पगोत्रविशेषः । जं०प्र०५००।
ओमत्तं-अवमत्वं-ऊनता । भग० ७४२। अवमता-हीन-त्वम् । प्रज्ञा० ३०३।
ओमत्थिअ-उद्घाटमस्तकः, प्रच्छन्न इति । ओघ० १५।
ओमत्थिय-ओमत्थितः, अधोमुखीकृतः । ओघ० १४६।
ओमद्दिया-उन्मर्दिका-बहुमर्दनकारिका । भग० ५४८।
ओमया-पराजयः, पश्चाद्गमनम् । बृ० द्वि० ७१ अ।
ओमरत्तं-अहोरात्रम् । ओघ० ११६। अवमा-हीना रात्रिरवमरात्री-दिनक्षयः । ठाणा० ३६६।
ओमराइणिओ-अवमरात्निकः । ओघ० १५०।
ओमराइणिय-अवमरात्निकः । आव० ७९१।
ओमरायणिओ-अवमरात्निकः । ओघ० ११२।
ओमाण-प्रवेशः । उत्त० ५५१। अवमानम् । बृ० तृ० ११०अ। समवसिय । नि० चू० प्र० २०५ आ। अवमानानि-क्षेत्रादीनां प्रमाणानि हस्तादीनि । ठाणा० ८६। अवमानं-स्वपक्षपरपक्ष-प्राभृत्यजं लोकाबहुमानादि । दश० २८०।
ओमानं-अवमानं-अवमम् । बृ० प्र० १९० आ।
ओमुयं-उन्मुक्तम् । ओघ० ११२।
ओमोअ-अवमोचकः, आभरणम् । जं० प्र० १८८। अव-मुच्यते-परिधीयते यस्मोऽवमोचक-आभरणम् । जं०प्र०१८८।
ओमोअर- *अवमं-न्यूनमुदरं-जठरमस्यासावमोदरस्तद्भावः* अवमौदर्यं-न्यूनोदरता । उत्त० ६०४। अल्पाहारादयम्। उत्त० ६०४।
ओमोदरिता-दुर्भिक्षम् । नि० चू० प्र० ७५ अ।
ओमोदरिए-अवमोदरिका, धर्मधर्मिणोरभेदाद् यः अवमोद रिकः-साधुः । भग० २९२।
ओमोयं-अवमुच्यते-परिधीयते यः सोऽवमोच-आभरणम् । भग० ५४३।
ओमोयरण-अवमं च तदुदरं चावमोदरं तस्माक्करोत्यर्थे णिचि ल्युटि चावमोदरणं, अवमोदरकरणम् । उत्त० ६०४।

ओमोयरिय-अवमौदर्य-दुर्भिक्षम् । आव० ६२६ । अवम-न्यूनमुदरं-जठरमस्यामावयमोदरस्तद्भाव अवमौदर्य-न्यूनोदरता । उत्त० ६०४ ।

ओमोयरिया-अवम ऊनमुदरं-जठरं अवमोदरं तस्य करण मवमोदरिका । ठाणा० ३६४ । अवम-ऊनमुदरं-जठरं यस्य स, अवम चोदरं अवमोदर तद्भावोऽवमोदरता, अव मोदरस्य वा करणमवमोदरिका । ठाणा० १४८ ।

ओम्मिमालिणी-ऊर्मिमालिनी-नदीविशेष ।जं०प्र०३५७।

ओय-रसम् । (त०)

ओयंसी-ओजस्वित -मानसावष्टम्भयुक्ता । भग० ११६ । ओय -मानसोऽवष्टम्भस्तद्वान् ओजस्वी । राज० ११८ । निरय० २ । ज्ञाता० ७ । ओजस्विन -मानसबलोपेतत्वात् । सम० १५६ ।

ओय-ओज.-आहारग्रहणे प्रथमो भेद । ठाणा०९३ । ओय -आर्तवम् । ठाणा० १४५ । ओज -प्रकाश । सूर्य० ७। विषम । सूर्य० १५६ । उत्पत्तिदेशे आहारयोग्यपुद्गलसमूह प्रज्ञा० ५१० ।

ओयइ-परगति । विशे० ३७४ ।

ओयणं-ओदन । सूर्य० १९३ । कूर । प्रश्न० १५३ । कूरादि । ओघ० १३३ । ओदन-पाकशीदनादि । आचा० ३१२ ।

ओयत्तण-व्याघात । पिण्ड० १६२ ।

ओयत्तति-परावर्तते । दश० १०८ ।

ओयत्ते-ज्ञाताया सप्तदशमध्ययनम् । आव० ६५३ ।

ओयपएस-विषमसङ्ख्यप्रदेश । भग० ८६१ ।

ओयरइ-अवतरत । आव० ३५२ ।

ओयरिआ-औदरिकनाम-यत्र गता तत्र रूपवाणिक प्र क्षिप्य समुद्दिशन्ति, समुद्देशानन्तरं भूयोऽप्यतो गच्छन्ति । वृ० द्वि० १२५अ ।

ओयरिया-औदरिका-उदरभरणैकचिन्ता । ओघ० ७१ ।

ओयवण साधनम् । ज० प्र० ०४८ ।

ओयविअं-अल्पसागारिक.-श्रावक , खेदज्ञम् । ओघ० ५१ ।

ओयविय-प्रसाधिते । व्य० द्वि० १७०अ ।

ओयविय-सुपरिकर्मितम् । सूर्य० २९३ । तेजितम् । जीवा० १६४ । विशिष्ट परिकर्मितम् । जीवा० २३२ । परिकर्मितम् । जीवा०२७१ । परिकर्मितम् । प्रश्न० ८१ ।

ओयविया-उज्ज्वला । बृ० तृ० ५८अ ।

ओयवेइ-उपैति । आव० १५० ।

ओयसंठिती-ओजस -प्रकाशस्य संस्थिति -अवस्थानम् । सूर्य० ७९ ।

ओया-ओज -प्रकाश । सूर्य० ७९ ।

ओयाए-उपायात -उपागत । भग० ३१९ । ज्ञाता० । निरय० ६ । उपायात -उपागत । ज्ञाता० १६७ । ओजसा-शारीरप्रबलतादिगुणयुक्तत्वेन । ज्ञाता० १७० ।

ओयाणेति-अनुस्रोतोगामिनी, पानीयानुगामिनी । नि० चू० प्र० ४४अ ।

ओयारिया-अवतारिता । आव० ६८० । अवतारिका । आव० ३४० ।

ओयारो-अवतार -जलमध्यप्रवेशनम् । जीवा० ११७ ।

ओयाहारे-ओय -उत्पत्तिदेशे आहारयोग्यपुद्गलसमूह, ओज आहारो येषां ते ओजआहारा । प्रज्ञा० ५१० । तैजसेन कार्मणेन च शरीरेणौदारिकादिशरीरानिर्वर्तनमिश्रेण च य आहार स सर्वोऽपि ओजआहार, औदारिकादिशरीर पर्याप्त्या पर्याप्तकोऽपीन्द्रियप्राणापानभाषामन पर्याप्तिभि पर्याप्तस्त शरीरेणाहारयन् ओजआहार । सूत्र० ३४१ ।

ओयो-सप्तमी । नि० चू० प्र० ११७अ ।

ओरब्भ-औरभ्र-उत्तराध्ययनेषु सप्तममध्ययनम् । उत्त० ९।

ओरस-आन्तर । भग० ६३१ ।

ओरस्स-उरसि भवं-औरस्य-आन्तरम् । सूत्र० १६६ ।

ओरस्सबली-महापराक्रमा । बृ० तृ० ३०४ अ।

ओराल- विस्तरवत, मनसपरिमाणवत् मात्रा यस्य स्वाद वद्धम् । प्रज्ञा० २९९ । आतारिकशरीरमाप्ततवाद्धम् । ठाणा० २५५ । उदारं-अद्भुतम् । सूर्य० २९४ । उदार -प्रधान । भीम । औप० ८४ । आरात्-आसमतादित्तया प्रधानम् । भग० १२५ । उदार-प्रधान । भग० १२ । भीम -भयानक । आचा० ७ । स्थूराकार । राज० ११६ । भीष्म , दृष्टि विशेषविशिष्टतया कम्पत पार्श्वस्थानामल्पसत्त्वानां भयानक । जं० प्र० १६ । भग० १२ । सूर्य० ५१ उदार । जीवा० ३३०। एकेन्द्रियापेक्षया प्राय स्थूलाद्वीन्द्रियाण्य शंनि । उत्त० ६०३।

ओरालतसा-त्रसत्वं तेजोवायुष्वपि प्रसिद्धं अतस्तद्व्यवच्छेदेन द्वीन्द्रियादिप्रतिपत्त्यर्थमोरालग्रहणम् ।ठाणा०३३५।

ओराला तसा-औदारिकत्रसाः-स्थूरत्रसाः ।जीवा० २८ ।

ओरालवण्णकित्तिसद्दा-उदारवर्णकीर्तिशब्दाः । आव० २९३ ।

ओरालसरीरे-उदारशरीर. । उत्त० ३२५ ।

ओरालाइं-मनोहराणि ।ठाणा० २९४ ।उदाराणि-आशंसादोषरहिततयोदारचित्तयुक्तानि । ठाणा० २४७ ।

ओरालिय-उदार-प्रधानं, विस्तरवत्, उरल-विरलप्रदेशं न तु घन, ओरालं-समयपरिभाषया मांसास्थिस्नाय्वाद्यवबद्धं तदेव शरीरं, उदारमेव औदारिकम् । प्रज्ञा० २६८ ।

ओरालिय-औदारिकम् । प्रज्ञा०४६९ । उदारमेव-प्रधानमेव बृहदेव वा औदारिकम् । जीवा० १४ । उदार-प्रधानं उदारमेव औदारिकम् । ठाणा० २९५ ।

ओरालियसरीरणाम-यदुदयादौदारिकशरीरप्रायोग्यान् पुद्गलानादाय औदारिकशरीररूपतया परिणमयति परिणमय्य च जीवप्रदेशैः सह परस्परानुगमरूपतया सम्बन्धयति तदौदारिकशरीरनाम । प्रज्ञा० ४६९ ।

ओरालियशरीरा-औदारिकशरीरा. । आव० ७९९ ।

ओरुहइ-अवतरति । आव० १८९ ।

ओरोहं-अवरोधं, अन्तःपुरम् । उत्त० ३०७ । अंतेपुरं । नि० चू० प्र० ८०अ । विपा० ८२ ।अवरोध -प्रतोलिद्वारेष्ववान्तरप्राकार. । औप० ३ । प्रतोलीद्वारेष्वन्त प्राकार· । राज० २ । अवरोधः-अन्तःपुरम् । उत्त० ११० । अवरोध. । आव० ३५९ । प्रतोलीद्वारेष्ववान्तरप्राकार· । ज्ञाता० २ ।

ओलंडेंति-उल्लङ्घयन्ति । ज्ञाता० ९२ ।

ओलंडेइ-उल्लङ्घयत । दश० ९९ । आव० ३५० ।

ओलंब-अवलम्बं-अवलम्बनस्थानम् । जं० प्र० ५२१ ।

ओलंबणदीव-शृङ्खलाबद्धदीप । भग० ५४७ ।

ओलंबितो-अवलम्बितः । उत्त० ११५ ।

ओलइओ-अवलगितः । आव० २९७ ।

ओलइयं-अवलगित-संगिरम् । उत्त० ११६ ।

ओलयइ-उपलगयति । आव० २९० ।

ओलगिउं-अवलगितुम् । उत्त० ३०० ।

ओलग्गए-अवलगकः । आव० १७६ ।

ओलग्गति-अवलगति-अनुसरति । उत्त० ८७ ।

ओलग्गयमणूसो-अवलगकमनुष्य. । आव० ९२ ।

ओलग्गा-सेवा । परिचर्या । दश० ९७ । जीर्णा । ज्ञाता० २८ ।

ओलग्गाए-अवलगनया । आव० ९० ।

ओलग्गिउं-अवलगितुम् । आव० ७१६ ।

ओलग्गिऊं-अवलगितुम् । दश० ९७ ।

ओलग्गिज्जामि-अवलगामि । आव० ३५६ ।

ओलग्गिता-सेवितुमारब्धा । आव० ८१८ ।

ओलग्गिय-अवलगित । आव० ४०१ ।

ओलिंति-अवलीयन्ते-प्रलायच्छन्ति । विशे० ८५२ ।

ओलिकापातः । ओघ० २०७ ।

ओलित्त-अवलिप्तः । भग० २७४ । आव० ५५९ ।

ओलित्ता-द्वारदेशे पिधानेन सह गोमयादिना अवलिप्ताः । ठाणा० १२८ ।

ओलिहति । नि० चू० प्र० ११०अ

ओलुग्गसरीरा-भग्नदेहा. । विपा० ४९ । निरय० ९ । अवरुग्णमिव-जीर्णमिव शरीरं यस्याः सा, अवरुग्णा वा चेतना अवरुग्णशरीरा । ज्ञाता० ३८ ।

ओलुग्गा-अवरुग्णा-ग्लानमनोवृत्ति ।विपा० ४९ । निरय०९ । क्षीणा । आव० ७१६ । जीर्णा । ज्ञाता० ३३ ।

ओलुहति-अवरोहति । आव० १८१ ।

ओलेंति-परिभ्रमन्ति । आव० २७४ ।

ओलेसा-आर्द्रयित्वा । आव० २०९ ।

ओलोयणं-अवलोकनम् । आव० २२४, ३७८ ।

ओलोयणगए-अवलोकनगतम् । उत्त० ९१ ।

ओलोयणट्ठिओ-अवलोकनस्थितः । आव० १७५ ।

ओलोयणे । नि० चू० प्र० ११०अ ।

ओल्लं-पनकं वा आगन्तुकत्रसजन्तुसन्ततं वा एव ओल्लम् । ठाणा० ३२८ ।

ओल्लं-पार्श्व । नि० चू० प्र० ९०अ ।

ओल्लि । नि० चू० प्र० १३१अ ।

ओवइया-औपचयिकीभिः । ठाणा० ४३ ।

ओवक्कमिय-उपक्रम्यतेऽनेनायुरित्युपक्रमो ज्वरातीसारादिस्तत्र भवा या सा औपक्रमिकी । ठाणा० २७ ।

ओवक्खडित-उपस्कृतम् । आव० ३५२ ।

ओवग्गहिओ औपग्रहिक । उपग्रहित -गच्छमाहारणो । ओघ० ९२ ।

ओवज्झण-प्रवाहे वहन । बृ० तृ० २२९अ ।

ओवट्टणा-चालना पश्चादानयनम् । बृ० द्वि० ८५आ ।

ओवणिहिय-उपनिहितं यथा कथंचित् प्रत्यासन्नीभूतं तेन चरति य स औपनिहितिक, उपनिधिना वा चरतीति वा औपनिधिक । औप० ३९ ।

ओवतिउं-अवपतितु-अंतुम् । दश० ५० ।

ओवत्तिया अपवर्ग-अभिनिक्षिप्तेन भाजनेनान्येन वा दद्यात् । दश० १७५ ।

ओवमिय-उपमया निर्वृत्तमौपमिक, उपमामन्तरेण यत्काल प्रमाणमनतिशायिना ग्रहीतु न शक्यते तदौपमिकम् । ज० प्र० ९२ । उपमया निर्वृत्तमौपमिक, उपमानमन्तरेण यत्कालप्रमाणमनतिशायिना ग्रहीतु न शक्यते तदौपमिकम् । अनु० १८१ ।

ओवमिय-उपमया निर्वृत्त औपमिकम्, उपमाम तरेण यत् कालप्रमाणमनतिशायिना ग्रहीतु न शक्यते तदौपमिकम् । भग० २७६ ।

ओवम्म-औपम्य-उपमा । उत्त० ३११ । उपमानमुपमा सैवौपम्य-सदृश । ठाणा० २६२ ।

ओवमसच्चा-औपम्यसत्या-पर्याप्तिकसत्याभाषाया दशमो भेद । प्रज्ञा० २५६ । उपमैवौपम्य तेन सत्य औपम्यसत्यम् । सत्याभाषाया दशमो भेद । ठाणा० ४८९ । औपम्यसत्य नाम समुद्रवत्तडाग । सत्याभाषाया दशमो भेद । दश० २०९ । उपमीयते-सदृशतया गृह्यते वस्त्वनयेत्युपमा सैव औपम्यम् । भग० २२२ । उपमानमुपमा सैवौपम्य यनन गवयेन सदृशोऽसौ गौरिति सादृश्यप्रतिपत्तिरूपम् । ठाणा० २५४ ।

ओवयइ-उत्पतति-ऊर्ध्वं गच्छति । भग० १३९ ।

ओवयण-अवपदन-श्रोङ्खनकम् । ज्ञाता० ४१ ।

ओवयमाण-अवपतनो-व्योमाङ्गणादवतरत । ज्ञाता० ४६ । अवपतन् । ज्ञाता० १६६ ।

ओवयारिअविणय । औपचारिकविनय -विनयस्य द्वितीयो भेद । दश० ३१ ।

ओवरणं-अपवरकम् । आव० ५६० ।

ओवरिऊण-अवतीर्य । उत्त० ११९ ।

ओवसमिए कर्मोपशमेन निर्वृत्त औपशमिक कर्मानुदयलक्षण । सूत्र० २३० ।

ओवहिए-औपधिक -उपधिना-छद्मना चरती औपधिक । उत्त० ६५६ ।

ओवहिया-औपधिका-मायाप्रयोजना-कषायप्रत्यया, उपकरणप्रयोजना वा । औप० १०७ ।

ओवाइणित्तए-उपादातु-ग्रहीतु, प्रवेष्टुम् । ठाणा० १५७ ।

ओवाइय-उपयाचितम् । विपा० ७७ । याचितस्य-प्रार्थितस्य प्राप्तेरुपरि देवेभ्यो देयम् । उत्त० १३८ । उपयाचितम् । आव० ७०९ ।

ओवाई-ओलावयप्रधाना विद्या । आव० ३१९ ।

ओवाय-उपाये-मृदुपरुषभाषणादौ भव औपाय, उपपतनमुपपात -समीपभवन तत्र भव औपपात-गुरुसंस्तारास्तरण विश्रामणादिकृत्यम् । उत्त० ५८ । विघ्नम् (मर०) अवपात -निर्देश । सूत्र० २४२ । अवपात -प्रपातस्थान, यत्र चलन् जन सप्रकाशेऽपि पतति । ज० प्र० १२४ । अवपात -गर्तादिरूपम् । दश० १६४ । अवपात -गर्ताविशेष । प्रश्न० २२ ।

ओवायकारी-उपपातकारी-आचार्यनिर्देशकारी, यथोपदेश क्रियासु प्रवृत्त सूत्रोपदेशप्रवर्तक । सूत्र० ३३४ । अवपाती-निर्देशस्तत्कार्यवपातकारी-वचननिर्देशकारी सदा आज्ञा विधायी । सूत्र० २४२ ।

ओवासो-अवकाश । दश० ५८ ।

ओवाही विशेषेण उपाधीयत इति वोपाधि । आचा० १५४ ।

ओविअ-आपित-परिकर्मितम् । भग० ४७८ । ओपित -उज्ज्वालित । ज० प्र० २००, ४६ ।

ओविय-परिकर्मितम् । औप० २४, ६६ । राज० ४८ । उज्ज्वलित । ज्ञाता० २२२ । ओपित -परिकर्मितम् । प्रश्न० ७६ । ज्ञाता० १९ ।

ओविया-आरोपिता । ज० प्र० ४१ ।

ओवील-अवपीड-शखरं, उपपीडा वा वेदना । विपा० ७२ ।

ओवीलए–अपव्रीडयति विलज्जीकरोति यो लज्जया सम्यगनालोचयन्त सं यथा सम्यगालोचयति तथा करोतीत्यपव्रीडकः । ठाणा० ४१४ ।

ओव्वत्तिऊण–अपवर्त्य । ओघ० २१ ।

ओव्विग्गमणो–उद्विग्नमनाः । आव० २२० ।

ओष्ठः–दन्तच्छदः । आचा० ३० ।

ओस–अवश्यायः, शरत्कालभावी श्लक्ष्णवर्षः । उत्त० ३३४ । क्षपाजलम् । ठाणा० २८७ । अवश्यायः–त्रेहः । दश० १५१ । अवश्यायः–शरदादिषु प्रभातिकसूक्ष्मवर्षः । उत्त० ६९१ ।

ओसक्कइत्ता–उत्ष्वष्क्य–उत्सृत्य लब्धावसरतयोत्सुकीभूय । अवष्वष्क्य–अपसत्यावसरलाभाय बालहरणं कृत्वा यो विपीयते न तथा । ठाणा० ३१९ । अवसर्प्य, प्राप्य वा । आव० १९ ।

ओसक्कणं–रन्धनवेला । ओघ० १४८ । अवष्वष्कणम्, विवक्षितविध्वंसनादिकालस्य ह्रासकरणम्, अर्वाक्करणम् । बृ० प्र० २६१आ । अवष्वष्कणं–स्वयोगप्रवृत्तनियतकालावधेरर्वाक्करणम् । पिण्ड० ९१ ।

ओसक्किय–प्रच्याव्य । आचा० ३४५ ।

ओसक्किया–अवसर्प्य, अतिदाहभयादुल्मुकान्युत्सार्येत्यर्थः । दश० १७५ ।

ओसड्ढ–उत्सृत.–उपयतेभ्यो निर्गतः । दश० २१९ । एर्गगितं । नि० चू० द्वि० १८आ ।

ओसण्ण–चिरायणं अपरिभोगट्ठाणं । नि० चू० प्र० ११३अ । ओसन्नं–बाहुल्यम् । प्रज्ञा० ५०३ । बाहुल्येन । भग० ३०८ । अवसन्ना–श्रान्ता । भग० ५०२ । ओ यो वा संजमो तमि मग्गो ओमग्गो । नि० चू० प्र० २१७अ ।

ओसण्णद्दो–अपसन्नदः । उत्सन्नदः । आव० ७१२ ।

ओसत्तमल्लदामा । आचा० ४२३ ।

ओसत्तो–उत्सक्तः–उपरिसंबद्धः । औप० ५ । ज्ञाता० ४ ।

ओसधी–वण्णाइफला अंबादिया । नि० चू० द्वि० १५७अ ।

ओसधीओ । ठाणा० ८० ।

ओसन्न–उत्सन्न–प्रायेण । विशे० ९२६ । अवसन्नः–विवक्षितानुष्ठानालसः, आवश्यकस्वाध्यायप्रत्युपेक्षणाध्यानादीनामसम्यकारीत्यर्थः । ज्ञाता० ११३ । बाहुल्यलक्षणम् । भग० २१ । प्रायः । भग० ३०९ । प्रायेः प्राचुर्यं बाहुल्य, बाहुल्येनानुपरतत्वेन । ठाणा० १८९ । प्रायसः । आव० २८५ । उत्सन्नं–प्राचुर्येण । प्रश्न० २२ । अवसन्नः–सामाचार्यासेवनेऽवसन्नवत् अवसन्नः । आव० ५७ । एकान्तः । बृ० प्र० ११आ ।

ओसन्नकारणं–बाहुल्यं, बाहुल्यकारणम् । प्रज्ञा० ३२३ । बाहुल्यकारणम् । प्रज्ञा० ५०३ ।

ओसन्नदोसे–बाहुल्येनानुपरतत्वेन दोषो हिंसादीनां चतुर्णामन्यतर ओसन्नदोषः । ठाणा० १८९ ।

ओसन्नया–प्रगमः । उप० मा० गा० ३१० ।

ओसन्नविहारी–अवसन्नानां विहारो बहूनि दिनानि यावत्तथा वर्तनं अस्यास्तीति अवसन्नविहारी । ज्ञाता० ११२ ।

ओसप्पिणि–अवसर्पति हीयमानारकतयाऽवसर्पयति वा–क्रमेणायु शरीरादिभावान् ह्रापयतीत्यवसर्पिणी । जं० प्र० ८९ । दशकोटीकोट्यः सागरोपमाणां सुषमसुषमादारकक्रमेण अवसर्पिणी । जीवा० ३८५ ।

ओसप्पिणी–अवसर्पन्ति–प्रतिसमयं कालप्रमाणं जन्तूनां वा शरीरायुःप्रमाणादिकमपेक्ष्य ह्रासमनुभवन्त्यवश्यमिति अवसर्पिण्यः, दश सागरोपमकोटिकोटीपरिमाणाः । उत्त० ६५७ । अवसर्पिणी–अवसर्पति हीयमानारकतया अवसर्पयति वाऽऽयुष्कशरीरादिभावान् ह्रापयतीति, सागरोपमकोटीकोटीदशकप्रमाणः कालविशेषः । ठाणा० ३७ । अवसर्पिणी–दशसागरोपमकोटाकोटिमाना । अनु० ९९ । कालविशेषः । आव० १२०, भग० ८८८ । दशसागरोपमकोटीकोट्यः प्रमाणाः । ठाणा० ८९ ।

ओसमणं–व्यवशमनम् । बृ० द्वि० ७७आ ।

ओसरइ–अपसर्पति । उत्त० ५३ । अपसरति । उत्त० ३०२ । आव० ६४०, ३५९ ।

ओसरणं–बहूनां साधूनामेकत्रमीलनम् । बृ० तृ० २१८आ । समवसरणम् । बृ० प्र० २७०आ । चउ० । व्याख्यानश्रवणादि । बृ० द्वि० २५२आ । अवसरणं–साधुसमुदायः । पिण्ड० ९२ ।

ओसरणा–आर्यिकाणामुपकरणविशेषः । ओघ० २०९ ।

ओसरिऊण–अपसृत्य । आव० २९१ ।

ओसरिओ–अपसृतः । आव० ४०५ ।

ओसरित्ता–अपसृत्य । आव० १९३ । व्युत्सृज्य । आउ० ।

ओसरे–अवसर्पन्ति । आव० ६१८ ।

ओसवणं-प्रशमनम् । नि० चू० प्र० २०७ अ ।

ओसह-औषधः । अन्तरुपयुज्यते । ओघ०१३४ । एकाङ्गम् । प्रश्न०१५३ । महातिक्तकघृतादि । भग०३२६ । केवलहरीतक्यादि, अन्तरुपयोगि वा । पिण्ड०१९ । एकद्रव्यरूपम् । विपा० ४१ । ज्ञाता० १८१ । त्रिकटुकादि । ज्ञाता० १३६ । आव० ११५ । उत्त०१४२ । हरितक्यादि । ओघ०६८ । एलाद्यचूर्णादि । नि० चू० प्र० ७६अ । बहुद्रव्यसमुदायः । नि०चू०प्र०१४४आ । एकद्रव्यात्मकं, त्रिफलादि । औप०१००।

ओसहङ्गं-औषधाङ्गम् । ओषधकारणम् । उत्त० १४२।

ओसहजुत्ती – ओषधयुक्ति –ओषधीनां-अगुरुतुरुष्कादीनां सर्जिकाराजिकादीनां च युक्तिः-योजनं समविषमविभागनीतितो । उत्त० ३० ।

ओसहाइ-औषधादि-अगुरुतुरुष्कादि सर्जिकाराजिकादि च । उत्त० ३० ।

ओसहि-औषधयः, फलपाकान्ताः, ते च शाल्यादयः । प्रज्ञा० ३० । औषधिः-शाल्यादि । भग० ३०६ । आचा० ३० ।

ओसहिपत्ता-सर्वरोगापहारित्वात्पधरणप्रभवो लब्धिविशेषः । प्रश्न० १०५ ।

ओसही-औषधिः-जयाविजयर्धिवृद्ध्यादयः । उत्त० ४९० । फलपाकान्ताः । उत्त० ६९२ । औषधी राजधानीनाम । जं० प्र० ३४७ । औषधि –फलपाकान्ताः, शाल्यादि । जीवा० २६ ।

ओसहीओ-औषधयः, शाल्यादिकाः । जं० प्र० १६८ । सालिमातियाओ । नि० चू० प्र० १९५आ ।

ओसही तिणा-औषधितृणानि-शाल्यादीनि । उत्त० ६९२ ।

ओसा-अवश्याय –जलविशेषः । आव०५७३ । नंद० । जीवा० २५ । स्थानविशेषः । उत्त० २०९ । रात्रिजलम् । भग० ६१४ ।

ओसारिय-अवसारितं-अवलम्बितम् । भग०३१८ । ज्ञाता० २२१ । प्रलम्बीकृता । ज्ञाता० २२९ ।

ओसारेज्जा-अपसारयेत्-पाठयेत् । अनु० १७६ ।

ओसावणि । नि० चू० प्र० ७६अ ।

ओसारेयव्वो-परित्यागः । नि० चू० प्र० १४२अ ।

ओसासिअ-आवश्यकी । वृ० द्वि० २१७आ ।

ओसित्तं-अवसिक्तं, आर्द्रीकृतम् । आचा० ३२१ ।

ओसीरं-ओशीरं-वीरणीमूलम् । प्रश्न० १६३ । चन्दनम् । उत्त० १४२ । उशीरं-वीरणं मूलम् । जं० प्र० ३१९ । वीरणीमूलम् । ज्ञाता० २३२ ।

ओसीरपुड-पुष्पजातिविशेषः । ज्ञाता० २३२।

ओसीसं-उच्छीर्षम् । आव० ४५३ ।

ओसीसओ-उच्छीर्षकः । आव० ३५४ ।

ओसीसा-सीमस्स समीरं उपसीमं । नि०चू०प्र०२४७अ ।

ओसूरो-उत्सर्गः । आव० ४१६ ।

ओसोयणि-अवस्वापिनीम् । आव० ३७१ ।

ओस्सट्टो-उत्साहः । नि० चू० प्र० २८४आ ।

ओस्सनं-बाहुल्येन-अनुपरतत्वेन । भग० ९२६ ।

ओस्सारेह-उत्सारयंत-पारयत । उत्त० १७८ ।

ओहंजलिया-चतुरिन्द्रियजन्तुविशेषः । जीवा० ३२ । प्रज्ञा० ४२ ।

ओह-ओघोपधि –उपधेः प्रथमो भेदः यो नित्यमेव गृह्यते । ओघ० २०८ । गर्भेषः । नि० चू० प्र० १७९अ । ओघ – प्रवाह । जीवा० २०७ । सामान्यं, स्वपरदृष्टिविभागरहित प्रवाह । पिण्ड०७७ । प्रवाह । उत्त० २४१ । जं०प्र० ७२, आवरण । दश०१५ । संक्षेप, ११७ । ओघ –सामान्यं श्रुताभिधानम् । सूत्र० २९ । अविच्छेद, संसार', अष्टप्रकारं कर्म वा । सूत्र० १४५ । अविच्छिन्नत्वम् । प्रश्न० ८२ । संसारसमुद्र । सूत्र० १४५ । प्रवाहेणाविच्छिन्नम् । प्रश्न० ७४ । सामान्यम् । पिण्ड० १४७ । सामान्य । आव० ३३६ । प्रवाही । जीवा० २७७ । सामान्यम् । जं० प्र० ७ । उस्सग्गो–त्ति य सव्वं वाडियसुत्तं आयरंति त सव्वं ओहो भण्णति । येत्तिया निसीहवेदिता । नि० चू० प्र० ९७आ । सुत्ते सुत्ते उ उस्सग्गदारिसणी से ओहो, जो पुण अविसिट्ठा आवत्ती सो ओहो । नि०चू०प्र०१४५आ । सामान्यमध्ययनादि नाम । ठाणा० ५ । ओघ –द्रव्यतोर- लभ्यमानं संसारसमुद्र । दश० १५५ । संक्षेपः । ओघ० ८८ ।

ओहजीव-ओघजीव, सव्वजीवस्य प्रथमो भेदः । दश०१२।

ओहट्ठं-अर्थितम् । ओघ० ६७ । यांचित । नि० चू० प्र० १६५अ ।

ओहनिप्फण्ण-ओघनिष्पन्नः । निक्षेपभेदः । दश०१५ । अध्ययनादिसामान्याभिधानन्यासः । आचा० ३ ।

ओहवले-ओघबलः । अव्यवच्छिन्नबलः । औप० ७८ ।

ओहय–उपहतः–विनाशितः। जं०प्र०२७७। राज्यापहारा-द्रुपहताः। ठाणा० ४६१। विनाशनेनोपहता। ज्ञाता० ५१।

ओहयमणसंकप्प–उपहतः–ध्वस्तो मनस. संकल्पो दर्पहर्षादिप्रभवो विकल्पो यस्य सः। भग० १८०। ज्ञाता० २९। उपहतमनःसङ्कल्प.। आव ६८२।

ओहयहय–*उपहतहतः। आव० ६५०।*

ओहरति–उपहरति–विनाशयति। ज्ञाता० १९२।

ओहरिय–विनाशयति। ज्ञाता० १९०।

ओहरितभारो–उत्तारितभारः। ओघ० २२७।

ओहरिय–अग्निकायोपरि व्यवस्थित पिठरकादिकमाहारभाजनमपहृत्य। आचा० ३४५। तिरश्चीनो भूत्वा। आचा० ३४४। पार्श्वतो मुक्तः। उप०मा०गा० ४९९।

ओहसंभोग–ओघसंभोग, उपध्यादिद्वादशप्रकारः। व्य० द्वि० ११९आ।

ओहसण्णा–मतिज्ञानावरणक्षयोपशमाच्छब्दाद्यर्थगोचरा सामान्यावबोधक्रियैव सञ्ज्ञायतेऽनयेत्योघसंज्ञा। ठाणा० ५०५।

ओहसन्ना–ओघसञ्ज्ञा-मतिज्ञानावरणकर्मक्षयोपशमनाच्छब्दाद्यर्थगोचरा सामान्यावबोधक्रिया, दर्शनोपयोग इति, सामान्यप्रवृत्तिर्यथा वल्ल्या वृक्षारोहणं वा। प्रज्ञा० २२२। मतिज्ञानावरणक्षयोपशमाच्छब्दार्थगोचरा सामान्यावबोधक्रियैव सञ्ज्ञायते वस्त्वनयेति ओघसञ्ज्ञा। दर्शनोपयोगः। सामान्यप्रवृत्तिरोघसञ्ज्ञा। भग० ३१४।

ओहसामायारी–ओघसामाचारी–सामान्येन संक्षेपतः साधुसमाचाराभिधानरूपा। विशे० ८४२।

ओहसियं–अवघर्षणमवघर्षितं भूम्यादिना निमज्जनम्। जीवा० २११।

ओहस्सरा–ओघस्वरा–चमरेन्द्रस्य घण्टा। जं० प्र० ४०७। ओघेन–प्रवाहेण स्वरो यासां ता ओघस्वरा। जीवा० १०७।

ओहा–*अपभ्राजना। बृ० प्र० ६६आ।*

ओहाइया–उद्धाविताः। आव० ६६।

ओहाडणी–अवघाटिनी–आच्छादनहेतुभूतोपरिस्थाप्यमानमहाप्रमाणकिटिकास्थानीया। जीवा०१८०। जं०प्र० २१।

ओहाडिअ–अवघाटित–आच्छादित। जं० प्र० ७३।

ओहाडिओ–आपाटी। आव०२०५। निरुञ्जित। आव० ३५८।

ओहाडियं–स्थगितम्। आव० ८८८। स्फेटितम्। आव०२०५।

ओहाडिया–*उज्झायिता। आव० ५१४। अपस्फेटिता। आव० ३६८।*

ओहाडेइ–आच्छादयति। आव० ३७०।

ओहाडेति। दश० चू० ८८।

ओहाण–उवयोगो। नि० चू०द्वि०५८आ। निहारी, धावणेण लिंगो भावणेण वा। नि० चू० तृ० ३५ अ। अवधानम्–अपसरणम्। दश० २७१। अवधावमानाः। ओघ० ६१। अवधावनम्। ठाणा० २११।

ओहाणपेही–चिरं अलभमाणो रातो समाहिपरिहणणलक्खेण ओहावेज्जा। नि० चू० प्र० ११४अ।

ओहाणुप्पेही–*अवधावनानुप्रेक्षी। दश० ९४।*

ओहासेज्जा–उपहन्यात्। ठाणा० ३२८।

ओहामिय–अपभ्राजितः। आव० ६६५।

ओहामिओ–अपभ्राजित, हीलितः। आव० ६९४। अपभ्राजित, तिरस्कृतः। ओघ० ५३।

ओहामिज्जइ–*अपभ्राज्यते। आव० २६५।*

ओहार–अधो जले नावो नेता मत्स्यविशेष। बृ०तृ०११आ। जलजन्तुविशेष। प्रश्न० ५१। कच्छपः। पिण्ड० १०२। मच्छो। नि० चू० द्वि० ७८आ।

ओहारयित्ता–अवधारयिता-शङ्कितस्याप्यर्थस्य निःशङ्कितस्यैवमिवैवमिति एवं वक्ता, अवहारयिता-परगुणानामपहारकारी। सम० ३८।

ओहारसंलख। नि० चू० द्वि० १०७ अ १।

ओहारिणी–अवधारणी–अवधारणात्मिका। उत्त० ५१। अवधार्यते–अवगम्यतेऽर्थोऽनयेति अवधारणी–अवबोधबीजभूता। प्रज्ञा० २४६–२४७। शंकिया। दश० चू० १४०। अवधारणी–अवबोधबीजभूता। भग० १४२।

ओहारियं–अवहृतं–गृहीतम्। आव० ८५९।

ओहारेमाणीओ–*वीजयन्त्यः। जीवा० २११।*

ओहावंत–अवधावन्ते, अवसर्पन्ति। ओघ० ६२।

ओहावइ–अवधावति। उत्त० १३३।

ओहावणं–अपभ्राजनं, अपमानं, निन्दा वा। पिण्ड० १४०। अवधावन–पार्श्वस्थादिविहाराश्रयणम्। बृ० द्वि० १६१आ। लिङ्गविवेकबुद्ध्या गमनम्। व्य०प्र०२७९अ। अपभ्राजना–लाञ्छना। आव० ५१७। अपभ्राजना। आव०२१९,६६५।

मलना । ओघ० ९३ । गृहस्थीभवनम् । बृ०तृ०१४४अ । अपभ्राजना । उत्त०१९२ । परिभव । ओघ०१४८ । हीलना । ओघ० ७४ ।

ओहाविअ-अवधावित -अपसृत । दश० २४७ ।

ओहाविउकामो अवधावितुकाम । उन्निष्क्रमितुकाम । उत्त० १३३ ।

ओहावेज्जा-अवधावेत् । व्य० प्र० १६६आ ।

ओहासणं-समयपरिभाषया विशिष्टद्रव्ययाचनम् । आव० ५७६ ।

ओहासणभिक्खा-ओहासणभिक्षा-विशिष्टद्रव्ययाचनं स मयपरिभाषया ओहासणं तत्प्रधाना या भिक्षा । आव०५७६ ।

ओहासिअ-ओभासिअ-याचित । ओघ०७०। सूत्र० ३८६ ।

ओहिंजलिया-चतुरिन्द्रियजीवभेद । उत्त० ६९६ ।

ओहि-अवधि -अवधीयतेऽनेनास्मादस्मिन्वेति।ठाणा०३४७। रूपिमर्यादा, करणनिरपेक्षो बोधरूप । ठाणा० ४४८ । अवधीयतेऽनेनेति, अवधीयत इति, अधोऽधोविस्तृतं परिच्छिद्यते मर्यादया वेति, अवधीयतेऽस्माद् अस्मिन् वा, अवधानं वा विषयपरिच्छेदनम् । आव०८ । मध्ये । ओघ०२०८ । अधोऽधो विस्तृतविषयवेदकम् । पारच्छद । मर्यादा । उत्त० ५५७ । अव-अधोऽधो विस्तृतं वस्तु धीयते-परिच्छिद्यतेऽनेनेत्यवधि, अथवा अवधिर्मर्यादा रूपिष्वेव द्रव्येषु परिच्छेदकतया प्रवृत्तिरूपा तदुपलक्षितं ज्ञानमप्यवधि, यद्वा अवधान-आत्मनोऽर्थसाक्षात्करणव्यापारोऽवधि । नंदी६५। अवधि-अवशब्दोऽध शब्दार्थ, ततश्चाध इत्यधस्ताद्धावति अधोऽधो विस्तृतविषयवेदकतयेत्यवधि, औणादिको डि, यद्वा 'अवे' अध एव धानं धातूनामनेकार्थत्वात् परिच्छेदोऽवधि, 'उपसर्गे घो कि'रिति (पा ३-३-९२) कि, अथवाऽवधि-मर्यादा रूपिष्वेव द्रव्येषु परिच्छेदकतया प्रवृत्तिरित्येवंरूपा तदुपलक्षितं ज्ञानमप्यवधि । तृतीयं ज्ञानम् । उत्त०५५७ । औघिक -विशेषणरहित । प्रज्ञा० ३४२ ।

ओहिदंसणं-अवधिदर्शनं अवधिरेव दर्शनं-रूपिसामान्यग्रहणम् । जीवा० १८ ।

ओहिमरणं-अवधिमरणं सप्तदशमरणभेदे द्वितीय । उत्त०२३०। पञ्चविधमरणे द्वितीय । भग० ६२४ । अवधि -मर्यादा तेन मरणं अवधिमरणं, यानि हि नारकादिभवनिबन्धनतयाऽऽयु-कर्मदलिकान्यनुभूय म्रियते यदि पुनस्तान्येवानुभूय मरिष्यति तदा तत् । सम० ३३ ।

ओहियं-औधिकम् । ओघ० २१७, १९९ । औघिकम्-निर्विशेषणं नरत्वम् । भग० ४९ ।

ओहियमत्तगं-प्रश्रवणमात्रकम् । नि०चू०तृ० १३२आ ।

ओहिया-औधिकी-तिर्यक्स्त्री । जीवा० ५९ ।

ओही-अवधि -प्रज्ञापनायास्त्रयस्त्रिंशत्तमं पदम् । प्रज्ञा०६ । अव-अधो विस्तृतं वस्तु धीयते परिच्छिद्यतेऽनेनेति अवधि मर्यादा वा रूपिष्वेव द्रव्येषु परिच्छेदकतया प्रवृत्तिरूपा तदुपलक्षितं ज्ञानमप्यवधि । प्रज्ञा० ५३७ ।

ओहीपदं-प्रज्ञापनाया त्रयस्त्रिंशत्तमं पदम् । भग० ७१९ ।

ओहीरमाणी-प्रचलायमाना । भग० ५४० । वारंवारं ईषन्निद्रां गच्छन्तीत्यर्थ । ज्ञाता० १५ ।

ओहुप-अवधुत उल्लंघित । बृ० द्वि० ६१ अ ।

ओहे-ओघमरणं सामान्यत सर्वप्राणिनां प्राणपरित्यागात्मकम् । उत्त० १२० ।

ओहेणं-ओघेन-सङ्क्षेपेण । ओघ० ८८ ।

ओहोवधी-ओह -सङ्क्षेपः, स्तोकः, लिङ्गकारक, अवस्थाप्राय. । उपधेर्भेदः । नि० चू० प्र० १७९ अ ।

ओहोवही-ओघोपधि.-उपधेर्भेद । उत्त० ५३७ । ओघोपधि नित्यमेव यो गृह्यते ओघोपधि । ओघ० २०८ ।

औदारिक-चक्रिकम् । ओघ० ९० । उपादानात्प्रभृति अनुसमयमुद्गच्छति वर्धते जीर्यते शीर्यते । तत्वा० २-४९ ।

औदारिकबन्धनं-यदुदयवशाद् औदारिकपुद्गलानां गृहीतानां गृह्यमाणानां च परस्परं तैजसादिपुद्गलैश्च सह सम्बन्ध उपजायते तत् । प्रज्ञा० ४७० ।

औदारिकसङ्घातनाम-यदुदयवशादौदारिकशरीररचनाऽनुकारिसङ्घातरूपा जायते तत् । प्रज्ञा० ४७० ।

औदारिकाङ्गोपाङ्गनाम-यदुदयवशादौदारिकशरीरत्वेन परिणतानां पुद्गलानामङ्गोपाङ्गविभागपरिणतिरुपजायते तत् । प्रज्ञा० ४७० ।

औदार्यं दाक्षिण्यम् । ज० प्र० १८४ ।

औद्देशिक-दानकस्य षष्ठो भेद । प्रश्न० १४४ । आधाकर्म । सूत्र० १९१ ।

औद्भूतिकी-द्वितीयभेरीनाम । विशे० ६११ ।

औपसर्गिक-पदस्य तृतीयो भेद । आव०३७९ । परीति औपसर्गिकम् । अनु० ११३ ।

औल्लुक्यं-मतविशेष । उत्त० ३३७

इति प्रथमो विभागः समाप्तः ।

आगमवाचनादातृ - बहुश्रुत-युगप्रधानसदृश - देवसूरतपागच्छसामाचारी-
संरक्षणकटिबद्ध-श्रेष्ठिदेवचन्द्रलालभाईजैनपुस्तकोद्धार-
श्रीजैनानन्दपुस्तकालयाद्यनेकसंस्थासंस्थापक
अनेकग्रन्थप्रणेतृ - श्रीवर्धमानजैनागममंदिर-
(सिद्धक्षेत्र)श्रीवर्धमानजैनताम्रपत्रागममंदिर
(सूर्यपुर)संस्थापक-आगमोद्धारक-ध्यानस्थस्वर्गत-

आचार्यश्रीआनन्दसागरसूरीश्वरसङ्कलितः

श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोषः

(समस्तस्वरस्वरूपः प्रथमो विभागः

श्रेष्ठि देवचन्द्रलालभाई-जैनपुस्तकोद्धारे ग्रन्थाङ्कः १०१ ॥

आ मकान

शेठ देवचंद लालभाई जैन पुस्तकोद्धार फंडनी कायमी रकमथी खरीदवामां आवेलुं छे.
रु-१,१०,०००. एक लाख दश हजार.



कालबादेवी नं १६६ आ मकान छे. तेमां भोंयतळीए शयाजी विजय प्रेस रु. पहेले माळे- एल. काशिनाथ त्रेकर बीजे माळे- जादवजी प्रेमजी गांधी ना बोर्डों छे.

શેઠ દેવચંદ લાલભાઇ જૈન પુસ્તકોદ્ધાર ફંડના

હાલમાં મળતા નવીન ગ્રંથો.

ગ્રંથાંક નં.		
૧૦૧	અલ્પ પરિચિત સિદ્ધાન્તિકશબ્દકોષ (વિભાગ પહેલો સંપૂર્ણ સ્વર) પ્રેરક-આચાર્ય આણંદસાગરસૂરિજી	૬-૦-૦
૧૦૨	શ્રાવક ધર્મ પંચાશકચૂર્ણી	૨-૦-૦
૧૦૩	દશવૈકાલિક લઘુવૃત્તિ સુમતિસાધુસૂરિ	૩-૦-૦
૮૫	આવશ્યકસૂત્ર મલયગિરિ ત્રીજો ભાગ	૨-૮-૦
૮૬	લોકપ્રકાશ મૂલ ચોથો વિભાગ પ્રત	૧-૦-૦
૮૭	ભરતેશ્વર બાહુબલિ વૃત્તિ દ્વિતીય વિભાગ સંપૂર્ણ	૨-૦-૦
૮૮	પ્રશમરતિપ્રકરણ બૃહદ્‌ગચ્છીય શ્રી હરીભદ્રસૂરિ-કૃત વિવરણ સમેત	૧-૪-૦
૮૯	અધ્યાત્મકલ્પદ્રુમે રત્નચંદ્રગણિ વર્ધનવિજયગણિ કૃત ટીકા યુક્ત	૬-૦-૦
૯૦	ગૌતમીય કાવ્ય રૂપચંદ્રગણિકૃત	૧-૮-૦
૯૧	સટીક વૈરાગ્યશતકાદિ ગ્રંથપંચકમ	૧-૦-૦
૯૨	અભિધાનચિંતામણી કોશ	૪-૦-૦

ગ્રંથાંક નં.		
૯૩	જૈન કુમારસંભવ	૨-૮-૦
૯૪	સિદ્ધહેમશબ્દાનુશાસન બૃહદ્‌વૃત્યચૂર્ણી નવપાદ અવચૂર્ણિકાર શ્રીમદ્ અમરચંદ્ર	૫-૦-૦
૯૫	વીતરાગસ્તોત્ર અવચૂર્ણી વિવરણ અને ભાષાંતર સમેત	૧-૮-૦
૯૮	પંચપ્રતિક્રમણ વિધિ સહિત	૧-૪-૦
૯૯	શ્રમણસૂત્રાદિ અવચૂરિ	૧-૦-૦
૧૦૦	વંદન પ્રતિક્રમણ અવચૂરિ	૧-૮-૦
૧૦૪	ઉત્તરાધ્યયન અવચૂરિ	પ્રેસમાં
૧૦૫	પિંડનિર્યુક્તિ અવચૂરી	”
૧૦૬	શ્રાદ્ધવિધિ	”
૧૦૭	નંદિ અવચૂરી	”
૧૦૯	સૂયગડાંગ દીપીકા	”
૧૧૦	જંબુદ્વિપ ચૂર્ણી	”
૧૧૧	ચંદ્રપ્રજ્ઞપ્તી	”

આગમોદય સમિતિ પ્રકાશિત

ગ્રંથાંક નં.		
૪૫	ભક્તામર સ્તોત્ર પાદપૂર્તિરૂપ કાવ્ય પ્રથમવિભાગ ટીકા ભાષાંતર	૩-૦-૦
૪૭	પંચસંગ્રહ ટીકા સહ	૭-૮-૦
૫૦	જીવસમાસ પ્રકરણશતક	૧-૮-૦
૫૧	સ્તુતિ ચતુર્વિંશતિકા સચિત્ર શોભનમુનિકૃત સટીક	૮-૦-૦
૫૨	સ્તુતિ ચતુર્વિંશતિકા સચિત્ર કવિ ધનપાલકૃત ઐંદ્રસ્તુતિ	૬-૦-૦
૫૩	સ્તુતિચતુર્વિંશતિકા સચિત્ર બપ્પભટ્ટસૂરિકૃત ભાષાંતર યુક્ત	૬-૦-૦
૫૪	ભક્તામર સ્તોત્ર પાદપૂર્તિરૂપ કાવ્ય બીજો વિભાગ ટીકા ભાષાંતર	૩-૮-૦

ગ્રંથાંક નં.		
૫૫	નંદ્યાદિ ગાથાકારાદિ સૂત્રો (સપ્તસૂત્ર) વિષયાનુક્રમ	૭-૦-૦
૫૬	આવશ્યક મલયગિરિકૃત ટીકા યુક્ત પૂર્વભાગ	૪-૦-૦
૫૭	લોકપ્રકાશ પ્રથમવિભાગ, દ્રવ્યલોક ૧ થી ૧૧ ભાષાંતર	૩-૮-૦
૫૯	ચતુર્વિંશતિકા જિનાનંદ સ્તુતિ મેરુવિજયકૃત ભાષાંતર સમેત	૬-૦-૦
૬૦	આવશ્યક મલયગિરિકૃત ટીકા યુક્ત બીજો ભાગ	૨-૮-૦
૬૧	લોકપ્રકાશ દ્વિતીય વિભાગ ક્ષેત્રલોક સર્ગ ૧૨ થી ૨૦	૩-૮-૦